

ब्रह्मदेशान्त पाति भूपाल राय धनपतिसिंह-वाहादुर का आगम सग्रह उत्तराध्ययन ४१मा भाग सम्पूर्णतामगमत्
बीर इसय थमे चरमचचु के योगसे भुलचूक होय सी परिडतजन कृपा करके उपयोग पूर्वक स्वाहाय करना ।

सवेगो श्रीमुनि वुटेरायजी तचरणरेण दासातुदास भगवानविजय साधुना स सोधितम् । १ अ०(11)10

मान मन्दिर, जयपुर

सम्बत् १९३६ का वैशाख सुदि सप्तमी दिने सम्पूर्ण हुआ ॥

कलकत्ता ७१ न कारणश्रीयालिस ट्रोड राजकीय यन्त्रे

श्रीश्रीशचन्द्र भट्टाचार्य के द्वारा मुद्रित हुआ ।

श्रोत्रिन कुमनपरितो सदगुरुभ्यो नमः ॥ श्रोगौडो पाखे गितागिषतातिर्भवतु अहती ज्ञानभाज सुरवरमहिता सिद्धिमीधस्यमिडा पञ्चाचार प्रवीणा प्रगुणगणधरा पाठका यागमाना ॥ लोके लोकीयवस्था सकलयतिवरा साधुधर्माभिलोना । पञ्चाप्येते सदासा विदधतु कुमल विघ्ननाग विधाय ॥ १ ॥ श्रोदोर शोरसिन्धुदकविमलगुण मशयारिप्रवात श्रोपाब विघ्नवलीयनदत्तनविधौ विस्फुल्ल कान्तिधार । सानन्द चेन्द्रभूत्यादृतयचनरस दत्तदृग्दर्शनबोध बदेह भूरिभर्था विभुवनमहित वासन काययोगे ॥ २ ॥ उत्तराध्ययनसूत्रदृत्तय, सन्ति यद्यपि जगत्पनेकग' सुगपद्मदत्तनयोधदोपिकां दोपिकामिय तनोम्यह पुन ॥ ३ ॥ प्राप्तचारविभवो गिरा गिर श्रोगुरोम विगदप्रभावत' वन्ति लक्ष्मगुपपदसु वस्तभ सज्जना मयि भवन्तु सादसु ॥ ४ ॥ यत्न श्रेयसे स्नाद्गणभृता चतुर्दंगयतो सता श्रोगुण्डरोकमुष्णाणां या द्विपद्मागदुत्तरा ॥ ५ ॥ सूत्र सयोग विष्णुमुक्तस अन्तगारम्भिकपुण्यो विणय पाठ करि

सज्जोगा विष्णु मुक्तस अन्तगारम्भ भिन्नुणो । विणय पाठ करिस्वामि श्राणुपुञ्जि सुगेर मे ॥ १ ॥ आशा निद्वे स करे

श्री जिनाय नमः । उत्तराध्ययनो गद्यार्थ लिङ्गोये छे श्रो महाबोर देवने वारे श्रो आचाराग भणोने पछे उत्तरायन भणता श्रोगय्य भवाचार्य्य पशो दृग्दर्शनिक भल्या पछो श्रोउत्तराध्ययनकहोयेइ तथा उत्तर कहता प्रधान अध्ययन ते भणी उत्तराध्ययन कहीये एहने विये छत्तीस अध्ययन छे तथा प्रथम विनय अध्ययन कश्चो तस्या भणो गुरु कहे छे जे जिननी धर्म ते विनय मूल छे विनय यो मीच इइ छत च मूलाओ खुधप्यभयो दुग्गस इचादि अथवा विष्णुओ सा सवे मूल विणसो निज्वाण साधुगो विणयाओ विष्णुमुक्तस कश्चो धर्मो कश्चोतवो विणयाओ नाण नाणाओदसण चरसे छि ती मन्हुओ सुखे सुखे सुखे अणवाह १ इत्यादिक कारणे प्रथम विनयनी स्वरूप कहे छे ॥ १ ॥ स० सयोग के प्रकारि पूर्वसयोग माता पितादिक पराण सयोग मसुरादिक तथा वाप्रापरिगह - खेत १ वय २ शिरण ३ सुवन्न ४ धन ५ धान ६ दुपद ७ चोपद ८ कुवीधात ९ बीजोऽभ्यतर परिगहे मियात्व १

स्वामि आणुपुत्रि सुणेहमे १ व्याख्या श्रीसुधर्मा स्वामी जंबू स्वामिनं वक्ति जंबू स्वामिनमुद्दिश्य अन्यानपि स्थितान् वदति भी शिष्याः अहं आनुपूर्व्या अनुक्रमेण भिषोभिर्जया मधुकरइत्याहारं गृहोल्वा शरीर धारकस्य साधो विनयं प्रादुःकरिथ्यामि प्रगटी करिथ्यामि मे मम विनयं प्रगटी करिथ्यतो यूयं महाक्य शृणुत यतो जिनशासनस्य मूलं विनयधर्म एव उक्तं च श्रीदशवैकालिके विणयाश्रीणाणं नाणाश्रीदंसणमित्यादि कथं भूतस्य भिषोः संयोगात् बाह्याभ्यन्तरभेदेन विविधात् विप्रमुक्तस्य विशेषेण रहितस्य तत्र बाह्यसयोगो धनधान्यपुत्रमितकलतादि अचित्तं सचित्तादिरूपः अभ्यन्तरसंयोगो मिथ्या लवेदतिकहास्यादि षट्क क्रीधादि चतुररूपः एवंविध द्विविधसंयोगात् विरतस्य पुनः कीदृशस्य भिषोः अनगारस्य न विद्यते अगारं गृहं यस्य स अन गारः अगृहः तस्य नियत बास रहितस्य १ सूतं ॥ आणुण्डे स करे गुरूण सुववाय कारण इंगिवागारसंपन्ने सेविणी एत्ति बुच्चई १ व्याख्या स शिष्यो विनीत इत्युच्यते स इति कः यः शिष्यः आज्ञायास्तीर्थं कर प्रणीतसिद्धान्तवात्याः निर्देशः उपवर्ग अपवाद कथनंतस्य कारको भवति अथवा आज्ञायाः गुरूवाक्यस्य निर्देशः प्रामाण्यं आज्ञा निर्देशस्तं करोतीति आज्ञानिर्देशकरः पुनर्यः शिष्यो गुरूणां समीपेपातः स्थितिस्त्वत्कारक उपपातकारकः गुरूणां

गुरूण सुववाय कारण । इंगिया गार संपन्ने सेविणीएत्ति बुच्चई ॥२॥ आणा निद्वे स करे गुरूण मणुववाय कारण

क्रीधर मान३ माया४ लोभ५ हास्य६ रति७ अरति८ भय९ शोक१० दुःखं११ स्त्रीवेद१२ पुरुषवेद१३ नपुंसकवेद१४ विषयकषायादितेहथी विषय प्रकारे ज्ञानादि भावनाइं करी प० परिसहसहिंवे करि सु० मू०काणा के अ० धररहित हुवे अणगार भि० निरवय्य भिचाइ प्रवर्ते एहवासाधुनी वि० विनय पा० प्रगट क० करिस्सू श्री सुधर्म स्वामी ये जंबू प्रति कह्यो अ० अनुक्रमे सु० सांभलि मे मुम्फने कच्चि ते थके१ आ० गुरुनी आग्यानी० प्रमा णनी क० करणहारहुइं गु० गुरुनि दृष्टि अने वचन तेहने विपे सु० रहिवा एहवा कार्यनी क० करणहार एतले गुरु समीपेइं सूक्ष्म अंगमसुहादिकनी

दृष्टोचरे तिष्ठतीत्यथ पुनर्यं गिय इद्विताकारसम्बन्धीभवति गुरुणा इद्वित मानसिक चेटित जानाति पुनर्गुरुणा आकार बाह्य शरीर चेटितश्च जानाति इद्वित निपुणमतिगम्य प्रवृत्ति निवृत्ति ज्ञापक इत्यत् भ्रूगिर कम्पनादिक आकार स्थूलमतिगम्ययलनादि सूचको दिव्यावलीकनादि यदुक्त अवलीकन दिव्याना विजृम्भण श्राटकस्य सम्बरण आसन शिथिलीकरण प्रस्थितलिङ्गानि चेतानि १ तस्मात् य शिथ्यो गुरो रिङ्गिताकारौ सम्यक प्रकषेण जानातीति इद्विताकारसप्रश्न एतादृश गियो विणयवान् उच्यते २ अथ अविनीतस्य लक्षणमाह प्राणानिहिसकरे गुरुणमणुववाय कारण पडिणीए असवुडे अविणीएत्ति बुञ्जई ३ व्याख्या स शिथ्योऽविनीत इत्युच्यते य आज्ञाया स्त्रीय करवाक्यस्य गुरोर्वाक्यस्य च अनिर्देशकर ऋप्रमाण कर्ता आत्राविरापक पुनर्योगुरुणा अनुपपातकारकी भवति गुरुणा दृगविषये स्थिति न करोति आदेश भयात् दूरतिष्ठतीत्यर्थं पुनर्यं शिथ्य गुरुणा प्रत्यनीक गुरुणा छलान्विषयी पुनर्यं असवुड तत्वस्य अवेत्ता एतादृश लक्षणीऽविनीती भवति ३ अत्र कूलवाद्युक्तस्य दृष्टान्त ॥ यथा एकस्य आचार्यस्य बुञ्जनीऽविनीत त आचार्यं शिधाये वाचा ताडयति स क्षत्रकोरोप वहति अन्यदा आचार्यस्ते न चुल्लकेन सम सिद्ध शैल वन्दितु गत तत

पडिणीए असवुडे अविणीएत्ति बुञ्जई ॥३॥ जहा सुणी पूडू कन्नी निकसिञ्जइ सव्वसो । एव दुख्खील पडिणीए सुहरी

आ० अवलीकनादिकनो चेष्टा नो स० जाणपणा सहित इइ सु० एहवी इइ ते विनित बु कहिये छे २ हिवे अवनितनो स्वरूप कहिये छे आ० गुरनि आग्यानी अ० प्रमाण नी क० करणारनो गु गुरु थको करे एहवी इइ ते म० गुरुना कार्यनी क० अणकरणहार प० गुरनी प्रत्यनीकुवे रो सरिखी अ तलनी अजाण अ एहवी इइ ते अयनित बु० कहिये छे ३ हिवे तोजी गाथाइ कूलवालनी दृष्टान्त कहि छे एक आचा र्यने एक अयनोत चेनी छे गुरनी कश्यो न करे गुरु तेइने गीख दीये पिण चेलो नमाने अने मन माहि रीसधरे एकवार चेला सहित आचार्य दिहार

तिहा थो अणाय्यो तिहा कूकडे आगुलो करडो तेणे कीणोके एहवुं नाम दीधो ससार माहिं माता पिता उपरान्त कुण उपगारी हुसी यतः चन्द्रचन्द्रम कर्पूर गीस्तनी शकरादय एतेषा सार सुद्रत्य जन्मना जनितं मन अनुक्रमे सोटी थयो एहवे इन्द्र महाराज आपणे साहमीनी प्रयंसा करी जे भरतखेच माहिं सम्यक्तधारी राजा श्रेणिक के श्रेणिक सारिखा श्रावक थोडा हुसो तेहनेचायक समक्तसुद के तेहने देवता पिण चलावी न सके एहवुं वचन सामली अणसहता देवताइं साधुनी रूप करो खाधाने विषे जाल धरो राजा श्रेणिक आगलि थइं नीकल्यो राजाना सेवक कहे स्वामीअे साधुने वांदी राजा इं साधु जाणो वांदीने कहे किहांधारीछी देव साधु कहे माळ लानी मांस लेवा जांवांछा राजा कहे आपणे घरे सर्वमीलसी अरे महाराजा ताहरे दीधि केतली एक पूरोपडस्ये चत्रीजती थया के तेहने मदरा बीना नसरे तु केतलाने देसी आज बेलानीकत्या ताहरी नीजर चव्या बलता श्रेणिक कहे के एहवी वचन मबीली तुमे तुमारी वात करो निःकलङ्की सकलङ्क न हुवे तुंतारा कर्मनु दीध राजानी मन लोगार चुकी नजाणी साधवीनी रूपवैश यीवनरूप नीरखने पूरे मासे ने हाट हाट गुल अजमी सुंठ पीपला मूल मांगती देखी राजाना सुभट कहे जे साधु पूर्वे यांदी पवित थया हिंवे साधवो वांदो तिवारे राजा ये साधवोने बंदणा करो राजा कहे हे पुत्रो आपणे घरे पधारी गरमनी विवाह करस्यु हाट हाटर क्युभमी तुतिवारे साधवो बोली केतलानी नीरवाह करसी चन्दनवाला मृगावतो प्रसुख स्युं कन्दर्प जोल्यो छे ते माहरी कूलदीपरयि कही एक निर्गुणी सर्वने सरीखा करे पिण सोवरण स्यामता नहो १ तुमारा कर्मनी दीप राजा लिगार धर्म थो चुकी नहो साधुसाधवी जपरी समभाव त्रिंदग पिण न कीधी देवता मनमे खुसो थयो प्रत्यब रूप करो रायनी प्रशसा करे हे महाराज तं धन्य जे कहे माहरे सर्व हे त्यारे देवता राजाने वे माटीना गोला देइस्वर्ग पडुता एक गीली सुनन्दाने दीधी ते मांहि कुडल युगल नीकल्या तिवारे देवता कहण लागी एमर्व रूपमे करण साधु साधवी तीनीकलङ्क छे मोचना साधक के

पोतानी पापनिंदी गीलार राजाने देइ खगें पडुती एक गीलो चेलणने दीधी ते माहि सु आमला प्रमाण मीतीनी हार अडारि सरी नीकल्यो एहवे सभे श्रेणिक अतउर सहित भगवतने वदना करो पाक्षा बलता चेलणाइ शीतकाले एक साधु ध्यान करती देखी आपणे घरे आवी रात्रि स्व आवासे सुता एहवी वचन कछी किम करता हुसो ते वचन सुणो श्रेणिकनागनमे सदेह लपनी ए अतउर खोटी एहवी वीचार करी अभय कुमारने जाल वानी आदेय देई राजा भगवत पामे गयो भगवत वील्या चेडानी सातेपुत्री सती के एवचन सुणौ उतावलसुपाक्षा वल्या वलतानगरमे धूम्र देखी अभयकुमारने कछी जरि भडा एवचन अभयकुमार सुणि पिताने कछी तुमारी वचन यो हु सुख यो कहु तु जा तिवारे तु दीचा लीजे एवचन तुमारा मुख यो नीकल्यो छे तिवारे पोतानी आज्ञाई अभयकुमार दीचा लीधी हिवे कोणीक दुरदत हुवे। लघु भाई हकने। विहकर वीजीमाता। कालिप्रमुख कोणिक सब ने कही राजा श्रेणकने काठ पिजरे घाली राजा ११ भागे वहि वल्यो छत्रचामर पीताने अने सिचाणकहाथी अने हारहस्त विहकने श्रेणिक आव्योइती ते हिल राजा श्रेणिकने नित्य नाडी५ मरावे अने भात पाणीनारीध राणी चेलणा दीपहरा कलसीयो। पाणीनी ले जाय चोटो मदिराये खरडो ते धोइ पावे अने उडदनी रोटी करी ले जायते आहार करे आपणकर्मदिक भोगवे राणी कहे श्री पुत्र जीवाडीओसुख देख्यो राजा कहे काई गहिलो घर भावो पदाथ किहा रहे एकदा प्रस्तावे कोणिक जीमवा वे ठो छे पासे पूत्र वे ठो छे तिणे थाली माहि जीमता नव नीतकरो पिण कोणके सकानाणीमानि कहे माने पुत्र किशोवालही छे जेमेलिगाररीस नहीकरी तिवारे सभा जाणी चेलणा वाली पुत्र मातापिताने वलभ हुइ पिण पुवनेहनाथे तोवारे पूर्वलो वात चेलणा कोणिक आपरा पुत्र आगे कही ताहरी चीटी आगुलीनी लोही ते सारे ताहरे पितारे लदरमे गयो छे एतलो माव न जाणे पिण कुल जाणे तु ता पोतानी भक्ति रुडो करे छे ए भक्त घणादिन कहावस्ये एहवा वचन सामली वैर गया छे ह

प्रगव्यो तुरत उठी लोहार तेडावी तिवारें आगल थी उपरतींद्र बात कहे अणकने मारवा भणी घण लेइ पावे छे बीजीवार आवता सांभली राजा
 अश्विने तालपुट नामा विषतालवेदीयो त्यार तुरत मरण पांम्या कोणीक पावी बीसावे पिण बाले नही यतः प्रोतिदृष्टि विना सुखं धन विना गृह
 च भार्यी विना विप्रा वेद विना यती गुणविना राजा च सैव्य विना शूरः शस्त्र विना स्त्रियः पति विना पूजा विना देवता एतत्सर्वं न शोभते किमपरं
 देह जीव विना १ मनस्युं अर्थस्य दुख जपनी रोईवालागी घर मांदि रह्यो सुहावे नहीं रायने वियेगी चम्यामूकी पृष्टचम्यावसावी तिहां रही
 सकल साधवा लागि एकदा प्रस्तावे पद्मावती राणी कोणिकने कहिवा लागी तुंदि राज्यनी धणी पिणहारने हाथी राज्यनी सारतो भाई भागवे छे
 अने तुमे तेहने चाकरी करो राजा कहे भाई के राणी कहे हाथीमांगोतिवारें जाणस्युं जे एकही के तेखकं तिवारें तेहने कछो तुं कांई जाणे तो पिण
 इम स्त्रीये कानभरीया हारहाथी सांगवानी मनकराव्यो कोणिके भाई पासे हारने हाथीमांग्या तिवारें भाई कहिवा लागी हारने हाथी किम दिवरा
 विवे तुमे राज्य भाग्य आपीती हारहाथी आपीये इम माहीमांदि चड भया मांणसे सभा मांदि थी उठाया कोणिके कछो जे देश मांदि रही तो हार
 हाथी मीकल देख्यो एहवुं सांभली कोणिकने भय करो आपणे अतेउर लेइ नाना पासे वियाला नगरीये पद्धता प्रभाते खबर थई जेनासगया कोणक
 कहे एहवी कुण के जिहारा वरीने राखे एहवे खबर थई जे चेडा राजा कहे विसालाये गया तिणवैला कोणीक राजा कालिकुमार भादिदेई १० भाई
 ३३ हजार घोडा ३३ हजार हाथी ३३ हजार रथ ३३ कोडि पायक सहित भावी वियाला नगरी बीटी तिवारें चेडी माहाराजा १८ राजा ५७
 सहस्र घोडा ५७ हजार हाथी ५७ सहस्र रथ ५७ कोडि पायकसहित सान्ही भाथ्यो पिणचेडे महाराजने एहवी प्रतिष्ठादिहाडे २ एकवाणमूके तिण
 बाणे करी जे पचे करी येनानी इइ तेहने जोपे १० दिहाडे कोणिकना कालि पाददेई दवे बधव विणाखा तेहवे कोणीक चमरेइ चाराथी इन्हे

देह रजा कीधी चमरेन्द्र इम महाशिलाकण्ठक रथ सुश्लरणने विये दीधा महायुद्ध इभा एक कोडि अग्री साख पषा वली सौवते गाथाइ पिण इम कहेके कोणिकय चेडरयी रण निष्कणवेलख मणयाण चमरेण निगहया वीयदिणे सखचलसीया १ एग सहस्र सुरी विठदिडी मणमहा विदेहमि एस सहस्र मच्छ नोए सेसात्रो नरयतिरिएसु २ एहवो युड थयो तो पिणविद्याला नगरी कोणिक ले न सक्यो श्रीमुनिसुवतस्वामीना स्वभनी महिमा कर्ले तिवारे कोणिक उचाटवान थयो घणेकाले भवितव्यना वस थको आकाशबाणो थई यत समणे जह कुलवालुए मागहियगणिय गमिस्सए राया असोग चदए विसाला नगरि गहिस्सए जा कुलवालुओ साधु मागधिका गणिका साथ रमे तो अयोगकचद कोणिक राजा विद्याला लेगी एहवी आकाशबाणी साभली कुलवालुनी खवर करावी नदी तटे रछो जाणो मागधिका गणिका तेडावने कछो अहो गणिका कुलवालुओ साधु इहा आणीया जाइए वेख्याये कछो हा महाराज आणुइम कहो बोडो कोलो भालोकपटो थावकणि थइ रथ वेसीनेगइ तिहा जे वादीकुलवालुप्रते ते गणिका कहिवा लागी अन्हे थाविका जात्रये नोकल्याहा जिहां देव इइ गुरु इइ तीहा वांटी वहिरावी लीमुणु तुमने इहा साभल्या ते भणी अन्हे आया हिवे तुम्हे अनुग्रहे मया करो सुभक्तो भातपाणो वहिरो एहवो कही घणे आप्रहे नेपाला मियीत मोदक दीधो तंजे साधे लीधा साधुने अतीसार इवो घणो कट पब्यो तिणे वेख्याये धोवा पखालवा रूपवेयावच करो लाजलीपावी ओपधे करो साजो कीधो तिवारे कहिवा लागी अहोवेखा तु काइक माग वेस्याये कछो सुभ साथे आवी राजा कोणिक कङ्गे तिहा थकी सेभवाला माहि घाली वेख्याए कुलवालुओ कोणिक कङ्गे ल्याइ कोणिके वोलाव्यो अहो कुलवालु आजिम विद्यालानगरी लेवराये तिमकरोतिवारे तिहाथकी कुलवालुओ विद्यालानगरी माहिजइ निमत्तीयानो वेसकरीभतयके जो यो जे नगरकीम नही भाँजतो घान वले जाण्यो ए मुनि सुवत स्वामी स्व भनी महिमाइ नगरी नथी भाजतो तेहवे नगर लोके निमत्तीयो देखी पृच्छो अहो निमत्तिया

विसालि नगरि गह्रिस्सए १ कोणिकेने भाषाणीं शुला स कूलवालक यमणो विलोकाय मानस्सव स्थिताघ्रात राजग्घहादाकारिता मागधिका गणिका
 तस्या सब कथित तथापि प्रतिपन्न त कूलवालक यमणमहमत्तानीथानीति कपट आणिकाजाता सायंन तत्रागता त वन्दित्वा भणति स्थाने स्थाने
 वैत्यानि साधूष वन्दित्वाऽह भोजन कुर्वेय्यमन्न युता ततो वट्ठनार्थं मागता अन्नपुह कुन्त प्रासुकसेपणीय भक्त गृह्णेत इति शुला कुलवालुक यमथ
 स्सथा उत्तारकेगत तथा च नेपाल गोटककर्ण संयोजिता मोदकादत्ता तद्भक्षणानन्तर तस्य प्रतीसारंगजात तथा श्रीपथप्रयोगेण निर्वर्तित प्रघ्ना
 लनीदत्तनादिभिस्तथा तस्य चित्त भेदित स कूलवालक यमणस्तस्या मायत्तोऽभूत् तथापि स्व वशीभूत् स कोणिक समीपमानीत कोणिकेनीक्त भीकूल
 बालक यमण यथेय वैगालि नगरी गृह्णति तथा ज्ञियता तेनापि तद्वच प्रतिपद्य नैमित्तिकवैयेण वैगानि नगर्यभ्यन्तरे गत्वा मुनि सुव्रतस्वामि स्तूप
 प्रभावो नगरीरचको ज्ञात नैमित्तिकोय नगरी लोके घृष्ट कादा नगरीरोघोऽप गमिष्यति स प्राङ् यदा एन स्तूप यूय अपनयत तदा नगरी
 रोधापगमी भवतीति शुला तैर्लोकै स्तवाकृत कूलवालक यमणेन वहिर्गत्वा सञ्जित कोणिकम्मे न तदैवस्तूप प्रभाव रहिता सा नगरी भग्ना एव
 पतित कूलवाक यमण अविनीतलात् कूलवालक कथा ३ ॥ अथा विनितस्य देए पूर्व दृष्टान्तमाह ॥ जहा सुणी पूरकणी णिकसिज्जइ सब्बसो
 एव दुस्सिल पडिणेए सुहरो निकसिज्जइ ४ व्याख्या एव अमुगा प्रकारेण अनेन दृष्टान्तेन दुगोल दुष्टाचार प्रत्यनीजा गुशणा हेपो पुनमुखरीवा
 चाल एतादृश कुशियो दुधिनीतो नि काखते गणात् सद्घाटकात् वाह्य ज्ञियते अथवा सुहरीसुख अरियस्य स मुखारिरसमन्थभापो प्राकृतत्वात्
 सुहरीतिशब्द दिन दृष्टान्तेन नि काग्यते यथा पूतिकर्णो सटितकर्णो शुनी कुर्वाटी सर्वत सर्वस्यानकात् गृहादित सर्वं नि काखते अत्र सुनीनिर्देशोऽ
 धिक निन्द्यासूचक सटित कर्णीति विशेषेण सयात्र क्कमि कुलाकुल सूचित इत्यनेन दुर्विनीतत्व्याज्य ४ अय पुनस्तदेव दृश्यति कणकुण्डगश्च

निर्देय कृत इदानीं शुन इति लिङ्गव्यत्यय प्राकृतत्वात् सूत्र तन्हा विषयमे सिञ्जासील पडिलमेळए बुढ पुत्तेनियागठीननिकसिळइ कङ्कुइ ७
 थ्यास्या तन्मात् कारणात् बुढ पुत्र बुढाना आचार्याणां पुत्र इव पुत्री बुढपुत्र आचार्याणां माचख अर्थयतीति नियोगार्थी एतादृश
 साधुविनयं एपयेत् विनय कुर्यात् विनयात्पील सम्यगाचार प्रतिसमेत स विनयवान् शीलवान् कङ्कुइ इति कम्पादपि स्थानात् न नि काय्यते
 सर्वत्राप्याद्रियते अय परमार्थं विनयवान् सर्वत्र सादरो भवति ८ सूत्र निष्कन्ते सिया मुहरी बुद्धान् अन्तिए सया ऋहुत्ताणि सिक्खिज्जाणि
 रड्ढाणिठ वज्जाए ८ व्याख्या अय विनय परिपाटि दर्शयति नितरां अतिथयेन शान्ती निशान्त क्रोधरहित साधु सिया शब्देन स्यात् भवेत् स्मधुना
 घमावताभाष्य पुन सुशिक्षीऽमुखरी अवाचाल स्यात् पुनर्बुद्धाना आचार्याणां ज्ञात तत्वाना अन्तिके समीपे अर्थयुक्तानि हेयो पादेय सूय कानि
 सिद्धान्तवाक्यानि मिथैत तु पुनर्निरथकानि नि प्रयोजनानि धर्मरहितानि स्त्रीलक्षणसूचकानि काकवात्स्यायनादीनि वर्जयेत् ८ सूत्र अणुसासिओ

लभेज्जाओ । बुढ पुत्त नियागठी ननिकसिज्जइ कङ्कुइ ॥७॥ निखुत्ते सिया मुहरी बुद्धान् अतिए सया । अठ लुत्ताणि

सिक्खेज्जा निरड्ढाणिउ वज्जाए ॥८॥ अणुसासिउ न कुप्पेज्जा खति सेवेज्जा पडिए खुडेहि सहससग्गि हास कीडव

ना दीप देखाद्या त० तेभणी वि० विनय करे सी० भलो आचार पा पामे ज० जे विनय थकी बु० आचार्यने पु० पुत्रनी परिनि० मोक्षार्थी जे
 विनोत शिय तेहने न० काठीये क० किच्चां गच्छादिक थकी ७ नि० निरतर उपसमवन्त अभ्यन्तर कपाय पातला वाद्य प्रसान्त आकार सि० इइ अ०
 अमुखरीवाचालपणा रहित बु० आचार्यने समीपे विनित शिय स० सदाइ अ० जे पदार्थ छाहिवां जाणीवा आदरिवा योग्य तेहनी जाणपण तणे करी

विनीत साधुगुरुणां श्रयती न निश्च्योत क्तस्य दु क्तस्य अपल पन गोपन न विधेय क्त कार्यं क्त न भाषित श्रकत कार्यं क्त न भाषित श्रय परमार्थ
गुरुणा पुरत सुगियेणसत्ववादिना भाव्य ११ सूत्र मागलिरश्लेवकस वयणमिच्छेपुणो पयोकस वददुमाइद्रे पावगपरिवज्जए १२ व्याख्या अथ विनीता
विनीतयोर्दृष्टान्तमाह विनीत साधु आकीर्णइव सुविनीताइव इव गुरो वचन शिष्यारूपङ्करणयोग्यस्य कार्यस्य प्रयत्तिस्वचक करणयोग्यस्य कार्यस्थनिष्ठ
तिस्वृषऋचमाइच्छेत् पन पुनर्न किन्तु एकवारप्रपितसन्सर्वस्वकाय गुरोश्चित्तज्ञानीति कि क्त्वाइवकसत्ताजनक दृक्षाइवयथा गलिताब्धौ दुर्विनीत तुरग
अत्रवारम्यश्चाजनक नइच्छेत् तथा विनीतो वचनतर्जन इच्छेत् तथा सुविनीतशिशु आचार्यस्य आकार इद्वित ज्ञालापापागुष्ठान वर्जयेत् इत्यर्थः १२
सूत्रअणासवा यूलयया कुसोला मिउ पि चडपकरन्ति सीसा चित्ताणु आलइदक्खो ववेशा पसाय एतेहु दुरासयपि १३ व्याख्याअथ पुनर्विनीता विनीत
योरा चारमाह पूवाहेन दुर्विनीत गियाशा आचार वदति एताहथा शिथा सदुमपि आचाय सरलमपि गुरुचण्ड कोप सहित कुर्वन्ति एताहथा

कस वयण मिच्छेपुणो पुणो कस व ददु, माइद्रे पावग परिवज्ज ए ॥१२॥ अणासवा यूलयया कुसोला मिउपि
चड पकरति सीसा । चित्ताणुया लहु दुक्खो वविया पसायए तेहु दुरासयपि ॥१३॥ नापुठो वागरं किचि युठोवा

त० तिवारं पछि ज० धर्म ध्यावे ए० एकतो रागद्वेष रहित १० आ० कदाचित्त च० क्रीधने वसे अ० भूठी क० बीलीने न० नगीपये गुर आगलक०
केवारे पिण लाज भयादि कारणे क० कीधाने कीधो भा० कहीये अ० अणकीधानि इम कहे नो० मे न कीधो ११ मा० रखे ग० गलियार अविनित
अ० घोडानी परे क० ताजणा रूप व० वचन आदेग मि० वाछे पु० वारवार क० ताजणी द० देखिने मा० जातवत घोडो जिम असवारनी मनहोइ

तिम चाले जिम जातवंत घोडी असवारने भावे चाले तिम विनित शीय गुरुनी अंगवेष्टा जाणिने गुरुने भावे विचरे प० अगुष्ठानप० सर्वथा वर्जे के प्र० गुरुना वचन प्रणकरणहार शृ० अनिपुण भाषि भंडा आचारने धर्षी मि० क्रीध रहित जे गुरु हीद्र तेहने पिण च० क्रीधी प० करेसी० कृश्रिथ चि० गुरुने चित्ते वतै ल० शीघ्र द० बिलम्ब रहित कार्यनी कर्णहार एणे गुणे करि सदित प० प्रयांत करे ते विनीत श्रिय हु० वलीदु० अती क्रीधी गुरुने पिण १३ प्रथ चद्ररुद्राचार्यनी कथा कहीये के उजणी नगरीये चखरुद्राचार्य चोभासे रत्ना प्रतिहीरीसालु थोडे बोखी रोस चढावे वडे महात्माने पिण १३ प्रथ चद्ररुद्राचार्यनी कथा कहीये के उजणी नगरीये चखरुद्राचार्य चोभासे रत्ना प्रतिहीरीसालु थोडे बोखी रोस चढावे वडे महात्माने उपाश्रयदुकडे राख्या जेसह इम भेला रहेा तोरखे गुरुने रोसचढे रोसे जीवनाकारज विणसे जे भणी सिद्धांत माहि कहं के यतः कीविसंकि अमय अहिसा माणी अरि किहियमप्यमाश्री मायाभयं सरण तुसच्चं लोहो दुहं किहियमाश्रुतधी १ तेहवे अवसर ते नगरमाहि किणहीक व्यवहारीयाना पुत नवपरणीतसाला सहितके वीजाई मित्र सहित नगरमध्य क्रीडा करतां आव्या एहवे अवसरे जे वनमाहि जती रह्याके तिहां कुमार क्रीडा करता आव्या तिहां जति घणा वैठादोठा तिहां ते आवो वैठा तेहवे भितसाले सगले ही हसी कह्यो ए तुम पासे दीचा ल्ये के एहने दिघा द्यो तेहये तेणे साधे कह्यो अह्ने न जाणा गुरु जाणे तो तुमे अमने गुरु दिखाडी तिवारे श्रिय गुरु देखाबा तिहां कला गुरु वैठाके तिहां आव्या हासी माहे माहि करतां गुरुवांयातिहांसालोहस्थी भगवान दोबा लेके हासामिसवार एतले गुरुने रोस उपने ततकाल पकडी पग विवे माधो चांपो अश्रानी रोसे लोच कोधी अने जाख्या रखे एहवे साली मित प्रमुख हुता ते विपाद पाय्या जाख्या हसता असे कशो अने गुरे रोस वसे साचो कीधा अने जाख्यो रखे अमने पिणमंडीनाखे भयभीत थईने नाठा तेहने नव दीचत सुयिथे कह्यो भगवंत तुमने इहां रहिवानो लाभ नही माहरासगा तुमने दुहवणा अवहोलणा करसी ते भणी आपणी अनेथिजद तेहवेगुरे रोसनावस थकी कर्कश वचन कह्यो रे पापिट रे दुरात्मा किणे कह्यो तुं दीचा लीजे एहवे

कीदृशा अनाश्रवा गुरुवचने श्रुतिता आश्रयो वचने स्थित इति हैम न आश्रवा अनाश्रवा पुनर्ये स्थूलवचस स्थूल अनिपुण वचो येपान्ते स्थूल वचस अविचार्यभाषिण श्रुतित्तराज्ञेन विनीतस्वाचार वदति चित्ताश्रुगा आचार्यं चित्ताश्रुगामिन पुनर्लब्धु शीघ्र दृश्य चातुर्यन्ते न उपपेता लघु दास्योपपेता त्वरित चातुर्यं सहिता एतादृशा श्रुत्या दुराश्रय क्रूरमपिसक्रोध अपि गुरु प्रसादयेयु प्रसन्न कुर्यु १३ अत्र चड श्रुद्राचार्यकथा यथा उज्ज यिन्यां चण्डशूद्रसूरि समायात सरोयण प्रकृति साधुभ्य दृष्टक एकान्तस्थाने आसनश्चक्रे माभ्रुकीपीत्यत्ति रित्तिचित्ते विचारयति इत्यथ इभ्यसुत सुश्रिय चमा करो वल्लो चरण कमलेमस्तगलगावीने वीनवे तेहवे गुरु कहे रे दुष्ट रात्रि गये डु देख नही सुभने इवि किम चलाई तिवारे सुश्रिय बोध्योमाहरे खुधे वैसी गुरुने स्तववैसारी विहार कीधी रात्रि अधारी शीथने मार्गचालता पग उचानिचा पडे तिवारे गुरु श्रियने मस्तके दड प्रहार करे िवारे शोया आपणे मन आपणा दोष देखे डु पापी से गरठा गुरुने कष्ट माहि पाव्या एहयो दोष संपूर्ण आपणा देखता घमा करता भावना भावता पगर भिच्छामि दुक्कड देता एकाश्रुचित्ते गुरु उपरि धर्म पोह धरतां कर्मनी चय कीधी केवल ज्ञान उपनी ज्ञान यकी सर्व मार्गं देखावा मास्यो तिवारे गजगति चालवा लागो तिवारे गुरु कहिवा लागा सही मारसारकहको निरतो चाले छे एहवी गति जाणी गुरे श्रियने पूछो अही श्रिय तु वाट देखे छे हा भगवान् ह सर्वदेखु छु सूक्ष्मवादरनी पिण विगत जाणीये छे तेहवे गुरे पूछो काई अतिशय श्रिय कहे तुम प्रसादे गुरु कहे प्रति पातोके अतिपाती शोया कहे अ प्रतिपाति एहवे सामनी गुरे चित्तव्या एक वली छे हमे पापी रोपना वम यकी केवनीनी अश्रुतना कोधी तिवारे साधा यो उत्तरी पगे लागो खमावता गुरुने केवल ज्ञान उपनी एहवा सुश्रिय जोइये आपणोने गुरुने कार्य साधे इति चन्द्रशूद्राचार्य कथा त्रयोदशमी गाथा उपरि जाणवी अश्रुप्रे सूत्रमाह ना० अणपूछो या० नबाले कि० थोडाइ सु० पूछो पिण जि० भूठो व० न बाले को० क्रीधने फल लगडि

कीपि नवपरिणीतः सुहृत्परिहृतस्त्रागत्य साधून् वन्दते कैचित्चिन्मित्रैर्हस्त्रिन प्रीक्तं असु प्रव्राजयत साधुभिर्वरमित्यभिधाय गुरुदर्शितः तेषि गुरु
 समीपे गताः तथैव तैरुक्तं गुरुभिर्भूति मानयेति प्रीक्ते तेन नवपरिणीतेन हास्या देव स्वयंभूति रानीता गुरुभिर्बलादेव गृहीत्वा तन्नोचः हतः सुहृदः
 खिन्नास्त्रदानथाः तस्य तु कृतलोचस्य लघु कर्म तयाऽतः परं मम प्रव्रज्यै वासु इति परिणामः सम्पन्नः ततस्तेनोक्तं कैलिः सत्यं भूतोऽथ अन्यत्र
 गम्यते गुरुराह अहो शिथ साम्तं रात्रिर्जाता अह रात्री न पश्यामि तेनस्वस्त्वर्थे गुरुरारोपितः उच्च नीच प्रदेशे मार्गे वहता तेन गुरोः खेद उत्पादितः
 खिन्नेन तेन गुरुराऽस्य शिरसि दण्डप्रहारो दत्ताः असी मनसि एव विचारयति अहो महात्माऽयं मये दृश्यो भवस्थां प्रापितः इति सम्यग्भावयतः
 तस्य केवल ज्ञानमुत्पन्नं केवल ज्ञानबलेन समप्रदेश एव वहन् गुरुभिरप उक्तः मारिः सार इति कौदृश्यः समीा वहन्नसि तेनोक्तं युष्मत् प्रसादाल् समं
 वहन्न गुरुभिरुक्तं किं अरे ज्ञान समुत्पन्नं तव तेनोक्तं प्रतिपाति प्रतिपाति अप्रतिपाति गुरु वसुहा मया केवली आया तितः
 इत्युक्त्वा तच्छिरसि दण्डप्रहारोऽभूत् रुधिरप्रवाहं पश्यतः पुनस्तत्त्वामणं कुर्वतः केवल ज्ञानमापुरिति विनीत शिथैरीदृशैर्भाव्यं इति चण्डरुद्राचा र्यस्य
 कथा नापुष्टी वागरे किञ्चि पुष्टी वा नालिय वए कोहं असञ्चं कुब्जिजा धारिजा पियमपियं १४ सुविनीत शिथः अपृष्टः सन् किञ्चित् व्यागृणीथात् न
 किञ्चित् अपृष्टो वदेत् अथवा अपृष्टोऽपृष्टः सन् विनीतः किमपि न व्यागृणी यात् अपृष्ट अल्पमपि न न्यादितिभावः अथ वा पृष्टः सन् अलीकं न
 वदेत् पुनः क्रोधं असत्यं कुर्यात् गुरुभिर्निर्मलितः कदाचित्तः क्रोधः स्यात्तदापि क्रोधं विफलं कुर्यात् अप्रियमपि गुरुवचनं प्रियमिव आत्मनोहित मिव
 स्व मनसिधारयेत् १४ अथ क्रोधस्य असत्यकरणे उदाहरणं ॥ यथा कस्यचित् कुल पुत्रस्य भ्रातावैरिणव्यापादितः अन्यदा कुलपुत्री जनन्या भणितः
 पुत्रत्वद् भ्रातृघातुकं वैरिणं घातय ततः स वैरो तेन कुलपुत्रेण ग्रीधं निजबलात् जीवग्राहं गृहीत्वा जननी समीपे आनीत भणतिथः अरे भ्रातृघातक

अनेन उद्भवेन त्वामहकहम्भि तेनापि उद्भमित प्रचण्ड दृष्ट्या भयभीतेन भणित यव शरणागता न हन्यते एतद्वच शुक्ला कुलपुत्रेण जननी सुखमवलोकित
जनन्या च सत्वमपलब्ध उत्पन्न करुणया भणित हे पुत्र शरणागता नहन्यन्ते यत सरणागयाण विस्म भियाण पण्याण वसण पत्ताण रोगी अशुभमाण
सपु, रिसानेव पहरन्ति १ तेन कुलपुत्रेण भणित कथ रोप सफलो करोमि जनन्या उक्त वक्त सर्वत्र न रोप सफलो क्रियते जननी वचनात् स
तेन सुक्त तयोयरणेषु पतित्वाचामयित्वा चापराध स गत एव क्रीधमसत्य कुर्यात् इति कुलपुत्रस्य कथा धारिजा पियमपिय एतत्पद कथा
यथा वीतभयपत्तने एकदा महद शिवमुत्पन्न तयो मान्त्रिकास्तत्रायाता रात्र पुरस्तै कश्चित वय अशिव उपयमयियाम रात्रा भरित । केन प्रका
रेण तेषां मध्ये एकैनीक मन्त्रसिद्ध ममैक भूतमस्ति तदत्यन्त रूपवद्गोपुर रथ्यादिप भ्रमत्य पश्यति स म्त्रियते यद्वात् दृष्ट्वाधोमुख स्यात् सर्वरोगे
सुथते रात्रा भणित अनेन अति रोपणेन भूतेन अथ द्वितीये मान्त्रिकेणोक्त मम भूत महाकाय लम्बोदर विस्तीर्ण कुञ्चि पश्यीयं एकपाद
विकृतरूप अष्टदहास कुर्वन् दृष्ट्वा योहसति तस्य शिर सप्तधा स्फुटति यस्तु तद्गत धूप पुष्प सुत्यादिभि पूजयति, स सर्वरोगै, मुच्यते रात्रोक्त अनिनापि भूतेन
स्रत अथ तृतीयेन मान्त्रिकेणोक्त ममाप्येव विध भूतमस्ति पर प्रिया प्रियकारिणञ्चन दर्शना देवरोगिभ्यो मोचयति रात्रोक्त एव भवतु तथा तन्नगराशिव
उपयान्त ततो वृषादिजनै स तृतीय मान्त्रिक एव साधुरपि पूजानिन्दा प्रिया प्रिय सहेत उक्तञ्चलाभालाभे मुखेदु खे जीवति मरणे तथा स्तुतिनिन्दा
विधाने च साधव समचेतस १ स्तुतिनिन्दादो न रागद्वेषवान् साधुभवतीति इति त्रयोमन्त्रिकाणा कथाअप्याचे यदमे अन्वो अप्पाहु खलुदुदमी अप्पादन्तो

नालिय वए । कोह असच्च कुब्जेजा धारेञ्जा पियमपिय ॥१४॥ अप्पाचिव दमेयव्वो अप्पाहु खलु दुदमी । अप्पादतो

नहीं एतले क्रीधने असत्य करे नि फल करे धा खमे पि० इष्ट अनिष्ट गुरनी वचन सामलीने १४ कोह असच्च कु ए पद उपरि रागद्वेष अण करे कुल

सुही हीइ अस्मिं लीए परलय १५ आत्माए वदमितव्यः वशीकर्तव्यः इइति निद्ययेन खलु यस्मात्कारणात् आत्मा दुर्दमी वर्त्तति आत्मान दमन् जीवः सुखी भवति अस्मिन् लीके च पुनः परत्र परभवे च सुखी भवति १५ आत्मा दमने दृष्टान्तः यथा एकस्यां पक्ष्मां द्वौ भ्रातरी तस्करनाय कौस्तः सार्धेन सह गच्छतां साधूनां वर्षाच्छतुः प्राप्तः नच तत्र कीपि साधु भक्तीस्ति तेन साधवस्तस्करनायकयोः समीपिगताः साधु दर्शनेन तौ चौरनाय कौ आनन्दितौ तान् प्रणम्य कथयतः किं प्रयोजनं भवतां साधुभिर्भणित अस्माकं वर्षा सुविहर्तुं न कल्पते ततो वर्षावास प्रायोग्य सुपात्रयं प्रार्थयामः ताभ्यां च सहषं साधुना सुपात्रयोदत्तः तत्र विखस्तास्तिष्ठन्ति साधवः चौरनायकाभ्यां भणितं अस्माकं गृहेषु सम्पूर्णं भक्तादि गृहीतव्यं साधुभिर्भणितं न कल्पते एकस्मिन् गृहे पिण्ड ग्रहणं साधूनां ततः सर्वेषु उचितगृहेषु विहरियामः उपात्रय दाने नैव भवतां महापुण्य सम्बन्धीजातः उक्तञ्च जीदिइ उवस्त्रयं मुनि वराण तव नियय जाग जुत्तां तेषां दिवावयत्रपाण सयणासणविगप्पा १ तव सञ्चम सञ्जाओ नानाभासी जणी वयारीय जासाहण मवगाह कारी सिञ्जाय रीतस्स २ पावइ सुर नररिहीस कुलपत्तीय भोगसाभिती नित्यरइभवमगारी सिञ्जादणैण साहणं ३ इदं साधुवचः सुत्वा तौ अत्यन्त परिशुष्टी तेषां साधुना सुपद्रवं रचतः विद्यामणादि भक्तिश्च कुरुतः सुखेन साधूनां वर्षाकालोऽतिक्रान्तः गच्छन्तिः साधुभिस्तयोचौरनायक थौरन्य व्रत ग्रहणाऽऽसमर्थयोर्निशाभोजन नियमदत्तः तयो रेव सुपदिष्टं मालिन्ति महीयलं जामिणी सुरयणी अरा समन्तेणन्ते वित्यलन्ति अफुडं राईए भूञ्ज माणाउ १ गेहं पवीलि आउ हणन्ति वमणश्च मलिया कुणइ जूआजलीयरत्तह कीलि अउ कुट्टरीगश्च २ वालो सरस्स भङ्गं कंटोलगइगलं मिदाएश्च तालु मिविन्वइ अली वञ्चण मञ्जंमि भुञ्जंती ३ जीवाण कुन्नुमाईण पायणं भायणधी अणाईसु इमा इरयणि भोयण दीसे कीसाहि उसरइ ४ अतोऽस्मिन् इडव्रतेइड प्रयत्नैर्भवितव्यमिति भणित्वागताः साधवः तावपि चौरनायकौ सपरिवारी कियन्मार्गमनुगम्य निहसी मुनि सेवया क्तार्थत्वं मन्यमानौ

पुत्र दृष्टात् जाणवो क्लिष्टहोक् गामे एक कुल पुत्र के तेहनी भाई वैरीये विणास्यो तिवारे तेमा बेटानि कहे हे पुत्र ताहारा भाईना विणामणवालानि तु विणाम ते मातानी वचन लेद तिणे नइडे बेटे आपणे चल करो भाईनी मारणहार जीवतीपकटि माता आगलि कल्लो मीरवध बाघी खत्र काटी बील्यो भ्रात घातक ठुक्तने आहण तिवारे वैरो भयभीत धके कहे जिहा ग्ररणागत आयाने किम हिणये तिम आहण एहवो वैरीनी वचन सामलीने बेटे मातानी कस्यो माता महासुरनी धणियाणो आपणा बेटानि कहे हे पुत्र आपणे सरणागत आयीने न हणीये जे भणी शासमे कहे हे यत् सरणागताण विस भियाण पणयाण विसणपत्ताण रोगीअ जगमाणसपुरिसाने वपहरति १ सत्पुरुषते एतलानि परापर न करे एहवो वचन सामली बेटे कल्लो हे मात उपनी क्रीप कोम सफल करं तिवारे मा कल्लो हे पुत्र सगले रोस सफल न करवी तिवार पळी तेणे आपणा भाइनी मारणहार वैरीने सग्या देद जो माडो घरे मूर्खो तिम वोजी जीवे रोस जपनी हुती उपसमावे यत् उवसभेणहणकीह उपने क्रोध चमाद अस्त विफल करे इम कुलपुत्र दृष्टान्त १ धारिज्यापि यमप्यियए उपरिक्कथा लोखीये के रुडो वात ग्रहीये माठी छडीये यथा वीत भय पाटणे अग्निवमृगी जपने दु ते उदायन राजा कन्दे चिण मन्त्रवादी आथा राजयितेशोलाथा तुम्हे कुण्छी तुम्हे स्यकरो की तेहवे कल्लो अमे मन्त्रवादी छा मन्त्रवले भूत एक छित आवे नगर माहिण मे अग्नीव मृगी नगर माहि समावे तिवारे पूछे ते भूत तुमारा केहवा के तिवारे ते माहि पहिलो मन्त्रवादी कहे हे राजा माहरो भूत अतिही रूपयत् सीध के पिण ते भूतने उचो दृष्टे सान्हो जीवे ते मनुष्य मरे तेजे भूत देखी नीची जीवे तेहनी रोग जावे निरामय थाये एहवो वचन मन्त्रवादीनी सांभली राजाद विसम्यां इणरो अमारि खपनयो राजाद बीजी मन्त्रवादी भूत बीलाथो ते कहिवा लागी माहरो भूत अतही कुरूप के पिण तेहने देखीने न इसे मने मनुष्य ते भूतने स्ववे तेनीरोग हुई अने जे निदिते मरे राजाने पीण विसरल्यो राजे लीजो मन्त्रवादी बीलाथो ते कहे हे राजन् माहरो भूत कुरूप के

तिष्ठतः अन्यदा ताभ्या धाटो गताभ्या बहु गोमहिषमानोत अल्लरालमार्गे तत्परिवार पुरुषैः कैश्चिन्महिषी व्यापादितस्तज्ञोजनाय सपरिवारी ती तत्रस्थितौ केचित्परिवारपुरुषामद्यानयनार्थं ग्राममध्येगताः महिषव्यापादकैः परस्परमितिविष्टं मांसार्हं विषं प्रचिप्यमध्येगतेभ्यो दीयततदा बहुगोमाहिषं भागे प्रागच्छति आत्मना इति विस्मयते स्तथैवकृतं भवितव्यतावशेन ग्राम मध्येगतैरपि तथैव सच्चिन्म मद्यार्हं विषं प्रचिप्य तलागताः परस्परमिलिताः कूटचित्ताः सर्वेपितौ चौरनायकीतुनिः कूटैस्तः तावता सूर्योस्तः गतः तौ चौरनायकी रात्रिभोजन नियममङ्गभयेन न भुङ्क्ते अन्ये परस्पर दत्त विषसंयुक्त मयमास भक्षणेन मृताः कुगतिं गताः तौ भ्रातरो इहलोकिके परलोकिके च सुखीनौ जाताौ रात्रिभोजनत्रत ग्रहणेन जिह्नेन्द्रिय दमनात् इति चौरनायक दृष्टान्तः वरंमे अप्पादन्ती संजमेण तवेण्य माहिं परेहि दम्बन्ती बन्धनेहि बहेहिय १६ अथ किञ्चितयन् आत्मानं दमयेदित्याह संजमेन च पुन स्तपसा मया आत्मादान्तः वशीकृती वरं भव्यः आत्मान आधार भूतत्वात् दांतः असंयम मार्गात्रिषिद्धी भव्यः संयमेन सप्तदशविधेन

सुह्री होद्र अस्मिंलोए परत्यय ॥ १५ ॥ वरं मे अप्पा दंतो संजमेण तवेण्य । माहं परेहिं दम्बन्ती बंधणेहिं

पिण जे रुडी पाडुइदृष्टि साहसुजीवे ते स्तवना करे तथा निन्द्या न करे तीही तल्लाल रोग थी सुकाई समाधि थाई एहवो वचन राजा सांभली भंत्रवा दीज परितुष्टमान हवी राजाइ ते मान्यो तणे नगर मांहि थी रोग दूर कीधी सर्वलोकने प्रेमवंत हुवी ती जे साधु हीइ ते त्रीजा भूतनी परे सुति अनिंदा सांभली राग द्वेष न करे ते पूज्य थाइ तिम साधु पिण्विस रूप थी रहित अंगविभूषा नहीं पिण सर्वजनने कर्मादि कदर्थ थी मूकावि पीते पीण सुख पामे अपरने पिण सुखकारी सार पदार्थ संग्रह करवी जिम भूतनी परे इति मंत्रवादी दृष्टान्त सम्पूर्णम् । अ० इंद्रीनी इंद्रीरूपपीतानी आत्मा मन द० दमवी अ० आत्म हु० हुवे निश्च दु० दीहिली ते भणी आज दमवी अ० आत्माने द० दम्बी थकी सु० सुखी थावि अ० इहलोकिके विषे प० पर

लोकने विषे १५ व० प्रधान भलु मे० मुभने अ० आपणी आत्मने द० दस्यो स० समयसतरे भेदे करी त तपस्था वारे भेदे करी दमवी आत्मने म० रखे पाडयो भू डी अ० हु प० अनेरे द० दस्यो थकी व० रासडी प्रमु ड वाघणे करी लाकडीयादिकने वधे करीने गाथा १५ १६ मीउ पर कथा लिखिये जिम उपदेस मालामाहि छे तिमज जिम चोर हुते आपणा कर्मना वस थकी जिणे रसना इ द्रीये सुखीया हुआ ते दृष्टात कहि छे एक पहाडना गान्निमा छिवे भाइ चोर पक्षीपती तिहा रहे ते सदा चीरि करे नगर गाम मारे तिहा विहार करता वरसालाने घुरे साधु आब्या तिहा कोइ साधुनो भक्त यावक न थो ते भणो महात्मा चोर पक्षीपतिने मिल्या महात्मने दर्शन पक्षीपति हरथा प्रणाम करी चोरे पूछ्यो हे भगवन् तमे भ्रम्मु लगौ किणकारण आब्या तमारे दर्गने घणो पुण्य घाय जे अमारी भाग्य दशा पूज्य वाया तिवारे महात्मा बोल्या जे वरसाने यतीनेहीडनु नकल्पे ते भणी वरसाला योग्य वसती रहिवाने द्योती रहोये जोगवहीये तप करीये सयमनिरवाहि तेभणी गाला आपी घणो हर्ष पाय्या वली कहि पूज्य आपणे घरे भात पाणी लेब्यो तुमारे लोधे अमने घणो लाभ थासी साधु कहि एकण घरे आहार लेधी न कल्पे ते भणीला भाला भजाणी जसी अने तुमे उपायय दीधी तेहने घरे आहार लेवी शयातर घरनी आहार न लेवी उपायय दीधी तेह थी तुमने मोटो लाभ उपनो जिम सिहाते कहि छे यत जोदिइसुणि पराण उवस्य तसबइफल होइ तवसयमसज्जाए पावेइ सर नररिइय १ एहवा ऋपिना वचन पक्षीपतिवे भाइ हर्षपाय्या रातिदिवस साधुनो सेवा करे एहवा ऋपीवर तपनियम करता अमादि गुणवइता वयाकाल बीती तिवारे साधुव्रतलेवाने विषे पक्षीपति, वैभाइने छितोपदेग दीधो जेराचि भोजन न करियो एहवी नियम देवा मायो तेणे दाचिख्या लाज थी नान कल्लो नियम लोधो जतिये रातिभोजन नादेखता दोप, देखाबा त्रिहु लोके प्रतिबोध कहि यत 'मेघापिपिलिकाहति यूका कुर्याज्जलोदर कुरुते मच्चिकावात कुठरोगश्च कौलिक १ कण्टकी दारुखण्डश्च वितनो तिगलथथा व्यजना

तर्निपतित शूलविध्यति हृद्यीक २ गतिस्स विगले वालिखर भङ्गाय जायते इत्यादयो दृष्टिदोषा सर्वेषां निशमोजने ३ रात्रि जीमता जेहना पेट माकीडी जायती बुद्धिजाये जी बीरनी कांटी अथ वावी जीइ दारुण्ड कांटी जीमणमाहे आवेती गले हृषा करे बंजन सालणा माहे वीकुनीलोरी आवि तो तालुओ वीधे वालक्रेण जीमणमाहे आवेती खरभंग थाई इम अनिक रात्रि भोजन नास गला दीठा दीपजाणवा अने जी रात्रि भोजन करे तो अवस्य राधो जाइये तिहां अंधारे अनिक जीवांनो विनाय हुवे एह भणी धर्मयतने सर्वथा रात्रि भोजन न करवी वलो शास्त्रमे कही के यतः उलुक काक मार्जर गृध्रसवरशुकरा अहिहृदिकगीधाय जायते रात्रिभोजनात् १ इम शास्त्रोक्त प्रकार, रात्रिना घणा दीप कहिने वेभाइयाने नियमने विपे दृढचित्तकीना रात्रिभोजनानी नियमलीधो साधु वीहार करी चाल्या जतीनी सेवा करी आपणपुभलु मानता के एहवे एक वारतो चोर धाडे गया हुता गांम भाजी गाई भे सडीर घणा आख्या ते पाछा आवता विचाले महिष विणासवा माओ तेहनी प्राणीय केइलेवा लागा केतला एकपुरुष तिहां रक्षा केतला एकमद्य लेवाने ग्राम माहि गया हिवे मांसने केलवणहारि एहवोचिंतव्यो अइमांसमाहे विपघाती, गाम मांहिना जाणणहारिने दीजे एतो मरे आपणे भागे घणाडीर आवे ते दृढबुद्धितिम भवितव्यताना वगि धी गांव मांहिले जावणहारि लोभ धी एवी पापबुद्धिकीवी आपण अईमद्य मारि विपघातीये आपणे नेढी रव हुत आवे एहवी वीमासीवीप घान्यो जेहवे चोर सगला एकठा मील्या एहवे सूर्य आयम्यो तिवारे ते वेभाई चोरे नायक गुरुनी दीधी आखडी रात्रि भोजन नीनेम सभारी भांजवाना भय धी अलगो जइवेठतेन जीम्या जे जीम्या ते विपना प्रयोग धी सार्थसर्वमरण पास्या ते सगला कुगति पइता तेवे भाइने गुरुनी दीधी आखडी ऊपरि अतिही भाव ऊपनी गुरु कने नियम लीधो ते जीवता रक्षा कुसले घरे आव्या सुखी थया जीव चोरे रसेंद्री दमी ते सुखीया थया तिम पीतानी इंद्रीदम्या सुखी थाई इति चोर कथाः ॥१॥ वरं मे अप्यादंतोए उपर सिचानकहाथीनीकथा

लिखीयेहे जीम हाथोद पोतानिद्र द्रीद्र जीतो तिम जीतीये एक षटवी माहे हाथीयानो यूथ रहेंहे ते यूथनी धणी महाविप थी नान्हा जन्म जातहाथी याने मारे हथियोने उगारे मनमाहे चितये रखिए मोटा थाये सुभने मारे माहारा यूथनाथथद्र वैसे एहया भय थी नान्हा२ कालभविष्ये यत सव्य गोवगविगत्तणाभी अगडण विगडणीलय कासीर जतीसीउ पुत्ताय पीयाकष्यकेउ१ कनककेतुराजा आपणा वेठाना सर्व अगोपगच्छे दावी अनेक प्रकारनी वेदना कोधी नाक कान छेदावी पगहाथनी आंगुली छेदी राजटण्या भणी वेठाने यथां हुता माहरो राज्य लेसी इणे अभिप्राय जिमतेणे राजार राज्य वांकते जातमात्र विगत कोधा तिम तेणे हाथोद आपणा वालकने विणसे एहवे एकदा कीई हथयोद गर्भधखो ल्युरे तिणे हथयोद जाल्यो माहरे गर्भमे जन्महाथीनी छेले एवहु हाथी विणासस्ये तेभणी कोणहीक उपाये हथणी गर्भराखवा भणी पग दूखनी मीसकरी हलुये२ यथ घो पाइलो ह.डे किचारे एऊ दोने आबो मोले किचारे वेदोदछे मिले द्रम करो तिण हथणीये हाथीयो जन्मी तेहवे तोण हथणीयेताप मायमनिर्जन आणीगुमधानक यसजालमाहे हाथीयोजन्मी तेहवे तिण हथणीये तापसायमनिर्जनजाणी तीमहाथी पिण सु उ भरी हचनी मूले पाणोनामे तेभणी तेतापसासीषामिक नाम दोधी तेवय प्राप्त सवलहाथो थयो केतले काले तेणे हाथी पिताने यूथसहित दीठो माकने पूछी मायेसकल हसता कथो ते समाचारपुछो मनमहिरोस धरो सिचानके आपणे पितानेहण्णियेयनीधणीथयो सर्वहथणीयाने आणमनावीपिणमनमाहिरोस राज्य जेवलो एणे आयमे हथणो फेरप्रसवसो तापसराखल्ये तो सुभने मारखे एहवीविचारी तापसायमपिणास सू केतलाएकराख्या वैर कारीथद्रभीठानीपरे ठामने विणासे ते तापस महादूखोया यथा फलफूल लेहन सके तिवारे जाखो ए कुपावे माहु करे ते भणी फल लेई राजा अणिक पासे आख्या राजा ने कर्मां हे राजा न सर्वलचणोपि सिचानकनामे हाथी ते आणीनेस्तमे वधी जीम अमेसखे रहींये राजाये आणीयागतमे वाथी तिवारे देतापसहसिवा

लागा किमवयकरस्त्री हे हस्ती राजा ताहरी बल किहां गयो ते गवीतनी फलपास्यो एवचनसाभली हांथीने रोस चळो आलान भांजसांफलतोदता पसाने पठे धायी तापसना आश्रम विणास्या सगलाइ तापस हत प्रहृत कीधा वली राजा श्रेणिक तिमज पकडावाना उपाय कया पिएहायो यमिनावे तेणे प्रस्तावे तेणे राज्यनी गीत्रजाट्यो तेणे यावी हाथी समभाब्यु प्रही हस्ती राजा गजगतिनाचालणहार सर्वलक्षण सपूर्ण सांभली रायने स्युं माज्ज करेके पूर्व भरयंभारी चपा एहवे नामे नगर वसु नामे विप्र ते महाधनवंत नित्य सहस्र भोजन करे अने वरस प्रतियाग करावे तेहूये जालवयाएकर राख्यो जे उगरता भात पाणी लेजे अने महीने रूपीयोइसते धरती समारे ब्राह्मण जोसि तिहांग्वानसंजार पावता वारे पिण ते घनदेव यावक हे तेणे कश्यो पात दान दीधी इम लाभे हे वसु कह्ने ब्राह्मण ते पात्र धनदेव कह्ने पात्र ते साध वसु न माने ते घनदेव साधूने सापणे घरे तंडो भातपांणी पड लाभ्या तेहना पुण्य हो मरी धनदतनी जीव श्रेणिकने घरे नंदा राणीनी पुत्र नन्दखिण प्रथी ते दानफल भोगयेके रुपपात्रनी फल योडोई अन्नत्त गुण थया अने तेहने वसु धणी हो दीधी पिण्य अज्ञानना वसु धी सिचानकहा यो थयो ते सम्यस्य सांभनी जालोत्तरण उपनी पापदामि भनो विवेक उपनी आपणये जिहां रायनी हस्तिगाला हे तिहां आवोउभी रथी प्रभाति समे राजायें हाथी सांभलीने वधाथी अनेक मद्रनीक करी पाट हस्ती थाथी एकदा प्रस्तावे ह प्र विहस्र कोणिकने विरोधिनासो सिचानिक नेई यिगालाई गया वेहे महाराये राथ्या कोणिक विमाना वोटी मनुष्य कीडी मरण पामि पिण विगालाई' लेवाइ' नही नित्य सिंचाकनेके चढी राती वात्र दीये कोणिकना कटक मशी म पडे पडे ३३ महस्र हाथी सणा मट गलित थाये कोणिक राजा अनेक उपाय कया पिण हाथी वसिनाथे जे कुंठे सेठे सने ज्ञान करी जाण तिबारे ते उपाय सर्वविक्रम थाये कोणिकनो कटक दहिनी परे विलीयो तिबारे कोणिके कश्यो जे कोट्टे हाथीने तेहने माई तेहने मन सुवर्ण पापु तिवांग एकप्रसुभटवां भणी एकामण्ड' करिष्यु इम

प्राप्ता पद्येन्द्रियरूप साधुसार्गे नेतव्य यथा दुर्धनीती अर्था उन्मागीत् प्राजनके न तीदन काष्ठेन मार्गे नीयते तथा यमात्मा पीत्वर्ध पुनर्मनसि एव चिन्तयेत् अष्टपरै अन्धलोकोर्ध्वने युद्धलादिभि च पुनर्धर्मैर्ध्वने कुगचपेटा प्राजनकादिभिर्दमितो सा भयं यदा अन्धे मम ताठना तर्जनादिभिर्दमम करिष्यन्ति तदा मम श्रेयो नास्ति यदुक्त सहकनीवर खेदम चिन्तयन् स्वयगताहि पुनस्त्वव दुर्लभा बहुतरस्य सहि षसि जीवरे परवगेन च तत्र गुणोक्तिरे इत्यादि विषया आत्मावगीकर्त्तव्य १६ अत्र सिद्धान्तक दृष्टान्त एकस्या अटव्या महत्परं गजयूय वसति यूयाधिपतिजात कर्मभक्त यिनाययति अन्वदा तत्र एका करिणी स्वर्गभिषी जाता एवं चिन्तयति यदा कथमपि गजवानको आयते तदा धनेन विनाशते तत सा करिणी यूधादपसरति यावता यूयाधिपतिना यूय मक्लीकृते तावता द्वितीये तृतीये दिवसे सा यूयमध्ये गत्वा मिलति एवं कुर्वत्या तथाऽप्यदा ऋथायमपद दृष्टं सा तत्र भागता गुप्त स्थाने प्रवृत्ता गजकलभीजात स गज कुमारै सह आरामान् सिद्धति तत स्नापसंस्नस्य वैचनक इति नाम कृत स वय स्त्री जात भ्रमन्त्या यूयाधिपति दृष्टानवोदित बल समारितयान् स्वयं यूयाधिपतिजात तापसा यम मपि समून विनाशितयान् मन्नातेवाऽप्या करिणी अन्य प्रच्छन्न मातिष्ठतु इतिविचारितवाय ततस्ते वष्टा ऋतय पुष्क फलपूर्णं इहता येणिक रात्र पात्रेगता कथितवते सर्वं लक्षण सपूर्णोहस्तो वैचनक मामा वने तिष्ठति तत येणिकेन स्वय तपने गत्वा महता बलेन गृहीत्वा पानीय स पानानस्तम्भे वष्ट ऋतयिभि स्त्ररागव्येतिनिर्भक्ति गजराजकृते गौडीर्यं गत प्राप्त त्वयाऽप्यद विनय फल इति युत्वा स गज प्रकाम इष्ट स्तम्भ भक्ता तेषा वृष्टी धावित ते संयुहत प्रवृत्ता कृता प्राप्तेटव्या भग्ना पुनरपि तेषामायया पुन येणिक तद्गज यदृणाय गत पूर्वं भवसद्गत देयेन गजयोक्त वल्लपरैर्यो दमनात् स्वय दमन वरमिति तद्ब्रं युत्वा स्वयमागत्यामानस्तम्भमाश्रित यथाहि अस्य स्वय दमनाहुनी जात तथा

इत्येपा मपीति पडिणोयसु बुढाण वाया अदुव कम्मणा आवी वा जइ वा रहस्से नेव कुज्जा कया इवि १७ अथ पुनर्विनय , शिञ्जामाह ॥ च पुनर्बुढानां आचार्याणां प्रत्यनीकं शत्रुभावं वाचा वचनेन क्त्वा न कुर्यात् त्व कि जानासि इत्यादि रूपेण निर्भर्त्सनां न कुर्यात् अथवा कर्मणा क्रियया संस्कारको लङ्घनेन चरणटिना सङ्घट्टनेन अविनयं न कुर्यात् तदपि आवी इति लोकसमचं यदिवारहस्यं एकान्ते कदापि सुशिक्ष्यो गुरुभिः सह वहेहिय ॥१६॥ पडिणीयंच बुधाणं वाया अदुव कम्मणा । आवीवा जइवा रहस्से नेवकुज्जा कयाइवि ॥१७॥ न

कहि वीडी लीधी हाथीने अरथे अनेक पास मांढ्या कण्ठकगर्त्ता विषमिश्र फलवाणी त्रिणकीधा पिण ते सर्व विफल नित्य हस्तविहस उपद्रव कटक माहि करे तिवारे तेणैपुरुषेप्रच्छन्न खाई खणावी ते मांहे अग्निभरि जपरि सिचत्रणपाथया तिणे करी कीई न जाणे एकदिननास यंत्र राख्या एक दिशि सिह राख्या एक दिसि मनुष्य हुसीयार रहे एहवे सत्रववड हुई हस्तविहस दीनु भाई सिर्चानक चढी पूर्ववैर कटकमाहि आव्या तेणे समे हाथी पूर्वदिसी रुधी जाणीपगन उपाडे तिवारे अंकुस हाथी ठेले पिण हाथी न चाले तिवारे हस्त कहे अहो हाथी सिचानक अमने इण बेला तूपिण छे हय्ये छे ती कुण भली थासी एहवी सांभलि हाथी चिंतव्यी ए अज्ञान थका न जाणे तिवारे वचन संभाय्यु अप्याचिवदमेअव्वी आपणी आत्मा दमीजे परने दमीये स्यु थाई अभीमाननावसथी हस्तविहस भाईने उत्तारी पोते अग्नि माहि भंप्यो मरोने देवगति पांमि हस्तविहस अतिदुःख कीधी वयरागे महावीरखामी पासे दीचा लीधी सुख पास्या इम आपणी आत्मा दम्या गरज सरे इति सिचानक कथा संपूर्णम् ॥१॥ प० प्रत्यनीक पणी वैरीपणी बु० गुरनी वा० वचने करो गुरने शिथ इम कहे ते सुभने विपरीत अर्थ कब्धी अ० अथवा गुरनी संथारादिक चांपे ते कार्ये करी प्रत्यनीक पणी हुइ प्रगट लोक देखता ज० जी वा० अथवा र० एकान्ते गुरनी विपरीत पणी ने० नरके क० कठिन वचने करीने सौखामणदेतापिण १७ न० गुरने समीपे समीपंक्तिन बेसे

शब्दभाव न कुर्यादित्यर्थं शत्रोरपि गुणापात्रा दीपावाच्य गुरोरपि इति कुमति निरासार्थं कदापि नैव शब्दस्य ग्रहण १७ न पक्षश्चो नपुरश्रीनेय किञ्चाण
पिष्ठश्चो न कुञ्चे करणाज्जठ सयशेनोपरिस्फुरे १८ अथा सनस्य विधिमाह । विनीत साधु पचतो न निविदेत् पक्ति स० माविशात् गुरुणा सहस
मानत्व स्यात् तस्माद्गुरोर्वाहुनासह बाहु कृत्वा न तिष्ठेत् पुनर्गुरुणा पुरतोऽग्रतोपि न निषीदेत् वन्दना कुर्यात् गुरुवस्य गुरुणा सुखायनिकन न स्यात्
कृत्याना आचार्याणा पृटतोपि न स्यात्तस्य गुरुशिष्ययो उभयोरपि मुखादर्शनेन तथा विधरसवत्वाभाव स्यात् न च पुनर्गुरुणा करुणा जड्यासह करजडा
युञ्जेत् सवद्येत् अत्यासङ्गात् अविनयः स्यात् पुन शिष्यो गुरुणा यवन शयनेग्रथाया शयान सन् श्रासोनिषान प्रति शृणुयात् गुरुभिरक्ते सति भय्याया
स्थिते नैव शिष्ये ण एव कुर्म इति न यक्तव्य किन्तु गुरुणा समीपे आगत्य वचन श्रोतव्य इत्यर्थं १८ नैव पञ्चलिय कुञ्जा पक्खपिण्डश्च सञ्जये पाए पसारिए
वावि नखिडे गुरुणक्तिए १८ पुनरासन विधिमाह शिष्य गुरो समीपे पर्यस्थिकानैव कुर्यात् जज्ञो परिपादमीचन न विधतीत च पुन पक्षपिण्ड
जानु जज्ञोपरि वज्र वेष्टनाम्बिका योगपदाययिका अथवा बाहुद्वये नैवकाय वधात्मिका गुरुणा पार्श्वे न कुर्यात् वा शब्द पुनरर्थे पुनर्गुरुणा श्रुतिके

पक्खश्चो न पुरश्चो नैव किञ्चाण पिठश्चो । न ज्ञु जे करुणा ज्जठ सयशे नो पडिस्फुरे ॥१८॥ नैव पक्खलिय कुञ्जा
पक्खपिण्डव सजए । पाए पसारिए वावि न चिठ्ठे गुरुणतिए ॥१९॥ आयरिएहि वाहिहत्तो तुसिणीञ्चो न कयाड्ववि ।

न० गुरुने पागलिन धेमे ने० निषेधार्थं कि० आचार्यने पि० पूठे न वेसे न० सवद्यो नकरे उ० पीतानी सायले करि ज० गुरुसाथसने स० सद्यारादिकने
विषे वेठो यज्ञो गुरुने उत्तर न दिये १८ ने० ने गुरुने समीपे वस्तनी पालठीषान्नेने कु० न वेसे प० याज्ञनी पालठीवालीने पिण नवेसे सयतीद साधु

सम्बुद्धं वा पादौ प्रसार्य न तिष्ठेत् २० आयुरिह वा हितौ तुसिणोभौ न कया इति पसायपेहोनियागङ्गी उव चिह्ने गुरुं सया २० पुनः सुशिशुः
 आचार्यगुरुभिर्व्याहृतं आहृतः सन् तुष्णीकी न भवेत् अत्र कदापि शब्दीग्लानाद्यवस्थायां अपि गुरुभिर्गामंत्रितः यत्नौ सत्यां मीनं कृत्वाश्रुतमश्रुत न
 कुर्यादित्यर्थः कथं भूतः सुशिशुः प्रसादप्रेषो प्रसादं गुरुणां संहं प्रेक्षीत् शीलं यत्स्थसः प्रसादप्रेक्षीयतः अन्येषु शिष्येषु सत्सु गुरवो मां शब्दयन्ति ततो
 मम महद्भाग्यमिति मनसि चिन्तयति पुनः कथं भूतः सुशिशुः नियागङ्गी मोक्षार्थी मोक्षकारणत्वात् सुशिशुः अनेन विधिनागुरुं सदा
 उपतिष्ठेत् सेवेत २० पुन विनयशिष्यां वदति आलवन्ते लवन्ते वा न निसीद्वज्ज कया इति षड्जगण आसणं धीरो जम्भो जुप्तं पडिस्तुणे २१ धीरो बुद्धि
 मान् यतो यत्नवान् सन् शिष्यो यद्विधेयं कार्यं गुरुभि र्व्यदिष्टं तत्कार्यं प्रतिशृणुयात् अङ्गी कुर्यात् पूर्वं गुरौ आलपति सति ईषत् वदति सति अथवा
 गुरौ लपति सति वारं २ कथयति सति सुशिशुो न निषीदेत् गुरुणा कार्ये उक्ते सति आसणं स्वस्थानन्तलाधीरोर्धेयवान् यनेन एकाग्रचित्तेन यत्
 गुरुणा कार्यं उक्तं भवेत् तत्कार्यं अङ्गी कुर्यात् इत्यर्थः २१ आसणगम्भी न पुच्छे ज्ञा नेवसिज्जा गम्भी कया आगम्भु कडुम्भी सन्तो पुच्छिज्जा पञ्चली
 उडो २२ आसने गतः स्वस्थाने स्थित एव सुशिशुो गुरुं प्रति सूत्रार्थादिकं न पृच्छेत् तथा पुनः शिज्जापत्ती रोगाद्यपद्रवं विना कदापि भयानः

पसाय पेही नियागङ्गी उवचिह्ने गुरुं सया ॥२०॥ आलवन्ते लवन्तेवा ननिसिज्जा कया इति । चड्रजगण आसणं धीरो

प० पमलाबा पसारिने पिणन वेसेवा० अथवा न० इमनरहे गुरुने १६ समीपे आ० गुरुने एकने बा० वीलब्ध्या थको तु० अण वीली न० रहे क०
 कदाचित् रोगावस्थाद् पणि प० प्रसाद कीधो.मुभ जपरं पे० उ० इम जाणे नि० मोक्षार्थी थको इम रहे गु० गुरुने समीपे स० सदा कालने २० आ०
 गुरुने एकवार बीलायी अथवा ल० वारंवार वीलाब्ध्या थको न० वेसी रहे क० कदाचित् व्याख्याना दिव्याकुल थयी ष० सुकीने आ० आसण धी० बुद्धि

उ०टीका
 अ० १
 २०

सूत्र

भाषा

सूत्रादिक न पृच्छेत् तदिं किं कुर्यादित्याह गुरो समीपं भागल उल्लुटकी मुक्तासन कारणत पाद पुच्छनादित्य सन् यात्को वा प्राञ्जनिर्वशाञ्जलि
सूत्रार्थादिक पृच्छेत् २२ एव विणय लुप्तस्य सुप्तं अत्यश्च तदुभय पुच्छमाणस्यसी सस्य वा गरिजाजहासुय २३ आचार्य एवं भसुना प्रकारेण
विनययुक्तस्य शिष्यस्य सूत्र अर्थश्च तत् उभय सूत्राय पृच्छमानस्य उभय पूर्वोक्त सूत्रार्थं व्याकुर्यात् वदेत् विनयवत शिष्यस्यापि यथा इत गुण पर
स्मरती यथाप्रात सूत्राय गुरु कथयेत् इत्यर्थं २३ सुप्त परिहरे भिक्षू नयत शरिणि वए भासादोस परिहरे मायश्च वज्जए सया २४ भिन्नु

वभो लुप्त पडिस्सुणे ॥२१॥ आसणगभो नपुच्छेज्जा नेवसेज्जागभो कयाद्दवि । भागम्सु कडुभो सती पुच्छेज्जा
पजली उडो ॥२२॥ एव विणय लुप्तस्य सुप्त अत्य च तदुभय । पुच्छमाणस्य सीसस्य वागरेज्ज जहा सुय ॥२३॥
सुप्त परिहरे भिक्षू नय भोहारिणि वए । भासा दोस परिहरे मायच वज्जए सया ॥२४॥ नलवेज्ज पुठो सावज्ज

यंत ज जे कोइ गुरु आदेय दीये ते आदर पर थकी प० करे २१ आ० पीताने आसण वैठो न० न पूछे गुरने सूत्रादिक काइ एक ने० सयारे वेठो
न पूछे कादावित् वडु इतिपणी आ० गुरनेइ समीपे आवीने उ० जकडु थयी छे पु० पूछे सूत्रादिक प० वैशद्य जोडीने २२ ए० एणी परे पि० विनयवत
शिष्यने सु० सूत्र प्रने प० अर्थ त तेक्खि पु० सूत्रार्थं पूछता थका सि० विनीतशिष्यने वा० सूत्रार्थं कहे ज० जिम गुरु समीपे साभलो इतो तिमर ३
वनी विनीत शिष्यने वचन विनय कहे छे सु० मया प० वर्जे भि० साधु न० नियो करी भाया वा० न बोली भा० भायागा दी० दीय प० परिहरे मा०
माया प गच्छ थकी कीधादिक व० वर्जे स० सदाइ २४ न० बीने पु० पूछी थकी सा० सावय न० निरर्थक प्रयोजन विना न बोले पर नी मर्म न

साधुर्मृषा भाषा परिहरेत् च पुनः श्राद्धारिणिं अवधारिणीं निश्चयात्मिकां एवं एवेति रूपां भाषां न ब्रुवीत भाषादोषं सावथाभुमादनादिकं परि
हरेत् च पुनर्मायां वर्जयेत् एकस्या मायायाग्रहणेन अन्येषामपि क्रीधमान लोभादीनां ग्रहणं सर्वान् कषायान् परिवर्जयेत् कषायाणां वर्जनात्
मृषा भाषायाः वर्जनं स्यादेव कारणभावे कार्याभावः २४ नलवेज्ज पुष्टी सावज्जं न निरष्टं न मन्थयं अप्यण्डा परडा वा उभयसन्तरेण वा २५ पुनः
साधुं पृष्टः सन् सावथ्यं स पापवचनं न लपेत् न भाषेत निरर्थकं वचनञ्च न आलपेत् न च मर्मकं मर्मरूपं, साधुर्न ब्रूयात् म्रियतेऽनेनेति मर्मं लोक
राजविरुद्धादिकं अथवा मर्मणि गच्छतीति मर्मगं यस्मिन् कर्मणि प्रकटीभूते सति मनुष्यस्य मरणमेव स्यात् तदपि वाक्यं आत्मार्थं वाऽथ वा परार्थं
वाऽथवा जन्मार्थं अथवा अन्तरेण प्रयोजनं विनापि च न वदेत् इत्यर्थः २५ स्वगत दौषत्यागं उक्त्वा सपदि कृतदौषत्यागमाह समरेसु अगारिसु
सन्वीसुय महापहे एगोए गत्विए सिद्धिनिव चिद्धेन संलवे २६ एतेषु स्थानेषु एकः एकाकी सन् साधुरेकाकिन्या स्त्रिया साईं न तिष्ठेत् न च एकाकी
साधुरेकया कामिन्या सहसं लपेत् तानि कानि स्थानानि समरेषु गर्दभकुटीरेषु लोहकारग्यासासु वा तथाऽगारिषु शून्यग्रहेषु तथा सन्धिषु गृहहृदया
न्तरालेषु तथा महापथेषु राजमार्गेषु अत्र एकस्याग्रहणं अत्यन्त दुष्टत्वं प्रतिपादनार्थं २६ जं मे बुध्वाणुसासन्ति सीएण फरसेण वा ममसासुक्तिपि हाए
पयश्चोत पडिस्सुणे २७ अथ गुरुभिः शिष्यार्थं शिष्यमाणः शिष्यः किं कुर्यादित्याह बुध्वा गुरवः यत् मे ममसीतिन सीतसवचनेन वाऽथवा परुषेण
ननिरष्टं नमस्मयं । अप्यण्डा परडावा उभयसन्त रेगावा ॥२५॥ समरेसु अगारिसु संधीसुअ महापहे । एगोएगि

बोले अ० आपणा आत्मा अर्थे वा० अथवा प० पर आत्मानि अर्थे उ० अर्थं विना निरर्थकं चने परतो मन्थं न बोले २५ स० लोहार प्रमुखनी
गालानि विषे अ० सूना घरने विषे सं० वेधर विषे जे अंतकं इव ते संधि इवे म० राजमार्गने विषे ए० एकली साधु ए० एकला स्त्रीसंधाते ने० न

कठोरवचनेन अनुयासति शिष्यां प्रयच्छन्ति तत् ममसाभुत्ति ममलाभाय अप्राप्तवस्तु प्राप्तये भविष्यति इति प्रेक्षया इति बुद्ध्या प्रयत्न प्रयत्नवान् सन् शिष्यो गुरुवचन प्रतिश्रुणयात् अङ्गी कुर्यात् न च गुरुणा कठोरवाक्यात् श्लोथ कुर्यात् २७ अणुसासणभावाय दुकडस्य चोथण हियन्त मच्चइपत्तो वेस होइ असाहुणे २८ पत्रत्ति प्रत्रावान् प्रात्र शिथ उपाये म्दुपरुपणादी भव श्रीपाय गुरुशिचावाक्य तथा च पुन दुकृतस्य प्रेरण हा किमिद दुष्ट कर्मकृत इत्यादिरूप तद्वचन हित इहलोक परलोक सुखद मनुते असाहुणोऽसाधो कुशियस्य तत् गुरुणा परुपवाक्य हैथ देषोत्यादक भवति २८ इममेवार्थं पुनर्दंडो करोति । हिअ विगय भया वहाफरुसपि अणुसासण वेसत हाइ मूढाण खतिसीहि कर पय २८ विगतभया सतभय रहिता बुडा ज्ञाततत्त्वा एतादृगा शिष्या आचार्यं कृत अनुयासन परुप अपि कठोरमपि हित मन्वते मूढाना मूर्खाणा कुशियाणा ज्ञान्ति घमाकर श्रेधि

त्यिए सद्धि नेव चिठ्ठे न सलवे ॥२६॥ जमे बुद्धाणु सासति सीएण फरु सेणवा । ममलाभोत्ति पेहाण पयश्रोत्त पडिख्खुणे ॥२७॥ अणुसासण मोवाय दुकडस्य चोथण । हिय त मन्नइ पत्तोविसहोइ असाहुणो ॥२८॥ हियविगय

रहे जभो न० नीले नही २६ ज जेम० मुभने गुरु अ० ज्ञानादि आचार सीखवे सी० सकोमल वचने करो वा अथवा क० कठिन वचने करो शौख दीये हे म० माहरे लाभने अर्थे दीइ हे पे० एहवी बुद्धि करो प० आदर पर थको प० गुरुनी शीख प्रमाण करे २७ अ० गुरुनी सीखमी० सुकुमान कठिन भाषायि जपाये करो दु० भूडो काइक आचक्या पक्को ची० तेहने सीखनी देवी ची० प्रेरवी हि० हितकारी त० तगुरुनी सीख म माने प० प्रज्ञा यत वे० छेप ही० थार अ० साष्ठ अविनीत मूर्खने सीख देता २८ हि हितकारी माने विजे साधु सात भय रहित इइ वु० तत्वना जाण इइ फ०

कर आत्यशुद्धे रूपादक पुनः पदं ज्ञानादिस्थान एतादृश गुरुणा गिजावचनं द्वयं द्वेषः तु क भवति २८ प्राप्तौ उवचिदुज्जा अणुचे अणुएधिरि प्रगु
 द्वार्द निरुद्धार्द निसी इज्जप कुक्षुए ३० सुगियः एतादृगे प्राप्तने उपतिटित् कोदृगे प्राप्तने तदाह प्रगुचे द्रव्येण भावेन प्रनुने गरीरासनात् हीनि
 पुनः अकुचे चीकारादि यद्वरहिते तादृशस्य आसनस्य शृङ्गाग्राहत्वात् पुनः ध्विरे प्राप्तने समपाटे तिष्ठेत् प्रय स माधुरोदृगे प्राप्तने कीदृगः सन् तिटे
 तदाह अन्पोत्यायो कार्ये सत्यपि अस्य सुत्तिष्ठतीत्येव शीलाऽप्योत्यायो मुहुर्मुहुः रासनात्र उत्तिष्ठेत् पुनः कोदृगे निरुत्तायो निमित्त विनानोत्तिष्ठेत्
 स्थिर तिष्ठेत् इत्यर्थः पुनः पुनरुत्थान शीलस्य साधुत्वं न भवेत् पुनः स साधुकोदृगे भवेत् प्रत्य कुक्षुची भवेत् दृक्षापादगिरः प्रसुत ग्ररीरायवान्
 अधुत्वानो निचलस्तिष्ठेत् इत्यर्थः ३० चरणे विनयरूपमिषणामाह कालिग तिकामे भिक्त् कानिरय पडिक्त्ता प्रकानत्र विचञ्जिता कानिकालं समा

भया बुद्धा फरुसंपि अणुसासगां । विसंतं होद्र मूढागां खंति सोहि करं पयं ॥२९॥ आंसर्गो उवचिदुज्जा अणुचे
 अणुए धिरि । अप्युद्धार्द निरुद्धार्द निसीएज्ज पकुक्षुए ॥३०॥ कालिग निरुद्धमे भिक्त् कालिगय पडिक्त्मे । अकालं च ।

कठिन पिण अ० सीख देतां हितकारी मानि वे० द्वेष कारणी त० तंसोय ही० एद्र मूर्गनि गं० सेग घमा प्रने सोममने निर्मलकारी प० श्रानादि
 गुरुनी स्थानक २८ हिं० प्र० पाट प्रनुत्त प्राप्तने विपे से अ० गुरुना प्रासाप प० गन्द्र पणया ते वि० नितय प्राप्तने विपे वेसे प्र० प्रयोजने पिण
 धोडी उठे नि० प्रयोजन विना न उठे न वेसे अ० ग्राहतायती वकी ताय त्मग ३० विचे विनित गियने एपगासमिति क० ङि का० कालवेनाद्र
 भिजानि अर्थे नि० जाद्र गीचरी भि० साधु का० जानवेनाद्र करोप० गीचरी धो पाळी गने तोजीपारसोद्र० उपाययपालि च पुनः वलि प्र० प्राकालव० इज्जनि

यरे ३१ काने प्रस्तावे भिनु साधुनिक्रमेत् भिचाय निगच्छेत् च पुन काने एव प्रतिक्रमेत् आहार गृहोत्वा स्वस्थानाय पथादा गच्छेत् अकाल अप्रस्ताय
विशेषेण यर्जयित्वा क्रियाया असमयन्यक्ता काले क्रिया योग्य प्रस्तावे एव काल तत्समय योग्य क्रियासमूह समाचरेत् कुर्यात् ३२ परिवाडीए न
चिड्वा भिक्षुर्दत्तेसण्चरे पडिरूपेणएसित्ता मियकालेण भक्षए ३१ भिक्षु साधु परिपात्वा गृहस्थ गृहे जीमन वारादी भोजनस्थित पुरुषाणा
पत्नी न तिठेत् तत्र भिबी अप्रीतियद्गादि दीप सम्भवात् पुनभिचु साधु दत्ते दाने गृहस्थेन दीयमाने आहारदाने एपणाच्चरेत् आहारदीप विलो
कन कुर्यात् न तु जिह्मालोखे न स दीपाहार गृहोयात् तत् शुद्ध आहार प्रतिक्रमेण सुविहित प्राचीन सुनीनां रूपेण यथा पूर्वाचार्यस्थविरकल्प
साधुभि पात्रे आहार निर्दीप गृहोत तथा गृहोत्वा तदपि आहार भित स्तोक स्व कुचि पूर्त्तिमात्र गृहीतव्य अमितभोजने बहुदीप सम्भवात्
एव विधिनाहार अनोय कालेन नमस्कारपूर्वक प्रत्याख्यान पारण समयेन सिद्धान्तीक्त विधिना भक्षयेत आहार कुर्यात् इत्यर्थ ३२ पुनगृहस्थ गृहे

विवर्जिता काले काल समाचरे ॥३१॥ परिवाडिए न चिड्वा भिक्षू दत्ते सण्चरे । पडिरूपेण एसित्ता मिय का
लेण भक्षए ॥३२॥ नाइदर मणासन्ने नन्नेसि चक्कुफासओ । एगो चिड्वा भत्तठा लधित्ता त नइक्कमे ॥३३॥ नाइ

का० क्रियाने अवसरे का० जे अनुष्ठान जेषिवे नाइ करिवी छे स० समाचारे ३१ प० जीमवा पात बैठी इइ तिहाजभो न रहे ते भिचुने अर्थे भि
साधु प० दातारनी दोधु ए० निर्दीप आहार निवानी एपणने विपे च विचरे प० साधने वेषे प भिचागवेपिने मि० माचार का० प्रस्तावे सिद्धा
न्तीक्तविध जिम छे तिम भ० जिमे ३२ ना भिचाचर जभो होइ तिहा अतिदर जमान रहे अतिदू कडो जभो न रहे न भिचारीजी तथा गृहस्थ

आहारग्रहण विधिमाह नाइ दूरमणा सन्ने नन्ने सिचक्कु फासन्नी एगी चिडुज्ज भत्तहा लसुत्तात् न इक्कमि ३३ साधुगृहस्य गृहेनन्नति दूरन्तिष्ठेत्
पर्व समागत अपर भिजूणां निर्गमननिरोधसम्भवात् आहार दूपणस्य अदर्शनाच्च पुनस्तथा अनासन्नस्तिष्ठेत् आसन्ने न तिष्ठेत् अपर भिजूणां अप्रीति सम्भ
वात् पुनरन्येषां भिजूका पच्चया गृहस्थानां चक्षुःस्पर्शतः चक्षुःस्पर्शेन तिष्ठेत् यथा अन्ये भिज्जवः गृहस्थस्य चक्षुःस्पर्शे तिष्ठन्ति तथा न तिष्ठेत्
इत्यर्थः कथं तिष्ठेत् तदाह एकान्त प्रदेशे यथा गृहस्थः एवं न जानाति अयं साधुरन्यभिक्षुर्निगमन इच्छति एवं एकः पुरा आगत भिजूको परि
वेष रक्षितो भक्तार्थं आहारार्थं साधुः पूर्वमागतं भिजू लसुयित्वा न अतिक्रमेत् उल्लंघन प्रविशेत् इत्यर्थः ३३ नाइ उच्चैव नीए वा नासन्ने नाइ
दूरञ्चो फासुयं परकडं पिण्डं पडिगाहिज्ज सञ्जए ३४ पुनराहारग्रहण विधिमाह अति उच्चैः स्थाने मालादो आहारं न गृह्णीयात् आहारस्य आहा
रदातुर्वा पतन सम्भवात् च पुन नीचैः स्थाने मालादो आहार न गृह्णीयात् तत्र च एधणाया अस्मभवात् दायकस्य कष्टादिसम्भवाद्वा अयवाऽति
उच्चैः सरसाहारलब्धैः अहं लब्धिमान् इत्यभिमान रहितः आहारे लब्धैः अह दीनीमि मद्य कोपि न ददातीति दीन बुद्धिरहितः इति भाव उच्चल
नीचल रहितः न आसन्नो न अतिनिकटवर्ती यथायोग्यस्थानेस्थितः प्रासुकं निर्दूषणं नवकोटिविशुद्धं परकृतं गृहस्थेन आत्मार्थं कृत पिण्डं आहारं
सयती जितेन्द्रियः साधुः प्रतिगृह्णीयात् २४ अप्पपाण्य बोयंमि पडिच्चिन्नंमि संबुडे समयं सन्नए भुञ्जे जयं अप्परिसाडियं ३५ अथा हारकरण

उच्चैव नीएवा नासन्ने नाइदूरञ्चो । फासुयं परकडं पिडं पडिगाहिज्ज संजए ॥३४॥ अप्पपाण्यवोयंमि पडिच्चन्नंमि

नी च० इष्टगीचरे उभो न रहे ए० रागद्वेष रहित हुइ चि० उभो रहे भ० अन्नपाणी प्रसुत्तने अर्थे लं० भिज्जारीने उलंघीने न० प्रवेश न करे ३३ ना०
दातारथी उ'ची रहीने तथा नीची उभो रत्तने भिच्चा नर्ये ना० दूकडो उभो रहोने भिजा न ल्ये अतिदूर उभो रहोने भिजा न ल्ये का० जिव रहित

स्नानमाह सयत साधुरेतादृशे स्थाने समक साधुभि समञ्जय यतमान सन्सुरसर चवर कसर कुरड कुरडादि शब्द अङ्गुर्वाण अपरिसाटित सित्यु पातने न रहित आहार भुञ्जीत कोदृशे स्थाने अल्पप्राणे अल्प्या अविद्यमाना प्राणायत्र तत् अल्पप्राण तस्मिन् द्वीद्रियादिजीवरहिते अवस्थित आग नुक प्राण रहिते पुन कोदृशे स्थाने अल्पबीजे बीजग्रहणोपलक्षणेन सैव केन्द्रियरहिते पुन कोदृशे प्रतिच्छन्ने सम्पातिमसत्व जीवरचार्यं सहते पार्वत जटकुव्यादिना छादिते अन्यथारकादि दीनयाचकादीना याचने दानाभावे निन्द्याया उत्पत्ते प्रहेप सम्भवात् दाने सति पुण्यबन्धसन्नावात् तस्मान्निरवयस्थाने आहार कुर्यात् ३५ अथा हारकरणप्रस्तावे वाक्यतनमाह सुकडत्ति सुच्छिन्ने सुहडे मडे सुनिष्ठिए सुलुठित्ति सावज्ज वज्जए सुणो ३६ सुनिरिताहय सावय सपाप वचन वर्जयेत् न व्रुवीत एतादृश कोदृश तदाह सुकत इद अत्रादि पुन सुपक्क हृतपूरदि सुच्छिन्न मिद याकादि सुहृत कारिक्कादिस्थ कटकत्व सम्यक हृत अथवा वटकादिना मगदसीरककसारादीना हृत सुट्ट हृत तथा पुनर्गृत मुद्गा दिक्के सुट्टुहृत मृत एतत् आहार सम्यग निष्ठा प्राप्त पुन रिद आहार सुलष्ट अखण्डोब्जलतकुल हरित मुद्गादिनि पत्र भेतत् प्रधान भोजन इत्यादिक वचन वर्जयेत् निरवय तु भाषित यथा क्रमात् सुकत धर्मध्यानादि सुपक्क वचनविप्रानादि सुट्टुच्छिन्न खे हपायादि सुट्टुहृत

सवुडे समय सजए भु जे जय अप्परि साडिय ॥३५॥ सुकडत्ति सुपक्कत्ति सुच्छिन्ने सुहडे मडे । सुनिष्ठिए सुलुठित्ति

अचित्त प परने अयनोपायो हुवे पि० आहारने अथे प० ग्रहण करि स० सयतीण ३४ वे इन्द्रोव्यादिक जीव रहित अ० बीजरहित एहवा स्थानकनि विपे प० ऊपर ढाक्यो इइ स० बिहु पासे कवाडादिके करी ढाक्या हुवे स० आपणा आचार सरीपा आचारवत बीजा साधु सहित स० सजती जीमे क० जयणार अ० अणनापती जीमे ३५ भलो कोषोए अत्रादिक सु० ए भलापकायाए घेवरादि सु० भलो छेद्यायाक पत्तादिक सु० भलो हग्गी क्षापणी धन

मिथ्यात्वादि सुदुष्टं पण्डितमरणेन सुनिश्चितं साक्षाचारे सुलभं व्रतग्रहण इत्यादि निरवयवं वचनं ब्रूयादित्यर्थः ३६ रमए पण्डिए सासं हयं भइं व वाहए बालं समइ सासन्ती गलियसं व याहए ३७ अत्र गुरुरिति कर्त्तृपदं अनुक्तं अपि गृहीतव्यं गुरुः पण्डितान् विनीतशियान् शासत् शियां ददत् पाठयन् रमते रतिमान् स्यात् प्रसन्नो भवेदित्यर्थः कइव वाहक इव अश्ववार इव यथाऽश्ववारी दुर्विनीत तुरगं वाहयन् बालं मूलं शिथं शासत् आचार्यः आस्यति अमं प्राप्नोति क कइव गत्यखं दुर्विनीत तुरगं वाहक इव अश्ववार इव यथाऽश्ववारी दुर्विनीत तुरगं वाहयन् खेदं प्राप्नोति तथा कुशियं पाठयन् गुरुर्दुखितो भवेत् इत्यर्थः ३७ खुड्डुयामिचेवडामि अक्कीसाय बहायमे कन्नाए मएसासन्ती पावदिद्विदि मन्नइ ३८ दुर्विनीत शिथः कल्याणं इहलीकहितं अनुशासतं शिचयन्तं आचार्यं पापदृष्टि रस्येति पापदृष्टिः अयमाचार्यः पापदृष्टि रसि पापकारी वसति मे मह्य खुड्डकान् टक्करान् ददाति मे मह्यं अक्कीयान् दुर्वचनानि आवयति पुनर्मेमह्यं बधान् कं वादिघातान् ददाति अपर

सावज्जं वज्जए मुणी ॥३६॥ रमए पंडिए सासं हयं भइं ववाहए । बालं समइ सासंतो गलियसं व वाहए ॥३७॥

म० भली मूयो चाडीओ सु० भलानीपगा मोदकादिक सु० स्वादसु० भलागा भनिक मोदक अखंड सा० सावय एहवो भापा वा० वर्जे सु० साधुं ३६ हिवे निरवय भापा वीले वीजे प्रकारे अर्थ कहे छे सु० भली पाकी वल्लचर्येण पायो सु नि० भली खे ह छेद्यो सु ह० भली हयुं अलगो कीधी आपणी आत्मापणे सजन थो मडे० भले मंडित मरणेण मूत्रोसुनि० भली पाल्यो इणे साधुनी आचारसु ल० भली साधुनी समाचारीणे आराधि एहवी भापा साधु वीले सा० सावय भापा व० वर्जे सु० साधु ३६ र० रतिमाने साता माने प० गुरु सा० शोखामण देता विनित शियने ह० विनीत घोडानी परे वा० शिखाणहारनी परे गुरु शोख दीये तिवारे अवनीत जेहवी जाणे ते कहे छे व० मूर्धने स० खेद पामे सा० सोख देता ग० गलियार अश्वना

समोहित किमपि न दृश्यते आचार्यं पाप केवलं मह्यं टकरादीन् एव ददाति इति मन्यते न तु हितकारक आचार्यं मनुते ३८ अथ पुनर्विनीत दुःखिनोत्तयोर्वर्षममाह पुत्तोमे भायनाइति साहकज्ञाण मन्त्रे ३८ साधु सुशिय कल्याण हितकारक गुरु गुरु वचन या कल्याणकारक मनुते अयमभिप्राय यदा सुशिय प्रति आचार्यो गुरु अनुशास्ति तदा सुशियो मनसि एव जानाति आचार्योमे मम पुत्रस्य इव भ्रातुरिव ज्ञाते स्वजनस्य स्वस्य इव अनुशास्ति स्वकीयस्य बुद्ध्यामे मह्यं पाठयति पापदृष्टि कुशिय गुरुणा शस्यमान आत्मान दासमिव मनुते अयं मा दास मिव तर्जयति इति मनसि दुःखितो भवति आचार्यं निन्दति इत्यर्थं ३८ न कीवए आयरिय अप्याण पिनकीवए बुद्धीवन्नाइ

खड्डुयामे चवेडामि अक्कोसाय वह्हाय मे । कल्लाण मणुसासतो पाव दिड्ढित्ति मन्ने ३८ । पुत्तो मे भायनाइत्ति साहु
कल्लाण मन्ने ३८ । पावदिड्ढीउ अप्याण सास दासत्ति मन्ने ३८ । न कीवए आयरिय अप्याण पिनकीवए । बुद्धी वघाई

वा० शोखामणहारनो परे ३७ टकरामरे के गुरु मे० सुम्हने च० पेडामारे के मे सुम्हने अ गालि दीये इके सुम्हने व० देहादिके करो वषे छे मे सुम्हने जिम कीटवाल घदीयान ने मारे तिम मारे क हितकारी शोख देता पा० ए गुरु कीटवाल सरिखी पापदृष्टि के ३८ पु० पुचनी परे मे० सुम्हने भा० भाइनी परे ना० नानीलानो परे गुरु सुम्हने हित करे सा० साधु चिनित यिय हुइ ते क० हितकारी म० माने सीख पा० पापदृष्टी अविनीत अ आत्मा इइ ते सा० सोखदेता दा० दासनी परे करी माने जिम दासने शीखये तिमए गुरुने सीख दीये एहवो म० माने ३८ जिम गुरु न कीपे तिम कहै के न० न कीपवे आ० आचार्यने गुरुने अ० आपणी आत्माने पिथ म० नकीपे पु० गुरुनी घातनी करणहार न० न हुवे न० न हुवे तो ता०

न सिया न सिया तीत्तग वेसए ४० विनीत शिष्यः आचार्यं न कीपयेत् तथाऽपर अपि न कीपयेत् तथा आत्मान अपि न कीपयेत् पुनः शिष्यो बुद्धीपघाती आचार्यस्योपघातकारी न स्यात् युग प्रधानाचार्योपघाति कुथियवन्न स्यात् तद्वद्वान्तः कीथाचार्योऽष्टविध गणे सम्पत् समन्वितो बहुश्रुतः नसिया निसिया तीत्त गवेसए । ४०। आयरियं कुवियं नच्चापत्तिएण पसायए । विज्झवेज्ज पंजलि उडो वएज्ज न

गुरुनी छिद्र ग० गवेपिये ४० बुद्धीव० कदापि रीस उपजे हुते घातन करिवी जिम यूग प्रधानाचार्यं तुं घात कुशियेनीपजाब्धो ते किम कुणएक आचार्यं बहु श्रुतमहायांत प्रकृतिना धरणी केतले काले गुरुनेवडपण आब्या जंघावलिलीणया ते हुंते एकण शरी रद्या जे भणी सिजान्तमे इम कह्यो छे वतः जिय कीहमाण माया जियलीभं कु हस हे जोधिरा बुढावासे विट्ठिया खवेति चिरसंचयं कम्मं १ क्रोध मानं माया लोभ अने भूख लीखा जेणे जीती छे जे धीर सखवंत छे ते शरीरने असमर्थपणी एकेठामे चो मासे रद्या हुता चिरकालनी पापखपावि तथा पक्षसमियाति गुत्ता उज्जत्ता संजमतवचरणे वाससयंपि वसता मुणिया आराहगामणिया पंचसमलि करिसमिता चिहुं गुत्ते करो गुत्ता तव संयमने विपे उद्यमवंत छे जीवनीरवानो कर्णहार वारिभेदे तप अने चर्णसतरो कर्णसत्तरो अने माहाव्रत तथा पडिलेहणा प्रमार्जनादि साधु क्रियाने विपे एतलाने उद्यमवंत एहवाजे साधु हीई तेपरसनासत रहितो जेने आराधिक कहिया तीर्थकरदेवनी आज्ञाए चालता तेरहे निगार देप नही गुरुप्रतियापक आविकह्यो भगवन् हे इजाविहार करवे अज्जम हयातुमे पिण खेत्ति रही चारित आराधी तेगुरु तिहां रहिवे यत्ते तेहवी गुरुनी विनय वेया वचकरता केतले टीवमे गये हुते शिष्यसीमा उपार्जी तेहनी प्रसरागुरु आवकहे कहे एहवे एक शिष्य गुरुने कहे अक्के सूं वलो वेयावचकारी न जाणूं एणी वरसे अमे वेयावचकरिणूं सर्व साधु कहे वेया वच्चुःकरछे एहाथीनो पाखर हाथी हो उपाडि तेहोज शिष्य थोवे यावच थाद्र अपर शिष्य अभिमान वसे कहे अक्के करिस्यु जसनी वांश्राद्र पिणजस ते सरज्जुंलामि ते केतले

प्रकृत्यापि गान्त्' शीघ्रचद्वावन कापि पामे स्थित तत्र कुशिया सतत वैयास्यविधिविधानात् भग्नपरिणामैर्गुरुमारणार्थं सदीपधादिचिन्ता कारकाणामपि श्रावकाणां पुर इति प्रवदन्ति गुरुवो अनसन चिकीर्षत् किं मय्यो पधादिकं न गृह्णन्ति इत्युक्त्वा अन्तप्रान्त माहार श्रानीय गुरवे प्रयच्छन्ति वदन्ति नित्याऽपय्यायित्वे नालना गृहस्था अतिविशिष्ट न किञ्चिद्यच्छन्ति तत श्राद्धे सलेखनास्वरूप गुरुव पृष्टा' श्रियाणां कूटम प्रीति च श्राता हतमे याऽनगन्तै रिति एव श्राचार्योपघातो न स्यादिति भाव । पुन' तोत्रगवेषकोपि न स्यात् यथा दुर्विनीततुरग प्राजन क गवेषको भवेत् तथा सुशियो द्रव्यतो भावतय तोत्रस्य प्राजनकस्य गवेषको न भवेत् द्रव्यतोत्र चपेटादि भावतोत्र व्यथाकारिवचन ज्ञेय ४० श्राचार्ये कुशिय नया पत्तिरण पसायए विष्कवेज्ज पञ्चनिष्ठो वद्वज्जन पुणोत्ति य ४१ सुशिय श्राचार्यं गुरु पत्तिरण प्रीति समुत्पादकेन वचनेन प्रसादयेत् प्रसन्नं कुर्यात् किं कृत्वा कुपित श्राला गुरु सक्रोधं श्राला विनीत श्रिय प्राञ्जलिपुट सन् क्रुष श्राचार्यं विद्यापयेत् यान्त कुर्यात् क्रुषस्य

काने सर्वं श्रियश्रीमामे अनगा रक्षा ते अभिमानो सोय विनयवेयायश्च गीचरो पाणी घडले मात्रो संयारादिक वारर मागता मनउभग्यो होये दुष्ट बुद्धि चित्तवो गुरुनी पाठडो किमहो पूरो थास्ये मरतो दीपे नहो ह तो यडा कनेयमां श्रवो पब्धो गुरु कदी मरस्ये एहवो चितवता हता तेषे श्रामे श्रावक विगामि श्रोपधादिकनी तुननाक रे छे इम कदि निरमि भातपाणी सुगुरुकने ल्यावे निरसे अरसनादिक देखेनि कहे श्रागामका भगवन् श्रावक तो पल पाणी श्रोपध नधी पहिराये नेणहार न थाके पिण्णहार ती थाके अने जिहां एक स्थानक घणादि न वहिरता श्रावकने यालहा नु लागि एवच न श्रिये गुरुने कक्षा श्रिवे एहना रे विगामो माध श्रावकने घर धो भात पाणी लेतां तेन कल्पे ते किम तिवारे श्रावके चित्तवो चालो गुरु समीपे जे प्रहे रे भगवन् तुमारो कृण संमय जे अणयो तुम करो जिन धम दीपे छे लोकाने प्रतिबोध धो छे ते तमने महानीभनी कारणे श्रिय भात पाणी न

गुरो रशु सुशियेण एवं वक्तव्यं हे स्वामिन् पुनरे एव न कुर्यां समा पराधीत्यंचन्तव्यः ४१ धम्मज्जियञ्च ववहारं बुद्धेहायरियं सया समायरन्ती ववहारं गरह नाभिगच्छई ४२ साधुस्तं व्यवहारं साध्वाचारं आवरन् गर्ही न अभि गच्छति व्यवहयते अङ्गीक्रियते धर्माधिंशि रिति व्यवहार स्तं व्यवहार अङ्गीकुर्वन् मुनि निर्दां न प्राप्नोति तं क व्यवहारं यो व्यवहारः सदा सर्वदा बुद्धे श्रोततत्त्वैराचरितः पुनर्यद्य व्यवहारो धर्माजितः धर्मेण साधुधर्मेण उत्पादितः कथंभूत व्यवहारं विशेषेण अपहरति पापं इति व्यपहार स्तं व्यपहारं अनेन प्राणतिपाताया अवनिवा रकः साध्वाऽचारो दर्शितः ४२ मणोगयं वक्कयं जाणित्ता यरियस्सतं परिगिञ्क वायाए कम्मणा उववायए ४३ सुशियः आचार्यस्य मनीगतं

पुणोत्तिय १४१ धम्मज्जियंच ववहारं बुद्धेहायरियं सया । तमायरं तो ववहारं गरह नाभिगच्छई १४२ मणोगयं वक्क

वहरे तेस्यो कारण छे एह वचन सांभली गुरे चिंतव्यो श्रावकनी वांक काई नषी सदा दिने तेह वीज भाव छे ए सर्व कुशियनी वाता श्रावक भाग्य वंत महाभक्तिवंत पिए कुशियने अप्रतीति उपजस्ये लोक निन्दा करसी तो हिधि सुरवीर थई अणसण लीजे गुरुशियने उवाळी न कखी गुरु अणसण साधी सुक्त पहुंता जीम तिणे कुशिये गुरुनी घातकीधी तीम वीजे शियने न करिवी शियमरीने दूरगति पामी कुपात्र शियविषे जाणवी इति चीण जंघावलट्टान्त संपूर्ण हुवी ॥१॥ अ० आचार्यानि कु० कोप्या न० जाणीने प० प्रतीत उपजे तेह वे वचने करी प० प्रयांत करे बि० कोपाग्नि उपशमा वे प० वे हाथ जीडीनि व० इम कहि न० वलीए अपराध हुं नहीं करुं तुम्हेखमी ४१ ध० दशविधि यतीधर्म चमदिके करी जि० उपाज्जी व्यपारयतीने जी अवश्यमेव करवी पडिलेहणादि बु० तत्वना जाण तेणे जी आ० आचार आचखी स० सदा त० ते आचार थकी व० आचार पाप कर्मनी टालणहार ग० अविनित पणानी निंदानी० न पामे ४२ मनीगत भाव तथा वचन थी गुरुनी अभिप्राय जा० जाणिने आ० आचार्य गुरुनी तं० ते कार्य प० प्रमाण

मनसि स्थित काय पुनवाक्य गत काय पूव ज्ञात्वा पथात् तत्काय वाचा परिरुह्य अद्वैतत्व अह एतत्काय करोमीत्युक्त्वा कर्मणा क्रियया तत्कार्यं सुखादयेत् गुरोर्मनसि स्थित गुरुक्त गुरुणा क्रियमाण काय सुग्रिथेण त्वरित विधिय मिल्यर्थं ४३ वित्तो अचोद्रेण निच खिप्य हवद्द सुचोद्रेण जडोवद्द सुकय किञ्चाद् कुब्बद् मया ४४ वित्तो विनयादिगुणेन प्रसिद्धो विनीत शिष्योऽचोदितोऽप्रेरितोपि सर्वेषु कार्येषु नित्य प्रवर्तते कदाचित् स्वय काय कुषाण आपाथ्येण प्रेरित ये सदा क्षिप्र भवति शीघ्रकार्यकृद्भवति कार्यं कुर्वन् आचार्य्यंप्रेरित शिष्य एव न द्रूयात् अह तु काय करो म्ये व कि भयद्रिह्यैव प्रलयते यथोपदिष्ट सुकृत काय सदा कुर्वीत एक काय वा अथवा क्षाल्यानि वह्ननि कार्योणि कुर्वीत गुर्वादेशेषु आलस्य न विधिय प्रमत्तया तदेव काय त्वरित विधियमित्यर्थं ४४ नञ्वा नमद् मेहावी लोएकितीय जायए हवद्द किञ्चाणसरण भूयाण जगद् जन्ना ४५ मेधावी बुद्धिमान्

गय जागिताय रियम्भु । त परिरिगिज्ज वायाए कम्मणा उववायए । ४३। वित्तो अचोद्रेण निच खिप्य हवद्द सुचोद्रेण जडोवद्द सुकय किञ्चाद् कुब्बद्द मया । ४४॥ नञ्वा नमद् मेहावी लोएकिती सेजायए । हवद्द किञ्चाण सरण भू

करोने वा० यची करी कहे ए काय इ करिथ्य क० वायाद् नीपजावे करीने उ० ते कार्यं सपूर्णकरे ४३ विनीत शिष्य अ० अणप्रेग्घो नि० सदाद्द कार्यं कस्मानि विपे प्रवत्ते वि० विनव रहित कार्यो नी करणहार ह० हुद्द सु० रुडो परे गुरुनी शिखवते घके ज० जिम गुरुने कार्यं कक्षो हुद्द तिम करे सु० कार्यं कीधा पष्ठी गुरु प्रयसा करे एकार्यं रुडो कीधी वि० एहवा गुरुना कार्यं कु० करे स० सदाद्द ४४ ए अध्ययनमाहि विनीतने जे गुण कक्षो ते न० जाशीने न० विनयवत हद्द मे० बुद्धिवत नी० लोक माहिक्वोर्त्ति स० तद्दनी जा० जपजे ह० हुद्द कि० रुडा अनुष्ठान करियाने स० आधार भूत

साधु नम्रति विनय करोति किं ब्रह्मा इति विनयशिखां ज्ञाला तस्य नमस्य लोके कीर्त्तिर्जायते पुनः स विनयवान् साधुः कल्याणा उचितकार्याणां सरणं भवति आश्रयी भवति केषां का यथा भूतानां तरूणां जगती पृथ्वी यथा आश्रयभूता तथा सर्वेषां साधुकार्याणां विनयी साधुराश्रयी भवतीत्यर्थः ४५ पुज्या जम्भ पसीयति संबुद्धा पुब्बसथया पसन्ना लाभइस्सति विउलं अट्ठियं सुयं ४६ पूज्याः आचार्याः गुरवः यस्य शिष्यस्य प्रसीदन्ति प्रसन्ना भवन्ति ते गुरवः प्रसन्नाः सन्तस्तु शिष्यं प्रति विपुलं अर्थितं विस्तीर्णं वाञ्छितं श्रुतं श्रुतज्ञानं लाभयिष्यन्ति प्रापयिष्यन्ति कथंभूताः पूज्याः संबुद्धाः सम्यग्ज्ञाततत्त्वाः पुनः कथंभूताः पूर्वसंस्तुताः पूर्वं सम्यकप्रकारेण स्तुताः पठनकालात् पूर्वमेव संस्तुता विनयेन परिचिताः रजिताः तल्लालविनयस्य ह्यतिप्रतिक्रियारूपत्वेन तथाविधं प्रसादाज्जनकत्वात् तेन सर्वदा संस्तुताः अथवा कथंभूतं श्रुतं आर्थिकं अर्थी मोक्षः प्रयोजनं अस्थिति आर्थिकं अर्थान्मोक्षोत्पादकं श्रुतधर्मं प्राप

याणं जगईजहा । ४५। पुज्या जस्स पसीयंति संबुद्धा पुब्बसंथुया । पसन्ना लाभइस्संति विउलं अट्ठियं सुयं । ४६। स पुज्जसत्थिसुविणीय संसए मणोरुइ चिइइ कम्मसंपया । तवो समायारिं समाहि संबुडे महज्जुइ पंचवयाइ पालि

के भू० जीवने ग० प्रथवी ज० जिम आधार भूत ४५ पु० आचार्यादिके जे विनीत शिष्यने स० तत्त्वना जाणते गुरुने पु० वायणा शिष्य लेसे तेह थी पहिला स० विनय करी सेव्या के प० प्रसन्न थका गुरला० पमाडे दिइ' वि० विस्तीर्णं द्रणुं' अ० मोक्ष पामवानी हेतु सु० श्रुतज्ञान ते पमाडे दीजे ४६ स० विनीत शिष्य पु० स्नाधनीक शास्त्रवंत सु० रूडो परे टाल्या के स० सदेह जेणे म० गुरुना मनना जिम रुचि इइ तिम चि० प्रवर्त्त क० क्रिया दश विध समाचारी तेणे करी सं० त० तपनी स० आचरवी स० समाधि तेणे करीने सं० रूद्धा आश्रव जेणे ते साधु म० मीठी तपनीयति तिणे करी सहित

विव्यति ४१ स पुत्रगतये सुविणोयससए मणोरुइ चिदुइ कामसपया तयो समायादि समाहि सवुडे महजुइ पपवयाणि पालिया ४० स सुग्रिय आवा
यंभ्यो नथदुगधमं मनोरुचि स्निहति मासो रुचिर्नर्मल्य यस्य स मनरुचिर्नर्मलचित्त भयवा मनसो गुरोरियत्तस्य रुचिर्यस्य स मनोरुचि गुरुचिसस्य
बुडियुक्त इत्यर्थं पुन कोइय सुग्रिय कर्मसपदा देगधा समाचारीकरणसपदा उपलक्षित पुन कोइय पूज्ययास्य पूज्य सर्वजनद्वार्य ग्रास्य यस्य स
पुण्यगाम्ना गुरमुक्त्वात् अधोत गाम्ना विनयपूर्वक अधोत च पूज्य गाम्ना भवत्येव यदुक्त न हि भवति निर्धिगोपकमनुपासित गुरुकुनस्य विज्ञान प्रकाटित
पयिमभाग पगत त्व्य मयूरस्य १ पुन कोइय सुग्रिय सुविनीतसग्य सुतरा अतिगयेन विनीतो दूरीकृत सग्योयस्य स सुविनीतसग्य अपगतसग्य
नथरहस्य इत्यर्थं पुन कोइय स तप समाचारी समाधिसहत तपस समाचारी तप समाचरण समाधियत्तस्य स्वास्य स्थिरत्वतप समा
चारी च समाधिय तप समाचारी समाधो ताभ्यां सहती निरुबाथव पुन कोइय सुग्रिय महायति महती द्युतिर्यस्य स महायुति महातपाम्नीजो
श्रीगा पुनाक लब्धादिमहितो भवति तादृग सन् पचमहाव्रतानि पालयित्वा कोइयो भवति तदाइ ४७ सदेवगधव्वमणुमपूइए चद्रसु देइ मलपकपुव्वय
मिडिया इयइ सासए देये प्रा अयरए महट्टिएत्तिवेमि ४८ स पूर्वोालक्षणसहितो सुनिविनीयिथ्य देवैर्द्वांद्यकलवासिभिर्गन्धर्वेन्देवगायनैस्साथा मनुयै
पूजितो भवति ततय पायु घये देइ त्यक्त्वा मिडो भवति कथम्भूत सिव शासती जन्ममरणरहित कथम्भूत देइ मलपकपूर्वक मनुयगरीर हि औदारिक

या १४७। सदेव ग धव्व मणुया पूइए चद्रसु देइ मलपकपुव्वय । सिद्धिवाहवइ सासए देवेवा अप्परए महिट्टिएत्ति

इइ प० पचमहाव्रत पानने स० ते विनीत ग्रिय ४७ दे० वैमानिक ज्योतिपि ग० भुवनपति व्यन्तरए ४ जातना देवाने म० मनुयपणे पू० पूज्यो
प० मू डोने देइगरिर म० लोहीत शुक्र पु० लोहिअने शुक्रनी पहलो आहार करीने जीव गरीरनी पाइ ते भणीएये थो जे गरीर उपनी ते मू किनिइ

राय वनपतिविश्व मलिनरुजा शनि सं. व. ०८१ मी मी

पहाः शान् शुला जाला जिवा अभिभूय भिवाचर्यायां परिव्रजन् सार्धैर् द्वाविंशतिपरीषहैः स्पृष्टः सन् न विहन्येत तदा श्रीसुधर्मास्वामी जम्बू स्वामिन प्रति वदति इमे खलु ते बावीसं परीसहा समणेण भगवया महावीरेण पविर्इया जे भिक्खू सुच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयन्ती पुट्ठी नो विहन्नेज्जा हे जम्बू इमे वत्तमाणा हृदि वर्तमानत्वात् प्रत्यक्षाः ये त्वया सोढास्ते द्वाविंशति परीषहाः अमणेन भगवता महावीरेण काश्यपेन प्रवेदिता यान् परीषहान् शुला जाला जिवा अभिभूय भिवाचर्यायां परिव्रजन् सार्धः परीषहैः स्पृष्टः सन् न विहन्येत तंजहा तद्यथा तेषां परीषहाणां नामान्युचन्ते दिगंक्षा परीसहे १ पिवासा परीसहे २ सीय परीसहे ३ उस्सिण परीसहे ४ दंसमसय प० ५ अचेल

भिक्खू सोच्चा नच्चा जिच्चा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयंतो पुट्ठी नो विहंनिज्जा । इमे खलु ते बावीसं परी सहा समणेणं भगवया महावीरेणं कासवेणं पविर्इया । जेभिक्खू सोच्चानच्चाजिच्चा अभिभूयभिक्खायरियाए परिव्व यंतो पुट्ठी नो विहंनिज्जा । दिगिंक्खा परिसहे १ पिवासा परीसहे २ सीय परीसहे ३ उस्सिण परीसहे ४ दंस मसग परीसहे ५ अचेल परीसहे ६ अरइ परीसहे ७ इत्थी परीसहे ८ चरिया परीसहे ९ निस्सीहिया

भगवंतं ज्ञानवंतं म० महावीर देवे का० काश्यप गोबीइ प० प्रकर्पे केवलग्यान करी स्वयंभिव साचात जाण्थो जे० जे साधु परिसहगुरु समीपे सो० सांभलीने न० जाण्थोने परिचित करीने अ० ते परिसहानि जीपीने भि० गोचरीने विपे प० हिंडता फिरता पु० परिसहे फरस्थो तिवारे नो० सयमने विपे तं० तवावी सपरीसह कहे के दि० भूष प० सर्वप्रकारे सहे ते भूषनीपरीसह १ पि० ल्ढधानोपरि सह २ सी० शीतनीपरीसह सहे सर्वप्रकारे सहे ३ उ०

प० ५ अरु० प० ७ इत्यो प० ८ चरिया प० ९ निसीहिया प० १० सिञ्जा प० ११ अक्कोस प० १२ बह प० १३ जायणा प० १४ अलाभ प० १५ रोग
प० १६ तणकास प० १७ जल्ल प० १८ सक्कार पुरक्कार प० १९ पत्रा प० २० अन्नाण प० २१ दसण प० २२ नामानि सुगमान्वेव नवर अय वियेय दिगंका
ग्रद्धेन देसोय भापया सधीचते सा एव पट्कायमदनपातकभयेन आहारपाकादिनिवर्त्तनेन शुद्धाहारालाभेन वा परिसमन्तात्साहते इति परीपह
दिगंका परोपह एव अपरेष्वपि व्यत्वत्ति कार्या परीपहाना नामान्युक्ता स्वरूपेणक्त्वा काम सम्बन्धार्थमाह गाथा परीसहाण पविमत्ती कासदेश पवेइया
परीसहे १० सिञ्जा परीसहे ११ अक्कोस परीसहे १२ बह परीसहे १३ जायणा परीसहे १४ अलाभ परी
सहे १५ रोग परीसहे १६ तणकास परीसहे १७ जल्ल परीसहे १८ सक्कार पुरक्कार परीसहे १९ पत्रा परीसहे २०

तापनी परिसह सर्वप्रकारे सहे ४८ ४९ डासमसादिकनी कीधी पीठाने सर्वप्रकारे सहे ५० अ० श्रीठबानी मानोपितवल्ल तथा अल्प वल्लनी धरवोते परिसह ६
अ० समयमने विपे अधीरणो छांडीवोते अरति परीसह ७ ८ स्त्रीनी अणवाक्खवीते परीसह ८ च० ग्रामादिकने विपे रहवोते चर्यापरिसह ८ नि० माये
वेगी रहयोते निसीहा परिसह १० सि० उपाये समभावे रहिवोते शिया परीसह ११ अ० अशुभ वचन सांभलीनी चमाकरीवीते अक्रोष परीसह १२
य० बधता घातकरता चमा करवो ते वधपरोसह १३ जा सिद्धान्तोक्त विधेइ याचनालाजवो नही ते याचना परीसह १४ री० रोगने सावद्य वैद्यपडी
गणु नकरावे ते रोग प० ६ अ० मागी वसुनी अप्राप्तिखेदन करिवोते अलाभ परीसह १६ त० तणादिकनेफरसे अधिक वल्लन राखिते लणाना फरसनी प०
१७ ज० मेननीपरोसह १८ स० वल्लादिकने आमन्ववे १९ पु० उठी वेठीघावे करो हयादि न करेइ २० प्र० प्रणा थी उत्कर्षे पणुन करे ते प्रजाप० २०

तन्मे उदाहरिस्मामि आणुपुञ्जिं सुणीहमे १ हे श्रियाः परीषहाणां प्रविभक्तिः पृथक् २ विभागः प्रविभक्तिः काश्यपेन काश्यपगोत्रीयेण श्रीमहावीरदेवेन प्रवेदिता विद्वद्भानि प्रकर्षेण ज्ञाता इत्यर्थः तां परीषहाणां प्रविभक्तिं अहं आनुपूर्व्यां अनुक्रमेण मे भवतां उदाहरिहृथामि मे मम कथयिष्यतः तां परीषह प्रविभक्तिं यूयं शृणुत १ अत्र सर्वेषु परीषहेषु पूर्वं बुधायानिर्देशः सर्वेषु परीषहेषु बुधाया दुःसहत्वात् यदुक्तं 'बुहासमावेयणा नल्लि दिगिब्धा परिगए देहे तवसो भिःबुध्यामवं न छिन्दे न छिन्दावए न पए न पयावए २ कालीपव्वगसङ्गासे किसे धमणिसत्तए मायन्ने असणपाणस्स अदीणमणसीचरे ३ हाभ्यां गाथाभ्यां बुधापरीषहजयं वदति तपस्वी साधुर्दिगब्धा बुधा तथा परिगतैव्यासे देहे सति न छिन्द्यात् तरूणां फलादिकं स्वयं न चोदयेत् न च अपरेण छेदयेत् न च स्वयं अत्रादिकं शाकादिकं न पवेत् न च परेण पाचयेत् नवकीटि शुद्धिवाधां नकुर्यात् कथम्भूतं तपस्वी धामवान् मनीबलयुक्तः पुनः कीदृशः

अन्नाण परीसहे २१ दंसण परीसहे २२ परीसहाणं पविभत्ती कासवेणं पवेद्वया तंमे उदाहरिस्मामि आणुपुञ्जिं सुणे हमे ॥१॥ दिगिंछा परिगए देहे तवसो भिक्वु धामवं णछिंदे णछिंदावए न पए नपयावए ॥२॥ काली पव्वंगसंकासे

अ०तल्वने अजाणपणं करो विखवादनकरते प०२१ द०सम्यक्क यो न डोलित द०२२ प०परोसह वा वीसनीस्वरूप क०प्रकर्षं जूवारस्वरूपणे का०काश्यप गोत्तोइ प०परिसहे प्रह्वयोक्खि त०तेभे० तुम्हे प्रते तु०कहिस्य सुधर्मास्सामो जम्बुप्रते कच्चो अ०अनुक्रमे वा वीस परीसहे सु०सांभली मे०सुम्भने कहता १ दि०भूख ए०व्यापियत्ते दे०सरिरत्ते विपे सगला परिसहमाहि भूब्वनीपरीसह सद्धितां देहिहिलो जाणवी त०तपवत भि० साधुय० संयमने विपे बलवंत छे न० फलादिक नछेदे स्वयमेव न०अनेरा पासि न छेदवि फलादिकन०अत्रादिक पचे नहि न०अनेरापासि पचावे महीर का०कागलीनी प०जांष अनेसाथ

कालोपवाङ्मसङ्गाय कालोक्ताकजद्वय तस्या पर्वीणि मध्ये तनूनि भवन्ति अल्पे स्थलानि भवन्ति तदा काराणि बाहुजङ्घायाङ्गानि भवन्ति यस्य तपस्विनः
जाउङ्घ्रुपरादयोऽवयवा काकजङ्गमऽगादृश्यते इत्यथ कालोपर्वसङ्गाय इति पाठानु आर्यत्वात् प्राकृतत्वात्सङ्गाय
शब्दस्य परनिपात अङ्गशब्दस्य पूर्वनिपात पुन कथञ्भूत तपस्वी क्षय पुन कथञ्भूत तपस्वी धमनोसन्तत धमनोभिर्नाडीभिः सन्ततो व्याप्त यस्य शरीर
नयाभिर्याप्त दृश्यते इत्यर्थः पुन कोदृश स्वपस्वी अग्नपानस्य मायवृत्ति मातृस्र मातृ अत्रपानिन स्वस्यो दरपूर्त्तिप्रमाण जानाति यावता आहारिण
स्वकीयोदरपूर्त्तिस्यात् तावत्प्रमाण मेगा हार गृह्णीयात् नतु यस्तपस्वी रसादिलील्या दधिक गृह्णातीत्यर्थः इति मातृस्र पुनर्यस्तपस्वी अदीन मनी
किसे धर्मणि सतए । मायन्ने असण पाणस्स अदीण मण सोचरे ॥३॥ तश्चो पुठो पिवासाए दोग छी लज्ज सजए ।

सनि सविठोचण प्रमुखसते सरोखी कि साधुनी दुबलो गात्र दुइ ध न साजाले व्याप्त एहवी दूबलो हीद तो पिणमा आहारनी अ अत्रादिमात्रा मो
जाएक पा० पाणीना अ० अणयाम्ये आकुलपणा रहित ३ चित दीन नकरे एहवी यको सयममार्गने विपे चाले हिवे भूख परिसह ऊपरि ६४ तल्लिखीये
हे उजयो नगरोइ हस्तिमित्त त्रेष्ठि वने एकदा तेहने भार्याना मरण थो वैराग्य उपनी तितारि हस्तिमित्त पुत्रसहित साधु कन्दे दीचा लीधी निरतो
चारमयमपाने एक वार साधु साये विहार करता अटवोइ पडुता तिहा हस्तिमित्तने काटी भागो अतिही पीडा ऊपनी चालीवा असमर्थ थयो तंणे वीजे
महात्माने कश्चो अहो साधी तुम्हे आधा पडुचो इ दुखेपोखी हीडाइ नही इहाभातपाणी पचखीस तिहा साधुने खमायीपिताये अणसण कीधी खेलाने
साधु तैडो आधा चाल्या ते हिवे मार्गजाता मीठ भाव थो खेला पाखी वाप कन्दे आयो ते हिवे पिता सोधी शुभधाने मरी देवता इअची खेली न जाणे
पितामूधी सुगुपणा यको पासि भसे भूखी थो पोणतिण खेने वनफलनखाधा भूख सहिते पिता देवता मीठ करो पीताना शरीर माहिपइसीशिक्षाने

यस्य स अदीनमनाः तपसः पारणादौ आहारस्य अप्राप्तौ अपि अदीनचित्तः सन् चरेत् सयममार्गं प्रवर्त्तत अलब्धे तपसौ दृष्टिलब्धे देहस्य धारणा इति बुद्धिं चित्ते दधान स्तिष्ठेत् इत्यर्थः यथा हस्तिमितपुत्री क्षुधायां उत्पन्नायां द्वौ अपि सचित्ताहारवर्जकौ जातौ तथाऽप्येवमपि साधुभिर्भाव्य मिति अथ तत्कथाः उज्जयिन्यां हस्तिमित्रश्रेष्ठो वर्त्तते तस्य हस्तिभूतनामबालकीरिति अन्यदाहस्ति मितयेष्ठिनः प्रिया सृता दुःखगर्भवैराग्येन हस्तिमित्र श्रेष्ठो हस्तिभूतदारकेण समं प्रव्रजितः अन्यदा दुर्भिक्षे साधुभिः समं विहरन्सौ हस्तिमितसाधुर्भोजकाटक नगरमार्गाऽटव्यां काण्टकेन विषपादोऽग्रे विहर्तुं मद्यसोऽटव्या मेव स्थितः तमचम दृष्ट्वा साधुभिर्भक्षितं वारकेण त्वां मार्गं वहिष्यामी मा विषादं कथाः तेन भणितं मदायुः स्लोक भेवाऽस्ति अतोऽहमत्रैव भक्तं प्रत्याख्यामि यूयं यात मदर्थं मऽत्रस्थितस्यान्यस्य कस्यापि साधोमाभूद्विनासः इत्युक्तं वन्तन्तं चामयित्वा भक्तपानप्रत्याख्यानं कार यित्वा तत्रैव सुप्ता च अनिच्छन्तमपि जलकं गृह्णीत्वा ते साधवशेषुः बुद्धकोऽर्धं मार्गात्तान्चि प्रतार्य पिष्टमीहात्तत्रायातः तावता गृहीताऽनशनः

बीर्यो अरे पुत्र कांपडीयो भूख्यो वनफलादि आहार किम नहीं किधी हे पिताजी आ अटवी मांहि आहार किहां थी मीले अने प्राण जावेती जावो पिण सचितफल किमवावरीये तिवारे तात कहे आवनमांहि जावो इहांना वसणहार तुमने भिजा देसो ते चेलो तिहां गर्थो ते देवताइ वनमांहि हाथ काढो भात पाणी दीधी चेलेइ आणीवा वर्यो इम देवता भात पाणी निल आपे केतले दिने तणे अटवी मांहि तेहज साधु आव्या चेलाने देखी साधुं पूख्यो ताहरो पिता जेवि के चेले कन्नो पिता अणसण लोधो के जेवि के साधु कहे अरुने देखाडि ते चेलो पोताने देखाडे तेहवे ते देवता काया, मूको] अलगी थयो साधु कहे अरे सृतक के चेलो कहे हिवडा जीवताहता साधु कहे आहार पांणी तुं किहां थी ल्यावतो तणे सर्वहतान्त कन्नो तिवारेमूया जाणीने ससारमांहि माया मोहवर्यो के जिम पिताये भूख सहोती सदगति पामी तिम चेलानापिण अथवसायपल

स गतो देवीभूत् शुक्लो मोक्षार्थं गत न जानाति सुप्तस्य तत्कनेयरस्य पार्श्वं एव भ्रमति सुधाक्षीपि फनादिक न गृह्णाति स देव सुप्तकमोहेन निजदेह मधिटाय अचदत् वस्त गच्छ भिषायां दृक्केन भणित कुव व्रजामि तेन भणित एव धवनि कुञ्जेषु व्रज तन्निवासिनी जना भिषा दास्यन्ति तत तपैति भणित्वा पुरकस्तत्र गत धर्मलाभ सुचचार स देवी नरनारीरूप विधाय कर प्रसार्य दिव्यसक्त्या तस्यै भक्तपानादि ददौ तावद् यावद् दुर्भिक्षे निहर्षे भोजककटज नगरात् पयादम्बिता साधवस्तु नैव मार्गेण तवागता जीर्णे गव दृष्टा ज्ञातदिव्य प्रयोगास्त सुहृक गृहीत्वा विजङ्ग यथा ताभ्यां पितृपुत्राभ्यां सुत्परोपह सीट तथा साम्प्रतिक सुनिरपि सीढस्य अथ भिषायां अटतस्तृयाया उदय स्यात् तदा तत्परीपहीपि सेटुव्य इम भिषार्य गाया इयेनाह तपो पुढी पिवासाए दुगळ्सी लजसच्चए सीषीदगं न सेवेज्जा विश्रुक्के सणश्चरे ४ क्षिन्नावाएसु पत्येसु चाउरसु पिवासिए परिशुद्धमुष्टे दीषे त तितिक्षर्षे परिसह ५ यामनगरादौ भिषार्य अमन् दुगंछी अनाचारात् भीत एतादृगी लजसयत लज्जायां स सम्यक् यतते यत् कुरुते इति मज्जासयती लज्जायान् साधु नहि निर्लज्जी धर्माहं तस्मात् लज्ज सयतस्तपस्वी तत अथापरीपहानन्तर एव पिवासया

सी उदग न सेवेज्जा विद्यड्यो सण चरे ॥४॥ क्षिन्नावाएसु पथेसु चाउरसु पिवासिए । परिसुक्क मुहादीणे त

टागा नहो प्राणजाता पिण सचित प्राहार न लोधी अने मननी इद्या पिण न कीधी ते भणी तिणि चेलेर भूखसहीति चेलाने महात्मा साथे नेगया चेलाने समभाष्यो जे ताहरो पिता परलोज पइ तो जिम पितार चेले भूगु परीसहसहो तिम बीजा चारिवीयाने सहिवो भूख व्याप्या सचित्त आहार न नेजी इति प्रथम परीसह दटांतमपूर्णं ययो ॥१॥ तं भूखनी परिसह जा० पु० फरस्यो पिबो पि० टपाइ दु० अनाचारनी वर्जणहार लण्यये कतो म० साधुइ मो० सचित पाणोनी न भोगवे वि० अचित पाणीनी स० एयणा इचाने प्रवर्त्ते ४ जिहा कीइ मनुथ प्रायतो नथी प० पथने विथे प्रा०

अत्यंत प्राकृत यकी शरीर सु० अति लघुवत प० यूक रहित सूकाणो सु० सुख जेहनी ते साधु दोनपणा रहित हुइ तं० ते लघानी ति० खमे प० परी सह ५ अथ लघा परीसहें दृष्टांत० उजणी नगरीये धनमित बांणीयो वसे साधु उपदेग सांभलो वैराग वस्ये धनमित्र पुत्र सहित दिक्षा लीधी एकदा घणा साधां साधि विहार करतां मध्याह्न समे चलानि प्रतीही लघु जपनी तेहवे चालतां वाटे नदी आवी देखी पिताइ मोह थकि चलानि कही बच्छ पांणी पोबी पछे आलीयण लेजे एहये कछे इंतं चेली लेवा न वांछि तिहां थकी तिण पिताइ चिन्तव्यो एचेलो माहरी लाज करे के ते भणी पितासाधु आगले थई आगे गयी तेहवे नदी साहि आवी त्रिसे थके पाणीनी पसली भरी चिंतव्यो जे पाणी पीवुं तेहवे उत्तमपणा थकी हीज विचार जपनीमेतो पांच महाव्रत उचरीषा के मरणश्रेय पिण व्रतविराधवी नही तेहवे उत्तमपणा थकी लघाक्रान्तचारित्रीयोसिहास्यवचनजाणीसनमेचिंतव्यो एसचीतपांणी किम पिवाइ यतः एगस उदगबिदु सि जे जीवा जिणवरेहिं पणत्ता ते पारेवयमिता जंबूहीवेनमायंति १ जत्य जलं तत्य वणं जत्यवणं तत्यनिच्छत्री भगी ते जवाजसहगया तसा यथा वराचिवर हतूणपरपाणे अप्पाणं जेकुणतिसप्पाणंअप्पाणदिवसाणंकएयनासिइ अप्पाणं२ इमआलीचीपाणीपफ्छीमूको इमनिस सचित्तशुभधान धरती लघा परीसहसहिती काल करो चेलीदेवताथयी साधुनी दया निमित्तइ तेदेव आवी दूकडार गोकुलविकुर्था जे भणी साधु सुखी थाइ तिवारे पछी आगलि जातां साधुने आपणी स्वरूपजणावा भणी तणे देवताइ एक महाभानी कांबली के हली गोकुले राखी आवि राजइ जेहवे महात्मा वस्त्र लेवा पाछा यल्या तिणे ठामे आवितो तिहा अटयि देखी पिण गोकुलादिकारि दीठी नही कृगणादिक पिण दीठा नही तिवारे चिंतव्यो ए देवमाया कांबली लेई साधु बीजे ठामे पडुंता तिहां प्रगट देवता थई आपणी धन मित्र पिता साधु ते टाली बीजा सर्व साधु बांखा धनमित्र बीबी सुभने किम न बांयो देवता कही तुके सचित्तपांणी पीवानी आजा दीधी ते भणी प्रबंदनीक मोह वसे सुभने डिगायी इं तो इं कगतिपहलो

लपया स्मृतं सनसोतोदक अप्रासुकजल न सेवेत न पिवेत् इत्यर्थं वियदस्य प्रासुकजलस्य शस्त्रपरिणतस्य रसान्तर वर्णान्तरश्च प्राप्तस्य बक्रगादिना शुबस्य
 एषणाय ग्रहणाय चरेत् प्राशुकपानीय ग्रहणाय गृहस्य गृहे व्रवेत् इत्यर्थं ४ अथ ग्रामनगरादिभ्यो वहिर्वनाटव्यादिमार्गे व्रजन् साधुचेत् लपया पीडित
 स्यात् तदापि लपापरीपह सहैत् ननु तत्र साधुना एव ज्ञातस्य अत्र कोपि गृहस्थो दाता न दृश्यते अह स्वयमेव जल गृहहीत्वा पिबामि तदैव मार्गवैपम्य
 माह छिन्नेति एतादृशेषु पथिषु मार्गेषु पूर्वोक्त स्तपस्त्री पिपासा परोपहृ तितिक्षित सन्नैत कोदृशेषु पथिषु छिन्नो गत आपाती लीकानां गमनागमन
 येभ्यस्ते छिन्नापाता तेषु कोदृश स्वय तपस्त्री आतुर लपया आरुणतनु पुन कोदृश सुपिपासित सुतरा अतिशयेन पिपासित श्रत्यन्त लपित पुन
 कोदृश परिशुष्कमुल गतनिष्टीवनत्वेन शुष्कतालुजिह्वीठ पुन कोदृश एतादृशीपि अदीन अत्रोञ्जयिन्या धनभिन्नकथा यथा उञ्जयिन्या धन
 मित्री वणिक धनशर्मनाम्ना स्वसुतेन सम प्रव्रजित अन्यदा मार्गे द्युल्लक मृतपीडित नदी दृष्टा पित्राऽवादि यत्स पिव जल पयादा लोचनया
 दोषशुद्धिर्भावनी इत्युक्ते द्युल्लकोनेच्छति तत पिता साधु स्वशङ्कानिरासार्थं शीघ्र नदीमुत्तीर्याग्रे गत द्युल्लो नद्या प्रविष्ट जलाञ्जलिसुत्थिय चिन्तित
 वान् कथञ्चल पिबामि यत एगमे उदगबिन्दमि जे जीवा जिण्वरेहि पत्रता ते पारिषयमिसा जम्बूहीवे न मायन्ति १ जत्य जल तत्य वण जत्य वण
 तत्य निच्छश्री अगोतेजवाजसहगया तसाय पञ्चक्या चेव २ हतुण परप्याणे अप्याण जे कुणन्ति सप्याण अप्याणन्दिवसाथहए य नासिइ अप्याण ३
 इति सवेगेन जलमजलित पचायत्ने न सुक्त तत स्तृपया मूला स देवो जात अवधिज्ञाना दयगतपूर्वं भवहृत्तात्नेन साधूना मनुकम्पया पथि
 गोकुल कृत तत्र तस्मादि शठमिति गृहहीत्वा साधव सुखिनी जाता अग्रे चलिता तेन देवेन स्व स्वरूपज्ञापनार्थं एकस्य साधोविटिका गोकुले
 स्थापिता विटियहृणाय पयाद्वाराहत्त सुनिवचसा सर्वेरपि साधुभिर्ज्ञात गोकुलाभावै स्वत्र दिव्यमाया ज्ञाता तत्पिण्डभीजनविषय मिथ्या दु कृत

आसीत् ते च भिक्षाभीजन मादाय ततोयपौरुथा न्यवत्तन्त पुरात् पृथक् तेषामेकस्य चरमपौरुषी वेभाराद्रिगुहाद्वारि भवगाढा तत्रैव सोऽस्थात् द्वितीय
पुरोयानि ततोयानु उद्यानसमीपे चतुर्थानु पुराभ्यर्णे तत्रयो वैभाराद्रिगुहासन्न स महासीतव्यधितो रजन्या आद्ययामि मृत उद्यानस्थो द्वितीययामि
मृत उद्यानासन्नजृतोये यामि मृत पुरासन्नानु पुरोभणाल्पयोतत्वेन चतुर्थे प्रहरे मृत सर्वेधिते साधवी विषय दिव जगु शीतपरीपह सीढव्य शीतकाला
दनन्तर शीतकालस्या गमन व्यात् तत्परीपहोपि सीढव्य उत्सिष्णपरियाविण परिदारैण तज्जिए चिसु वा परिताविण सायनो परिदेवए ८ उक्त्वा

न मे निवारण अल्पि छविताय नविज्जई । अहतु अगिा सेवामि इद्र भिवखू नचितए ॥७॥ उत्सिष्ण परिया विण

न० नद्यो ते भणी अ० ह तु पुन वलो अ० अग्नि से० सेवु इ० एहवी मि० साधु न० नचितवे० अय शीत परीसह उपरिदृष्टान्त राजगृहो नगरीद्र चार वीणक
यमे परस्परमित्र अत्यत प्रीति जीव एक अने काया शुदी ससारना सुख भोगवता रहे एकदा भद्रबाइ स्वामी सगो स्या चारे मित्रवादवा भाव्या देयना
सामली वैराग्य उपनी ससार असार जाणी भद्रबाइ पासे चारे मीवा दीक्षा लीधी सुत्र सिद्धात भणी पारगामी हुआ एकाकी पणानी प्रतिमाद्र रहिता
विहार अगुप्तमे करता वलो राजगृहो नगरो आध्या तेहवे २ सोतकाले तीजे पीहरे भात पाणो वहिरवा गाममे पधाद्या गवेषणा करी नगरी यो
वाहारे जूजूआ आध्या अयेरा नौकन्या जीन कल्यो पडे सान्ही हायी आवितो टले नही सूर्य आयस्या केडी तथा वस्तौ हुवे तिहा रक्षी तिवारे ते पीली
यारणे काउसगने रक्षी तीजा साधुने नगर वाहिर सूर्य अस्त हवी तिहा काउसग रक्षी चीथा साधुने नगरवारणे पीली वाहिर सूर्य अस्त हुवी तिहा
काउसग रक्षी हिवे वैभार गिरगुफानि धारणे रक्षी तेहने अतिहीताठपरीसहसहता रात्रिने पहिली पीहरे कालप्राप्त हुवी वाने साधु रहणवाने विजे
पीहरे कालप्राप्त हुवी ते जा नगर वाहिर तेजे चीजे प्रहरे सीधो अने चीथा साधु पीलवारणे तेजे चीजे पीहरे काल कीधी नगर परसरे सीतपरीसह

हितसोमेहावो सिंशाणं नो विपश्ये गाय नो परिसिञ्चिन्ना न वीरुजाय अपयं ८ मेधावी स्थिरबुद्धिमान् साधुर्ग्रीमे उणकाले वा शब्दात् शरदि ऋतौ
 अपि सात सुखहेतुं प्रति न परिदेवित कदा मम शरीरे शीतलत्वं स्यात् इति न प्रलापं कुर्वीत कीदृशः साधुः उणपरितापिन यः परिदाघस्ते न
 तर्जितः ग्रीष्मकाले सूर्यस्या तपेन भूमिशिलादयः परितप्ताः सन्ति तत्र साधुरातापनां कुर्वन् तप्तभूमिः शिलातो लोहकारशाला समीपत्वाद्वा परि
 दाधेन बहिः प्रस्वेदमलाभ्यां वक्त्रिणा वा अन्तश्च दृश्यारूपेण तर्जितोऽतिपीडितः पुनरपि उक्त मर्थमेव दृढयति मेधावी साधुरुणाभितप्तः स्नान नैव
 प्रार्थयेत् न अभिलषेत् पुनर्गात्रं शरीरं नो परिसिञ्चेत् न च प्रस्वेदादिसद्भावे आत्मानं स्वदेह वीजयेत् वीजनेन शरीरस्य न वातप्रक्षेपं कुर्यात् इत्यर्थः ८
 अत्र अरहन्नकथा यथा तगरानगयीं अर्हन्निवाचार्यपाखे दत्तनामा वणिक् भद्राभार्यार्हन्नकपुत्रेण समं प्रव्रजितः पिप्सा सर्ववैयाहस्यकरणेन इतस्ततः
 परिभ्रम्य भव्यभिन्ना भोजनसम्पादनेन स बालीऽत्यन्तं सुखी कृतः उपविष्ट एव भुंक्ते कदापि भिक्षार्थं न भ्रमति तन्निकार्थं स्वभिक्षार्थंश्च पितुरेव
 भ्रमणात् अन्यदा पितरि ऋते साधुभिः प्रेरितः स बाली ग्रीमे मासे भिक्षार्थं प्रतः तापाभिभूतः प्रीसुप्न गृहच्छायाया सुपविषति पुनस्तुत उत्तिष्ठति
 ग्नैः शनैर्याति एवं कुर्वन्त मतिबहुमारन्त मर्हन्नकुमारं रूपेण कन्दर्पावतारं दृष्ट्वा काचिप्रीपित वणिक्भार्या भ्राकार्यं गृहस्थपितवती तथा सह
 सी विषया आसक्तोऽभूत् अथ तन्माता साध्वी पुत्रमीहेन गृथली भूता अरे अर्हन्नकर इति निर्घोषययन्ती चतुष्पथादिषु भ्रमति एकदा गवाचस्थेन
 अर्हन्नकेन तादृशावस्था माता दृष्ट्वा संजातात्यन्त संवेगः स गवान्नादुत्तीर्यपादयो पतित्वा मातर मेवाह न्रे मातः सोऽहमर्हन्नक इति तद्वचः श्रवणात्

परिदाहेण तज्जिए । धिसुवा परियाविणं सायं नो परिदेवए ॥८॥ उन्हाहि ततो मेहावी सिंशाणं नोवि पत्यए ।

मोडो लागीतिणे कारणे मोडो सीधी ए चारे मरण पांमो देवता थया पिण चनि न मेवी जिम ए चारे सोत परीसन्न सद्यो तिम बीजा ने पिच सहिबी

इतिमोत परोमह उपर दृष्टांत कष्टो के उ० तापे करो उन्ही भूमिका मोन्नादिकेप० तापे करोपि० वाद्य परिदेवो पने भेनएबे पने पथ्यंतर यपा तं ह यो
 उपतो दाय ल्वर त० नेंवे करो पोद्यो घर्को यि० उक्तानाने वा० पक्का गरदरुतुने विपे प० तापेकरो पोद्योयको साता नो० नयकि जे कहीर योतन वाप्यु
 ज० पुने तापे करो पदि० पत्यक्त पोद्यो म० मयांदायत साधु मि० छान नो० न वांछि गा० यरीर नो पाणीर न सींचे न० यीगणादिके करोमयंवायरो ७
 पाभे ८ पय उच्य परोमह दृष्टांत तगरा नगर पतिहो मनीहर तिहां दत्तवाणिक तेहनी स्त्री भद्रा पुत परहयक ते सुपे रहे एहवे समे परहयक
 मित्राचार्य पधाया तेहने वांदाया सकल भोक पाथी गुरु धर्मदेसना दीधी प्रत्यत संसारविषय दुःखमोह पास सांभनीदश पने भद्रा पुत्र प्रहयक साथे
 द्रव्यनो कोहो परबो मोहनो परे पारिषधर्भ पादयो गुरु पाये भवे पिणदत्तने भयवो नाये पाके पडे काना किम भवे इम खाणी पुत्रने भयवि पाप
 पौने गोपरो पाथी कर प्रे म यको मगरो यजु सु गहो मोठाइ पेढा घेवर सुरको भेयाप्रसुत आणी पोगे पौने अति नीरस पाहार करे किवार साधु कहे
 पुत्रने गोपरो पांगरायो तुमी तप के तिवार कहे वेया यच्छे नाम के दु पांगरीस एवहरवानी वात न जाणे तिवार साधु कहे प्रागमि दोहिनो याये
 दग कहे चिचवडा मयु के इम तेहने सरस पाहारे सुरीयो कोथो केतने काने दश नामा साधु अगम्य करो कान कोधी तिवार मोहघोरोवा लागो
 हे पूज्य हे पिता रो पाजका न बीनी चिये मुकने कुगपुत कही बीनायवे पने मगरा मधुरा पाहार रुण पांगरुले चिमेसजमनी नीर्वाह दोहिनो इत्ये
 इम विनाय करता माता पायो कहे परे पुत मोह न जोजे पाय्यासी राखी गुरु पीण बालकने गोपरो पगरये नहो तिवार यवेश गोपरो कर्ता कहे
 माता भद्रा पायो तहे परे पुत्र मोहन कोने पगामी सांगि गुरु पीणवानकने सुगमे जीयो करो रागो पिण चिये एहनी कामविणससो साधु गोपरो
 पांगरुत्ते ने भगी उष्टाने नगरो सांछि गोपरो सांगे गया गवेग पागल यो घाने अने परहयक गरीर नो सुकमान पने तपर सुयनी तापस जेन उपवा

आबी कैसे तापे करी धालीनी परमान तुं सरिर प्रसेवे लधादि पाञ्चि हंती आबी सागागोखहेठलिच्छंहडिये वीसामी लीधी उभी रञ्जी तेहवे व्यवहारी
 यानी स्त्री गोखसे, झांखी वीलाखिया अही सौभाग्य आपनी घरि पवित्र करी तुमे भिचा ली इस कहिने तंधी मोदक लेद्र आबी पीण रूप देख मोह
 पांसी नेत्रना कटाच लगवी हाव भाव करी काम वचन कहिवा लागी साहरे भाग्ये तुमारी आगमन थयी अने श्री धन तन मन श्री वरण श्रया सर्व
 तुमारी छे इं पिण तुमने वांछु छुं अनाथ नाथ थाअी ते सधुर वचन सांभली चारित्र वर्ण थी तिहां रञ्जी वली विचारुं हिवडातो रहीये वलीगढांपण
 दीजा पाली से ते उण पाणीनी पीछी तिहा रञ्जी पडकृतुना भोग भोगवे छे गणेश गुरु पासे आबी कहे अहंनक आव्यी त्वारे कहे नथी आव्यी साधां
 जो यी पिण न लाधी भद्रा माताद्र वात सांभली जीतां न लाधी तेंणे मोह गहिली थद्र भसे सुखे अहंनकार तुं किहां छे इस करती विचरे वालक कहे
 ए अहंनक ए अहंनक तिहां थी दीडे बख अचेतन पणे भमता वारसे वरसे तेंणे सेरीये भद्रा नीकली हजारालक पूछे फौर छे तिवारे वालकने
 सौरे भद्रा गहिली गलियां माहि दीठी सुख अहंनकर तुं किहां छे इस करतां एहवी शब्द गोखे सांभली विलाप करती देखीने भद्राने ओलखी, हिवे
 चिंतवा लागोसहीए माहरी माता छे से अभागी माताने दुखणी कीधी अने से नर्कनी आजखी उपाज्यो इम चिंतवी गोख थकी उत्तरीने जाताने
 वीलाबी इं अहंनक एहवी सांभली हीया वारिवापिने मन ठामि आव्यी पुत्र चादर ओढवा दीधी स्वस्थ चित्त थद्र मन संतोप उपनी माताई वेटो
 पुष्ठी हे पुत्र तुं आज लगे किहां हुती तिवारे तेंणे अहंनके आपणपे गोखेउभी स्त्री भोगयोत माताने सर्वस रूप कञ्ची तिवारे पीछे माताई
 पुत्रने कञ्ची हे बच्छ चारित्र नखंडए भोग मुकीएकानि चारित्र पाली तिवारे तेंणे पुत्रे कञ्ची से पापीये चारित्रनपले पिण कहे तो अण सण उचर
 तेहवे मावीली बच्छ इमकरि पिण पाप मत करि ए मातानो वचन सांभली हुते वैराग्य थके तप्त शीला उपरि पादोपगमन अणसण लेई अण एक

स्वस्वचित्ता माता तमेवमाह यत्स भव्यकुलजातस्य तव केयमऽवस्था स प्राह मातयारित्र पालयितुमह न शक्नोमि साप्राह तर्हि अनया कुरु मात वचसा स तप्तगिलाया सुग्रा पादोपासनश्चकार सम्यग उच्यपरीपह विपद्य समाधिभाग् देवत्व प्राप्तवान् एव अन्यैरपि साधुभिरुण्य परीपह सोढव्य ततो श्रीफकालादनन्तर वर्षाकाल समागच्छति वर्षाकाले दशमशकादय उत्पद्यन्ते तेथ पीडित सन तत्परीपह सोढव्य पुष्टोय दस मसएहिसमरेव महामुणो नागो सद्गामसीसे वा सूरु अभिहणे पर १० न सन्तसे न वारिज्जा मथपि न पत्रोसए उहवे न हणे पाणे मुञ्चन्ते

गाय नो परिसिचिज्जा नवीएज्जाय अप्पय ॥६॥ पुष्टोय दस मसएहि समरेव महामुणो । नागो सगाम सीसेवा •
सूरु अभि हणे पर ॥१०॥ यसतसे यवारिज्जा मण पि नपत्रोसए । उवेह नहणे प्राणे भु जते मससोणिय ॥११॥

माहि उच्यपरीसह सही मन सबरी जिमतापने जोगि माखण विघराद तिमतनविघराणो परिणाम शुद्धी कान करी देवताह्मो जिमतेणे अहंनके पहिली चूकोति मन करवु अने जिमछे हडे कामसाथी मन ठाम राखी तिम करवी इति उण परिसह उपर अहंनक दृष्टान्त सपूर्णम् अथाग्रे सुव माह १ पु० फरख्यो पीथी द० डासमसे करीने स० तेडा सममाने आपणा आत्मा सरीपा जले खये म० मीटो साधुजी ना० जिम हाथी सयाम या ते थके अणणीइ मिली इइ एह वा सयामने विपे सू० जिम सूरहाथी अ० अशी इजीपे प० वेरीने १ न० डासमसाने वासवे नही न नवारे अतरा यन करे चटकी देता म० मने करीने पिण न० न करे द्वेप उ० उदासीन पणने भावे करीन इणे नही पा जीवन भु० खाता थका म० पो तानी मास अने लोही ११ अथ दसमसकदृष्टान्त चपानगरीइ जितयन्तु राजानी पुत्र यमणभद्र श्रीधर्मघोष छरिक्कने प्रतिबोध पांमो दीव्यालीधी केतले

मससीषियं ११ महासुनिर्महातपस्वी दंशमशकैर्जन्तुभिः सृष्टी भक्षितः सन् न सन्वसेत् त्रासं न प्राप्नुयात् बहुवचनग्रहणात् यूकामल्लुण सुलसुलका
दयोपि गृह्यन्ते कीदृशी महासुनिः समएव समत्वेन युक्तः अत्र समरे रकारः प्राकृतत्वात् क इव संशामशीर्षे रणशिरसि नाग इव हस्सीव कौदृशी
हस्ती शूरः यथा शूरेऽभङ्गी हस्ती युधे स्थितः परं शत्रुं हन्यात् एवं महासुनि रपि क्रोधादिकं अन्तरङ्गशत्रुं जयेत् दंशादिभि रूपद्रुयमाणः क्रोधं न
काले विहार करतां अमणभद्र ऋषी अटवोदं पुहता तिहां प्रतिमाद्र रद्या जे हृत्ते भमरा घणा के अने मधु के ऋषि सरौरे मधु के
ऋषीश्वरने शरीरेमधु नाटी पका लागे तिवारे भमरा डांसमसादिक आवी पीडा जपजावी पिण लिगारमात्र मनथीन चाल्यो तिहां रह्यो
नरकनी वेदनाना दुख जपजे चिंतवे अरे जीव सिधांत मांहि एहवा २ नरकना दुख कथा के ते संभारतो कान थी यतः नरए सुजाद्र
भाद्रकण्ड कडाइ' दुक्खाइ' परम तिक्खाइ' कीवबेइ नाउ' जीवंती वास कीडिवी १ नरक मांहिजे कर्कश परमतिष्ण गाडि तीव्रवेदना खेबादि
परमाधामीनो कीधी वेदना परस्पर बेदना दुखे कुणे वर्णवोइ' जी वरस नीकीड सगे वीलेतो पिण बीली न सके वली नरकना दुख कहे
के कर्कश दाह परमाधामीनी कीधी वेदना अने आगमां हे पचवी लोहमय कंटक शूली वींधवी राईजे वडा खंडनु' करवी काग' साग
समली ढंकादि केचूटिवी अने शाल्मली ह्वमांहि आकर्षवी खांडानीधार सरीखा पांनडा एहवा असिपलमांहिबे सारवी तिणे करीने गात्र छेदाइ'
वली तातो तहवी उकालि पावइ वैतरणी नदो मांहि भूबुधे अने ते नारकोनि कांई सुख नथो तिवारे ऋषीश्वर डांस मसाना परिसह
सहती विचारे इणे जीवे नारकोनि वेदना सही तथा तिर्यचादिकनी वेदना सहोती डांसमसा भमराने करडवे ऋषि षूकि इम चिन्त
विचित्त निचल करी सह यमा शुभ भाव नाइ' कालकरिने देवलीके गया जिमश्री अमणभद्र ऋषीश्वरे डांस मसादिकनो परीषह सञ्चोतिम अभ्य

कुर्यादित्यर्थं च पुनस्तैः पीडितय न सन्तसेत् उद्देग न प्राप्नुयात् पुनस्तान् दशादीन् न निवारयेत् तथा वारणे हि आहारान्तराय स्यात् मन अपि न प्रदूषयेत् मनीषि क्लुप न कुर्यात् निवारण तु दूरतएव त्यक्त यदि तेषु मनसि अपिक्रोध न कुर्यात् किन्तु तेषु दशमशकादिषु दुष्टजीवेषु मांस शोषित पल्लवधिर भुञ्जानेषु उपेक्षित उदासोन्भावे वनेषु रागद्वेषरहितो भवेत् प्राणान् तान् दशमशकादीन् मांसरुधिर भुञ्जानान् न हन्यात् अत्र शमणभद्रकथा ११ यथा चम्पाया जितशत्रुत्वस्य पुत्र शमणभद्रो युवराजा शीघ्रमघोषान्ते प्रव्रज्य एकाकित्वविहरिण विहरन् अन्यदा शरदि ऋतौ षट्शतं प्रतिमास्थितौ दशमशकैः पीड्यमानोऽपि नियत स्वयमनशोत भुक्तनरकवेदगालरूप चिन्तयन् समाधिना मृत्वा दिवङ्गत, एव दशमशकपरोपहः सोढव्य श्रय च दशमशकादिभिः पीड्यमानो यस्तायाकरो न स्यादती अचेलपरीपहमाह परिजुषेहि वत्येहि दुक्खामिति अचे लए अदुवा सचेलए हुक्ख इद्र भित्ठू न चित्तए १२ एगया अचेलए श्रावि एगया एअ धम्म हिअ नसा नाणीनी परिदेवए १३ भिण्डु

परिजुनेहि वत्येहि षोक्खामिति अचेलए । अदुवा सचेलएहोक्ख इद्रभिवक्खू न चितए ॥१२॥ एगया अचेलए होद्र सचेलएयावि एगया । एय धम्म हिय नञ्जा नाणीनीपरिदेवए ॥१३॥ गामाणुगामरीयत अणगारंअकिंचण । अरइ

साधु खमवी इति दसमसकपरीसह दृष्टन्त अत्र अचेल परीसह ळ्ठी कहिंछे प० सर्वप्रकारे जु० जुने व वल्ले करीने हु० धासूहु अ० वल्लरहित एह या दिन वणा रहितछे अ० अय याइ स० वल्ल सहितह धासू मूझने जूना वल्ल देखिने कीइक वल्ल देखे इ० एहवी दीनपणी अने उल्कारं पणी भि० साधु न० न चितवे १२ ए० एक वार जीनकल्पीनी अवस्थाइ अ० वल्ल रहित पिण षी० हुवे स० वल्लरहित हुवे ए० एकवार स्थिवरकल्पीनी

अवस्था' ए० एव धर्म वस्त्र सहितपणी अने वस्त्र रहित पणी हि० हितकारी न० ज्ञानीने ना० ज्ञानवंती नी० न पामे खेदवस्त्र रहित शीतकाले ह्रं दीहिली थासूं दीनपणी न करे १३ अथ अचेल परीसह दृष्टांत दशार्णपुर नामे नगर सीमदेव नामे पुरीहित तेहने रूढ सीमा भार्या तेहने पुत्र आर्य रचित परदेस जइ १४ विद्या भणी पारगामी थाई आब्यो राजाने मिली महा पसावापामी महीच्छव सहित आपणे घरे आवी पिताने पगिला गी माता ने प्रणाम कीधी माता प्रणाम न भाले तिवारे कारण पूछी ते रूढ सीमा आविका छे तिणे हेत करीने कह्यो तेए हिंसादिक शास्त्र भख्या पिए अजे ताई दृष्टिवाद धर्मशास्त्र भखी नहीं ते खूं भखी तिवारे माताने कहे ए विद्या कुण भया वखी तिवारेमाता कहे ताहरो मांमी तीसलि पुत्राचार्य जेपा से जाईने भणी तिवारे हां भणी माताने प्रणाम करी चाल्यो वाटमे से लडीनव आखी अने एक आधी मिली माताने कहा व्यी सुभने से लडी साडी नव मिली छे माताइ कह्यो साडा नव पूर्व भखी आर्य रचित उपात्रये पासे आब्यो पिए विचाखी किम बोलसुं' एहवे एक ढडूर आवक उपात्रये मांहि प्रवेश कखो तिणे रातोइ आर्य रचित श्रीतीसलीपुत्राचार्य मांमाने वांया पास बैठे शिखे कह्यो आज नगर मांहि मीठी आडवरी आव्या गुरु कह्यो ए ताहरी भांणे जो छे गुरु बील्या हे आर्य रचित किम आव्या ते कहे दृष्टिवाद भणवा माटे तिवारे कहे ए तो दीखालीइ' भणाइ' तेणे दीचा लीधी इग्यारे अंगभस्या छे पूर्व विद्या सीखवाने वज्रस्वामी पासे मी कल्यो अंतराले उज्जयनी वासी रही भद्रगुप्ति सूरवादि वज्रस्वामी पास गयो छे तेहवेवज्र स्वामी राति स्वप्नो देठी जे एके शिखे दुधपीधी ते विचारी प्रभाते चीतवे छे एहवे आर्यरचित आवी वंदना कीधी तिवारे पूर्वली वात पूछी सर्व कही भणववा मांड्यो नव पूर्व भखो दसमी पूर्व भणतां आलस थयो गुरने कहे केतली एक भणवी छे गुरु कहे विंदुमात भखे समुद्र थाके छे गुरु थाको जांणी सथा राखी आचार्य पद दीधी एहवे पाछलि थी भाई तेडवा आब्यो तेहने प्रति बोधदे दीचा लीधी तिहां थी विंहार करी माता पिता ताइ'

साधुर्वज्रेषु परिजीर्णेषु मत्सु इति न चिन्तयेत् मनसि न विचारयेत् इतीति किं अह वज्राभावे अचेलको निर्बलौ भविष्यामि न विद्यते चेल
 वल्ल यस्य स पचेनक इति दैन्यं न कुर्यात् अथवा एतादृश जीर्णं स्फटितवज्रं मां दृष्ट्वा कथिहर्मात्मा दाता मद्यं यल्ल दास्यति तदाह सचेलको
 वज्रसिद्धिती भविष्यामीति प्रमोदभाग अपि न स्यात् एतावता वस्तस्य अप्राप्तौ वस्तस्य प्राप्तौ याविपादो याहर्षो या साधुना न विधेय प्राप्त्याऽप्राप्तौ
 सदृशं न भाव्यमित्यर्थं १२ पुन साधु रेव चिन्तयेत् एकदा जिनकल्पावस्थाया साधु रचेलक स्यात् इय मपि साधो रेवा वस्था स्थिरकये पिदुर्लभ

नेवदाविधानेदस पुर आद्या देयना दीधी वैराग्य यो रुद्रसोमा भाईं फल्यु रचित प्रमुखिने दीचा दीधी तेहवे सोमदेव पितऽते पिण पुत्रपासे रहे लाजना
 वस धी कमठल धीतीयो उपानह आपणो निग मूके नईं एकदा गुरु बालकाने सीखब्यो बीजा साधुने वादिब्यो पिता सोम देयने मति याद ज्यो
 तिणे वामका तिमज कीधी तिवारे सोम कहे तुन्हे माहरा बेटा सर्व वाया मुम्न किम न वांदो स्यू दोषा न थी लोवी बालकां कछो दीचा धारी
 पाभे क्वादिक् न हुवे एहवी वचन सुणी क्कमडलादि सर्वमे क्वाया पिए एक कडि धीतीयो राखे तेहवे एक साधु अणसण कीधि कालगतहुधो
 तिण आचार्य कडि पटी क्कडाडिवा भणी साधुने कहे अही साधु एमृत कने काधि करी वहे महा पुण्य तिवारे सोमदेव कछो हु वधो सवली गुरु
 बोल्यो इहा प्रणा उपसर्ग थावे वेडालागी इम दृढ चित्ते सोम देवे मृतक लोधी अधिरो जाता बालके सकेत थी धीतीयो काठी लोधु बीजो धीतीयो
 साधु पहिराब्यो केतनी भूमिज इते वीसरवि गुरु कन्हे आब्यो गुरु कछो ल्यावी लांवी धीतीयो सोमदेयने पहिरावो तिवारे सोमदेव कहे जे सरौर देख
 तो इती ते दीठी धिये एहज चीसपटी पछे मानीपित वल्ल धारी सूधी चारोच पाब्यो तणे पहिलो अचेलक परीसरीसह न सछो पछे सछो रिम बीज
 सधिबी इति अचेलक परीसह दृष्टात अथाग्रे सूत्र । वल्ल रहित संयमने विधे अरति जपज वानी सभव ते भणी सातमो अरती परीसह कहे हे थामा

राय वनपतिवृष बाहिर की श्री ० सं ० ४२ मा भाषा

वस्त्रलेनः पूर्ववस्त्रस्य जीर्णत्वात् नाशे जाते सति अपरवस्त्रप्राप्तभावेन निमित्तं विनापिनिर्वस्त्रः स्यात् तदा मनसि साधुना इति विचिन्तनीय इदानीं अहं जिनकल्यावस्था भजामि जिनकल्पी तुमुनि रचेलक एव तिष्ठति पुन रेकदा स्वविरकल्पावस्थायां वस्त्रस्य धारणेन सचेलकः अपि भवितु एवं अमुना प्रकारेण वस्त्राभावे जिनकल्यावस्थाचिन्तनेन वस्त्रसद्भावे स्वविरकल्पावस्था चिन्तनेन उभयं धर्मं ज्ञात्वा ज्ञानी साधुनीं परिदेवित नो विलापं कुर्वीत कीदृशं धर्मं हितं हितकारकं १२ अत्र पितृसीमदेव मातृभद्रसीमा भ्रातृफलुरक्षितादीनां कथाः । यथा दशपुरे नगरे सीमदेवी द्विजी स्तितस्य भार्या रुद्रसीमानास्त्री वर्त्तते तयोः पुत्रौ आर्यरक्षित फलुरक्षितौ स्तः आर्यरक्षितेन पितुर्यथा पूर्णा गृहीता पश्चात् पाटलिपुरे नगरे अधिकविद्यापठनाय कस्यचि दुपाध्यायस्य पार्श्वे गतः तत्र तेन सांगीपाद्गात्रत्वारी वेदाः पठिताः षतुर्दशविद्यास्थानानि गृहीतानि ततो दसपुरं नगरं प्राप्तः नृपादि सकललोकैः प्रवेसीत्सवं क्त्वा पूजितश्च स्वगृहे गत्वा मातरपितरौ प्रणतः पिता अतीव हर्षवान् जातः माता तु नैव हर्षं मनाग् दर्शयति आर्यरक्षितः प्राह हे मात स्वं मदध्ययनेन किं न हृष्टाः सा प्राहकि मनेन जीवघातादिनिमित्तेन बहुशास्त्राध्ययनेन किं त्वया दृष्टि वादोऽधीतः येन मम हर्षं स्यात् तत स्ते न गृष्टं दृष्टिवादं कास्ति मातृीक्तं इशुवाटके स्थितानां तीसलिपुत्राचार्याणां समीपेस्ति तत स्तेन भणितं मातः कल्पे तत्र यास्यामि दृष्टिवादभणनार्थं रात्रौ सुप्तः सन्ने वक्षितयतिदृष्टीनां वादः दृष्टिवाद इति आमामप्यऽस्य शास्त्रस्य सुन्दर मिति प्रभाते तत् भणनार्थं तत्र चलितः मार्गं प्रथमत एव दसपुरनगर प्रत्यासन्नग्रामवासी पितृभिरा साधनवेचुयट्टियुतहस्ती ब्राह्मणो मिलितः कथितश्च तेन अहं मिलनार्थं आगतोस्मि ततः स्वागतं परस्पर गृष्ट पश्चादाार्यरक्षितेनीक्तं अह क्वचिकार्याय गच्छन्नस्मि इदं साधनवेचुयट्टिप्राप्तत मातुर्हस्तेऽर्पणीयंकथनीय आह पूर्वं मार्थरक्षिताय मिलितः अथ तेन तथै वक्तुं ततो माता तुष्टा सती चिन्तयति मम पुत्रेण सुन्दर मङ्गलं दृष्टं साधनवपूर्वाख्येष्थति

युयुत्सु एकं यामं व्रजती मुने अन्तराले प्रागत याम अयुयुत्सु क्रीड्य अन्तर्गारं अकिञ्चन न विद्यते किञ्चन यस्य स अकिञ्चन स्तं
 परिपश्यरहितं पुनरुक्तं अथ दृश्यति मुनि अरति परिपहे उत्पन्ने सति अरति घटत कृत्वा दूरे कृत्वा धर्मराम सन् सयममार्गे चरेत् विचरेत् धर्मं प्रा
 मते रति करोतीति धर्मराम पुन क्रीड्य साधुर्विस्त आश्रयान् रचित पुन क्रीड्यो निरारम्भ आरम्भ रचित पुन क्रीड्य उपगन्त नि कपाय १५
 अथ पुरोहित राज पुनयो कथा । यथा अचलपुरे जितयानु नृपपुत्र अपराजितनामा रोहाचार्यपात्रं दीक्षित अन्यदा विहरन् तगरा नगरीं गत
 तावता उज्जयिन्या आर्यरोहाचार्यं शिष्यास्तवागता घट साधुना तेन उज्जयिन्या स्वरूप तै रक्त सव तत्र वर नृपपुत्रा अमाल्यपुत्री साधुनुहेजयत
 ततो गुरना आश्रय स्वभ्रातृव्यवोधाय शोभ्र मुज्जयिन्या गत तत्र भिक्षावेलाया लोकैर्वार्यमाणो पिबाठ स्वरेण धर्मलाभ इति पठन् राज कुले
 प्रविष्ट राजपुत्रा अमाल्य पुत्राभ्यां सोपपन्नस माकारित्तेज्वागच्छत वन्द्यते तत सगत ताभ्या उक्त वेत्ति नर्त्तितु तेनीत्त वाठ पर युवां
 वाद यतां ती वादय यादयितु न जानीत तत स्तेन तथा ती कुट्टिती पृथक् कृतहस्तपादादि सन्धिवन्धनी यथा अत्यन्त माराटि कुरुत ती तादृशा
 येय मुक्ता साधु रूपायये समायात ततो राजा सर्ववलेन तत्रायत स्त उपलक्ष्य प्रसादनाय तस्य पादयो पपात उवाच स्वामिन् सापराधावपि
 इमी मज्जोकार्यो अत पर मपराध न करियत साधुनीत्त यदी मी प्रव्रजत स्तदा मु चामि राज्ञोक्त एय मय्यसु ततस्ती प्रथम लोच कृत्वा प्रज्ञा

अणुपूर्वेसे तत्तितिवस्त्रे परीसह ॥१४॥ अरद्व पिठुश्चो किञ्चा विरए आय रक्त्विण । धम्मरामे निरारम्भे उवसते

यामपते रो० विचरता अ० अणुगारने अ परिपहे रचितने अ० सयमने विपे अधीर्य पणी अ० प्रविसने विपे त० ते भणी अरति रूप ति सङ्घो प०
 परीसह प सयमने विपे अधीर्यपण पि० परधी करी करीने वि० हिस्वादि कथी निवर्त्यो एहवो धीरती अ० दुर्गतना हेतु धी आत्मा राख्यो जेणे

ध० तेससु धर्मरूपीयी आरामने विपि रतिपासि नि० आरंभ रहित उ० उपशान्त थकी साधु च० चाले संयम मार्गने विषे १५ परति परिसह उपरि कथा अचल पुरनगर जित शत्रु राजा तेहनो पुत्रु अपरा जितना सातिखेरी हाचार्य पाशे दीबा लीधी अन्यदा विहार करतां तगरा नगरी गत ते समे अवती थकी आर्य रोहाचार्यानी शिथ तीहां आव्या पुके साधु तेनें ते कहे अवती थकी आव्या तिणें पुष्यु तिहां साधु नाभक्ति करणहार के हवा ते कहे सर्वजनधरमी पण नृपपुत्र साधुनाद्विधी एहवा समाचार सांभली गुर शीथने आसा दीधीजे तुमे जे तुमारा भाइनें प्रतिवीधी शीघ्र जाओ तिवारि शिथ अवती आव्या अनुक्रमे गीचरीनीवि लागी चरिये चाखा तिवारि लीके वाया रखे राजाने घरे गीचरी जाओ मती तिणे कहण न माव्यी राजद्वारे जाइ गाढा साद करी धर्म लाभ उचरे राजपुत्र प्रमात्य पुत्र आवी हा सो करवा लागा आवी तुमने वांटीए तिवारि ते पासे गया तिवारि साधुप्रते कहे तुमे स्युजाणीछी तिवारि साधु कहे हमे सर्वजाणीइ' तिवारि कहे तुम करी जाणी साधु कहे कही तेहवी नाचकीजे ते कहे अमे बाजाउ' ते प्रमाणे नाचसी साधु कहे तुम कही ते प्रमाणती वारवली साधु कहे तुम बाजावस्यी तिम नाचवी अने अमे नाचुते प्रमाणे तुम बाजावस्यी तिवारें तिणें वातमानी बलती साधु भणें जे जे हनी प्रतीसा न पूरवें तेहनेस्यो दंड तिवारि बेइकुमर कहे जे जे हनी प्रतिशा न पूरवे तेहारे जे जीते तेहन मनमाने ते करे इम करी साधुने न चावे अने बेकुमर वजावे तेवाजा प्रमाणे साथ नाच करे साध महा कलापात साधे बेइ कुमरने जीती राजी कीधा तिवारि साध कहे अमी अमा राजाखानी नाच करी अंते प्रमाणे वाजा वजावे तिवारि तिणे वात मानी बेइ कुमर बाजावजावे अने साथ नाच करे तिवारि साध नाचेते प्रमाणे वाजानीगेल उतरे नही सधु ती वीथाने बले जीते साधु जीत्या तेहाखी तिवारि बेइकुमर कहे खामी तुमारी जीत थइ तुमारे चीत्त मानिते दंड करी तीवारि साधर जीहरण संघति मोइकमकुखा अनुक्रमे साधु धानके आव्या

पण वेदकुमरने महावेदनाउपचावी आक्रुद करे यरीर पितल करी मांथ्यो अयुक्रमे राजाभोजनेने अयसर मदिरमां भावी कुमरने तेंढायें कुमर भाये तो भोजन कीजे तिवारे कुमरना पास वानसेवक कहे महाराज कुमरनें महा वेदना छे राजा कहे वेदना नी उपाय करी तिवारें जिम जिम उपाय करे तिम तिम वेदना अधिक घाए बल्लो कुमरनासेवक कहे महाराज इहा साध आथा इता तिणें वेदकुमरने मोहकम मारदीधी रजो हरण सघाते तिवारें राजा यवन सामलो कहे के साध उपगारो साध उपगार कळो हसे एह वीनिहचे हवें कुमरनें महा वेदना मरर्थात कष्ट मरण भली पणवेदना नखमाये तिवारें साधुनें पूछी स्वामीए हनें समाधि कि मथाए तिवारें साधु कहे भेलें कुमर दीख्याले ती समाधि घाए तिवारें माता पिता कहे दोषा नेतां वेदन जाए घणो भनी तिवारें कुमरनें पूछे तुम दिघा लेगो तेसरी रसाता घाए तिणें चारित्र ले पाड जमालें थया तिवारें साध प्रापणो विद्या अपहपरौ सरैरे साता घाई तिवारें तेंहनें माता पिताइ घणो महीलवे दीघा लीधी साधुनी आचार सूत्र सोडान्त भणायो देस नादेवा समर्थ थया अयुक्रमे गुरनी आत्रा लेइ विहार करे रुडवें राज्यपूत्र चारीत्र पाले मनमाचितवेजे सुकने बलात् कारे दीघादीघो पर चारित्रपालो देव गते गया अग्निन् एहवा समयनें विगे कीयावी नगरी मां तापस श्रेष्ठ मरणपामी पोतानें घरे शुकर थयो तिवारें तेंहनें जाति मरण लपनी सर्व पोताना सुतादो कुटब प्रमुख समझनें जाणे पण बोली सके नही अन्वदातस्य सुतते हनें शुकरो हणिस शुकर पोता नाघरमामर्थ्य उपज्यो ते सप्यने जाति मरण उपनो तीपणें सप्यने हखी तिवारेंते सप्यनीयो निथकी पुत्रनें घरे पुत्र उपब्धो ते बाल कनें पिणजाति मरण उपनो तिवारे बालक मनमे चितवे आतो माहरा पूत्रनी स्त्री एहनें माता किमकइ आमाहरी पुत्र तेहनें पिता किम कइ इमजाणो ते बालक बोले नहो माता पिता जाण्यो आ बालक गु गोछे इम करतां ते बाल कमीटो थयो पणे रहें मननीयात कीई जाणे

करवाने पथ देयता देवलीक थकी आवी जलीदरनी रोग उपजाव्यो पछे ते वैद्यनी रूप करी तेहने पासे इम कहै आछीया एती खु, आपीग ए असाथ्य
 रोग तदा ते जलीदरी कहै जे मागते आपीग तिवारे वेद कहै जी माहरी साथे आवि ती साजो कर माहरी ओपधनी की थली उठावजे बीजो कार
 मागती नयो तिवार ते वात मानो वेद्यरोग दूर कीधी तीवारे तेहने वैद्य साथे लेइ साथे कोथली दीधी ते कोथलीलेइ साथे भसे एतले देवमाया घकी
 जिम जिम चाने तिम तिम कीथली भारी धाए ते भार वहता अतीसार ययो महाखेद पाम्यो जाई सके नही अने जाइ ती पाछी जलीदर उपजे इम
 विमागे इम खेद पामती साथे भसे भमता एक नगर मासा धने सूत्र भणता दीठी तिहा ते वेद भारवाहकने साथे लीधि साधु पाथे जाइ वादे देयता
 साभने देसना साभली ते भार वाहक प्रते कहै तु दीचा लेती तुभने छीडीइ तिवारे ते भारवाहक कहै हवे दीचा लेवी तिहा तेहने दीचा दीवरावी
 देवता देवलीक गयो पुठे तिणे दीचा छाडी तिवारे वली देवताइ जलीदरी कीधी वली वेदरूप देवता आवी तेहने कहै जी दीचा लेती तुभने साजो
 कीने अन्या साजो न धाए तिवारे तिणे वलीदीचा लेवा वात मानी तीवारे तेहनी रोग नीवाव्यो वली दीचादिवरावी देवता देवलीक गयो वली तिम
 जतीणे दीचा छांडी इम एहवी रीते त्रीण वार दीचा दिवरावी वेद्यरूपे देवता तेहनी साथे भसे सुलभ बीधी करवाने अर्थे इम करता विहार करता
 मार्गमे गाम आव्यो गाम बलती दीठी एतले ते वैद एक लणनी भारो लेइ गाममा जाए तिवारे ते साधु कहै बलता गाममा लण लेइ कीम प्रवेश करे
 छे नञ्जा न धी आवती तिवारे वेद कहै तुमे पण क्रोध मान मायाली भमा बलीछी वारवार गृहस्थावासमा जाथी छी वारवार तुमी समभावीए छे
 मसार अगन समान तुम किम प्रवेश करी छी इम उपदेश आपे ती दुर्लभ वीधिने उपदेश न लागे वली तिहा थकी विहार करे मागे अटवी आवी
 तिहा रेव वैद्यरूप छे ते मार्ग छाडी काटा घण तिणे पथे चाले साधु कहै कीम वाट छडे काटी लागमे देव कहै तुम कीम गृह पथ चारित्र छाडीम

जितौ तत्र राजपुत्री निःशङ्कती धर्मं करोति इतरसु अमर्षं वहति अहं बलेन प्रवाजित इति चेतस्यु द्वेग वहति पर पालयितो हावपि चारित्र्यं शुद्धं मृत्वा तौ दिवं गतौ अस्मिन्न वसरे कौशाख्यां तापस श्रेष्ठी मृत्वा स्वयं स्वयं सुतादि कुटुम्बं प्रत्य भिजानाति परं वक्तुं न किञ्चित् शक्नोति अन्यदा सुतेरेपः शूकरो मारितः स्वयं एव सर्पो जातः तत्रापि जाति स्मरणवान् तैरेव मारितः पुरुष युक्तौ जातः तत्रापि जातिस्मरणं माप स एवं चिन्तयति कथमे तां पूर्व भववधं मातरं अहं उन्नपामि कथं चे सं पूर्वभवपुत्रं पितर मह सुन्नपामीति विचार्य मीन माश्रितः सूकत्रतभाग् जातः अन्यदा केनचित् चतुर्नातिना तक्षीधं ज्ञात्वा स्व गियथयो मुखे गाथा प्रेषिता तावस किमिणा मूत्रव्वएण पडिवज्ज जाणि अन्यस्मं मरिज्जण सूअरोगजात्री पुत्तत्ति १ एतां गाथां शुत्वा प्रति बुद्धी गुरूणां सुआवकीऽभूत् एतस्मिन्न वसरे सोऽस्मात्पुत्तजीव देवी महाविदेहे तीर्थङ्करसमीपे पृच्छति भगवन् किमहं सुलभत्रोधिदुर्लभत्रोधिः कौश्यां व्यामूकमन्नाताभावोति

सार रूपी कांठा मा पडो छी वलो ते प्रति बोधन पामे वलो तिहा थकी एक यचना देहरे जाए तीहां यच्च एहवुं करे के जीवारि कोइ फल फूल ने वैद्य चढापि तीवारि यच्च जंघा मुख करो पडे पळे ते यच्च प्रते दुर्लभ बोधि कहे रे प्रथम त्वं अधीसुरी कीम पडे छे तीवारि ते यच्च कहे तुमकीम जगत् वंदनीक साधुनी मार्ग छांडे तीवारि साधु कहे तुं कुण छे तीवारि देवता गुंगानी रूप करी देखाथी वली पूर्वला भवनी संबंध कही तीवारि ते कहे इहांथी परमार्थ तीवारि वे तात्थ्य पर्वते देव प्रतिमा जुहारया गया तीहां कोइक सिद्धना देहरा नाखणामां दुर्लभ बोधि अने सुलभ बोधि गुंगानी रूप स्वकुल युगल रूप थाप्यो ते देखो जाति समरण उपनी दुर्लभ बोधोमे तिवारि ते प्रतिबंधाणो अद्वा आवी रुडो रीते चारित्र्य पाले शिवगत लाधो इम प्रथम अरती पळे रति इम समस्त साधु परति परिसह जोम गुंगे कठिन पणे समकोत भादलो इति अरति परी

प्रकारे जाणिनि छांडे सु० रूडी आचव्यी त० तेंणे यतीद्र सा० चारित १६ ए० एणी परे पूर्वे स्त्रीनी स्वरूप कहे छे एमजाणिनि मे० बुद्धिवंत हुद्र पं० सुक्ति
 गांमी पुरुषने कादम सरीखी खूता रहिवानी कारण इ० ए स्त्रीद्र नी० ते स्त्रीसंघाते प्रवर्तनेनि बि० संयम जीवतव्यने हणे नहि च० आचरे धर्म अनुष्ठान
 अत्त० संसार थी आत्मानो गे० तारण हार हुद्र १७ अथ स्त्रीपरिसह दृष्टांत गाथा १६।१७ अथ पाडल पुर नामा नगरने विपे नवमी नंद राजानी
 राज्य धुरंधर अमाल्य शकडाल नामा मंत्री सर तेहने बे पुत्र यूल भद्र ह्व पुल तेली लावी सासने अर्थे ते नगरने विपे वैश्याने घरे यथेष्ट द्रव्य खेद्र
 रहे सुख विलसे संसारना अने शिरीयो लघुपुल ते राजानि सेवामां रहे एहवा समयने विपे ते नगरमां वररुचि नामा भट ते नद राजाना १०८
 दिन प्रते नवा कवित वणवे राजा तेहने बहुद्रव्य आपे तिवारे शकडाल मन्त्रीसर गौर्यक द्रव्य उडावे मन्त्री सर मिथावादीने मानेन ही नवाकाव्य
 राजानीप्रशंसासां भली प्रशंसा न करे मन्त्रिप्रशंसा विनाराजान तेहने किञ्चित् मात्र आप्युं तिवारे वररुचिभट्टमन्त्रीनीभार्या प्रते अमृतवाणी कहे मन्त्री
 सर मुभ उपसर क्षपा नथी राखता तिवारे स्त्री भर्तारने कही समभाव्योतिवारे मन्त्रीसर मिथावादीने माने नही स्त्रीना वचन थी वातमानी काव्यनी
 प्रशंसा करी तिवारे राजा निल्य नवा काव्य सांभले १०८ दिनार दिन प्रते आपे इम केतला इक दिवस गया बहु द्रव्य वररुचिने थयी तिवारे ते
 मोहवनादि कार्य करे तिवारे मन्त्री मनमां विचारे आमिथावादि मिथाल्य कर्म पापारंभ करे द्रव्य थकी तदा तिणे राजानि वाग्यो महाराजाए भट्टजी
 रण काव्य कहे पारका चोरना काव्य कहे छे तिवारे राजा कहे किम जाणीए मन्त्री कहे महाराज माहरी सात पुत्ती छे तेहने पूही देखी तिवारे
 राजामानी प्रात समे सभामा राजा पर हेंच वंथावी साते पुत्तीने बेसाडी ते पुत्ती कहवी बुद्धिवंत प्रथम पुत्ती १ एक वेला नवीन स्त्रीक काव्यसांभल
 ताते कहे बीजी बे वेला बीजी तीन वेला सांभलता कहे इम साते पुत्ती कहे एहवे सभामां वररुचि आबी मवा काव्य कह्या तिवारे ते काव्य सांभली

ऽडात्तरगतकाव्यानि न यानि यत्किं मुक्तिप्रान्ते भूपप्रदत्त दीनाराऽऽद्यत गृह्णाति ततो हृदिमान् धररुचिनामा भट्ट यतसहस्रचित्तव्ययेन यागहोमादि कर्मेति मन्वी तु तथा यर्द्धमान मिष्यात्वं दृष्टा तद्दाननिषेधाय रात्र पुर एव सुवाच राजन् अस्य द्वाह्यस्य एतावद्धन दत्त्वा कथं कौयस्यो विधीयते अथ तु परकायहरणत् कवितक्करोस्ति राश्रीच किं मसौ पुरातनकविकृतानि मत्पुरो वक्ति मन्त्रिणोक्त एतदुक्तानि काव्यानि समाऽपिम मपुत्र्य पठन्ति राश्रीच प्रात रेत दुक्तानि काव्यानि तव सप्तद्वीपार्ग्वे पाठनीयानि ततो मन्त्रिणा सब शिचयित्वा समापि पुत्रा प्रभाने भूपपर्यदि जवन्य तरिता स्यापिता ताय क्रमात् प्रथमा पुत्रो एकवारदुतसर्वयन्धारिका द्वितीया तु द्विवारदुतसर्वयन्धारिका एव सर्वापि यापत् सप्तमी पुत्रो सप्त वारदुतसर्वयन्धारिका एतादृया धारणांन्विता स्मन्ति अथ तत्र समायातो धररुचि स्वकृतकाव्यानि नृपते पुरो वक्तु मारिभेलुत्यन्ते भूपतिना षक्त

कहे म्यामो ए केतलोक यात छे गुरु कहे एहनी होड नहो धाए इम करता वलो पउमार्गे आवे तव शीथ मनीरथे कोशानि मदिरे आब्यो कोश्याइ जाणु, जे घूनभद्रनो होड पर आख्या तिथे तेहने चीतसानिमा राग्या एक सभे वरसता पाणीभे राग आलापो नृत्य करी काम बाणें यीथी चित्तचला ब्यो तीथे भोगनी प्रार्थना करी तिवारे कीश्या कहे घूलभद्र साठिवारे कीड सीनद्र यालाब्यो ते कहे ते ती नथी तिवारे कोश्या कहे रत्नकां बल स्यावो यद्यपि कहेते किष्कां मोले कोश्या कहे नेपाल देयना राजाने जाचे ते अपि तिवारे मुनिवर वरसतां पाणीमा नेपाले गया राजाने जाचो रत्न कांबलले मार्गे पाने अनुक्रमे अरमार्गे लुटाणो इम तीण वारमार्गमा लुटाणो चौथो वारला कडीनी भुगलमा वारवरसे कोशानि मदिरे आब्यो तिवारे कोश्या ते हने विविध प्रकारे प्रतिबोध देइ समभाथी अने हयणाती भु डा माहारी ताहरो आश्रवस्था भोग थकी वितीत थइ इम समभावी गुरु पासे भोकले गुरे पानो अणु दिवरावो इम घूनभद्र स्त्रीपरोसइ जील्या तीम बीजो जे कीइ स्त्रीपरिसइ सहे ते अनतासुखलहे इति स्त्रीपरोसइ उपर कथा सपूण ए० एक

अही भट्ट एतानि काव्यानि लवत् कृतानि परकृतानि वासीऽवक मत् कृतान्येव राज्ञीक मितानि काव्यानि मन्त्रिण. सप्तपुत्रीणां युनि समागान्ति स
 वक्ति यदि तावद्यन्ति तदाह मसत्यः एवं तेनीके जवन्य' तराट्ट यचानाग्री प्रथमा पुत्री भूपतिः पुरः समागल सर्वाणि तानि काव्यानि पपाठ एव
 क्रमात् सर्वापि तानि काव्यानि पठुः तथाप्रज्ञासद्भावात् ततो निःकासितो राजकुलाद्वररुचिः भूषेण सभाजनेन च तिरस्कृत. सर्वनापमान प्राप्तः
 अथ तेने त्य कपट' प्रारब्धं संध्यायां गङ्गाजलान्तर्यत्रं कृत्वा दीनारपञ्चगतीं सुक्ता प्रभाते तत्र गत्वा गङ्गां स्तौति सुखं लोकासमज ज्ञप्यन्नगनि
 पादेनाक्रम्य हस्ते गृहीत्वा जनेभ्यो दर्ययति मत् सुतिरञ्जिता गङ्गा मद्य मेवं दत्ते राजा तु कार्पण्यात्ममासकलत्र मारीष्य तिरस्कारः क्षत' इति च
 वदति तद्वार्त्ताश्रवणाल्लज्जितो राजा सर्वं वृत्तान्तं गकडालमन्त्रिणीऽपि कथयामास मन्त्रिणा तत्र चर प्रेषणेन तज्जालयन्तं ज्ञत्वा दीनारपञ्चगत
 ग्रन्थि मानाथ स्वकरे धृतः प्रभाते तत्र भूपतिः स नगरलोक स्तत्रायातः वररुचिरपि गङ्गां स्तौति मत्सन्ते पादाक्रमणेन हस्ताभ्यां च जल मालीऽउयन्न
 पि न ग्रन्थि माप्नोति विखिन्नी वररुचि मन्त्रिणैव मुक्तं भी वररुचे तत्र कल्पे किं ग्रन्थिनेपो विमृतः किम्वा जिज्ञोऽपि दीनारगन्धिरत्वेना पङ्कतः
 यद्वा नन्दराज्ये परद्रव्यापहारी कोपि नाम्नी ल्युक्ता स ग्रन्थिः सर्वजनानां भूपतिर्वररुचेण दग्धितः चरप्रेषणवृत्तान्तय प्रकटित. ततो लोकेधिगुलत
 खिन्नी वररुचिसुख माच्छाद्यः मन्त्रिदत्तत्र ग्रंथि लात्वा स्वग्रहे गतः अथ मन्त्रि शिद्राणि विलोकयति परं न पश्यति मन्त्रिगृहदाया साह स्व हे
 चकार तद्गृहवार्त्तांश्च पृच्छति सापि तत् स्व ह्नुभ्या सर्वं कथयति अन्यदातव्याग्रे तथा प्रोक्तं अधुना श्रीयकविवाहः समागतोऽस्मि राजानं गृहे
 आकारयिष्यते तत् सकाराय नवीनकृतचामरसिंहासनगम्लादिसामग्री जायमानास्ति ततो वररुचिः क्षिद्रं मनसि कृत्वा नागरिकडिभाभीदेक
 दानेन दं पाठयति । रायनन्दनविजानई जंसकडालकरिसि नन्दरायमारठवेसि १ पठन्ति तत्रैव मार्गे २ तद्राजवाटिकां गच्छता

राज्ञा युत मन्त्रिगृहे परा प्रेपिता तेस्तत्र कृषादिसामग्री जायमाना दृष्ट्वा राश्रीये कथिता राजा रुष्ट प्रभाते प्रणामाय गतिन मन्त्रिणा क्रोध
 वद्वि ज्वानमाना कुन्नी दृष्ट प्रात च स्वकीयसकलकुम्भघयकारिराजकीपस्वरूप त्वरित मेव पथात् स्वगृहे गत श्रीयकस्थायै राजकीयस्वरूप
 मुपाय एव मचिनेन तस्य पित्रा दत्ता वत्स कल्पे यदाह दृश्यस्य प्रणाम करीमि तदा त्वया सुन्नेन मच्छिर ह्येद कार्यं अन्यथा सर्वं कुटुम्बचय मसौ
 करियति मुपधिमतानपुटविपस्य मम गिर च्छेदे तव न कीपिदीप इति पैत्रवचस्त्रेन महता कष्टेन प्रतिपत्र प्रभाते राश्रीये तथैव स्रत राजपर्यदि
 हाहाकारी जात राणीत्त हे श्रीयक त्वया कि मिद क्तत श्रीयक प्राह राजन् मम पित्रा न प्रयोजन यत्तवानिष्ट तन्ममाप्यनिष्ट भेधेत्वसौ मया हृत
 तुत्रे भूपति श्रीयकस्य कथयति त्व मन्त्रिमुद्रा गृह्णाण तेनीत्त मम वृहभ्राता स्थूलभद्र कीगागृहे तिष्ठति तत स्थूलभद्रो नृपेणाकारित स्तनायात
 नृपेणीत्त मन्त्रिमुद्रा गृह्णाण तेनीत्त आनीच्य गृह्णीये ततोऽग्रीकवाटिकायां गत्वालोचयति ससारस्थानित्वता पिढविनाशकारिण्या मुद्राया गाविन्या
 इय यागार्हताय आनीच्य लीचोऽनेन क्तत पहीता स्वय तपस्या राजसभायां समायातस्यास्य नृपेणीत्त भी स्थूलभद्र आनीचिंत स्थूलभद्र प्राप्
 नोचित गिरी मयेत्बुकागत स्थूलभद्र कचियगरे सभूतिविजयचूरे शिथी जात अथ भ्राटमीहेन सिरीयक कीगागृहे आलापनाय गच्छति वदति
 च कीगे तत्पतिर्मद्रता स्थूलभद्रो यतिर्जात स्वल्पतिपिता शकडालय घय गत स्तकारणमसौ वररचिर्भद्रीज्ञिय स च त्वद्गिन्या मुपकीगाया
 रतोमि ययेय धमु मद्यपानरत करति तवा विधीयता इत्बुका सिरीयक स्वगृहे गत अथ कीगावचनात् उपकीगा त वररचि मद्यपानरत चकार
 प्रात तदृतात्ता च कीगा मद्यपान मसौ कुर्वन्स्तीति सिरीयकाया प्राचम्बी अन्यदा राश्रा शकडालम्परित ग्रही गुणवान् शक्तो भक्तो महामन्त्री
 ममाभूत् इदगोऽप्यसौ यदित्य गृतमन्त्रे मनसि द्रूयते इति राश्रीत्त माकर्ण्य सिरीयक प्राह यन्मे पितेत्य गृत तत्र मद्यपानकार्यं वररचि

नगरे यात्रि निगमेश रायहाणिण १८ असमाथी चरे भिक्षुनेय कुळा परिणह असंसती गिहत्वेहि अणिकेओ परिव्वए १८ लाठ साध एक एव चरेत्
साठयति यापयति थाळान एणणीयाहारण निर्वाहयतीति लाठ कुत्र कुत्र विचरेत् ग्रामे वा अथवा नगरे अपि अथवा निगमे अथवा राजधान्या अपि
द्रव्येण भायेन च एकाकी एव विचरेत् तत्र ग्राम कण्ठकादिवेष्टित नगर प्राकारादि युक्त निगमो यण्णिगूनस्थान राजधानी राजस्थान एतेषु
विहार कुर्यात् पर कोट्टग सन् भिच्चन्निचरेत् असमान सन् न विच्यते समानो यस्य स असमान गृहस्य अन्यतीर्थिलोकिभ्यो अधिक सर्वोत्कृष्ट

यको विचरे भि० साधुने० नकरे ममता रूप छे प० परिग्रहने विपे अ० परिषय सबन्ध अण करतो थकी गि० गृहस्य सघाते अ० घर रहित प० प्रवर्त्ते
छे १८ पय थयापरोसह दृष्टांत सायथी नगरीद्र सगम आचार्य घणु हव पणे खान यया कोइक दिन रक्षा पाच से शिय हुता गोचरी आहार अणला
भताने विचारी विहार कोओ गृह प्रणाम थी नगर देवता भल दुओ अन्यदा दत्त नामा शिय आसीयण निमित्ते आथी गुरु तेणे उपायये रहता
देगो सेने चित्तयो एगुरु नित्य स्थानकवासी प्रमादी इम यिमासी जपायये रछे गाम माहि भिजा अणल हे दत्तमहात्माद्र व्यवहारी यानी पुत्रगृहस्त
देगो ते मन्नादि क प्रयोगे साजो कियो तिहां नो आहार लेद्र जपायये आथी गुरु कछी आपणने ए आहार न कल्पे तिवारे चले कद्युप भाय आथी
ते आहार सेने कळी सध्याये प्रतिक्रमण करतां बलि गुरु बोण्या एदीप आसीवी तिवारे सेलो कइ तुमे प्रमादि छी तिवारे गुरुने गुणिर ल्या नगर
देवता तेणे कछु परे अनाचारी गुरुगुणवतना श्री गुणदेखे छे पिण आपणा धात्री दीप देखती अवगुण कार्ध न जीवे इम देवता कछु गुरुना गुणवी
शियने बुझथो गुरुने पाये लागे जिम सगमाचार्य परोसहसद्यु तिम बीजे ऋषीखरे पिण चर्या परिसहसहिवी इति चर्या परीसह दृष्टात सु० समसानने
विये वा अथवा नूना घरने विये र० हन हेठे राग देव रहित इद्र अ० कुचेटा रहित नि० वेवे न० आसवे नही प० अनरा उ दरादिक प्रमुखने २० त०

पुनः कीदृशः गृहस्थैः सह असम्भिलितः पुनः कीदृशः अनिकेतः न विद्यते निकेती गृहं यस्य स अनिकेतः अनगरः एतादृशः सन् परिव्रजित् सर्वतो विहरेत् १८ अत्र सङ्गमस्थ विरकथा कीलागपुरे सङ्गमस्थविरा बहुश्रुता यथा स्थितोत्सर्गापवाद निपुणाः दुर्भिक्षे गणं देशान्तरे गेथ स्वयं नगरं नवभागीकृत्य व्यवस्थिताः नगरदेवता च तेषां गुणैः रञ्जिताः अन्यदा तत्र गुरुवन्दनार्थं दत्तनामा शिथः समायातः तद्गत्त्वार्थं गुरुवः सपातं तं साधुं लाल्वा भिक्षायां गतः एकस्थेभ्यस्य भद्रकप्रकृतेर्गृहे बालीच्यन्तरेण गृहीतः सदा रोदति उपायशतसहस्रकरणिपि व्यन्तरदीषीपशन्ति नजाता गुरुव स्वात्गृहे गताः चण्डिकाकरणपूर्वं मारुद बालीयुक्तं आचार्यं तपस्विजसा व्यन्तरो नष्टः तुष्टा स्वन्माहपिष्ट प्रभृति खजनास्त्रिभ्या मोद कादिक माहारं गाढग्रहेण दत्तवन्तः ते मोदका स्वस्वैव शिथस्य गुरुभिर्दत्ताः स्वयं तु अन्तप्रान्त माहारं विह्वल्य भुक्तवन्तः प्रतिक्रमणाऽवसरं तस्य शिथस्य पिण्डदीपमालीचयेति गुरुभिरुक्तं शिथ्य धिन्तयति असौ धात्री पिण्डं सदा भुंक्ते ममस्वैव कथयतीति चिन्तनसमये एव तद्ज्ञापनार्थं देव तयान्धकारं विज्जुर्वितं स भृशं विभेति गुरुं प्रति वक्ति अह मऽह मऽह दूरस्थो विभेमि गुरुवः प्राहुः एहि मत्समीपे स वक्ति अस्मिन् घोरान्धकारेनाह मागन्तुं शक्नोमि गुरुभि स्तूत् कृतलिप्ता स्वांगुली दर्शिता तदुद्योतेन सोऽन्नायातः परं चिन्तयति गुरुवी दीपकं रक्षयन्ति एवं चिन्तयन्नेवासौ देव तथा चपेटाभि स्तर्जितः ज्ञातस्वरूपैर्गुरुभिस्तस्य चेत नवभागीकरणादिकं स्वस्वरूप प्रकाशितं यथा सङ्गमस्थविरैर्विहारक्रमा परपर्यायथर्यापरिपही अथासित स्था ग्लानत्वाऽवस्थायामपि चेत नवभागीकरणेनाऽपि चर्यापरीषही अन्यै रध्यासितच्यः अथ यथा ग्रामादिसु अप्रतिवर्षे न चर्यां सञ्चति तथा शरी रादिष्वपि अप्रतिवर्षे न नैषधकी परीसहीपि सहनीयः अतस्तं परीषह माह सुसाणे सुन्वागारेवा रुक्बुमूले च एगत्री अकुक्त्री निसीद्रजा नय वित्ता सए परं२० तस्य से अत्यमाणस उवसणाभिधारण सकाभिन्नी न गच्छिजा उद्विक्ता अन्नमासणं २१ साधुः एककः एकाकी सन् श्मसाने अथवा शून्यागारे शून्य

घट्टे पशुवा हवमूत्रे निपीदेत् उपविशेत् पर तत्र कीदृशं सन् अकीकुच नास्ति कीकुच यस्य स अकीकुच कीकुच हि भण्डविटसेष्टा उच्यते तथा रहित
 सस्यक साधुमुद्रायुक्त इत्यर्थं पुनस्साधु स्नात्र निपिण्य सन् पर अन्य जीव नवित्रासयेत् तत्रस्य जीव स्थानभट्ट न कुर्यादित्यर्थं २० पुन स्तदेव द्रुढ
 यति तल्येति पुन स्नात्र स्नानादी आस्थीयमानस्य भिद्योर्थेदो पसर्गर्भवेयु स्तदा तान् उपसर्गान् साधु रभिधारयेत् किमिमे उपसर्गा वराका मम
 करिष्यन्ति स्वयमेवो पयाम्य यास्यन्तीति मति कर्त्तव्या इत्यर्थं पर सकाभीत सन् तत आसनात् आतापनास्थानात् उत्थाय अन्यत् आसन न गच्छेत्
 प्रास्यते उपविश्यतेऽग्निन् इत्यासन आतापनास्थात उच्यते २१ अत्र कुरुदत्तसाधुकथा अत्र नैयेधिकीपरीसह कोर्थं यथा ग्रामादिषु अप्रतिवहे न
 चयापरीसह सहनीय स्तथा शरीरेऽप्रतिवहे न नैयेधिकीपरीसह सहनीय नैयेधिकी नाम शरीर मिल्यर्थं अथ कथा हस्तिनागपुरे द्रुम्यपुत्र कुरुदत्त
 नामा प्रव्रजित विहरन् क्रमात् साकेतपुरदूरप्रदेशे प्रतिमायां स्थित तत्र चरमपोरुथां गोधनापहारिण द्यौरा समायाता स्तद्रुष्टी त्वरित गता
 पयान्नीस्वामिन समायाता स्तौ द्यौरमार्गस्वरूपे दृष्टे स यति न किञ्चिद् द्यूते तत सञ्जातकोपैन्तै गिरसिमृतपति क्लवांगारा चिन्ता स यति
 र्भनागनापद्यत ता वेदना मधिसहमान सिद्धि गत एव नैयेधिकी परीसह सोढव्य अथनैयेधिक्या आतापनादिस्थाने स्वाध्यायादिक कृत्वा शक्याया

नयविज्ञा सए परं । २० । तत्थ से अत्यमागन्म उवसग्गाभि धारए । सकाभीथो न गच्छंज्जा उट्टिज्ञा अन्न मासगण २१

तिषां गमगानादिकने विपे से० तेषाधुने अ० रहता यका उ० उपसर्गं उपजे ते अभि० छमे मुक्त नियलचित्तने ए स्यु करस्थे इम जाणीने स ते उपसर्गं धी
 मसती यको स० न जावे उ० तिहा यो उठीने अ० अनेरे स्थानके २१ साधुने विपे निपेध परीसहनी कथा एक हस्ति नागपुरनामा नगरने विपे धनपति
 नामा भेड वसे तेहनी पुत्र कुरुदत्त नामे तीरे साधुने उपदेशे साभलीने तिवारे पछे दीक्षा लिधी अनुक्रमे विहार करता सा केतपुरनगर यकी वे गना

उपाश्रये आगच्छेत् अतस्तत्परीषह माह उच्चावयाहि सिञ्जाहिं तवस्त्री भिक्खु थामवं नाइवलं विहन्नेज्जा पावदिट्ठी विहन्नई २२ पइरिक्खुवस्सयं

उच्चा वयाहिं सिञ्जाहिं तवस्त्री भिक्खु थामवं । नातीवलं विहन्नेज्जा पावदिट्ठी विहन्नई ॥ २२॥ पइरिक्खु वस्सयं लहुं
कल्लाणं अटु पावगं । कि मेगराइं करिस्सइ एवं तत्थ हियासए ॥२३॥ अक्कोसेज्ज परो भिक्खु न तेसिं पडिसंजले

प्रतिमा कावसग करी रहे तिहां गायचीर चीरवनि आब्या तिणे गाय अपहरी तेणे वाटे नीकल्या ते चीरनी पठे गामनि वाहिर आवी ते ऋषीश्वरने पूछी अही महाभाग्य चीर किये वाटे नीकल्या तिवारे मुनी मोग पणे रह्या तिवारे तिण मस्तके माटिनि पालवांध कर अग्नि भेलि तिणे करि मस्तक बलता महातीव्र वेदना ऊपनी शुभ भावे एहवो मरणांत परीसह सहती सीधी जिम कुरदत्त सुनीश्वरे निसीहीया परिसह सह्यी तिम बीजे सहवी इति निसीहीया दृष्टांत अथाग्ने शिष्यापरीसह दृष्टांत ते भणी शिष्या परीसह द्रग्यारमी कहे छे उ० शीतादिक निवारक उच्च उपाश्रय व० सामान्ये ते त० तपस्वीद० भि० साधु था० सीतादिक सहिवा समर्थ ना० स्वाध्याय वेलाहर्ष विखवादादिके करी वि० उलंधे नही पा० पापदृष्टि जे साधु हुइ ते वि० स्वाध्यायादिकनी वेलाइ उलंधि २२ प० स्त्रीयादिक रहित उ० उपाश्रये ल० पामीनि क० शोभनीक छे अ० अथवा पा० शोभनीक दृष्टांतमये कि० कियुं मुझने मे० मुझने एकरात्र क० करस्ये सुख अथवा दुख ए० इणी परे हि० समभावे होइ सुख दुख तेजीवने २३ कीसवो नगरीइ यज्ञदत्त ब्राह्मणना त्रे पुत्र सीमदेव सीमदत्त तेणे सीमभूत आचार्य कहे दीक्षा लीधी ते बिहु सिद्धांत भणी गुणी गीतार्थ थयुं कीशं बीचाली उज्जिणि आब्या संसारीयाने वंदविवा तिहां देशरीति अजाण ते साधुने उसामण दीधु ते उसामण महात्मा ए वावरी

अन्यदा तत्पितरी उज्जयिन्यां गती तावऽपि साधु विहरन्ती तत्रगतौ तत्र तदा देशरीत्या स्वर्गहे क्रियमाणं विवधौपधमिश्रं मद्यापरपर्यायं विकटं तयोः
 स्वजनैर्दत्तन्ती तत्स्वरूप मऽजानन्ती जलविशेषबुद्ध्या पीतवन्ती परिणते च तस्मिन् ज्ञातमयस्वरूपौ तौ कृतपथात् तापी तद्देशाया देवानग्रन पादपीपगम
 नामकं नदीतटस्थ काष्ठीपरि प्रपन्नी ततोऽकालवृद्ध्या नदीपूरेण प्राविती समुद्रान्तः प्रविष्टी तत्र जलचरीपसर्गं विपन्ना दिवङ्गती इमौ हि नीरपूरगर्भेऽपि
 शय्याती न पृथग्भूती एवं शय्यापरीपहः सोढय्यः अथ शय्यास्थितस्य तत्रोपद्रवे जातसति रागहेपरहितस्य साधोर्यदा कश्चित् शय्यातरोवा शय्यातरादन्यो
 वा वचनैः आक्रोशे दिति हेतोः आक्रोशपरीपहीपि सोढय्यः अतस्तत्परीपहमाह अक्रोसिज्ज परो भिक्वू न तस्मिं पडिसञ्जलेसरिसीहीद्र बालाणं तस्माभिक्वू
 न सञ्जले २४ सुच्चाणं फरुसाभासा दारुणा गामकण्डगा तुसिणीओ उवेहिज्जा न ताओ मणसीकरे २५ परः अन्यः कश्चित् यदि भिक्वू साधु आक्रोशित
 दुर्बचनैः स्वर्जयेत् तदा तस्मै न प्रतिसंज्वलेत् तस्योपरिक्रोधं न कुर्यात् इत्यर्थः यदि तस्योपरिसाधुरपिक्रोधं कुर्यात् तदा साधुरपिवासानां मूर्खाणां सदृशी
 भवेत् अत्रदृष्टान्तः यथा कश्चित् जपको देवः तयागुणैः रावर्जितः सतत मभिवन्द्यते उच्यते च ममकार्यमावेदनीयं अन्यदा एकेन धिग्जातिना यौडु

सरिसी हीद्र बालाणं तस्मा भिक्वू न संजले । २४। सोच्चाणं फरुसा भासा दारुणा गाम कंटगा तुसिणीओ उवे
 हिज्जा न ताओ मणसीकरे । २५। हओ न संजले भिक्वू मणं पि न पओसए । तितिक्वं परमं नच्चा भिक्वू धम्मं वि

ही० इद्र वा० अत्रानि सरिखी धावे त० ते भणी भि० साधु न० ते गृहस्थ प्रते न करे कोप २४ सु० सांभलीने क० कठीर भा० भाया जिले क० कांटा
 सरिखी भाया सांभलीने तु० मी न करीने उ० ते कठीर भापाने लेखे माही गणे नहीं न० ते कठीर भायाना धणी ऊपरि म० हे प न करे २५ अथ

मारथ सबलवान् तेन सुवृषामशरीरोसाधुर्भविपातित ताडितश्च रात्रौदेवतावन्दितु आयाताचपकडूखीस्थित ततयासौ देवतयाभिहित भगवान् कि मयापराध क्षपक प्राह त्वया तस्य दुरात्मनोधिगजानिर्नकिञ्चित् कृत सोऽवादीव् न मया विशेष कोपि उपलब्ध यथाय अमणोऽय धिगजाति रिति आक्रोप परिसह दृष्टात् राजगृहे नगरे अर्जुनमाली भार्याकृदथी तेहने कुल देवता सुदगर पाणी यच्च ते वाढी दूकडीयचायतन तिहा रहे नित्य फलफूले करी यचने पूजे एकदा तिहा छ पुरुष महादुष्टबुद्धिना धणी गीठिला एहवे नामे तेखे स्त्री दीठी अति रूपवत तिवारे ते अर्जुनमालीने बाधी ते यच्च देखता छए पुरुषे स्त्रीसाथे आनाचार सेव्यो अर्जुन माली देखे छे अने मन मे चितव्योमे ए यच्च आज लागि पूज्यो ते फोक ए यचनी दृष्टि मुझने बूधी स्त्रीने एवढो धिटवना करेछे तेभणीए यचने आज पछि न पूजिये एहवो चितवताते यच्चमालीना शरीर अदृश्ये ऐसी हाथ माहि सुदरलेई ते छए पुरुष स्त्री सहित विणस्या इम दिनर प्रतेछपुरुष सातमी स्त्री विणसे जिकी यच्च भवन आगलि जावे तेहने ते यच्च विणसे इम अनेकका लग मावेछे तेहवते नगर उथाने श्रीमहावीर समी सखाछे ते सामली समकितधारी सुदर्शन श्रेष्टिलोकमाता पिता वर्जता श्रीमहावीरने वदथा करिवा जातां ते यथा यतन तथीषाट आवे ते सुदर्शन देखो अर्जुन माली आवीसुदगरनी प्रहार देवे पिण लागी नही ते सुदर्शन बीन्हा नथी तेहना प्रभावथो यच्च मालीनोकाया मूज्ञोनाठो तिवारे ते अणसणपारी अर्जुनमालीने पाखली सम्बन्धजणावीबुझवी श्रीमहावीर पासे गया तिहां धर्म सामली थो महावीर कन्हे दीव्यालीधीछे हिवे राजगृही नगरीने पासे रहेछे तिवारे लोक कहे अरे पापी माहरा सजन विणसी हिवडा भीक्षु पणे थावो इहा भिचा मागे तुझनेसी भिचा एहवा दुष्टवचनघात प्रहार लोकाना सही चमा करीकमास लगे छट्टर पारणो करो अत गडकेवली धई मोखपुहतो जिम अर्जुनमालीइ आक्रोपपरिसह सञ्जा तिमबीजे ऋषिखरे सहिवो इति श्री आक्रोपपरीसह दृष्टात् पूरो थयो हिवे आगेते

ते सर्वे सहे प्राणजातां पिण मार्गं धी न चले रीस नाणे यथा सावत्यीने विषे जितशत्रु, राजा धारिणी राणी तेहनी पुल स्कंद कुमार सर्वशास्त्र प्रवीण पंडित गुणे करी प्रवर्त्तं पुत्री पुरंदर यथा दंडकारण्य देखनी धणी कुम्भकार राजाने परणावी एकदा कुम्भकार राजानो पालिक नामा पुरोहित सावत्योद् नगरी आब्या जितशत्रुनी सभाद् गुष्टि करतां पालक मन्त्री नास्ति मत थापे ते स्कन्द कुमार शास्त्रनी युक्त करि नास्तीकमत उथाथी सभा समच्च ते पालकने विलखी कीधी लोके हसी तो आपणे नगरे गयी तेहवे पाछिलि सावत्यिद्र स्कन्द कुमार पांचसे राजपुत्रने परिवारे श्रीमुनि सुव्रत पासे दिव्या लिधी गणधर पदवी पाभ्यो एहवे केतले दिवसे मुनि सुव्रत तीर्थकार पूछ्यो भगवन् दंडकारण्य देशे इ' विहार करी नाति बहोन छे तेहने प्रतिबीध देवा भणी मन चाल्यो छे तुम्हे आग्यायी तिवारे मुनि सुव्रत स्वामी कहे तिहां तुमने मरणांत उपसर्गं हे तु' परिसह नही सहे अने चारसेनिनाणं' आराधिक छे ते सांभली भवितव्यताना योग थी दंडकारण्ये बंदाविवा उद्याने जई जतथी तेहवे ते पालक पुरोहित पाछली रीसना बस थी स्कन्द परिवार सहित हणवा बांछती रात्रि तेणे उद्याने छांना हथीयार भूमिमांछि सांतिने पछे प्रभाते आवी राजानेजणाब्यो जे तुमारी साली संयम भांजी पांच से जीध सहित वनमाहिं आब्यो छे तुमने विणासी राज लेसी प्रपञ्च एहवी से पुच्छ्यो छे जेन मानो तो तुमने पांचसे हथीयार छाना वाडी मांछि संताबा छे ते देखाडुं तिहां थी राजानो मन ते भंभेरीने वनमांछि तेडी हथीयार देखाबा महात्मा जपरि रीस चळ्ये थके ते पांच से पालकने भीलाब्या तिणे अभव्ये नगर माहि घाणी मंडावी रीस नावस थी ऋषीश्वरां ने घांणी मांछि घासोने निरदय पणे पीलवा लागो ते साधु क्षमा करतां केवल पांभी मीच पोहता पछे गुरुने विनास्थो रीस सहित करी भुवनपति मांछि अम्बिकुमार देवता हुश्री श्रीधी मुहपती रक्त खरबा समलीड' पुरंदरयथा आगे नाब्या भाइनी मरणे जाली एपापी पालक नाकाम छे हिवे

धर्म एव रक्षणीय इति विचिन्तयेत् इत्यर्थं २६ कथित् दुष्ट कुत्रचित् अनायदेये अमण साधु हव्यात् प्राणापहार अपि कुर्यात् तदा सयत साधु
 श्व सनेचेतविचारयेत् एव मिति किं जीवस्य नागो नास्ति शरीरस्य नागो विद्यते न च शरीरनाये जीवनाय कीदृश साधु सयत जितेन्द्रिय पुन
 कीदृश दान्त क्रीधादि रहित साधुना मनसि एव चिन्तनीय कदाचिदह अस्मिन् शरीरनायावसरे क्रीध करियामि तदा मम धर्मरूपजीवितव्यनाशो
 भवियति न चाग्निन् अनित्यदेहे नष्टे मम आत्मन धर्मस्य च नागो भावोति यदुक्त दीपो भेज्जतीति युक्त शपति शपतिवात विनाश्र परोचे दृष्ट्या साचा
 स साचादिति शपति न मा ताडयेत्ताडयेदा नाशून् मुखाति तान् वाहरति सुगतिद नैप धर्म ममा ही इत्य य कीपि हेतौ सति विग्रदयति स्या
 शितस्थैर्दसिदि १ अत्र स्कन्दिकाशियाणा कथा २७ यथा यावत्स्या जितयतु तृपो धारिणी प्रिया तयो पुत्र स्कन्दक पुरन्दरयथा पुत्नी कुम्भकास्कटके
 पुरे दण्डकटपस्य दत्ता तस्य पुरोहित पालको मिथ्याहक अन्यदा यावत्स्यां मुनिसुव्रतस्वामी समवस्यत तस्य देगना श्रुत्वा स्कन्दक यावको
 जात एकदा पालकपुरोहिती दूतत्वेन यावत्स्या प्राप्त राजसभाया जैनसाधूनाम धर्षवाद् वदत् स्कन्देन निरुत्तरीकाल्य निर्धारित सन स्कन्दककु
 मारोपरि कट छिद्राणि पश्यति अन्यदा स्कन्दककुमार योमनिसुव्रतस्वामिपार्श्वे पश्यतकुमारै सह प्रव्रजित गीतार्थो जात स्वामिनाति कुमार
 अग्नि कुमार देवता ग्याने करी जीयीतिकोवैर समालो एक आपणी बहिन टालि बीजी देग जेतले रायनो प्राण हुति ते सर्व बालो ते देसने आज
 सगि दड फारण कडोद्र पुरदर यगादिबा लेद्र तप तपो देवलोक विपि गद्र स्कन्दकाचाथना चारसेनिनाणु श्रिय धाणी पीलता कोप्या नथो अत
 गठ केवनी हुवा जिम तेषे बध परोमह सङ्घो तिम बीजे पिण ऋषिसरे बध परोसहसहिवा इति स्कन्दकाचार्यनी श्रियनी कथा दु० दोहिलो देया वच
 उपगार, रहित पणे भी० आमत्रिणे हे श्रिय नि सदाद्र अ० संकृत रहित अणगारने भि० साधुने स० सर्व असनादि से ते साधुने जा० याथो ही० हुवे

यथा पाछा द्वारिका आवता तप करो तो दीपायन ऋषि दीठी तिणे कुमरे हीपायनने लात प्रहारे करी घणुं विडब्यो जे ए द्वारिकानो विणस कारि स्ये तेहवे ऋषि चिन्तयो जे माहरा तपनी प्रभाव हुइ तो हुं मरीने सावाल ह्व युयांन द्वारिका नगरी दाहने अर्थे हीवुं एहवी निदायो बांध्यो तरे कुमरे ऋषिवचन सांभली क्षणकने आवी सर्ववात कही पके ऋषिवचन अन्यथा करिवा क्षण आवी ऋषीने पगे लागी स्वामी जालक अग्यानी चूका तुमे अपराधखमी बलतो ऋषि कहि लोकनी अपवाद ऋषिनी सराप अन्यथा न थावे पके क्षण पाछा आव्या ऋषि क्रोधि काल करी अग्नि कुमार देवता हुअी ज्ञान करी पाछली बैर जाग्यो आवी अग्नि पिण नगर मांहि घर दीठ आंबल तप करे जे तपना प्रभाव थी बारे वरस नगरमांहि जीर न दाल्यो हिंवे बार वरसने छेहडे नगर लोकने सम काल सरीखीज बुद्धिजपनी घणा ही वरस तप करतां हुवा आज आपणे घर न कौधी तो बीजा घणा ही नगर मांहि करे के तिणे सखी जिम एकने बुद्धि जपनी तिम सघले आंबिल तपन करायो एहवे तिणेइ लाग पास्यो के नगर सखली दाह कौधी जे दीचा लोड' तो तेने मनाथ पासे मोकल्या बीजा ते नोकल्या ते वायुना आकाथा हुतां अग्नि सांहिनसिं श्री क्षण अने बलदेवनो पराक्रमी मोटे जगथा के आपण खजनपरिवारसहु बलता देखि दुखी हुवा ते बिक्रमे बधव वनवासी नोकल्या तिणे वन जराकुमार रहि तिहा पडुता क्षण सहारायने त्रिस लागी एहवे एक हचनी छाया हिठे आवी सूता बलदेव पाणी लेवा गयो एहवे जराकुमार वनसाहि क्रीडा करता सृगने वरासिबांण सूखे ते वाण श्री नारायण पगने तलि ते उत्तम यज्ञ भलके छे तिहां आवी लागी जराकुमार आवी देखेती ए अपराध क्षमी बलतो क्षण कहि वीतरागना वचन अन्यथा नथावे तूं ताहरे ठामे जाइ हिवडा बलदेव आवे छे ते तुम्हने दूहवण करिखे जरा कुमार आपणे स्थानके गयो पके श्रीक्षणा जी चिंतवे छे ए सुभने मारीगयो से तो अनिक माया छे ए जीव तो जाई इम चिंतवी आर्तध्याने काल करीने अधोगति चिजी नरके

गया तपसे बलदेवपाणी ने इस तिहाँ अरि तठे भाइ मृताच्छु, तेहवे बीनावे अही बधव पाणी पीवी मुझने पाणी आणतावार लागी सहो तुम्हेतिरस्या
 बग्य इस विनापय की मूथी नवी जागती खेइ यकी छणने खुधे उपाडी इस अनेक मनापणा करता क्कमास हुवा एहवे एक देयता ब्राह्मणने रूपे थार
 मराक गायनी रूप विकुन्या तेहने बाछडी चूवे छे एहवी स्वरूप बलदेव देखी कहिवा लगी अही विप्र एहयो विप्रकार मूद गायने घवरावे छे बलतो
 ब्राह्मण कहे तु मुउं जे मूशने खुधे जपाडतां क्कमास थया अने मूथी न थी जाणती बलीबेनूरतनीघाणी करता बलदेव क्कहा परे मूउं बेलमांछि
 एत जिधं नीकने देयता क्कहा मूथा क दोजोवे इस देवताइ बूझ्यो थी छणने सस्कार करीवे राग्य थकी थीनेम कने चारिचलेइ विहार करे अने
 पिषां २ भिषाने जाइ तिहाँ २ तेहना रूपमोहो स्तोसर्वघरना कामजाज मूकी जीवे पाछे फिरे सर्वकाम विसारे एकदा थीवनेदेव मुनि भिर्याने
 षयें पाम माहिपेगता जूगाकाठे एक स्त्री बलदेवनी रूपदेखी जीती २ घडाने भरसे आपणा बेटाने गने रस्ती बांधी तेहये बलदेवे छोडब्यो
 तियारें चिन्तयो माहरा रूपने धिक्कार हुथी जे रूप देखुताए इवा अन्वर्थ जपजें एरूपपचेंद्री बालकनी पाप मुझने लगती ते थीबलदेव रूप अन्वर्थ
 हेतु जानि नियम लोथो आज पाछे ग्राममांछि द्वावी भिष्ठा न लेवी जे वेड मांछि कीइ खुडवाही काठवाही तथा सार्थवाही आब्याहुतादीइतीयु
 इस चितवी वेडजइ रह्यु तिहाँ गांतिप्रणाम देखीने बेटना जाव हरणदिक आययें रहें एहवे सृगली एकजाती करणधी ते बलभद्र मुनिनी सेवा
 करे तिहाँ माया जतग्या जणि फानदेती ऋषिने जणायें भातपाणी मेलवे एकदाते यनमाहि रयकारसार्थ वाहघण हर्षयामी भिब्या देवा छव्यो
 भाव महित सृगभायना भावेछे जेइ मानवीपु ततो निस्तरत अने बलभद्र सूझती आहार नेता अइकापी हघ नोडान्निवायने जोगितिहु जपर
 पडोविलेइ मरो पांचमें ब्रह्म देवलीके देयता एथा जिम बलदेव ऋषीग्वर याचना परीसह मद्यु तिम बीजें सहिवीइति थीयाचमा परीसह दृटांत १४

अमागितं किञ्चित् अपि नास्ति तस्मात्किञ्चिद् कष्टं भिच्चुजीवित मिति पुनस्तदेव द्रढयति गीयरगेति गोचराग्र प्रविष्टस्य भिचार्यं प्रविष्टस्य साधोः पाणिहस्तः पिण्डग्रहणार्थं न सुप्रसार्यः सुखेन न प्रसार्यः गौरिव चरति यस्मिन् स गीचरः गीचरे अग्रं प्रधानपिण्डग्रहणं गोचरागं तन्निमित्तं प्रविष्टस्य गृहे प्रस्थितस्य भिचार्यं करप्रसारणं दुःकरं भिच्चाभारगणं दुःकरं की नित्यं सम्यग् व्युत्थान् नरः भिच्चां मार्गयति तस्मात् अगारवासो गृहवासः श्रेयान् इति भिच्चुर्मनसि न चिन्तयेत् यथाऽऽरखे याञ्चापरीषही दुःसही न तथा श्रीमद्गृहाकीर्णं पुरेऽतः स्त्रीणां निजरूपकृत मनर्थं दृष्ट्वा बलदेवर्षिः पुरः प्रवेशं निषेधयत एव याञ्चापरीषह सीढवान् तत्कथा २५ यथा द्वारिकानगर्यामिकदा श्रीनिमिः समवसृतः कृष्णेन द्वारिकाच्य खमरणकारणं घृष्टं नेमिना मद्यपान विकलीभूतत्वल्कुमारोपसर्गं समुद्भूतक्रोधा द्वीपायनात् द्वारिकाच्यः लम्बरणञ्च त्वङ्गजराकुमारोदेवेति प्रोक्तं वासुदेवेन द्वारिकायां निषिद्ध मपि मद्यपानं भवितव्यतावसेन कृष्णपुत्रैः कृतं मद्यपानं विकलीभूतैश्चतैः क्रीडार्थं नगरवह्निर्गते स्तत्रातापनां कुर्वन् द्वीपायनञ्चविद्विष्टः अरे त्वं द्वारिकाच्यकारी भविष्यसी त्युक्त्वा यष्टिसुध्यादिभि रूपसर्गितः कोपात् द्वारिकाच्यनिदानं चकार तन्मारणा देव सृतः अग्निकुमारिषतूतन्नः तेन च द्वारिकाच्यः कृतः कृष्णबलदेवाविव निर्गती अटव्यां लघाक्रान्तेन वासुदेवेनोक्तं नाहमतः परं चलितुं शक्नोमि पानीय मानीयमे देहि ततो बल देवेन पानीयार्थं दूरङ्गते पादोपरिपादं कृत्वा कृष्णः सुप्तः अथ प्रागेव श्रीनिमिनाथवचन अवणसञ्जात भयेन जराकुमारिण वनवासं प्रपन्नेन तदानी मित स्वतो भ्रमता तत्रैवायतेन सृगभ्रांत्या सुक्तवाणेन विद्धपादः कृष्णः पञ्चत्व माप तथापि तत्रा यातेन बलदेवेन मे भ्राता सृतः किन्तु मद्दिलम्बा गमनीत्य रोषा देश मीनमाश्रितो स्तोति बुद्ध्या तच्छिवं स्वस्वन्ध्वं समुत्पाटितं पूर्वसङ्गतिदेवेन प्रतिबोधे कृते बलदेवेन दीक्षा गृहीता एकदा कस्मिंश्चिद्दशमे भिचार्यं मायातस्य बलदेवस्य रूपं दृष्ट्वा व्यामीहङ्गतया कूपकण्डस्थया कयाचिन्नार्या घटभ्रांल्या स्वबालकण्डे एवपासितः ततो

वनदेय मुनिना प्रतिबोधिता सा बानगनात् पाय दूरीचकार ततो भिचाय ग्रामप्रवेशनिजसो गृहोत वने एव लणकाटहारकेभ्यो भिचा गृह्णाती
यदि तभ्यो न प्राप्नोति तदा तप एव करोतीति यथा बलदेवेन तुच्छनीकेभ्योपि भिचा मार्गिता ततो याज्ञापरीपह सोढ स्तयापरैरपि सोढव्य
एव याज्ञापरीपहे वनदेवकथा अथ याज्ञाया न लभेत् तदा अनाभपरीपहीपि सोढव्य अत अलाभपरीपह माह परंशु घासमिसिजा भोयणे परि
निद्रिए नवेपिण्डे अलदेया नालुतपिञ्ज पण्डिए ३० अज्जिवाह नराभामि अविलाभो सुए सिया जो एव पडिसखिक्खे अलाभो त नतज्जए ३१ सापु
परेणु गृह्णथेप ग्राम कयल एययेम् तत्र च भोजने ओदनादौ परिनिद्रिते सम्पूर्णं सिद्धे वा लब्धे प्राप्ते सति वा अथवा अलब्धे अल्पे अनिष्टे लब्धे वा
पण्डितो मुनिर्न अनुदयेत् लब्धिमानह यतो मया सम्पूर्णमिष्ट वा आहार लब्ध अनिष्टे अल्पे वा अलब्धे तथा न दूयेत इति अनुक्तोप्यर्थो गृह्णते ३०
तदा किं कुर्यादित्याह अद्वैव अह आहार न लभामि अपि सम्भावनायां सम्भावयामि अद्वैव आहार न प्राप्त पर सुएइति स्व प्रभाते आगामि

नागुतप्येज्जपडिए । ३० । अज्जिवाह नलम्हामि अविलाभो सुएसिया जो एव पडिमचिक्खे अलाभोत नतज्जए ॥ ३० ॥

अथापे सूतमाह अनाभ परिसइ १५ मो कहिंहे प० गृहस्यना घर विखेधो० आहार म० भो भोजननी पनीये ल० लाधि यके पि० आहार अ० अण
लाधि यके वा० अथवा ना० इर्पविखयादरूप पचात्तापनकरे प० पडित ३० अ० अज नयो पामतीएहवी सभाव नाइहे लाभ सु० आगले सि० सभवाना
होइ जो जे सापुने ए० एणीपरे य० दीन पणारहितमन एहवी अ० अनाभ परीपहत० तैसाधुनेन० नजो मथी ते साधु ३१ न० जाणी नउ० जपनीदु०
दुग्ग नानाप्रमुख वे० फीडादिकयेदनानि दु दु खे पीडायको अ अदीनपणा रहित था० थिरकरे प पोतानि प्रजायी तिहा हि० रोग अहिंयामि २३
अनाभपरीसह दृष्टांत पाछने भवे गामनी पटेल इ तो पाचसे हलवहावती एकदा त्रिपुहरे भात पाणी आथ्या पृठेचा न लेइ हलकीडायोडायो पनरे

स पुत्रलाना पञ्चप्रकाररयय १५ एयानेव प्रत्येक उत्तरभेदानाह [वयस्योपरिणयाजिउ पञ्चहातेपकिसिषया विभ्यानीसायसीद्वियार हासिदरारुद्विहा
तथा १६] जेपुत्रला वयसत परिणता सन्ति ते पुत्रला पञ्चधा प्रकीर्त्तितास्तीर्थकरै कथितास्तेवतानाह यथा कर रक्षर्षा पुननीला शुक्रदिच्छ
निभा गुलिकासदभावालोहितारत्नाहिशुलवर्णा तथा हारिद्रा पोताहरितालानिभा तथा शुक्रा गह कुन्स्फटिकसदभा १६ [गन्धस्योपरिणयाजिउ
द्विहातेवियारिषा सुभिगन्धपरिणामादुभिगन्धतद्विव १७] जेतु पुत्रलानन्धत परिणता सन्ति ते पुत्रलाहृदिधाब्याख्याता सुरभिगन्ध परिणामी
येयान्ते सुरभिगन्ध परिणामा सुगन्धलेन परिणतायन्नादिवदित्वर्थं तथैव दुरभिगन्धो दुर्गन्धलेनलशुनादिवत् परिणता १७ [रसस्योपरिणयाजिउ
पञ्चहातेपकिसिषयातितकटु श्राकसाया श्राम्बिलामहुरातथा १८] ये तु पुद्गला पुनरसत परिणतास्तेपञ्चधा प्रकीर्त्तिता तिला निव्यसदभा
कटका सुण्डमरिष सदभा कपाया खदिर सदभा शालानिब्यूकरससदभा मधरा सर्करा सदभा १८ [फासस्योपरिणयाजिउ अट्टहातेपकिसिषया ककलहाम
कयाचेव गुरुभालहयातथा २०] स्यार्तयये परिणता पुत्रलास्ते अष्टधाप्रकीर्त्तिता कर्कशा श्रजालीमसदभा च पुनसर्दुका रुशुभाला पटकूल

सुक्रिला तथा १६ ॥ गन्धस्यो परिणया जिउ द्विहा ते वियाहिया । सुभिग गन्ध परिणामा दुभिग गन्धा तद्विवय १७ ॥
रसस्यो परिणया जिउ पचहा ते पकिसिषया । तित कटुय कसाया श्रविला महुरा तथा १८ ॥ फासस्यो परिणया जिउ

कालानोत्तराता पोला धवला तथा १६ गन्ध परिणाने परिणम्यादि जे पुद्गल विह्व भेदे त कहा तीर्थ करि सुगन्ध पक्षे परिणम्याक पूरनी ५६ दुर्गन्ध
पक्षे परिणम्या लसणनोपरि तथा बलो १७ रसनेपरिणामे परिणम्या जे पुद्गल पाचे प्रकारे कहा तीर्था कहुया कसार लाखाटा मीठा तथा बलो १८

स्कन्धानां परमाणूनां च उत्कृष्टा असंख्यकाल स्थितिः जघन्यिका एकसमया स्थितिः एषा अजीवानां रूपिणां गृहलानां स्थिति र्वास्थाना १४
अथ कालतः स्थितिं उक्त्वा तदन्तर्गत अन्तरमाह (अणुनकालमुकोसं द्रकं समयं जहन्नयं अजीवाण्यज्वीण अन्तर्यं विद्याहिद्या १४] अजीवानां
रूपिणां गृहलानां स्कन्धदेश प्रदेशपरमाणूनां अन्तर विवचिते चोत्तावस्थिति प्रच्युतानां पुनरुत् चोत्तावस्थिति र्वास्थाना १४] अजीवानां
जघन्यकं एकसमयं यावद्भवति इदं अन्तरं तीर्थकरैर्वास्थानां गृहलानां हि विवचिते चोत्तावस्थितिः प्रच्युतानां कदाचित्तमयापलिकादि संस्थानकाल
तोवापत्योपमादिवदनन्तकालादपितत् चोत्तावस्थिति सभावतीति भावः १४ अथ भावतः गृहलान् आह (वन्नश्रीगन्धश्रीचेव रसश्री फासश्रीतहा
सखलाश्रीय विन्नेश्री परिणामो तिसिं पञ्चहाः १५) तेषां गृहलानां परिणामोवर्णंती गन्धतीरसतः स्पर्शतस्त्रयासस्त्रानतय पञ्चधापञ्च प्रकारीज्ञेदः यतीहि
पुरणगलनधर्माणः गृहलास्तिपां एव परिणतिः सम्भवति परिणमनं स्व स्व रूपावस्थितानां गृहलानां वर्णं गन्धरस स्पर्शसंस्थानादिदन्वधा भवनं परिणाम.

जहन्नयं । अजीवाण्य रूचीणं अंतरियं विद्याहिद्यं १४ ॥ वन्नश्री गंधश्री चेव रसश्री फासश्री तहा । संठाणश्रीय वि
न्नेश्री परिणामो तिसिं पंचहा १५ ॥ वन्नश्री परिणया जेउ पंचहा ते पकितिया । किन्हा नीलाय लोहिद्या हालिहा

कृष्टी अंतर तीहायकी वली तीहा ऊपजे एक समय जघन्ययिति अतर पडेती एक समे तीहानो तिहा आदे अजीवरूपी द्रव्य गृहल पृथिव्यादिवा
श्रान्तो पूर्वे कथो तीर्थं करे १४ वर्णयकी गृहल परिणम्या गंध यकी गृहल परिणम्या रस यकी परिणम्या फासयकी परिणम्या तथा वली संस्थान
कथको परिणम्याते जाणवा परिणाम पुद्गलास्त्रिकायनो पांच प्रकारे दम इद १५ वर्णं परिणामे परिणम्याके जे पुद्गल पंचे प्रकारे ते कथा

किञ्च भद्रपत्रं उग धकारसमाफासश्चोच्च भद्रपस्यलक्षणोपिय २३) पुद्गलोपार्णं कृष्ण कज्जलनिर्भोभवेत् सहाष्ण पुद्गलोगधतोभज्य सुग धी भवति
 दुग धोपि भवति न तु सुरभिरथ न तु दुरभिरथ किन्तु कृष्णवर्णं पुद्गल सुगधोपि भवति दुर्ग धोपि भवति सुरभिदुरभिले न परिष्णमति दुरभि सुरभि
 लेनपरिष्णमति न तु न्रियतगध एवेति भाष एव रसत स्पर्शतथैव भाज्य रसाना पखाना मध्ये एकस्मात् रसातरपरिष्णती भवति स्पर्शाना षटाना
 मध्ये एकस्मात् प्रयात् स्वयान्तरपरिष्णती भवतीति भाष तथा पुन स एव पुद्गल सस्थानतीपि भव्य पचागा सस्थानाना मध्ये एकस्मात् सस्थानात्
 सस्थानान्तर परिष्णतो भवतीति भाष चरग धी द्वी रसा पञ्चस्यर्पा षट्ठी सस्थानानि पञ्चमोलिता चिप्रतिरिले क एव कृष्णवर्णा चिप्रति विधो
 भवति २५ अथमीनष्य भद्रानाह (यप्रमोनि भवेतोनि भद्रपत्रे उगधधोरसधो फासधो चैव भद्रपसठाण शोचिय २४] य पुद्गलोपार्णं तानो
 नोभवति स पुद्गानोपि गधत सुरभिगधदुरभिगधतो भाज्य पुन स पुद्गलोरसत पञ्चविध तिरु कटुकादितोभाज्य च पुग स्पर्शतोऽष्टविध
 चुरपदुयोतोऽष्टादितो भाज्य सस्थागतय पञ्चविधपरिमण्डलादितो भाज्ययचिप्रति विधोभवति २४ अथ रक्तस्य भेदानाह [यन्नश्चोनीहि एञ्जि उभद्र

यन्नशो ज्ञे भवे नीले भद्रप सेउ ग धशो । रसश्चो फासश्चो चैव भद्रप सठाणशोचिय २३ । यन्नश्चो लीहिप जेउ भद्रप
 सेउग धशो । रसश्चो फासश्चो चैव भद्रप सठाणशोचिय २४ । यन्नश्चो पीयप जेउ भद्रप सेउ ग धशो । रसश्चो फा

यध यको उ पुद्गल नीलां तं गध यको भजिया भजना रस ५ यको फरस द्यको सस्थान ५ यको भजियो सस्थानमाह कोद्र एक प्रद्र २५ यार्ण
 यको एता पुद्गाम तं गधादिके भजियो रस ५ फरस द्यको भजयो भजीयो सस्थान यको २४ यार्णयो पीलो जे पुद्गल तं गधादिक यको भजियो

सदृशा शुक्रका लोहपारद सदृशाः तथा पुनर्लघुका अर्कतूलसदृशाः २० (सीया उन्हायनिद्याय तद्वालुक्याय आहिद्या इद्रफासपरिणयाएए पुनला
समुदाहियर २१] तथा पुन क्वचित्पुद्गलाः सीताहिससदृशाः च पुनरुष्णा अग्नि सदृशा च पुन क्रिन्धा एत सदृशा तथा रुक्षाश्च आख्याता इति
अमुनाप्रकारिण एतेपुद्गलाः स्वर्णपरिणताः अष्टप्रकारिण तीर्थकारैरुदाहृता २१ [संस्थानपरिणयाजिउ पञ्चद्वार्वपक्वियापरिणुलायवशा तं साचउर
सनायया २२] ये तु पुद्गलाः संस्थानपरिणतास्ते पञ्चधाप्रकीर्तितास्ते केतानाह परिमण्डलाकङ्काकारापुनवर्तुलालड्डुकादतयः पुनस्तिरु
संघाटकाकारा पुन चतुरस्रा चतुष्कोणः चतुष्किंकाकारा तथा पुनरायताः प्रलम्बाः रज्जाकाराः २२ सप्रत्येषां एव परस्परं सखंध माह [वज्रञ्जीभि

अदृहा ते पक्वितिया । कक्वडा मउयाचे व शुक्रयालहयातहा १९ ॥ सीया उन्हाय निद्याय तद्वा लुक्याय आहिद्या ।
इद्र फास परिणया एए पुनला समुदाहिया २० ॥ संठाण परिणया जिउ पंचहा ते पक्वितिया । परिमंडलाय ब्रहा
तंसा चउरंस मायया २१ । वन्नञ्जी जे भवे किन्ह भद्रए सिउ गंधञ्जी । रसञ्जी फासञ्जी चे व भद्रए संठाणञ्जीवियर २१ ।

फरसने परिणामि परिणमगा जे पुद्गल आठे प्रकारे ते कहा तीर्थकारे खरखरा सुंहाला भारी हलुआ तथा वली १९ ताटा जङ्गा चीपछा तथा वली
लूखा कहा इण प्रकारे फरस पणे परिणमगा पूराइगलाइते पुद्गल समरक् प्रकारे कहा तीर्थकारे २० संस्थानपणे परिणमगा जे पुद्गल पाचे प्रकारे
ति कहा परिमंडल चूडीनीपरे वाटली मोदकनीपरिं तिखूणा चीखूणा आयातलांवा २१ यण्यकी जे काली पुद्गलते गंधपकी भजवी भजना रस
यकी भजिवो जाणवी सुगंध ह्वेते तथा दुर्गंध इद्र रसधमाहि फरसट कीइ कहुवे कीइकनहीवे संस्थान यकी भजिवो संस्थानधमाहि कीइ कहुवे २२

सुगंध पुद्गलले पद्यानां पद्यानां मध्ये केषिदप्या भवन्ति रसानां अपि पद्यानां मध्ये केषिदप्या भवन्ति एष स्पर्शानां श्रुतानां मध्ये केषिद् स्पर्शं भवन्ति
 सस्यानां पद्यानां मध्ये कानिचि सस्यानान्यपि सम्भवति २८ [गंधश्चो जी भवेदुभो भद्रए सेववचश्चो रसश्चो फासश्चो चैव भद्रए सठाणश्चो विव २८]
 य पुन पुद्गल्लो गंधतो दुरभि दुग धो भवति स च पुद्गल्लो वर्णतो रसत स्पर्शत सस्यानतय भव्य सुगंध पुद्गल्लवत् दुर्गंध पुद्गल्लोपिज्ञेय २८ अथ
 रसपुद्गल्लानां भेदानाह (रसश्चो तिसश्चो जड भद्रएसेववचश्चो गंधश्चो फासश्चो चैव भद्रए सठाणश्चो विव ३) य पुद्गल्लो रसतस्तीक्ष्णो भवति स
 पुद्गल्लो वर्णतो गंधतो रसत स्पर्शत सस्यानतय भव्य यत्र पुद्गल्ले एकारतीक्ष्णो रसो भवति तत्र सुगंधयो रिक केषिद्गंधो भवति स्पर्शानां श्रुतानां
 मध्ये केषिद् स्पर्शा भवन्ति सस्यानानां मध्ये कानि चिद् सस्यानानि भवन्ति ३० अथ कटुक रसभेदानाह (रसश्चो कड्वएजिउ भद्रए सेववचश्चो गंधश्चो
 फासश्चो चैव भद्रए सठाणश्चो विव ३१] य पुद्गल्लो रसत कटुको भवति स पुद्गल्लस्त्रिह्र पुद्गल्लवत् गंधत स्पर्शतस्य स्यान्ततय भव्य ३१ [रसश्चो

यन्नश्चो । गंधश्चो फासश्चो चैव भद्रए सठाणश्चो विव २८ ॥ रसश्चो कड्वश्चो जिउ भद्रए सिउ वन्नश्चो । गंधश्चो फासश्चो
 चैव भद्रए सठाणश्चो विव ३० ॥ रसश्चो कसाए जिउ भद्रए सिउ वन्नश्चो । गंधश्चो फासश्चो चैव भद्रए सठाणश्चो
 विव ३१ । रसश्चो अ विले जिउ भद्रए सिउ वन्नश्चो । गंधश्चो फासश्चो चैव भद्रए सठाणश्चो विव ३२ ॥ रसश्चो महुरए

भजनां सस्यान ५ मादि कोर फण्ये २८ कसायला रस यको जी पुद्गल्ल ते भजना वर्णं यको गंध यको फरस यको भजना । सस्यान यको ३० रस
 यको खाटो औपुद्गल्ल भजना ते वर्णं यको गंधयको फरस यको भजना सस्यान यको ३१ रस यको गंध र मोठी जी पुद्गल्ल ते भजना वर्णं वि गंध यको

एषे उगधश्चो रसश्चो फासश्चो चैव भद्र एसण्ठाणश्चोविय २५) यः पुन पुद्गलोवर्णोतीलोहितोभवति हिगुल सदृशो भवति सोपि पूर्वाक्त्वविधना गपतोरसतः स्पर्शतश्च सस्थानतीपि भज्यस्तदासोपि विधतिविधीभवति २५ [वयश्चोपीयएजिउ भद्रएसे उगधश्चोरसश्चोफासश्चोद्वैव भद्रएसण्ठाणश्चोविय २६] यः पुनः पुद्गलोवर्णोतः पीतलः स्वर्णवर्णः स पुद्गलोपि गधतोरसतः स्पर्शतः संस्थानतश्चभज्यस्तदाविधति विधीभवति २६ अथ श्लेस्य भेदानाह [वयश्चोसुक्तिनेजेउ भद्रएषेउगधश्चो रसश्चोफासश्चोचैव भद्रउसंठाणश्चोविय २७] यः पुनः पुद्गलोवर्णोतः श्लेस्यन्द सदृशोभवति सोपि पुद्गलोग धतोरसतः स्पर्शतः सस्थानतश्चभज्यस्तदाविधति विधीभवति २७ इति वर्णभेदानुक्तागध पुद्गलभेदानाह (गधश्चोतिभवेसुभीभद्रएसे उवन्नश्चो रसश्चोफासश्चोद्वैव भद्रएसंठाणश्चोविय २८) यः पुद्गलोगंधत सुरभिस्यन्दनपरिमलादिवत् सुगंधोभवति स पुद्गलो रसत स्पर्शतश्च भज्यरूपा स स्थानतश्च भज्यः कौर्धः

सश्चो चैव भद्रए संठाणश्चोविय २५ । वन्नश्चो सुक्लिजेउ भद्रए सिउ गंधश्चो । रसश्चो फासश्चो चैव भद्रए संठाण
श्चोविय २६ । गंधश्चो जे भवे सुभी भद्रए सिउ वन्नश्चो । रसश्चो फासश्चो चैव भद्रए संठाणश्चोविय २७ । गंधश्चो जे
भवे दुभी भद्रए सिउ वन्नश्चो । रसश्चो फासश्चो चैव भद्रए संठाणश्चोविय २८ । रसश्चो तिसश्चो जेउ भद्रए सिउ

रस ५ फरस ८ यको भजीवो सस्थान यकी २५ वर्ण यकी जे ऊजलो पुद्गल भजीवो ते गंध यकी रस ५ फरस ८ यकी भजीवो सस्थान ५ यकी २६ गध यको जे पुद्गल इद्र सुगंध भजिवो ते वर्ण यकी कीर्क वर्ण याद्र रस ५ फरस ८ यकी भजवाना संस्थान यकी २७ रस यकी तिस्रो पुद्गल भजीवो ते वर्ण यकी गंध यकी फरस यकी भजना सस्थान ५ यकी भजना २८ रस यकी कडुश्चो जेपुद्गलभजीवो ते वर्ण ५ यकी गधरस फरस ८ यकी

रत्नार्थं ३६ [फासर्थागुरुएजेठभद्रएसेठवन्नर्था गधर्था रसर्था चैव भद्रएसखाणार्थाविय ३७] य पुद्गल स्वयतीगुरुर्भवति स पुरस्तीवर्षतीगन्धती रसतय
सस्थानतय भव्य ३७ (फासर्था लङ्घुर्था जेठ भद्रए सेठ वन्नर्था गधर्था रसर्था चैव भद्र एसखाणार्थाविय ३८) य पुद्गल स्वयती स्वधुर्भवति स पुद्गलर्था
वर्षती गधती रसत सस्थानतय भव्य ३८ (फासर्था सीयए ३९) य पुद्गल स्वयंत श्रोतली भवति स्ववर्षती गधती रसत सस्थानत
यापि भव्य ३९ [फासर्था उद्गए० ४०] य पुद्गल स्वयंत स्व्याभवति स पुद्गलर्थावर्षती गधती रसत सस्थानतयापि भव्य ४० (फासर्था
निवए० ४१) य पुरस् स्वयंत चिन्धो भवति स पुरस्ति वषती गधती रसत सस्थानतयापि भव्य ४१ [फासर्था लुक्वए जेठ भद्रए सेठ वन्नर्था

भद्रए सठाणार्थाविय ३५ ॥ फासर्था गुरुए जेठ भद्रए सेठ वन्नर्था । गधर्था रसर्था चैव भद्रए सठाणार्थाविय ३६ ॥
फासर्था लङ्घुए जेठ भद्रए सेठ वन्नर्था । गधर्था रसर्था चैव भद्रए सठाणार्थाविय ३७ ॥ फासर्था सीयए जेठ
भद्रए सेठ वन्नर्था । गधर्था रसर्था चैव भद्रए सठाणार्थाविय ३८ ॥ फासर्था उद्गए जेठ भद्रए सेठ वन्नर्था ।
गधर्था रसर्था चैव भद्रए सठाणार्थाविय ३९ ॥ फासर्था निवए जेठ भद्रए सेठ वन्नर्था । गधर्था रसर्था

सस्थान यर्था ३५ फरस यर्था भारी जे पुद्गल भजनात वषर्था यर्था गध यर्था भजना सस्थान यर्था ३६ फरस यर्था जे सीतल पुद्गल भजना ते
वर्षर्था गध यर्था रस यर्था भजनात सस्थान यर्था ३७ फरस यर्था जे काण उन्तो पुद्गल ते भजयो वष यर्था गध यर्था फरस यर्था भजना सस्थान
यर्था ३८ फरस यर्था जे चोकायो पुद्गल ते भजियो वर्ष यर्था गध यर्था फरस यर्था भजना सस्थान यर्था ३९ फरस यर्था लुक्वो जे पुद्गल ते भजयो

असाए जित भरएसेउ वनषी गंधषी फासषी चिव भरए संठाणषी विव ३२] यः पुद्गली रसतः वाधायी भवति स पुद्गली वर्णती गंधत स्पर्शतथ
 भयः संस्थानतभापि भयः ३२ [रसषी क्षितिजित भरएसेउ वनषी गंधषी फासषी चिव भरए संठाणषी विव ३२] यः पुद्गली रसत फाली भवति स
 पुद्गली वर्णती गंधतः स्पर्शत संस्थानतथ भयः ३३ [रसषी मधुरए जित भरए सेउ वनषी गंधषी फासषी चिव भरए संठाणषी विव ३४] यः पुद्गली
 रसती मधुरः सर्वरातुली भवति स पुद्गली वर्णती गंधतः स्पर्शतथ भयस्तथा संस्थानतीपि भयः ३४ इति रससिदानाह (फासषी ककवडिजित भरए
 सेउ वनषी गंधषी रसषी चिव भरए संठाणषी विव ३५] यः पुद्गलः स्पर्शत कर्कशी भवति स च पुद्गली वर्णती भयः गंधती रसतथ भयः एष संस्था
 नतीपि भयः यथाहि एकः कर्कशः पाषाणादि सदृश स्पर्श पुद्गल स्ततुम्हले वर्णानां पशानां मध्ये किंचिद्वर्णः भवति गन्धयोरुभयोर्मध्ये एकः कश्चिद्गंधी
 भवति रसानां पशानां मध्ये किंचिद्रसाभवति संस्थानानां पशानां मध्ये कानि चित् संस्थानानि भवन्तीति भावः ३५ (फासषी मउए जित भरएसेउ व
 नषी गन्धषी रसषी चिव भरए संठाणषी विव ३६) यः पुद्गलः स्पर्शती मधुरं भवति स पुद्गली वर्णती गन्धती रसतः संस्थानतथ भयः खरशर्पवत्त्रे यः

जित भरए सेउ वनषी । गंधषी फासषी चिव भरए संठाणषी विव ३३ ॥ फासषी ककवडि जित भरए सेउ वनषी ।
 गंधषी रसषी चिव भरए संठाणषी विव ३४ ॥ फासषी मउए जित भरए सेउ वनषी । गंधषी रसषी चिव

रस एकी भजना संस्थान एकी ३२ फरस एकी मधुः पुद्गल सुकमाल भजना वर्ण एकी गंध एकी रस एकी भजना संस्थान एकी ३३ फरस एकी जे
 करकस् पुद्गल भजना वर्ण एकी गंध एकी रस एकी भजना संस्थान एकी ३४ फरस एकी एरुपी जे पुद्गल भजना ते वर्ण एकी गंध एकी रस एकी

स्वर्गतोपि भव्य ४६ (सम्यक्प्रायश्चित्तसोभदएसेव वधयो गधयो रसयो चैव भदएफासयो विधय ४६) य मुद्गल चतुरस्त्रीभयेत् सीपि गधती रसतद्य
 रपर्यंतयापि भव्य ४६ [जिषाययसम्यक्प्रायश्चित्तसोभदएसेव वधयो गधयो रसयो चैव भदएफासयो विधय ४७] य मुद्गल प्रायतस स्थान सवर्णतो गधती रसत
 यर्गंतयापि भव्य ४७ इति मुद्गलानां वर्णं गधरस रपर्यंत स्थानानां भेदा उक्ता अथ तेषां क्रमेण प्रत्येक २ सस्या वदति तद्यथा एकस्मिन् २
 पुद्गलाभ्यां यथा गधो द्वी २ रसा पक्ष ५ रपर्यां षट्ठी ८ सस्यानां पक्ष एव सर्वेपि विद्यति २ भेदा भवन्ति कृष्ण नील लोहित पीत शुकानां
 पक्षयानां प्रत्येक २ विद्यति भेद २ सोलनात् अत भेदावर्णमुद्गलस्य अथ गधो द्वी ५ पट चत्वारिंशद्भेदा भवन्ति तद्यथा वर्णा पक्षरसा पक्ष
 स्यात् षट्ठी सस्यानां पक्ष एव सर्वे त्रयोविद्यति सस्याकाम्ने च सुगधदुगधयोस्तयो विद्यति स्वयो विद्यति प्रसिक्ता उभयगोलने ४६ पट चत्वारिंश
 द्यन्ति अथ रसपद्गलानां गत भेदाभवन्ति तद्यथा वर्णा पक्षगधो द्वी स्यात् षट्ठी सस्यानां पक्ष एव त्रिंशत्कटुकपायान्मधु
 रादि पक्षभिरभक्ता सन्त गत भेदाभवन्ति १० अथ स्वर्गभेदा पट त्रिंशदधिकशत तद्यथा वर्णा पक्षगधो द्वी रसा पक्षसस्यानां पक्ष एव

यन्नयो । गधयो रसयो चैव भदए फासयो विधय ४४ ॥ सठाण्योय चतुरसे भदए सेव वन्नयो । गधयो
 रसयो चैव भदए फासयो विधय ४५ ॥ जिषायय सठाणे भदए सेव वन्नयो । गधयो रसयो चैव भदए फासयो

भजना स स्नान यकी गध यकी रस यकी भजना करस यकी ४४ जिषायत ददति स स्नानं पुद्गलस्य भजिर्वा ते वर्णं यकी गध यकी रस ददती भजना
 करस यकी ४५ अथ स्नाता कालवृक्षादीं एक समय कपत्य यजोयी रूपीनी प्रातरी फल तीर्थ करे ४६ एतूर्ध्वं कक्षी ते अथ क्वासिकाय प्रसुचुना

गंधश्रीरसश्रीचेव भद्रएसखाणश्रीविय ४१ (य पुद्गल. स्वर्गतीरुचोभवति रा पुद्गललोवर्णतीगधतीरसतयसस्थानतयभक्त्यः ४२) अथ सस्थानभेदानाह
[परिमण्डलसखाणि भद्रसेउ वन्नश्री गंधश्रीरसश्रीचेव भद्रफासश्रीविय ४३] यः परिमण्डल संस्थानपुद्गल स च वर्णतीगंधतीरसती योज्य तथा
स्वर्गतीपि भक्त्यः एकस्मिन् परिमण्डलसंस्थाने चूटिकाकालिमाति पुद्गलवर्णाणा पञ्चानां मध्ये कश्चिद्वर्णाभवन्ति गंधश्रीरसश्रीचेव भद्रफासश्री
रसानां पञ्चानां मध्ये कश्चिद्रसाभवन्ति स्वर्गानां अष्टानां मध्ये कश्चित् स्वर्गाभवन्ति ४३ [सखाणश्रीभेदेवदे भद्रसेउवन्नश्री गंधश्रीरसश्रीचेव भद्रफासश्री
विय ४४] यः पुद्गल. संस्थानतो वदे इति वक्तुं लीलज्जुकाकालिभवति स पुद्गलवर्णतीगंधतीरसतय भक्त्य स्तथा स्वर्गतीपि भक्त्य. ४४ (सखाणश्री
भवेतसे भद्रसेउ वन्नश्री गंधश्रीरसश्रीचेव भद्रफासश्रीविय ४५) यः पुद्गलः संस्थानतस्त्रिस्त्रीभवत् सोपि पुद्गलवर्णतीगंधतीरसतय भक्त्यस्तथा

चेव भद्रए संठाणश्रीविय ४० ॥ फासश्री लुभवए जेउ भद्रए सेउ वन्नश्री । गंधश्री रसश्री चेव भद्रए संठा
णश्रीविय ४१ ॥ परिमंडल संठाणे भद्रए सेउ वन्नश्री । गंधश्री रसश्री चेव भद्रए फासश्रीविय ४२ ॥ संठाणश्री
शवे वदे भद्रए सेउ वन्नश्री । गंधश्री रसश्री चेव भद्रए फासश्रीविय ४३ ॥ संठाणश्री भवे तसे भद्रए सेउ

वर्णश्री गंधश्री फासश्री भजना संस्थानश्री ४० चूडानीपरिमंडलसस्थान ते पुद्गल ते भजिदो वर्ण ५ दकी कोरक वर्ण हीर गंधश्री
रसश्री फासश्री भजना कोरक गंधादिक ह्र ४१ संस्थानश्री वाटलो जे पुद्गल ते वर्णादिकश्री भजिदो गंधश्री रसश्री भजना फास
श्री ४२ संस्थानश्री ह्र लिखूणी पुद्गल ते भजिदो संस्थानश्री गंधश्री रसश्री भजना फासश्री ४३ संस्थानश्री शीरसले पुद्गल

दिने लाभः स्यात् आहारस्य प्राप्तिर्भवेत् उपलक्षणात् अन्यदुरपर्युः अन्यतरयुर्वा मा वा भूयः साधु रेव प्रति समीक्ष्यते इति चिन्तयति तं साधुं अलाभपरीषही न तर्जयेत् न अभिभवेत् ३१ अत्र अलाभपरीषहे कथाद्वयं लौकिकं १ लोकीत्तरञ्च २ तत्र प्रथमं लौकिकं कथा न क्लथ्यते एकदा क्ण १ बलदेव २ सत्यकि ३ दारुक ४ एते चत्वारोऽप्यख्यापहता अटव्यां वटवृक्षाधी रात्रौ सुप्ताः आद्ये प्रहरे दारुकी यामिकी जातः अन्ये तयः सुप्ता से जीवने अंतराय दीधी ते कर्मदण्डेण कुमारने भवि पाप्म्यो एकदा क्ण महारायनी स्त्रीदण्डेणा तेहनो पुत्र दण्डेण कुमार वैराग्य धी नेमिनाथ पासे दीक्षा लीधी गोचरी करतां अंतराय कर्म आहार पामि नहीं साधु जे साथे फिरे छे ते पिण आहार न पामि वीजे साधे नेम आगलि कल्ह, गोचरीइ साथि न जावे तिवारे दण्डेण कुमार भगवंत पासे आती अभिग्रह लीधी परायी वहियु मे न लेवुं आपणी लखे आहार मिले' ता लेवा इम अभिग्रहे पालतां घणो काल हुवा एकदा श्रीकृष्णनेमनाथ ने पूछी भगवन् अठारें हजार सांधां में दुकर क्रियानी करण हार कुण छे अने आज केवल ग्यान कुण पामसी तिवारने भिकछुं तुमारी पुत्र दण्डेण कुमार दुकरकारक आज केवल ग्यान पामस्ये ए श्रीनेमनाथनी बचन सांभलिते हवें श्रीद्वारिन्द्राद्र पाछा आवतां भिन्द्राद्र' भमतां दण्डेण कुमार गलीमे देख्या भक्ति सहित वदणा कीधी तेहवे कीई एक व्यवहारी क्ण वांदता देखी चिंतव्यो ए मोटी साधु छे जेहने क्ण वासुदेव वांदि ती ए माहरे घरे आवती एहने आहार दु एहवी चिंतवी साधुने बीनायो व्यवहारीये सुभती मोदिक आप्या तेलेंद्रे श्रीनेम नाथ पासे आख्या गमणगमण पडिकमी पूछे भगवन माहरी अंतराय कर्मचय गयी जे मे श्रद्ध मोदिक लाधा तिहां श्रीनेम कहए क्णनी लखि ताहरी लखि नथी एहवी सांभलि चिन्तव्यो सुभने परलखनी आहार न लेवी ते भणो आहार परिठवनि हेत राख मांहि चूरता कर्म चूया शुभ भावना धरे धन्य श्रीनिमि माहरीपण राखी नही ती भग पडंतइम के वलग्या न ऊपनी के तला वर्ष केवल पालि मुक्ति पुहता जिम दण्डेण

सप्तदशभेदास्तेषु खरश्चतुशतलघुरुचस्त्रिभ्यशीतोष्णपुद्गलैरष्टभिर्गुणितः पट्त्रिंशदधिकं शतं भेदा भवन्ति प्रजापनायां सार्धपुद्गलानां १८४ चतुरशीत्यधिकशतं भेदा उक्ताः सन्ति तद्यथा वर्णाः पञ्चरसाः पञ्च गंधी द्वी स्पर्शापट् एव ऋथान्ते यतोहि यत्र खर सार्धपुद्गलोगण्यते तत तदा ऋदुःपुद्गलानगण्यन्ते यत्रश्लेष्मीगण्यते तदा तत्र रूचीनगण्यते परस्परविरोधिनी हि एकल नतिष्ठत . तस्मात् सार्धाः पट् संस्थानानि पञ्च एव सर्वमोचिता तयोविशति भवन्ति ते तयोविशति भेदाः प्रतीकं खरश्चतुशतलघुरुचस्त्रिभ्यशीतोष्णाद्यष्टभिः पुद्गलैर्गुणितः १८४ चतुरशीत्यधिकशतं भेदा भवन्ति योतरागोक्तं वचं प्रमाणं येन यादृशं ज्ञातंतेन तादृशं व्याख्यातं तत्वं केवलीवेद अधीपसंदायेण उत्तरयन्त्य सत्त्वं धमाह (एसाभजीविविभत्तीसमासेणवियया हिथा एत्तीजीवविभत्तिं बुष्ट्यामि अणुपुव्वसो ४७) एषा भजीविविभक्तिः समासेन संक्षेपेणव्याख्याताइतीइति इतीऽनन्तर अणुपुव्वसोइति आनुपूर्व्याऽशु क्रमेण जीवविभक्तिं प्रवक्ष्यामि ४८) (संसारत्यायसिद्धाय दुविष्टाजीवाविययासिद्धाणेणविष्टासुत्ता तत्कीकतयश्रीसुत्ता ४९) जीनादिधाव्याख्याता तर्केसंसारस्थासंसारोगति चतुष्टयात्कस्तत्रतिष्ठन्तीति संसारस्थाः च पुनः सिद्धाः कर्मफल रहिता भवन्त्यमण्यसि यत्ता तत्र च सिद्धाः अनेकाविधा

विय ४६ ॥ असंख काल मुक्तीस एकोसमञ्चो जहन्नयं । भजीवाण्य रूचीयां अंतरियं वियाहियं ४७ ॥ एसा भजीव विभत्ती समासेण वियाहिया । इतो जीव विभत्तिं दोष्कामि अणुपुव्वसो ४८ ॥ संसारत्याय सिद्धाय दुविष्टा जीवा

पुद्गलान्ती विभक्ति विवरो ते संक्षेपे करी कष्टो ए भजीव विभक्त कष्टा पठे जीवनी विभक्ति विचार कहे स्थं चतुश्रान्ती ४७ संसारी एकेद्रियादिक सिद्ध एविष्टुं भेदे जीव कष्टा ते सिद्ध अनेकभेदे कष्टा ते सुभक्त कष्टतां प्रति सांभक्ति हे शिष्य ४८ यत्तिंगाय तीनेवेविष्टं सिद्धः बीजादिक यनेरेत्तिंग सिद्ध

उक्ता न रति तान् सिद्धमेतान् मेकपयतस्य नृणु ४८ (इत्यौ पुरिसिद्धिष्वय तद्विषयनपु सगासिद्धिष्वय असनिष्ठाया गिहल्लिङ्गे तद्विषय ५०) इत्यौ रति किंय
 पुरापर्यायापेक्षयासिद्धा स्त्री सिद्धा १ एव पुरुषपयायात् सिद्धा पुरुषसिद्धा २ तथैव ते नैव प्रत्यारेण नपु सकपर्यायात् सिद्धा नपु सकसिद्धा नपु सकाया
 छत्रिमा एव सिद्धा भवन्ति न तु जगन्पु सका सिध्यन्ते ३ स्वलिङ्गसिद्धायतिवेषिसिद्धा ४ अन्यलिङ्गसिद्धा दौषपरित्राजकादिद्वेषियसिद्धा ५ तथैव
 गृहलिङ्गे सिद्धा गृहस्यवेषिसिद्धा ६ पदभेदाभिधाना उक्ता भयान्तरेपञ्चदशभेदा अपि जिन सिद्ध १ स्तोत्र्यं कर २ अजिगसिद्ध १ गणधर तीर्थसिद्ध
 पुण्डरीकादि ३ धर्तीर्थसिद्ध मरुदेवादि ४ गृहलिङ्गसिद्धमरुतादि ५ अन्यलिङ्गसिद्ध वक्रज्वीरीप्रमुख ६ खलिङ्गसिद्धसायु ७ स्त्रीलिङ्गसिद्धचन्द्रन,
 शालादि ८ नरसिद्धस्वधिर ९ नपु सकसिद्धगीतियादि १० प्रत्येक शुभ ११ करकच्छादि १२ स्वयं बुद्धकपिलकेवल्यादि १३ बुद्धिबोधिसिद्ध १४ एकसमये
 एकसिद्ध १४ एकसमये धर्तकसिद्ध १५ एव पञ्चदशभेदा अपि षट् स्वैव भक्तभयं वति अथ सिद्धान्तैव अयगाहनात् खेदतस्य आह (उर्ध्वोसीगाहणाएव
 जवसमिन्माराय षट् अहेयतिरिय च समुदभिजलमिय ५१) अस्मिन् गाथायां उगृहणायाहनायां तथा जवन्यायगाहनायां च पुनर्मध्यगायगाहनायां

विद्याहिया । सिद्धा योग विद्या वृत्ता त मे किंवायउ सुण ४८ ॥ इत्यौ पुरिस सिद्धाय तद्विषय नपु सगा । सलिगे अन्न
 लिंगेय गिहल्लिगे तद्विषय ५० ॥ उक्तासा गाहणाएव जहन्न मज्जिमाइय । उट्टु अहेय तिरियच समुदमि जलमिय ५१

यार गृहस्थान् लिंगान् सर्वमतसिद्ध स्त्री षकी सिद्ध पुरुष षकी मरुते सिद्ध तिसपत्नी नपु स षकी सिद्ध ४८ उगृहणी पांचवे धनुषनी अयगाहना देहि
 सोभे णाम २ जपन्वा ययगाहना ते यिधत्ते मध्यम अयगाहना उहल्लोक मेरुपूला अधोस्त्रीक अधोगास अधोदीपतिरकि स्त्रीक समुद्रने विसे नदी

वर्तन्तीसिद्धा काश्चिन् प्रतिष्ठिताः सन्ति सादि श्रपर्यवसितं कालं स्थिताः सन्ति पुनः सिद्धाः कवुन्दिंशरीरन्त्यक्षा कुलगत्वास्त्रिंशद् इति सिध्यन्ते
 प्राकृतत्वाह चनव्युत्पन्नः कासिद्धजीवादेहन्त्यक्षानिष्ठितायां भवन्ति ५६ एतन्नशस्त्रीनरमाह [श्रलोए पडिहयासिद्धा लीयणो य पयद्विया इहिं बुन्दिं च
 इत्ताय तस्य गन्तुणरिज्जार्दे ५७] सिद्धाश्रलोके क्वलकाप्रलक्षणे प्रतिष्ठताः सन्ति तत्र हि धर्मास्त्रिकायाभावेन तेषां गतैरसम्भवीस्त्रि तया
 पुन सिद्धालीकाया लीकरयोगरितनी भागे प्रतिष्ठिता सदा श्रवस्थिताः सन्ति इहतिर्यग्लोकादी बुन्दिंशरीरन्त्यक्षा तत्र लीकाया गत्वासिध्यन्ति तया
 बालस्य शसम्भवात् यत्तैव समये भवत्तयस्त्रिस्त्रिन् एव समये भोजकात्रगतितय भवति भावः ५७ अथ लोकाया चदे पत्प्राग्भारा यत्कानानायत् प्रसा
 थायद्वयां च वर्तते तत्सर्वं प्राह [वारसजोयणे हि सव्यदसुवदिं भवेईसीपभारनामाश्रो पुटवीकृतसखीया ५८] [पण्यालसयसहसाजोयणां तु श्रायया
 तावदयं चोवविद्विनातिउयोसाहियपरिरश्री ५९] [श्रदुजोयण वाहना एसासज्जसि विवाहिया परिहायन्ती चरिभन्ते मच्छिय पत्ताश्री तण्यरी ६०]
 [श्रज्जुणसुवन्नगामई सापुठवी निन्मालासहाविणं उताणय कृतय सण्डियाय भणियाजिणवरेहि ६१] [सहं ककुन्सद्गासा पण्डुरानिन्मलासुभासीयाए जो
 श्रलोए पडिहया सिद्धा लीयणो य पयद्विया । इहं वेदिंच इत्तायां तस्य गंतूण सिद्धार्दे ५७ ॥ वारसहिं जोयणोहिं
 सव्यदसु वदिं भवे । इत्सीपभार नामाश्रो पुटवीकृत संठिया ५८ ॥ पण्याल सयसहसा जोयणायां तु श्रायया
 सर्वाश्रोत्र विमानने उपरिच्छे ईधत् माग्भारा नाम सिद्ध सिला पृथिवी पाप्राणमद् जताणा चीता कृगने संस्थाने रहीछे ५७ पैताली ससाख योजन
 श्रायतलांवी तैतलीज ४५ लाख योजन पोहली जाणवी विगुणी भाक्केरी परधि रकोडि ४२ लाख ३० हजार २४९ योजन भाक्केरा ५८ ते सिद्ध सिद्धा

यथाशोलाय तो उचिष्याद्विप्रो ३२] एताभि पञ्चभिनाथाभिस्त्रिदशिलादपत् प्रागभारान्तरौ अथ लोकाय वर्णयति सर्वाद्यसिद्धस्य नाम्नोविमानस्या
 परिहादयभिर्योजनैरोपत् प्रागभार नाथो यथो भवेत् कीदृशो साभूमि क्व सस्थिता अथ शालपत्र तस्य स स्थित स स्थान भाकतिर्यस्यासा क्व
 स स्थिता रश् सामान्योऽपि इव उत्तान एवमेव ५२ सार्दपत् प्रागभारान्तरौ कीदृशो वर्तते तत् स्वरूपमाह सार्दयत्प्रागभारो योजनाना पञ्चचत्स्रा
 रिगतं यतसहस्राणि धायताद्विधापत्तंते पञ्चचत्वारिगतं सद्योजन दोषास्तीत्यर्थं च पुनस्तावन्तिक तावत् प्रमाण एव विस्तीर्णा वर्तते विस्तारिणापि
 पञ्चचत्वारिगतं सद्योजनद्विधाप्योच्यते च पुनस्तावन्तिक तावत् प्रमाण एव विस्तीर्णा वर्तते विस्तारिणापि पञ्चचत्वारिगतं सद्योजन प्रमाणिति भाव
 तथा तस्यात् यत्प्रागभाररति श्रेय परिरथादिति परिधि त्रिगुणि साधिकोऽप्येव तदा एककोटि द्विचत्वारिगतं त्रि प्रकहस द्विगतैकीनपञ्चायर्था
 जनानि किञ्चिदधिकानि एतावान् तस्या सर्वपरिधिवति ५६ पुन कथमूतासा अटयोजन बाहुष्य अटयोजनानि बाहुष्य यस्या सा अटयोजनबाहु
 स्याकारदगप्रागभाराम्भ्य प्रदयेद् यत्प्रमाणस्योत्थवतोऽजिनैव्यास्याता अरिमानेषु सर्वदिगवर्तिषु पर्यन्त प्रदयेषु परिशीयमाना परिसमन्तात् द्वायतीति
 शोधमात् पञ्चलानवन्तो मधिक्रिया यत्र मधिक्रापय मधिक्रापिच्छ तस्मात् मधिक्रापत्रात् अपि तदुत्तराप्रति मूलादत्यर्थं ६० पुन कीदृशोसा

तावद्वयत्वेव विश्विन्ना तिशुषो साद्विय परिरथो ५६ ॥ अट लोयथ द्वाष्टला सा मज्जन्ति विद्याद्विया । परिहायती

थाठयान्न शब्द आहो न जातपत् मध्यमप्रदये कश्चां तीर्थं कर द्वे पदे धांहे २ पातसौ घटती घटती इहहे माथीना पर्यु पकी तनु अति
 पातसो ५६ अच्युन धोसा सोमोते इम यते वृथिवि सिद्ध गिना निर्मलसहित स्वभाये कलापा धिता क्वर्तन सस्थानं आकारे सस्थित कश्चो तीर्थं कर द्वे

पुत्रीअर्जनं सुवर्णमयी खेतकाञ्चनस्वरूपा पुनः सा पृथ्वीस्वभावेननिर्मलापुनः सा कीदृशी उत्तानकं जडं मुखं यत् कलकं तद्वत्स्थित यस्या साउत्तान
 कलकसंस्थितासाजिनवरैर्व्याख्याताभणिताना पूर्व सामान्येन कल संस्थिता इत्युक्ता इह तु उत्तानकनसंस्थिता इत्युक्ता अत्रायं विशेषइति न पुनरुक्ति
 दोषः ६१ पुन सां पृथ्वीपृथ्वीकाङ्कन्दसंकाशा पाण्डुराधवला निर्मलाशुभाभव्या सा पृथ्वी सीताभिधावर्त्तते सीता इत्यपर नाम तस्याः सीताभिधानायाः
 पृथिव्याउपरिइत्यनेन सिद्धशिलायाउपरिष्टात् एकजीवनं लोकान्तस्तुव्याख्यातः ६१ इति सिद्धशिलास्वरूपमुक्तातत्र सिद्धाः कतिपयतीत्याह [जीयणस्यउ
 जीतय कोसीउवरिमोभवे तस्सकोसस्य कृभाए सिद्धाणीगाहणाभवे ६२] जीजनस्य तल उपरिमउपरिवर्तीयः क्रोशीभवेत् तस्य क्रोसस्य षष्ठेभागेइत्यनेन
 सतिभागतयस्त्रिंशदधिकधनुः शततितय रूपे ३३३ धनुः परिमाणे सिद्धानां तत्र अत्रगाहनावस्थिति भवेत् इत्यर्थः ६३ पुनः सिद्धानां स्वरूपमाह

चरिमंते मच्छीयपताओ तणुययरी ६० ॥ अज्जुण सुवन्नगमर्दे सा पुठवी निमलला सहावणं । उत्ताणय कल संठियाय
 भणिया जणवरोहिं ६१ ॥ संखं क कुंद संकासा पंडुरा निमलला सुहा । सीयाए जायणे तत्ता लायंतोओ विया
 हिओ ६२ ॥ जायणस्यउ जो तय कोसी उवरिमो भवे । तस्य कोसस्य कृभाए सिद्धाणी गाहणा भवे ६३ ॥ तय सिद्धा

भणौ कहौ तीर्थं कर देवे ६० अंख अंकरल कुंद कुंदना फूलसरिखी धउली मलरहित मनोहर कंचो सिद्ध शिलाधी एक योजन लोकोना अंत केहडो
 कखो ६१ ते एक योजनयो तीहां एक कोस जपरि लोके ते एक कोशना कृडा भागने लिखे एतलेद ३३ धनुख भाभेरा सिद्धनी अवगाहना होइ ६२
 तिहां सिद्ध महाभाय अचिंल्य शक्ति लोकना अग्रने लिखे रखाके भवसंसार अवतार प्रपच यकी मू काणा सिद्धरूप मोख उत्तमगते पडु ता ६३ उं च

रहिता. मोक्षगमनादनन्तर अन्तरहिताः ते सिद्धाः प्रथमेन बहुक्लेन सामस्या पेलया अनादयो अनन्ताश्च ६६ पुनस्तेषामेव स्वरूपमाह [अरुविणो जीवधरा नाण दसण सन्निया अउल सुह संपत्ता उवमा जस्य नत्थिओ ६७] ते सिद्धाः अरुविणो वर्त्तन्ते रूपरहितत्वेन रस गंध स्पर्शानां अपि अभावः लिखारहिता अपि पुनः कीदृशाः सिद्धाः जीवधनाः जीवाश्च ते धनाश्च जीवधनाः जीवाः सच्चिद्रूपयोगशुक्लाः धना अन्तर रहितत्वेन जीव प्रदेशमया पुन कीदृशः ज्ञानदर्शन सच्चिताः केवल ज्ञान केवल दर्शने एव संज्ञा जाता दीधते ज्ञानदर्शन सच्चिताः ज्ञानदर्शनीपयोग वन्त इत्यर्थः पुनः कीदृशाः अतुलं अपरिमितं सुखसंग्रामाः यस्य सुखस्य उपमानास्ति तत्सुख प्राप्ता इत्यर्थं यतः कर्मक्लेष विमोक्षाच्च मोक्षे सुख भवत्तरन्निति ६७ अथसिद्धानां चित्र स्वरूपमाह | लोएगदेवे ते सव्वे नाणदंसण सन्निया संसार पार निच्छिन्ना सिद्धि वर गइं गया ६८] ते सिद्धाः

ईया अपज्जवसिथाविद्य ६६ ॥ अरुविणो जीवधरा नाण दंसणसन्निया । अउलं सुह संपत्ता उवमा जस्य नत्थिओ ६७ ॥
लोएग देसे तेसव्वे नाणदंसण सन्निया । संसार पार निच्छिन्ना सिद्धि वर गइं गया ६८ ॥ संसारत्याउ जे जीवा दुवि

विवरपूरा तेणे केवलज्ञान केवल दर्शन सज्ञावत एतत्ते ज्ञानदर्शनना उपजोग सहीत अतुलं धणं सुख पायाहे जिहनी सुखनीओपमानयी अनंत सुखके ६६ लोक चउदराजाना एक देश विभागने विखे ते सर्वसिद्धके केवलज्ञान केवलदर्शन उपयोग सहित गत थार संसारनी पारनी वासो जीणे सिद्धे सिद्धरूप उत्तम गति गया एतले सीद्ध गया ६७ हिवे संसारी जीव कहेले संसार संबंधिया जे जीव विहुं प्रकारे ते कक्षा तीर्थं करे ते केहा एकल सबीजा थावर ते वैलर थावरमाहि थावरलिहुं प्रकारे ६८ ते तीन केहा पृथिवी जीव अपकार्दया जीव तथा बलिबनस्पति जीव ए थावर

तदानीं क्रोधपियाच तत्रायात् दारक प्रत्याह षड् मितान् सुसान् साम्मत भक्षयामि यदि तथैषां रक्षणे शक्ति रस्ति तदा युवं कुर्व दासक्येणीत् बाढ ततो मन्त्रयुव यथा १ दारककम्त पियाच इन्तु नयतीति तथा २ तस्य क्रोधी वद्धंते तथा च दारकस्य न यद्धलाभी जात पराभूतएवदारक सुम द्वितीये प्रहरे मत्वकि रयित क्रोधपियाचिन तथैव जित तृतीये प्रहरे बलदेव सोपि तथैवजित तुर्ये प्रहरे उत्थित क्षण क्रोधपियाच स्तथैव प्रीत्त वान् जग्यग्राह मां जित्वा मत्सहायान् भक्षय ततो यथा क्रोध पियाचो युध्यति तथा २ क्षणोऽहो बलवान् एयमन्न इति सुथति यथा क्षणस्त्रीपयान् भवति तथा २ पियाच क्षीयति एव क्षणेन पियाच सर्वथाक्षीण स्वस्त्रमध्येचित्त प्रभाते तां श्रगान् दृष्ट्वा क्षणेनीत् कि मितद्भवता जातन्ते सर्वेऽपि राक्षिष्ठत्तान्त प्राहुः क्षणेन स्वस्त्रमध्यादाक्षय दर्शित एवं क्षणवदयस्त्रीपवान् भवति सो लाभपरीपह जेतु शक्नोति अथ द्वितीय लोकोत्तर ढटण कुमार कथानक कथ्यते कस्मि यिद्रामे कोपिक्लेश सरोरो कुटम्बी वसति प्रन्येपि बहवस्तत्र कुटुम्बिनी वसन्ति वारकेण ते गजवेष्टि कुर्वन्ति राजसत्क पशु शतहत्तानि वाहयन्ति एकदा तस्य क्षयशरीरेण पशुशतहत्तयाहन वारक समायात तेन च वाहिता हृषभा भक्षयानवेलाया मऽप्येकोऽधिक याया दापित स्तदान्तराय कर्मबह तो मृत्वाऽसौ बहुकाल मितस्तत ससारे परिस्त्रस्य कस्मि चिद्रये कृतसुकृतवशेन क्षारिकाया क्षणवासुदेवस्य पुत्र त्वेन समुत्पन्न ढटणपेति तस्य नाम प्रतिष्ठित स ढटणकुमार श्रीनिमिपार्ष्णे अन्यदा प्रव्रजित लाभान्तरायवसाम्महत्यां मपि क्षारिकायां हिडमानी न किञ्चिद्वादि लभते यदि कदाचिन्नभते तदा सर्वथाऽसारमेव ततस्तेन स्वामी शुष्ठ स्वामिना तु सकल पूर्वभवहत्तान्त स्तस्य कथित तेन चाऽय मऽभिगृह्णी गृह्णीत परलाभी मया न पाद्य अन्यदा वासुदेवेन स्वामिन इति शुष्ठ भगवन् एतावत्सु यमणसहस्रेषु को दुष्करकारक स्वामिनाढ षट्पथिरेव दुष्करकारक इति उक्त क्षणेनीत् स इदानीं कास्ति स्वामी प्राह त्व नगर प्रविशत त द्रक्ष्यसि इष्ट क्षण श्रीनिमिजिन प्रणस्य उत्थित

पृथो तथा ५ तथा पाण्ड, पाण्ड वणा रपत् शुभ्रा ६ इह च पाण्डु प्रहृण कृष्णादि वर्णाना अपि स्वस्थानभेदान्तर सभावशूचक सामसो भेदस्तुपनका
 यत्सिकारूप पनकोहि अयन्तशूक्तलेन आकाशे पृथिलेन आरूढ तस्मान्नेदलेन गृहीत इत्यनेन नत्वापृथ्वी समाविधीक्षा अथ खरादि पृथ्वीपट
 त्ति ग्रहिधा तीर्थ करेव्याख्याता ७३ तान् भेदानाह [पृथ्वीयसकरावाल्याय उवलेसिलायतीर्थोश्च अगतत्पयत वसोसगत्पृथ्वीयवयवश्च ७४]
 [हरियालेहिशुलुए मणिसिलासोसगजणपवानि अ भपहलभवालयवायरकाए भणियिहाथा ७५][गोमिज्जणयस्यगिअद्दे फलिरियलोहियकोयमरगयमसा
 गस्तेभुयमीवगदन्तोलेय ७६][चल्दणगे क्यहसगभ्भ पुलएसोगन्धि एयवोपत्वे चदपहवेरालिए जलकन्ते सरकतीय ७७] पृथ्वीशुवाल्लिभ्नयोन्वा १ शक
 रामरुष्यादि रूपाककैरमयो २ बालुका च स्यलो भूमौ प्रसिद्धा २ उपलोगण्डगेलपापाण खण्डादि रूपा ४ अिला हहत्पापाणमयो ५ लोणोसेरतिं
 लवणोये लवण च उपपत्तल वणोपे लवण समुद्रादिभ्य उत्पन्न तदपि पृथ्वीरूपमेव ६ कपाकपरमयो ७ अयोलीण ८ नपुककस्तीर ९ ताम्न प्रसिद्ध १
 गोसक ११ रूप १२ सुवष् १३ अययन पुकत्तताम्बश्च गोसकश्च रूपश्च सुवष् च अयभ्य पुकताम्नसोसकरूप उयर्थाणि एतेपि पृथ्वीभेदादित्यर्थं च

नीलाय खहिराय हालिदा सुक्किला तथा । पडु पणग मट्टिया खरा क्खतीसई विहा ७३ । पृथ्वीय सकराय बालुयाय
 उवले सिलाय लोणोसे । अय तय तउय सीसग रूप सुवन्नैय वदरेय ७४ । हरियाले रिगलुए मणोसिला सीसग

पापाण मोटो ६ सोसचारीमोटो ७ तव श्रो ८ तार्वा ९ लोह १ सीसो ११ रूपो १२ सोनो १३ यक्कशी राजाति १४ ७३ हरियास १५ हिगान्ना १६
 मेषसिल १७ सोसग जसद विणेप १८ सुरमो १९ प्रवाल २० आभूया २१ आभूयानो सुष् २२ एयादर पृथिवोकाय भणिनाम कहीर जेतला

४० टीका
५०३६
१०४०

सर्व

भाषा

तद्वा पञ्जत्तम पञ्जत्ता एव भेद दुहा पुणो ७१] पृथिवी जीवास्तु द्विविधा उत्ताः शूफाद्यर्गं चक्षुर गोचरा केवल ज्ञानगम्या तथा पुन
पृष्ठी जीवा 'बादरा' ते च पर्यासा अपर्यासाश्च आहार शरीरेन्द्रियोच्छ्वास निःश्वासरूपाभिः पर्यासिभिश्च तद्युभिः शक्तिभिर्युक्ता पर्यासा स्थाया
तेभ्यो विपरीता अपर्यासाः शूफाः पृष्ठीजीवाः पर्यासाः अपर्यासा 'बादरा' पृष्ठीजीवाः पर्यासा अपर्यासा एवं द्विविधा ७१ (वायरा जीव
पञ्जत्ता दुविहा ते वियाहिया सन्हा खराय बोधव्वा सन्हा सत्त विहातहिं ७२) तत्र पुनरेषां उत्तरभेदानाह जीवादराः पृष्ठीजीवाः पर्यासा
उत्तास्ते द्विविधा व्याख्याता एके बादराः पृष्ठीजीवाः पर्यासा. अक्षरूपेण च पुनरेके बादराः पृष्ठीजीवाः पर्यासा कठिनाश्च बोध्याः तत्र
श्लक्ष्णखरयोः पृष्ठी जीवयोः श्लक्ष्णाः पृष्ठीजीवाः सप्तविधाः ज्ञातव्याः ७२ सप्तविधत्वमेवाह (किन्हा नीलाय रुहिराय ह्यालिहा सुकिला तद्वा पण्डु
पणग भद्रियाखरा कृत्तिसर्द विहा ७३) कृष्णाः श्यामवर्णाः १ नीला नीलवर्णा पृथिवी २ रुधिरा रक्तवर्णा पृष्ठी ३ ह्यारिद्रा पीतवर्णा ४ शुक्ला धवलवर्णा

थावरा तिविहा तेसिं भेद सुणेह भे ७०॥ दुविहा पुटवि जीवा सुहुमा वायरा तद्वा । पञ्जत्त मपञ्जत्ता एव भेद दुहा

पुणो ७१ । वायरा जे उ पञ्जत्ता दुविहा ते वियाहिया । सन्हा खराय बोधव्वा सन्हा सत्त विहा तहिं ७२ । किन्हा

जा अपर्यासा एमपविहुं प्रकारे तथावली ७० वादर जे वली पर्यासा विहुं प्रकारे ते कहा तीर्थ करे एक सहालाजीजा कठीर जाणिया तिव्हां
विहुं माहि सन्हा सुहाला सात प्रकार ७१ काला १ नीला २ राताते जाणवा ३ पीला ४ धवला ५ तथावली धोली पांडू ६ सस्त्र आकाशिं जड
ते पण गमाटो एव भेद ७ खरा कठिन पृथिवोना कृत्तिस प्रकारे ७२ पृथिवीकाली १ मरडीयाका करा २ बेलु ३ पाषाण खंड ४ लवण ५ सिला

[एष खर पुटवीए भेयाक तोस माहिया एगविह मननाएता सुहुमातत्य वियाहिया ७८] एते खर पृथिव्यादि भेदा पटत्रि शक्यमाख्यातास्तीर्थकरैरुक्ता पृथ्वी भेदात् पृथ्वीस्वाजीवा अपि भिन्नाभिन्ना तदा शूक्ष्मवाटर पृथ्वी जीवेषु सूक्ष्म पृथ्वीजीवा एकविधा अनानालास्तीर्थकरैर्ब्याख्याता नविद्यते नानालव येषां ते अनानाला अवहुभिदा उक्ता इत्यर्थं कीर्थं पूर्वं शूक्ष्मवाटरीमुख्यभेदी द्वी पृथ्वीकायजीवानामुक्तौ एतेहि शूक्ष्माना अवान्तरभेदाज्ञेया वाटराणां अवान्तरभेदाउक्ता मुख्यवत्या तु एकएव शूक्ष्मीवाटरी वा एकएवभेदीस्तिनानालव नास्तीत्यर्थं अवतान् पृथ्वी जीवान् क्षेपितश्राह (सुहुमासब्बलियमि लीय देसेयवायरा इत्तोकालविभागान्तु तेसि बुच्छस्र उच्चिह ७८) शूक्ष्माये पृथ्वीकायजीवास्ते सर्वास्मिन् चतुर्दशरज्ज्वालके लोके सन्ति अभिव्याप्यस्थिता सन्ति वाटरा पृथ्वीकायजीवालोकदेशे तिष्ठन्ति लोकस्यदेशीयिभागोलोकदेशस्त्वस्मिन् तिष्ठन्ति वाटराहिकचिम् कस्मिन् चिम् प्रदेशेकदाचिक्क भयन्ति कदाचिक्कस्मिन् चिम्स्थाने सम्भवन्ति इत्तोइति इत क्षेपितरूपणानन्तर तेषां पृथ्वीकायजीवानां चतुर्विध कालविभाग कालती भेद वच्च्ये ७८ [सन्नाइ

जलकते सूक्कतेय ७७॥ एष खर पुटवीए भेया कतीस माहिया । एगविह मननाएता सुहुमा तत्य वियाहिया ७८॥

सुहुमा सब्बलोग मि लीग देसिय वायरा । इत्तो काल विभाग तु तेसि बोच्छ चउच्चिह ७८ ॥ सतइ पप्पणाईया

नाहि कथा तीर्थ करे ७७ सूक्ष्म पृथ्वीयोका जीव सबलोक च वदेराजने विखे रथाके लोकना एकदेशने यिसे वाटर शुषयी जीव एतलानतरकालनी यिभाग भेद तहंनो कहिस्यु सादि १ पर्यवसित २ अनदि ३ अपर्यवसित ४ भेद ७८ प्रयाह मार्ग जीएए तियारे सूक्ष्म वाटर शुषि अनदि हे धनेइ अपयवसित केइदी ते पृथिवि जीवने भयस्थिति भयरहिपो काया धितिकार रहिवी ते आयी आदिहे धने सपर्यवसित नातपुण नियो ७८

पुनर्वज्र हीरकं १४ चतुर्दशभेदा ७४ हरिताल १५ हिङ्गु १६ ६ मर्नसिला १७ प्रसिद्धा सीसकीधातु विशेषो जसद्वति लोके १८ अञ्जनं सुरभकं १९ प्रवालं विद्रुमं २० अश्वपटलं भीडलद्वति प्रसिद्धः २१ अश्ववालुका अश्वपटलमिश्रावालुका अश्ववालुका २२ वादरकाये वादर पृथ्वीकायेऽभीभेदा उक्ताः अथ मल्लभिधाना अपि पृथिवी अस्ति तस्मान्मल्लभिधानानिमण्डानां नामान्युच्यते मणिभेदा अपि पृथ्वीभेदा एकेत्यर्थः ७५ कार्णितानि मणिनामानि गोजयकीगीभिधमणिः १३ च पुनरुचकोरुचकनामामणिः १४ अङ्गरत्नं १५ स्फटिकरत्नं १६ लोहिताल्योमणिः १७ भरकातमणिः १८ मसारगज्जथ १९ भुजगमी च कीमणिः ३० च पुनरिन्द्रनीलरत्नं ३१ ७३ चन्दनी ३१ गैरिकनामा मणिः ३३ हंसगर्भः ३४ पुलक ३५ पुनः सौगधिकी मणिर्वीथः ३६ चन्द्रप्रभ ३७ वैडूर्यमणिः ३८ जलकालीमणिः ३९ सूर्यकालीमणिः ४० ७७ अत्र एतासुगाथासुखरपृथिव्याः षड्भितिशेदेदा उक्ताः गणनायां तु चत्वारिंशद्भेदा सञ्जातास्तत्कथं ततोत्तरं अत्र हि रत्नानां केचिद्भेदाः केषुचिद्रत्नभेदेषु अन्तर्भवन्ति तस्मान्नातकथिहीतरागवचनेषु दीषावकाशः ७७

सल

भाषा

जण प्वालले । अश्वपडलभ्र वालुय वायरकाए मणिविहाणा ७५ ॥ गोमिऊएय कयने अंके फलिहेय लोहिदयवहेय ।
मरगय मसारगज्जे भुयभोगग इन्दनीलेय ७६ ॥ चंदणा गेरुय हंसगर्भे पुलएय सोगंधिएय बोधव्वे । चंदणह विसुलिए

सर्व ७४ गोमिथरत्न २३ रुचकरत्न २४ अंकरत्न २५ पीठकरत्न २६ लोहितालरत्न २७ मरकातरत्न २८ मसारगज्जरत्न २९ भूजगमीचकरत्न ३० इन्द्रनीलरत्न ३१ ७५ चंदनरत्न ३२ गैरकरत्न ३३ हंसगगर्भरत्न ३४ पुलकरत्न ३५ सौगंधीकरत्न जाणवी ३६ चंद्रप्रभरत्न ३७ वैडूर्यरत्न ३८ जलकांत् रत्न ३९ सूर्यकांति रत्न ४० ७६ ए सर्वखर पृथ्वीनाभेद क्लीस कथा तीर्थं करे एके प्रकारे परं षणे प्रकारे नद्दी सूक्ष्म पृथिवीना जीवते सूक्ष्म वादर

उत्कृष्ट असख्य कालुयाधत्तिटति जघन्य तु अन्तर्मुहूर्त्तं तिटति इति भाव इत्य द्विविधाया अपि स्थिति रा॥६ सपर्यवसितत्वमुक्त्वा अथ कालस्थान्त
र्गत एव कालातरमाह (अथान्तकाल मुक्त्वा अन्तीमुहुत जहन्निय विजटमिसएकाए मुटवीजीवाण अन्तर ८२) पृथ्वीजीवाना स्वकीयेकायेविजट मि
इति त्यक्ते सति उत्कृष्ट अनन्त काल अन्तर भवति जघन्यक अन्तर अन्तर्मुहूर्त्तं भवति कीर्षं यदाहि पृथ्वीकायस्वीजीव पृथ्वीकायात् च्युत्वा
अपरस्मिन् काये उत्पद्येत ततयुगला पुन पृथ्वीकाये एव उत्पद्येत तदाकियदन्तर भवति उत्कृष्ट अनन्तकाल जघन्य अन्तर्मुहूर्त्तं यदा पथ्वीजीवस्य
पृथ्वीकायात् च्युतिर्भूत्वापनस्यति काये उत्पत्ति स्यात्तदा अनन्तकालस्थान्तर जायते वनस्यति कायस्य जीवस्य अनन्तकार्त्तित्वात् जघन्य अन्तर
अन्तर्मुहूर्त्तं भवति ८२ एतान्येव भावत आह [एषमियवश्रीशेव गन्धश्रीरसफासश्री सखाणादेसश्रीवायि रिहाणाइरुः त्वासी ८३] एतेषा पृथ्वीजीवाणा
यथं तीगन्यतीरसत स्यार्त्तं सस्थानतस्यापि सहश्रीविधानानि भेदाभवन्ति सहश्रीयइत्युपलक्षण वणादिगारतस्यस्य बहुभेदत्वेन असत्याभिदत्वात्

चश्रो ८२ ॥ अणतकाल मुक्त्वा अतोमुहुत जहन्नय । विजटमि सए काए मुटवि जीवाण मतर ८३ ॥ एषसि वन्नश्री
शेव गधश्री रस फासश्री । सटाणा देसश्रीवायि विहाणाइ सहस्यसी ८४ ॥ ट्विविहा नाउ जीवाश्री मुटभा वायरा

गध शक्री फरसयणो रसयक्री सस्थानना आदेगधक्री यणिए सस्थानना भेद भेदातरयक्री विधानभेद सहस्यगभि हुइ स स्थाता अस स्थात अनत
पणे यद्यपि वर्षे ५ गध २ रस ५ फरस ८ छि तथापि तरतम योशे घणभेदहुइ ८३ यिहु प्रकार अयकायनाजीव सूक्ष्म अने वादर अपकाय तिम
वादर परासा अपयासा रमए विहु प्रकार वलो ८४ वादर अपकाय जे परासा पाचे प्रकारे कछा तीर्षं करि से पनी पाणी तथा श्रीसनी समुद्रनी छाभ

पपुषाईया अपज्जवसियाविय ठिइं पडुच्चसाईयासपज्जवसियाविय ८०] सत्ततिं प्राप्य प्रवाहमाश्रित्य एतं भूत्त्वाः वादराद्य पृथ्वीकायजीवा अनादय
आदिरहितः च पुनरपर्यवसिता अपि अन्तरहिता अपि स्थितिं प्रतीत्यभवस्थिति कायस्थिति रूपांस्थितिमाश्रित्य संसारवर्तीजीवः संसारं पृथ्वीकायां
तवर्तीसन् पृथ्वीकाये क्रियत्कालं तिष्ठति इति स्थिति विचारमाश्रित्य जीवाः सादिकाः सपर्यवसिताद्यपि वर्तन्ते ८० [वावीस सहस्राद् वासाणुको
सियाभवे आठठिई पृथ्वीण अन्तोमुहत्तं जहन्निया ८१] [असंखकालमुकोसं अतोमुहत्तं जहन्निया कायठिई पृथ्वीयां त काय तु अमुच्चओ ८२]
पृथ्वीनां पृथ्वीकाय जीवानां वर्षाणा द्वाविंशति सहस्राणि उत्क्रष्टा आयु स्थितिर्भवेत् जघन्यिका च अन्तर्मुहत्तं स्थितिर्भवेत् ८२ भवस्थिति
उक्ताकायस्थिति वदति असंखेति पृथ्वीनां इति पृथ्वीकायजीवानां पृथ्वीकायं अमुच्चतां पृथ्वीकायोस्थिति संसारचेद्वर्तति तर्हि उत्क्रष्टा असंखकालं
स्थितिर्भवेत् जघन्यका च अन्तर्मुहत्तं स्थितिर्भवेत् कोषं यदि पृथ्वीकायस्योजीव पृथ्वीकायतद्युक्तायुनः पुनर्निरन्तरं पृथ्वीकाये एव उत्पद्यते तदा

अपज्जवसियाविय । ठिईपडुच्च साईया सपज्जवसियाविय ८० ॥ वावीस सहस्राद् वासाणुकोसिया भवे । आठ ठिई
पृथ्वीयां अंतोमुहत्तं जहन्निया ८१ ॥ असंख काल मुकोस अंतोमुहत्तं जहन्नियं । कायठिई पृथ्वीयां तंकायंतु अमुं

वावीस हजार वरिस उत्क्रष्टी इई आज्ञाखानीयिति यकी पृथ्वीनी अंतर्मुहत्तंनी जघन्यस्थिति ८० असख्याता कालनी अंतरपट्टे ती उत्क्रष्टी अंत
र्मुहत्तं जघन्य अंतर कायस्थिति पृथ्वीवी पृथ्वीनी पृथिविमाह्रिम तेहनी कायने मुंके वार वार तेहने ते माही ररि ८१ अनताकालनी अंतर उत्
क्रष्टी अंतर्मुहत्तं जघन्य अंतरे पोताने पृथिवीने विजडमि क्खंडि यके पृथिवीना जीवने पुत्रिवी पणे अंतर पडतु ८२ एत् पृथिवी कायनावर्षं यकी

स्थिति कायस्थिति चाश्रित्यसादिकास्तथा सपर्यवसिता अप्रमानसहिता अपि यत्तन्त्रे ८८ (सत्तैव सदस्यार यासाणु क्रोसियाभवे आउठिद आऊण
 अन्तोमुहुत्त जडविय ८८) अपा अप्काय जीवानां सतैव सदश्याणि वर्षाणामुत्कृष्टा आयुष स्थितिर्भवेत् जडन्यत अन्तर्मुहुत्तं भवेत् ८८ (असखकाल
 मुक्तीस अन्तोमुहुत्त जडशियाकाय ठिद आऊण त काय तु अमुच्चयो ८०) अपा अप्काय जीवाना त स्वकाय अर्थात् अपकाय अमुच्चता उत्कृष्टाकाय
 स्थिति असखकाल भवति जघनिनाका कायस्थितिरन्तर्मुहुत्तं भवति ८० [अशन्तकाल मुक्तीस अन्तोमुहुत्त जडवय विजटश्चि सए काए आउजीवाण
 अन्तर ८१] अप्जीवाना स्वकीयेकायेत्येति याति अपरस्मिन् काये उत्पद्युन स्वकीयेकाये उत्पत्तिस्यात्तदा उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल भवति जघनप्रक
 अन्तर अन्तर्मुहुत्तं भवति यनस्थिति कारेजोवोऽनन्तकालन्तिटति तदा अनन्तकाल अन्तर भवति इति भाव ८३ [एएसिवचयोच्चैव न न्यश्चोरसफासओ

सतद् पप्रणार्द्रया अप्जवसियाविय । ठिदपडुच्च सार्द्रया सपजवसियाविय ८८॥ सत्तैव सदस्यार यासाणु क्रोसिया
 भवे । आउ ठिद्रे आऊण अन्तोमुहुत्त जडन्निया ८८ । असखकाल मुक्तीस अन्तोमुहुत्त जडन्निय । कायठिद्रे आऊण त
 कायतु अमु चचो ८० । अशतकाल मुक्तीस अन्तोमुहुत्त जडन्नयं । विजट मि सए काए आउ जीवाण अन्तर ८१ । एए

आदिहे अने सपर्यवसित सात पुणनिवे ८७ सात सदस्य वरसनी उत्कृष्टी इद आऊणानी स्थिति अप्काय जीवनी अन्तर्मुहुत्तं जघन्ये ८८ असख्यातु
 कालउत्कृष्टे अन्तर्मुहुत्तं जडन्य पणे कायस्थिति अप्कायनी तंइनी ते माहिती ते काया अण्णोच्चतु ८८ अनतुकाल उत्कृष्टी अन्तर्मुहुत्तं जघन्ये
 पोतानीकाया काया यकी अप्काय जीवने एतलो आन्तरो इद ८० ए अपकाय जीव पर्यवकी न ययकी रसयकी क्ररसयकी स स्या नानागेदयकी

वर्णादीनां भावरूपत्वात् ८३ अथ अप्कायभेदानाह [द्विविधा आठ जीवाऽऽ सुहुमा वायरा तथा पञ्जत्त मपञ्जत्ता एवमेए दुहापुणो ८४] [वायरा जी
 उपञ्जत्ता पञ्चहानि पकित्तिया सुद्धोदएय उस्सेय हरितणू महिया हिमे ८५] (एगविह मनाणत्ता सुहुमा तत्थ वियाहिया सुहुमा सव्वलोगिनि लीयदेसेय
 वायरा ८६) तित्ठुणां गाथानां अर्थं अप्जीवासु द्विविधा भूत्ता स्तथा वादरा अपि पर्यासा अपर्यासाच्चद्विविधा पुनर्वत्तं इति शेषः ८४ अथ पुनर्वादि
 रायेपर्यासा अप्जीवास्ते पञ्चधा प्रकीर्त्तिताः सुद्धोदकं भेषसमुद्रादेर्जल अवश्याय शरदादिषु ऋतुषु प्राभातिक भूत्तादर्षारूप हरितकिण्ठ पृथ्वीभवत्तुणा
 यवित्तुः ३ महिकाजलं गर्भमसिषु भूत्ता धूसरूपाः हिमे इति हिमजलं खन्धारदेशादौ प्रसिद्धं ८६ तत्र भूत्ता अप्कायजीवा एकविधा अनानात्वास्तीर्थ
 करैर्ब्याख्याताः तत्र भूत्ता अप्काय जीवाः सर्वसिन् चतुर्दश रज्जात्मलोके वर्तन्ते वादरा अप्काय जीवाऽऽ कस्यै कदेशेवर्तन्ते ८७ (सन्तदं पप्पणार्इया
 अप्ज्जवसियाविय ठिइं पडुच्चसार्इया सपज्जव सियाविय ८८) सन्ततिं प्रवाहमार्गमाश्रित्य अप्काय जीवा अनदिक्का पुनरपर्यवसिता अपि स्थितिं भव

तथा । पञ्जत्त मपञ्जत्ता एवमेए दुहापुणो ८५ । वायरा जीउपञ्जत्ता पंचहा ते पकित्तिया । सुद्धोदएय उस्सेय हरतणु
 महिया हिमे ८६ ॥ एगविह मनाणत्ता सुहुमा तत्थ वियाहिया । सुहुमा सव्वलोगिनि लीगदेसेय वायरा ८७ ॥

ऊपरि पाणीयु अरि ४ हीम जमइ ८५ एके प्रकारे पणि नाना प्रकारे नही सूत्त अप्कायना जीव तीहां कहा तीर्थं करे सूत्त अप्
 कायना जीव सर्वलोका चौद राज व्यापी रहाके लोकना एकदेस सरीवरादिकने बिसे वादर अप्कायके ८६ प्रवाह मार्ग जोई तिवारिए
 सुत्त वादर पुथिवी अनदिक्के अने अपर्यवसित केहडी ते पुथिवी जीवनी भव स्थिति भवे रहिवो काय थिति काया रहिवो ते आश्री

तेपकित्तिया रक्तागुच्छाय गुप्ताय लया वक्त्रोत्थातथा ८५) तत्र साधारणशरीरवनस्पति प्रत्येक शरीरवनस्पत्योर्मध्ये प्रत्यकवनस्पति जीवासु अर्नकधा प्रकीर्तितास्त्रैवेदधत्ते दृष्टा १ सहकारादय गुच्छा हन्ताककण्टकारिकाया २ गुल्मा नवमालती प्रमुखा ३ लतायम्भकाया ४ वल्य कूपाच्छाया ५ तयानुषा कुमाया ६ ८५ (वलयापव्ययाकुहणाजलरहाओसहीतहाहिरिकायबोधव्यापत्तियादतिआहिआ ८६) वलयानालिकर कदलाया दृष्टतेषां प्रासा न्तराभावेनलतारूपत्व उक्त ७ पर्वजारक्ष्णाया ८ कुहना भूमि स्फोटया ९ जलरहा कमलाया १० तथा जपधय शालि प्रमुखा ११ च पुनहंरित कायायतयडु लोयकाया १२ बोधव्या द्रति अमुनाप्रकारेण प्रत्येकाप्रत्येकवनस्पति जीवा आख्याता ८६ (साधारण शरीराओषिगहातेपकित्तिया आलुएमुल पचेय सिद्धवैशतहेवय ८७) [हिरिलोसिरिलोसिस्सरिलिजायर्दकेय कन्दलोपलण्डुलसणकन्देय कन्दलीयकुडुव्य ८८] (लोहिणीश्रयलीङ्गय तुहणा यतहेवय कन्देय वज्रकन्दे कन्दे सूरणएतथा ८८] [अस्सकयोय बोधव्या सोहकवोतहेवय सुसण्डोयहलिदियेगहा एयमाइओ १००] अथ च तस्मिन् गायाभि साधारणवनस्पतीना नामान्याह ये तु साधारण शरीरा साधारण पतस्सति जीवा अनन्तकायवनस्पति जीवास्त्रैपि अर्नकधा अर्नक

वलया पव्यया कुहणा जलरहा ओसहीतणा । हरीयकायाय बोधव्या पत्तियादति आहिया ८६ । साधारण शरीराओ णेगहा तेपकित्तिया । आलुए मुलए चेव सिगवेरे तहेवय ८७ । हिरिली सिरिली सिस्सरिली जावर्दं केय कदली ।

रथ शरीरके जेहने ते अर्नकप्रकारे कथा आलूकदजातो १ मूलम २ सिगवेर आर्दा तिमज ३ ८६ हिरिलोकद ४ सिस्सरिलोकद ५ सिस्सरो कद ६ जावश्यकेय कद जाति ७ पलडुकद ८ लसणकद ९ कदलीय कुडुव्यए कद १० रोहिणीकद ११ रुयली कद १२ रुय कद १३

सख्याणादेसञ्जीवावि विहाणाइसहस्रासां८२] एतेषा अप्कायजीवाना वयं तीगन्धतः रसत स्पर्शत० सस्थानादेश्यतद्यापि सस्थाननामतद्यापि सहश्रसोबह
 वीभेदाभवन्ति ८२ अथ वनस्पति जीवानाह [दुविहावणस्यै जीवासुसुभावावरातहा पञ्जात्तमपञ्जात्ता एवमेव ८२।१५ यो ८३] वनस्पति जीवाद्विविधा०
 शूल्यास्तथा वादराः ते शूल्या वादराद्यापि पर्याप्ता अपर्याप्ताय द्विविधा आख्याताः ८३ [वायराजैउ पञ्जात्ता दुविहा ते विद्याहिद्या साहारण सरीराय
 पत्तेयगाय तहेवय ८४] येवादरावनस्पति जीवास्तेपि द्विविधाख्यात्याताः साधारण्य गरीराय युन प्रत्येका० वनस्पति जीवाः ८४ (पत्तेय सरीराञ्जोर्णगाहा
 सिं वन्नञ्जो चैव गंधञ्जो रस फासञ्जो । संठाणा देसञ्जोवावि विहाणाइ० सहस्रासां८२ । दुविहा वणस्यै जीवा सुहुमा
 वायरा तथा । पञ्जात्त मपञ्जात्ता एवमेव दुहापुर्णो ८३ । वायरा जैउ पञ्जात्ता दुविहा ते विद्याहिद्या साहारण्य सरी
 राय पत्तेयगाय तहेवय ८४ । पत्तेय सरीराञ्जो णगाहा ते पक्वितिया । सक्त्वा शुक्त्वाय शुक्त्वाय लयावली तणगतहा८५ ।

विधानभेद हजारि गमिहोइ ८१ विहुंप्रकारे वनस्पतीना जीव सस्त्र वादर तथावर्त्ता एक पर्याप्ता वोजा अपर्याप्ता इम त्रिभुंभेदे पुत्रे वली ८२ वादर
 वनस्पतिकायते पर्याप्ता विहुभेदे ते कक्षा तीर्षा करे अनता जीवते साधारण सापान्य गरीर ते अनतकाय प्रत्येक ज्ञया गरीर इरे ना ते प्रत्येक
 तिमज ८३ ते माहि प्रत्येक गरीर वनस्पतिना जीवहे ते माहि प्रत्येक गरीर वनस्पतीना रज्य धाम्नादि १ इ ताक शुक्त्वाय गरीर आदि २ शुक्ल वन
 मालती आदि तथा चांपा ४ विलिवुं सडी प्ररुय तण भीभुभादि तथावली ५ ८४ वनयनालिर्नरी आदि ७ पर्यभस्यर्त्ता वगादि ८ कुंरणस्यै
 फोडादि८ कमलादिक जलरह १० औपधोसाली मसुर ११ तंटेत्तियादि परीकायजालपी प्रत्येक वनस्पति करो तीर्षा करे ८५ अनता जीवते साधा

पुरद्वारि प्रविशन्तं साधुं दृष्टवान् हस्तिस्कन्धा दुत्तीर्य द्वाण स्तं ववन्देतेनवन्धमानोऽयं साधुरेकीनेभ्येन दृष्टः चिन्तितं च तेन अहो एष महात्मा कृष्णेन
 बन्धते एव चिन्तयत एव तस्य गृहे दृष्टगर्षिः प्रविष्ट स्तेन मीदकैः प्रतिलाभितः ततः स्वामिसमीपे गत्वा पृच्छति मम लाभान्तराय चीणः स्वा
 मिना उक्तं एष वासुदेवलाभः मम परलाभी न कल्पते इत्युक्त्वा नगरा बहिर्गत्वा उचितस्थिच्छले मीदकान् विधिना परिष्ठापयन् ग्रभधानारोहण
 केवलीजातः एव मन्यैरपि अलाभपरीपहः सोढव्यः अलाभात् अनिष्टाहारलाभात् प्रन्त्याहार भोजनात् शरीरे रोगा उत्पद्यन्ते अतो
 रोगपरीपहीपि सोढव्य स्वतो रोगपरीसहमाह नच्चा उप्पद्रयं दुक्खं वेयणाए दुहृष्टिए अदीणी थावए पन्नं पुठ्ठी तत्थ हियासए ३२ ति गच्छं नाभि
 नन्देज्जा सच्चिक्खेत्तगविसए एयं खुतस्स सामन्नञ्जं न कुज्जा न कारवे ३२ वेदनया दुक्खार्त्तितो मुनिः प्रदीन सन् प्रदां स्थापयेत् बुद्धिं स्थिरां कुर्यात्

नच्चा उप्पद्रयं दुक्खं वेयणाए दुहृष्टिए अदीणी थावए पन्नं पुठ्ठी तत्थ हियासए ॥३१॥ तिगिच्छं नाभिनंदेज्जा संचिक्खे
 त्त गविसए एयं खुतस्स सामणां जन्न कुज्जा नकारवे ॥३२॥ अचेलगस्स लूहस्स संजयस्स तवस्सिणे तणेसु सुयमाणस्स
 होज्जा गाय विराहणा ॥३३॥ आयवस्स निवाएणं अउला हवइवेयणा । एवंच्चा नसेवंति तंतुजंतण तज्जिया ॥३४॥

कुमार अलाभ परिसहसह्री तिज वीजि सहिवी इति प्रलाभ ऊपर दृष्टांत १५ ति० रोगटालिवाने अर्थेना० पतुमीदे नहि स० समाधि सहित अ०
 चारित्र रूप आत्मानो गवेपक ए० इणे प्रकारेखु० जेभणी त० ते रोगवत साधुने सा० चारित्रपानिवी सही जो जं० जेन पीते नहीकरे म० अनैरापां
 सैन कारवे ३२ अथ रोगपरीसह दृष्टांत मथुरानगरोड जितशत्रुराजा कालइसे नामे गणिकाने रूपे मीहे षंते ऊरमाहिरारिति हने कालवे सनामा

राय वनपतिसिद्ध वासुदेव का आ० अ० ७० ४२ मा भाषा

प्रकारः प्रकीर्तिताः तेषां च केषां चित् प्रसिद्धानां नामान्याह आलुक् आलुपिण्डालुक्काकान् १ स्तथा मूलकं प्रसिद्धं २ शृङ्गवैरकं आर्द्रकं ३ तथा वच८७ हरिलीनाप्राकदः ४ सिरिलीनामाकदः ५ सिसिरिली नामापिकान् ६ एतिकाण्डविशेषाः यावति कोपिकाण्डविशेषः ७ कान्दलीकान्दः ८ देशविशेषेमांस रूप कान्दी भवति ९ लक्षणकान्दसुप्रसिद्धः १० शुद्धवतकदलीकान्दीविशेषः ११ ९ ९ लोहिनीकान्दः १२ कृतालीकान्दः १३ कृतालीकान्दः १४ तुहककान्दः १५ लण्णकान्दः १६ वचकान्दः १७ सूरणकान्दस्तथा १८ ९ ९ अश्वकर्णिकान्दी वीधयः १९ तथैवसिद्धकर्णी २० सुसण्डोकान्दः २१ हरिद्राकान्दः २२ च एवमादिका अनिकथाः कान्दजातयो ज्ञेयाः १०० अथ साधारणलक्षणमाह (गुडसिराणं पत्तं सच्चोरंजवहोद्गनिच्छीरंजं पियपण्डु सधिंश्चान्तजीवं विद्याणाहि १ एगविवह प्रत्यावनस्तिकायजीवाः एकाविधाः अनानावाव्याख्यातास्तत्रभूक्ताः वनस्ततिजीवाः निगोदनामानः सर्वास्मिन्चतुर्दशरज्ज्वाकलीकेव्यासा सन्निवाद्स्वान्नस्ततिजीवादेशे अभिव्याप्यस्थिताः सन्ति कुलचित्प्रदेशे भवन्तीत्यर्थः १०१ (सन्तदं पपण्णद्रयाप्रपञ्जवसियावियठिदं पडुच्चसाद्रयासपञ्जवसियाविय १०२)

पलंडु लसणा कंदेय कंदलीय कुहुव्वए ९८ ॥ लोहिणी कृयथी कृयतुहगाय तहेवय । कान्देय वज्जकंदेय कंदे सूरणए

तहा ९९ ॥ अश्वकनीय वीधव्वा सीहकनी तहेवय । सुसंटीय हलिद्राय गेगहा एवमायओ १०० ॥ एगविवह मनाणत्ता

सुहुभा तव्य विद्याहिया । सुहुभा सव्वलोगंमि लीगदसेय वायरा १०१ ॥ संतदं पपण्ण णाईया अपञ्जवसियाविय ।

तुगाय कंद १४ तथावली कण्ण कंद १५ वज्ज कंद १६ सूरण कंद १७ तथावली ९८ अश्वकर्णी कंद १८ जाणिवी सोह कर्णी कंद १९ तिमवली सुसंटी कंद २० हलदकंद २१ ए आदीदेई अनिकप्रकारे अनतकायना जीव ९९ एकक प्रकार परंषणे प्रकारे नही सूक्का तीहां कक्षा तीर्थ करे सूक्का

सन्तति प्राप्य एतंवनस्सति जीवा अनादय पुनरपर्यवसित्ता सन्ति कायस्थिति च प्रतीत्यथात्रित्यसादिका सपर्यवसिताथ सन्ति इत्यर्थ १०२
[दसचेय महस्साइ वासाणुकीस्थियाभवे वणस्साइण आउन्तु अन्तोमुहुत्त जह्वनय १ ३] वनस्सतीना प्रत्येक वनस्सति जीवाना वर्षाणां दयसहस्साणि
उत्कटा आयु स्थितिर्भवेत् जघन्यिकास्थितिय अन्तमुं हर्त्तं भवेत् साधारणाना तु जघन्यत उत्कटतथ अन्तमुं हर्त्तं एव स्थिति रस्ति तस्मात् अत्र
प्रत्ये कवनस्सति जीवाना एव स्थिति श्रेया १ ३ (अनन्तकालमुर्वास अन्तोमुहुत्त जह्वनय कायठिइपणगाण त काय तु अमु चओ १ ४] पनकाना पनकोप
लचितफूलणियनस्सति जीवाना त स्वकीय काय अमुच्चता कायस्थितिरुत्कटतीजनन्त काल जघन्यतयान्तमुं हर्त्तं कायस्थिति श्रेया कोर्धं यदाहि
पनकजीवपनकात् अमुत्वा पुनरनन्तरत्वेनपनकत्वे एव उत्पद्यते तदा एव उत्कटतीजनन्तकाल तिटति जघन्यतीतमुं हर्त्तं एवतितटतीति भाव पनकाना
थ इहसाभानेनपनस्सति जीवात् निर्गोदत्वेन उत्कटतीजनन्त उत्पते विशेयापेक्षयाहि प्रत्ये कवनस्सतीना तथा निर्गोदाना वादराणा अस्याणा या
उसल्येयकालापथ अयस्सिति उत्कट च भगवत्या पत्तोयपरोरवाययवणस्साइकाइयाणभन्ते केवतिय कायठितोपषत्ता गायभा जह्वनेण अन्तोमुहुत्त

ठिइपडच्च साईया सपञ्जवसियाविय १०२ ॥ दस चेव सहस्साइ वासाणु कीसिया भवे । वणस्सईण आउतु यती
मुहुत्त जह्वन्निया १०३ ॥ अथतकाल मुकोसा अतोमुहुत्त जह्वन्निया । कायठिई पणगाण तकायतु अमु चओ १०४ ॥

जीव वोदराजभाहिसामे लोकर्ने एकदेशे वादर वनस्सती जीव १ सतति प्रधाहे अपयवसित अनतपच्च जिणे सदाहृत्तेज यिति आयी आदि
सहित अने सपुयवसित अतसहित १ १ दयसहजारवरस उत्कटतीद्योतिइइ वनस्सतीकायती आउखो अतोमुहुत्त जह्वणाइ जघनरा १०२ अनतकाल उत्
कटा अतमुं हर्त्तं जघनराकायानोस्थिति अनतकायती ते काय अणसू कतु १ ३ दसहजारवरस असस्यातीकाल उत्कटती अतमुं हर्त्तं जघनरा पातगोकाया

उक्तीसेण सत्तरिसागरीवमकोडाकोडीश्रो निगोदिणं भन्ते निश्रोदिति कालतोकेविश्विरं शीन्ति जहन्नेण तं चैवउक्तीसेण असखेज्जां कालप्रिति १०४
 अथ कालस्यांतरमाह [असखकालमुक्तीसं अन्तीमुहुत्तं जहन्नियं विजटंमिसएकाए पणगजीवाणं अन्तर १०५] पनकाजीवाना स्वकीयेकायेत्यन्ते
 सति अपरस्मिन् पृथिव्यादिपु कायेपु उत्पद्य पुन पनकर्त्वेन उत्पद्यमानाना उत्काट असखकालं अन्तर भवति जघनं प्रन्तर अन्तमुहुत्तं भवति
 इति कालांतरं प्रतिपादितं अथ प्रकृति मुपसह्ल्य अग्ने तनं सखन्धं सूचयति [एएसिस्त्रत्रश्रोचैव गन्धश्रोसफासश्रो सख्ठाणादिसश्रोवावि विहाणाइ सह
 ससो १०६] एतेषां भूज्जवाद्दरवनस्यति जीवानां वर्णतीगन्धतीरसतः स्यशंतः सखानादिप्रतथापि सहस्रोविधानानिभवन्ति सहस्रशयः प्रदेन असख्ये या
 अन्त्याशमेदाभवन्तिरत्युच्यते १०६ [इस्त्रेएथा वरातिविहा समासेण वियाहिया इत्तोयतसेतिविहे वुच्चाभि अणुपुव्वसो १०७] इति अशुनाप्रकारेण एतेनि
 असंखकाल मुक्तीस अतीमुहुत्तं जहन्नयं । विजटंमि सए काए पणग जीवाणं अतरं १०५ ॥ एएसिं वन्नश्रो चै व गंधश्रो
 रस फासश्रो । संठाणा देसश्रोवावि विहाणाइ सहस्रसो १०६ ॥ इस्त्रेत् थावररा तिविहा समासेण वियाहिया । इत्तोउ
 तसे तिविहे वोक्काभि अणुपुव्वसो १०७ ॥ तेज वाज्य वोधव्वा श्रीरालाय तसा तहा । इस्त्रेए तसा तिविहा तेसिं

मूके जातं निगोदकाय मूके पृथिव्यादि माहिजाइ पके श्रावतो अंतरपडे १०४ वनसती सूत्र्य वादर वर्णयकी गंधयकी रसयकी फरसयकी संस्थान
 देशनाभेदयकी विधानभेदसहस्र १०५ ए पूर्वे कथा ते थावर पृथवी पाणी वनस्यति तीहभेदे सखेपे कथा तीर्धकरा एतला कखानतरत स तिर्रभेदे
 कहंशुं ए वचन भगवंतनुं १०६ तेज कायना जीव वाजकायना जीव उदार मोटा वेदियादिच स तिम ए पूठे करगा तेतस तिर्रभेदे तेहना भेदे

विधास्यावरा पृथो जलवनस्पति जीवातिटलीत्वे षष्ठीला स्यावरा समासेनव्याख्याता विस्तरतोऽभोबहयोभेदा सन्ति इतोऽनन्तरविधिषान् त्रसान् अथु
 पूर्वगोऽनुक्रमेणव्याप्ति १०६ (तेजपाकयवोषव्या ओरालावतसातहा इत्थे एतसातिविह्वतिस्त्रये सुणेहमे १०८ तेजोयोगात्ते जासि अनयस्तद्वर्ति नोजीवा
 अपि तथाक्ता एव वायव्य तथा उरालायादिति उदारा एकेन्द्रियापि चयास्थूलादीन्द्रियादयथनसारत्वे तेष सासि विधा सन्ति तथा तेजोवायुदीन्द्रिया
 दीना भेदान् मे कथयतीपूय अणुतरति अत्रयथापि तेजोवाय्वीयस्थावरनामकर्मोदये पित्त सन नासि ततस्तेजोवाय्वीर्गतिमत्वात् उदाराणा च लब्धितो
 पित्त सल अस्ति यतोद्विद्वस्यन्ति दिगादिशान्तर सकामन्तीतिचसा इति व्युत्पत्ति १८ [दुविह्वानैवजोवायसुहुमाथायरातहा पञ्जसमपञ्जता एवमेव
 दुहापुणो १०८] तेजोजीवा शून्नास्तथास्वावादास्य त पुन पर्याप्तपयामभेदेनद्विविधा सन्ति शून्ना अग्नि जीवा पर्याप्त अपर्याप्तायवर्त्तन्ते १०८
 [वायराजेवपञ्जसाधिगहातेविधाद्विधा इद्वालेमुचुरे अगणी अस्त्रिजालातहेवय ११०] ये वादरा पर्याप्ता अग्नि जीवास्ते अनेकधाव्याख्याता अङ्गार
 प्रवृत्तिरेव्यनखण्डरूप सुमरोभस्याभियतानिकणरूपोनि अग्निशोक्तेभेदात् अतिरिक्त अर्चिं प्रदीपादेर्ज्वालाखिचमूला साज्वाला उपरिस्थात् स्फुरन्ती

भे ए सुणेह मे १०८ ॥ दुविह्वानैव जीवाश्चो सुहमा वायरा तथा । पञ्जस मपञ्जता पूर्वमेव दुहा पुणो १०८ ॥ वा
 यरा जेव पञ्जता योगहा ते विधाद्विधा । इगारे सुम्सुरे अगणी अस्त्रिजाला तहेवय ११० ॥ उक्ता विज्जुय वोषव्या

साभलो मुभ्भे क्वहातोप्रत १०७ विहु प्रकारैककायनाजोय एक सूक्ष्मजीवावादर तिभपयामापीजा अपर्याप्ता इम ए विहु भेदेवली १८ वादरदृष्टता की
 अग्निना जोषपयामा अनेकप्रकारि ते कथा बलता खोरहा अग्निना कणीया धूमसहित अगनि मूलसहित ते अर्चिभाला ऊपरि भडकर बलतो तथा

दृश्यन्ते तथैवेति पद पूरणे ११० [उक्ताविज्युयोधव्याणगहा एवमाहश्चो एगविह मनाणत्ता सुहमार्त वियाहिया १११] उक्ताग्नि स्तारावदाकाशात्तन्
 योदृश्यते विद्युत्तद्धिदिनि एवं प्रादिकं अनेकधाअग्निजीवायोधव्याः तेनय सूक्ष्मा एकविधा एव अनानात्वा व्याख्याताः १११ [सुहमासब्दलोगंनि
 लोणदेशेय वायरा एत्तीकालविभागान्तु तेसि वुच्छच्च उच्चिह ११२] भूक्ष्माग्नि जीवाः सर्वस्मिन् चतुर्दशरज्वात्मलोकैसन्ति वादरा अग्निकाय जीवालोक
 देशे चतुर्दशरज्वात्मलोकस्यैकदेशेसाहर्द्वितीयद्वीपेसन्ति इति चैतविभागलक्षः इतोऽनन्तरं तेषा अग्निकायजीवानां चतुर्विध कालविभागं वक्ष्ये ११२
 [सन्तइपपणाइया अपज्जवसियावियठिइं पडुच्चसाइया सपज्ज वसियाविय ११३] अग्निकायजीवाः सन्तति प्राप्य अनादिकाः अनादिरहितास्तथा अपर्यव
 सितताः स्थितिं प्रतीत्य आशुराग्निव्यत्सादिकाः सपर्यवसिताः अपि जन्तोनापि सहितावर्त्तन्ते ११३ [तिन्नेव अहोरत्ता उक्तासेण वियाहिया आउ
 र्गगहा एवमाहश्चो । एगविह मनाणत्ता सुहुमा ते वियाहिया १११ ॥ सुहुमा सव्व लोगंभि लोग देसिय वायरा ।
 इत्तो काल विभागंतु तेसिं वीच्छं चउच्चिहं ११२ ॥ संतइं पण्ण णाईया अपज्जवसियाविय । ठिईपडुच्च साईया सप
 ज्जवसियाविय ११३ ॥ तिन्नेव अहोरत्ता उक्तासेण वियाहिया । आउ ठिई तेज्जां अंतिसुहुत्तं जहन्नयं ११४ ॥ असंख

वली १०८ तारानीपरि जपपरि जपरिथकीपडतीदेशे बीजलीजान्तावी अनेकप्रकारे एहभादर एकजभंदहे परवीर्जाभेदनहीसूक्ष्म अग्निकायनाकरा ११०
 ते सूक्ष्म अगनि सर्वलोक चौदराज व्यापी रह्याहं एकदेशेने विखे वादर एतलानतर कालनी विभाग भेद तेहनी करंस्सुं चिहं प्रकारे १११ प्रवाहि
 आग्नी अनादिके अंतपणिके धिति आग्नीसादि सहित अतपणिके ११२ च्चिणि अहोरत्तलि पूर्णप्रदर चौवीस उक्तासेण स्थिति कही तीर्थं करे आउ

ठिहरत जण भन्तामुहुत्त जहविद्या ११४) तजसा तीजो जीवाना उत्कृष्टेन तीणि अहीरातणि आयु स्थिति ध्याख्याता जघनिाका
 आयु स्थितिरन्तर्मुहूर्त्तं ज्ञेयाइत्यथ ११४ भव स्थिति मुक्ताकाय स्थिति माह (असखकाल मुक्तास अन्तोमुहुत्त जहद्वय काय ठिह
 ते जण त काय तु अमुच्यथो ११५) तेजसान्तेजस्काय जीवाना स्व काय अमुच्यता उत्कृष्ट असख्य काल स्थितिर्भवति तेजस्कायथो जीवी
 चत्वा अनन्तर तेजस्कायै एष उत्पद्यते तदा असख्य काल तेजस्कायै तिष्ठतीत्यर्थं जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त तिष्ठति ११५ अथ कालस्थान्तर
 यदिति [अणन्त काल मुक्तास अन्तो मुहुत्त जहद्वय विजटभि सए काए तेज जीवाण अन्तर ११६] तेजो जीवाना स्वकीये तेजस्कायैत्यन्ते
 सति उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल तेजस्काय जीवा स्तेजस्कायात् चत्वा अपरस्मिन् कार्ये उत्पद्य पुन स्तेजस्कायै उत्कृष्ट अनन्त काशस्थांत
 र्णोत्पद्यते जघन्य अन्तर चिद्ववति तदा अन्तर्मुहूर्त्त भवति नव समया दारभ्य किञ्चिद्दून घटिकाद्वय अन्तर्मुहूर्त्तं सुच्यते ११६ [एएसि
 यद्यथो चैव गधथो रमभासथो सठाणा देसथो वावि विहाणार सहस्रसो ११७] एतेषा अग्निकाय जीवाना यर्गुं तो गन्वतो रसत स्वर्गत सस्थाना

काल मुक्तासा अतामुहुत्त जहद्विन्या । काय ठिई तेजण त कायतु अमु चथो ११५ ॥ अणत काल मुक्तास अतोमुहुत्त
 जहद्वय । विजटभि सए काए तेज जीवाण अतर ११६ ॥ एएसि वन्नथो चैव गधथो रस प्रासथो । सठाणा देसथो

धानीस्थिति • अग्निकायनो अतर्मुहूर्त्तं जघना स्थिति ११३ असख्यातुकाल उत्कृष्टो अतर मुहूर्त्तं जघना कायास्थिति तज कायनो ते काय अण
 नू कतो ११४ अनतोकाल उत्कृष्टो अतर्मुहूर्त्तं जघनापणे चिद्वहो पीतानोकायसु को तेज कायना जीवने चलतु अतरहुवे ११५ ए अग्नीकायना यर्गुं

भाषा

श्रव

द्विप्रतश्चापि सहश्रयो विधानानि भेदा भवन्ति ११७ (द्विविहावाउ जीवाउ सहमावाय रातहापञ्चतमपञ्चतोएवमिए दुहापुणो ११८) वायु जीवा द्विविधा
शून्नावादरास्ते पुनः पर्यासा पर्यासभेदेन द्विविधासन्ति ११८ [वायराजोउपञ्चतापंचहतिपकितियाउकलियामडलियाघणशुंजासुववायाय ११९] यैवाद्रा
वायुकाय जीवा पर्यासास्ते पुनः पञ्चधा प्रकीर्तिता पञ्चकथनमात्रतः वायवोहि अनेकविधाः सन्ति उत्कलिका वायुर्यैः स्थित्वा २ वांति १ मण्डलिका
वायुः वातूलिकावायुः धनीधनरूपो वायुर्धनवायुः रत्नप्रभायधोवर्ती धनोदधिसु विमानाना आधारो हिम पटलकल्पोवायुः शुंजन् वातीतिशुंजावायुः
शुद्धावायवस्तीक २ यैवान्ति ११९ [संवद्वगवा यायणैगहाए वमाईओ एगविहमनाणत्ता सुहमाते वियाहिशा १२०] सवर्त्तक वायवस्ते वैर्यायुभिस्तूणा

वावि विहाणाइं सहस्रसो ११७ ॥ दुविहा वाउ जीवाओ सुहुमा वायरा तहा । पञ्चत मपञ्चत्ता एवमिए दुहा
पुणो ११८ ॥ वायरा जेउ पञ्चत्ता पचहा ते पकितिया । उकलिया मंडलिया घण शुंजा सुववायाय ११९ ॥
संवद्वग वायायणैगहा एवमाइओ । एगविह मनाणत्ता सुहमाते वियाहिशा १२० । सुहमा सव्वलोगंमि लोणदिसिय

यकी गंधयकी रसयकी फरसयकी संस्थानभेदयकी विधानभेद सहस्र ११६ वेहं प्रकारे वाजकायना जीव एकः सत्सनानां विजा वादर ते ओटा
तिमज एक पर्यासा बीजा अपर्यासा एवेहं प्रकारे इम ११७ वादर वाजकायना जीव पर्यासा पांचे प्रकारे कहा तीर्थ करे षत्कलिका रही २ वाइते
वायमडलो यावंतो लिया घन रूपते घनवातः शुंजता वाइते शुंजवात शुद्धवात ते थोडे थोडे वाये ११८ जिणे वायर तणादिदेई अनेधियना खेते संवर्त्तक
अनेक घणे प्रकारे आदि देईने इत्यादिक एकभेद पणि अनेकप्रकारे नही सूक्ष्म कहा तीर्थ करे ११९ सूक्ष्म चीदराजमाहि लाभे लोकने एकदेसे

दय एकस्मात् स्थानात् स्थानान्तर नीयन्ते एवमादयो अनेकधा व्याख्याता परवायु जाति सामान्ये न एक विधा अनानात्वा स्वीयं करैस्ते शूद्रावायु
 काय जीवा व्याख्याता १२ (सुहमा सव्वलौघमि लागदेशेय वायरा एत्तीकाल विभागन्तु तेसिवच्छ चउच्चिह १२१) शूद्रा वायुकाय जीवास्सर्वस्मिन्
 चतुर्दश रज्ज्वात् लोकेस्थिता सन्ति वादरा वायुकाय जीवा लोकेके देशेस्थिता सन्ति इति चैत्रविभाग एतन्न अनन्तर तेषा वायुकाय जीवाना
 चतुर्विध कालविभाग वच्चे १२१ [सतद्र पष्पणादया अपञ्जवसिया विय ठिद्र पडुच्च सादया स पञ्जवसिया विय १२२] सन्तति प्रवाह मार्गमाश्रित्य
 वायुकाय जीवा अनादयस्त्रया अपयवसिता अपि पुन स्थिति प्रतीत्ये सादिका स पर्यवसिताश्च वत्तन्ते १२२ (तिथेय सहस्राद् गासाणुणोसिया
 भवे आउठिद्र वाज्जण अतीमुहुत्त जहन्निया १२३) वायुना वायूनाय जीवाना दीविधर्व सहस्राणि उक्कटा आयु स्थितिर्भवति लघनित्रका स्थितिरन्त

वायरा । इत्तो काल विभाग तु तेसि वोच्छ चउच्चिह १२१ ॥ सतद्र पष्प णाईया अपञ्जव सियाविद्य । ठिद्र पडुच्च
 सार्इया सपञ्जवसियाविद्य १२२ ॥ तिन्नेव सहस्राद् वासाणु क्कोसिया भवे । आउ ठिई वाज्जण अतीमुहुत्त जह
 न्निया १२३ ॥ असखकाल भुक्कोसा अतीमुहुत्त जहन्निया । काय ठिई वाज्जण त कायतु अमु चओ १२४ ॥ अणत

वादर जीय एतन्नान्तर कालनो विभाग भेद तेहनी चिहु प्रकारे कहसु १२० प्रवाह आयो अनादिके अतपणिके स्थिति आयीयादि गश्चित न
 पर्यवसित अगुर पणिके १२१ त्रिण्हजार वरस उक्कटो स्थिति होइ आउखानी स्थितिवायरानी अतमुं हर्त्त उच्चन्य स्थिति १२२ असख्याता
 कालनो उक्कटो अतमुं हर्त्त लघना कायस्थिति वाउनी वायुधकी मरी वायुमाहि ऊपजे ते वाउकाय मू के नही १२३ अनताकासनी उक्कटो गतर

सुं हृतं भवति १२३ अथ कायस्थितिमाह (असंख कालमुक्तीसं श्रंतीमुहृतं जहन्नयं कायठिरे वाजयं तं कायतु अमुं चश्री १२४) वायूना वायुकाय जीवानां स्तंकायं वायुकायं अमुश्चतां असंख्येय कालं उत्कृष्टास्थितिर्यार्याता जघनिरका स्थितिरन्तमुं हृतं भवति वायुकायात् च्युत्वा पुनर्वायुकाये एव उत्पद्यते तर्दा उत्कृष्टी असंख्येय कालं जघनरा तथातमुं हृतं स्थितिर्यार्याता इत्यर्थः १२४ अथ कालस्थान्तरमाह (अणंतकालमुक्तीसं श्रंतीमुहृतं जहन्नियं विजटमि सए काए वाजजीवाण संतरं १२५) वायुजीवानां स्वकीये कायैल्लक्षे सति उत्कृष्टं अनन्तकालं जघनरा अन्तमुं हृतं अन्तरं भवति तदा उत्कृष्टती अनन्तकालस्थान्तर भवति जघनरा तथातमुं हृतं अन्तरं भवति १२५ (एएसिं वन्नश्रीचिव गंधश्री रसफासश्री संठाणा देसश्री वावि विहाणार सहस्रसो १२६) एतेषां षड्कलिकादि वायुनां वायुकाय जीवानां वर्थती गन्धती रसतः स्पर्शतस्स्थानादिशतथापि सहस्रसो विधानानि बहवोभिदाः भवन्तीत्यर्थः १२६ एवं तीजीवायुवसान् उक्त्वा उदारत्रसान् आह (श्रीराला तसाजिज चउविहाते पकित्तिया वैदियतेदिय चउरोपंचिदिया चिव १२७) ये उदारास्त्रसाहीन्द्रियादयस्ते चतुर्विधा प्रकीर्त्तिताः हीन्द्रिया १ स्त्रीन्द्रिया २ यतुरिन्द्रियाः ३ पश्चिन्द्रियाः ४ चैव पदपूर्णे एतेतसा उदारा

काल मुक्तीसं श्रंतीमुहृतं जहन्नयं । विजटमि सए काए वाज जीवाणं अंतरं १२५ ॥ एएसिं वन्नश्री चैव गंधश्री रस फासश्री संठाणादेसश्रीवावि विहाणार सहस्रसो १२६ ॥ श्रीराला तसाजिज चउविहा ते पकित्तिया । वैदिय तेद्वं

श्रंतमुं हृतं जघनरा पीतानीकाया भूकेती वायुकायांना जीवने एतलो अंतर पडे १२४ एथाथ कायना बर्षं थकी इत्यादि वर्षं १२५ जदारिक जि वैद्रीयादि तस जीव चिहुं प्रकारे कहिया वैद्रीकाया जीव वैद्रीकाया काया १ जीभर नासीका ३ चउरिद्रीकाया रसना प्राणनाक ४ पंचेद्री १२६

उहन् शरोरा १२७ (वेदियायजे जीवा दुविहातेपकितिया पज्जत्तमपज्जत्तातेसि भेए सुणेहमे १२८) द्वीन्द्रिया कायरसनेन्द्रिय युक्ताजीवास्ति द्विविधा प्रकीर्तिता ते के द्वीन्द्रिया पर्याप्तापर्यागाय एय अमुनाप्रकारेण एतेद्वीन्द्रिया सन्ति इति याक्य मे कथयतीयूय ऋणुत १२८ (किमिषो सोमइलाधेव अलसाभार बाहया वायोमुहाय सिषीय सखासखणगतहा १२९) [पक्षीयाणुक्तया धेव तद्विवय वराडगा जलुगा जालगाधेव चन्द्याय तद्विवय १३०] छमयोऽपयिव जीवा ध पुन सोमइलाधेन्द्रिय जीवविशेषा अलसाधपाकाले सत्तिकोन्नया मादवाहकाचूडैस्त्रिगजाइ इति लोक प्रसिद्धिमन्तोहिन्द्रिय जीवा वासोमुखावासी सदयवदनाजीवास्तथा शशयोमुक्ताफलयोगय शशा इहिलजला तथा शहनकालधयोवर्वास सत्तिकोन्नया १२९ पशुका ध पुनरण पशुकास्तथैय वराटका कपर्दका जलूकाश्चिरया जालका अपि द्वीन्द्रियजीवविशेषा तद्वैव चन्दना भवा येषा अथयवास्थापनाया स्थाप्यते

दिय चउरो पचिदिया धेव १२७ ॥ वेद दियाओ जे जीवा दुविहा ते पकितिया । पज्जत्त मपज्जत्ता तेसि भेए सुणेह मे १२८ ॥ किमिषो सोमगला धेव अलसा मादवाहया । वासी मुहाय सप्यीया सखा सखणगा तथा १२९ ॥ पक्षी याणुक्षीया धेव तद्विवय वराडगा । जलुगा जालुगा धेव च द्याय तद्विवय १३० ॥ इद वेदिया एए णेगहा एवमा

वेद दिय अ जीव विषय प्रकारे ते कथा तीर्थ करे एकपर्यासा बीजा अपर्यासा तेहना भेद सोभलि हे शिष्य १२७ छमि १ सोमगल वेदियजाति अलसीया चूडैव धासक्षीना मुख सरिखा मुखते मोती सबधिया जीवते सप्यं गख जीवणख नखवेदिनाझाजीव १२८ पशुकजीव तथा यज्जगकोडीनाजीव जलीना जीव जालकजीव चन्दनगोषया तेहना जीव १२९ इणे प्रकारे वेद दिय जीव अनेक पणे प्रकारे लोकेते एक देखे ते सर्ववेद्री पर सयलोक मे नही १३०

कि कृत्वा दुःख उत्पत्तित उद्भूत भ्रात्रा तत्र वेदनायां दुःखे वा रोगपरीपह अथासित सहित कीदृशी मुनि बुद्ध स्थो रोगैर्व्याप्तं दुःखयतीति दुःख
 रोगमन्त्रेण आर्त्तं पौडितं क्रियते इति दुःखार्त्तित तादृशीपि प्रश्नं स्वापयेत् रोगार्त्तस्य हि प्रश्ना चक्षुलास्यात् साधुशु रोगसद्भावेपि प्रश्ना स्थिरा
 एव विदधेत् इत्यर्थं तदा रोगार्त्तं किं कुर्यादित्याह तोगच्छ मिति साधुरोगार्त्तचिकित्सा रोगप्रतीकार न अभिनन्देत् न अत्रुमन्देत् तदा चिकित्साया
 पुत्र दुःशो ते धर्मं सामलो देव्या लेद सुदृग्माल नगरोद्ग पुहती तिहा नी राजा जितगत्र राजानी यद्दिनीवी तेहनी स्त्रीआपणा भादनी हरसनी व्याधि
 जाणी ते गमाडवा भणो आहार माहो श्रीपथ घाली ते आहार दोष ऋपि श्रीपथ मिश्रित जाणो आहार परिठयो काया अन्य मानी अणसण लेद
 प्रतिमाद् रक्षी तिण कान वेस कुमरे गृहवास यके रात्रि मियालनी गब्दसामली अगश्री लूग मीकनी सीयाल पकडी अणायो तिणे कुमरे कीतुके
 हएणी ते थकाम निर्जराद् मरीने व्य तर थयु तिणे अपणा वैरयकीकालवेस कुमरने सीयालनी भेस करिखावा लागी ते अहिद्यासती रोग परीसहसहती
 सोधी जिम तिणे कालवेग साधि रोगपरीसहसहतीम बीजे साधु सहिवी ते भणीदणानाफरसनी १० नी परीसह वस्तरहित साधुने तथा अल्प वसने
 लू लूपवतीने स० सयमवतने त० तपस्वीने त० दणानि विपिद् स० सुताविसताद् दु हुवे गा० शरीरने विपिद् पीडा ३४ आ० तडकानि नि० पडवे
 कती अ० अनुभरणा ह० हुवे दे० वेदना ए० एणी परे न० जाणिने न भोगवे त० ते वस्त ज० जे दणानी त० पीडोयकीजिन कळी साधु हुवे अथ दण
 स्सर्म दटांत सावत्यी नगरीद् । जितगत्रु राजानी पुत्र भद्र कुमार वैराग्य यकी दीचा लेद विहार कयो केतले अनार्य देशे पटुती तिहा राजाना
 श्रीलगूण महात्मा अणदीठे अण श्रीलखे पूणु त कुण पिण ते ऋपि भाया अजाणती बीळी नही तिहा हरी करी भाळो वस्त उरालिया तहने डाम
 सघाते बाधी मारो उपसर्ग कीधी ते सधो जिम भद्र कुमार दणस्सर्म परीसह सद्यु तिम बीजे सहिवी इति कथा कि० ज्ञान अण कर वे मेल करी

सुहृत्त जह्वमय वेदियकायठिई त काय तु अमुञ्चओ १३४) हीन्द्रियजीवाना त स्वकीयकाय हीन्द्रियकाय अमुञ्चतां कायस्थितिरुत्कृष्टा स ख्ये यकाल
 स्थितिर्नान्यतोतमुं हर्त्तं स्थिति रस्ति इत्यर्थं १३४ अथ कालस्यातस्माद् [अणतकालमुक्तीस अन्तीसुहृत्त जह्वमय वेदियजीवाण अतरेय विद्या
 ह्वय १३५] हीन्द्रिय जीवाना स्वकीय यीनित्यागे सति अपरस्मिन्काले उत्पद्यपुनर्हीन्द्रिय यो नौ एव उत्पद्यते तदा उत्कृष्ट अन्तर अन्तकाल
 जयम्यतोतमुं हर्त्तं कालस्यान्तर भवति यदाहि हीन्द्रियो जीव स्वयीनेषु गुलायनस्यतौ उत्पद्यते तदा अन्तकाल तिष्ठति ततोऽनन्तकालस्यान्तर
 भवति पचात्पुनर्हीन्द्रियत्वे उत्पद्यते इत्यर्थं १३५ (एणसि वयमधीचिव गन्धश्चौरसफासश्चो सपृष्ठाणादेसञ्चोयाधि विद्याणाद् सङ्कसो १३६) एतेषा हीन्दु
 याणां वषत्तीगन्धतीरसत स्यर्थं त सस्यानादेयतय सङ्कस सोवह्ननिविधानानि भेदा भवन्ति इति शेष १३६ अथ हीन्द्रियानाह [तेदियाश्चो जीवीया
 दुविहृतिपक्तिरया पञ्जत्तमपञ्जत्ता तेसि भेषुणेहमे १३७] योहीन्द्रियजीवा यरीररसनाप्राणैन्द्रिय त्रययुक्तास्तिपयासापर्यागभेदेन द्विविधा ऽकीर्त्ता
 तेषा योन्द्रियजीवानां भेदान् मम कथयती यूय ऋषुत् १३७ (कन्वूयिषील उह सा उक्कलहेहियातहानपहारकडुहारा मालूगापत्तहारगा १२८)

अ तौमुहृत्त जह्वनय । वेद दिय जीवाणं अ तरेय विद्याह्विय १३५ ॥ एणसि वन्नश्चो चैव ग धञ्चो रस फासश्चो ।
 सठाणा देसञ्चोवाधि विद्याणाद् सङ्कसो १३६ ॥ तेदियाश्चो जे जीवा दुविहा ते पक्तिरया । पञ्जत्त मपञ्जत्ता

जाह तु १३४ एवंद्रो जीवना वषर्षको गधषकी रसायकी फरसयकी सस्यानयको विधानभेद सङ्कसगमे हीर १३५ तेद्रीजीके जीव तैविव भेदे श्रीतिर्ष
 फरे कद्या पयासा अपयासा तैवेद्रो जीवना भेद साभल हे शिष्य १३६ कु घुयाकीडो जाति उहसा जोवषियेष उक्कलिया उद्विह जीवतपहार फडहा

द्वीन्द्रियाणां मध्ये केचित् प्रसिद्धाः सन्ति १३० [इद्वेन्द्रियाएरणेगहाएवमाइओ लोएगदसे ते सत्वे न सञ्चल्यवियाहिया १३१] इति
 अनुनाप्रकारेण एतेद्वीन्द्रिया एव मादयोऽनेकधाः अनेकनामानोवर्तन्ते ते सर्वेद्वीन्द्रियाजीवालोकेकदेशे चतुर्दशरज्ज्वाकलीकस्य एकदेशे जला अवादी
 तिष्ठन्ति सर्वत्र नः व्याख्याताः सन्ति १३१ [सन्तद्रं पृष्णार्द्धया अपञ्चवसियाविय ठिद्रं पडुच्चसार्द्धया सपञ्चवसियाविय १३२] ते द्वीन्द्रियासन्ततिं
 प्राप्यप्रवाहमाश्रित्य अनादयः तथा अपर्यवसिता अपि सन्तिस्थितिं भव स्थितिं प्रतीत्यसादिकाः सपर्यवसिता अपि च सन्ति १३२ पूर्वं भवस्थितिं
 वदति (वासाइ वारसेवउ उक्तीसेणं वियाहिया वेन्द्रिय आउठिई अन्तीमुहुत्तं जहन्निया १३३) द्वीन्द्रियाणां दादशवर्षाणि आयु स्थितिरुक्ताव्याख्या
 तास्ति जघन्यतीन्तमुहुत्तं न वसमयादारभ्य किञ्चिद्दूरं घटिकाद्वयं आयुपेस्थिति व्यख्याता १३३ अथ कायस्थिति माह (संखिज्जकालमुक्तीसं अन्ती
 इओ । लोएग दसे ते सत्वे न सञ्चल्य वियाहिया १३१ ॥ संतद्रं पृष्णार्द्धया अपञ्चव सियाविय ठिद्रं पडुच्च सार्द्धया
 सपञ्चव सियाविय १३२ ॥ वासाइ वारसेवउ उक्तीसेणं वियाहिया । वेद्रदिय आउ ठिई अंतीमुहुत्तं जहन्निया १३३
 संखिज्जकाल मुक्तीसा अंतीमुहुत्तं जहन्निया । वेद्रदिय काय ठिई तं कायंतु असुं चओ १३४ ॥ अणंतकाल मुक्तीसं

संतति प्रवाहे आदि रचित अपर्यवसित अनतपीण धिति आशी आदि सहित अने अनंत अंतवीण १३१ वरस वारे १२ उक्ताष्टी काही वेन्द्रिय
 जीवने आउखानी स्थिति अंतमुहुत्तं जघनरा आऊखी १३२ संख्याता कालनी उक्ताष्टी अतमुहुत्तं जघनरापणे १३२ वेद्वी जीवनी कायस्थिति तेहको
 ते माहे रहि ते वेन्द्रियकाय अमुं कालने १३३ अनंतकाल उक्ताष्टी अंतमुहुत्तं जघनरा वेद्वी जीवनी आतरोए कायी खकायखांडी वनस्पती माहि

(कष्पासद्विमिञ्जाया तित्नुगातश्चो समिञ्जगा सदावरीय शुभीय बोधव्या इन्द्रगायगा १३८) [इन्द्रगोवग मारुया गणहाएव मारुश्चो लोएग देसे ते सव्वे न सर्व्वथ वियाहिया १४०] कन्धुपि पीबुइंसा कन्धुलंघुशरीर स्त्रीन्द्रिया जीवः पिपीलिः कीटिकाः उइसास्त्रीन्द्रिय जीव विशेषाः उक्कलिकीजन्तु विशेषास्त्रया उपदेहिकाः लणहार काष्ठहारा एतेपि तीन्द्रिय जीवविशेषाः मालूकाः पल हारकाः एतेपित्रीन्द्रिय जीव विशेषाः १३८ कर्पासास्थिजाता स्त्रिंडुकाः पुनस्तं तु समिञ्जका अपितीन्द्रियजीव विशेषाः सदावरी च पुनर्गुस्त्री इति यूकाः तथा इन्द्रकाय कायका इत्यपि कुलचिह्नोक्त प्रसिधाः १३८ इन्द्र गोपकादिकाः इंद्र गोप काम मोला इति प्रसिधः एवमादिका स्त्रीन्द्रिया अनेकधा जीवास्ते सर्वे लोकोक्त देशे व्याख्याता सर्वत न व्याख्याताः १४० [सन्तद्र पण्यारुया अपज्जव सियाविय ठिद्रं पडुच्च सारुया सपज्जव सियाविय १४१] एते तीन्द्रिय जीवाः

तेसिं भए सुणेह मे २३७ । कुंभूं पिपीलि उदंसा उक्कलुदेहिया तहा । तणहार कडुहाराय मालुगा पत्तहारगा १३८ ।

कष्पासद्विमिंजाय तिंदुगाश्चो समिंजगा । सयावरीय शुभीय बोधव्या इंद्रगारुया १६६ । इंद्रगोवग मारुया गणहा

एव माद्रश्चो लोएग देसे ते सव्वे न सव्वथ वियाहिया १४० । संतद्रं पण्यारुया अपज्जवसियाविय । ठिद्रं पडुच्च

रादि जी जीव जाणे मालूका पलहार १३७ कष्पासना जीव अठमिंजी जीव तिंदुक जीवतो समिं जगजीव सदावरी जीवघूकाप्र तपदी जीव जाणि वाइंद्रकाइय जीव १३८ इंद्रगोयमामोला प्रमुख अनेकप्रकारे तेद्री जीव लोकने एकदेशे ते सर्व सगले लोके कक्षा नथी १३८ संतति प्रवाहे अनादि अने अपर्यवसित केहडो भवथिति कायथिति आश्ची आदिक्के अने सपर्यवसित सांत पीण नीये १४० अगोणपंचास दिवस उत्कृष्टी स्थिति कही तेद्री

याएव जोगहाएवमादृशो जोगस्य एगदेशकिते सर्व्वेपरिकल्पितया (१५०) इति अमुना प्रकारेण एतेचतुरिन्द्रियाएवमादिका अनेकाया यन्त्रि ते सर्व्वे चतुरिन्द्रियालोकस्य चतुर्दयस्त्वामलोकस्यैकदेशेपरिकल्पिता १५० । [सन्तदप्युपायया अपञ्जवसियाविय टिद पडु असादया सपञ्जवसियाविय १५१] यन्त्रि प्रापते जोया अनादय अथा अपर्यवसितायापि भवस्यति कायस्थिति प्रतीत्यसादय सर्व्ववसिता अपिसन्नि १५१ [एवमेव भासाक उक्तीसेष वियाहिवा चउरिन्द्रिय आचठिद अन्तोमुहुत्त जहन्त्रिया १५२] चउरिन्द्रियाणा उक्ताष्टा पष्पासा आयु स्थिति व्यस्थिता जवन्त्रिकाषान्तसुं हर्त् स्थिति व्याख्याता १५२ भवस्थिति उक्ताकायस्थिति माह [सखेज्जकानमुकोस अन्तोमुहुत्त जहन्त्रिया चउरिन्द्रियकायठिद त काय उ अमुस्यसो १५३] चतुरिन्द्रियाणा स्व काय अमुस्यता पुन पुनस्त्वैवोत्पद्यमानता सखेयकाल उक्ताष्टास्थिति रस्ति जवन्त्रिका च अन्तसुं हर्त्

मोहए अस्त्रि रोडए विचिर्त्तं चित्तपत्तए । उहि कतिया जलकारिय नीयाततव गाईया १४८ ॥ इद चउरिन्द्रिया एए
योगहा एव मादृशो, जोगस्य एग देससि ते सर्व्वे परिकल्पिता १५० ॥ सतद्रूपण णाईया अपञ्जव सियाविय । ठिद
पडुस्य साईया सपञ्जवसियाविय १५१ ॥ एवमेव भासाउ उक्तीसेण वियाहिवा । चउरिन्द्रिय आउ ठिद अतोमुहुत्त

जोय बोहिजलियाजोय जलकारीजोवनीयाजोय जाणवा तवजोय एलीकलट्टि १४८ इत्ये प्रकारे वीरिदीजोय अनेकषण्णे प्रकारे एवमादिक लोक वीद राजना एकदेयने भयने ते सधला कथा तोर्यं करे १४८ सतति मयाहि अनादि अपर्यवसित अन्तपण्ण धिति आयो आदि सञ्चित अने अतपय १५० कमासने उक्ताष्टो स्थित कहे तोय कर देवे चउरिन्द्रो जोवने अउखालीस्थित अतसुं हर्त् जषयाखीने अउखो १५१ सख्याता कालनी उक्ताष्टो

धाख्याता १५६ (तिरया सत्तविहा पुढवीससससूभवे पञ्जतापञ्जता तिसिभे एसुणेहमे १५७) समसुरजप्रभादिपु नरकपृथीपु समधास्तेनैरयिकाभवेसु स्तेपुननैरयिका पयागा अपर्यासाय सन्ति समनैरयिका पर्यासा समनैरयिका अपर्यासा एव धतुदंश प्रकारास्तेषा भेदान् मे मम कथयत सती यूय श्रुत १५७ पूर्व समनरकपृथीना स्वरूपमाह (रयणाभा १ सकराभा २ बालुयाभा ३ य आहिया पद्माभा ४ धूमाभा ५ तमा ६ तमतमा तथा १५८) रदाना वैद्वर्दिनीनां आभाद्रव आभायस्या सारजाभा १ रत्नकाण्डस्य भवन पति भयनस्याभाद्रव आभायस्या सारजाभा १ शर्करा शरणापाण रूपा तदाकारा आभायस्या सा शर्कराभा २ बालुकाशरण सट्टग आभायस्या साबालुकाभा ३ पद्मस्य आभाद्रव आभायस्या सापि काभा ४ धूमस्य आभाद्रव आभायस्या साधूमाभा ६ यद्यपि तत्र धूमस्य आभावोस्ति तथापि तत्र तदाकार पुद्गलाना परिणामोस्ति इति धूमा ५ तम प्रभातमोरूपान्यकारमयो ६ तमस्तमाप्रकट तमस्तमस्तमायौ अत्यन्तान्यकारमयो इत्यर्थ ७ समाविध नरक पृथीत्विन तदन्तर्वर्त्तिनीपि नरकजीवा समाधाष्याख्याता ते पुन पर्यासापर्यासभेदाच्चतुर्दशधाश्रिया १५८ इति समनरकपृथीना स्वरूपमुक्ता अयनामान्याह (धूमा १ वसगासेलातहा अज्ञाण

रयणाभसकराभावातुयाभाय आहिया । प्रकाभा धूमाभातमा तमतमा तथा १५८॥ वसगावसगासेलातहा अज्ञाणरिद्ध गामधामाधवदधे वणारयायपुणोपुणो । रयणाद्रगतश्रीचे वतहाधममाद्रणामश्री इद्र निरद्रया एएसनहापरिकित्तिया

रदनी आभाकातिते रतनप्रभा शर्करा काकरा सरिपी क्राति ते शर्कराप्रभा वैलूनी आभाकाति ते सरिखीते बालूकाप्रभा कही १५६ पककादप सरिखी क्राति ते पकप्रभा कही १ धूमनी सरीखी क्राति धूमप्रभातम अधकार रूपतेतगा तमतमा अत्य त अधकाररण प्रकारे नारकी सतीप्रकारे कही १५७

यावद्ब्याख्याता १५३ अथ कालान्तरमाह [अणान्तकालमुक्त्वा अतोमुहुत्तं जहन्नयं विजटमिसएकाए अन्तरय विवाहिय १५४] चतुरद्विद्याना
 स्वकीयिकायेलक्ते सति पुनरन्यस्मिन् कायेठत्वद्य पुनचतुरद्विद्यकाये उत्यद्यत्त तदा चतुष्टाटं अन्तर अन्तकालं जघन्यतोतमुहुत्तं क्लान्तं शीघ्र १५४
 (एएसिक्वन्नश्री चैव गन्धश्रीरसफासश्री सण्णणादेयश्रीवावि विहाणाद् सद्यश्चासा १५५) एतेषा चतुरद्विद्यजीयानां धर्मतोभन्तोरत्तः क्लान्तः तस्याना
 देशतयापि सहस्वसोविधानि दशवोभेदाभवन्ति १५५ अथ पञ्चेद्विद्यभेदानार [पञ्चेद्विद्यायजोषाया च छविद्विद्या तं विवाहिया नीरुद्यातिरिज्ज्याय ननु
 आदेवाय आहिया १५६] पञ्चेद्विद्याद्ये जीवास्ते चतुर्विधाव्याख्यातास्ते पञ्चेद्वि जीवानैरधिककालिदीक्षां ननुजाय पुनर्देवा आत्माना तौर्ध करे
 जहन्नियया १५२॥ संखेज्जकालमुक्त्वा अतोमुहुत्तं जहन्नियया । चउरिद्विद्यकायठिर्दे तंकायंतुधमु चश्री १५३। अथांतकाल
 मुक्त्वा सं अतोमुहुत्तं जहन्नयं । विजटमि सएकाए अंतरयं विवाहियं १५४॥ एएसिं वन्नश्री चैव गंधश्रीरस फामश्री ।
 सटाणा देसश्रीवावि विहाणाद् सद्यश्चासा १५५॥ पंचिद्विद्याश्री जीवावा चउद्विज्ज्यातं विवाहिया । नीरुदय तिरिज्ज्याय
 मगुया देवाय आहिया १५६ ॥ नीरुदया सतविहा पुटर्वास् सतसू भवं । पज्जतमपज्जता तिसिंसेए सुगोह मे १५७ ॥

अतमुहुत्तं जघन्य शीघ्रिद्वि जीवनी कायस्थिति तं कायते मुक्त्वा १५२ अन्ततोकाल उच्यते अतमुहुत्तं जघन्यपर्य पीतानीकायासु क्लान्तं एतलो
 अतर काष्ठी शीतोर्ध करे १५३ एवैद्वीय जीवना धर्मद्वयो गंधधयो रसाधनो फरस्यको कस्यानना आदेश्यको विधानभेदसएय गते १५५ पंचद्वीय
 जजीव चिह्न प्रकारे तं काष्ठा तौर्ध करे नारको १ तिर्यच २ मनुष्य ३ देवता कष्ठा तौर्ध करे १५५ नारको सात प्रकारे रजप्रभादि सात छविर्धाने विना

दृशाए जहद्वेष एग तु सागरोवम १६४] द्वितीयाया नरक पृथिव्या शक्राभाया अन्यमे प्रसूटे नारकाणा उक्कटत्वेन दीणि सागरोपमानायासु स्थितिब्याख्याता जघन्येन तु एक सागरोपम भासु स्थितिर्ब्याख्याता १६४ (सत्तिव सागराक उक्कोसिण पियाहिद्या तद्रयाए जहद्वेष तिवेव सागरोवमा १६५) तृतीयाया नरक पृथिव्या वालुक प्रभाया अन्यमे प्रसूटे उक्कटत सप्तसागरोपमानायासु स्थितिर्ब्याख्याता जघनात स्तोणि सागरोपमाणि स्थिति ब्याख्याता १६५ [दससागरोवमाक उक्कोसिण वियाहिद्या च उत्योए जहद्वेष सत्तिव सागरोवमा १६६] चतुथा नरक पृथिव्या पद्मप्रभाया अन्ये प्रसूटे उक्कटतेन दशसागरोपमानि स्थिति ब्याख्याता जघनेन तु सप्तसागरोपमानि भासु स्थिति

नेण दस वास सहस्रिया १६१ । तिनेव सागराक उक्कोसिण वियाहिद्या । दृशाए जहद्वेष एग तु सागरोवम १६२
सत्तिव सागराक उक्कोसिण वियाहिद्या । तद्रयाए जहद्वेष तिनेवउ सागरोवमा १६३ ॥ दस सागरोवमाक उक्को
सिण वियाहिद्या । चउत्योए जहद्वेष सत्तिवउ सागरोवमा ६४ ॥ सत्तरस सागराक उक्कोसिण वियाहिद्या । पचमाए

कटो कटो तीप करे कटो पहिलो रतनप्रभा पृथवीने जघना दशहजार वर्ष पहिला प्रतरनी अपेद्या १६० तीन सागरोपमनी आकखु उक्कटो कटो तिर्ष करे योजो पृथवीर नारकीने केहसे प्रतरि एक सागरोपम पहिला प्रतरनी अपेद्या १६० सात सागरोपनी आउखो उक्कटो कटो उक्कटो भगवते कटोबोजो पृथवी नारकीनो केहलो प्रतरि जघन्य तीन सागरोपमनी अपेद्या पहिला प्रतरि १६१ दशसागरोपमनी आउखो उक्कटो कटो चोपो पृथवी नारकीनो केहसे प्रतरि सात सागरोप मनीदुइर पहिला प्रतरनी अपेद्या १६२ सत्तर सागरोप मनी आउखो उक्कटो कटो तीर्ष करे

रिदुगा मधायाधवईचेव णारयाय गुणीगुणी १५८) धर्मा प्रथमा पुष्पो द्वितीयावयका तृतीयापौला तथा चतुर्थी अक्षना अरिष्टापक्षनी मधापष्टी
 माधवती सप्तमी अत्रवासिनीनारकाः सप्तधाभवेयुः १५८ (रयणाद् गुत्तश्रोत्रेव तथा धम्भादणामश्रो इहनेरईयाए सत्तहापरिकित्तिया १६०) रत्न
 प्रभादयो गोलतीञ्जेया. तथा धर्मादयोनामतीञ्जेयाः इति अनुनाप्रकारेण एतेनैरविकाः सप्तधाः परिकीर्त्तिता. १६० अथ द्वैत्र विभागं आह
 (लीगस्सएगदेसम्भि ते सव्वे उवियाहिया इत्तीकालविभागं तु तेसिं वुच्छ स उधिह १६१] ते सर्वेनारकालोकस्यैकदेशे व्याख्याता. अन्यत्र सर्वत्र न सन्ती
 ल्यर्थः इत्तीइतीऽमन्तर तेपां नारकाणां चतुर्विधं कालविभागं वर्ये १६१ (सत्तद्दं पप्पणादया अप्पल्लव सियाविय ठिदं पडुच्चसारईया सपप्पल्लवसिया
 विय १६२] सत्तति प्राप्य प्रवाह माथिल्लतेनारका अनारदयो अपर्यवसितायापि स्थितिं भवस्थितिं कायस्थितिः आनिल्लसादयः सपर्यवसितायापि
 वर्तन्ते १६२ [सागरोवममेगन्तु उक्कोसेणवियाहिया पटभाएजहद्वेषं दसवासससहसिया १६२] प्रथमायां नरक पृथिव्यां रत्नप्रभायां तत्तुण्डिन त्वयैद्वे
 प्रसटे एकसागरोपमं आयुः स्थितिव्याख्याताः जघन्येन दशपर्यं सहस्रिका आयुः स्थिति व्यख्याताः १६३ [तिथेवसागराच्च उक्कोसेण वियाहिया

लीगस्स एगदेसंभि तेसव्वे उ वियाहिया । इत्ती कालविभागं तु तेसिं वोच्छं च उव्विह । १५८ संतद्दं पप्पणाईया अप्प
 ल्लव सियाविय ठिदं पडुच्च सारईया सपप्पल्लवसियाविय । १६० सागरोवम मेगं तु उक्कोसेण वियाहिया । पटभाए जह

लीकाना एकदेश अधोलोकेने विद्ये ए सर्वेनारकी कश्चि एतत्ता करणा पर्दा कालनी विभाग त्पत्तो चित्तुं प्रकारं करणं १५८ सत्तति प्रभाह
 अनादि अने अपर्यवसित केहदी पीण स्थिति आयो आदि सरित्त अने पर्यवसित अंतपणित् १५८ सागरोपम १ तेरगी पत्तर्नी अप्रयाद् उत्त

करण कारणञ्च दूरतएव त्याक्तं यदा मनस्यपि चिकित्साचिन्तन साधनैर्कुर्यात् कीदृशः साधुरात्मगवेषकः आत्मानं समयजीवं गवेषयतीति आत्म
 गवेषकः एतादृशः सन् सच्चिक्वे समाधिना तिष्ठेत् पीडया पीडितो न क्रन्देत् इत्यर्थः सुयत्नात् कारणात् श्रामखं साधुत्वं एय एतदेव जंइति यस्मात्
 रोगी समुत्पन्ने स्वयं चिकित्सां न कुर्यात् अन्ये नापि न कारयेत् जिनकल्पिकापेचयायमाचारः स्थविरकल्पिकाः पुनः कारयंत्यपि इति वृद्धसंप्रदायः ।
 अत्र काल वैशिककथा ३३ मधुरायाम् जितशत्रुपौडितिसुरूपाम् कालाख्यां विष्ट्यां अन्तःपुरेऽभिपत् तस्या पुत्रः कालवैशिकस्य भजनी मुद्गैलनगरस्वामिना
 परिणीता अन्यदा स कुमारः शृगालशब्दं श्रुत्वा सपथान् अपृच्छत् कस्यायं स्वरः ते रूचे फेरुकस्वरीयं कुमारिणोक्तं फेरुकोऽज्ञानीयतां तैरानीतः
 शृगालः कुमारिणं प्रतिपन्न तस्मिन् रोगी बभूव न चिकित्सां कारयति नाथीषधं करोति तथाविधप्रत्याख्यानात् अन्यदा विहरन्ऽसौ मुद्गैलपुरे गतः
 विहरन् प्रतिमां प्रतिपन्न तस्मिन् रोगी बभूव न चिकित्सां कारयति नाथीषधं करोति तथाविधप्रत्याख्यानात् अन्यदा विहरन्ऽसौ मुद्गैलपुरे गतः
 तत्र तन्नगरस्वामिपरीणीतया तद्भगिन्याश्रीश्रीषधमित्रा भिन्ना दत्ता तेन चाजानताश्रीश्रीषधमित्रा व्यन्तरीभूतेनो पयोगदानिनासौ उपलब्धितः समुत्पन्न वैरेण
 प्रत्याख्यान मित्युधिकरणदोषयं कथा भक्तं प्रत्याख्यानं पुराहृदि तत्र च तेन शृगालजीविनं व्यन्तरीभूतेनो पयोगदानिनासौ उपलब्धितः समुत्पन्न वैरेण
 च नवप्रसूतशिवारूपेण खीखीकुर्वता खायमानः शिवोपसर्गमर्गोरिंगं च सोढवान् एव मज्जै रपि रोगः सोढव्यः अथ रोगादि युक्तस्य श्रयनादौ दुःसह
 दृष्टस्यर्गं स्यात् अतः स्वत्यरीषहमाह अचेलगास सूहस्र सञ्जयसूतविस्मयी तेषु सुयमाणस्य दुष्ठा गायविराहणा ३४ श्रायवस्य निवाएणं अडला
 हवद्द वियणा एवं नञ्च नसेवति तंतुजं तणतज्जिया ३५ तपस्विनः संयतस्य दृष्टिषु श्रयमा नस्य दृष्टिर्गात्रविराधना भवेत् कीदृशस्य समयतस्य अचेल
 कस्य वस्त्ररहितस्य पुनः कीदृशस्य रूचस्य तैलाभ्यंगादिरहितस्य यदा शरीरे दृष्टेः कृत्वा पीडास्यात्त दार्किं कुर्यादि त्याह श्रायवस्येति दृष्टतर्जिता

रत्नपत्रात्क वीरद्विजनाश्री म० व० ८२ म० शत

कथिता १६६ [सत्तरस सागराज उक्तीसिण विद्याहिया पञ्चमाए जहन्ने षं दसचिउसगरोवमा १६७] पञ्चमायां नरक एषब्धां धूम प्रभायां अल्पे प्रसूटे
सप्तदशसागरोपमानायाः स्थितिव्याख्याताः जघनेनन तु दशसागरोपमानायाः स्थितिव्याख्याता १६७ (वावीस सागराज उक्तीसिण विद्याहिया
कृष्टीए जहन्ने षं सत्तरससागरोवमा १६८) पठ्यां नरकपृथिव्यां तमः प्रभायां अल्पेप्रसूटे उक्कट्टेन एथिप्रति सागरोपमानि णायुः स्थितिव्याख्याता
जघनेनन सप्तदशसागरोपमानि णायुः स्थितिव्याख्याताः १६८ (तित्तीस सागराज उक्तीसिण विद्याहिया सत्तमाए जहन्ने षं वावीसं सागरोवमा १६९)
सप्तमायां नरक पृथिव्यां तमस्तमः प्रभायां अल्पे प्रसूटे उक्कट्टेन चयस्त्रिंशत् सागरोपमानायाः स्थिति व्याख्याता जघनेनन द्वाविंशति सागरोपमा
नायाः स्थितिव्याख्याता १६९ [जाचिवउ आउठिदं नेरइयाण विद्याहिया सातिसिकायठिदं जहन्ने षं सिसिआभवे १६९] नारकाणां याजघनरोक्कट्टतः णायुः

जहन्ने षं दसचे वउ सागरोवमा १६५ ॥ वावीस सागराज उक्तीसिण विद्याहिया । कृष्टीए जहन्ने षं सत्तरस सागरो
वमा १६६ ॥ तित्तीस सागराज उक्तीसिण विद्याहिया । सत्तमाए जहन्ने षं वावीसं सागरोनमा १६७ ॥ जाचिवउ

पांचमी पृथवी नारकीनीं क्लृप्तो प्रतरि जघन्य दस सागरोपमनो पंचला प्रतरनी अपेक्षादं १६३ जे वली आऊखानीं स्थिति उक्कट्टा कर्णा तीर्थं
करे नारकीनि विखे कृष्टीदं प्रथिवीउ नारकीनी क्लृप्तं प्रतरि जघन्ये साहं तहने तहन्ने जकाय स्थितो जे भणी नारकी भरी नारकीसं नथादं जघन्य
पणे उक्कट्ट पणे कुइ १६४ वावीस सागरोप मनी आऊखानी उक्कट्टा कर्णा तीर्थं करे कृष्टीदं एथिवीदं नारकीनीं पेशरं प्रतरि अथन्य सत्तर साग
रोप मनी पेशरनी प्रतरनी अपेक्षा १६५ तलोस सागरोप मनी आऊखानी उक्कट्टा कर्णा तीर्थं करे सातमी एथिवीद नारकीनीं जघन्ये वावीस साग

स्थितिब्याख्याता सा एष तेषां नारकाणां कायस्थितिर्बधनरीतृकदृश्य व्याख्याता यतोहि नारको जीवोमृत्वा पुनर्नरकाभूमौ गीत्ययति अनन्त गन्धज
 पयागसख्येय यथायुक्तेषु उत्पद्यते पयावरके उत्सद्यते नीत्यद्यते च १७० अथ कालान्तरमाह (अथान्तकालमुक्तौ स अन्तोमुष्टस जहद्विय यिजद मिंस
 एकाएनेरदयाथ तु अन्तर १७१) नारकाणां तु स्वेकायित्वक्ते सति उत्कृष्ट कालस्थान्तर अनन्तकाल भवति जघनरतोऽन्तमुहर्ष कालान्तर भवति
 यदा अनन्तरनरकात् कथिभारकयुगलगाभजपयागमन्त्यादिषु उत्पद्यते तत्र च अत्यन्तदुष्टाभ्यवसायलात् अन्तमुहर्षं प्रायु प्रपात्यमृत्वाऽनन्तरनरके
 उत्पद्यते १७१ [एषसि यत्रधोचेय गन्धधो रसफासधो सखाणा देसधोवाधि विहाणाह सहस्रसो १७१] एतेषां नारकाणां वर्षांती गन्धतीरसत स्रग्धत
 सखानादियतयापि सहस्रसोविधानानि बहवो भेदा भवन्ति १७१ अथ पञ्चेन्द्रियतिरया भेदानाह [पञ्चेन्द्रियातिरिक्त्वाय दुविहाते वियाहिया
 समुच्चिन्नातिरिक्त्वाय गन्धवद् तियातहा १७२] पञ्चेन्द्रियास्त्रियं चो द्विविधा व्याख्यातास्तेके समुच्चिन्नास्त्रियं च सखा गन्धव्युक्रान्ति कास्त्रियंश्च

आउ ठिर्दे नीरुंयाण वियाहिया । सार्तिसि काय ठिर्दे जहन्नुक्कोसिया भवे १६८ ॥ अथत काल मुक्तौ स अतोमुष्टस
 जहन्नय । विजदमि सए काए नीरुदयाणतु अतर १६८ ॥ एषसि वन्नधो चैव ग धधो रस प्रासधो । सठाणा देसधो
 वावि विहाणाह सहस्रसो १७० ॥ पञ्चिन्द्रिय तिरिक्त्वाधो दुविहा ते वियाहिया । समुच्चिम तिरिक्त्वाधो गन्ध वक्क

रोप मनो १६६ अनतोकास उत्कृष्टो अतरमुष्टं जघन्य ङीधै यके प्रापणो नारकोनो काया नारकोनो आतरो मुष्टो १६७ ए नारको वर्षं यतो
 यतो गधधको रसधको फरसधको सखानना आदियधको विधान भेद सहस्र गमे दुर १६८ पञ्चेन्द्रिय तिर्यं च जीव निये विदु भेदे कक्षा तीर्थं

तत्र संसृष्टां श्रुतिश्रय मूढ भावस्त्वेन निर्द्वैता. नि पन्नाः समसृष्टिमाः संसृष्टिमाश्च ते तिर्यक्ष्व समसृष्टिम तिर्यक्षो मनः पर्याप्ति रहिताः सदा संसृष्टिताइव॥ तद्वदन्ति गर्भं व्युत्क्रान्तिका गर्भजासन. पर्याप्ति सहिताः १७२ [दुविहता ते भवे तिविहता जलयरा थलयरा तथा खहयराय बोधव्या तिसिभ्यो सुणहमे १७३] ते द्विविधा संसृष्टिमा गर्भजाश्च तिर्यक्ष्व. पुन ख्रिविधाः बोधव्या. तत् तै विषयं यथा जलचरा. स्थलचरा. तथा खचरा सन्ति एतैतयोपि द्विविधाः गर्भजाः समसृष्टिमाश्च ज्ञेयास्तेषां भेदान् मे मम कथयती यूयं शृणुत १७३ अथ जलचर भेदानाह (मच्छायकच्छभा यागाहायमगरातहा सुं सुमारायबोधव्या पञ्चहाजलयराहिया १७४) एते जलचराः पञ्चधा आख्याताः एतेके मत्स्यामीनाः कच्छपाः कूर्माश्चापि ग्राहास्तं तुकजीवा मकरामहामत्स्याः शिशुमारापि मत्स्यविशेषाः एतेषु पञ्चसु भेदेषु बहूनां भेदानां श्रुतर्भावः यतोहि यावन्तः स्थलजीवास्तावन्त एव जलजीवाः इत्युक्ते. १७४ [लोएगदसेते सर्वे न सब्बल्यवियाहिया एतोकालविभागान्तु तिसिं वुच्छ्व छब्बिहं १७५] ते सर्वे जलचर जीवाः लोकेकदेशे

तिया तथा १७१ ॥ दुविहता ते भवे तिविहता जलयरा थलयरा तथा । खहयराय बोधव्या तिसिं भेए सुणोह मे १७२ ॥

मच्छाय कच्छभाया गाहाय मगरा तथा । सुं सुमाराय बोधव्या पंचहा जलयरा हिया १७३ ॥ लोएगदसे ते सब्बे

करे एक समसृष्टिम विजोगर्भज तिर्यं च मन सहित १६८ विभेदे कख्या ते वली चिहुं प्रकारे दुई जलमाहिंचाले मच्छादि तेजलचर भूमि घाते ह्यपभा दिते थलचर तथा थलि खचर जाणवो खचर आकाशेचालेते हंसादिते जलचरादि जीवनभेद सांभली शिष्य सुभने कहताप्रते १७० गाढलानी जातका क्वानी जाति ग्राहकतांतूया जीव तथा मगर मच्छ याढलानी जाति सुसमार जल वीरजीव जाणवा पाचेप्रकारे जलचर जीव जाणवा १७१ लोके

व्याख्याता जनस्यानेषु एव न तु सवत्र रताऽनन्तर तेषां जलधर जीवानां तु कालविभागाच्च तु विंश वक्ष्ये १०५ [सन्तद्र पप्रणार्द्रया अपक्ववसियाविय
ठिद्र पदससाद्रया सपक्ववसियाविय १०६] ते जलधरजीवा सन्तति प्राप्य प्रवाहभार्गमाश्रित्य अनाद्रयोऽपर्यवसिताय वर्त्तन्ते स्थिति प्रतीत्यभवस्थिति
कायस्थिति धायित्वसाद्रय सपर्यवसिताय सन्ति रति भाव १०६ [इकाय पुव्वकोडी उक्कोसेण वियाहिया आवठिद्र जलयराण अतोमुहुत्त जह
विया १०७] जलधराणां मंतस्यादीनां जीवानां उक्कटिन आयु स्थितिरका पूर्वकोटी व्याख्याता पूर्वस्य तु परिभाष एतत् सन्ति कोटिलक्षवर्गाणि
पट पद्यायकद्वयकोटि वयाधि एतेषु पूर्व भवति जघन्यिका आयु स्थितिरैतेषां अन्तर्मुहूर्त्तं एव व्याख्याता १०७ अथ जलधराणां कायस्थिति

न सव्वत्य वियाहिया । इत्तोकाल विभाग तु तिसि नोक्क चउव्विह १०४ ॥ सतद्र पप्रणार्द्रया अपक्ववसियाविय ।
ठिद्र पहुच्च सार्द्रया सपक्ववसियाविय १०५ ॥ एकाय पुव्वकोडी उक्कोसेण वियाहिया । आव ठिद्र जलयराण अतो
मुहुत्त जहन्निया १०६ ॥ पुव्वकोडी पुहत्त तु उक्कोसेण वियाहिया । काय ठिद्र जलयराण अतोमुहुत्त जहन्निया १०७ ॥

धोदराजने एकदेशे ते जलधरके पर नयो सयत्तोक धोदराजने एतलानतरकालतो विधरो तहनी कहिस्य सादि १ पर्यवसित २ अनादि ३ अपर्यप
सित १०२ प्रवाहु जलधर अनादि के अपयवसित अतपीणके थिति आयो आदि सहित अने पर्यवसित द्विहडो १०३ एक पूर्वनी कोडी उक्कटो
करो तोषं करे आउयानो स्थिति गर्भज समुच्चिर्म जलधर जीवनी अतर मुहूर्त्त जघनी १०४ पूर्व कोडनी उद्ययोकाय थिती तीषको अतर्मुहूर्त्त
उक्कटो करो सत्या पयवोनी काययिति जलधरनी सात आव भव जलधरनी जसधर माहि र्वे प्राणी अतर्मुहूर्त्त जघना १०५ अना कास

माह [पुष्पकीडो पुहत्त तु उक्तीसेण विधाहिया कायठिई जलवराणं अन्तीमुहुत्तं जहन्नया १७८] जल चराणां कायस्थिति रुक्कष्टत. पूर्वकीटि पृथक्कं व्याख्याता यथा जलचरजीवो मृत्वा पुनः पुनर्जलचरयो नी एव उत्पद्यते तदा पूर्वकीटि पृथक्कं यावदुत्पद्यते पृथक्कं द्वाभ्यामारभ्यनवांक यावत् पृथक्कं इति सिद्धान्तांक संज्ञास्ति द्वाभ्यां पूर्वकीटि भारभ्य यावन्नवकीटिं यावज्जलचरो जीवो मृत्वा २ जलचरयो नी उत्पद्यते इत्यर्थः जघन्यतसु अन्तर्मुहूर्त्तं चैव कायस्थिति व्यख्याताः अथ कालान्तरमाह [अथान्तकालमुक्तीसं अन्तीमुहुत्तं जहन्निया विजटमिस एकाए जलवराणं तु अन्तरं १७९] जलचराणां स्वकीयेकायैवके सति अन्यतोत्पद्य पुनः स्वकाये उत्पद्यते तदा कियत्कालान्तरं भवति तदुच्यते उत्कृष्टतीजनन्तं कालान्तरं भवति यतीहि चैज्जलचरो निगीदलेनीत्यद्यते तदानिगीदस्थानन्तकालस्य स्थितिरस्ति जघन्य तसु अन्तर्मुहूर्त्तं चैव कालान्तरं ज्ञेयं १७९ [एएसिंवनश्चोचैव गान्धश्चौरसफासश्चो सय्ठाणादेसश्चोवावि विहाणाइसहस्रसी १८०] तेषां जलचराणां वर्णतीगन्धतीरसतः स्पर्शतः संस्थानादेशतद्यापि विधानानि सहस्र सी भवन्ति १८० अथ स्थलचरभेदानाह [च उष्ययाय परिसपा द्रुविहाथलयराभवे च उष्यया च उब्बिहाउ तं मे कित्तयश्चोसुण १८१] स्थलचराः द्विविधाः चतुःपदाः

अणान्त काल मुक्तीसं अंतोमुहुत्तं जहन्नयं । विजटमि सए काए जलवराणंतु अंतरं १७८ ॥ एएसिं वन्नयो चैव गंधश्चो रसफासश्चो । संठायणा देसश्चो वावि विहाणाइं सहस्रसी ॥ १७९ चउष्ययाय परिसपा द्रुविहा थलयरा भवे । चउ

उत्कृष्टो निगीदमाहि जाइती अनंतु अंतर्मुहूर्त्तं जघनेर पीतानीकाय मुंकी जाइते वली फिरीने जलचरनी जसचरमाहि आविते अंतर १७६ ए जल चरने वर्णयकी गंधयकी रसयकी फरसयकी संस्थानना आदेशयकी विधानादेशसहस्रगसे १७७ चार पगनाते चतुःपद हषभादि उरुमुद्रं चालेते मुज

परिसप्ताय भवेयु चत्वार पदा येषां ते चतु पदा परि समन्तात् सर्पन्तीति परिसर्पा तत्र चतु पदा चतुर्विधा सन्ति तान् चतुर्विधान् ते नम कप्रयत्नस्य ऋण १८१ (एगसुरादुसुरार्थो गण्डीपयसण्यया इयमार्द्र गोणमार्द्र गयमार्द्रसीहमार्द्रो १८२) एकसुरा द्विसुरा गण्डीपदा सनसु पदा एक सुरस्यार्थोपलक्ष्य विद्येपो येषां ते एकसुरास्ते च ऋणादय एय ही सुरी येषां ते द्विसुरा गोणार्द्रयोवहीयर्द्रियो गण्डीकमलमध्यस्य कर्षिकालक्ष्यदा येषां ते गण्डीपदा गजादय सहनखैर्वर्त्तन्तीरिति सनसासनखापदा येषां ते सनखपदा सिद्धादय सण्ययादिति प्राकतत्वात् १८२ अथ परिण्योगाह [भूवरगपरिसप्ता परिसप्ता दुविधाभवे गोहार अहिमार्द्रया इकिक्का शिगहाभवे १८३] परिसर्पा जीवा द्विधियाभवेयुस्तेके भुजाभ्या परिसपन्तीति भुजपरिसपा उत्सा सर्पन्तीति उत् परिसपा तत्र गोधानकुल मूषकादयो भुजपरिसर्पा अर्थेय उत् परिसर्पा एते एकैपि पत्निकथाभवेयु १८३ अथै तेषां क्षेत्रविभागमाह [सोपगदिसेते सन्ने न सस्य पियार्हिया इत्तोकाखियिभागस्तु ते सिनुष्य चवच्चिह्न १८४] ते सर्वे स्थसवरा

पथा चउच्चिधापोतंसैकिसयभोसुण १८०॥ एगसुरादुसुराश्चे व ग ङीपय सनण्यया। इयमार्द्रगोणमार्द्र गयमार्द्र सीह माद्रणो १८१। भु उत्सा परिसप्ता परिसप्ता दुविधा भवे । गोरार्द्र अहिमार्द्रया एकैका योगहा भवे १८२ । सिपग

परिसपनोच्चादि प्रमुख विषय प्रकार प्रसवत इये चतु पद विह्व प्रकारे ते सुभक्ते कोर्त्ति कहतां साभल हे सीय १०८ एक सुरीह्ने त एक सुरा येनूर्द्र सुराहे ते विष्यु रा २ गढी कमलकार्यका सरीसो पगत गढी पद नखसहित पगते सनखपद योहादीसुर १ अयमार्द्रोपे सुरर गजस ट पादे गढीपद १ गोष पादि स नखपद १०८ भुज ऋणिवरहदये परिसर्पवाले इम सर्प विह्व भेदे इये गोष उदरा पादि सर्प पादि ते एकैका अर्कप्रकारे इरे १८०

भुजपरिसर्पाद्यलोकैकदेशे व्याख्याता. सर्व्वं न व्याख्याता. इतोऽनन्तरं कालविभागं स्थलचराणां चतुर्विधं वक्ष्ये १८४ (सन्तदं पप्रणादया अपञ्जवसि
यावियठिर्द्दं पृढुच्चसाईया सपञ्जवसियाविय १८५) सन्तति प्राप्यते यलचरा अनादयोऽपर्यवसिताद्यापि स्थितिं भवस्थिति प्रतीत्य प्राथित्यसादय
सपर्यवसिताद्यापि कर्त्तन्ते १८५ (पलिश्रीवभाद्रं तिन्नेश्रो उक्रोसेण वियाहिया आठठिईयलवराणं अन्तोमुहुत्तं जहन्नव १८६) स्थलचराणां उत्कृष्टिन
त्रीणिपक्षोपमान्यायुः स्थितिव्याख्याता जघन्यतः स्थलचराणां अन्तमुं हर्त्तं मायुं स्थिति १८६ अथ स्थलचराभुत्वा स्थलचरैष्वे वीत्यवर्त्ते तदाकियत्कालेन
उत्पद्यन्ते तां कालस्थिति भाह [पलिश्रीवभाद्रं तिन्ने उ उक्रोसेणं तु साहिया पुव्वकीडो पुहत्तेणं अन्तोमुहुत्तं जहन्निया १८७] स्थलचराणां स्वकीये
काये एव समुत्पद्यमानानां त्रीणि पक्षोपमानि पूर्वकोटि पृथक्ते न साधिकानि उत्कृष्टे न कायस्थितिव्याख्याता जघन्यत्काकायस्थिति स्तेषामन्तमुं हर्त्तं

दसे तेसर्व्वे न सव्वत्थ वियाहिया । इतो काल विभाणं तु तेसिं वाक्खं चउव्विहं ॥ १८३ सतदं पप्रणाईया अप
ञ्जवसियाविय । ठिद्दं पृढुच्च साईया सपञ्जवसियाविय ॥ १८४ पलिश्री वभाओ तिन्नेश्रो उक्रोसेण वियाहिया ।
आउठिर्द्दं यलवराणं अंतोमुहुत्तं जहन्निया ॥ १८५ पलिश्रीवभाओ तिन्नेश्रो उक्रोसेणं तु साहिया । पुव्वकीडो पुह

लोक चौरराजना एकदेशने भागे ते सर्पके नथी सधले कथा भगवंत एतला कथा नन्तरकालनी विभाण विवरो ते यलचर चिहुं भेदे कहसं १८१
प्रवाहमार्गे यलचर अनादिक्के अपर्यवसित अतपिण धिति आश्रीसादि अने सपर्यवसित केहपणि १८२ पक्षोपमनी चिहुनी स्थिति उत्कृष्टी कही
तीर्थं करे आउखानी स्थिति यलचर जीवनी अंतमुहुत्तं जघनना १८३ पर्योपम चिहुं नीधिति उत्कृष्टी कही तीर्थं करे पूर्वकोटि पृथगात्वे अधिक

मेव उक्ता यताहि विपत्तौपमायुष स्वसवरा पूर्वजोव्यायुषां समाप्तभवग्रहणानि कुर्वन्ति पक्षेन्द्रियनरतिरिथां अधिकनिरन्तरभवस्याऽऽसथ
योस्ति १८७ अथ कालातरमाह [कायठिर्द्वयलयराण अन्तर तैसिम भवे काल अणान्तमुक्रोस अतीमुहुत्त जहन्विद्य १८८] (विजटमिसएफाप्यलयराण
रु अन्तर एएसिवन्नश्रीवेय गन्धश्रीरसफासश्री सखटाणभेयश्रीवायि पिहाणा इसहस्रसो १८८) युगम स्वसवराणा स्वकीयेकायेल्लो सति धनस्यात्तादि
मर्थे उत्पद्यधेत्स्यलचरैपु पुनरायाति तदा उत्कृष्ट धनान्तकाल स्यान्तर भवति जघन्य तयातमुहृत्तां कालस्यान्तर भयति १८८ एतेषा स्वसवराणां
यर्थं लोगन्धतो रसत स्वयंत सस्थानभेदतथापि सहजश्रीविधानानि भेदा १८८ अथ स्वचरभेदानाह (धम्ये उत्तीमपक्वीय तद्रथासमुगपक्वीय विद्यय
पक्वीय योधव्या पक्विण्योय च उब्बिडा १८०) पक्षिण चतुर्विधा बोधव्या धर्मपक्षिणधर्म चटिकाया रोमपक्षिणो राजहसाया समुद्रपक्षिण
समुद्रकाकार पक्षयुक्ताभावयोत्तर पर्यताहृद्विर्त्तिन यिततपक्षिणो ये सर्वदायिस्कारित पक्षा एव तितल्लि १८० [लोएगदेशे ते सर्वे न सव्यत्वविद्ययाहिया

तेषु अतमुहुत्त जहन्निद्या । १८६ कायठिर्द्वयलयराण अतर तैसिम भवे । अणत काल मुक्रोस अतीमुहुत्त जह
न्नय ॥ १८७ विजटमिस एफ काए थलयराणतु अतर । एएसि वन्नश्री वेव गधश्री रस फासश्री । १८८ सठाणा देसश्री
वायि विहाणाइ सहस्रासो चर्मो उ लोम पक्वीय तद्रथा समुगा पक्विद्या ॥ १८८ विद्यय पक्वीय बोधव्या पक्वि

भयो भय ७ तथा ८ लागता करे ते भयो अतमुहुत्त जघनरा १८४ कायस्थोति थलवरती अतती तैवर्ता दुवेतो काल अतती उत्कृष्टादि अतमुहुत्त
जघनरा पक्षे १८५ कावो प्रापणोकाया थलवरने आतरो चर्मरूपपाखते चर्मपयो चर्मचेडजाति रोमरूप पक्षिणे मोरपीखवीजो पाखवाधी ऊडे ते समुगा

द्रुतीकालविभागात् तेषिबुक्त्वा च उच्चिहं १८१] ते सर्वे खचरातीकैकदेशे व्याख्याताः सर्वत चतुर्दशरत्नात्मकीन सन्ति द्रुतीजनन्तरं तेषां खचराणां चतुर्विधं कालविभागं ब्रूयते १८१ [सन्तद्रूपप्रणार्द्रया अपञ्जवसियाविय ठिर्द्रं पडुच्चसार्द्रया सपञ्जवसियाविय १८२] सन्ततिं प्राप्यते खचरा अनादयोऽप यवसिता अपि वर्त्तन्ते स्थितिं प्रतीत्यते सादयः सपर्यवसिता अपि सन्ति १८२ (पलिश्री वमसभागी असंखिज्ज यमीभवे आउठिर्द्रखह यराणं अन्ती सुहुत्तं जहन्निथा १८२) खचराणां आयु स्थिति पत्नीपमस्य असख्येतमी भागी भवति जघनिराका आयुः स्थितिरन्तर्मुहूर्त्तं भवति १८३ अथ खच राणां आयुः स्थितिः पत्नीपमस्य असख्येय तमीभागी भवति जघनराका आयुः स्थितिरन्तर्मुहूर्त्तं भवति १८३ अथ खचराणां कायस्थिति कालान्तरं हाभ्यां गाथाभ्यां वदति [असंखभागीपलियस उक्तीसेणसाहिश्री पुब्बकीडी पुहत्ते णं अन्तीसुहुत्तं जहन्निथा १८४] कायठिर्द्रखहयराणं अन्तरं ते सिमं

णोय चउच्चिहा । लोएगदसे तेसव्वे न सव्वत्थ वियाहिथा ॥ १८० संतद्रूपप्रणार्द्रया अपञ्जवसियाविय । ठिर्द्रं प डुच्च सार्द्रया सपञ्जवसियाविय ॥ १८१ पलिश्रीवमसभागी असंखिज्जद्रमी भवे । आउ ठिर्द्रं खहयराणं अंतीसुहुत्तं जहन्निथा ॥ १८२ असंखभागी पलियस उक्तीसेण वियाहिश्री । पुब्बकीडी पुहत्ते णं अंतीसुहुत्तं जहन्निथा ॥ १८३

पक्षी कहीये १८६ विततप्रीहली पंखे ऊडि ते वितत पंखी जाणवा पखी चारप्रकारना लोकने एक देशे सधला नथी सधले भगवते कथा १८७ प्रवाहमार्गं आश्री ए पंखी अनादिहे १८८ पखीपमनी अशयथा तमी भाग उगुक्कष्टी आउखानि स्थिति खचर पंखी आनी अंतसुहुत्तं जघनीय १८८ असंख्या तमीभाग पखीप मनी जगुक्कष्टी साधिक भाभेरी पूर्वं कीड पथकल पूर्वकीडिवा लाभव १ करी असंख्याता आउखानाभव करेती अंतर्मुहूर्त्तं

भवे अणतफालमुकोस अन्तीमुहुत्त जहन्नया १८५) खचराणां कायस्थिति पल्लोपमस्य असस्त्रियतमीनाम पूर्वकीटि पृथक्त्वेन साधिकस्य भवति जघ
 निनाकाकायस्थितिरन्तर्मुहूर्त्तं भवति तेषां खचराणां कालान्तरं च उत्कृष्टतीजन्तकालं यावद्भवति जघननात्तत्र अन्तर्मुहूर्त्तं भवति १८५ (एएसिवन्नश्री
 खच गन्धर्वोरसफासश्री सपुत्राणादिसश्रीयावि विहाणाद् सहस्रसो १८६) एतेषां खचराणां वर्णतीगन्धर्वोरसत स्वयंतं सख्यानदियतयापि सहस्रसो
 विधानानि भवन्ति १८६ [मणुयादुविहाभियात् तमेकिसयश्रीसुण समुच्छिन्नायमणुया गन्धर्वक तियातहा १८७] मनुजाद्विषय भेदास्त्वन्ति तान् भेदान्
 मेकोर्त्तयतस्व शृणु मनुजा मनुष्या समुर्द्धिमास्तथागर्भेषु तृकालिका गर्भजा समुर्द्धिमाननोरहितायतुदंश स्थानेपूत्यन्वा १८७ (गन्धर्वकतियाजोत्
 तियिहातेविद्याहिद्यां श्रकभककामभूमय अन्तरदीवगातहा १८८) ये तु गन्धर्व्युत्क्रातिकास्ते मनुष्यास्त्रिषिधाव्याख्यातास्ते के अकर्मकर्मभूमिना अन्तर

कायठिद्द खचयराण अतर तैसिमभवे ॥ कालअणतमुकोस अ तीमुहुत्त जहन्नय १८४ ॥ एएसिवन्नश्रीचे व ग धश्री रस
 फासश्री सठाणादिसश्रीवावि विहाणाद् सहस्रसो १८५ ॥ मणुयादुविहाभेश्रीतेमेकिसयश्रीसुण । समुच्छिन्नायमणुया
 गन्धर्वकतियातहा १८६ गन्धर्वकतियाजोत्तियिहा तेविद्याहिद्या । अकर्मककामभूम य अतरदीवगा तहा १८७ ॥ पन्नरस

जघनी १८० कप्रास्थिति खचर पखीनो कही अतरते खचरपखीने एदुवे अन्तकाकालनो अतर उत्कृष्टो निगोदमाहि अतर्मुहुत्तं जघनी १८१
 खचरपखीनो वर्णयकी गधरसयकी सख्यानना आदिय यकी विधान भेद सहस्रगमे हुवे १८२ मनुष्य त्रिहु भेदहुद् ते मनुष्य क्वहता प्रति सभिसि
 हे शिष्य समुक्लिम मन विनाहोद् मनुष्य श्रीदभेदे होवे उपजे मन सहित ते गर्भजा तथावली १८३ गर्भजा मनुष्य जघतिविहा त्रिहु भेदे ते क्वहा

दोषि २ योजनगत वयायामविस्तरायां जत्रण समुद्रमति कल्पस्थितासु षट् षट् अन्तरद्वीपा सन्ति ते च द्वीपाश्चतुर्भिर्गुणित्वाश्चतुर्विंशति सख्याका भवन्ति ततश्च आद्यन्तद्वीप चतुष्कसहितता अष्टाविंशतिर तत्रद्वीपा सन्ति एष शिखरिणि पर्वतेषु अष्टाविंशति द्वीया सर्वसाभ्याश्चेथा भेदेन अपि यथ तत्वात् सूत्रेष्टाविंशति सख्याकथन विरोधायन भवति तेषु अन्तरद्वीपेषु युगले धर्मिकावसन्ति तच्छरीरमानादि कथ्यते अष्टधनु शतीच्छाया पश्चात्सत्याभागायुष चतु षष्टि षट्करच्छा चतुर्विंशतिवसाहारसिं लापवन्त एकोनाशीति दिन कृतापत्यपालना तेषा द्वीपाना नामायामविस्तरपर व्यादि विचारसु क्षेत्र समास दृश्यते कालोचयेय १८८ समूर्द्धिमाना हि एष एव भेद यत्कर्म भूमि समुत्पन्नाना गर्भजानां यातपितृदिपु चतुर्दश भेदे सम्भवन्ति अद्भुत्तास ख्येयभागमावायगाहनास्ते सर्वे मनुष्या समूर्द्धिमागर्भजाश्च लोकैकदेशेभ्योव्याख्याता २०० [सन्तर पथशादया अपञ्जवसियाविय ठिर पदचसादया सपञ्जवसियाविय २ १] (पलिश्रीवमाद्रतिशे श्रीशक्तीशेषविद्याहियाभावठिर्दमणुप्रापश्चन्तीमुहुत्त जहसिया २०२) मनुजाना गर्भजानां दोषि पलापमानि उत्क्रष्टेन प्राय स्थिति व्याख्याता जघनराका च अन्तर्मुहुत्त स्थितिश्च य २ २ अथ कायस्थिति भन्तरकाल चाह दाभ्या गाथाभ्या

आहिश्रीो । लोगश्चा एगदेसमि ते सञ्चे वियाहिया ॥१८८ सतद्र पण्ण णाईया अपञ्जवसियाविय । ठिद्र पडुच्च सार्इया
 सपञ्जवसियाविय ॥ २०० पलिश्रीवमाद्र तिन्निश्रीो उक्कोसेण वियाहिया । याउ ठिई मणुयाण अ तोमुहुत्त जह

गते पिये ते सय समूर्द्धिम गर्भज कथा १८६ प्रपाहमार्गं प्राप्नो अनादिदि के अतपीण्छे धिति प्राप्नो आदि याहित सपर्यवसित सातपण्ण
 निये १८७ पत्योपम त्रिहु नो उत्क्रष्टी कश्चो प्राकखानी स्थिति गर्भज मनुष्यनी अतर्मुहुत्त जघनरा गर्भजानो समूर्द्धिमनो जघनरा अतर्मु

दीपगात्र अकर्मभूमिमाः अकर्मभूम्युत्पन्नाः कर्मभूम्याः कर्मभूम्युत्पन्ना तथा अन्तरद्वीपगा १६८ (पन्नरसतीस इविहा भेया अष्टावीसई संख्या
कमसीतीसिं इदएसाविधाद्विधा १६९) इति अनुनाप्रकारेण एतेषां पूर्वोक्तानां कर्मभूमि अन्तरद्वीपानां संख्याक्रमशीलनुक्रमेण व्याख्याता साका
संख्याद्वयते विधे शब्दस्यो भयत सख्योऽप्येयः पञ्चदशविधाः कर्मभूमिजाः भरतैरावत महाविदेहानां प्रत्येकं पञ्च २ संख्याकत्वात् पञ्चदश संख्यात्वं
भवति त्रिंशद्विधा अकर्म भूमिमाः अत्र हेमवत हरिवर्षरथकौरथवत देवकुरुत्तरकुरुत्पायाणां षण्णामपि अकर्मभूमिनां प्रत्येकं पञ्चसंख्याया गुणितानां
त्रिंशत् संख्यात्वं सम्भवति इहचक्रमशरत्युक्तौपि गणनावसरे क्रम भङ्गोविहितः पूर्व अकर्मभूमि संख्यां विहायकर्मभूमि संख्या प्रतिपादिता
तत्कर्मभूमिजानां मनुष्याणां मुक्ति साधकत्वेन प्राधानाख्यापनात् पूर्व कथनं न दोषायति तथांतर द्वीपानां अष्टाविंशति भेदारुचांतर द्वीपाः
सुप्त द्विमवति पर्वते पूर्वस्यांदिशि अपरस्यांदिशि च जम्बूद्वीपवेदिकायात्परतः प्रत्येकं द्वे द्वे विदिगभि मुखेविनिर्गतेस्तः तद्यथाः पूर्वस्यां एकादंशा
नाभि मुखीदंशा द्वितीया आग्नेयभि मुखी पश्चिमायां एकानैऋत्याभिसुखी द्वितीया वायव्यभि मुखी एवं च तस्यषु विदिषु अभिसुखीषु दंश्रासु प्रत्येकं

तीसद्द विहा भेया अष्टावीसद्द । संख्याओ कमसी तीसिं इद्द एसा विधाद्विधा १६८ ॥ संमुच्छिमाणएसिव भे उहोद्द

तीर्थंकरे करसणादि व्यापाररहित ते अकर्मभूमि करसणादि व्यापार ते कर्मभूमि अतर समुद्रने मध्ये दीप तेह नाम मनुष्यते अंतरद्वीपना मनुष्य १६४
भरत ५ ऐरवत ५ महावीदेह ५ एव कर्मभूमि १५ हेमवत आदी अकर्मभूमि रागरूप द्वीपादि अंतर द्वीपनाभेद २८ संख्याता अनुक्रमे ते मनुष्यनी
एणे प्रकारे कही तीर्थं करे १६५ समुच्छिम १४ भेदनी एहीज गर्भजनी भेद कर्म भूमियादिक भेद कथा भगवते लीक १४ राजना एकदेश विभा

तथा २०६) दिवायतुधिधा उक्ता भान् भेदान् क्रोसांयती मे ममत्व ऋणु भीमेयकव्यन्तरा ज्योतिष्कास्तथा वै मानिका भूर्मीभवा भीमेयका भवत
 वासिनोदेवा रत्नप्रभाया इत्याग भयोति सहश्रीचर योजन लक्षपिण्डाया उपर्येक योजनमवगाथा अथथैक योजनसहय मुक्तामथोऽष्टसप्तलुत्तर
 योजनलक्षे भवनवासिना च मरेन्द्रादि देवानां भवनानि सन्ति १ वायव्यमन्तरसि प्रापत्ताहिविधाणि अन्तराणि निवासस्थानानि निरिक्त्वरिवरादीनि
 वेपा तेव्यन्तरा २ ज्योतयन्ते रति ज्योतिषि विमानानि तत्रि वासिनोदेवा ज्योतिष्का ३ विप्रयेण मानयन्त्युपशुद्धन्ति सुकृति नो यानि रति विमा
 नानि श्रेणु भवा वैमानिका तथेति समुधये तेषा भयोत्तरभेदानाह [दसहाउ भवणवासी अट्टहा यणचारिणी पञ्चविहा जोर सिया दुविहा वैमाधि
 यातहा २ ७] दशधा एव भवनमासिन तु शब्द एवाथै अष्टधावनचारिण वनेपु क्रोडारसेन चरितु शील येषां ते वनचारिणीव्यन्तरा पञ्चधाज्योतिष्का
 तथा वैमानिकादिधा २०७ तानेवनामत आह [असुरा १ नाग २ सुवचा ३ विज्जू ४ अग्नीय ५ आहियादीयो ६ दहि ७ दिसा ८ वाया ९ धणिया १०

वाणमत र जोद्रस वैमाणिया तथा ॥ २०५ दसहाथो भवणवासी अट्टहा वणचारिणो । पचविहा जोद्रसिया दुविहा
 वैमाणिया तथा ॥ २०६ असुरा नाग सुवन्ना विज्जू अग्नीय आहिया । दीवो दहि दिसा वाया धणिया भवणवा ।

नालव्य तर ज्योतिवत तेषां तिथी विप्रये भोगये सुकतनाफलतेवैमानिक सौधर्मादि २०२ दसे प्रकारे भवनवासी भवनपति अठि प्रकारे य तरदेवता
 । पचि प्रकारे ज्योतिपी विह्व प्रकारे वैमानिक देवता तिम २०३ असुरकुमार १ नागकुमार २ सुवर्णकुमार ३ विद्युतकुमार ४ अग्निकुमार कद्या
 भगवते ५ दीपकुमार ६ उदधिकुमार ७ दिसि कुमार ८ वायुकुमार ९ स्तनति कुमार १ एभवनवासी भवनपति २ ४ पिशाच १ भूत २ पद्मवली ३

[पलिश्रीवभाद्रं तिन्री श्री उक्तीसेणं तु साहिया पुब्बकीडीपुहत्तेणं अन्तीमुहत्तं जहन्निया २०३] (कायठिई मणु आण अन्तरत्ते सिमभवे अणतकाल मुक्तीसं अन्तीमुहत्तं जहन्नियं २०४) मनुजानां गर्भजानां तीणि पलीपमानि पूर्वकीटि पृथकी न साधिकाणि उक्कट्टेन कायस्थिति व्याख्याता जघन्यिकाधान्तमुहत्तं स्थिति र्थाख्याता तेषां गर्भजानां मनुजानां कालस्थान्तरं उक्कट्टं अन्तकालं जघन्यकां अन्तमुहत्तं कालान्तरं ज्ञेयं २०४ [एएसिं वन्नश्रीचेव गन्धश्रीरसफासश्री सख्ठाणदिसश्रीवावि विहाणाइ ससससी २०५] एतेषां संभूर्दिमगर्भज मनुजानां वर्णतीगन्धतीरसतः स्वर्गतः संस्थानदिशतथापि सहस्रसो विधानि भवन्ति २०५ अथ देवानाह (दिवा चउब्बिहा वुत्ता त मे कित्तयश्रीसण भोमिज्जावाण मन्तर जोइ सवेमाणि या

न्निया ॥ २०१ पलिश्रीवभाउ तिन्री श्री उक्तीसेणं तु साहिया । पुब्बकीडि पुहत्तेणं अन्तीमुहत्तं जहन्निया ॥ २०२ काय ठिई मणुयाणं अणतरं तेसिमं भवे । अणत काल मुक्तीसं अन्तीमुहत्तं जहन्नयं २०३। एएसिं वन्नश्री चेव गंधश्री रस फासश्री । संठाणा दिसश्रीवावि विहाणाइं सहस्रसो । २०४ दिवा चउब्बिहा वुत्ता ते मे विक्तयश्री मुण । भोमिज्जा

हत्तं १८८ पृथ्योपमानी विहुं नी उक्कट्टी कही तीर्थं करे देवे पूर्वकीडी पृथुकत्व ८ लग्गी सात्तभव पूर्वकीडीयी करीने पण्णुं आशु भोगवे पूर्व पृथुकत्व ते अंतमुहत्तं जघनरी १८८ काया स्थिति मनुयनी जह भणी तेहनी तेह मांदि ७ । ८ भय रहि अंतरी तेहनी मनुयने कहीस्ये अनंताकालनी उक्कट्टी अंतरनि गोदमांदि जाइ तुं अंतमुहत्तं जघनरा २०० एमनुयना वणं थकी गंध थकी रस थकी फरस थकी संस्थानना भेद थकी विधान भेद सहस्रगमे २०१ देवता चिह्नं भेदे कक्षा भगवते ते मुभने कसतां प्रति सांभलि हे गिय थूमि उपका ते भूमिज्ज भयपपति थिथिथ पर्वतने अंतरे उप

कष्पाख्यातद्विवय २११] सु पुनर्धर्मानिकायेदेवास्ते द्विविधाभ्याख्याता कस्यादेवलोकान् लपगच्छन्तीति कक्षीपगा हादग देवलोकस्या कक्षीपगा
 च पुनस्तथैवकल्यातीता कक्षान् अतीता इति कल्यातीता नवधैवेयकपक्षानुत्तरविमानस्या एव वैमानिकाद्विप्रकाराज्ञातव्या २११ अथ कक्षीपगतानां
 नामान्याह (कक्षीपगावारसहासोदगीसाणगातहा २ सण कुमारमाहिदा ४ वभलीगाय ५ ललगा ६ २१२) [महासुका ७ सहसारी ८ आणया ९
 पाणया १० आरण ११ अणुया १२ चिव इद्रकक्षीपगासुरा २१३] शुभ्र कक्षीपगा हादगथासु धमानाम इन्द्रस्य सभाऽस्मिन्नस्तीति सोधर्म प्रथमकस्य
 एव इगानोद्वितीयकस्य सोधम्मथ इगानथ सोधर्मगानी ती गच्छन्ति प्राप्नुवन्तीति लातगा २१२ महासुके भयामहाशुका सहस्यारभया साहस्यार
 धानतभया धानतास्त्रया प्राणतभवा प्राणता अरणेभवा आरुणाथ अच्यते भया आच्युताथ आरुणाच्युताइति अमुनाप्रकारण हादगविधा कक्षीपगता
 सुराश्चेया २१३ (कष्पाख्यायजेदेवा द्विविधातेविधाहियाने विजाणुत्तराचेव गेविजानवविहातहि २१४) च पुनस्ते कल्यातीतादेवास्ते द्विविधा भ्याख्याता

तेदेवा दुविहा ते विधाहिया । कक्षीपगाय बोधव्या कष्पाईया तद्विवय ॥ २१० कक्षीपगा वारसहा सोहर्मी सा
 णगा तहा । सणकुमारमाहिदा वभलीगायलतगा २११ ॥ महासुकामहस्यारा आणया पाणयातरा । आरणा अच्युया

कस्यमयादिद्र ३ अ सामान्यादिकनी व्ययस्यार्त कस्योपगतवार देवलोकना देवताकस्ये अतिक्रमीधर्त्ते इद्र सामानयादि रहित तं कल्यातीता ९ येदेक
 पाथ अणुसरना २०७ कल्प देवलोक्रे जपना देवता वारि प्रकारे ते कहा सो धम्म देवलोकना १ इसाण देवलोकना तिम २ सनरकुमार देवलोकना ३
 भाहेद्र देवलोकना ५ यद्वा ५ लातक देवलोकना ६ २०८ महासुके देवलोकना ७ सहस्यार देवलोकना ८ आणत देवलोकना ९ प्राणत देवलोक १०

भवन्वासिणो २०८] एते भुवनवासिनः कुमार प्रख्याताः उच्यन्ते यती हि एते कुमारवत् वैषभापायस्त यानवाहन क्षीडनानि कुर्वन्ति अतएत सर्वे देशाधि
कुमारान्ताः तैवधा असुरकुमारनागकुमारवियुत् कुमार अन्ति कुमारद्वीप कुमार उदधि कुमारदिव् कुमार वायु कुमारस्त्रानित कुमार एतेनाश्रतः
आख्याताः ८ अथ व्यन्तरदीदानां नामान्याह (पिसाय १ भूया २ जवलाय ३ रक्वसा ४ किन्नराय ५ कि पुरिसा ६ महीरगा ७ गन्धर्वा ८ एवमष्टप्रकाराः व्यन्तराज्ञेयाः
वाणमन्तरा २०९) व्यन्तरा अष्टविधा पिपाच १ भूता २ यक्षाश्च ३ पुनराक्षसा ४ किन्नराश्च ५ किं सुरपाः ६ महीरगा ७ गन्धर्वा ८ एवमष्टप्रकाराः व्यन्तराज्ञेयाः
अथ ज्योतिष्कानां भेदान् नामतश्चाह (चन्द्रसूराय नक्षत्राणा गह्यताराणा तथाठिया विचारिणो चैव पञ्चस्राज्ञोद सालवा २१०) ज्योति रालया ज्योति
रालयोऽहो वेपां तैज्योतिरालयाः ज्योतिष्कादेवाः पञ्चधासन्ति धृति श्रेयस्तेज्योतिष्कादेवाः ठियाइति स्थिराः मनुष्यचैवायसि ज्योतिष्कान्तेपञ्च स्थिरा
अचलस्वभावाः मनुष्यचैवान्तर्वन्ति नोहि श्रेयपर्वतस्य नित्यं प्रादक्षिण्य चारिणस्तेपञ्च धाज्योतिष्काज्ञेयास्तेचान्नीचन्द्रा १ सूर्याथ २ नक्षत्राणि ३
गह्य ४ स्तारागणा ५ प्रकीर्णकतारकासमूहास्तथा ज्ञेया २१० अथ वैमानिकानां भेदानाह [विमाणियायो जेदेवारुधिरात्तैवियास्त्रिया कर्पोवगाय योध्या

सिणो । २०७ पिसाय भूया जवलाय रक्वसा किन्नराय किपुरिसा ॥ महीरगाय गंधर्वा अष्टविधा वाणमन्तरा २०८
चंद्रा सूराय नक्षत्राणा गह्य तारागणा तथा । ठिया विचारिणो चैव पंचस्रा जेद्वभालया २०९ । वैमाणियायो

राजस ४ किन्नर ५ किंपुरुष ६ महोरग नामा ७ गंधर्व ८ एश्राठि प्रकारेव्यंतर २०५ चंद्रगा १ सूर्य २ नक्षत्र ३ गरु ४ ताराणा समूहपत्नी अदी
द्वीप वाहिर ते थिर अदीई द्वीपमाहि चाले तिणे चारी पांचे प्रकारे ज्योतीनीनां ठांस २०६ वैमानना यामीने वैमानिक टिगता ते थिरुं प्रकारे कक्षा

यद्य

भाषा

मध्यमा मध्यस्था उपरितमा मध्यमा अष्टमर्षे वियकदेवा २१६ अथ नवमर्षे वियक देवानां नामोच्यते उवरिमा उवरिमाचेय इदमे विज्जगासुरा च पुनरुपरिसोपरिमा उपरि स्थितिकापेक्षया उपरि मोपरिमा नवमर्षे वेय देवा इति अमुना प्रकारेण नवमर्षे वियका सुरा व्याख्याता अथातुत्तर विनानान्याश्च विजया वलयताय जयता अपराजिया २१७ [सब्वट्ट सिद्धिगाचेय पचहाणत्तरा सुरा इद्वेमाणिया एए णेगधा एयमारुओ २१८] विजया विजय विमानयासित्त विजयन्ते विविधहेतून् विजया धु यत्ति तथा वैजयन्ता तथा अपराजिता अपरै इदय धिन्नहेतुभि यदुभि अजिता अपराजिता पुन सयार्थे सिधका सर्वेण्य सिद्धा इयते सर्वाथसिद्धा सयार्थसिद्धा एष सर्वार्थसिधिका इति अमुनाप्रकारेण एते पञ्चधु यणुत्तरादेवा एयमादिका व्याख्याता इदम देवलोकेभया नवमर्षे वियकभया पञ्चानुत्तरभया सुरापयमारुयोद्धेया चतुरणीति स्यात्ति सप्तनवति

मज्झिमा २ चैथ मज्झिमा उपरिमा तथा । उपरिमा हिट्टिमा चैव उपरिमा मज्झिमा तथा २१५॥ उपरिमार चैथ इद्व गेवेज्जगा सुरा । विजया वलयताय जयता अपराजिया २१६ ॥ सब्वट्टसिद्धिगा चैव पचहा गुत्तरा सुरा । इद्व विमाणिया एए णेगधा एव माइओ २१७ ॥ लीगय्य एग देसमि ते सब्बे परिकित्तिया । इत्तो काल विभागा तु तेसि

अपेथाद ऊपरसा मध्यम त्रिकनो अपेथाद हेठिला उ था २११ मध्यत्रिकनो अपेथाद मध्यविधासानो पाचमो देवता मध्यत्रिकनो अपेथाद ऊपरि जोकराणा देवता उपरिथा त्रिकनो अपेथाद हेठलो सात्तमार देवता उपरिल्लाट्टकनो अपेथाद मध्य विधासानो षाठमाणा देवता २१२ ऊपरिल्ला त्रिकनो अपेथाद ऊपरसा नवमाना देवता ८ एणे प्रकारे नवमर्षे वियकदेवता ९ विजयविमानना १ वलयत विमानना २ जयत विमानना ३ अथ

श्रौवेयका अनुत्तराद्य तत्र श्रौवेयका नवविधा तत्र श्रौवालीक पुरुषस्य तयोदशरज्जात्म स्थानीय प्रदेशस्तत्र श्रौवायां अतीथ श्रौभाकरण हेतव
 आभरण भूतुग्रैवेया देवावासास्तत्र भवा देवाग्रैवेयकास्ते नव प्रकाराज्ञेयाः २१४ तेषां श्रौवेयाणां नामानि (ह्रिडिमा ह्रिडिमा चैव १ ह्रिडिमा
 जिह्मातहा २ ह्रिडिमाञ्च वरिमाचैव ३ मज्जिमाह्रिडिमातहा ४ २१५) (मज्जिमा मज्जिमाचैव ५ मज्जिमा उवरिमातहा ६ उवरिमाह्रिडिमाचैव उवरिमा
 उवरिमाचैव ७) उपरितन षट्कापेक्षया प्रथमेषु अधस्तना अधस्तना चैव पद पूर्णे १ प्रथमश्रौवेय देवाः १ अधस्तनाच्च मध्यमाच्च अधस्तनामध्यमाः १
 द्वितीयश्रौवेयदेवाः २ तथा अधस्तनोपरितनाः तृतीयश्रौवेय देवाः ३ तथा मध्यमाधस्तनाः मध्यस्त्रिकापेक्षया अधस्तनाद्यतुर्धश्रौवेयदेवाः २१५ [च
 पुनर्मध्यमाः मध्यमा मध्यमस्त्रिका पेक्षया मध्यमा मध्यमा पंचमश्रौवेयक देवाः तथा मध्यमत्रिका उपरितमा मध्यमोपरितमाः षट्श्रौवेयक
 देवाः पुनरुपरितनाधस्तनाः उपरि स्थलिकापेक्षया अधस्तनाः उपरितनाधस्तनाः सप्तमश्रौवेयकदेवाः तथा उपरिमध्यमाः उपरितनत्रिकापेक्षया

चैव द्वादश कापीवगा सुरा २१२ ॥ काप्यार्द्रयाय जेदेवा दुविहा ते वियाह्रिया । गेवेजा गुतरा चैव गेवेजा नव विहा
 तहिं २१३ ॥ ह्रिडिमा २ चैव ह्रिडिमा मज्जिमा तथा । ह्रिडिमा उवरिमा चैव मज्जिमा ह्रिडिमा तथा २१४ ॥

आरण देवलीक ११ अच्युत देवलीकना १२ द्रणे प्रकारे कल्प देवलीकना १२ भेद जपना देवता २०८ कल्पातीत नवश्रौवेयकादिकना जे देवता विहं
 प्रकारे ते कथा लीक रूप नर पुरुषने श्रौवा कीट समानते श्रौवेयकना देवता उत्तम प्रधान सुख प्रभाव जीहां ते अनुत्तर विमान देवता श्रौवेयक नव
 प्रकारे जाणवा २१० नवनी अपेक्षारं हेठलासांहे हेठला पेहला देवता हेठल्यानी अपेक्षार मध्यम विधात्यानी वीजीनी देवता तीम हेठलाती

भवेत् तु पुनत्र न्तराणां जघनेनान द्यापय सहस्त्रिकाभवेत् २२२ (पलिश्रोवमन्तुएग वासनन्वेण साहिय पलिश्रोवमद्भागो जोइसेसु जह्वत्रिया २२३)
ज्योतिष्काणां चन्द्राकाणां दिवानां एकपत्न्योपम वर्णनत्वेणसाधिक उत्कृष्टां आयु स्थितिर्याख्याता पुनजघन्यिका आयु स्थिति पत्न्योपमस्याष्टमीभागी
भवति २२३ (दोषेय सागराद् उत्कोसेण ठिइ भवे सोहस्रमि जह्वनेण एगख पलिश्रोवम २२४) सौधमं देवलोके द्विसागरीपनी उत्कृष्टा आयु
स्थितिर्येन्येन एक पत्न्योपम आयु स्थिति प्रोया २२४ [सागरा साहियादुत्रि उत्कोसेण ठिइ भवे इसाणमिजह्वनेण साहिय पदिश्रोवम २२५]
द्व्याने द्व्यान देवलोके उत्कृष्टेन द्वे सागरीपनेसाधिके आयु स्थितिभवेत् जघन्यतसु तत्र आयु स्थिति साधिक पत्न्योपम अस्ति २२५ (सागराणिज
सत्तेय उत्कोसेण ठिइ भवे सण कुमारिजह्वनेण दुत्रियासागरीपना २२६) सनत्कुमारै उत्कृष्टेन सप्तैवसागरीपमानि आयु स्थितिभवेत् जघन्येन

जह्वनेण दत्त वास सहस्त्रिया २२२ ॥ पलिश्रोवमत्तु एग वासलक्षणेण साहिय । पलिश्रोवमद् भागो जोइसेसु जह
न्निया २२३ ॥ दोषेव सागराद् उत्कोसेण विहाहिया । सोहस्रमि जह्वनेण एग च पलिश्रोवम २२४ ॥ सागरा सा
हिया दुत्रि उत्कोसेण वियाहिया । द्वेसाणमि जह्वनेण साहिय पलिश्रोवम २२५ ॥ सागराणिय सत्तेव उत्कोसेण ठिइ

एक करो अधिक० उत्कृष्टो धितियोतियो चद्रमानी पत्न्योपमनां आठमी भाग ज्योतिषीने विवे तारादिधानी जघना २२३ ये सागरीपम उत्कृष्टी
स्थिति आठसु षाड गोधम देवलाकने विवे जघना एक पत्न्योपम आठको २२४ सागरापम द्वे अाकेरे उत्कृष्टी धिति दुइ इसाण देवलोके
जघनेना जाभेरो एक पत्न्योपम २२५ सागरीपम सातनी स्तीत जाणवी उत्कृष्टीनीये सनत्कुमार देवलोके जघनापणे ये सागरीपम २२६ अाभेरो

सहस्राणि तथा तयोर्विंशतिर्विमानापिचया अनेकविधा आख्याता २१८ (लीगस एगदेसंसि ते सर्वे परिकित्तिया इतीकाल विभागतु तिसिं वुच्छं चउव्विहं २१८) ते सर्वे देवालीकस्यैकदेशे परिकीर्त्तिता इतीजनन्तरं काल विभागान्तु तेषां देवाना चतुर्विधं वल्ये २१८ [संतदं पप षाईया अपज्जव सियाविय ठिइं पडुच्च साईया सपज्जव सियाविय २२०] सन्ततिं प्रापते देवा अनादयः अपर्यवसिता अपि स्थितिं भवस्थिति कायस्थितिं प्रतीत्यसादय . सपर्यवसिताथापि वर्त्तन्ते २२० [साहिद्यं सागारं इकं उक्कीसेण ठिई भवे भोमिज्जाणजहनेणं दसवास सहस्रिया २२१] भोमिज्जाणं इति भवन पतीनां देवानां उत्कृष्टेन आयुःस्थितिः साधिकां सागरोपमं वर्त्तते जघनेन दशवर्षं सहस्रिकास्थिति व्यख्याता २२१ (पलिओवममेगं तु उक्कीसेण ठिई भवे वंतराणं जहनेणं दसवास सहस्रिया २२२) व्यन्तराणां उत्कृष्टेन एक पल्योपमं आयुः स्थिति

वीच्छं चउव्विहं २१८॥ संतदपपाणाईया अपज्जवसियाविय । ठिइं पडुच्चसाईया सपज्जव सियाविय २१८॥ साहिद्यंसा गारंएकं उक्कीसेणठिईभवे । भोमिज्जाणंजहनेणं दसवाससहस्रियार २२०॥ पलिओवममेगं तु उक्कीसेणठिईभवे । वंतराणां

राजीत विमानना ४ २ १ ३ सर्वाथिसिडना देवताना पांच अणत्तर विमानना देवता इण प्रकारे वेमानीक देवता अनेक प्रकारे इत्यादिका २ १ ४ लीकाना एकदेशने विखे ते सर्व कथा भगवते एतलानंतर कालनी विभाग वीवरी ते देवतानुं कहेस्यं २ १ ५ प्रवाह आथीदेवता अनादिना अपर्यवसित अन्तपणे स्थिति आथीसादि सहित सपर्यवसित केहडो पणि २ १ ६ साधिक भाभेरी एक सायरोपम उत्कृष्टी स्थिति हुवे भवनपति चमरेद्रादि जघनार दशहजार वरसनी २ २ १ पल्योपम एकनी उत्कृष्टी स्थिति हुवे व्यंंतर देवतानी जघनार दसहजार वरसनी २ २ २ पल्योपम एक वरस लाय

मेधावी साधुर्धिसु ग्रीष्मकालेवा शब्दात् शरदि अपिपरितापेन गाढीसणापकेन प्रसिदात् आर्दी भूतमलेन प्रथवा रज साद्रंमलेन परि शुष्य काठिन्यं प्राप्तेन धूल्या वा क्षिन्नगात्रः सन् बाधितः शरीरः सन् सातं सुखं न परिदेवे तंमलपहारात् सुखं न वाञ्छेत् सातार्थं विलापं न कुर्यादित्यर्थः ३६ तदा किं कुर्यादित्याह वेयञ्जेति निर्जरापेक्षी कर्मक्षयमीसुः साधु स्वावकायेन जलं धारयेत् देहेन मल धारयेत् पुनर्वैश्वानरमल परीपहं वेदयेत् सहैत तावत्कथं यावत् शरीरस्थ पातः स्यात् साधुः कोद्वयः सन् अर्थं श्रुतचारित्ररूपं धर्मं प्रपन्नः सन् इत्यध्याहारः कौद्वय धर्मं अनुत्तरं सर्वोत्कृष्ट ३७ याज सुनन्दहृद्वे भेषजार्थं साधुस्वाकथया यथा चम्पायां सुनन्दी वणिक दानवान् अन्यदा मलाविलं साधुं दृष्ट्वा मलधारिणं सुक्रोयोगेप सर्वं साधुना भव्य इति जुगुप्सां कृतवान् मृत्वाचासौ कौशं श्यांशुभ्य युवोऽभूत् स प्रसन्नावे दीनां गृह्णीतवान् तदानीं तत्कर्मोदयेन देवे दुर्गन्धोऽभूत् स यति र्यत्र याति तत्र रीश्वं सुनद श्रेष्ठि तेषु एक महात्मा चारित्र पात्र मलिनगात्र आवती देखेने ते श्रेष्ठि चितवे ए जन दर्शनं महा मेलो प्रशुचि वीजो सर्वं भलो एणिए वात जीवा सरीखी नही इम दुगंक्षा कर्म उपाज्यो ते श्रंत समे कीसवी नगरीइ व्ययहारी यानो वंटी घयुं ते पाहिला भवना उदय वी शगेरे महादुर्गन्ध उपनी जिहां जावे तिहां लोक दुगंक्षा करे एहवे एकदा साधुना मुन्य थी साभन्यो जे दुःख कर्मनये काउसग जोया पामे तिणे सितांत वचन प्रमाण करी अटवी मांहि जई एक स्थानिके काउसग करी सामग देवता आराधी ते ग्रामन देवताइ' तेषुनी शरीर मुगंध कीधो काउसग पारी चापणे स्थान के आवे लोक निन्द्या करे कहि ए महा दीर्भागी देवताने भाये तो सिह हुवो तिवारे तणे चित्तव्यो देगो लोकतो जेहना नहीं यत. अरगमित्याह रंगना रङ्गमुचते लोकापवाद दुर्वार्थ कथं लोकीभिधियते १ लो कहसे तैवली देवता आराधी सहज गंध कीधो तिणे जिम कीधो तिम वीजे ऋषीश्वरे न करिवी दुगंक्षा कर्म उपाज्वी नही मलपरीसह सहि इति मलपरीसहए श्रेष्ठिपुष्य दृष्टांत अ० नगस्कारना करया म० उठी बैठा शंङ्गे आमणीयो

द्वे सागरोपमे स्थितिर्भवेत् २२६ [साहिद्या सागरा सत उक्तीसेण ठिई भवे माहिंदम्नि जहन्ने ण साहिद्या दुन्नि सागरा २२७] माहिन्द्लोके उत्कष्टेन साधिक सत्सागरोपमाख्यायुः जघन्ये न साधिक द्वे सागरोपमे २२७ (दसचेव सागराद् ० २२८) ब्रह्मलोके उत्कष्टेन सप्तसागरोपमाख्यायुः जघन्येन सप्तसागरोपमे २२८ [चउदससागराद् उक्तीसेण ठिई भवे लतगं मिजहन्ने णं दससागरोपमा २२९] लान्कदेवलोके उत्कष्टेन चतुर्दश सागरोपमानि आयुः स्थितिर्भवेत् जघन्यतो दशसागरोपमानि आयुस्थितिर्भवेत् २२९ [सत्तर स सागराद् उक्तीसेण ठिई भवे महासुकेजहन्ने णं च उदस सागरोपमा २३०] महाशुके देवलोके उत्कष्टेन सप्तदशसागरोपमानि आयुः स्थितिः जघन्येन चतुर्दशसागरोपमानि आयुः स्थितिर्भवेत् २३० [अथा

भवे । सयंकुमारि जहन्ने णं दुन्निज सागरोवमा २२६ ॥ साहिद्या सागरा सत उक्तीसेण ठिई भवे । माहिदम्नि जहन्ने णं साहिद्या दुन्नि सागराद् २२७ ॥ दसचेव सागराद् उक्तीसेण ठिई भवे । बंगलोए जहन्ने णं सत्तज सागरोवमा २२८ चउदस सागराद् उक्तीसेण ठिई भवे । लंतगंमि जहन्ने णं दसज सागरोवमा २२९ ॥ सत्तरस-सागराद् उक्तीसेण ठिई भवे । महासुके जहन्ने णं चउदस सागरोवमा २३० ॥ अट्टारस सागराद् उक्तीसेण ठिई भवे । सहस्यारि जह

सागरोपम सातनी उत्कष्टी शिति होइ माहिंद देवलोके जघन्ये तो भाभे री वे सागरोपम २२७ दस सागरोपमनीं उत्कष्टी स्थिति इई ब्रह्म देव लोके देवतानी जघन्ये तु सात सागरोपम २२८ चौद सागरोपमनी उत्कष्टी स्थिति हुइ लान्तके देवतानी जघन्यतो दस सागरोपम २२९ सत्तर साग रोपमनी उत्कष्टी स्थिति हुवे महाशुके देवतानी जघन्य चौद सागरोपम २३० अठारि सागरोपम उत्कष्टी स्थित हुइ सहस्यार देवलोके जघन्ये

रस सागरार उक्तीशेषेण ठिठ भवे सहस्रारि जहन्नेण सत्सरस सागरोपमानि उगृह्णत्याय स्थिति भवेत् जघन्यत सप्तदश सागरोपमान्याय स्थितिर्भवेत् २३१ (सागरा अउणवीसन्तु उक्तीशेषेण ठिठ भवे आणय मिजहन्नेण अट्टारससागरोपमा २३२) धान्तं देवलोके एकोनविशति सागरोपमाणि उगृह्णटि मायु स्थितिर्भवेत् तथा जघन्येन अट्टारससागरोपमान्याय स्थितिर्भवेत् २३२ (वीसन्तु सागरार उक्तीशेषेण ठिठ भवे पाणयमिजहन्नेण सागरा अउणवीसन् २३३) प्राणतदेव लोके उगृह्णटेन विशति सागरोपमानायाय स्थितिर्भवेत् तथा जघनेन एकोनविशति सागरोपमानि आयु स्थितिर्भवेत् २३३ [सागरारक वीसन्तु उक्तीशेषेण ठिठ भवे आरणमिजहन्नेण वीसन् सागरोपमा २३४] आरणे देवलोके एकविशति सागरोपमानायाय स्थितिर्भवेत् २३४ (वावीस सागरार उक्तीशेषेण ठिठ भवे

नेण सत्सरस सागरोपमा २३१ । सागरा अउणवीसन्तु उक्तीशेषेण ठिठ भवे । आणयमि जहन्नेण अट्टारस सागरोपमा २३२। वीसन्तु सागरा उक्तीशेषेण ठिठ भवे पाणयमि जहन्नेण सागरा अउणवीसन् २३३। सागराएकवीसन्तु उक्तीशेषेण ठिठ भवे । आरणमि जहन्नेण वीसन् सागरा उक्तीशेषेण ठिठ भवे । अच्युयमि जह

सत्सर सागरोपमा २३१ सागरोपमयोगीश उगृह्णटी वीति ह्र साणत देवलोकं जघन्ये स्थिति अठार सागरोपमनी २३२ वीस सागरोपमनी उगृह्णटी स्थिति ह्र प्राणत देवलोकं जघन्य सागरोपमयोगीश २३३ सागरोपम एकवीसनी उगृह्णटी स्थिति ह्र आरण देवलोकं देवतानी जघन्य योग सागरोपमनी २३४ पायोस सागरोपमनी उगृह्णटी स्थिति ह्र अच्युत देवलोकं जघन्य अउणवीस सागरोपम २३५ वीस सागरोपम उगृह्णटी

असुशमिजहने ण सागराडकवीसई २३५) अणु तदेवलोके द्वाविशति सागरोपमानात्तद्धाया स्थितिर्भवेत् जघनरातसु एकाविशति सागरोपमानि स्थिति
 भवेत् २३५ अथ नवग्रैवेयकाणा आयु स्थितिरुच्यते [तैवीससागराडं उकोसेण ठिई भवेपटम मिजहने णं वावीससागरोवमा २३६] तयोविशति
 सागरोपमानि ष्यमग्रैवेयके उत्कष्टा आयुःस्थितिर्भवेत् जघनेन द्वाविशति सागरोपमानि २३६ (चउवीस सागराड उकोसेणठिई भवे विद्वयंमिजह
 ने णं तैवीस सागरोवमा २३७) द्वितीये ग्रैवेयके चतुर्विंशति सागरोपमानि उत्कष्टा आयु स्थितिर्भवेत् जघनेन त्रयोविशति सागरोपमानि २३७
 [पृषवीस सागराडं उकोसेण ठिई भवे तद्वयं मिजहने णं च उवीससागरोवमा २३८] तृतीये ग्रैवेयके पञ्चविंशति सागरोपमानि उत्कष्टायाः स्थिति
 भवेत् जघनेन चतुर्विंशति सागरोपमानि २३८ [कव्वीस सागराडं उकोसेणठिई भवे च उत्तयं मिजहने णं सागरापगवीसई २३८] चतुर्थेग्रैवेयकेपट
 विंशति सागरोपमानि उत्कष्टा आयुःस्थितिः जघनेन पञ्चविशति सागरोपमानि २३८ (सागरासत्तवीसन्तु उकोसेणठिई भवे पञ्चमं मिजहने णं
 त्रे णं सागरा एक्कवीसई २३५ ॥ तैवीस सागराडं उकोसेण ठिई भवे । पटतप्पि जहने णं वावीसं सागरोवमा २३६ ॥
 चउवीस सागराडं उकोसेण ठिई भवे । विद्वयंमि जहने णं तैवीसं सागरोवमा २३७ ॥ पृषवीस सागराडं उकोसेण
 ठिई भवे । तद्वयंमि जहने णं चउवीसं सागरोवमा २३८ ॥ कव्वीसं सागराडं उकोसेण ठिई भवे । चउत्थंमि जह

स्थिति इदं प्रथमग्रैवेयकने विखे जघने वावीस सागरोपम २३६ चैवीस सागरोपम उत्कष्टा स्थिति इदं वीज्येवेयके जघनरा तैवीस सागरोपम २३७
 पृषवीस सागरोपम उत्कष्टा स्थिति इदं तीज्येवेयके जघने चउवीस सागरोपम २३८ कव्वीस सागरोपमनी स्थिति उत्कष्टा स्थिति इदं त्रयो वि

सागरासत्तवीसर्द २४०) पचमपैवेयके सप्तविंशति सागरोपमानि उत्कटा आयु स्थितिजघनेन पटविंशति सागरोपमानि २४० [सागराशुद्धवीसन्तुत्कटा
 शेषठिर्भवेद्भूमियजह्वने षसागरासत्तवीसर्द २४१] पटपैवेयके उत्कटेन षट्ठाविंशतिसागरोपमानि आयु स्थितिर्भवेत् जघनात् षट्ठाविंशति सागरोपमानि २४१
 (सागरा षड्णवीस तु० २४२) सप्तमपैवेयके उत्कटा एकोनत्रिंशत्सागरोपमानि आयु स्थितिर्भवेत् जघनात् षट्ठाविंशति सागरोपमानि २४२ (तीसत्
 सागरा उत्कटोत्तरेषु ठिद् भवे षड्मसि जह्वने ष सागरा षड्णवीसर्द २४३) षट्मपैवेयके शलागरीपमानि उत्कटा आयु स्थितिर्भवेत् जघनात्सु
 एकोनत्रिंशत्सागरोपमानि २४३ [सागरा द्वादशीसन्तु उत्कटोत्तरेषु ठिद् भवे नवम मिजह्वने ष तीसर्द सागरोपमानि २४४] नवमपैवेयके एकत्रिंशत्सागरोप

त्रिंशत् सागरा पणवीसर्द २३८ ॥ सागरा सत्तवीसत्तु उत्कटोत्तरेषु ठिद् भवे । पचमसि जह्वने ष सागरा द्वीसर्द २४० ॥
 सागरा षड्णवीसत्तु उत्कटोत्तरेषु ठिद् भवे । षड्मसि जह्वने ष सागरा सत्तवीसर्द २४१ ॥ सागरा षड्णवीसत्तु उत्कटोत्तरेषु
 ठिद् भवे । सप्तमसि जह्वने ष सागरा षड्णवीसर्द २४२ ॥ तीसत्तु सागरात् उत्कटोत्तरेषु ठिद् भवे । षड्मसि जह्वने ष
 सागरा षड्णवीसर्द २४३ ॥ सागरा एकोनत्रिंशत्तु उत्कटोत्तरेषु ठिद् भवे । नवमसि जह्वने ष तीसर्द सागरोपमानि २४४ ॥

यके जघने सागरोपम पचवीस २३८ सागरोपम सत्तवीसन्तु उत्कटा स्थिति हुवे पांचमैवेयके त्रिंशत् द्वितानी जघने सागरोपम द्वीस २४०
 सागरोपमो षड्णवीस उत्कटा स्थिति हुवे षड्मपैवेयके जघने सागरोपम सत्तवीस २४१ सागरोपम षड्णवीस उत्कटा स्थिति हुवे सातमैवेय
 यके जघने सागरोपम षड्णवीस २४२ वीस सागरोपम उत्कटा स्थिति हुवे षट्मपैवेयके त्रिंशत् जघने सागरोपम षड्णवीस २४३ सागरोपम

मानि उत्कृष्टाय स्थितिर्भवेत् जघनरातसु एकलिंशत्सागरोपमानि २४४] अथ पञ्चानुत्तराणां आयुःस्थिति माह [तेतीस सागराद् उक्रोसेण ठिई भवे च उत्सुविजयाईसु जहने णे कतीसई २४५] चतुर्थापि विजय वै जयन्त जयन्तापरजितेषु विमानेषु उत्कृष्टेनलय स्त्रिंशत्सागरोपमानि आयुः स्थितिर्भवेत् जघनिरान एकलिंशत्सागरोपमानि २४५] [अजहन्न मणुकोसन्तिती संसागरोवमा महाविभाणे सव्दुठे ठिई एसाविद्याहिया २४६] सर्वाधि इति सर्वाधिसिद्धिविमाने महाविमाने अजघनंनं तथाऽनुत्कृष्टं यथा स्यात्तथा तयलिंशत्सागरोपमानायाःस्थितिर्भवेत् नविद्यते जघनगा यत् तत् अजघनंनं न विद्यते उत्कृष्टा यत्र तत् अनुत्कृष्टं अर्थात् जघनगापि नास्ति उत्कृष्टापि नास्ति एकैवलय स्त्रिंशत्सागरोपमरूप एषा आयुस्थिति व्याख्याता २४६ अथ देवानां कायस्थिति माह (जाचेव आउठिई देवाणं तु विद्याहिया सातिसिकायठिई जहन्नुकोसियाभवे २४७) याचेव देवानां चतुर्विधानां अपि आयुःस्थितिर्जघनगीत् कृष्टाव्याख्याता सा एव कायस्थिति भवेत् यतोहि देवासत्त्वा देवान भवन्ति २४७ अथ कालान्तरमाह [अणन्तकाल मुकोसं

तेतीस सागराज उक्रोसेण ठिई भवे । चउसुवि विजयाईसु जहने णे कतीसई २४५ ॥ अजहन्न मणुकोसं तेतीसं सागरोवमा । महाविभाण सव्दुठे ठिई एसा विद्याहिया २४६ ॥ जाचेवउ आउ ठिई देवाणंतु विद्याहिया । सा ।

एकतीस उत्कृष्टी स्थिति दुवे नवग्रये वै यक जघनेर तीस सागरोपम २४४ तैतीस सागरोपम उत्कृष्टी स्थिति दुवे प्यार विजय ६ वैजयत २ जयंत ३ अपराजितने ४ विखे देवतानी जघनरा एकतीस सागरोपमनी स्थीतो दुई २४५ जघनरा पणि नही उत्कृष्टपण नही जघनरा उत्कृष्ट तैतीस सागरोपम मोटो विमान सर्वाधिसिद्धने विखे देवतानी स्थिति एह तीर्थं करे कही २४६ जे आजखानी स्थिति देवता सर्वनी स्थिति कही भगवते ते वली

धन्तोमुहुषं जह्वयय विजटमि सएकाए देवाण होज्ज भन्तर २४८) दिवाना स्वकीये कायेत्यन्ते सति वनस्सति कायेन्नजति तदा उतूकट भन्तर भनन्त
 काल भवेत् जघनरातीतर भन्तमुं ह्वसं भवेत् २४८ [अथल्लकालमुक्तेस वासपुहस जह्वयय आणयाईण देवाण गेविक्काण तु भन्तर २४८] आनतादीनी
 नयमदेवलोकादीनी तु पुन येयेयकानां नवाना उपससथत्वात् तत्र यासिनां दिवानां स्वस्थानात् चुलानाथ ससारीनिर्गदिसमुत्पन्नानां पथात्पुन
 स्वस्थाने आगच्छतां उतूकट वेकालालर भवेत्तदा भनन्त कालान्तर भवेत् जघनरा वेदतर भवेत्तदा वर्यं पृथक् नववर्षाणि यापह्वतीत्यर्थं २४८
 [सुत्तिज्जसगक्कोषवासपुहस जह्वययपणुत्तराण्यदेवाण भन्तरुविद्याहि २५०] अजुत्तराणां दिवानां आवनभूला पुनयेत्तत्रैयीत्यसि स्थानदाकियदत्स्व
 भवेत् तदाह उतूकट तु सख्ये यसागरोपमानि भन्तरथास्यात जघनरा तु वर्यं पृथक् नववर्षाणि यापत् २५० [एएसियवक्कोषेय गन्धारीरुफासर्मा सपठाणा
 देवयोषावि विहाथार सहस्रसो २५१] एतेषां दिवानां चतुर्निकायानां गन्धतीरसत अर्थात् सस्थानादेयतथापि सहज्यसोविधाणि भवन्ति अनेकेभिदा

तंसि काय ठिद्धं जह्वनुक्तेसिया भवे २४७ ॥ अणत काल मुक्तेस अतोमुहुस जह्वन्नय । विजटमि सएकाए देवाण
 होज्ज भतर २४८ ॥ अणत काल मुक्तेस वास पुहस जह्वन्नय । आणयाइण कप्पाण गेविक्काणतु भतर २४८ ॥ सखिक्का

सागरो क्तेस वास पुहस जह्वन्नय । अणुत्तराण्य देवाण भतरतु विद्याहिया २५० ॥ एएसि वन्नयो वेय ग धयो रस

देवतानो कायस्सोत भयो देवता तयाह जघनरापथ उतूकटपथे बुधे २४८) भनतुकाल उतूकटो अतमुं हुसं जघनरा काडे वर्यं पोतानो काया
 देवता मरो देवतान पाइ एतसो भतर २४८ देवां देवताना वर्यं धकी गधधकी करसयकी संस्थानना भेदधकी विधानभेद सससगके डुर २५०

भवन्ति २५१ अथ निगमयितुं माह [ससारत्वायसिद्धाय इन्द्रजीवाविद्याहिया रूविणो चैव अरूवीय अजीवादुविहाविय २५२] ससारत्वाय जीवासिद्धाय जीवादिति ऋभुना प्रकारेण व्याख्याताः च पुनरुपिणोऽरूपिणोऽजीवाश्च व्याख्याताः द्विविधा अपि कथिताः अथोपदिशमाह (इन्द्रजीवमजीवेय सुखासद्विह ज्ञाय सव्यनयार्थमणुमए रमिज्जासंयमेसुणी २५३) सुनिः साधुरैवं असुनाप्रकारेण जीवान् गुरीसुखात् युत्वा पुनः अद्याय सयमे सप्तदशविधैरमेत् रतिं कुर्यात् कीदृशे संयमे सर्वनयानां अनुभते सर्वे च तेनयाश्च सर्वनयाः नैगमादयः सप्तनयास्तेषां सर्वनयानां ज्ञानक्रियांतर्गतानां अनुभते अभिप्रीते ज्ञान सहित सम्भक् चारित्र रूपे २५३ [तत्रोबह्विवासाणि सामणमणुपालियादमेण कश्मजीएण अप्पाणं संलिहेसुणी २५४] ततश्चारिते रमणानन्तरं बह्विणि

प्रासञ्चो । संटाणा देसञ्चोवावि विहाणाइं सहस्रसो २५१ ॥ संसारत्वाय सिद्धाय इन्द्र जीवा विद्याहिया । रूविणो चैव अरूवीय अजीवा दुविहाविय २५२ ॥ इन्द्र जीव मजीवेय सोच्चा सद्विहज्जणय । सव्य नयाण अणुमए रमिज्जा संजमे सुणी २५३ ॥ तञ्चो बह्विणि वासाणि सामन्न मणुपालिया । इमेणा कक्का जोगेणं अप्पाणं संलिहे सुणी २५४ ॥

संसारिक जीवना सिद्धना जीव इणे प्रकारे जीव विहुं भेदे कहा रूपी अजीव विहुं भेदे अरूपी अजीव द्रमभेदे अजीव विहुं प्रकारे हुवे २५२ एणे प्रकारे जीवने अजीवनाभेदे गुरु समीपे सांभलोने सर्वदीह प्रमाण करो पडिवजी समस्त नैगमादिकसा तनव ते ज्ञानकया माहि अंतर्भावता जाणी ज्ञान सहितयको रति आणोने संयमने बिखे साधु २५३ ततोदीजालोधानंतर घणा वरसलगी आमण्य चारित्र तपसंयम कयाइ उत्तम पालीने इणे आगलि कहोस्से तणे अनुक्रमे कर्मयोगे ग्राह्या शरीर संलेखे द्रव्य थकी तपे कारि काया हीण पाडो भाव थकी कषाय रहित २५४ बारबरसताई

यथापि ग्रामस्य अनुपाल्यमुनिरीन क्रमयोगेन आकान स लिखित द्रव्यतीभावतय जगोक्त्यात स प्रति स लेखना पूर्वक क्रमयोगमाह माह [वारसेवउधा
 सार स लेखकोसिवाभवे स वच्छरमश्रमिवाह भासायजहभिषया २५५] [पठमे यास चउकभिषिगद निज्जहण करे वीएवास चउक मि विचिचत तु तव
 चरे २५६] (एगान्तरमायानकटुसमच्छरिदुयंतयोस वच्छर व तुनाद्रविगिह तयचरे २५७) (तश्रोस वच्छरव तुविगिह तुतवचरेपरिमियचेव आयामतनि
 स वच्छरकरे २५८) (कोटो यदियमायाम कटु स वच्छर मुषोमासहभासि एण तु आहारिण तवचरे २५९) एतासा गाथागा व्याख्या द्वादशैवपर्याणि
 चउकटा स लेखनाभवेत् सलेखा द्रव्यतीभावतय जगल करण सलेखना द्रव्यत प्ररीरस्य जगोकरण भावतय कपायाथा जगोकरण समच्छरनेका वर्ष
 मध्यमिकासलेखनाभवेत् जघनिका सलेखनापल्लासीभवेत् २५५ सलेपनायाक्षैविष्येऽनुक्रममाह प्रथमे आद्यैवर्ष चतुस्के विक्रति नियूहन विक्रतीना
 पयानाल्याग आधात्प्रनिविक्रत्यादि तप कुर्यादित्यथ द्वितीये वर्षे चतुस्के विचिचत एव चतुर्थपटाटमादि रूप तपचरेत् २५६ ततो धी सवक्षरी यावत्
 एकै चतुर्थसयनेन तपसापन्तर व्ययधान यच्चिन् तदेकान्तर आयाम आधान ज्ञानापय सवच्छराह यावत्सास पटक यावत् अतिपिण्ड अटम

वारसेवउ वासाद् सलेखु कोसिया भवे । सवच्छर मज्जामिया ह्यभासाय जहनिषया २५५ ॥ पठमे वास चउकभि
 विगदं निज्जहण करे । विदए वास चउकमि विचिचतु तव चरे २५६ एग तर मायाम कटु सवच्छरे द्दवे । तश्रो सव

चउकटो द्द सलेखना वरस एकानो मध्य सलेखणा ल्पभासनो जयनरा सलेखना २५५ पहिला वरस पारने विचे यिगयनो परिहार आंविबलीयो
 करे योजा आगला वरस पारने पोचे विचिय हइ अटमादि तप करे २५६ उपवास अने आतर पारणे आंविबल इम करो वेवरसने विचे तिवार

द्वादशादितपोन आचरित् न सेवेत २५७ ततस्तु सवत्सराहं मास षट्कतु विक्रष्टं षष्टाष्टमादितपः आचरित् पर ततायं विशेषः परमिमत सेवस्तीकं एव
 आचान्त् तपस्त्रिभान् संवत्सरे कुर्यात् कोषं पूर्वास्त्रिन् संवत्सराहं न अस्त्रिन्संवत्सराहं च एवं एकादशे सवत्सरे चतुर्थषष्टाष्टमद्वादशादीनां पारणे आचान्त्
 विदध्यात् इत्यर्थः ततोकोटी सहितं तपः स्यात् २५८ इत्यं एकादशसुवर्षेषु व्यतीतेषु द्वादशवर्षेषु यत्कुर्यात्तदाह कोटीभ्यां प्रत्याख्यानस्य आद्यन्ताभ्यां सहितं
 कोटीसहितं तपोद्वादशे सवत्सरेभ्युनि कुर्यात् कोषं विवक्षितदिने प्रभातसमये आचान्त् प्रत्याख्यानं कृत्वा पुनर्द्वितीयदिने तपोन्तरं विधाय तस्यां ते
 पुनराचान्त् इति कोटीसहितं उच्यते इत्यनेन द्वादशवर्षाणि तपः कुर्यात् तु पुनः पद्यान्मासिकेन तु पुनरर्द्धमासिकेन आहारिण अर्धाभासचपण
 प्रत्याख्यानं तथाह मासचपणेन आहारिणइति आहारानादरिणेन तपः प्रस्तावाद्भक्तपरिज्ञयाऽनशनरूपं तपश्चरित् एतद्विस्तरतु निशीथ चूर्णितो
 वसेयः २५८ अङ्गीकृतानशनस्य अशुभभावनापरिहारः कर्तव्यः अतीऽसुभ भावनाज्ञानार्थमाह [कन्दप्यसाभि श्रोगं किञ्चित्तियं मोहमासुरतञ्च यथाश्री

श्वरद्वं तु नाद्द्विगिदं तवं चरे २५७ ॥ तथो संवच्छरद्वं तु विगिदं तु तवं चरे । परिमितं चैव आयामं तंमि संवच्छरे
 करे २५८ । कोडीसहिय मायामं कद्रु संवच्छरे सुगी । मासत्रमासिएणं तु आहारिणं तवंचरे २५९ । कंदप्य साभि

पक्षी सवच्छर अर्द्धं क्मासतादं नही अति दुर्लभं एहवो तप करे २५७ तिवार पक्षी अर्द्धं संवच्छर क्मासतादं विक्रष्ट आकारो कद्रु अट्टमादि
 तप करे परिमित थोडा थोडा आंबिल करे एतले उपवासने पारणे आंबील पेहदला मास २५८ एहमासदर्द्धं इम वरस २ एवं २२ २५२ पञ्चखाणने
 धरि आंबिल करे विचाले तप करे केहडे आंबिल करे ते कोडि सहिय करी वरस २ लगि सायु पक्षे मास खमण अधमास खमण आहार परिहारि

दुर्गाद्रथो मरणमिविराहियादुल्लि २६०] एता पञ्चभावना विरधििका सभ्यग दर्शनचारित्रादीना भद्रकरा सत्योमरणात्तो मरणसमये दुर्गतयोदुर्गति कारणत्वात् दुर्गतयोभयन्ति कारणीकार्योपचार एता का भावनाक दर्पं रति कन्दर्पभावनापदैकदेशेपद समुदायोपचारात् एय अभियोय भावना क्लिष्टप्रभावना मोह भावना असुरत्वभावनादुर्गतियात्र अथात् देवदुर्गति स्यात् तद्व्याहारवहारेण चारित्रि सत्यपि तादृग्द्वेयनिकायोत्यसौ चारित्रा भायेन नानागतिभाक्त्व स्यात् यदुक्त य समयमपि कुर्यात् एतासु भावनासु मनुजसु स च गच्छेत् सुरयो नौ यत्र हि चारित्र हीनत्वमिति २ मरण समये यादृशोमति स्नादृशोमति स्यात् रति दर्शित मरण समये यदि एताभावना नश्युस्तादासुगति स्यादित्यर्थ २६० [मिच्छादसण रता सनियथाऽ हिंसगा दरजेमरन्ति जीवा तसि पुण्ड्रब्रह्मवोही २६१] रति असुनाप्रकारिण्ये जीवा म्रियन्ते तेषां जीवानां पुनर्जन्मानरे बोधिजनधन्य षडिदुर्लभा दु प्राप्याभवेत् रतीति कि येजीवामिष्यादर्शनं रक्षा अतल्ले तत्वाभि निवेयरूप मिष्यादर्शनं तत्र रक्षामिष्यादर्शनं रक्षास्तादृया सन्तो म्रियन्ते पुनर्ये

श्लो ग किञ्चिसियं मोह मासुरत्त च । एयाशो दुर्गादंशो मरणमि विराहिया होति २६० । मिच्छा दसण रता सन्नि
याणाद्दु हिंसगा । इय तै मरति जीवा तसि पुण दुल्लहा वोही ॥२६१ सक्कादसण रता अनियाणा सुक्कनिसमोगाटा ।

अणसणरूप तपकैरे २५८ कदपदपतं भावना १ अभियोगीभावना २ क्लिष्टीपीभावना ३ मोहभावना ४ असुरपणानोभावना ५ एपाचेभावना दुर्गतितु कारण मरणने अयसरतो एहयोभावना आयेती जिना ज्ञानो पिराधकद्दु २६० मिष्या विपरित दर्शनने रागे राता नि याणासहित मरेद्दु पचेद्वी जीपनाघात करहे प्रकारे मरे जीवते तै जीवते बोधिपर भये जिना धर्मानो प्राप्ती दोहीजी २६१ समक्रितसाचा देयगुय धर्मतत्त्वनेधिये राता रागो गियाणा रहित सक

उल्लासीभवति ततो गुरुभिस्तस्य भ्रमण निषिद्ध तेन रात्रौ जिन देवता आराधनाय कायोत्सर्गं कृतं तदा तुष्टदेवतया सुगन्धी कृतं तथा प्युल्लाहभवने पुनरप्याराधि तया देवतया सर्वं समानं गन्धं कृतं अनेनहि साधुना जह्म परीपही देवताराधने न सीढ एवमन्यै साधुभिर्नकाय अथ समन साधु शुचीन् सत्क्रियमाणान् दृष्ट्वा सत्कारादिन स्पृश्येत् अतस्तत्परीपह साह । अभिवायण मभुद्वाण सामी कुञ्जानि मन्त्रण चेता इ पडिसेयन्ति नतिसपेह एमुणो ३८ अणुक्कसाई अप्पिच्छे अन्नाएसी अलीलुए रसेसुनाणुगिञ्जेजा नाणुतप्पेज्ज पखव ३८ मुनिस्ते इति तेभ्य न स्पृहयेत् यत एतेधव्या इति न चिन्तये दित्वर्थं तेभ्य केभ्य येतानि प्रतिसेवन्ते तानि कानि स्वामीराजादि अभिवादन नमस्कार अस्मभ्य कुर्यात् अथवा स्वामी अभ्युत्थान अस्मभ्य कुर्यात् असनादि सत्कानं कुर्यात् पुनरस्माकं निमन्त्रणं कुर्यात् । एतावता राशानिमन्त्रितान् आहारादिभ्य प्रार्थितं यान् ड्रव्यलिङ्गिन साधून् न कीर्त्तयेत् इत्वर्थं पुन साधु कीदृशो भवेत्तदाह । अनुक्कपायी सत्कारादिना हर्षं रहितं तादृशो भवेत् नउक्क अनुक्क येति इत्येवशीली अनुक्कपायी इति शब्दार्थं यत कधिदा सनदानाभ्युत्थाननिमन्त्रणादिकं करोति तत्र गमनाय उक्को भवति उक्कखिती न भवति अथवा अणु कपायी सत्कारादिना योनं करोति तस्मै क्रोधं अजुवाणं अक्रोधं पुन कीदृशं अलेच्छं धर्मापकरणं मात्र धारी अनेन निर्लोभत्वमुक्तं पुन कीदृशा अन्ना जेताइ पडिसेवति नतिसि पीहए मुणी ॥३७॥ अणुक्कसाई अप्पिच्छे अन्नाएसी अलीलुए । रसेसु नाणुगिञ्जेजा ना

देवी मा० राजादिकं कुं करेहे भि भिचानो आमदण जेठो आपणा गच्छेना तथा परपाथडीना० ते नमस्कारादिकं प० अगिकारं करे हे महती ऋद्धि देहिने पे इ मनं कहे सु साधुपरपा खडो प्रमुख ए धन्यं हे ३८ अ० जे साधुनेलीभं शोडो इए अ० वस्त्रादिकं नीवाळा रहितं होइ अ० अन्नात मिले अन्नार गवैपे अरस आहारने विवेली सता रहितं अलीलूपिर० मधरादिकं ५ रसं स्वादेने विखे ना० नाहुइ ग्रहमाठा रसादिकं नीवाळा न करे

मरणानन्तर अपरं जन्मनि कोषिदुर्लभत्व दर्शितं इति न पुनरस्ति दूषण २६३ [जिणवयणे अपुरत्ता जिणवयणे किकरति भावेण अमला असकिलि
इति वृत्ति परित्तससारी २६४] ते जीवा परीप्तससारिणीभवन्ति प्राकृतत्वात् बहुवचनस्थाने एकवचन परीत सुखित्त ससार परीप्तससार परीप्त
ससारोपियते यस्य उपरोक्तससारोरिति छिन्न ससारिण स्युत्थित्यर्थं ते इति के ये जीवाजिन वचंते अर्हंहाक्के अनुरत्ता सन्तीभावेन जिनवचन कुर्यति
इत्यनेन मनोवाकाये जिणपर्यम् पाराधयन्ति पुन कीदृशास्ते अमलाभियामलरहितता पुन कोटया असकिलिटा मोहमक्क रादि केशरहितता एतादृशा
जीवा ससारपर कला मोघ यजन्तीत्यर्थं २६४ (बालमरणाणि बहुसो अकाममरणाणि केववहुयाणि मरिहन्ति तेधराया जिणवयणे जिनयाणन्ति २६५)
ये मनुष्या जिनवचन न जानति घानक्रियाभ्यां मोघरति अर्हंहाक्के न अर्धयन्ति ते मनुष्या बहुयोगारवार वराकादयाभाजन सन्तीवालमरणाणि
इति प्राकृतत्वात् तृतीया बहुवचन स्थानेद्वितीया बहुवचन बालमरणैरुहन्त्यन विषमव्यथादि मरणैस्त्रया अकाममरणैश्च रूद्धा विनाद्युधा दृपाश्रीता
तपतापादिमरणैस्त्रियन्ते तथाप्रायेनजिन वचन अर्धेय भाषसु आलोचनयास्यात् आलोचनादर्शादिद्या आलोचना योग्यासु एतैर्हंतुभि सुस्थान

मरति जीवा तिसिपुण दुसरा कोरि ॥ २६३ जिणवयणे अणुरत्ता जिणवयणे वे करति भावेण । अमला अस
किलिटा ते इति परित्त ससारी । २६४ बाल मरणाणि वहुसो अकाम मरणाणि चे वय । वहुणि मरिहति

धर्मनी प्राप्ति दंडिलो २६२ सीवतने विखे पनुरत्ता रागीजिनावचन डी कोर करे तपजपभावेकर मोयात्वमलरहीतरागद्वेषादिकमलरहीत ते दुवे
योवाकालमाहि संसारद्वेदो मोघजाद २६४ वारे भेदे बालमरण पणीधार मरतु अकामवाक्यविना तादृतापादि सहतो अकाम मरण घणी पार मरे

जीवाः स निदानाः निदानेन विषयाद्याशयासह वर्तन्ते इति सनिदानास्तादृशाः सन्तोच्चियन्ते तथाहुइति निषयेन ये जीवाहिंसका जीवहिंसाकारिणः सन्तोच्चियन्ते तादृशानां भवान्तरे जिनधर्म्यं प्राप्तदुर्लभस्यादित्यर्थः २६१ [सम्बद्दसणरत्ता अनियाणासुक्कले सञ्जीगाटा इइजेमरन्ति जीवा सुलभातेसिं भवे बोही २६२] इति असुनाप्रकारेण्ये जीवाच्चियन्ते तेषां जीवानां बोधिर्जैनधर्म्यं प्राप्तिर्जानान्तरे सुलभाभवत् इतीति किं ये जीवाः सम्यग् दर्शनं रक्ताः देवतत्वशुभतत्वधर्मतत्वरक्ताः एतादृशाः सन्तोच्चियन्ते तथा पुनर्ये जीवाः अनिदानानिदानरहितताः सन्तोच्चियन्ते पुनर्ये जीवाः सुक्कलेष्यां अवगाटा सुक्कलेष्यां प्रविष्टाः शुइपरिणामाः सन्तोच्चियन्ते तेषां बोधिर्भवान्तरे सुलभा भवे दित्यर्थः २६२ [मिच्छादसण रत्तास नियाणा किइलेसमो गाटा इइजेमरति जीवा तेसि पुण दुल्लहाबोहो २६३] इति असुनाप्रकारेण ये चियन्ते तेषां पुनर्जानान्तरे बोधिर्दुर्लभाभवत् इतीति किं क्कणलेष्यां अवगाटा क्कणलेष्यां प्रविष्टाः सन्तोच्चियन्ते एतादृशाः सन्तोच्चियन्ते तेषां जिनधर्मप्राप्तिं पुनर्दुर्लभाभवत् अत मिच्छादसण रत्ता इति गाथापूर्वमुक्त्वा पुनरपि मिथ्यादर्शनं रक्ताइति गाथा उक्तास्ति तत्र च पुनरक्ति दूषणं न ज्ञेयं अत्र गाथायां क्कणलेष्यावतां भिद्यमानानां भव सन्ततौ अपि बोधिं प्राप्ते रभावइति स्वचितं पूर्वगाथायां तु क्कणलेष्यारहितानां मृतानां तु

इय जे मरंति जीवा सुलहा तेसिं भवे बोही ॥ २६२ मिच्छा दंसण रत्ता सनियाणा चिन्हलेसमोगाटा । इय जे

लेष्या निर्मल परिणामे सहित इणे प्रकारे जिने भरे जीव सोहिली ते जीवने सुइ बोधि जिन धर्मनी प्राप्ती २६२ कुदेव कुशुर कुधर्मरूप मीथ्या दर्शनेने बिखे रागी नियाणा सहित भोगना करणार क्कणलेष्या पाहुये अश्ववसाय सहित इणे प्रकारे मरे जे जीव ते जीवने वली बोधि जिन

कल्प्यभावनां करोति कल्पय कौकुब्धक दर्पकी कुथे ते कल्प्यकी कुथे तत्रकल्पोद्भवास्यादि पूर्व यकले न जल्पन कौकुब्ध काय दुर्येष्टित च एते उभे कुर्वन् जीव कल्प्य भावना जनयति तथा शीलस्रभावदास्य शीलस्र भावदास्य च विकथा च शीलस्रभावदास्य विकथा स्थाभिरन्य साधय कुर्वन् कल्प्यभावनां जनयति २६७ (मन्ताजीग काउ भूयकथ च जीपउ जल्लि सायरसदृष्टि हेउ अभियोग भावण कुणइ २६८) य पुत्रय सातरथदिं हे तवे मन्तायोगे कला मन्तव्य प्रायोगय मन्तायोग मन्त श्रौंकारादि स्वाद्यान्त प्रायोग जपधीमालन अथवा मन्ताणा प्रायोगे साधन मन्तयोगस्त कला तथा भूया मन्तना यत्तिकया सूत्रेण वायकर्म तत भूतिकर्म मनुष्याणां तिरया गृह्याणां वा रक्षाधर्म कौतुकादिकरण भूतिकरण कर्म एतानि सुखार्थ सरसाहाराथं यस्कादि प्राथ्यं य साधु कुर्यात् स प्राभियोगकी भावनां करोति प्राभियोगकी भावनां चोत्थाय स प्राभियोगिन्वे देवत्वे न मन्तोत्पद्यते इत्यर्थं प्राभियोग देवादि देवानां प्रासाकारिण्य कि कर प्राया दास प्रायाय २६८ [नाणक केवलोण मन्ताय रियाय सधसाहण मारुं अयवयारुं किब्बिषाय भावण कुणइ २६८] स

भावण कुणइ । २६७ मता जीग काउ भूई कास च ते पउंजति । साय रस इडि हेउ प्राभियोग भावण कु

जपसाधनानो अभाव मुख्यिकारादिक अदृष्टास करे विषय प्राथयं कारणयि कथाए करि विषय प्राथयंपमाजती पर अनीरानि कल्प्यगी भावना कल्प्यया देवता गेहना भययोग्य वास वासनी ते करे २६७ जागुली प्रादि मत्र अजन घूर्णादी द्रव्यना योग करीने भूति राख माटीइ यद्ये घुवे कर्म रथा निमित्त परमादि याद्विरे कौतुक जी प्रयु जी करावे साता सरस यरुपानि धानी हेते प्राभियोगी देवताना भावना करे पडे मरी

हेतुनाह २६५ [अथ प्रागमविज्ञाणा समाहि उपायगायगुणागाही एएणकारणेणं अरिहा आलीयणं सीउं २६६] एतैः कारणैर्जना आलोचनां शीतुं
 अर्हभवन्ति तानि कानि कारणानि ब्रह्मणमविज्ञानत्व समाध्युत्पादनत्वगुणागाहिलादीनि आलोचना अवणार्हत्वकारणानि द्रव्यानि ज्ञेयानि गुण
 गुणिनोरभेदपि वक्ष्यादभान्ये व कारणानि आलोचना अवणार्ह्याणां विशेषणत्वेन प्रतिपादयति ते नराः आलोचनां शीतुं अर्हैः भवन्ति ते इति के ये
 यथागमविज्ञानाः बहुः स्वतार्थार्थ्यां विस्तारोविपुल प्रागमोब्रह्मणसस्वस्य विशिष्टं ज्ञानं वेदां ते ब्रह्मणमविज्ञानाः भवन्ति च पुनर्येभुनयः समाध्युत्पादकाः
 समाधिं देशकालं यथो योथ्यैर्मपुत्रवचनेरन्यस्य स्वास्यं च उत्पादयन्तीति समाध्युत्पादकाभवन्ति च पुनर्येभुनयगुणागाहिणो भवेयुः परद्रवणीदुघाटकानस्युस्ते
 आलोचना अवणार्ह्यैभवेयुरिति भाव २६६ अथ कन्दर्पादि भावनानां यत्परिहार्यत्वं उक्तं अतस्त्वासां एव स्वरूपमाह (कन्दर्प कुशुयाद् तहसीलसहा
 वहासविगहाहिं विक्रवन्तीयपरं कन्दर्पं भावणं कुणद् २६७) नरः कन्दर्पकौ कुच्ये कुर्वन् तथा शीलस्वभाव हास्य विकथादिभिः परं अन्त्यं विस्मापयन्

तेवराथा जिणवयणंजेनयाणंति ॥ २६५ बहु प्रागम विज्ञाणा समाहि मुप्यायगाय गुणागाही । एएणं कारणेणं

अरिहा आलीयणंसीउं ॥ २६६ कंदर्प कीकुद्रयाद् तहसील सहाव हास विगहाहिं । विम्हाविंतोय परं कंदर्पं

इएण प्रकारे मरेते वराक् अज्ञानी जीननावचन ते सारकरीन जाणे ज्ञानक्रियानां फलजाणानधी २६५ यथो प्रागम सिद्धांत अर्थनाजाण देशकालयकी
 मधुरधुर वचनबोले आलीयणल्ये परने समाधिनी उपजावणहारपरने आस्था उपजे समकितती गुणयाहकएपूठिल्ये कारणे गुणसहित ते आचार्यादि
 ज्ञानालानी आलीयण सांभलि वाड्ढ्योथ्य २६६ हास्य वक्रवचनकामकथाकरे काय चेष्टादि करी आस्यार्थपमाडे तथा सील फल विना प्रह्वन्ति विस्मय

शक्ति प्रवेगकरण तथा जले प्रवेग करण कूपवायादी गृहण पर्वतादिभ्य पतनश्च शब्दात् गृह्यते पुनरनाचार भाडसेवा एतानि कारणानि कुर्वन्तीजना
जगत्करण कारणाणि यथन्ति स सार भ्रमण उत्पादयन्ति इत्यर्थं तत्र आचार शास्त्रोक्त व्यवहार न आचारी अनाचारस्तेन भांड स्वीपकरणस्य
सेवा हास्य मोहादिभि परिभोगी भााचार भाडसेवा इयमपि के शोत्यादनादनन्त भवोत्पादिका इत्यर्थं २७१ [इद्रपाठ करे बुद्धे नायए परिनिव्युए
हत्तीस उत्तरज्ज्ञाए भवसिद्धीय स मए त्तिवेमि २७२] ज्ञात जी बुद्धस्तीर्थं करो ज्ञातात् सिद्धार्थं कुलाज्जात उत्पत्ती ज्ञातज श्रीमहावीर
परिनिर्वातो निर्वाणद्वत इत्यन्वय कि क्त्वा इत्यमुना प्रकारेण पदविभ शत स स्थान् उत्तराध्यायान् प्रादु क्तव्य उत्तरा प्रधाना अध्याया
अध्यायना उत्तरायते अध्यायाय उत्तराध्यायास्तान् अर्थत प्रकटी क्तव्य इत्यय कीदृयान् उत्तराध्यायान् भवसिद्धिक स मतान् भवसिद्धिका
अध्यास्तीपा स मतामान्या पठनीयास्तान् २७२ इति जीवाजीव विभक्तिनामक मध्ययन पट त्रिंश सम्पूर्णम् ॥ ३६ ॥ अथ निर्युक्तिकार एतंपा

इण विसमन्वयण च जलणच जलपवेसोय । अथायार भड सेवी जस्रणा मरणाणि वधति ॥ २७१ इद्र पाठ करे
बुद्धे नायए परिनिव्युए । हत्तीस उत्तरज्ज्ञाए भवसिद्धीय सन्मएत्तिवेमि ॥ २७२ जीवाजीव विभक्तिज्ज्ञयण सन्मत्त ॥ ३६

माहि बूढो मए यतीना उपगरण परिदरेनि मोहादिकना जपजाणहार उपगरण सेवे ते यती यथा जभ्र अर्ने मरणवाधि जपराजि अनता भव करे
मोह करतु २७१ ए पूठि क्क्षा ते सुदयको अर्थयको प्रगट कया बुड केवलो महावीर कीधादीक उपयमावी मोख शु हुता हत्तीस उत्तरा
अयनना अध्यायन मध्यजीवने सु मतवाद्याए यवन साचा जाणे सुधन्मास्तानो जवूप्रति कहे २७२ इति श्रीजीवाजीव विचार अध्यायननो अर्थं सम्पूर्णं ॥

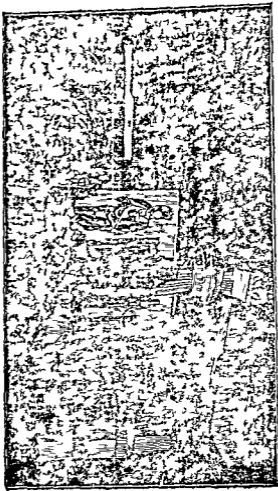
पुरुषः किल्बिषी भावनां कुरुते किल्बिषिक देवयो नित्यदायिकां भावनां जत्यादयन्ति स कः यः पुरुषो ज्ञानस्य श्रुतज्ञानस्य तथा श्रुत
 ज्ञानवतोऽवर्णवादी भवति तथा यः पुरुषो धर्माचार्यस्य धर्मदायकस्य अर्थवादी भवति अयं जातिहीनः अयं मूर्खो अयं कषायो इत्यादि
 आशातना ऋद् भवति तथा संबसाधनां संबन्ध साधवस्त्रिषां संब साधूनां जवर्णवादी भवति तथा पुनर्यो मायो आत्मनः सतः अपगुणान्
 आच्छादयति परेषां असतो अपगुणान् वक्ति सतीगुणान् वक्ति एतादृशी जीवी मत्वा किल्बिषदेव उत्पद्यते इत्यर्थः २६८ [अणुवच्च रोसपरीतहय
 निमित्तमिहोद्पडिसेवीएहिकारणेहिंआसुरियंभावणं कृणुइ २७०] एताभ्यां कारणभ्यां पुरुषः आसुरीं भावनां करोति असुर निकायोत्यादिकां भावनां
 जनयति एतौ कौ कारणौ इत्याह यः पुरुषः अणुवच्चरोष प्रसरः अणुवच्चरिणकालस्यायी रोष प्रसरः क्रोध प्रसरतो यस्य स अणुवच्चरोष प्रसरः तथायः
 पुरुषो निमित्ते अतीतानागत वर्त्तमानरूप विविधे विषये अथवा निमित्ते भूमांतरिजादिके प्रतिषेवी भवति कारणं विनापि शुभाशुभनिमित्त
 प्रयोक्ता भवति स मत्वा असुरत्वेनोत्पद्यते इति भावः २७० [सत्यगह्वणं विसभकवणं जलणं जले पविसेय अणायारभडसेवा जन्मण मरणाणि वंधंति २७१]
 प्रत्यगह्वणं प्रस्ताणां खड्ग चुरिकादीनां आत्मवधार्थं उदरादौ ग्रहणं प्रत्यगह्वणं तथा विषभक्षणं ताणुपुटादि कालकूटानां अदनं तथा ज्वलन
 णइ ॥ २६८ नाशस्त्य दीवलीया धक्ष्मायरियस्त्य संब साह्वणं । मर्द्दे चवन्नवार्द्दे किञ्चित्तियं भावणं कृणुइ ॥ २६८
 अणुवच्च रोस पसरो तहय निमित्तंषि होइ पडिसेवी । एएहिं कारणे हिं आसुरियं भावणं कृणुइ ॥ २७० सत्यग
 ते जीव अभिजोगीक देवतागाहि जपजी २६८ ज्ञानका तथा दीवलीका तथा धर्माचार्यका तथा स धसाशुका अवर्णवादी तथा माइ होय सी
 किल्बिषो भावना करे २६८ प्रसो पीट प्रादृषो मरतो विष तालपुटादि भक्षकरो मरतं जलण अग्निकारिषी मरतं जल पाणी

कप्रभूतान् उत्तराध्यायान् अनन्तागमपर्ययै सशुक्तान् आत्तायते आगमाय अनन्तागमाप्य परकिञ्चित् प्रकारा तथा पर्ययाय अर्थपर्ययरूपा अनन्ता
 गन्तायपर्ययाय अनन्तागमपर्ययास्तोरनन्तागमपर्ययै प्राप्त्पर्ययैय सशुक्तान् [जोगविद्योद वहिस्ता एएजोत्तरदसुत्त मस्य वाभासेदय भवियज्जणो सोपा वेद
 निज्जराविउत्ता ३] समभ्यजनोविपुलानिज्जरा प्राप्नोति स क योगविधि वहिस्ता योगापधानतपोऽनुष्ठानविधि कला एतान् उत्तराध्यायान् सूत्रार्थतो
 लभित पथादरमुखात् सूत्रार्थं लभापर भायित सतीषकप्रभाभवतोत्थर्ष ३ (जस्मात्ताएए कहविषमप्यन्ति विषयरहियस्य सोलविलज्जदभब्बो पुव्वरिसी
 एव भासस्ति ४) समनुचो भब्बोमुक्किगामोदति सच्चते पुव्वपर्यय पूर्वाघाया एव भापन्ते स इति क यस्य सुखस्य विषयरहितस्य निर्धिंसस्य सत कथमपि

अथातगमपज्जवे हिंस जुत्तो अज्जाएज्ज जोगा गुरुप्पसाया अहिज्जिज्जा ॥ २ जोगविहीए वहीया एए जोलहद
 सुत्तमत्ववा भासिद भवियज्जणो सोपावेद निज्जरा वहुला ॥ ३ ॥ जस्मात्तना एए कहविषमप्यति विषयरहियस्य सो
 लकिरज्जद भब्बो पुव्वरिसी एव भास ति ॥ ४ ॥ इति श्रीउत्तराध्यायन सूत्र नियुक्ति सपूर्णम् ।

जिनना कथा अनन्ते गम सरिखे पाठ अनतपर्ययपर्याय सहित अध्यायन भणे भष्वावे यथायोग्ये योग्यजाणो गुरुधर्माचार्यनो प्रसाद सोम दृष्टिपामीने
 ए भणे अप्रमसूत थको २ योगनो गुरु परपराह विधिल हीने योगविधि वहीने इणे प्रकारे को साधु साब्बोलहि यहे सूवने अर्थ अनैराने उपदेयव्ये ते
 भयजोष ते पतिं कर्म्मनो निर्जरा विपुल धणो ३ सो पुष्य भव्य श्रीलखने से पढता हे पूर्वाघार्य एसा कहते हे ती कीन जी विषयरहित कीद तरे से
 ए उत्तराध्यायन पटने कु पारम किया थका सनात होयइति श्रीउत्तराध्यायन सूत्र नियुक्तिनो अर्थ सपूर्णम् ॥ • ॥ • ॥ • ॥

ल्लोकी यावक सोमधर्म साध्याचारा सेवने समधर्म १० साधु श्रीयुक्वक्षभ सज्जनाना लक्ष्मी पूर्वोपव्रजभय द्वितीय तेनाकारि प्रसूटादीपिकेय सिखा
 तस्यश्रुत्तराध्यायनाथ ११ न्युनाधिवय बुद्धिमायाज्जदुक्त तदुच्चै स्तथाक्दूषण श्रीधतीय अग्निर्धर्मोद्दिष्टि ह्यस्यपुसो जालाखीया प्रखललेव गच्छन् १२
 पूर्वप्रणीताल्लति विसारासुटीकाशुनीमकरिताममास्ति तेजसुताप्य समवाप्य भास्तत्कताक्य बोधायसुदीपकेय १३ ॥ ० ॥ ० ॥ ० ॥



यत्नेनापि एतेष्वनराध्यायाः श्राद्धतापठनाय आरब्धाः सन्तः समाप्यन्ते संपूर्णं भवन्ति स भव्यीभाष्यवान् ज्ञेयः इत्यर्थः भाष्यवतः पुरापस्त्रेवनिर्विघ्नं
 एते अध्यायाः संपूर्णं भवन्ति यतः श्रेयांसि बहुविधानि भवन्ति महतामपोत्सर्गे ४ इति श्रीमदुत्तराध्यायन सूत्रार्थदीपिकाया उपपाध्याय श्रीलक्ष्मीकीर्त्ति
 गण्डिप्रिय लक्ष्मीवल्लभविरचितायां जीवाजीवविभक्ति नामकं षट्तिंश मध्ययनं संपूर्णं ३६ गच्छेत्स्वच्छतरे इहत्स्वरतरेजाग्रज्जग्रीभासुरे श्रीमान्
 स्वरिरभूजिनादि कुशलाः प्रौढप्रतापापान्वितः यन्नामस्युतमाल मेव हृदये विघ्नोवविघ्नवाणी सन्धत्तेमाहिमानमल वितत मनीवाञ्छितं १ तच्छिष्यो विनयप्रभः
 समभवत् श्रीपाठकः पुण्यवान् सिद्धान्तीदधि तत्वरत्ननिकराविष्कार देवाचलः यद्वाक्सिन्धुरपाकरोभ्रतिमतां सिध्यामलं मानसं श्रीलक्ष्मणगता महाति
 सरलाहयात्रवयासदा २ तदनुसदनं कारुण्यस्य प्रभावनिधिमहान् विजयतिलकःख्याती भूमौ बभूव महामतिः सकल विषयोपाध्यायानां शिरोमणि
 सन्निभः विविधविवुध श्रेष्ठि सुखः सदागममर्थवित् ३ तुष्टावाचक पुङ्गवायतपसाध्यानेन श्रीलेन वा यस्मै पार्श्वजिनार्द्रि सेवन परापश्चाद्देवावदरं शिष्यान्
 भूरितरांशकारसततः श्रीचेमशाखाततः प्राची च व्यरुचस्तया च मरुतां श्रीचेमकीर्त्तिर्गुरुः ४ सुशिष्यं क्षेमस्य प्रकट शमशिष्यां प्रददतं ह्युपाध्यायं
 ध्यानं हृदिजिन वराणां विदधतां महासेधानावागमजलधि लब्धोत्तमतटं तपोरत्नं २ मुनिपु भजतश्छान्ति रहितं ५ तच्छिष्योभूते दकोदुर्नयाना माचा
 रश्रीत्वर्थनामापुष्टिध्यां सत्साधूनां पाठको द्वादशांग्यास्तेजोराजः पाठकः पापहन्ता ६ तस्यहिनय द्रह वाचकमुख्य आसीत् विद्याविनीदभवन भुवनान्दि
 कोर्त्तिः श्रीदर्भकुञ्जरगणेश तदीयप्रिष्यो वैराग्य मेव सच वाचकमुद्धार ७ लक्षिमखण्डनगणेश ततो भूदाचकोविवुधहन्दसुवन्यः हेमकान्ति विनयां
 कितगालोदुर्निवारहतमारविकार ८ तच्छिष्यः परवादि हन्वदन्प्रोतयत्त्रयच्छलत्वकालीकुसाचखलस्य महतीदुर्वाद्वारां निधिः निःपानिविलसन्मति
 यतिवरस कुम्भजन्माकृति लक्ष्मीकीर्त्तिरिति स्फुरद्गततिः श्रीमानभूलाठकः ९ श्रीमल्लक्ष्मीकीर्त्तिसत्यठकस्य दौ गुर्यांश्चाकारिणी सद्दिने यो तला

ना० सत्कारादिक अणदीधे धके तपे नही प० प्रजावंत साधु ३८ अथ सत्कार परीसहृष्टांत मथुरानगरीये जयसिंह राजा तेहने इन्द्रदत्त नामा पुरोहित मिथ्यालोछे तेणें गोखवेठां राजमदै चारिविया वांटे आवतां देखी गोखधी हेठा पग करी जे हवे गुरु गोखधी हेठा नीकले तेहवे तेणें मस्तके पगदीधी तेहवी स्वरूप साधुनी यावक दीठी तिहांसिठएहवी प्रतिज्ञा कीधी माहरी जीवतव्य प्रमाण जीएपुरोहितना पग छेद करीये तिवारे अष्टि पुरोहितना छिद्रताके पिणकांद्र चले नही तिहांसके ते पुरोहितनी स्वरूप गुरुने कछी बलती गुरु कहे महातुभाव महात्मा पूजासत्कार निन्दा ते समगिणे सत्कार असत्कार परीसह सहै वली अष्टि कहे भगवन् मिथा लख्खेयीजीइये यतः साधूणं वेद्रे याणय पडिणीयतह अक्कवायंच जिण वयणत्स अहियं सब्बत्याभिणवारिइ १ साधुनीज्ञान नी उपद्रवकरणहार प्रवर्ण वादनी बोलण हार जिन वचन नी उत्यापक एहने यथा शक्ति यिथ्या न देता विराध कइंइ वलीअष्टि कहे भगवन् मिथा लीने सीखदीधी जोइये एवचन सांभली गुरु वलीअष्टिने पूछी हिवगणए पुरोहितने घरखुं इवेछे तिवारे अष्टि कहे एहने नवी अवास नीपनीछे तिहां राजा जीमवानु निहुंतयोछे तिहां राजा आवास माहिं जीमवावसे तिवारे तुं राजानी हाथसाही जभीराखि कहिजे स्वामीए घरमांमापे सो हिवडां अवास पडिस्ये तिरांथ कुंतेणे अष्टि राजा नीतरे आवास मांहि आये पेसे तेहवे राजाने जभीराखि कछी मतांपधारीएअवास पडिसीतेहवे ततकाल आवास पड्यो तिबारे राजाद्रं कहुं एसु घाटि अष्टि करी यम्पने स्वानी गुरे कछी राज हर्ष थकी गुरुने पगे लागी वीत रागनी धर्म पडिवज्यो अष्टिने ते पुरोहितनी पदवीआपि अष्टिराजाने आगलि कही स्वामी पुरोहितीये चारिवीयाने माथे पग मूक्या हती ती एहलीकना फल देखाडिये राजापुरोहितने इडिघास्यीकेतले दिने अष्टिराजा नेकहे गुरुना पग धीइ पीवेती मूकजी तिणे हां भरी समस्तलोक समज चरणोदकपायी प्रतिज्ञा सेठ पूरे कीनी जिम साधु महापुरुये परीसहसष्टी अष्टि नथी सण्, तिम

इति प्रज्ञावान् साधुर्न अनु तथैत श्रुत्वा मम कोपि सत् कारं न करोति किमर्थं मह प्रव्रजितः इति चिन्ताप रो न भवेत् ३८ अत्र
 आप्र अमण्योः कथा यथा मथुरायां इन्द्र दत्तः पुरोहितोस्ति सजिन गासन प्रत्यनीकः सागवाजस्थः सन् प्रपोनिर्गच्छती जैनयतर्मस्तकोपरिनिज
 चरणं विततं करोति एव निरन्तरं कुर्वाणं तं दृष्ट्वा साधुर्न कोपि कुप्यति परमेकः आवकः जुपितः तत्त्वाद्दृष्ट्वा प्रतिजगत्करोत् अन्यानि तच्छि
 द्वाणि अलभ मानिन तेन आवर्जण तत्स्वरूपं गुरोः पुरः कथितं गुरुणीकं सहति सत्कार पुरस्कार परोपहः साधुर्निति तेन सप्रतिज्ञा कथिता गुरु
 भिरुक्तं अस्य गृहे किं जायमान मस्ति तेनीकं नवीन प्रासादे राजानिमत्रमाणोस्ति पुरोहितेन गुरुभिरुक्तं तर्हित्व तत्प्रसादेन प्रपिगन्त राजान
 करे धृत्वा प्रासादीयं पतियतीति कथये अहं च प्रासादं विद्यया पातयिथामि ततस्तेन तथा कृते प्रासादः पतितः राज्ञोक्तं किमिदञ्जात शेटि
 नीकं महाराज अनेन तव मारणाय कपटं मण्डितमभूत् ततो रुटिन राज्ञा स पुरोहितस्यस्य शेटिनोऽर्पितः तेन शेटिना इन्द्रकीर्त्तते तस्य पादं
 द्विधा प्रतिज्ञापूर्णार्थं च पिष्ठस्य पादं क्षत्वाच्छिन्नवान् उक्तवाच सर्वतत्स्वरूपं पुरोहितेनीक मतः परं नैवे दृग् करिष्यामीति जानुकस्मै न श्रापकेण
 कोधी गुरु सुवर्ण भूमिकाद् पशुता ते आवर्त्ते महात्मानि प्रतिबोधि गुरे कन्ते मीकल्याह्वये ते पाचसे कालिकाचार्यनी परिवार पावतो सामन्तो सागरचन्द्र
 साधुही जाइ ते सागरचन्द्रे पूष्णु एतत्सा साधु मां गुरु केहा तेहवे शिष्य कहे स्युं इहां नगी भाव्यातेहवे सागरचन्द्र कहे एक स्वधिरसाधु भाव्याह्वि तिवारे
 ते पांचसे कहे इणे सागरचन्द्रे गुरुने अयगिण्या न जाखा इम चितधी सर्व गिष्य भावी पने लागा गुरु प्रते आपरा प्रथगुण रामाविवा लागा तिवारे
 गुरु सागर चन्द्रे कथं तुं गर्व मकरी सर्वजतो सर्व जटालो सर्व वसु कीर्त्तं न जाणे जिम कालकाचार्ये प्रज्ञा परोसहस्रहो तिम वीजे सत्पिबो हिवे
 अग्यान परोसहे २१ मी कहे ते निरर्थक वि० निवर्त्थी से० मैथुन थो सु० रुन्धी पांचप्रद्वी सवर करोने जी० जीपादिक पदार्थ स० साक्षात् प्रगटना०

गच्छतीति श्रुत्यश्च मत्कृतः अथ गिथास्ततः श्रयातरेण तिरस्कृता. तयां प्राप्ताः स्वगुरुं शर्वपथ तद्वलिता. कालिकाचार्या समायाज्जोति प्रसिद्धिं
कुर्वाणाः सुवर्णं भूमी प्राप्ताः सागरचन्द्रः कालिकाचार्याः समायाज्जोति प्रपथ पुरः प्रोक्तान् अप्राप्तं नयापि उतमस्ति सागरचन्द्रस्तीषां मसुग
मायातः तस्यैः पृष्ठं किमत्र कालिकाचार्याः समायान्तामन्ति न वा तेनीतं एकोर उपम मायातोस्तिनापर' कोपोति देप्रपत्यवान्तः समायाताः
उपलक्षिता कालिकाचार्याः प्रणतास्त्रैः सागरचन्द्रेण पयादुपलक्ष्य तेषा मिया दुःकृतं दत्तं तामया अतलनयवर्तिनातिन नतनिध्या व्युत्तमायातिता
इति च कथित कालिकाचार्यैरुक्तं वत्स युतगयी न कार्यं यथा सागरचन्द्रेण युतमद्दः कृतस्तनापरैर्न तंतमद्द. कार्यः पय प्रकल्पे गवैः प्रशाभावे
देन्य चिन्तन' इत्युभ यथा अत्रानं अतस्तत्परोपहमपि सोढयः इति कारणद्वयान परीपञ्जमाः निरुगं मिचिरपी नैद्युगापी सुसम्बुद्धौ जी सकलं नामि
जाणामि धम्मं कक्षाणपावगं ४२ तवो वहाण सादाय पडिमं पडिवज्जपी एवंपि तिचरपीमि इउमं ननि अट्टं ४२ अहं निरर्येके पर्याभावे सति

मेहुणाओ सुसंवडी । जोसक्खं नाभिजाणामि धम्मं कक्षाण पावगं ॥४१॥ तवो वहाण सादाय पडिमं पडिवज्जयी
एवंपि विहरपी मे इउमं ननियद्धई ॥४२॥ नत्विन्नूणं परेणोए इट्ठी वावि तवयिणो अटुवा वंचिपी मिति इउ
भिक्खूनचिंतए ॥४३॥ अभूजिणा अत्विजिणा अटुवावि भविसाद्धे । सुसंतं एवमाणंसु इउ भिक्खू न चिंतए ॥४४॥

नथो जाणतो ध० धर्मवसुनो स्वभाव क० मीचनो हेतु मा० नरकनो हेतु ४२ त० तपभट्ट मयाभद्रादिक प्रतिज्ञा प० उ० सीगत भगता प० भिच्चा
निप्रतिमा प० पडिवर्जिनि ए० एणी परे विचरतां मे० गुहर्न हे० एषथ पणं न० निरर्चनपी टने नञ्चो ४२ एव भगान परेमसट्टांत गगापुर

नगर वे भाई वैराग्य थी दीक्षा लिखी ते माहि एक विद्यावत बीजी मूर्ख जे विद्यावत ते आचार्य पद पायो अनेक ग्रिथने अर्थ विपार कहतां अति
 यात खेद खिन्न हुआ तिवारे चितव्यो भयामाहि मूर्ख पणु भनो जे मूर्ख दीसता गुणयत मूर्ख ल्व हि सखे ममापि र चित यस्मिन् यदिष्टी गुणा
 निश्चिती बहु भोजनो लपमना नक्त दिवाशायक कार्याकार्य विचारणाधवधि रोमानापमानिसम प्रायेणामयवजितो दृढवपुर्मुखं सुख जीवति १
 एहवी चितवतां ग्यानावरणो कर्म जपार्ज्यो कतने दिने कालकरी देवता ह्यथो तिहाधोचवि अहीरने कुले पुत्रबण्डवत्र ह्यथो कालातरि दीरग्या
 लोधी तिण उतराध्ययननायोग वहता त्रिण अध्ययन करी भय्या तेहवे पाछि लाभ वनी कर्स उदय आव्यो आविलकरी असखय अध्ययन भय्या वारि
 वरस आवि लतप करो कर्म खपावी केवल ग्यान जपनी जिम तेंगे अज्ञान परिसह सद्यो तिमबीजे सहिबी ईत्यज्ञाने अहिर पुत्र फथा अग्यान पश्याथी
 सम्यक्त ने विपे सदेह सहित घावानी समवते भणौ दर्शन परोसह २२ मी कहै छे न० नथी नू० निये प० परलोक इ० आमी सही आदिलखि रूप ऋडि
 पिण नथी त० तपस्वी अ० अथवा व० वच्योमि० माहरी आत्मा भोग थी मस्तकली चादि करवे करी इ० एहवीभि० साधु न० न चितवे ४४ पूर्वें हुवा
 जि० जिन सर्वज्ञ अ० छे जिनसर्वज्ञ वर्तमान काले महाविदेह खेचने विपे अ० अथवा आगामीद कालेपिण भ० इत्ये जिन सर्वज्ञ सु सृपा ते जिननी
 आश्रि कहै छे ए इम मा बोले सृपा इ० एहवी भि० साधु न० न चितवे ४५ अथ दर्शन परिसह दृष्टात भूमिपुर नामा नगर आखाठ भृति नामा
 आचार्य तेहने घणा शिष्य क्रियावत केतलेक दिवसे आचार्यना मन माहि एहवीदर्शन सम्यक्त नी सदेह जपनीजितियकर हुवा छे आगे हुसी क्रिया नहीं
 होसी महाविदेहे जिन छे तथा नहीं छे देवलोका जाइके क्रिया नहीं जाय छे एहवी मनमे सदेह करतोहुवी अनेमाहारा शिष्य घणाचारित पालिने खर्गे
 गया ते क्रिणहो पाछी प्राविने कद्यो नहो कि अन्हें चारित थी देव सुख पाय्या छिबे एक लघु शिष्य सथारो कद्यो तिवारे गुरु कद्यो तुम्हे देवता हुवी

तो अम्हें कहि ज्यो हिवे ते शिष्यनी गुरु उपर राग हुंती प्रने गुरे कशी ताहरी सुभ उपरि मीह छे तूं देवता थावे तिवारि सुभने प्रावि करी जे जे मरी हुं देवता थयुं पिणते आवी न कह्यो तिवारि आपाळ भूतो आचार्य चितवे छे चेला वल्लभ हुंता क्रिया कलाप हुंति जो देवगति पास्यहता तो कहती पिण ते देवगति न थी पास्य एहवी सका उपनी अने देवता थयी ते ती सुखमे लीन देवोने भोग राता थका नापे गतकालन जाणि हिवे गुरे चिंतव्यो जी लोकनासख थी काइं बुकीये इमचारित्र थी भृष्ट थईं गच्छ छांजि एकाएकनीकव्यतिहवे लघु शिष्यदेवतानी भासन कथोप्रवधि ज्ञान करी ने देखे ती गुरु चारित्र थी पया छे ती हुं जईं राखुं इम चिंतवी देवताइ पाटे गुरे श्रावता जाणी नाटकनी रचना करी गुरु तिहा गावीनेजीवा लाग तिहां छ मासलगिजोई वली प्राधा चालायली देवताइं संयमनी परिचाभणी वालक छह भूपण सन्तित विजुव्यां तेंहवैगुरु विमास्योजि गृह धर्म थार सुं ती धन जोई सेती अने सुभने धन उपाववानी कारण कीईं आवे नही ती एविडिमां वालक छे ते विणसी इम चिंतवी पालक नाम प्यथवी जाइ थी पूछी ते विणसी ग्रहणा लेईंभी लिमे घाल्या प्रागलि जाता अपकाइया ३ वायुकाइया ४ वनस्पतिकाइया ५ तसकाइया ६ एहवे नामे जाल कते मारी गहणा लेइं भीलीमा घाली गुरु प्राधा चाल्या वली देवताइं सार्थवाहनो रूप करी आचार्यने वांटी प्राहारनी प्रागर कीधु गुरु गन्तित थका कहे आज अम्हरिखप नही आहारनी इम तेणे सार्थवाहे भोली छोडी देरी जाल कना आभरण ते गुरुने कहे हे भगवन् प्रागाग पुानाए ग्रहणा अम्हारा पुत्र किहां इम कहे थजे गुरु भयभ्रांत थईं धूजवा लागी गुरुनाम धरावी एकाम करो योजानि तुम्हे उपदेश थी प्रने जी तमे एकाम करिस्थी ती हुं न राखिस्से इम करतां कहे वाहिर गाईं देवमायाइतकाल गहणासहित देरि गुरुने पराभव करीवा लाग तिवारि थार सरणा जीधा तिवारि देवताइ चिंतव्यो गुरे सर्वनी गस्थे पिण बोधवीज सम्यक्त नथी नींगस्थी तिकाइं नथी विणठी तलाल आपणी रूपप्रगट करी पळी हे भगवन्

मैथुनाय काम सुखात् विरत निरुक्त मैथुनग्रहण दुःख्यजलात् यतीह दुःकर काय कृतवान् यीह सुसमृतो जितेन्द्रियोपि साक्षात् स्फुट धम यशुवभाय कल्याण शम पापक अशुभ न अभिजानति यदि मैथुनाविहसो चितेन्द्रियत्वेपि काचिदर्थं सिद्धिर्भवेत् तदा मगत्रान उत्पद्येत ममतुज्ञान नोत्पन्न तदा उद्याह मैथुन अत्यज इयै वर इन्द्रिय जय अकरव पुनरित्यमपि न चिन्तयेत् तपो भद्र महाभद्र सर्वतो भद्रादि उपधान सिद्धान्त पठनो पचाररूप एक मत्त निर्दिहति आचारान्नोपवासादिक आदाय अङ्गीकृत्य पुन प्रतिमा भिद्यो रभियह विशेष क्रिया द्वादशविधा प्रतिपद्यमानस्य मम एव विहरत साधुमार्गे विहार कुर्वतोपि छद्मस्य ज्ञानावर्णादिक कर्म न निवर्तते अह तप करोमि उपधान वहामि प्रतिनाद्य धरामि साधुमार्गे विहरामि तथापि केवली न भवामीति न विचारणीय अथ अज्ञानपरीषह अत्र अज्ञानपरीषह कथा गङ्गातीरे ही भ्रातरो वैराग्यादोद्या गृह्येत्तयन्ते तत्रैको विद्वान जात द्वितीयस्तु मूर्ख यो विद्वान सोऽनेक श्रियाथापनादिना खिन्न एव चिन्तयति अहो धन्योय मे भ्राताय सुखेन तिष्ठति निद्रादिक अबसरे कुर्वन्निति अह तु श्रियाथापनादि कष्टे पतितोऽस्मीति चिन्तयन् काथमिदं चकार मूर्खत्व हि सखे तुहेगं क्व मोहि धो कदो नौकस्या हुता वाटे आवता काद्र दीठो तिवारे गुरु कहे चिण एक पाटक जीवो भगवन् स चेत धर्मे ग्यान दृष्टि जीवो तो ते दिन अने आज दिननोराति जीवो तेहवे गुरु मडली सूर्य रोद चिण धो उत्तरायण दीठो क्व मासनी अनतर जाखो तिवारे देवता कहे भगवन् तुम ने नाटक जीवतां छमास चण प्राप्त हुवा तो अन्हे देवता देवलीक नाटक प्रारये एक नाटक ने विदे वै सहस्र वरस जाये इम भोग रगते नृक्या किम आवे इम आपणी अण आविवानी सरूप जणवी धर्मे स्थिर करिदेवता देवलीकगयु आखाट भूत आचार्य शुद्ध चारीतपाली मुक्ति पु हता आपाटा चांय पङ्गिन दर्शन परिसहस्रो तिम अन्य साधु सहिवो इति दर्शन परीसह दृष्टात ए० पूर्वं कथा ते प० परीसह स० सधलाद्र बाधो वै का० कागप

समापि हेचितं यस्मिन् यदष्टौ गुणाः १ निश्चिन्ती १ बहु भोजनीर ३ नक्तं दिवासायकः ४ कार्यकार्यं विचारणम् वधिरो ५ मानापमाने
समः ६ प्रायेणामय वर्जितो ७ दृढवपु ८ मूर्खः सुखं जीवति १ परं नेवं चिन्तयति नानायास्त्र सुभाषितामृतरसैः श्रौतीत्सवं कुर्वतां येषां यान्ति
दिनानि पण्डितजनव्यायाम् खिन्नात्मनां तेषां जन्म च जीवितञ्च सफलं तैरेव भूभृत्पिता श्रेयैः किं पशुवद्विवेक रहितैर्भूभारसूतेनरैः २ एव पण्डित
गुणान् अचिन्तयन् मूर्खगुणांघासतीपि चिन्तयन् ज्ञानावरीयं कर्मवद्वादिवं गतः ततश्च्युतो आभीर युवीजातः क्रमेण परिणीतः तस्य
पुत्रिकाजाता सा रूपवती अन्यदा अनिकाभीराष्टत भृत शकटाः कश्चिन्नगर प्रतिगच्छति असावपि तत्सार्थं दृत भृतं शकटं गृहीत्वा चलितः मार्गे
सा युक्ती शकट खेट न करोति ततस्तद्रूपव्या मोहितै राभीरपुत्रैः अपथे खेटानि शकटानि तानि सर्वाणि भग्नानि तादृशं ससार स्वरूपं दृष्ट्वा
सञ्जात वैराग्यः स आभीरः तां युक्तीं उवाच दीक्षा उत्तराध्ययन योगोद्बहनावसरे असंख्याध्ययनीदिशि कृते तस्य आभीरभिचोर्ज्ञानावराणी
दयी जात न तदध्ययनमायाति आचान्त्वान्येव करोति उच्चैः स्वरं तदध्ययन निर्वीपं करोति एवञ्च कुर्वतस्त्रस्य दादगवर्षप्रान्ते अज्ञानपरिपहं
सम्यग् अधि सहमानस्य केवलज्ञानं समुत्पन्नं एव अज्ञानपरीषहे आभीर साधुकथा यस्य च ज्ञाना जीर्णं स्यात् तेनापि ज्ञानपरीषही न सीढ
स्तत्रार्थे स्थूलभद्रकथा स्थूलभद्र स्वामी विहरन् बालमित्र हिज गृहेगतः तत्र तं अदृष्ट्वा तन्नार्थीं पृष्ठवान् कृते पतिर्गतः सा प्राह परदेशे धनार्जनार्थं
गतोस्ति ततः स्वामी तद्गृहस्तत्र मूलस्थितं निधिं पश्यन् स्तम्भाभि मुखहस्तं कृत्वा इदमीदृशं सचतादृश्य इति भणित्वागतः ततः कालान्तरे गृहहा
गतस्य विप्रस्य तन्नार्थया स्थूलभद्र स्वामिवचो आपितं तेन पण्डितेन ज्ञातं अत्रावश्यं किञ्चिदस्ति ततः खानितः स्तम्भः लब्धोनिधिः एव स्थूलभद्रेण
ज्ञानपरीषही न सीढः श्रेय साधुभिरपी दृश्यं न कार्यं अथ अज्ञानात् दर्शनीपरिकथित् संसयः स्यात् अतस्तत्परीषहः कथ्यते नत्थि नूणं परलोए इद्दी

वावितवक्षिणी अदुषावक्षिणीमिति इद्रभिक्षू न चित्तए ४४ अभूजिणा अयिजिणा अद्रुवावि भविस्यई सुसन्ते एवमाहसु इद्रभिक्षू न चित्तए ४५
नून इति सभावनयां परलीको नास्ति परलीके गत कोपि नात्रागत्य वदति तस्मात्प्रत्यक्षस्य अभावात्त्रास्ति परलीक वा अथवा तपस्विन
अपि साधोरपिकाचित् ऋद्धि रामर्षोपधादि प्रमुखा काचित्रास्ति न दृश्यते अथवा कि बहुना अह वक्षितोस्मि ऋपिभि स्वगितोस्मि इति
भिर्गुर्नचित्तयेत् ४४ तेजिना केवलिन एव आहु कथयन्तिस्त तत् असत्य एव तत् किञ्चिनास्तीर्य कारा केवलिनो वा अभूवन् पुनर्जिना सन्ति
साम्प्रत वर्त्तमान काले महाविदेह शैत्रादौ सन्ति अथवाऽप्ये भविष्यन्ति इति यदूचु स्वत् असत्य प्रत्यक्ष अदृश्यमान त्वात इति विचारे क्रियमाणे
सम्यक्त भद्र स्यात् तस्मादिति न विचारणीय सम्यक्त परोपह सोढय्य अत्र आचार्यापाठसूरि कथा वक्ता भूम्या आपाठभूति सूरयस्त त अर्च्छे
यीय काल करोतितत निर्जरयामासु अन्यसमये तेषामेव कथयन्ति युष्माभि स्वर्गदेवी भूय मम दर्शनन्देयन्ते चस्वर्गो गच्छन्ति परमाचार्याणा
दर्शन न ददति तथाच सुरीणा परलीकयद्वा जायते एकदा एको विनेय प्रकाम स्वभक्त समाधि मरणसमये सूरिभिरैव सुक्त तथा स्वर्गे देवी भूय
अवश्य मम दर्शनन्देय न प्रमाथ सोपि सृत्वादेवी जात पर विचित्र रचनानात्थादि दर्शनेन व्यगत्वान्नात्वायात तावता सूरिभिरेव चिन्तित
नास्त्वैव परलीकस्तत कोपि नागच्छति यदि परलीक स्वात्तदा मच्छिष्या कृत प्रतिज्ञा अपि कथ न दर्शन दद्यु ततो मयाथयावद्वतानि पालि
तानि तपासि तप्तानि कष्टानि कृतानि सर्वास्त्वय्यनुष्ठानानि सुधाजातानि सुधामया भोगाम्बका वक्षितोहमिति मिथ्यात्व प्रतिपन्ना गच्छ मुक्ता
एकाकि न एव लिङ्गमात्र धरानिर्गता अतान्तरे तेन भक्त शिष्येण देवौ भूतेन कियद्दिनानि यावन्नात्थादि विलीक्य गुरु प्रेम्ना अत्रायात मिथ्यात्व
गता गुरवो दृष्टा तप्रतिबोधाय कस्यचिद्गामस्य सीम्निनात्थ विचक्रे तत्र आचार्यां परमासान् यावन्नात्थ पश्यन्त क्षधादिक नातु भूवन्त तात्पश्च

देवेन विष्टं आचार्यं अग्रतद्यलिताः ततस्तेनैव सुरेण तेषामाचार्याणां संयम परीक्षार्थं पट्कायनामानः पट्टदारकाः सर्वालङ्कार विदुर्विताः प्रथमं पृथ्वीकायिकः कुमारस्तेषामाचार्याणां दृष्टौ पतितः आचार्यो आहुः भी बालभूषणानि ममार्ष्यं सनार्पयति तदनु स्मरिभि रसौ गले गृहीतः ततश्च भयभ्रान्तौ बालः प्राह प्रभो अहं पृथिवी कायिकः कुमारः अस्यां रौद्राटव्यां त्वां शरणं श्रितः भवाद्यथाणामेवं कर्तुं न युक्तं स्वामिन् सदुक्ताए का कथा श्रूयतां तथाहि एककुलालः खानी सृदं खनन् सृदाक्रान्ताएवं भणति जेणभिक्वं बलिन्देमि जेणपीसेसिनाईओ सारिमही अक्क मइजायं सरणओभयं १ एतत् न्यायेन शरणगतस्यापि कथमेवं पराभवं करोपि स्मरिभिरुक्तं अति पण्डितो सिबालेल्युक्त्वा तद्गङ्गाभरणानि गृहीतानि पात्रे चित्तानि गतः पृथिवी कायिकः स्त्रीकान्तरे गच्छन्निराचार्यैर्द्वितीयो पकायिक नामा बालको दृष्टः सोपि तथैव उवाच तत्काथिता कथा चेयं एकः पाटलनामा तालाचारः प्रकामं वा गमीसोऽन्यदा गङ्गा श्रोतसि प्रविष्टः तेन चक्रियमाणीऽसौ तटस्थ जनेनाभाऽपि हे पाटल प्रात्र किञ्चित्सूक्तं पठसोऽवा दीत् जेण रीहन्तिबोआणि जेण जीवन्तिकाळवा तस्सा मज्जेमरिस्सामि जायं सरणओभयं १ एवमपूकायिक कुमारेण कथा उक्त्वा तथापि तस्सभर णानि तेनाचार्येण अति पण्डितोसि कुमारेत्युक्त्वा गृहीतानि सोपि तथैवगतः अग्नेऽग्नि कायिकः कुमारस्तस्यापि तथैवीक्ति प्रत्युक्त्वा तत्काथिता कथाचेदं एकस्य तापसस्य अग्निना उटजी दग्धः सवक्ति जमहं दिवा यराओय तप्पेमि महुयासिणा तेणसे उडओदीखी जायं सरणओभयं १ अस्मिन्नेवार्ये द्वितीयाकथा कथित्यथिकः पथिव्याघ्न भीत्याग्नि शरणं श्रितः तेनैव तस्यागन्धं स प्राह मएवग्धस्सभीएणं पाओी सरणीकओी तेण दइं समं अइं जायं सरणओभयं १ एवं कथाद्वय कथयतः तस्य कुमारस्य तेनाचार्येण तथैवीक्त्वा आभरणानि गृहीतानि अग्ने वायु कुमारी मिलितः तस्य तथैवीक्तिः तत्काथिता कथाचियं एको घननिचित शरीरो वायुजानि सचान्धटां वायु भग्नः एकोदण्डधारी मार्गे गच्छन् केनाप्युक्तः इहो दृढांगत्वं

यद्भवति तद्भवतु मयाऽने नेव सह विलासः कार्यः इति चिन्तयित्वा जागरित्वेन तेन समं पुनर्भोगान् मुञ्जा रासुप्ता सोपिसुप्तः द्वावपि निदाशौ प्रभातेपि न जाग्रतः प्रातर्ब्राह्मणी तत्रागत्यती तथा सुप्तौ दृष्ट्वा इमां मागंधिकां पठति अद्र रगाइएविस्त्रिए चेइए अश्रू भगए विवायसे भिक्तीइगए वि आयवे सहिसुहिए हुजणेन वुज्जई १ व्या० अचिरोइतकेपि च सूर्यकीर्थं प्रथमीदिने रवी चैल सूपगते च वायसे अनेन उच्च विवस्वतील्वाह भित्तिगते च आतपे अनेन उच्चतर इत्यर्थः सखि सुखितीहुवाक्यालङ्कारे जनी न बुध्यते ननिद्रां जहाति अनिनात्मनी दुःखिलं प्रकटयति साहि भले विरह दुःखिता रात्रौ न निद्रां लब्धवतीति मागंधिकार्थः जननी प्रोक्तामिमां मागंधिकां गुत्वा पुत्रि विनिद्राप्राह तुममेवह अश्वमालवे माहुविमा णीय जक्खमागयं जक्खी अनहुए हतायए अन्नं माय गवे सता यय १ व्याख्या तमेव अश्व मातह इति आमन्त्रणे अलापीः उक्तावती श्रिया समये यथा माहुत्तिमेवविमाणयत्ति यत्तमागतं विशुख मा क्कथाः जक्खीयत्ति अयं यत्तः ननु अय तातकः पिता हे मातः अन्यं तातकं गवेपयेति मागधि कार्थः पुनर्माता भणति नवमासह कुच्छिधारिया जसापस्स पुरीसमइयं धूया एतएमि गेहिअो हरिअो सरणासरणयं १ व्याख्या नवमासान् यावैत् या कुक्षी धारिता यस्याः प्रयवणं पुरीष च मर्दितं धूया एतएत्ति तथा दुहिला भित्ति मे मम गेहिको भर्त्ता हतः चीरित स्तती हेतोः शरणं अशरणं मम जात भिति गम्यं हितं कुर्वत्या मम अहितं जातभिति मागधिकार्थः यथा तस्याः पुत्रा माटपिट्थ्यां विनाशः क्ततस्तथा माटपिट्तुल्ये न भवता महिनाशं क्रियमाणीस्ति एवं तसकायिकेनीक्तेपि स आचार्यो न निवर्त्तते अथ तसकायिकशतुर्थी कथामाह एकस्मिन् ग्रामे एकेन ब्राह्मणेन यज्ञार्थं सरोकारिसरः सतीपे वनमपि च तवानेकान् पशून् जुहत् द्विजो मृतस्तत्रैव ग्रामेऽज्जनि स चरणार्थं बहिर्याति सरोवनं च पश्यति ततो जातिसरणवान् जात अग्न्यदा तत्सुतेन यज्ञः कर्तुमारंभे तदर्थमसावेवाजस्तेन सुतेन तत्रैव सरोवरे नीयमानो गाढस्वरेण पूकारं कुर्वन् केनचिन्मुनिना सातिगयज्ञाग्निं दृष्टो

भणितय वियहयुणावीते छगनतद् आरीविश्रकव जत्र पयत्तणते कीयथी काइ तूळुमुकव १ थियहत्ति देगीवचनत तटाकिकेत्यर्थ यत्ति प्रणीताभिमां
 मागथिका युत्वा अजी जातिअरणधरी मीनवान् जात तत्पुत्तेण साधु दृष्ट कथमसौ मीनीजात साधु प्राह अथ त्वत्पिता अथयागकरणादज एवजात
 त पत्ते गोत्त अत्राथे अभिज्ञान कि साधु प्राह तव गृह्यागणे भूनिहित निधि असौ पादाये ण दर्शयियत्ति ततस्तथैव तेनाजेन ज्ञात पुत्तस्य अजस्य च धर्म
 प्राप्तिद्वयोरपि देवलोका गतिर्जाता एव तेन ब्राह्मणेन शरण मे भविथतीति क्त्वा तटाकसमीपे यन्नारामो विहित स एवास्य वधस्थानतया भयनेन
 शरणाद्रयमुत्थितमिति शब्दपद जात एव भयन्तीपि शरणागतानामस्माक अनर्थकारिणो जाता एवमुक्तेपि तसकाधिक कुमारस्याभरणानि गृहीतानि
 एव पश्चामपि कुमारकाणां पठितवादिनो यूयमित्युक्त्वा भरणान्यादायाये चलित सूरि पुनस्तेन देवेन सम्यक्त परीचार्थे दारक कषायालक्षता साध्व का
 दर्शिता ता दृष्टा सूरिरेव मास्यत् हे प्रवचनोऽडाहकारिके दूरतो ब्रजमुख मा दर्शय गृह्याया तथा उक्त राईसरिसवमित्ताद् परिच्छिद्दाद् पाससि अप्पणो
 विनमित्ताद् अप्पच्छिद्दाद् न पाससि १ तव पतद्ग्रहे किमस्तीति तथा प्रत्युतीपालथस्तथाप्यसौ न प्रतिबुद्ध अग्रे चलिता तेन आचायेण
 स्तन्यावारगती राजा दृष्ट तेन राज्ञा आचार्यो वन्दित प्रीक्त च हे प्रभो पात कन्वरप्रासुकमोदेकान गृह्याण तत स पावचिगाभरणदर्शनभीत्याऽवदत्
 अहमद्याहार न करिबे राज्ञा च हठात् भौलिकांत पात कर्पित आभरणानि दृष्टानि राज्ञोक्त हे अनार्य कि लया मत्पुत्रा व्यापादिता इत्यादिवचने
 सज्जित समूरिभयभ्रंती न किञ्चिदकि पद्याभ्यायाजाल सहस्रत्य सशियदेव प्रकटीभूत स्वहृत्तान्त अचकथत् एव चोपदिष्टवान हे प्रभो यथा लया नाद्य
 पय्यता पय्यासान् यावत् छुत्तृपा न भ्राता एव देवा अपि दिव्यनाथ पश्यन्ती न किञ्चित् अरन्ति नाप्यत्रागमनोक्ताह कुर्वन्ति यत सिद्धतिप्युक्त सकत
 दिव्यपेमद् विसयपसप्ता सम्भसक्तमत्वा अणहीणमणुअकज्जा नरभवमसुह न इ तिसुरा १ इत्यादि शियदेववाक्यै सप्रतिबुद्ध सिद्धान्तस्यचनास्या क्त्वा

उत्तराध्ययने परिषदाधिकारं संपूर्णं भावितात्मा अणुगार बूटाराय जी तच्छिष्य भगवान विजय साधुना संशोधितम् ।

पुनः सयमे लीनः पूर्वं तेन दर्शनं परीषही न सीढः पश्चात्सीढः अथ कस्य कर्मण उदये कः परीषहीदयः स्यादित्याह दर्शनमीहनीयीदयात् दर्शनपरीषहः स्यात् ज्ञानावरणीयीदये प्रज्ञा परीषहः स्यात् तस्यैवीदये अज्ञानपरीषहीपि स्यात् अंतरायकर्मीदयेऽज्ज्ञाभ परीषहः स्यात् चारित्रमोहनीयकर्मीदये आक्रोश १ अरति २ स्त्री ३ नैषधिका ४ अचेल ५ याज्ञा ६ सत्काराः ७ एते सप्तपरीषहा उत्पद्यन्ते शेषाः एकादशवेदनीय कर्मीदये उत्पद्यन्ते ४५ अथ सर्वोपसंहारगाथामाह एए परीसहा सल्ले कासवेण पवेइया जे भिक्खू न विहनेज्जा पुठ्ठी केणइकहुइत्तिवेमि ४६ एव हाविंशतिः सर्वे परीषहाः काश्यपेन श्रीमहावीरेण प्रवेदिताः प्रकर्षेण ज्ञात्वा यान् ज्ञात्वा भिन्नुः साधुः केनापि परीषहेण स्पृष्टः सन् कुत्रचित् कस्मिंश्चित्देशे कस्मिंश्चित्काले वा न विहन्ये त सयमात् न पाल्येत ४६ इदं हि कर्मप्रवादनामाष्टमी हि पूर्वस्तासु सप्तदश प्राप्तं तस्योद्धारलेशं द्वितीय अध्ययन उत्तराध्ययनस्य इति श्रीमदुत्तराध्ययन सूत्रार्थदोषिकायां उपाध्याय श्रीलक्ष्मीकोटिगणेशिथलक्ष्मीवल्लभ गणविरचितायां द्वितीयं अध्ययनं संपूर्णं ॥२॥ अथ द्वितीयाध्ययनेन

एए परीसहासल्ले कासवेणं पवेइया । जेभिक्खू नविहनेज्जा पुठ्ठी केणइ कगहुइ इत्तिवेमि ॥४५॥ परीसहज्जयणं

गोत्रीन्द्रं श्रीमहावीर देवे प० प्रहृष्या छे जे० जे धीर्यवंत भि० साधु न० नहणे सयम पु० पीडो थको के० बावीस माहिली एक कुंणे कइ परीसह क० कीर्दक स्थानकने विषे इति सुधर्मा स्वामी जंबू स्वामी प्रते इम कहुं ४६ जिममे श्री महावीर कन्हे सांभल्यो हुतो तिम हू' तुम्ह प्रते कहुहुं इति परीसह अध्ययन नार्थ समाप्त २ पाच्छिन्ने अध्ययनेवावीसपरीसहकह्या ते स्पुं अवीलंबी २२ परिसहसहे इमशियथपूछे थके हिविगुर कहेछे चार अंगपामता

दृढीयाध्ययनस्य सम्बन्धमाह । किमालम्बनं कृत्वा एते परोपहा सीढ्या इति प्रश्ने उत्तरं चतुरगदुर्लभत्वान्वयेन न सम्बन्धमाह चत्वारिपरमगाणि दुर्लभाण्योश्च जतुणो माणुसुत्त सुई सदा सजमभिय वोरिय १ एतानि चत्वारि परमद्वाणि परमानि उरकष्टानि अद्धानि मीचसाधनीपायानि परमत्व हि एतेषां प्राप्तिं विना सुक्तिप्रतिरभावात् कथंभूतानि परमाद्धानि जन्तो जीवस्य दुर्नभानि एतानि कानि मनुष्यत्व मनुष्यजन्म पुन युतिद्वयस्य यद्यप्य पुन यथा धर्मो रुचि पुन सजमभि सजमे साधाचार पालने वीर्यं सामर्थ्यं बलस्य स्फोरणं अत बुद्धिग पासग धने जूए रयणे यसुमिण चक्रेय चग्मयुगे परमाणू दस दिदृता मणु अलभे १ दय दृष्टातवत् मनुष्यत्व दुर्नभ उक्त तत्र बोद्धग दृष्टान्तो यथा बोद्धग परियाटी भोजन तदर्थं कथा कापित्यनगरे ब्रह्मराजा चलनो भार्या तयो पुत्री ब्रह्मदत्त एकदा मृत पिता ब्रह्मपुत्री बाल इति कृत्वा मिलद्वय प्रहिती दीर्घपृष्ठनामा राजा तदाज्य रचत्सि चुल

सम्भत्त ॥२॥ चत्वारि परमगाणि दुर्लहाणी हजतुणो । माणुसत्त सुईसदा सजमभियवीरिय । १। समावन्नाण

दुर्नभ छे जाणिसम्यक प्रकारे २२ परोसहा अहोयासे सहे ते भणो चीरगी नामा तीजा अध्ययन वखाणोये छे एहवा सवध कहे छे च चत्वारिक० थार परमगाणि क० परम उरकष्टी मीचसाधनीपाय दुर्लहाणी हजतुणो क० दुर्लभ दस ससारमे जीवीकु माणुसत्त क० मनुष्य जन्म १ सुद क० । धर्मका सुगना २ सदा क० धर्ममे रुचि । ३ सजम भियवीरिय क० सजममे वीर्यका फोरणा ४ अथ दृढीयाध्ययने कथा ससार माहि प्राणोने मनुष्यता भव दुर्नभ छे त्तिण जपरि दय दृष्टात शास्त्र मांदि कथा ते लोखीये छे गाथा बुद्धग १ पासग २ धत्रे ३ जूसे ४ रयणिय ५ सुमिण ६ चक्रेय ७ चक्र ८ युग ९ परिमाण १० दसदि दृढतामणुय भवि १ ए दय दृष्टातनो सचेप थी समभिक्षा मात्र भावार्थं लिखीये छे विस्तरार्थं बीजा पय थो सुकसमीप धकी साभलवी जाणवी पहिने दृष्टाते चूद्धग कहता भोजन तेहनी दृष्टात ते किम जिम बारमी धक्कवर्त्ति अद्भदत्त बाल पणे माता

चूलणीये विषय विकारि करेनि परवस छती राजा दिर्घ स्यो आसक्तयद् ते ब्रह्मदत्त जाणी ते दीर्घ रायने प्रतिबोधिवा भणी दृष्टांत देखाया एकदा पद्म नागणीने गीणससर्प एकठा करी गीणसने प्रहार सूकी कह्युं अरे पापिणी गीणस तुम्हने पद्म नागणी केहो संग वली अनरे प्रस्तावि राजहंसी अने काग लीएकठा करी काग प्रते कह्युं रे पापीकागतीने राजहंसी नी केहो सग इम कहो ता जाणै आहण्यो इम दीर्घ राय देखी भवभ्रांत यद् चूलणीने कह्यो इ ताहरा पुत्र थी विहुं तिण कारण जाइस्युं एहवी सांभली चूलणी रागी करी कळी हुं विणस स्युं तुं निचंत रहै इम कहो पुत्र विणसवा भणी ला खनी घर कराय्वी ते कूड मन्त्रीवर जाणी कांपिल पुरनगरने परसरे गंगानदीने उपकण्ठे उडज करी रहो तिहां हते सुरइखणवी लाखाहरने आंगणे आण सूकी आपणी पुत्र ब्रह्मदत्तने पासि सुंको एक चिणमात्र एह यकी वेगलीम श्राइसि ए पुरुष रतन छे एहने जी खम घणी तेणे कारणे यतन स्युं राखी जीइये यतः यस्मिन् कुले यः पुरुषप्रधानं स एव यत्नेन हि रक्षणीय तस्मिन् विनष्टे सकल विनष्टे इति वचनात् एहवा सीखामगतात नी अंगीकार करी मंत्रीवरनी वेटी रात दिन कुमरनी सेवा करे एक चणविगलो न थावे इम करता कुमर परणवी तेणे घर आय्वी अईरात्रि आवि चुलणीइं तिहां अग्नि लगाडी लाचाघर गलोर पहीवा लागी तिवारे मंत्रीवरने पुत्रे उठी कह्यु कुमरजी जागी तिवार ब्रह्मदत्त वेठी थसुं विंहुं पासि घर प्रज्वलती दीठी परं उत्तम पणा थी लिगारे कमन मांहि भयनाखी एहवो साहस जाणो परोखा निमित्ते मंत्रीने वंटे कुमर वीलाखी कहो जी हिवे स्युं घास्ये तिवारे कुमर कहे जीहवो भवितव्य के तेहनी समवाय मिलस्ये इसी कुमरनी वचन सांभली मन्त्रीवरने चितव्यो ए कुमर साहसनी निधान पुरुषमहाप्रधान के एहने कार्यसिद्धि स्वाधीन हुस्ये यतः उद्यमं साहसं धैर्यं बल बुद्धिपराक्रमे पडैते यस्य विद्यन्ते तस्य देवीपि शङ्कते ॥१॥ इसी जाणी बुद्धिनी परीक्षा भणी कुमर पूछे कुमर जी जिवारे वन मांहि दावा

एहवो विंचित कर्मनी गति छे इम जाणो मन माहि चितवे छे किण ही जपाय विना दर्शन चक्रवर्तिनी सुलभ नही थाये इम चिंतवी घणो लांबा वांस लेई तेहने अग्री पुराणा खासडानी माला करी वांशाग्रि बांधि स्तंभतणीपरीरोपीवइठी तंतले चक्रवर्ति रे वाडी नीकखी चक्रवर्ति ते ब्राह्मणदेखी वयाग्रि धंजा सरीपी माला देखीवीलाखी ए कुण छे तंतले एकने कहतां दश पनरे तेडीवा गया ब्राह्मण तेडी आंखी तंतले दृष्टिगीचर आंखी ते तले श्रीलखी चक्रवर्ति मनमाहि श्रीलखी दीहिली वेलानी मिच जाणी अत्यंत आदर सन्मान देई अभ्युत्थान कीधी एहवी देखी समस्त सुवाटबंध राजाप्रमुख सभा लोक विस्मित लोक थयो ए दरिद्रवां भणीयाने एतलो आदर केहवो इम न जाणे ए मन्त्रास पुरुष केहडी न देखाडे इणे कारणे अपूर्व वस्तु पछि रावी आपणे अर्धासने पालंखीविसारी आगत स्वागत पूर्वक समाधि पूछी सहित रेवाडीई' जई राजभुवनमाहि आव्याछे स्नान मंजन अलंकारमंडित करी भोजन मंडप वेसारी भोजन करायवी केतला एक दिन माही आहिवार्ता यिनीद गोष्टि'रमस्त क्रीडा करतां दिवस उल्या ते तले चक्रवर्तिइ' ब्राह्मण प्रते कह्यु अही मित सुभ कहेकुछले ताहर मन रुचि आधि ते मांगि जिम ते तुहने देईवाचाजरण थाउ जे भणी कह्यो राज्यं यातु त्रियो यातु त्राणा यातु मलीमसाः कृतं तेन हारितं । २। पत्यर रेहा विहडे जतु महु तेण घडीय दिवसेणं'। सपुरिसा नवयणं काले नगरएन विहडंति । ३। इण कारणे अपणी वाचा प्रतिपालु' राज्यलक्ष्मी सफल करु' यतः किंताएलच्छीए सेसफल रयणकीस तुम्हाए जाससयेणं हि नभूत्ता । ज्ञानहु दिदा खलजणहिं । १। तिवारे विप्रने एहवी मतो आवी जेह भणी मनुथने कर्म ने अनुसारे बुद्धि जपजे सा सा संपद्यते बुद्धिः सा मति सा च भावना । साहायातादृशा ज्ञे या यादृगी भवित्यथा । १। चक्रवर्तिने ब्राह्मण इसी कह्यो स्वामी माहर स्त्री छे तेहस्यु संगत करी तुम समीपे मांगु' राजाइ' कश्यो जे इम तो जई पूछ आवी सघते वणा मनुथ घोडला देई ते ब्राह्मण घरे मोकखी राजानी अनुशाइ' ते घरे पाखी घणा हन्द स्यु परिवन्धी स्त्रीरलियाइतथई आगत

वोजानि निमित्ता भोजन दक्षिणा दीधी परजे रस सूर्यपाकरसवती जीमतां हुवो तेहने अंतसमे भागि रसनजपनी सांसुहो पद्यात्तापि पद्यो सूर्यपाक रसवती वली किहां लाभस्ये' वली चक्रवर्तिने घरवारीकदे आविस्थे एहवो विमासी एकैके दिने घरे जीमतां दक्षिणा लेतां छ खण्डपुरी करी वली चक्रवर्तिने घरे सूर्यपाक रसवती जिमवा लहे इम संभवे तिवारे शिथ्य कहे हे भगवन् एगाढा दुर्लभ दीसे छे तिवारे श्रीगुरु कहे ए दृष्टान्त मनुष्यनाभव लहिवा ऊपरि छे जेहवो सूर्यपाक रसवतीनी भोजन तेहवो मनुष्य जन्म कदाचित्ब्राह्मण भोजन पावे पर मनुष्यनी भव हारथ्यो पामतां दुर्लभ छे इति पहिली दृष्टांत ॥१॥ अथ द्वितीय पासक दृष्टांत । पाडलीपुर नगरि राजा नन्दराज्य पाले तेहने वारे एक शरमे एक ब्राह्मण वसे ते श्रावक वारे व्रत पाले तेहने घरे पुत्र जायो ते दांत सहित देखि माताने अचरीज जपनी तिवारे निमित्तिये पृथ्यो एखू कारण छे निमित्तिइ कह्यो ए राजा होस्ये माता पिताइ चिंतव्यो ए वाप छी जीव राज भोगवी रखे दुर्गति जावे एहवो जाणि कुचला दांत वालकना घसोने जताखा वलि निमित्तिये ने कह्यो अम्हे वालकना दांत घस्या तिवारे निमित्तिइ कह्यो हिवे विवार राजाहुस्ये नाममात्र राजा सर्वमुद्रा व्यापारी एह जहुस्ये इसी सांभलो महोच्छ्व करीने चाणक्य इसी नामदिधी ते पुत्रपाली मोटोकीधी अवसर जाणी पडित समीप भणव्यो सर्वकला पारंगामी ह्यो भला ब्राह्मणनी पुत्री परणवी विशिषे ज्योतप शास्त्रने विषे निपुणपणथयो घणो भाव भेद लहे एकदा नदराजने पाट नंदराज्यने विपिथापिवा भणी जगन धेलाइ' सिंहासण मांड्यो जेतले राज्यनीविला थई ज्योतिषो तिण विला चूका चाण कं निरसीविला जांणी मूलगे सिंहासनवैठीतितरे राजपुरुषे देखि कह्यु अरे सिंहासननेविषे पहिली भिख्या चर वैठी ते' जठाडीवी जी आसण मांड्यो तितले चाणक्ये आवी तिण आसन विषे पाणीपात्र मूंकी अत्रमे पानीयपात्र' स्थास्यति ते पिण आशीवीजी मांड्यो तितहां अत्रमे स्थास्यतिइ मकहते दंड

मन्त्री एतने राजपदवीनोवेदवीनोवेना तिनै प्रानायति करी तंतले राजपुरूपे प्राप्पण अवध्य जाणी गन हथी देइवाहिरि काख्यो पछे एक ग्राम का पडोने वेनेगयी तिहां ग्रहम्यनी पुखी गुधिणीके तेहने चन्द्रमापीयानी डोहनी जपनीके ते जाणी जपायकरी तेदी हनी परे इम जाख्यो ए उत्तम पुस्ये तहनी पिण जग ए पुत्र तुग्ने भन्तनी कारण नयी एहवी भय उपाय तिणमाग्योपइले दीधो काने मोटो हुथो जाणी नेगयो केतले काले घणो धन अपाणीएके गभि गया तिहाडोकरोये वानकने चोर पुरसी वालके हाथवीर माहि वाल्यो हायवख्यो रोइवालागो तिवारि डोकरो कहे तु पिण चाणखनोपरि मूरनीमेके चाणोख्य सुयो पृछे किम चाणक्य पठित मूर्ख जे देश नगर साधा विना पाडलीपुर जासी एहवी चाणके माचो जाणी तिहां घी पणुदल नेइ देग गामादि साधो पाडलीपुरातो राज्य नीधो नदजथापी चद्रगुप्त राजा ह्वो आपणपेतिण राजाने सर्व मुन्द्रा व्यापारी वयो एकदा भडार धा गूटो जाणी बुडिइ कनी एक मोटो भान्तिरि बाधी पासे मदिरानी घडी मूख्यो लोकने कहेहु पिणपी बुधु राजा पीविके तमे काइ न पोवी इम कही पाइ पीते कहे अरे लोकी मासम कुण द्रव्यनी धणी होसी माहरे तो एक राख्य मुन्द्रा जनेज मडल अनेत्सु यगनी कुठो एहयो कहिनचि भान्तिरिपाये पुरुपके तेहने कहवे भालरि वजावीते वजावे एहवी साभलो एक मदमातो एक व्यवहारीयोवीयो अरे नोकी कीइ हस्तो नित्य बेहजार गाज चाने तेहनी पद २ लख २ सोनइया मूकतो जाउ तोही हाथी धाके पिण माहरी डव्य नधी के यचारि भान्तिरि एयात सु इतानिचिता जावे यली एक व्यवहारीयो वीन्थो माहरे गाय एतलीके जेहनी मांगण तावीनावृती गगा जमुनाना प्रवाहरीको रागु तेभगीय जाडो भान्तिरि इम लचकीडि द्रव्यवहारी यानि पासिनोधी ते पिण खूटोजाणीवली धन उपार्जियानिका जे देवता चाराधो देवताइ अनेय पासारीधा तेहयो कीइ जीपीसने नही एहयो जपाय करीने सुवर्णमय घाल दीनारे भरो मूकि लोकेने इम कष्ट गुम्हारी

दाव पडें ती दीनारि भयो थाल तुम्हने 'आपु'जे अम्हारी दाव पडेंती एक दीनार लेउं' इणें प्रकारे करि घणालीकरमिवा आवि परं तेहने कीर्झी पीन सके दावतिणे जनीपडे ती आगली किमजीपे इम करी टकानी कीडि उपार्जी पिय कियही धन पाळी न सखी एकें कठीयारे पिय दीना रहारी आजन्मसु महनत करी दीनार २ करी थी ते कठीयाराने वली दुर्लभके कदाचिकठीयाराने वली दीनार मिले तिमए मनुथनी भववणुं दुर्लभ लही हारव्यो बले लहतां दीहिली कदाचित्हेनी दाव वले' परं मनुथनी भवहारव्यो दीहिली साहे एवीजी दृष्टांत जाणवी अथ तृतीयधान्य दृष्टान्त जिम कीड देवता जम्बूद्वीप मांहि जेतला धान्यनी जातिके सालि गोधूम जववरटीकंगूमीठ घिणा वजला कुलय उडद मम्हर वालीलति उडी अलसोमिथी तुंयरि प्रमुख अनेक तेतला धान्य सर्व एकठा करी पुंज करे मेरुपर्वत थकी उचा पिहुला टिगला थाविते सरव एकठा करि टिग करीनें तेहमांहि एक पायली प्रमाणखस २ नादांणा घाली घणुं वलद एकठा करीनें गाहावे तिम करे' जिम एक धान्य जातिनी बीजी कण नदीसे पळेकीडएकडी करी गरडी. जराजीणं असी वर्षनी दुर्वल क्हांत सुखमांहि एकदांत मथी दीसती न मीनें वेवडी बलीके एहवी खो तिहांविसाडीहाथ तेहने जूनी सू'पडी भागी आपी इम कहे डोकरीए धान्यमांहि एक पाइलीख स २ नादांणा मिलाध्दिते सीही २ वीणीकण काडी २ ने एपाइ लिभरी तडीकरी स्त्री तेख सखसना कणकाठीपा इलीभरीसके तिवारे ग्रिथ कहे भगवन् एदृष्टांत गाढी दुष्कर दीसके एकदांणा खसखसनी जेतले' लहे तेतले तेहनी आउखी पूरो हुवे तेपाइली किम भराइ तिवारे गुरु कहे ए दृष्टान्त मनुथ जन्म जपरिके तिम पाइ लीख खसने कणे भरीने तेहवी मनुच जन्म उत्तम गुणे करी भयो के जिम ते पाइली भरतां दीहिली के अथवा कदाचि भरे परं मनुथनी जन्महारव्यो वलती लहतां गाढी दीहिली ए तीजी दृष्टांत जाणिवी ।३। हिवे चीथी जूवानी दृष्टांत कहे के कियहीक नगरनी राजा राज्य पाले तेहनी घणी अंत

पुत्री वशा पुत्र जाणो ते वढी पुत्रराज्य भोग धो जाणो राजाद्र युवराज पदे स्थाप्यो राज सुत्र घलावे इम करता घणो काल वल्ल्यो एकदा राविने सने सुता एहवी अथयसाय वडा पुत्रना मनमाहि जपनी अहो माहरा भाद्र घणा राजा अजीन जाणोये केतलो राज्य पालिस्ये कालातरि कुणेश्यु इत्ये च्यु जाणोइ राज्य मुक्कने कि वाइस्ये नचो तिण कारण हिवडां छती समथांइ राजा विणसी राज्य सुग तो रुडो इसी विघारी जाणो प्रभाति अथ्यतर रसभाना निव्र तेडि आलीचो आपणपेराजा विनासो राज्य लीजे ती तुम्हारी हमारी मनीरय पु इचे एह्ये कह्यु इ ते विणही कहां कह्यु किणही मा कह्यु कोइ मध्यस्य रज्य पर घणे कानि वात पढी प्रच्छन्न किम घावे यत पटकर्णो भियते मन्वयतु कर्णो न भियते द्विकर्णो स्यापि मन्वस्यै ब्रह्माप्यन्त न गच्छति १ तथा कोइ राजानी पुत्रनी खल इ तो तिणे जइ राजाने कह्यो स्वामी तुम्हारी वढी पुत्र तुम्हाने विणसया वांछे छे इम जाणो साबधान रहिज्यो तिवारे राजाद्र मनमाहि चितव्यो इ पुत्र उपरि पाडूवो न चितवु छोरुकुछोरु होये पर मावीत्र कुमावीत्र न इवे पिण आपणिनी उपाय करोइ इसी चितवो एक न विनसभामडावो तिणे सभाद्र एकमी अठोत्तर स्तभ कराव्या एकैके स्तभि अठोत्तरसीर घासि करावो सभा पूरो राजा वैठो पुत्र चेतना इती तेतलाइ तेहावि तिहा वसाव्या तेह आगलि इम कह्यो माता पिता ने छोरु सर्वएक सरीखा किसी यामणी घाखि किसी जीमणी तेह भणो इ राज तेहने आपिस्यु जी मुक्कने जूये रमता पासाना दाव पडता लगतां एकसी अठोत्तर दाव पडे एतले एकस्तभनी अठोत्तर सी घासि जोतोने इम घोजो स्तभ अष्टोत्तर सय दाव पडे ती जोतो इम तोजोची धो एव अठोत्तर सो स्तभ जीता ते पुत्रने राज्यदेशीपर जे एक सी अठोत्तरस्तभ जोता अठोत्तर सो मा स्तभनी एक सी सात हांसी जितो एक जीपिवी घाकि अने तेहनी वादन पळो तो वली धुर धकी दानि माडिवा इणे पर ते राज्य हाण्यो यल तो हाय नावे इग्यार हजार छमे चौसठ्ठ दाव एकठा छमे चौसठ्ठ दाव एकठा यीगुर कछे कदाचित्किणही देवानुभाये राजाने

जीती राज्य ले पर राज्य सरोखी मनुष्य जन्म हागाथी प्रमादवसते बलती लहतां दुर्लभ जाणिवी इति चौथी दृष्टांत १४। ह्रिवे पांचमी रत्ननी दृष्टात कहे के जिम किणहोक नगरि की एक व्यवहारियो धनवान वसती तेहने एक रतन टालि बीजा कीणही कि राणा नी व्यापार नथी इम करते घणा रत्न एकठा करो एकडाबडी भरो जोहां आपणे पैठी सुवे के तिहां पलाकना पाया नीचली भूमि गत निधान करी मूकी के तिवार रत्न सत्र लाई बहु मूला के पिण कीणहोक पुत कलत आगलि कहे नही जे कीई तेहने जोइये ते सहु वस्त आभरण गंधमालादिक आपि पिण विद्यास किणही नी न करे इम ज्ञाणे जे हुं मननीभेद कहिस्यु ती ए डिकारा सर्व रत्न आधा पाछा करी खरच स्ये नगर मांहि चोहटे सभाइ जिहार लोक मिल्ये तिहां२ शे छने तथा पुतने कहे अही तुम्हारा धननी स्यो फल कांई व्यापार न करे कीई जाणे नहीं सर्पनी मणि सरोखी तुम्हारी सम्पदा के कीई वाणी उतर नहीं कीई साथ चलावी नही किण व्यवहारी नही ती तुम स्याव्यवहारीयाजि म२ लोक कहे तिम२ तेहना पुत चारि के ते मन मांहि खोजे अम्हे किसुं करुं अम्हने पिता धन देखडि नही जे देखडि ती अम्हे पिण व्यापार करुं देयांतरजाउं वाणिज बलाबुं अम्हने सहुको जाणे मांडवीया जाणे राजा लागि प्रसिद थाजुं परं किम करुं अम्हने धन न देखडि इम चिंतवतां केतली एक काल वउल्लो तेतले किणहीक नगर थी सगानीकागल आथ्यो तिण मांहि एहवी लिख्यो अम्हारे उच्छव के जे तुम्हे आपण डीले नाव्याती अम्हे तुम्हारे सगा नहीं तुम्हे अम्हारे सगा नथी एहवी आकरीवचन प्रमाण जाणि सेठ विमासीवा लागोह्रिवे किम कीजे एक दिसवाव एक दिशि नदौ किहां जाये ते सगानी नगरवेगलोजी जईये तीघणा दिवसलारी जेन जाइयेती सगानी स्रेह तुटे सगपिण कि मती डिये यतः नागडानव खंडेह सगपणसं धिनतोडिये भुंइ उपर भमते हि मिलिये जइ मरीये नही १ इसी जाणो ते दिगजावानी एकांत नियय कीवी तिहां घालिवा भणी सामथी करीवा लागी तिवारे पुले चितव्यो

बीजा अक्काहती तेणे कळी अहो अचल जेणे गुफा केसरि यखी करिकुल केरो काल आलसियाल तिहां करे सिद्ध नही हते खाल ॥१॥ इण कारण जिहां तु आवे तिहां दरिद्री एक मूलदेव आवे तेसाये सहित रमे खिने ए ताहरी समर्थ पखी केहो अन्हे देवदत्ता वारी पर गुण गहलीकती मानाद नही इसी साभनी अचल व्यग्रहारिवी मनसाहि रीसावि एकदा देवदत्ताने घरि आवी केतली एकवार रही जाले इयो कळी हु गांमांतरे सिधावी आउ शु दिन पाच सात लागि म्ये इसो कही अचल नीकल्यो ते तले मूलदेव तेहने घरि आवी निच त पणे शास्त्रनी गीठि विनीद करिवा सागीदेवदत्ताद पिण कळी अचल व्यग्रहारी यो गामन्तर सिधाव्यो छे इसो जाणि निर्भय कृती तेहने घरे रात्रि ने समे रळी जेतने प्रहर एक रात्रि बरली ते तले केत साइक पुरष सहित हारे भाव्यो एहवो कळी कि वाडि उवाडो इम साभली देवदत्ता ते मूल देवने कळी तुम्ह डोलीया हेठली केतली कवेला रही जेन्तले व्यवहारी यो इहा आवी जाइ पळे नीकल ज्यो इम कळे हुते यल्य क नीचली लुकी रह्यु, एहवी अवसर उलख्यो यत तम एष हि जानाति समय ना परो जन दीपग्रबुद्धये जावे तममाद्रित्य तिष्ठति १ तेतने अचल मांदि आवी वनी अकाइ भेद सर्व जणाव्यो ते जाणो पलाइ उपरि आवि बैठी देवदत्ताने भागली उभी रही तेतले व्यवहारीये कळ्यु, अन्हे गाम भणी चाला हुता पर शकुन एहवी थयोतिण पाळा बलगा हिवे ते शकुननो उपद्रव उता रिवा भणो काई उपाय कौधो जाइये तिवारे देवदत्ताद कष्ट, स्वामी उपाय जाणो ते करो तिवारे अं छि कळी एकहांडिउन्ही पाणि करो खान कोजस्ये तत्काल ते करी आव्यो तिवारे तेणे कळी पलाइउपपरि वैशी खान कौज स्ये स्वामी ए पलाक कांविणसो अं छि कळी पलाइ घणा करावी देखु, इम कही तिहांज बैठी हाडी माधे घालवामांडी तेधिपाणी मूल देव उपरि पडिवालागी पळे कान्तोर पाणी पलाइ उपरि रडवा लागी ते जिमर मूल देवने शरीर लागे तिमर आवी पाळो था तो जाणी अं छि कळी अरे पलाइ हेठलि स्यु छे कृतरी अथवा बीजा कीइ तेतले नीचली जा

वतां मूलदेव देखी पुरुषां कन्है सरडावी कढाव्यो यष्टिसुष्टिप्रहार घणा कीधा परं साहसपणो मूख्यो नहीं एहवा देखी इस जाखो कोई उत्तम वंसनी पुरुष उपनी छे इगो विमासी अष्टि सुदावी तेह प्रति कल्लु जिअहुं तुनिमुकुण्डुं तिम तुं पिण सुभने सूंकी जे एहवीवंचन सांभली तिहां धी नौकली एहवी मान खान जिहां थावे तिहां किम रहिये इस विमासी देगांतर भणो निकली कन्है संवल पुण नयो तथापि चाली जातां २ आगलि अटवी गावी ते मांहि पडठी एक ब्राह्मण सघाते मिली ते साथे जातां वे पोहर हुया तेतले एक तलाव आव्यो तेहनी पालिवेठा ब्राह्मण आपना अकैला आहार कीधी परं मूल देवने कांइ आव्यो नयो तिवारे तिणि चिंतव्यो ए विहाणे सुभने देगो इस करो पाणो पीने आवाचात्याा वीजे दीवसे पिण तिमज ब्राह्मण मूलदेवने तिणि लवन यया चौथे द्विसे अटवीइं प्राति आव्या तिण अवसरि ब्राह्मण कल्लुं इहां थकी हुं अनरे मार्ग जाखुं तिवारे मूलदेवे कल्लुं ताहरी खुं नाम ब्राह्मण कल्लुं साहरा वेनाम छे माता पिता नी दौधुं निर्घृण गर्भ तिवारे तेहने काणुं जे मूल देव मीटी हप्री सांभले तिवारे तुं बहिली आवी जे यतः जे गुण कीधि करे किसी निर्होरा तास पवगुण कीधि गुण करे हुं पलहारी जास १ इण कारण मूलदेव उत्तम पुरुषने अवगुणी ना पुण गुण ले इस कही सुभ थकी जेहवा उपगार दासी ते करिसुं इस कही आप पण वे ना तट नगरभणी पंथ पूछेने चालीया विचालि एक गामी देलि मांहि पडठी तिहां सघले थरे भम्यो परं थोडा उडदनावा कुला लहीं गामथी पाछा बली तलाव भणी आवतां गांपसखुख आवती मासखमणने पारणे ऋषीग्रर सीली ते साचात् धर्म मूर्त्ति विख्यात कीर्त्ति मलि मलिन गात्र पातदेखिही जहरवी तीण प्रदचिणा देईवांथा इसी मनमांहि चिंतवा लागि ए महांत ऋषिग्ररगामगाहि आहार न पामे तेभणी लोक मल रही त अदाताछे तिणकारण हुं वली आगलेरे गाम आहारनेसुं आजजिसे उडद लाधाछे ते ऋषीग्ररने आपसुं इस चिंतवी ऊहिया लागि ऋषीग्रर सुभ कन्है उडदनावा कुलाछे

ते तुम्हें नती तिवारे ऋषिगवर सूक्तता जाणो आहारलीधी तेदेरी अत्यत उसास पांम्यो वारवार सायु पाखती प्रदक्षिणा देतो पडवो वेद मुखे भणेंछे ते केहा धश्राण सुनराण कुम्या साहुन्ति साहु पारणए वार २ एयदाकहती जाणी सासन देवता प्राथाशमखल आवी बोली अहा मूलदेव प्रागनी विटु पदे जे मागस्येते आपस्यु एहवा काणा अनतर मूलदेव कक्षी माहरे सर्वपइती जे एहवा ऋषिगवरनी दर्शन थयो तिवारे कक्षी देवता नो दर्शन नि फल न थावे यत अमीया वासरे विद्युदमीष नियिगर्जित अमीष च मुनि वांका मनीष देवदर्शन इमत्ताहरे पापदान सतुष्ट थद तिवारे मूलदेवकछु गणियच देवदत्तरत्न सहस्रकहलीण। एहवो वचन शासण देवताइ प्रमाण करी आपण ठामि पडुती तिहाथी मूलदेव आथो चानती विधाने आहार करीने सध्याकालि बेनातटनगरने परिसरि एक धर्मगालाके तिहां आवी राचिवायो रक्षीतिहा घणा थथी आवीर एकठा हुवा पाखलो केतनी एक रात्र कृती मूलदेवचद्रमा मुखमाहि प्रवेग करती दोठी देखीने जाग्येतेतले तिहा एक घोजी कापडी सूता पिण चन्द्रमानी खप्पी दोठी देखीने ऊठ्यो अत्यत गाढि खरिवीजा कापडीया कहेजइ पुछी वातागी भहो करी एहनो सुयु फल थाल्ये तिवारे एक कापडीया बोलपी अरे तु एतमानि निद्रामभाजी विहाषामाहि एकमोटो रोटी छत गुड सहित ल्हिस्येते मूखे एतलेज हर्षित हुथी अरे भेरु छी स्वप्न दोठी जे हुनो एहवो फल थार्ये इगो सांभलि मूलदेव चितथ्यो अहो वापडे भोलपणे कक्षीने फलनीगम्यो एहवो मूर्खपणाहु नहो कर इम चितवी तो जाता जेरु प्रभाति एकनाडो तिहा घणा फल फूल देखि मानोने सहाज्य देइने रजव्यो जिवारि मूल देवजावा लागीते तिवारे मालीये घणा फूल अपूर्व फल थाप्या तेनेइ नगर माहि स्वप्न पाठकनी घर पूछती एकांस केते आठ्यो तिहा द्वारि घणाचद भट्ट स परिवग्यो तेहने भणावती वैठा देखीने नमस्कार करि आगुलि फल फूल ठोइ अयसर जाणो पूछी स्वप्नफल तिवारे त्राप्राण सांभनी मूल देवप्रते बोळ्यो भोजन अनतर कक्षिस्ये मूलदेवि काच जिवारि

तुम्हे आदिसे देशी तिवारे संभलोखे इम कही उठतो घणे आयहे भोजन भणी राख्यो भक्तिपूर्वक जोमाडी सभामंडपे जेसारी कक्षी जे साहरी कन्या परणे ती एहने फल कइं एहवा संभली मूलदेव चिंतवा लागो अहा भायनी उदयठामजावतासगपिण मिली इणेकारण हर्षपाख्यी ब्राह्मण तिणे ज दिवस परणवीने स्वप्न फलएहवा कक्षी आज थकी सातमे दीवसएगामनी राजा घा इसि ए वचन तहति करी मांखी सुखे तिहां रहितां सातमे दीवसते नगरनी राजा विणठी परं तेहने पुत्र कोइं नथी तेभणी राज्यना प्रवर्तिक मिली हाथी घोड शृंगारी पडं तार असवार पाखे मोकलगा ते तिहांथकी देवताने अगुभावि नगरमांहि थई वाहीर नीकलगा क्रीडा जेते मूल देववाडी मांहि आवी चंपाना वृचनीचलिळा याइं आवीकल सटा लिंगजेठे सुं डादंडसुं उपाडी कुंभखले वेसाखी छत्र आपशि विकास पांखी चमर चलयाला गाहयहे खारवकीधी गाजते वाजते अनेकहंदसुपरि वखी नगरमांहि पर्दठी वीरसेन राजाइं सेनांम दीधी राजाभिये कह्यो राजाधिराजा राज्य पासिवालागो तेहने प्रतापे करी सोमाडा राजा आपण आवी २ मिली चिहुदिण प्रसिद्ध थयो उजिणिना राजा सहित प्रतीमाडी देवदता अत्यंत सरम जाणी तिसरे तिहां तेडावी पटराणी थापी तिहां अचल व्यवहारीथो देगांतरे भ्रमणकरतो तिहां आखी साय नगरने परसरि उतारि भेटलेइं राजाने मिलवा आखी राजा इते श्रीलखी परंतेणे राजा श्रीलखी नही राजाइं मान सनमान देइं अइंदाणकरी मुखी अनतिसाथे दांण करिवामाडवीया मोकलगा तेहने वसु देखाडी तिण व्यवहारीइं लोभनेवसे गाठडि गर्भित हंति तेन कही दाण चोरी पकडी मांडवीए एक गांठि उखिली जाइ मांही अनरी २ बहु मूल्य वसुनी जाणी चोरनीं परे वाइवांधी तेडीदीन मुख राजा आगलि आंणी उभी राख्यो राजाइं कक्षी थाणीया लोभथी वूडे अइंदाणमूकी तो पिण चोरीन छांडे हिवे राजानी आंण भांगीतेनी दंड तुम्हने आखी तिवारे अचल गाडे वीहवा लागो थरथर धूक्योहे जाबेहे धन गयानी थोडी

वात परश्रीवित्तव्यना संदेह ययो एहयो देखो देखो राता बघन थो छुडाब्यो पहिराय्यो वस्त्र तिवारे देवदत्ताद काहु भबल मूल देव राजा आपणी वाचा यको उरण थयोछे तिवारेना बोन तुम्हे स भारो देवदत्ता नाघरसाहि तुम्हे इम काहु जिमहु तुम्हने मूकु बु तिम तु सुम्हने मूकीजीए प्रस्ताव जाणिव्यो तेइ देवदत्ताएमूलदेवद इम सांभली पगे सागी खमाब्यो राजाद सदाण मूकी विसव्यो ते कुयलि आपणे घरे गयो ते ब्राह्मण निघण यर्म मून देयराजा क्षत्री साभली तिहां आविने मिल्यो तेहने एक गाम देइ अष्टष्ट येवक करी मोकलयो इम प्रताप दिनकर सरीखी दीपती राजा तिणकापडीद साभली पकीताब्यो मे चद्रमारा सप्ररोटलामाहि आलिनी गम्बो मूल देवने इण परिफल्यो जे वलीहिंवे चद्रमारा स्वप्न देखे मूल देवनीपरि सफल कर इसी जाणि रावि चितवीर ख्ये वायरो आहारलेग पर स्वप्ने चद्रमाकि मदेखे ए दृष्टात दोहिलो तिवारे गुरु कहि द्वाद सिएचद्रमानी स्वप्न हारब्यो यनी लहे पर मनुयजन्म आलिनी गम्बो प्रमादवसे लहता दुर्लभछे एतलेख दृष्टात थया ६ हिंवे ७मो चक्रनी दृष्टात कहिइ इन्द्रपुर नगरमे इन्द्रराजा तेहने २२ वेटा तेहवे राजाद मन्वीनी पुत्री परथी तेहने पुत्र ह्मत्री तेहनी सुरेन्द्र दत्त नाम दीधी एकदा कोर बचन छलि राजाद मन्वीनी वेटी छोडी पीहर रहे मन्वीस्वरे आपणी वेटीनी वेटी भयायो सालकलाद पारगामी थयो तेहवे मधुरा नगरीये राजा जित शत्रु तेहनीवेटीनीइत्तिक्या तेइम कहि जे कोद राजा राधावेष साधे तिका परण ते तिहां जितशत्रु राजाद राधावेषमडाब्यो इम एक मठप मढायो भोटो तिहां एक भोटो स्वभने मस्तके एक काष्टनी पूतली मांडीने तेहने तिखे आठ चक्र चार चक्र स्रष्टि फिरतां थार चक्र सहारि फिरता एहवे मिलियतना उपाय करी माचारस्व्याचने तिहा देस २ ना राजकुमार तेढाथा तिवारे इन्द्रपुरनी राजा आपणा २२ वेटा, सहित आब्यो मन्वो विण वेटीना वेटी सघति घाख्यो सर्व राजा राधावेष साधे पिणकीण हीथीन सधाद तिवारे मन्वी कछी स्वामी तुम्हारा

पुत्र मांहेरि पुतींद्र' जखी ते साधसेते राजाद्र' ते मान्यो तेंणे कुमरं तलाल राधाविधने स्वभजई हेठि मोठी कडा हिचढापी तिहां तेलजकलतो भ्रमरावर्तं भमतो करो ते तिहां जभी रहीने तेलमाहि प्रति विंव आठचक्र खंभ पूतलीनी रती दृष्टि उपहरी सुष्टि धनुखवाण घढावी आठचक्र विचाले करीने काठनी पूतलीनी वामो नेत्र तेहनीकी कीर्वाधी तेनिहति कन्या परणी राजा प्रधान जपरि राजी ह्वो जिम खूरेंद्र दत्त कुमार एक वार राधाविधसाथी परंवी जीवारं न साधे एहवो एदृष्टांत जाणी वाह्य देखाखी हिवे अंतरंग कहेछे जिम ए मंडपति मए संसार जिम खंभ उपरि काठनी पूतली तिम मनुथ जन्म विषे तल बुद्धि जे आठचक्रते, आठ कर्म जे सुष्टि संहारते शुभा शुभ जाणवा जेहे ठिकालर तोतलते कषायादिक प्रमाद ते मांहि वर्ततो निरती दृष्टी जपहरी सुष्टीते शुभधान तेंणे करी आठकर्मने विवरे थयेहुंते मनुथ जन्मने विषे तल बुद्धि पामिते पूतलीनीकी कीर्वा धेएपुण देहिलो एकवार कंदाचिलही आ लिहारवतो वी जीवारलहतां दुर्लभछे एसातमी दृष्टांत थयो ५ हिवे आठनी कूर्मनी दृष्टांत कहेछे जिम कोई एक मोठो द्रह अगाधजल पूरि घणे विस्तारछे तेह जपरि आठ सेवा लना पुड वल्यछे तेह मांहि अनिक जलचर जीव मच्छ कच्छेप पाठी नक्र चक्र गाहक सुसमार प्रमुख जीवना धर्णा कुल वसेछे तिहांते द्रहने पारि एक वीलनी ह्वछे तेहने विषे प्रनिक फल परिपकछे तेमाहिलोएक फल टुटीने द्रह मांहि पखी आठसेवालना पुड भेदाणा मोटीछिद्र थयो तेतले एक काछिवी गरढी कर्मने योगी भमतोर तिण ठिकारें आव्यो तिहां यदृष्टपूर्वक छिद्र दीठो देखिनेइसीचिंतवीवा लागी एखुंदीसेछे आज लगए दीसतो नही इम जांणि तिहां मूखकाढी जोद्र वालागी इणें अवसर आसिजी पूर्णमानी रात्रिछे तिहां सेलिकला संपूर्ण चन्द्रमा ग्रहण नक्षत्र ताराएमंडित निर्मला अमृतश्रीवी नयनानन्द कारी जगत्जन तापहारी एहवो दीठो देखिने मनहांहि अत्यन्त आश्चर्य पूरि थयो चिन्तविवा लागी मोठो जे पांचे दीठो इण कारण

एहवा कौतुक आपणा कुटव सघसानि देखाडु तो बडो एहवी चितवी द्रहमाहि जई सकल परिवार प्रते कछी अरे भावोजि तुम्हने अदृष्ट पूर्वक एक
 आर्य्य देखाडु एहवी सांभली काखिवानिकोड चालि द्रह माहि अत्यंत कोलाहल करी चौभ जपनी तंतले से बाल उपरि वल्यो छिद्रमुद्रायो काखिवो
 उरही परही भग्यो पर ते छिद्र नलहे जीईर थाकी बिलखो थयो पर ते वले वीजो काखिवो बोलयो तुमे भूला कहो तुम्हने चित्त भ्रम थयो कीद्र कहै
 सतरीया यहतरीया एहवाज हुवे एहवा कुटवना वचन सामलो चित्तने विधे पथात्ताप करती विचारे डु साचो छतौ एखे कूडो कीधो हिये कीद्र ते
 उपाय के जिय ए पथात्ताप भिते जेवनि एहवी आर्य्य देखु अने एहने एह देखाडु तो साचो घाउ एहयो जाणि वारवार तिहा आवि जीवे पर
 किहां थो देखे एह वाछदृष्टात दुर्लभ कछी हिये मनुष्य भव उपरि देखाडोयेके जियए द्रह तिमएससार जिम पाणि तिम जन्म मरण जिम भाठ पुडो
 केवाल तिम भाठ कर्म जिमका क्वी तिम ए ससारी जीव जिम हच तिम श्रीगुरु जिम फल तिम गुरुना वचन जे छिद्र ते कर्म विवर तेण जिम पद्र
 प्रदर्शन जिम सकल सामग्री सहित मनुष्य जन्मी लहिवो जिम तेंणे काखियिहायो बलवे दुर्लभ कीधो कदाचि वली ते पामे पर मनुष्य जनम प्रमाटे
 हाखी गाढी दुर्लभ के ए सहु भिनो ८ दृष्टात थया हिये नवमी दृष्टान्त भूसरनी कहे के भूसरने समिल दृष्टांत ते किम लोक माहि असख्या तस सुद्र के
 ते माहि सर्व थो मोटी स्वयंभू रमण समुद्र के काद्र एक भूसर थकी समिप जूद्र करी पूर्व समुद्र माहि भूसर घाले पचिम समुद्रे समिलते समीलवली
 तिणजभू सरें तिणेज छिद्र आवीवेसे दीहिली दृष्टात ते समिल भूसर एकठा किम मिले तिवारे गुरु कहे कदाचि कळोलनीठली वायुने पूर आवतीर
 कदाचि भूसरा स्यू समिने पर जे मनुष्यनी भयलहि प्रमाद वसे आलिनी गम्या वली लहता दीहिली एतले ७व दृष्टात थया ॥८॥ हिये १० मी परम
 माणुनी दृष्टांत कहीये के ते किम जिम कीद्र सोन जाति रज एकठा करी तेहनी एक मोटी रज अतिविग्यान सहित करे तेरुभ दगो दिगि उयीत

ताल धनपतिविषय भाषादिने ज्ञानांश० अ० ४२ मांसां

चक्रवर्तिना गच्छन्ति युष्मन् इव देवसु मनेभ्यो मामग मन्त्रं वाच्यते इहा माययिन्मि गत स्यात्ता मभोपं कथिययानेन चक्रवर्तिभ्य
 नुप रिं कि मांजामि तथा रिमहे वरवमात्रं पुत्रय एगवापगतक पूयापावित मितागं रासायामवेव्यन्तां र इति निपुणोक्त कि सत्याप
 वाहिना कृत्स्निरुच्य माधय प्रत्येवे प्रतिपदं भोचनं दोनारयुचय तथा विप्र चागग तपेय चक्रिय प्राय्यामाम चक्रो इमिता उपाय भो
 चक्रमन्त्रा विरुच्यतया देवताम भावडाहादि मापय मादेन माययति माय्यन् किमपीति चक्रिया विचारित ओ अणि पण पलग्न भागय तगा
 मभियं चार वीरि न्यानेह न इतर पानियं तार र इति विविल प्रतिपय तपक्रिया प्रयसदिने म्गठके म्गठम्यय तस्य भोान तालि दोनार
 पुत्रयय वनं एवं न मादन्ता भक्तलेख म्गम्यि ममम्यन्तेग भोान म्गठोगा पुनयकि म्गठे भोचनं कर्तुं नायाति कदाचिरिखामभायान् पायापि
 इह म्गुयामागन्तुं पुनमन्वयावतारे वा गापु म्गठोति न्युपत नुंभतागं पोषग ह्गाम् प्रथम र पागाग ह्गालो यया गायदेगे पदक
 वाधेदि तपयय म्गान् गार एजया तप्य म्गठे मापय मिता तदानी म्गुं माय्य पुणोपात दग्धित मापुना मापुभिरुच म्गदग्धेनाभो
 तथा म्गिचतोति विचारिमृद एभो राया भूता म्गक म्गमिचतोति भोगा तप्य द्गण पणिता पुनसाह्य युक्त्या दग्धित तेकक एकपुत्रपाल
 रिं राया म्गिचयि तप्य रामय चानित्य इति नामदण चगामी चक्रमानयपुर्दय विद्या खानानि पठितया कानालरेण परिणोत पन्वदा
 चानित्यभाषा भायविचादे तथा तताग्यादि म्गुय पठितास्युग्मित्यो दपः ममागालायाय मायविद्य भ्यावभिर्वपुगातिता इयय उपेचित प्राया
 मिथा एवमविचयन्तु मन चन्मिचरिेन एते विचारयेविमो नमच्यने विवामतो पयादा ताता चानित्येन तथा गेद म्गुं इदं तथा पिय
 म्गुं म्गुं, मांगमात्रिचाना म्गिचोना माभं शापमात्रवेगि चानित्ये वि ज्ञोपाय इत्ययम गयपण पयागेद परमत्य यलपिग

विलज्जिज्जिइज्जीण विहवेषण १ तथा कज्जविह्वणण नेही अत्य विह्वणाणगञ्जी एवंलोए पडिवनेति निव्वहणं कुणन्ति जे तेजए विरला २ इति चिन्तयित्वा
द्रव्योपार्जनार्थं नन्दराजाधिष्ठिते पाडलीपुरे गतः तत्तभाया पूर्वदिग्न्यस्ते आसने निषण्यः तत्र नन्देन समं कश्चिन्नैमित्तिकसलायातः तेनीत्तं एष
ब्राह्मणी नन्दवशस्य ह्यायामतिक्रम्य स्थिता स्त्रीति तद्वाक्य श्रवणाद्भृत्यै ररुहापितो द्वितीव कारवती स्थापयति तृतीये दण्डकं
चतुर्थे जपमालां पञ्चमे यज्ञोपवीतं एवञ्चैशं कुर्वन्नसौ नन्द भृत्यैः शठ इति कृत्वायध्यादिभिराच्छीटितो द्वेषमापन्न स्तदानीमिव मुषाच कोशेन भृत्यैश्च
निबद्धमूल पुत्रैश्च भित्तैश्च विह्वद शखं उत्प्राव्य नन्दं परिवर्त्तयामि महाद्रुमं वायुरिवो श्रवणः २ ततोविवान्तरितो राजा भविथामीति ससाधु वचः
स्मरन् भाग्यवन्तं पुरुषं विलोकयन्ने दिव्यां भ्रम्रति अन्यदानन्दस्य मयूरपालकाणां श्रमेगतः परिव्राजक वेपेणचाणिक्यः तत्र मयूरपालक इदस्य गर्भिण्याः
स्त्रियाश्चन्द्रपानदोहदञ्चात् तयापितादीना मुक्तं पित्रादिभिर्गृह्णागतस्य चाणिक्यस्य उक्तं चाणिकेप्रनीत्तं अहं बुद्धादोहदमस्याः पूरयिथामि यद्यस्याः
पुत्रमष्टवार्षिकं भेदततै स्तथेति प्रतिपन्न चाणिकेप्रन सासच्छिद्र मण्डपे श्रायिता तन्मुखाभिमुखीचैस्तर प्रदेशे शर्करामिश्र दुग्ध भृतस्थाल प्रशोगी
विहितः तद्विन्दवः तस्यामुखे पातितास्तसदीहद पूर्त्तिर्जाता कालक्रमेण पुत्रजातस्तस्य चन्द्रगुरा इति नामदत्तं यावत् चन्द्रगुप्त स्तव वर्द्धते तावच्चा
णिकेप्रोपि देयान्तरे धातुर्वादादिकं शिवयित्वा पुत्रस्तत्रगतः स चन्द्रगुप्तो दारिकैः समं राजनीत्या क्रीडां कुर्वन् दृष्टः तत्र समागत्य सबालकयाणि
केप्रन याचितः बालकेनीत्तं गांश्रहाण चाणिकेप्रनीत्तं गीस्वामीत्वां ताडयिथति तेनीत्तं वीरभोग्या वसुन्धरा चाणिकेप्रन ज्ञातं अयं महान् उदार
चरित इति ज्ञात्वा कस्यचित्प्रत्यासन्न पुरुषस्य पृष्टं अय कस्य सुतः तेन मातुर्दोहद पूरकं चाणिकेप्रं उपलक्ष्य तव पुत्रीयमित्युक्तं चाणिकेप्र उवाच
बालचलमया समं त्वामहं राजानं करोमि चलितचाणिकेप्रन समं बालः परदेशे प्रिच्छितधातुर्वाद् द्रव्यवलेन लोकी वनीमेहितः गत्वा पाटलि पुत्रं रुषं

दृष्टाः विचित्रतया मायया पौरान्विप्रतार्य तासर्वा दूरीकृताः ततो नगरं गृहीतं क्रमेण स सेन्धी तौ पाटलीपुत्रपरिसरे गतो रुद्धं तन्नगरं नन्दौ धर्मद्वारेण निर्गमं अमार्गयत् ताभ्यामुक्तं, एकारथे यावन्माति तावत्प्रमाणं वित्तदारारुतादिकं लाल्वा निर्गच्छ नन्देन तथैव दत्तं एका नन्दपुत्री रथस्थितानिर्गच्छन्ती पुनः पुनश्चन्द्रगुप्तं पश्यति नन्देन भणितं याहीति सा रथादुत्तीर्थं चन्द्रगुप्तस्थे गत्वा यावदारुहति तावत्तद्रथे न व आरका भग्नाः अमङ्गलमिति ज्ञात्वा चन्द्रगुप्तेन सा निषिद्धा चाणिक्येनीलं इमां मा निवारय नवपुरुष गुगानि यावत्तव वंशीभावीति प्रतिपन्नं तेन अथ परिव्राजकराज चंद्रगुप्तचाणिक्या पाटलिपुरमध्ये प्रविष्टाः गता राजगृहे राज्य द्विधा विभज्य गृचीतं तत्रै का विपकन्यास्ति तां दृष्ट्वा परिव्राजकराजः कामविह्वली जातः चाणिक्ये न साः तस्यै व दत्ता तस्याः प्रथमं परिवर्द्धनैव विषात्तीं जात' यावता चन्द्रगुप्ती विपप्रतीकारं करोति तावता चाणिक्ये न भुजुटिः कृता कर्णे चेमं श्लोकं पठित्त वान् तुल्यार्थं तुल्यप्रसामर्थं मर्मत्रं व्यवसायिनं अर्षं राज्यहरं मित' यो न हन्यात् स हन्यते १ ततश्चन्द्रगुप्तप्रतीकारार्हं भूतः परिव्राजकराजसु मृतः ततश्चन्द्रगुप्तः संपूर्णं राज्यं करोति परं नन्द मनुयाथौर्येण देशोपद्रवं कुर्वन्ति एकदा चाणिक्यचौरदमनीपायं चिन्तयन्नगराद्धर्गितः तत्र गलदामकुब्जिदः स्वपुत्रं मल्लोटकैरुच्चारितं दृष्ट्वा कोपत्तेषां विलं खगित्वा प्रज्वालयन् दृष्टयाणिक्येन चिन्तीतं योग्योयमिति तस्यै व तलारत्वं दत्तं पश्चात् स चौरनिग्रहं करोति प्रलुत किञ्चिदुपकारादि न करोति तेन सर्वेपि चौराः प्रकटीकृताः व्यापादिताश्च जातं निष्कण्टकं राज्यं अथ कोयार्थं चाणिक्य उपायं करोति एकदा पाटलिपुत्र सम्बन्धिनी अवहारिणी भोजनार्थंजाकारिता' भोजनान्ते तेषां चन्द्रहाममदिरा दत्ता ते विह्वलीभूताः तावता चाणिक्याः समुत्थाय तुल्यत्रेवं पठति दीमज्जधाडरत्ताइ' कंचणकुडि आतिदंडंच राया विप्रमे सत्यी इत्यवितामिहीलवाएहि १ इदं श्रुत्वा परः कश्चित् समुत्थाया जम्भतीपि यत्र प्रकटितं तद्ददति इतः सहस्रयोजने हस्तिपददेशे टकानां लनं अस्ति अत्रार्थे ममापिहीलवादयः अपरः पठति मयातिलाड कउमोस्ति ततो मम

ते तिना बहुलघणा निव्यत्स्यन्ते पत्रार्थे मर्गापि होल यादय अन्य पठति तावन्त्यो मे गाव सन्ति यासां नवनीतेन महागिरिनदीप्रवाहो रुञ्चते
 पपर प्राह तावन्त्यो मे यडवा सन्ति यासां एकदिनजाते किगीरपुच्छकेगै पाटलिपुरनभोमण्डल कादयामि अन्य प्राह तादृगमिशानय सन्ति
 यद्येकै प्रलङ्ग गालयो नवीना भवन्ति अत्रार्थे ममापि होल वादय एव सर्वेषां चित्तमर्यादा युत्वा चाणिकेन यथायोग्य वित्त गृहीत मय चाणिक
 सुवर्णोपाजनीपाय चित्तयन् देवमारराध तुष्टेन देवेन तस्य जयिन पायकादत्ता चाणिकेन तै पासकै कथियर गिञ्चित द्यूतार्थे प्रेरित स गृहीत
 सुवर्णटङ्कक्याल पुराभ्यन्तरे भ्रमन्नेव यत्कि अह यदि जयामि तदा सुवर्णटङ्क एक गृह्णामि मा यदि अन्ये जयति तदा तस्य सुवर्णटङ्कक्यालमिद
 ददामिेति युत्वा वश्यो जनास्तेन सम द्यतक्रीडां कुर्वन्ति पर हारिमेतव जना आप्नुवन्ति स तु सर्व्वत जयति एव पायक युक्तस्य तत्पुरुषस्य पराज्या
 दुर्गभ स्याथा मनुष्यत्वप्राप्तिर्दुर्गभेति पायकदृष्टान्त २ ध्वेति भरतसत्त्वानि सर्वाण्यपि धान्यानि एकत्र समील्य मध्ये सर्पय प्रस्थ प्रथेप केनचिदेवेना
 भिधोयते सव एकीकृत्य कस्याचिदतिहवाया दीयते तस्या यथा सर्व धायानां प्रत्येक पृथक्करण दुष्कर तथा मनुष्यत्वमपि दुर्लभ ३ दूएत्ति एको राजा
 तस्य अष्टोत्तर गतस्य भान कृता समाप्ति स्तभे च १ ८ कौशा सन्ति एकदा तस्य रात्र पुत्रो राजान मारयित्वा स्वय भोगुमीहति तस्याध्यवसा
 योमन्यिणाप्रात कथितय रात्रे रात्रापि पुत्रा योक्त पुत्रयोक्ताकमनुक्रम न सहते स द्यूत खिलति यदि जयति तदा तस्य राज्य दीयते द्यूतक्रीडनविधि
 रय यत्तते कुमारस्य एकवारदायो भवति रात्रे । यद्येच्छ दाया भवन्ति एवमष्टोत्तरयतस्तमाना एकैक कौण अष्टोत्तरयतवार जयति तदा तस्य राज्य
 दीयते त्वमप्येयं कुञ्चति रात्रा उक्त कुमारस्य यथाऽस्य कुमारस्य एतत्करण दुष्कर तथा मनुष्य त्वमपि दुर्गभ ४ रयणधि एकस्मिन्नगर कस्यचिद्
 व्यवहारिणो नानारत्नानि स सनेभावाव व्यापारयति अन्यदा पितरिदेयान्तर गतेपुत्रै कीटिध्वजघ दूरदेयान्तरीय पुरुषाणा हस्तेतानि दत्तानि जाता

पुत्राः कीटिध्वजाः कियताकालेन पिता गृहमागतः श्रातवान् रत्नविक्रीणनं शपं विधाय पुत्रानिव मूचे मम रत्नानि पथाहापन्तु यथा तत्पथाहालनं दुष्कर तथा मनुयत्व मपि दुर्लभं सुविणेति प्राटलिपुरात् कला कुगलो मूलदेवो राजशुलीयूत व्यसनात् पित्रापराभूती निर्गती गुटिका कृत वामन रूप उज्जयनी गतः तत्र तादृशा रूपेणैव तेन वीणाकला जनानां दर्शिता विस्मिताजनाः वीणाकलावार्त्ता सर्वत्र प्रसृता श्रुताच देवदत्तया वैश्यया ततस्तथास्तस्या कारणाय चैटी प्रहिता तथा चागत्य एव सुक्तं भी वामन त्वां मत्स्वामिनी आकारयति तेनाक्तं ? याविचित्र विटकीटि निष्टया मद्यमांसा निरत निक्तष्ट क्रामला वचसि चेतसि दुष्टातां अजन्ति गणिकां न विगिष्टाः वासनेन एवसुक्तेऽपि तथा चेष्या विचित्रैः सामवचनैर्गृहयानीतः देवदत्तया च तेन सम वीणावादी विहितः वामनेन वीणा कलादिभि देवदत्ताजिता पादयोर्निपत्य एव मूचे भी पुरुष स्वरूपं प्रकटयः अत्रनया कलया प्रायते लभी दृग्वामनरूपवाद्यासि मूलरूपन्ते पृथग् भविष्यतीतिवातरूप प्रकटय वामनेन वैश्यावचनरञ्जितेन स्वरूपं प्रकटितं सापिष्टयं तद्रूप चम कृता प्रकाम मागृष्ट्य स्वगृहेतं स्वभोगासक्तं चकार अतीवतलीति पातं बभूव अन्यदा पूर्वं तस्यां आसक्तवान् व्यवहारि पुत्रोऽचलना मागृहे समयातः अक्रया उक्तं वल्के इभ्य पुत्रं भज सुच्चैनं निखं मूलदेवं तथाचोक्तं मूलदेवो गुणवान् अयमचला निर्गुणः अक्रया उक्तं उभयोः परीक्षा क्रियते ताभ्यां उभयोः पार्श्वे इचवः आनायिताः मूलदेवो निखच कर्पूरवासिताः सुसंस्कृता आनीता अचलेन शकटं भूला इक्षव आनीताः तथायक्षा वचसा इभ्य पुत्रेण पराभूता मूलदेवो बेन्नातटं प्रस्थितः अटव्यां गच्छती मूलदेवस्योपवासत्रयं जातं चतुर्थं दिवसेकापियामे भिक्षायां राक्षामापालव्याः मूलदेवेन तद्भक्षणार्थं सरसि गच्छता कश्चिन्नहातपत्नी दृष्टः तदभिमुखं गत्वा निस्तारयमां विस्तारय पातं द्रव्यादि शृङ्गानिमान् माधान् गृह्णाण्युक्त्वा तेमाषा स्तस्मै दत्ता तदा तत्साहस सन्नुष्टादेवी गगनमार्गेऽवदत् भी पथिकमार्गेय यथेच्छं पदद्वयेन ततो मूलदेवोऽवदत् धन्वाणं खनराणं कुम्भासाहुन्ति साहु

पारणए गणि अशु देवदत्त रज्ज सहस्रस्य हृत्वीथ १ तयाचोक्त इयमपि ते सद्य सम्भवथति तस्यामेव रात्री देव कुव्या मूलदेवेन सुप्तेन स्ववदन प्रविचन्द्र स्वप्ने दृष्ट तदानो मेव तत्रैव सुप्तेन एकेन कार्पटिकेन तादृश्य एव स्वप्नेदृष्ट मूलदेव स्वस्तरादुत्थितो यावत्स स्वप्न विचारयति तावत् सोपि स्वस्तरादुत्थाय स्वगुणे पुरस्त स्वप्नमाचख्यो गुरुरपि त्वमथ दृष्ट गुडसहित मण्डक प्रासासीति बभाषे मूलदेवस्तत उत्याय नगरान्त स्वप्न पाठक गृहे गत्वा घन विनय कृत्वा स्वप्नपाठकाय स्व स्वप्नमाचख्यो तेनोक्त सप्तमदिवसे तव राज्य भविष्यतीत्युक्त्वा स्वपुत्री तेन मूलदेवाय परि शायिता अपुत्री तत्रगरस्वामी सृष्ट पञ्चदिव्यैर्मूलदेवस्य राज्य दत्त देवदत्ताश्च गणिकान्तवानाय्य मूलदेव राजा स्वराज्ञीश्वकार अन्यदा तत्र व्यापा रार्थं मागता चल व्यवहारी राज्ञा मूलदेवेनोपलक्षित शुक्लमिषेण भृश पराभूत स्वतेजो मूलदेवेन दर्शित अचल स्वापराध क्षमयामास सौञ्ची वचसा मूलदेवेन सुक्त अथ स कार्पटिक स्वस्वप्नानुसारि स्वप्नदर्शन मूलदेव कुमार राजान जात युत्वा पुनस्तादृश स्वप्नार्थो तस्यामेव देव कुव्या सुप्त पर तादृश्य स्वप्न न प्राप एव यथास्य कार्पटिकस्य तादृश्य स्वप्नप्राप्तिर्दु प्राप्या तथा मनुथ त्वादभ्रष्टस्य जीवस्य मनुथत्व प्राप्तिर्दु प्रापिति ६ चक्रेति इन्द्रपुरे इन्द्रदत्त राजा तस्य २२ पुत्रा अन्यदा तेन राज्ञा एका मन्त्रियुक्ती उठा सा वणिक पुत्रीति परिणीय उपेक्षिता कदापि न भुक्ता एकादा सा ऋतुमान कुव्वती राज्ञा दृष्टा दृष्टश्च सेवकाना कस्येय पत्नीतैरुक्त युष्माक पत्नी मन्त्रियुक्ती राज्ञा तदावासे गत्वा सा भुक्ता तस्या पुत्रीजात स राजसदृश एव यत उक्त ऋतुमान समयेय पश्यति नारी तत्सदृश जनयति गर्भमिति तथा स्व पितुर्मन्त्रिणो राजभोग सम्भव गर्भप्रस्राव प्रोक्त मन्त्रिणा तु तद्दिने राज्ञीज्ञापयामि ज्ञानादिक स्व वचिकाया लिखित तस्या पुत्रीजात क्रमादृष्टद्विद्वत सो मन्त्रियैव पालित कदापि राज्ञीनैव दर्शित मन्त्रिणा कलाचाय्यपार्श्वे ७२ कला पाठित २२ पुत्रासु अविनीता न पठन्ति अथ मथुराया पुरिजित शत्रु पुत्री निवृत्ति नास्ती कृत रापा बंध

नाणाविहाकट्टु पुढोविस्म भया पया १, समारे समापत्रा भ्रतण गट्ठीवाखान्हारे प्राप्ता प्रजा जन्तु समूहा विम्व भृती भवन्ति जगत्पूरका भयन्ति कि छत्वा नानाविधा सुष्टयक जातिपु एकैन्द्रियादिपु नाता विधानि कर्माणि छत्वा कोट्टीय जातिपु नानागोत्रासु नाना बडु प्रकारण गोत्र नामवा मान्ता नाना गोत्राशासु नानागोत्रासु बहुभिधानासु २ एगया देवलोएसु नरएसु वि एगया एगया आसुरइयाय अहाकम्मोहि गच्छइ ३ एकदा एकस्मिन्काने देवलीकेपु देव उत्पद्यते पुन स एव जीव एकदा नरके पु नारक उत्पद्यते एकदा आसुरकाय असुर शुमारभाव प्राप्नोति एव जीवी यवा कर्मभिगच्छति यस्मिन् समये जीवी याद्वयानि दायकानि कर्माणि बध्नाति तादृशी गति जीवी व्रजतीत्यर्थ ३ एगया

ससारे नाणागोत्तासु जाइसु । कस्सा नाणाविहा कट्टु पुढोविस्म भयापया ॥२॥ एगया देवलोएसुनरए सुविएगया ।

एगया आसुर काय आहाकम्मोहि गच्छई ॥३॥ एगया खत्तिओ होइ तओ चडाल बुक्कुसो । तओकीड पयगोय तओ

समापत्रा प्राप्ता ससारे ए ससारने विपे जीव आवी उपना नाना गोत्रेषु जातिपु नानाप्रकारे गोत्रे अने जातिने विपे कर्माणि नानाविधानि छत्वा विषयप्रकारना जूदार कर्म करीने पृथक विस्मभिता जगत् पूरका प्रजा जाता पछे जूदार लोकपूरक इआ २ एकदा देवलीकेपु सौधर्मादिपु एकदा ए जीव देवलीके जाइ नरकेपु रत्तप्रभादिपु एकदा जीव आपणी करणीये नरगे जाय एकदा असुरकाय भुवनपत्यादिपु याति एकदा प्रस्तापि ए जीव असुरकुमार मान्हि जाय ययाकरमभि गच्छति जेहवा कर्म ए जीवे कीधा तेहवी गते जाय ३ एकदा खत्तियो भवती इम एकदा ए जीव मरीने खत्तिय हुवे तत चरणल शूद्र बलीए जीव चखाल हुवे बुक्कसहुवे वाप शूद्र माता वाहणी ते बुक्क स कह्यीये तत कीटक पतइ शनभ वली कीडो

खत्ति श्रीहीड्र तथी चण्डाल वीकसी तथी कुन्दु पिपीलिया ४ जीव. एकदा चत्रियो भवति ततोऽनन्तर सजीवशाण्डालो भवति ततः
वीकसीपि जीवो भवति यस्य शूद्रः पिता भवति माता ब्राह्मणी भवति तत्पुत्र वीकस उच्यते ततस्तत्र जाती धर्मस्य दुर्लभत्वात् कीटो भवति च पुनः
पतङ्गो भवति ततश्च कुन्दुर्भवति पिपीलिका कीटिका भवति यत्यान्तरेपि जातिकुलभेदाः उक्ताः सन्ति यस्य ब्राह्मणः पिता शूद्रो माता भवति सनिपादः
उच्यते यस्य ब्राह्मणः पिता वैज्यः माता भवति स च अश्व्युः उच्यते यस्य च निपादः पिता अश्व्युः च माता भवति स च वीकस इत्युच्यते ४ एव मावद्गो
णीसु प्राणिणीकस्य किञ्चित् समारं सव्येऽसु चतुर्योति लक्षप्रकारेषु कीटगाः प्राणिनः कर्मकल्पियाः कर्मभिः किल्बियाः
भवन्ति आवर्तनं पुनः पुनः परिभ्रमणेन मृष्टायोनयः आवर्तयोनयस्येषु चतुर्योति लक्षप्रकारेषु कीटगाः प्राणिनः कर्मकल्पियाः कर्मभिः किल्बियाः
मलिनाः अधमावाकेषु केच वन उद्विजन्ते सर्वार्थेषु चत्रिया इव सर्वेषु धन कर्मकर्मभूमिवनिता गजादि पदार्थेषु चत्रिया गजान इव

कुंथु पिपीलिया ॥४॥ वए मावद्द जीणीसु प्राणिणीकस्य किञ्चिन्मा । ननिथिज्जन्ति मंसारे सव्येऽसु वृत्तिया ॥५॥ काम्मा
संगेहिं समूढा दुक्खयावहु वैयणा । अमाणुसासु जीणीसु विणिहम्मन्ति प्राणिणी । ६। काम्माणं तु पहाणाए आणुपुञ्जी

पतङ्गोऽथी ए जीव च तत्र कुंथु पिपीलिका कीटिका ए जीव कुंथु कीटक इवे ४ एव आवर्तयोनियु इम ए जीव जीनिने विषे परिभ्रमणकरतो प्राणिनः
प्राणी कर्मकल्पिया अधमा प्राणि जीवता कर्मसेना हे न उद्विग्ना भवन्ति समारे पर जीव उद्विग्ने नथो होता समारमाहिं फरताज भगता नथो इवे
काइं धर्म कीजि सर्वार्थेषु चत्रियाः त्रिम मन्थोराज ऋद्रि नेती सतीप न पामे तिम ए जीव मसार फिरतो सतीप न पामे ५ कर्ममयोगी समूढा ए जीव

तथा प्राणिनी पोत्यथ ५ कर्मसंगीह समूटा दुक्तिया बहुवे यथा अमाणु सामु जाणीसु विणिहन्मन्ति पाणिणी ६ प्राणिणी जीवा अमानुपीयु मनुष्यवर्णितयोनियु विणिहन्मन्ति विगेषेण निहन्मन्ति विगेषेण निपात्यन्ते अथात् एकेन्द्रिय द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रियेषु वारवार उत्पद्यन्ते इत्यर्थं कोट्टया प्राणिन कर्मसङ्गे कर्मसयोगै समूटा सव्याप्ता पुन कोट्टया दुक्खिता पुन कोट्टया बहुवेदना ६ कम्माणुपहायाए आण पुब्बोकयाइत्थी जीवा सीहि मणुपत्ता आय यन्ति मणुस्सय ७ त पुनर्जीवा ग्रीधि दुट्ठकर्मनाशस्वरूपा लघु कर्मता अनुप्राप्ता सन्तो मनुष्यत्व आददन्ते तृजन्म प्राप्नुयन्ति इत्यर्थं कया आनुपूव्या अनुक्रमेण यनै गनै कदाचित् कर्मणा मनुष्यगति विपन्नकराणा प्रकर्षेण हानि प्रहाणिस्तया प्रहाणा प्रकर्षेण होनतया ७ नाणुस्स विगह लढ सुइ धम्मस्स दुत्तहा ज सुचा पडिवज्जति तव खति मच्चिसय ऽ मानुष विग्रह लब्धा मानुष शरीर प्राप्य तस्य धर्मस्य श्रुतिदुर्लभा धमशयण दु प्राप्यमित्यर्थं य धम श्रुत्वा जीवा तप उयवासादिक चान्ति चमा अहिस्सता सदयत्व प्रतिपद्यन्ते अङ्गीकुर्वन्ति यस्य

कयाइत्थी । जीवा सीहि मणुपत्ता आययति मणुस्सय । ७। माणुस्स विगह लघु सुइ धम्मस्सदुल्लहा । जसोच्चा पडि

कर्म करोति मूठ ते मूर्खं हुवा के दुग्गयुत्ता बहुवेदना सु जीवडा दूखियाहुवे घणी वेदना ससार माहि फीरता खमि अमानुपीयु नरकतिर्य गादियु योनियु नरकतियव गतिने विपे जीवडा विगेषेण निपात्य ते कर्मभि प्राणिन विगेषे करो निपातीइ घालीइ जीव आपणे कर्म ६ कर्मणा प्राधान्यात् कर्मने प्रधानपणे करोति अशुभ कर्म खोण हुवा थका आनुपूर्या अनुक्रमेण कदाचित् अनुक्रमे फीरताइ ससा रमाहि भला कर्मने उदे जीया शुदि मनुष्या प्राप्ता जीव निर्मल हुथी मनुष्यगति माहि आवे आपुवन्ति स्वीकुर्वन्ति मनुष्यत्व मनुष्यपणु पामे ७ मानुष्य देह लब्धा मनुष्य शरीर लाधू मनुष्य हुथी युतिधर्मस्य दुर्लभा पर धर्मनू साभलवो दीहिलीय धर्म

तदानीं श्रीमहा वीरः प्राह हे जमाले सन्ति मम शिष्या एके केचिद्दये प्रग्रहय मितं व्याख्यान्ति तथाहि हे जमालिअयं लोकः पूर्वत्राभूत् अये न भविष्यति साम्प्रतं नास्तीति वक्तुं न शक्यते तस्मादयं लोक त्रिकालस्थायित्वेन शाश्वतः उत्सर्धिणीं विषयो भूत्वा सर्पिणीं विषयो भवति इत्यदि पर्यायै रशाश्वत इति जीवापि त्रिकालविषयत्वेन शाश्वतः देवत्व मथनुत्व पर्यायै रशाश्वत इति एव साख्यातं भगवतो वाक्यं जमालिनग्रहधि ततो निष्कान्तः स आत्मानं परांश्च व्यङ्गामयन् बहून् वर्षान् यावत् आमख्यपर्यायं पालयित्वा बहुभिः पटाष्टमादिभिरात्मानं भावयित्वा मासिक्या संलेख नयाऽनशनमाराध्य कयमाणे कडैत्ति उत्सूत्रमनालोच्य कालमासे कालं कृत्वान्तक कल्पत्रयो दशसागरोपमस्थित्याकिष्पिष देवत्वेनात्यन्नः तदुत्सूत्र प्ररूपणेन चानं तं संसारं समुमार्जितवान् यदुक्तं भगवत्वां चत्तारि पञ्चतिरिक्त्व जीणि यदेव मनुस्स भवगहणाइं संसारं अणुपरि यद्विज्ञा तत्रो पच्छासिज्जिस्सइ बुज्जिस्सइ सव्वदुक्खाण मन्तं करिस्सइ इति प्रथम निरुव जमाल्युदाहरणं १ अथ द्वितीय निरुवोदाहरणं कथ्यते राजगृहे नगरे गुण गिलजे चैत्ये चतुर्दश पूर्वपाठीवसुनामा आचार्य समवसृतः तच्छिष्यस्थित्य गुप्तोस्ति सोऽनदा सर्वात्म प्रवाद पूर्वस्सिद मालापकं पठति यथा एके भन्ते जीवप्यसे जीवित्तिवत्तव्वंसिआणीयण्डे समद्वेएवन्देजीवपएसेत्तिनि सखिज्जा असंखिज्जा वा जावए गपए सेणवि अणन्तो जीवित्ति वत्तव्वंसि आणीयण्डे समद्वे एवं देओजीवपएसे त्तिनिसखिज्जा असंखिज्जा वा तम्हा किसणे पडिपुन्ने लोगा गासप एस तुल्लपएसे जीवित्ति वत्तव्वंसिआ इत्यादि अत्र स प्रतिपन्न यदि सर्वे जीवप्रदेशा एकप्रदेशहेना जीव व्यपदेशं न लभन्ते सचै कैकः सर्वान्तिमा जीव इति वक्तव्यः स्यात्तद्भावना भावितत्वात् इति तस्थान्तदेशे जीवभ्रान्तिः ततः स आमलकप्या नगर्याङ्गतः तत्र मित्र श्रीनाम्नायावकेण स्वगृहेनि मन्यतः लड्डुकान्ति मप्रदेश एक सेवतिका खायान्ति मप्रदेश एक एव भृतहण्डिका मध्यादेक एव कूरादिकरणं भृत घृतपाव मध्यादेक एवबिन्दः एव सर्ववस्तु सम्यम्बो एकैक प्रदेशोत्सः पुनः आर्षेनाणं भगवन्

आवका ऊचुः भवन्मतेन वयं शाहा भवद्भिर्दृष्टास्ते विनष्टा वयन्तु नवीनाएवोत्पन्नाः ये भवन्तो यतयः पूर्वमन्माभिर्दृष्टास्ते विनष्टा यूयन्तु नवीनाएय जगज्जय
 वादिल्लावन्नतस्येति तैः श्रावकैः स गिञ्चित, प्रतिबुद्धः इति चतुर्थं निहयोदाहरणं अथ पञ्चमं निहयोदाहरणं वीरागु द्विगताष्टाविशतिवर्षेषु २२८ गतिषु
 उल्लाका नदीतीरे एकस्मिन् खेटवनपुरे उल्लाकातीताभिधानं वनमस्ति तत्र महागिरिगिरियुधेन उगकातीता परत्र तीरे तिष्ठति तस्य गियो गज्जाचार्यः पूर्व
 तीरे तिष्ठति स स्वगुणवन्दनार्थं परत्रतीरे जिगभिर्पुनर्या सुत्तरन् खल्लाटमस्तकत्वेन ग्रथः शीत उपरिचातप इति क्रिया ह्यं युगपदेवाऽनु भवन् जुगवन्त्वी
 नलिय उवश्रीगा इति भगवद्वचनमन्यथामन्यमानो निहयोजातः श्राचार्यैश्च युक्तिभिर्त्रोधितीपि न मन्यते एकदा स राजं गृहे वीरप्रभोद्यानिमणिनायकस्य
 यज्ञभवने उत्तीर्णः तत व्याख्या नागतलोकानां पुरः क्रियाद्वयस्य युगपदनुभवे भवतीति स्वमतं प्ररूपयन् यज्ञेणमुद्गर मुत्पाटाको पश्यदुर्गयित्वा तर्जितः
 अरे मयाऽत्रैवसमवसृत वीरसुखाच्छ्रुतं यत् क्रियाद्वयस्यानुभवीयुगपत्र भवति समय सून्मलेन युगपदनुभवाभिमानी भमएवेति त्वं विरादप्यधिक एवेति
 यज्ञेणैव स प्रतिबोधितः इति पञ्चमनिहवकथा ५ अथपट्ट निहयोदाहरणं कथ्यते वीरात्यथ यतचतुचत्वारिं गहर्षेषु गतिषु अन्तरिक्षिकापुर्यंभूत गृह ध्वित्वं
 तत्र श्रीगुप्तनामश्राचार्याः समवसृताः तद्वन्दनार्थं प्रत्यामन्नग्राम रोहगुप्तः गियः समागच्छन् एकं उदरवत् लीहपट्ट जग्मुरन् श्रावाकरथ परिव्राजकं दृष्ट्वा
 पप्रच्छ किमिदमिति स प्राह ज्ञानिन ममोदरं स्फटति तेनात्र लीह पट्टोवजोस्ति जग्मू द्वीपे च मत्तुन्यः कोपि नास्तीति जग्मू गागा करे ब्रह्मास्तीति
 परिव्राजकेन तदानीमिव पट्टोहीवादितः नास्ति विगी कथित् यो मयासमं वाटं करोतीतिरोह गुप्तेन कथितः अहंवादः करिष्यामीति वदतापट्टोवारितः
 स परिव्राजक स्ततो राजहारेगतः रोहगुप्तस्य गुरुसमीपे समायातः पट्टोहीभक्षणं मुत्तान्तः कथितः गुरवः ऊचुः वरं न कृतं स विविध विद्या बलवान्
 यदित्वं श्याद्वाद युक्तिभिस्तं वाटि पराजियति तदामो कुविद्याभि स्वीयोपट्टवं करियति रोहगुप्तः प्राह गुरुभिस्तथा मम प्रसादः कार्यः यथा ममवादजयः

एतदुपद्रव्यत्रयं स्यात् गुरुभिक्षस्य मयूरी न कुली प्रसुगा यिया दत्ता रजो हरणश्चाभि मन्त्रा दत्तश्च यदा इमाभिक्षवतस्य प्रराभवो न तिष्ठति तदा तत् कुर्वियाभिसुमिद र्नाहरण भ्रामणीय गुरु वन्दित्वा स राज सभाया गत तत्र मिलितोवादि प्रतिवादिर्त्तै रोहगुप्तेनात्त वराकोय परित्राजक कि ज्ञानाति पूर्वपत्नी मयायैवदत्त यद्येष्टममीमे प्रग्रयतु परित्राजकेन चिन्तित असौ पूर्णविद्यावान् मया जे तु मगक्यस्रतोऽस्यैव मिश्रान्त पणमह गृह्णानि नष्टमी स्व सिद्धान्तपत्र मुत्यापयियतीति ममैय जयो भविष्यतीति विचित्य परित्राजकेनोक्त अह राशिहयमङ्गी कुर्वे जीव राशिर्नीचराण्य पुण्यराशि पापराशियेत्यादि बुद्धिमत्तारोहगुप्ते न तदानी जीवाजीवी नो जीवयेति राशित्रय मुक्त जीवास्त सादय अजीवा पडादय नो जीवागृह कोकिनच्छिन्नपुच्छास्ति यथाहि एकस्य दण्डस्य आदिमस्य अग्रश्चेति प्रकारत्रय एव सर्वतैत्यादि वचोभि स परित्राजकी निनाठितो रोहगुप्तस्याभिमुख इयिकात्ममेव रोहगुप्तम् मयूरान् असुचत् मयूरैस्तुते सर्वे भचिता तत परित्राजक सपान् असुचत् रोहगुप्तम् न तुल न् मुभाष न कुलेन निनायिता सर्पा तत स परित्राजक उन्दरागुप्ते च मार्जारान् सुमेच मार्जारैस्तुते भचिता तत परित्राजवन गृगायुषा रोहगुप्ते न तु व्याघ्रा व्याघ्रैर्मुग्गाभचिता तत परित्राजकेन शूकरासुप्ता रोहगुप्ते न तु सि है शूकरा भचिता एव परित्राजकेन येये चोयामुष्मात्प्रतिमणा रोहगुप्ते न मुक्ताम्लेयते विनायिता अयात्यन्त खिन्नेन परित्राजकेन गर्दभी सुप्ता रोहगुप्ते न मारजोहरणे नहता परित्राजकस्यैवा परिषिष्टा कृत्वागता तत सपरिव्राजकी राजादिभिर्हीलितो राजद्वाराहले गृहोला बहि कृत अथ रोहगुप्त परित्राजक जित्वा गुरुसमीपे समागत मय याद स्वरूप गंगी गुरुनीत्त वर कृत पर लया साम्रत राजसभायां गत्वा राशित्रय स्थापना यिपय मिथ्यादु कृत देयञ्चिन शासने राशिहयस्यैव ध्यस्वापनात् रोहगुप्तेऽपदत् मया तादृगाया राजसभाया गत्वा मिथ्या दुष्कृत दत्त्वा स्व वचनमप्रमाणीकृतुं मगक्य गुरुणा कृत नातत्रपाकार्यो अवस्य

तत्र गत्वा मिथ्या दुष्कृत देहि एव वारं २ गुरुणायमुक्तः खिन्नः प्रकाम धृष्टो भूत्वाऽवदत् राशित्रयमेवास्ति नात्रकश्चिद्दीष स्ततो गुरुशियथयीरेव वादो
लभनः आचार्याः राजद्वारं गताः श्रियेण समं वादकं कर्तुं भारे भिरे वादं कुर्वतीस्त्रयोः षष्मासागताः राज्ञा उक्तं मम राजकार्यं सीदन्ति भवतां
वाद समाप्तिर्नजाता ततोयां तु स्वस्वनि भवन्तः गुरुभिरुक्तं कल्पदिवसे वादनिरण्यं करिष्यामि ततः प्रभति राजादि जनपरिहृताः गुरवः कुत्रि
काप णेसमागताः तद्वनिक जगुः देहि जीवान् इति गुरुभिरुक्तं तेन कुमार कुमारी हस्तास्वाद्यनके जीवादर्थिताः देहि अजीवानिति गुरुभिरुक्ते तेन घट
पटादयोऽर्था दर्शिता देहिनी जीवानिति गुरुभिरुक्ते कुत्रिका पण धनिकः प्राह न सन्ति लोकात्रयेनी जीवाः यत्कीकत्रये भवति तदेव कुत्रिकापणे भवति
नान्यत् एवं ४४०० चतुःचत्वारिंशच्छतप्रश्नकरणे न निलोठितोरीह गुप्तो निर्विपयीकृतः सगणान्निर्भव इति कृत्वा निष्कासितः तेन वैशेषिकमतं प्रकटी
कृतं षट्पदार्था स्तेनैव प्ररूपिता इति षष्ठी निरुक्तः ६ अथ सप्तम निरुक्तः वीराल्पश्चयतचतुरयीति ५८४ वर्षेषु गतेषु दशपुरे इच्छुगृहोद्यानि
आर्यरचितसूरिः समागतः तस्य गोष्ठा माहिल १ फलुरचितः २ दुर्बलिका पुष्य ३ श्रैतिशियथ तयं वर्तते इतश्च मथुरायां अक्रौयावादी उल्लिखितः
तत्र प्रतिवादी कोपि नास्तीति तत्रत्य सङ्घे न आर्यरचितसूरिर्जापित तैश्च तत्र गोष्ठामाहिलो वादलक्षिमानिति प्रैपितः तेन तत्र गत्वा राजसभायां स
पराजितः मथुराश्चादौ च गोष्ठामाहिलो वर्षाचतुर्मासक रचितः तावता दशपुरे श्रीआर्यरचितसूरिः स्वमरणमासन्नं ज्ञात्वा स्वपटस्थापनायामिव चिन्त
यति बूढीगणहरसद्दी गो अममाद्दे हिं धीरपुरिसेहिं जीतं ठवेद्द अपत्ते जाणंती सी महापावी १ एवं चिन्तयित्वा सर्वोपि संघ आकारितः तस्याग्ने
सूरिणा उक्तं अह गोष्ठा माहिल प्रति घटघटसदृशो जातः यथा घटघटात् घटमपनीयते तदा बहवो घटबिन्दवस्तत्र. लग्नास्तिष्ठन्ति तथा मया यदा
गोष्ठामाहिलः पाठितस्तदा मया स्वकोष्ठे बहवो विद्यांगा रचिताः फलुरचितं प्रति अहं तैलघटसदृशो जातः यथा तैलघटात्तैलमपनीयते तदा तत्र

तेनविन्दव' स्त्रोका एव तिष्ठन्ति तथा मया यदा फलानुरचित पाठितस्तदास्य कोष्ठे मया घना विद्या चिन्ता स्त्रोका एव रचिता दुर्बलिका पुष्य प्रति
 पक्ष निष्पाव घटसदृशो जात यथा निष्पावघटात् निष्पावा अपनीयन्ते तदा नैकीपि तत्र तिष्ठति तथा यदा मया दुर्बलिका पुष्य पाठित स्त्रोकास्य
 कोष्ठे मया विद्या चिन्ता नैकापि विद्या रचितास्तीति आर्यरचितसूरिणा उक्ते सङ्घ प्राह भगवन् दुर्बलिका पुष्य एवाचार्य क्रियता तस्यैव सर्वविद्या
 स्रद्धेन योग्यत्वात् तदा सदृशव युत्वा आर्यरचितसूरिभि स्वपदे दुर्बलिका पुष्यसूरि कृत उक्त च दुर्बलिका पुष्यस्य गुरुणा वक्त यथाह फलानुरचित
 गोष्ठामाहिलादीनां लालनपालनविधौ प्रहृतस्तथा त्वयापि प्रवर्तितव्य फलानुरचितादीनामपि गुरुणा उक्त यथा भवन्तो मत्सेवाविधौ प्रहृत्ता स्तथा
 दुर्बलिकापुष्यस्यापि प्रवर्तितव्य अपिचाह सेवाविधौ कृतेष्वहर्तपि न रोप गत असौ तु न चमिथ्यतीति सम्यक् प्रवर्तितव्य इयोपरि पक्षयोरेव सुक्ता न
 गन कृत्वा श्रोआर्यरचितसूरिदेवलोका गत गोष्ठामाहिलेन युत गुरोर्देवलोका गमन त्वरित तत्र समायात जनान् पृच्छति को गणधर स्थापित जनै
 नु हृतघटादि दृष्टात प्रतिपादन पूव दुर्बलिका पुष्यो गणधर कृतइति प्रोक्त गोष्ठामाहिल पृथगुपायये कियत्काल स्थित्वा वस्त्रादिमुक्ता दुर्बलिका
 पुष्योपायये समागत सर्वैरपि साधुभिरस्याभ्युत्थान कृत आचार्येणापिकथित कथ पृथगुपायये स्थिता अत्रैव तिष्ठन्तु स नेच्छति आचार्योपाश्रयाद्विगत्य
 शोपायये गत अथ गोष्ठामाहिल पृथक स्थित्वा जनान् व्युत्पाहयति पर न कोपि तद्वच प्रतिपद्यते अन्यदा दुर्बलिका पुष्यसूरयोऽर्थपौरुषी कुर्वन्ति
 संवे साधय शृण्वन्ति साधुभिराकारितोपि गोष्ठा माहिलस्तत्र नायाति न शृणोति च यूयमेव निष्पाव घटसमीयेऽर्थपौरुषी कृत्वाचार्यैर्पलितेषु विष्कम्भो
 नाम गियोऽनुभाषते अष्टमे कर्मप्रवादे पूर्वे कर्मप्ररूप्यते तत्र जीवस्य कर्मण कथ वध आचार्यो भणति बहः स्युष्टर निकाचितः, भेदेरात्मकर्मणोवध
 तत्रात्मप्रदेगे' सह आमतन्तु बडसूचिकलाप बडवर्क्य भवति निकाचितन्तुतापि तव कुट्टित शुचिकलाप वडवति प्रथम हि जीवो रागद्वेष परिणामै

कर्मवधाति पथात्तत्परिणामं असुञ्चन् तत्कर्मसृष्टं करोति तेनैवात्यन्तसंक्षिप्तपरिणामेन निकाचितं निरुपक्रमं करोति तद्धि उदयगतमेव वेद्यते इति विष्णुं सेनामार्गार्थं कृतप्रणस्योत्तरं दुर्बलिकापुष्पाचार्यैः कृत आसन्नीपात्रयस्थेन गोष्ठामाहिलेन श्रुतं तत्रैवस्थेन तेनीक्तं दृष्टव्यमस्माभिः गुरोः समीपेन श्रुतयद्येवं कर्मवधं सृष्टं निकाचितं स्यात्तदामीलीनस्यात्तदाविष्णुं सेनामार्गार्थी वक्ति कथं तर्हि कर्मवधं सृष्टं निकाचितं भवति स आह यथा कञ्चुकः कञ्चुकिशरीरसृष्टति तथा कर्म आत्मप्रदेशान् सृष्टति न पुनः क्षीरनीरनरायेन तत्कर्म आत्मप्रदेशैस्सहवधसृष्टनिकाचि तत्वभवनेन न क्षीरनीरवदेवी भावमापद्यते तथात्वे हि कर्मव्युच्छेद एव न स्यादिति गोष्ठा माहिलवचः श्रुत्वा विंक्तशिशुः प्राह भो गोष्ठामाहिल दुर्बलिका पुष्य आचार्याः पूर्वीक्तमेवादिशन्ति गोष्ठामाहिलः प्राह इमं न जानन्ति पुनर्विंक्तशिशुः सूरीन् प्रश्रयति सूरिभिरुक्तं गोष्ठामाहिलोक्तं असत्यमेव यथाऽऽस्माभिरुक्तं श्रीगुरभिरुक्तं तत्रदृष्टान्तः यथायः पिण्डिविंक्तिः सर्वात्मना सम्बन्ध्यते वियुज्यते च तथात्मप्रदेशैः सह कर्मसम्बन्ध्यते वियुज्यन्ते चेत्यादि दृष्टान्तयुक्त्वा दिभिर्बद्धसृष्टनिकाचितकर्मस्थापना कृता परं गोष्ठा माहिली न मनाते अनप्रादा नवमे पूर्वं प्रत्याख्यानानाधि कारं गुरवः साधूनमिवं पाठयति सादृशं जावज्जीवाए तिविहं तिविहेणं पाणा इवाय पञ्चक्वामि एयं पञ्चक्वाणं वद्विज्जइ इत्यादि आचार्यैरीक्ते गोष्ठा माहिलः प्राह जावज्जीवाएत्ति न वक्तव्यं एवमुक्ते प्रत्याख्यानस्य सावधिकत्वे न परलीकाशंसा भवनेन भंगसम्भवात् प्रत्याख्यानं निरवधिकं कार्यं तथाहि सब्धं पाणा इवायं पञ्चक्वामि अपरिमाणे तिविहं तिविहेणं एवं प्रत्याख्यानं कार्यं गोष्ठा माहिलेनैवमुक्ते विष्णुादिशियाः सूरीन् प्रश्रयन्ति सूरयः प्राहुः प्रत्याख्यानस्य कालावधिकत्वमवश्यं कार्यं अनया मर्यादापत्याऽकार्यत्वमेव स्यात् परलीकाशंसा सम्भवेन भङ्गी नैव स्यात् जीवन्नहं सावद्यं न सेविये कृतस्य तु अवश्यं भाविनी अदिरतिरिति यतीक्तनिर्वाहिलेन न प्रत्याख्यानभङ्गः एव श्रीदुर्बलिकापुष्पीक्तं सर्वैर्यङ्गीकृतं अनप फलानुरक्तितादयः स्थविरा एवमेव भणंति गोष्ठामाहिलसु सब्धेते

न किञ्चिज्ज्ञानस्त यदति स्वीकमेव तोर्यकरोक्तमिति स्थापयति आचार्योक्तं स्वविकीरतं च न मनसि तदा समस्तसत्तेन शासनदेव्या कायोत्सर्गं कृतं सासमागता भणति किं दर्ययति सहेनोक्तं व्रन श्रीसीमन्धरतीय करपात्रेण एवञ्च पृच्छय यद्गोष्ठा माहिली भणति तत्कृत्य उत्तयद्बुद्धिस्तिकापुष्पादयो भणति तत्कृत्य सा भणति सम पुन कायोत्सर्गवल् ददत सहेन पुन कायोत्सर्गं कृतं सागता भगवत्समीपे भगवान् पृष्ट सङ्गीत भगवान् प्राह दुर्बलिका पुष्पादय सस्यगवादिन गोष्ठा माहिलसु मिथ्यावादी निरुव सप्तम इति भगवदुक्तमाकृत्य आगताशासनदेवता भगवदुक्तं माचख्यौ गोष्ठाभाहिल प्राह एषा अल्पबुद्धिका तव गन्तुमेव न शक्नोति तदा गोष्ठाभाहिलस्य एकान्ते दुर्बलिका पुष्पाचार्यैरेवमुक्त आर्यप्रतिपद्यस्व भगवदुक्तं अन्यथा सहेन त्वं सच्चि करिष्यते स न प्रतिपद्यति तदा सहेन सप्तमीय निरुव इति कृत्वा हादयविधसम्भोगाहिकृत हादयविध सभोग्याय पञ्चकल्पे उवहिक १ सुष्ठु २ भक्तपाणी ३ अजलिपगहे ४ वायणार्यणिकाएत्र ६ अबभुङ्गाणे ७ किष्ट कम्पकरणे ८ वेयावच्च करणेइय ९ समी सरणे सत्रिसेजा १० कहाएत्र ११ निम तणे १२ इति सप्तमी निरुव प्रतिपादित ७ समाथिते देयदिसवादिनी निरुवा सम्प्रति प्रसङ्गत एव बहुतरविसखादी वीटिका उच्यन्ते ह्यन्वास सएहि नन्वत्तरहिक ६ ८ तदया सिद्धिगयस्व वीरस्व तोवीडि आणदिङ्गी रहवीरपुरे समुपस्था १ वीरात पटयत नव ६०८ वर्षे रथवीरपुरे दीपकीयानि समव हृता आर्य छथाचार्या तत्र नगरे एक शिवभूतिनामा सहस्रमहो रात्र समीपे समागता वक्ति तव सेवा करोमि रात्रोक्त परीक्षा कृत्वा तव सेवा वसरो दास्यते अन्यदा ऋणवतुर्दया रात्रा सावाकारित उक्त गच्छ अस्या रात्रौ श्रमयानि इदं मथ अथ पशु स्वबलिदेय तद्दहय गृहीत्वा स तत्र गत अन्ये पुरुषान्स्नानार्थं प्रच्छन्नहृत्या पथात्रे पिता सहस्रमहनेन द्युधात्तेन पशु निहल तन्वास भचित मथच पीत ते पुरुषे शिवा फेत्कारयद्भैर्भीयितो सन विभेति पयादागत्य सहस्रमहनेन रात्र उक्त मया बलिदत्त सेवकैरपि तद्दीरलमुक्त रात्रा स्वसेवाया रचित अन्यदा रात्रा मयुराग्रहणार्थं स्वसेवका

तेनोक्त यद्येव मागोनुडीयते तदा नास्वस्य व्युच्छेद परलीकार्थिना एव एव मार्गीऽनुष्ठेय सर्वथा निपरियहत्वमेव त्रैय स्मरिभिरुक्त धर्मोपकरणमेवेति ननु परियहस्तथाहि जन्तवो बहवः सन्ति दुर्दृश्या मासचक्षुषा तेभ्य स्मृत दयाय तु रजोहरणधारण १ चासने शयने स्थाने निक्षेपे ग्रहणे तथा गात्र सकुचने चेष्टनेन पूर्व प्रमार्जन २ तथा सम्पातिमा सत्वा सूक्ष्माय व्यापिनी परे तेषा रद्यानिमित्त च विज्ञेया मुखवस्त्रिका ३ भवन्ति जन्तवो यस्माद्द्वपनिषु कुत्रचित् तस्मात्तेषा परीचार्य पात्रग्रहणमिष्यते ४ अपरञ्च सम्यक्त ज्ञानशीलानि तपयेतीह सिद्धये तेषामुपग्रहार्थाय स्मृत चीवरधारणम् ५ ग्रीतवातातपैर्दग्ने मंगकैयपि खेदिता मासस्यक्तादिषु ध्यान न सम्यक सम्बिधास्यति ६ तस्य त्वग्रहणे यस्मात् क्षुद्रप्राणिविनाशन ज्ञानध्यानीय घातोवा महान् दीपस्त्रदैवतु ७ य एतान वर्जयेद्दीपान् धर्मोपकरणार्हते तस्य त्वग्रहण युक्त यस्याज्जिन इव प्रभु ८ जिन कल्पिकसु प्रथमसहननएव भवति इदानी प्रथम सहननाभावान्जिनकल्पिकमार्गीऽनुडीयते इत्यादि युक्तिभिर्गुरुणा प्रतिबोधितोपि नासौ प्रतिबुद्धे प्रत्युतामपात् स्वप्नावरण त्वक्ता एकाक्षे व यने गत तस्योद्याने स्थितस्य उत्तरानाम भगिनीवन्दनार्थं गता त तथाविध दृष्टा तथापि चीवराणि त्वक्तानि अन्यदा भ्राजा सम सा नगर्थ्या भिचार्य प्रविष्टा आवासीपरिस्थया एकया गणिकया दृष्टा अस्मज्जाले लोको मा विरली भवत्विति मत्वा तस्या उरसि शाटिका व्युत्पृष्टा सा नेच्छति भ्रात्रा उक्त एषा देवतया दत्तेति भ्राट्यवचसा तथा शाटिका परिहिता अथ शिवभूतिना कोडिव कोटवीरयेति ग्रियइय प्रतिबोध्य दीक्षित ततो वीटिकमत मिष्या दर्यन प्रहृत सुचने आजय मग बहवे परिभस्मद् एतत्पदद्वयो परिसप्त निम्नवीदाहरणानि सुद्र च लक्षु सह च वीरिय पुण्डुसह

सुद्र च लक्षु सहच वीरिय पुण दुस्रह । बहवे रोयमाणानि नोयण पडिवज्जए ॥१०॥ माणुसत्त मि आयाओ जोधम्म

श्रुति लभ्या श्रदपि जाता जीवे धर्मसांभल्यो साभली सदृष्टो धर्मभलो वीर्यच पुनदुर्लभ पणिवीय फोरववु दोहिलु जीवजाणि ह्ये धर्मभलो पिणयाइ नही

कुर्विणः अथ तत्र देवलीकेषु कथं यावत्तिष्ठन्ति बहूनि पूर्ववर्षगतानि यावत् तिष्ठन्ति बहूनि इति शब्देन असख्येयानि वर्षगतानि यावद्देव सुगानि भुञ्जन्ति पूर्ववर्ष गतायुषा मेव चरणवीग्यत्वे विशेषतो देगनौ चित्यज्ञापनार्थं मित्य सुपन्यासः बहुभिः पूर्वजघन्येन एक पत्न्योपमं भवति बहुभिर्वर्षे शतैः पूर्वं बहुभिः पूर्वशतैः सागरोपमं भवति तावत्तिष्ठन्ति देवल मनु भवन्ति १५ तस्य ठिवा जहाठाण जक्खा आउकाये चुआ उवेन्ति माणुसञ्चोणिं सेदसङ्गे भिजायए १६ तत्र देवलीकेषु यथास्थानं स्थित्वा यथादिवा आयुः जयेयुताः सन्ती मानुष योनिं उत्पद्यन्ते प्राप्नुवन्ति तत्र दसांगाः अभि जायन्ते अत्र प्राकृतत्वात् एकवचनं दशभिरगैः सहवर्त्तन्ते इति सदसांगाः अथवा स इतिते इत्यर्थे दशं अङ्गानि येषान्ते दशाङ्गा इति पृथक् पदं एक वचनेन कश्चिन्नवाङ्गादिरपीति ज्ञापनार्थङ्गानि दशाङ्गानि १५ येत वत्य, हिरण्य पसवो दासपीरुसं चत्तारि कामखुन्धाणि तस्यसे उववज्जई १७ ते

कामाणां काम रूव विउव्विणा । उट्टं कप्येसु चिठ्ठंति पुव्वा वाससया वह्ण ॥१५॥ तत्यठ्ठिञ्चा जहाठाणो जक्खा आउ क्खए चुया । उवेति माणुसं जोगिंसिदसं गेभि जायद् ॥१६॥ खेतं वत्यु हिरणांच पसवो दास पीरुसं । चत्तारि काम

देवस्त्रीसर्गनादीनां पुराकृतदेवता सम्बन्धिया भोगपाप्त्या छे पाछिले पुण्ये आणोढीया छे स्वेच्छारूपकारिणः आपणी इच्छा करी नवार रूप करी सुख भोगवे उई कल्पी परिवर्तियु ग्रैवेयक विमानियु उ'षादेवलीक उपरि नवग्रैवेयक उपरि छे पूर्वाणि वर्षगतानि च बहुनि वर्षनां सेकडा घणावर्ष आउखू भोगवे १५ तत्र स्थिता यथास्थानं तेहस्थानकने विपे रह्तीने देवाः आयुचये छुत्वा देवता आपणा आउगा भोगवी पूरा करी चच्या देवलीक थकी प्राप्नु वन्ती मानुथभवा योनि तिहां थकी चवीने मनुथनी योनि पामे मनुथ लोइ सप्रवयेपं पुन्यकर्म च दयाणियु जायते गेय पुण्य रत्ता छे वाकी थाने छे ते

उत्तराध्ययने चतुरध्याधिकारं संपूर्णम् भावितात्मा अणुगारवूँटरायजी तच्छिष्यभगवान विजय साधुना संशोधितं ।

बोद्धिवुच्छिकाया १८ चउरङ्गं दुल्लसं नच्चा संजमं पडिवज्जिया तवसा धुयकमं से सिद्धि हवइ सासएत्तिविमि २० युग्मं तव स मनुयः अप्रतिरूपः सर्वोत्
 छारूपधारी सन् यथायुपं मनुथायुपं यावत् मसुथस्य भोगान् शुक्ता पुनर्यथावसरे केवलां निकल्लङ्गां बोधिं सम्यक्तं बुहा प्राप्य पुनचतुरङ्गीं दुल्लभां ज्ञात्वा
 संयमं प्रतिपद्य शाश्वतः सिद्धी भवति कीदृगः स पुरुषः पूर्वं विशुइ सइमं पूर्वं पूर्वजग्मनि विशुतो निदानरहितः सइमी यस्य स विशुइ सइमं पुनः
 कीदृगः सः तपसा धुतकर्म्मिणः तपसा दूरीकृतकर्म्मिणः इति सुधर्मा जंबू स्वामिनं प्रत्याह हे जंबू अहं इति ब्रविमीति २० इति श्रीमदुत्तराध्ययन
 सूत्रार्थदीपिकायां उपाध्याय श्रीलक्ष्मीकीर्त्तिगणि शिष्य लक्ष्मीवक्त्रभगणि विरचितायां तृतीयाध्ययनस्यार्थः समाप्तः ॥३॥ अथ तृतीयाध्ययने चतुरंगी

दुल्लहं नच्चा संजमं पडिवज्जिया । तवसा धुय कम्मं सेसिद्धि हवइ सासएत्तिविमि ॥२०॥ चाउरंगिज्ज सम्भत्तं ॥३॥
 असंखयं जीविय मा पमायए जरोवणीयसस हु नत्थि ताणं । एवं वियाणाहि जणे पमत्ते कम्मवि हिंसा अजया

पामि २८ शुक्ता मानुथकान् भोगान् मनुथसस्यन्धिया भोग भोगवीने उपमारङ्गितान् यथायुः जाव जीवं उपमाइ' रहित एहवा मनुथना सुख जावजीव
 भोगवीने पूर्वजग्मनि निर्मले प्रगस्य धर्म्मपाळला भवांतरने विपे जे चारित्तपान्यां हता ते चारीतवलीअङ्गीकार करे सम्यक्कलं बुद्ध्या प्राप्य केवली भायो
 धर्म्मसम्यक्त सहित लेइ प्रति बूझे १८ चतुरङ्ग दुल्लभ ज्ञात्वा चार अंगधर्म्मनां दीहित्तां जाणीने चारित्रं प्रतिपद्यन्ते चारित्त पडिवज्जे दिख्यालिइ' तपसा
 स्फोटित कर्मभागः वारे भेदि तप करीने कर्मरजने धूणे दूरि करे सिद्धि होइ सासुतो इति समाप्ती ब्रवीमि २० इति श्रीचतुरंगी

दुर्नभोगा चतुर्थाध्ययने तां प्राप्य प्रमादस्याज्य इत्युच्यते । इति तृतीयचतुर्थाध्ययनयो सम्बन्धः । अस खय जीवियमापमायए जरी विषीयस्रडुनत्यि ताण एय विद्याणाहि जणे प्पमत्ते क्वविहिंसा अजयागद्धिति १ हे भव्या जीवित आयु असकृत वर्त्तते यत्नयतैरपि असतो वक्ष्यितु वृटितस्य वा कर्णवसन्धानं कच्चु अशक्यत्वात् जीवित हि केनापि प्रकारेण सन्धातु न शक्यते इत्यर्थं तत मा प्रमादी मा प्रमाद कथा इदिति निययेन जरया उप नीती जरीपनीत तस्य हृदलेन सरणसमीप प्रापितस्य पुरुषस्य त्राण शरण नास्ति हे भव्य पुनरेव विशेषेण जानीहि एवमिति किंविहिंसा विहसन गीला अति शयेन पापा क शरण गृह्णीयन्ति तु इति चित्तके कोदृशा विहिंसा अजिता अजितेन्द्रिया पुन कीदृशा प्रमत्ता प्रमादिन इन्द्रियवय वर्त्तना प्रमादिना पापाना जरामरणाद्यपद्रवे कथित् शरण्यो नास्ति जणे पमत्ते इति प्रथमा बहुवचनस्थाने प्राकृतत्वात्सम्यक् कवचन १ जे पावकर्मोहि

गच्छति ॥१॥ जे पाव कर्मो हिधण मणूसा समाययती अमय गहाय पहायते पास पयट्टिए नरे वैराणुवद्धा नरय

अध्ययन टब्बाय गयबधे सपूर्णम् ३ असकृत जीवित माप्रमादी प्रमाद मा कार्पी ए आउखु असकृत के बूटो यको सधो न जाइ ते भणी जीवप्रमाद न करे जरीपनीतस्य त्राण शरण नास्ति जराजीवने आब्या पके वडा हुआ उठी वैसे सके नहीं तियारे सरण एइने कीइ नथी इत्येव प्रकार जानाहि प्रमादयत लीका इम जानीने अहीलाकी प्रमाद छाडी विहसन गीला असयता किशरण गृह्णन्ति एतले हिंसा करो छो जीव मारी छो इन्द्री आपणा यसि नहो १ जे पाप कर्मभो धन मनुया जेमनुया जेमनुथपापकरीधन उपार्जे के समा ददत्येव कुमति गृह्णीला सम्यक् प्रकारे आदरो धनएकठु करो छो ते तुम्हने कीण्ड कुमति लागी ते कुबधे करी त्यत्ता ते नरा पापयुक्ता ते मनुय सर्वधन छाडीने ते मनुय किम्या के पास करी वीध्या के पास किम्या कीधन वेटावेटी धरं प्रसुए पासे करीज कद्या के पाप कथानुबद्धा व्याप्ता नरकेपु याति ते मनुय घणाश्री पाप करीने घणा जीयसु वयर उपार्जी

धणं मणूसा समायन्ती अमद्रं गहाय पहाय ते पासपयष्टि ए नरे वैराणवद्वा नरयं उर्विति २ जे इति मनुयाः पापकर्मभिधनं अर्जयन्ति ते मनुयाः
 वैराणवद्वाः पूर्वीपार्जितद्वेषबंधन वद्वाः नरकं व्रजन्ति किं कृत्वा धनं उपाजयति अमृतिं गृहीत्वा न मतिः अमतिस्तां अमति कुमतिं अग्नीकृत्य अथवा
 अमृतं आनन्दं आनन्दहेतु गृहीत्वा ऐहिकसुखहेतुकं धनं विचार्य किं कृत्वा नरकं व्रजन्ति पापकर्मभिरुपार्जितं धनं प्रहाय त्यक्त्वा कीदृग्यास्ते मनुयाः
 पायप्रवर्त्तिताः पाशेषु पुत्रकलत्र धनप्रसुखबन्धनेषु प्रवर्त्तिताः पायप्रवर्त्तिताः धनं हि नरके व्रजती जीवस्य सार्धे नायाति एकाकी एवमहारम्भ महा
 परियहवशात् नरकं यान्तोत्यर्थः जरीवणीयस्स हुनयिताणं अत्र कथा उज्जयिन्यां जितयत्तु नृपस्य अदृणमन्त्री वर्त्तते सच प्रतिवर्षं सो पारके गत्वा सिंह
 गिरिराजः सभायां मङ्गान् विजित्य जयपताका लाति अन्यदा राज्ञा एवं चिन्तितं पर देशीय मट्टणमन्त्रीमत्सभायां जित्वा बहुद्रव्यं प्राप्नोति मदीयः
 कोपि मन्त्री न जीयते नैतद्वरं एव हि ममैव महल चितिर्जायते इति मत्वा कश्चिद्वलवन्तं मत्स्तिनरं दृष्ट्वा स्वमत्तं चकार तस्य त्वरितमेव मन्त्रवित्याः
 समायाताः मत्सी मत्त इति नाम कृतं अन्यदा अदृणमत्तः सो पारके समायातस्तिन समं राज्ञा मच्छी मत्तस्य युञ्जं कारित जितो मत्सीमत्तः अदृणः क्षरा
 जितः खनगरे गतः एवं चिन्तयति मत्सीमत्तस्य तारुण्ये न बलवृद्धिः मम तु वार्द्धक्ये न बलहानिः ततोऽन्य स्वपक्षपातिन मत्तं करोमि ततोऽसौ बलवन्तं
 पुरुषं विलोकयन् मृगुकच्छदेशे समागतः तत्र हरिणीयामे एकः कर्पकः एकेन करेण हलं वाहयन् द्वितीयेन फलहीयसुत्पाटयन् दृष्टः स भोजनाय स्वस्था
 नके सार्धं नीतः तस्य बहुभोजनं दृष्टं उत्सर्गसमये च सुदृढमत्तं पुरीयं दृष्ट्वा मत्तवित्या ग्राहिता फलही मत्त इति नाम कृतं अदृणः सो पारके फल ही
 मत्तं गृहीत्वा गतः राज्ञा मत्सीमत्तेन समं फलहीमत्तस्य युञ्जं कारित प्रथमे दिवसे द्वयोः समतैव जाता अदृणैर्न स्वीत्तारके फलहीमत्तः पृष्टः पुत्र तवाङ्ग
 क प्रहारा लग्नास्तेन स्वाङ्गप्रहारस्थानानि दर्शितानि अदृणैर्न औपधिरसेन तानि स्थानानि तथा मर्दितानि अथासौ पुनर्नवीभूतः मत्सीमत्तस्यापि राज्ञा

दृष्टं क्व तवाङ्गे प्रहारा लग्ना स्तथा त दर्शय फलहीमज्ञ पुनर्नवीभूत श्रूयते मत्कीमज्ञोऽभिगानात् स स्वस्थानं न दर्शयति वक्ति च अह पुनर्नवीभूत फलही पितर जयामि द्वितीयदिवसे पुन युद्धावसरे द्वयोरपि साम्यमेव जात तृतीयदिवसे मत्कीमज्ञो जित फलही मज्ञेन अदृष्टेन स्वपराभव स्फारित ततो मत्सिमज्ञे नान्याययुद्धाचरणेन फलहीमज्ञस्य मस्तक छिद्य खिन्नोदृष्टमज्ञो गत उज्जयिनी तत्र विमुक्तयुद्धव्यापार स्वगृहे तिष्ठति पर जराक्रान्त इति न कर्मै चित् कार्याय चम इति स्वजनै पराभूयते अन्यदा स्वजनाऽपमान दृष्ट्वा तदनापुच्छयैव कोश्याम्नी नगरी गत तत्र वर्षमेक यावद्रसायन भचित यान् ततोऽत्यन्त वनवान जात उज्जयिन्यां राजपर्यदि मल्लमहे पुनर्नवागतयोवनेन अदृष्टमज्ञेन समागत्य राज्ञी नीरङ्गण नाम महामज्ञो जित राज्ञा तु मदीयो य मज्ञ प्रागन्तुकेनानेन मज्ञेन जित इति क्त्वा न प्रशंसित लोकोपि राजप्रथसामन्तरंण मौनभाक् जात अदृष्टेन स्वस्वरूपज्ञाप नाय सभापक्षिण प्रत्याह भी भी पक्षिणो हुवन्तु अदृष्टेन नीरङ्गणी जित ततो राज्ञा उपलक्षितो मदीय एवाय अदृष्टमज्ञ इति क्त्वा सत्कृत बहुद्रव्य चाक्रे राज्ञा दत्त स्वजनस्त तथाभूत श्रुत्वा सन्मुखमागत्य मिलित सत्कारादि चकार अदृष्टेन चिन्तित द्रव्यलोभादेते मम साम्प्रत सत्कार कुर्वन्ति पथा त्रिद्रव्यमामपमानयिष्यति जरापरिगतस्य मे न कथित् त्वाणाय भविष्यति यावदह सावधान बलीकृत् तावत्प्रज्यामीति विचार्य गुरो समीपे अदृष्टेन

उर्वेति । २। तैणे जहा सधि मुहे गहीए स कम्मूणा किच्चइ पावकारी । एव पया पेच्च इहच लीए कडाणा कम्मा

नरगने वीपे जाइर चोर यथा चात्रमुखे गृहोत जिम चोर खात्र पाडे माहं पेसता धणोइ भाव्या स्वकर्मना क्तत ते पापकारी आपणें कर्म करी पाप नी करणहार चोइकत्व ते कदर्थ मारीइ इम हे प्रजा हे लोक विलोकयध एव इहलोक परलोक इहलोको देखो तुम्हे इणे चोरने दृष्टान्तो इह लोकने विपे जीव कदर्थो इहे क्तताना कर्मणा मोच नास्ति इणे जीवें जे कर्म कौधीके ते कर्मविणभा गव्या छुटे नही ३ ससार मापत्र प्राप्ता परस्पर

ससार मावन्न परस्म अद्वा साहारणञ्च करेद्र कथ्य कश्चस्मते तस्मडवेयकान्ते न बन्धवा बन्धवय उवित्ति ४ ससार समापन्न ससारी जीव परस्य प्रमादो अथ परार्थं परनिमित्तं पुत्र मित्त कलत्र स्वान्धवाद्यर्थं यत्साधारण उभयार्थं आत्म परनिमित्तं यत्कर्म करोति ते मित्त पुत्र कलत्रादय स्वान्धवान्तस्य पापकर्मकारिण पुरुषस्य तस्य पापकर्म फलवेदकाले विपाककाले बान्धवता दुखवटन भाव न उपयान्ति ४ अत्र आभीरीवञ्चक कथा कापि ग्रामे कोपि वणिक् इदं क्रयविक्रय करोति अन्यदा एका आभीरीतद्धृदे आगता तथा भणित भो रूपकहयस्य मेरुतन्देहि तेनोक्त अर्थयामि अर्पित तथा रूपकहय तेन वणिजा एकस्यैव रूपकस्य रुत यारहयन्तो लयित्वा अर्पित सा जानाति ममरूपकहयस्य रुत दत्त वञ्चिता च सातस्यङ्गताया सचिन्तयति एष रूपको मया सुपालम्भ तताहमेव उपभुञ्जामि तस्य रूपकस्य दृतखण्डादि लाल्वा खण्डहे विसर्जित भार्य्या कथापित अथ दृतपूरा कुर्यात् तथा दृतपूरा कृता तावता तद्गृहे समिचो जामाता समायात तस्यैव तथा दृत पूरा परिविधिता समि चैष तेन भचिता गत समिचो जामाता वणिक् गृहे समायात स्नान कृत्वा भोजनार्थं सुपविष्ट तथा स्वाभाविकमेव भोजन परिविपित यणिग वदति कथं न कृता दृतपूरा तथा उक्त कृता प्ररमागन्तुर्नेन स मित्रेण जामात्रा भचिता स चिन्तयति मया सावराको अभीरी वञ्चिता परार्थं मेवाय माला पापेन संयोजित एव चिन्तयन्नेवासी शरीर चिन्तार्थं वहिर्गत तदानी योषोवर्त्तते स मध्याङ्गवेलाया कृत शरीरचिन्ता एकस्य दृचस्यार्थस्त्वात् विद्यामार्थं सुपविष्ट तेन मार्गेण गच्छन्त साधु दृष्टवान वणिगुवाच भो साधो विद्याम्यता साधुनोक्त शीघ्र मया स्वकार्यं गन्तव्य वणिजा उक्त भगवान कोपि परकार्यं गच्छति साध प्राह यथा त्व स्वजनार्थं क्लिश्यसि अनेन एकेनेव वचने सबुड प्राह भगवन् यूयक् तित्थ साधुना भणित उद्याने स साधुना सम तत्रगत तन्मखादर्म साकर्ण्यं भणति भगवन्नह प्रव्रजिष्यामि नवर खजनमापुञ्चामि गता निजगृहे वान्य

वान् भाथीञ्च भणति अत्रापणे व्यवहारतो मम तुच्छलाभोस्ति देशान्तर यास्थामि सार्थं वाहद्वय मत्वाया तमस्ति एकः सार्थवाहो मूलद्रव्यं अर्पयति इष्टपुरं नयति नञ् लाभं गृह्णाति द्विती मूलद्रव्य मर्पयति सह गमनात् लाभञ्च गृह्णाति तल्केन सहगमनं युज्यते तैरुक्तं प्रथमिन सहत्रज अय स वणिक् स्वजनैः समं वने गत्वा उवाच अय मुनिः परलोक सार्थवाहः स्वकीय मूलद्रव्येण व्यवहारप्रारयति मोक्षपुरञ्च नयतीति दृष्टान्त दर्शन पूर्वकं स्वजनाना पृच्छत् स वणिक् तस्य गुरोः समीपे दीक्षां जग्राहति वित्तेण ताणं न लभे पमत्ते इम मिलीए अदुवा परत्य दीवप्पण्डेव अण क्तमीहि ने आउ अन्दु मद्दुमेव ५ प्रमत्तः प्रमादी मनुष्यं वित्तेन द्रव्येण क्त्वा इमं मिलीए अस्मिन् लोके अथवा परलोकैताणं सक्कतकर्मतो रच्चणं न लभेत् न प्राप्नुयात् वैश्या गृहस्थ पुरोहित पुत्रवत् कस्मिंश्चिन्नगरे कोपि राजा इन्द्र मत्तोत्तवसान्तः पुरो निर्गच्छन् निर्घोषं कारयामास सर्वे पुरुषा नगराद्वहिरायां तुयोत्रस्थास्यति तस्य महादग्धी भविष्यति तत्र राजवक्त्रभः पुरोहित पुलो वैश्यागृहे प्रविष्टो राजपुरुषधीपणां शुत्वापि ततो न निर्गतः राजपुरुषैर्गृहीतोप्यसौ राजवक्त्रभत्वेन दर्पं कुर्वन्नतभ्यः किञ्चिद्ददौ तैसु राजसमीपेनीतः राजा तु आज्ञामञ्जकत्वेनास्य सूलादण्डः कथितः पुरोहितेन तत्पिता सर्वस्व मह ददामोत्यक्तं तथापि राजानाय सुक्तः शूलायामारोपित एवेति दीप प्रणष्टः प्रणष्टदीपः पुरुषो भावीयोत रहितः पुरोहितेन तत्पिता सर्वस्व मह ददामोत्यक्तं तथापि राजानाय सुक्तः शूलायामारोपित एवेति दीप प्रणष्टः प्रणष्टदीपः पुरुषो भावीयोत रहितः

वावंधवयं उवेति । ४। वित्तिगताणां नलभे पमत्ते इमम्मिलीए अदुवापरत्या । दीवप्पण्डेव अणंतमीहेनेयाउयं दडु, म

जीवने लक्ष्मी पणिराखे नही प्रमादी जीवजाणे जिवारे कर्म उदय आवस्ये तिवारे लक्ष्मी देइने राखी स अस्मीन् लोके अथवा परलोके इहलोकने विपे अथवा परलोकने विपे राखी न सके जीवने यथा सम्यक्त रूप प्रदीपे प्रनष्टे अनन्त मोहनीयकर्माधिकारे जिमकीइक पुरुष हाथ मांहिंदी बोले इने रसकुपिका लेवाने अर्थे पेठादीवो गये मार्गं न दीसे ज्ञान दर्शन चारितात्मक सुक्तिमार्गं दृष्टापि अष्टमेव सात् तिम जीव सुक्तमार्गं दीठो केपणि

पुरुष यथानैयायिक सम्यक दर्शनादि तत्र दृष्टाद्दृष्टाद्भव करोति कीदृश प्रणष्टदीप पुरुष अनन्तमीह अनन्तोऽविनासी भाहो दर्शनावरण मीहनी यालको यस्य स अनन्तमीह एतादृश अग्यानी इत्यर्थं अत्र प्राकृतत्वात् पठये प्रथमापि प्रणष्ट दीपस्य प्रणष्ट सम्यक्तस्य अनतमीहस्य उदिता मिथ्यात्वस्य नैयायिक सम्यग्दर्शनं तत्र लब्धाभिव स्यात् प्राप्त सम्यक्त अप्राप्तमिव स्यात् तद्दर्शनफलस्थाभावात् लब्धस्य सम्यक्तस्य हानित अलब्धमेव न केवल प्रमादी पुमान् विज्ञे न ताथ न लभेत कितु प्रमादी चाणकारण नरकादिभयनिवारणहेतु सम्यक ज्ञानादिरजत्रयमपि हन्ति इत्यर्थं अत्र खनिप्रविष्ट धातुवादी पुरुषो यथा प्रणष्टदीपो जात तस्य दृष्टपूर्वोपि मागोऽदृष्टवत् जात अत्र तत्कथा केचिदातुर्वादिन सदीपा संधवा बिल प्रविष्टा तत्रमादाद्दीपे विधायते महातमी मोहिता दूतस्ततो भ्रमन्त प्रचखेन विपधरेण दृष्टा गर्ताया पतिता मृता एव प्राप्त सम्यक्ता अपि जीवा महानीह यथात् पुनर्मिथ्यात्व गच्छन्तीति परमार्थं ५ सुत्ते सयावीपडिबडजीवी न वीससे पडिय आसुपन्ने घोरा महुत्ता अवल सरीर भारडपक्वीवचरपमत्ते ६ प्रतिबुडजीवी अनिद्रो अप्रमादी पुमान् अन्येषु सुत्तेष्वपि अविविकिनरपु निद्रायुक्तेषु सत्स्वपि न विश्वसेत् विश्वास नैव

दृष्टुमेव ।५। सुत्ते सुयावी पडिबुड जीवी नवीससे पडिय आसु पन्ने । घोरा मुहुत्ता अवल सरीर भारड पक्वी

मीहनीय कर्मने वसे दीठो अणदीठो होय जाय ५ सुत्तेष्वपि अविविकी द्रव्यती भावतोऽविधानं सूर्वलोक द्रव्यनिद्राद् भाव निद्राद् सूता छे अने पडिते द्रव्य निद्राभाय निद्रा छीडोने जाय छे पण्डितो न विश्वसेत् सीप्रपन्न तीक्ष्णप्रज्ञाजूक्त पण्डितसाधुविश्वास न करे प्रज्ञावन्त तीक्ष्णबुद्धिनो धर्षी रौद्रा मूहर्त्ता अवल मूह्यदायक शरीर घोरे मूहर्त्तरीद्र मुहर्त्त जाय छे शरीर अवल दुर्बल छे मूह्यदायि सुहृत्तान् ज्ञात्वा अप्रमत्त सन भारण्ड भारण्डपचिवत् अप्रमत्त गरेत् इम जाणोने भारड पक्वीनी परे अप्रमत्त यको वोचरे ६ चरेत् धर्मपदानि परिसकमान सन् पापथकी सकतो चाले सजम यिराधि नही यत्

कुर्यात् कौटुम्भः स आशुप्राज्ञः तत्कालयोगा बुद्धिमान् आशु योष्वं कार्योकार्थेषु प्रह्वत्तिनिह्वत्तिरूपा प्रज्ञा मति र्यस्य आशुप्राज्ञः यती सुहृत्ताः कालविधिषा
 घोराः प्राणापहारित्वात् रौद्राः शरीरं अबलं बलरहितं भवति न्युद्युदयिसुहृत्तां ज्ञात्वा अप्रमत्तः सन् भारण्ड पक्खीवचरः एकोदराः पृथग्ग्रीवा
 अन्योन्यफलभक्षिणः प्रसादात् विनश्यन्ति यथा भारण्डपक्षिणः १ हे साधो तथा तवापि प्रसादात् सयमजीवितस्य भ्रंसी भविष्यति अत्र अगडदत्त
 राजपुत्र कथा उल्लिखित्यां जितशत्रु राज्ञोऽमीघरथो नाम रथिकोऽस्ति तयोः पुत्रोऽगडदत्तो नाम वर्त्तते अन्यदा तस्य
 बालभावेपि पिता मृतः सो अभीक्ष्णं रुदन्ती मातरं दृष्ट्वा पृच्छति मातर्वारं किं रोदिषि सा ग्राहू तव पितुः पदं विभूतिं चण्डोऽमीघ
 भुंक्तं कलास्वकुसलस्ते न तव हस्ते पितुः पदं विभूतिं नायातित्वहमत्यन्तं खिन्ना निरन्तरं रोदिमि वानेन भणितं सकीप्यस्त्रि यो मम कलाः शिञ्ज
 र्थात् माता प्राह अस्ति कोशांब्यां दृढप्रहारी नामा कलाचार्यस्ताव लामवयं कलाकुशलं करिष्यति अगडदत्तो गतः कौशांब्या दृष्टो दृढप्रहारी कलाचार्यः
 कथितं तेन तस्य मातुः खेदकारणं कलाचार्येण पुत्रइवासी स्वपार्श्वे रक्षितः स्लोक कालेनैव कलासु कुशलः कृतः अन्यदा राजकुलेऽपि पितुः तेन सभायां
 दर्शिताः कलाः चमत्कृतः सकली लोकः पुनः पुनः साधुवाद अवदत् राजा तु नास्ति किञ्चिदाचर्यमिति वदन्न किञ्चिदधिकमुवाच उचिताचारपालना
 येदं पुनरुवाच कुमार तुभ्यं किञ्च ददामि कुमार आह राजस्वं साधुकारमपि न दत्ते किमन्येन दानेनेति अस्मिन्नेवावसरे राजा पौरैरेवं विज्रप्तः
 राजन् भवत्युरे अच्युतपूर्वं चौरिण द्रव्यापहरण वारं वारं क्रियमाणमस्ति एवञ्च राजलज्जा न तिष्ठति ततो नगररक्षायलः क्रियतां तदेव राजा तला
 रवः आज्ञप्तः सप्ताही रात्रिमर्थे यथा चौरौ गृह्यते तथा कर्तव्यं तदानीं तत्सोऽगडदत्तः प्राह राजन्नहं मयाहीरात्रिमर्थे चौर तव चरणमूलमुपने
 थ्यामि राज्ञा तद्वचोऽङ्गीकृतं एवं कुर्विति वारं उक्तं ततो हृष्टोऽगडदत्तो राजकुलान्निर्गत्य चिन्तयति दुष्टपुरुषाम्स्तरात्र प्रायः पानीयस्थानि नानाविध

लिङ्गधारिणो भ्रमतीत्यहं तच्छुडये तटाकीपवनेषु यामीति चिन्तयित्वा नगरादहरेक एव एकस्य शीतलकायस्य सहकारपादपस्य तले मलिनाबर
उपविष्टयीरग्रहणोपायं चिन्तयन्ति तस्यैव सहकारस्य कायामायात एक परित्राजक स्थूलजानु र्दोषजह कुमारेण दृष्टश्चिन्तितश्च नूनमेभिर्लक्ष्णैरय
चौरएवेति भणितश्च तेन परित्राजकेन वत्स कुतस्त्वमायात किं निमित्तं भ्रमसि तत कुमारेण भणितं भगवद्वहमुज्जयनीतोऽत्रागतं क्षीणयिभयो
भ्रमामि तेन भणितं पुत्र तवाह विपुलमघं ददामि अगडदत्तेन भणितं तर्ह्ययमानुगृहीतं सन्तोद्दिनिष्ककारणमुपकारिणं स्यु एव तयोरभिलाष
कुर्वतीरेव सूर्योस्तह्यत रात्रौ तेन त्रिदण्डात् शस्तं कर्पितं बभूव कच्छं नगरी याम इति वदन्नेव समुत्थितं स अगडदत्तोपि सयद्धितं स्तमनु
गच्छति चिन्तयति च एष एव स तस्कर इति दावपि प्रविष्टो नगरं तत्राति प्रेक्षणीयमतीवोन्नतं कस्यापीभ्यस्य गृहं दृष्टं तत्रचालं दत्तं परित्राजकस्त
मध्ये प्रविष्टं अगडदत्तो वहिस्य चिन्तयति चौरस्तु मया ज्ञातं परमस्य स्वरूपं सर्वन्तावत्यश्यामीति परित्राजके नानिकं भाणुभ्यता पेक्ष्यएव कर्षिता
अगडदत्तसमीपेता स्यापयित्वा गतीदेयं कुले ततोऽनेके भारवाहिन आनीतास्तेषां शिरसिता स्यापिता संवेपिगता पुरादृष्टि तापस कुमार
प्रत्याह पुत्र अत्र जीणायाने निद्रासुखं मनुभवाम इत्युक्त्वा संवेपिसुप्ता निद्राणाञ्च परित्राजकश्च कपटनिद्रया सुप्तं अगडदत्तस्तु नैतादृशाणां विग्वारा
काथ इत्यवधार्यक्षणे कपटनिद्रया सुप्ता तत उत्याय वृक्षान्तरितं स्थितं तान पुरुषान् निद्रावसगतान् ज्ञात्वा सपरित्राजकं ककपत्रया मारितवान्
अगडदत्तस्त्रस्तुरे च समागत्य तत्रापश्यत् पद्यादलितस्त्रावता अगडदत्तेन तदन्तिके समागत्य खड्गप्रहारेण प्रकामहतं पतितं दृष्टिव्या अगडदत्त
प्रत्याह घत्स गृहक्षणेन मम खड्गं व्रजशमसानं पश्चिमे भागे तत्र भूमिगृहेभिन्नो स्थित्वा शब्दं कुर्यात् तत्र मम भगिनोवसति तस्यां मम खड्गं दर्शये
तत संकेतं कथनात् साते भार्या भविष्यति सर्वं द्रव्यस्वामी त्वं भविष्यसि अहं तु गाढप्रहारान् मृत एवेति मत्स्वरूपं कथये अगडदत्तस्तु

खण्डमादीय तत्रगतः शब्दिता सा आयाता तेन दृष्टा अतीव रूपवती अवदत् कुतस्त्वमावातः सप्राह गृह्णाणम खड्गं तद्गर्गनमात्रैवेवतया सर्वन्तस्य ख भ्राट् स्वरूपं ज्ञातं मनस्यै वशीक निगूहनं कृतं अगडदत्तस्तद्गृह्णाभ्यन्तरं नीतः दत्तमासनं तत्र स उपविष्टः तथा विगिष्टादरेण शय्यारचिता भणितञ्च स्वामिन्नत्र विश्राम्यतां तथोक्त्युक्ते सुप्तस्तत्रागडदत्तः सा गृह्णाद्वहिर्निर्गता तावता अगडदत्ते न चिन्तित अस्यापि विव्यासी नैव कार्यं इति शय्यात उत्थाय अन्यत्र गृह्णकीणे स्थितः सः तथा तु शय्यो परिष्ठात् पूर्वं यन्त्रचालनेनैव सुक्ता गिला पतन्त्या तथा शय्या चूर्णिता साऽत्यन्तं हर्षवती दत्ततालं भणति हती मया भ्राट्घातकस्तीऽगड दत्ते न ल्वरितं सा केगेषु गृह्णीता भणिता हा दामिकिय ते धोस्त्वं मां हनिथ्यन्ति सा तत्पादयोः पतिता तव चरणौ मे शरणमिति वभाण अथ तेन सा मा भय कुर्वन्ति आखासिता स्वकरे गृह्णीता राजकुले नीता कथितश्च समस्ती वृत्तान्तः राज्ञी सोऽगडदत्तः पूजितः प्रयंसितश्च एवं अप्रमत्ता इहैव कन्याणभाजी भवन्ति उत्ती द्रव्यसुप्तेषु प्रतिबुद्धजीवि दृष्टान्तः एतावदुत्तराध्ययन इहहृत्तिगतं अगडदत्ताख्यानं लिखितं अथ कथाग्रन्थलिखितं अगडदत्ताख्यानं लिख्यते शम्भुरे सुन्दरवृषः तस्य सुलसा प्रिया तत्सुतीऽगडदत्तः स च सप्तव्यसनानि सेवते लोकाणां गृह्णेष्वन्यन्यायं करोति लोकेस्तदुपालम्भा राज्ञी दत्ताः राज्ञा स निर्वासितो गतो वाराणस्यां पवनचण्डोपाध्यायगृहे स्थितः द्विसप्तति ७२ कलावान्जातः गृह्णीथानि कलाभ्यास कुर्वन् प्रत्यासन्न गृहगवाक्षस्यया प्रधानत्रेष्ठिसुतया मदनमञ्जय्याम्नाद्रूपमोहितया च तथा प्रचित्त पुष्पस्रवकः सञ्जातप्रीतिस्तन्मय एवजातः अन्यदा तुरगारूढः स नगरमध्ये गच्छन्नस्ति तावता इन्द्रणी लोक कोलाहलः श्रुतः यथा किञ्च लिउञ्च समुदो किवा जलिउहु आसणी घोरो किं पत्तिंरिउसेण तडि दंडो निवडिउ किंवा १ मठेण विपरिचत्तो मारंती सु डिगीयर पत्तो सबडं मुहं चलंत कालुब्ब अकारणे कुडो २ तावता तेन कुमारिण अखं सुक्का सहस्तीगजमदनविद्यया दांतं पचात्तमाफल्हा राजकुलासन्न सायातो राज्ञा दृष्ट आकारितो मानपूर्वं कुमारिण तं गजमालानस्तम्भे

हितमर्थं ददामि ततो दिवसं यावत्तौ तत्रस्थितौ रात्रौ कुमार सहित द्यौरः कस्यचिदिभ्य गृहे गतः तत्र चान्नं दत्तवान् तत्र स्वयं प्रविष्टः कुमारस्तु
 बहिस्थितः परिव्राजकेन द्रव्य भृताः पेटिकास्ततो बहिर्कर्षिताः ताः चालमुखे कुमार समीपे सुक्ता स्वयमन्यत्र क्वचिद्गत्वा दारिद्र्य भग्नाः पुरुषा अनिके
 आनीताः तेषां शिरसिताः पेटिका दत्वा कुमारिण समं स्वय बहिर्गतः सतापसः कुमारं प्रत्येव सुवाच कुमार चणमात्रं वह्ने तिष्ठामः निद्रा सुखमनु
 भवामः परिव्राजकेनेत्युक्ते सर्वेपि पुरुषा स्वत सुप्ताः कपट निद्रया परिव्राजकोपि सुप्तः कुमारीपिनी तादृशाणां विश्वासः कार्य इति कपट निद्रयैव सुप्तः
 तावतासपरि व्राजक उत्थाय तान् सर्वान् कंकपत्त्रा मारयामास यावत् कुमार समीपे समायति तावत् कुमार उत्थायतं खड्गेन जघादये जघान
 किन्ने जघादये सतत्रैव पतितः कुमारं प्रत्येव सुवाच वत्साहं भुजङ्गनामा द्यौरः समेह क्षशनि पाताल गृहमस्ति तत्र वीरपत्नी नाम्नी मम भग्न्यस्ति
 अष्टवटपादपस्य मूले गत्वा तस्याः शब्दं कुरु यथा साभूमि गृहद्वार सुदघाटयति ताञ्चस्व स्वामिनं करोति सङ्केतदानार्थं मत् खड्गं गृहणेत्युक्ते
 कुमारस्तत् खड्गं गृहीत्वा तत्र गतः सतु तत्रैव मृतः कुमारिण साशब्दिता आगता द्वार सुदघाटयामास कुमारिण भ्रातुः खड्गं दर्शयित्वा स्वरूप सुक्तं
 तस्याः श्रुतः खेदी जातः परत्रभुखे खेदं दर्शयामास मध्ये आकारितः कुमारः पत्यङ्गे शायितः उक्तञ्च तव विलेपनाद्यर्थं चन्दनादिक महमानयामीति
 ततोनिर्गता कुमारिण चिन्तितं प्रायः स्त्रीणां विश्वासी न कार्यो यतः शस्त्रे इमे दीघा प्रायो भवन्ति माया अलियं सीमी मूढत्वं साहसं असीयत्तं
 निस्सन्तियातहच्चिय महिलाणसहावया दीसा १ एतस्यास्तु तथाविध चौर भगिन्यां विश्वासो नैव कार्य इति विचिन्त्य कुमारः शय्यां सुक्ताऽन्यत्र
 गृहकीर्णस्थितः सा बहिर्गत्वा यन्त्र प्रयोगिण शयीपरि शिलां सुमीच तथा शय्या चूर्णिता ततः कुमारिण सासद्यः साक्रोशं केशेषु धृता राज्ञः समीपे
 आनीता प्रीक्तः सर्वोपि हृत्तान्तः राज्ञातद्भूमि गृह्यात् समस्तं वित्तमानाय लोकीभ्यो दत्तं कुमारिण साजीवन्ती मीचिता पद्यानृपायहात् कुमारिण नृप

मुता कमल येनानाद्यो परिणीता नृपेण कुमारस्य सहस्र ग्रामादत्ता गत गजादत्ता दय सहयाण्यवात्ता लघ पादा तयो दत्ता तत सुखेन कुमार
 म्ना तित्ठति श्रव्यदा कलाभ्या स समये यया श्रेष्ठिसुतया सह प्रीतिजातास्ति तथा मदनमञ्जया कुमार समीपे द्रुती प्रेषिता तथा उक्त तव गुणानुराग
 तयैयपत्नीभधितु धाञ्छति कुमारैणाप्युक्त यदा प्रह गृहपुरयास्यामि तदाला गृहीत्वा यास्यामीति तस्यास्त्वया वक्तव्य श्रयान्यदा तव पित्राप्रेषितानरा
 कुमाराकरणायसमेता कुमारस्तु तेषा वचन माकर्ण्य पितुर्मिलनाय श्रयमुत्कण्ठित शशुर दृष्ट्वा कमलसेनया सम चलित चलनसमये च मदनमञ्जरी
 याकारितासापिकमारणसम चनिताताभ्यां प्रियाभ्या सहसैन्यवृत्त कुमार पथिचलन् वहन् भिन्नान सन्नुल्लभापततो ददर्शतदा कुमार सेन्ये नतै सम
 युद्ध कृत भान कुमारसेन्य भिक्षुं लुण्ठित इतस्ततो गत भिक्षुपतिन् कुमार रथे समायात उत्पन्न वहिना कुमारेण स्वपत्नी रथाग्रभागे निवेशिता
 तस्या रुपेण मोहइतो भिक्षुपति कुमारैरुषहत पतिते च तस्मिन् संवेपि भिन्नानष्टा कुमारस्तुनैव एकेन रथेन सह गच्छन्नथै महत सार्थव्य
 भिनित सार्थोपि मनायइवमाग चलति कियन्माग गत्वा सार्थिके कुमाराय एव युक्त कुमारइत प्रध्वरमार्गे भय वर्त्तते तत प्रध्वरमार्गं विहाय
 श्रपरेण मार्गेण गम्यते कुमारेणोक्त कि भयन्ते कथयन्ति श्रमिन् प्रध्वरमार्गे महत्वटवो समेष्यति तस्या मध्ये महानिकधीरो दुयोषननामा वर्त्तते
 द्वितीयसु गर्जारव कुर्वन् विपभोगजा वर्त्तते तृतीयो दृष्टि विपसपो वर्त्तते चतुर्थो दारुणो व्याघ्रो वर्त्तते एव चलारि भयानि तत वर्त्तन्ते कुमार प्राह
 एतेषां मध्ये नैकस्यापि भय कुरुत चलत सत्वर मार्गे कुगलेनैव गृहपुरे यास्याम तत सर्वेपि तस्मिन्नेवा ध्वनि चलिता श्रये गच्छतान्तेषा दुयोषधन
 यौरन्निदग्धभागमिलित सोपिपान्योह गृहपुरे समाप्यामीति वदन् सार्थेन साव चलति मार्गेचैक सन्निधेश समायात स्तदात्रिदण्डिना उक्त मम उप
 नधितीय सन्निधेगो वर्त्तते तेनात गत्वा मया दध्यादि श्रानीयते यदि भवता कचि स्यात् सार्थिकैरुक्त श्रानीयता ततस्तेन तदन्तर्गत्वादध्यादि श्रानीत

विषमिच्छितं कृत्वा सर्वेषां पायिताः मृताः सर्वसार्थिकाः अगडदत्तेन भार्याद्वय युतेन न पीतमिति न मृतः स त्रिदण्डोपुनः सन्निविस मध्ये गत्वा त्रि
यत्परिवारयुतो गृहीत शस्त्रः कुमारमाणाय आयातः कुमारेण खड्गं गृह्णीत्वा सम्मुखं गत्वाघोरसंग्राम करणेन सहतः परिवारस्तु नष्टः भूमौ पतता तेन
चौरेण एव सुक्तं अहं दुर्योधनदौरः प्रसिद्धः त्वयाहं हता न जोविश्यामि परं मम बहुद्रव्यं वर्त्तते मम भगिनी जयश्रीनाम्नि अस्मिन् वनमध्ये ऽस्ति तत्त्वया
गृहीतव्यं सा चपलौ कार्या कुमारस्तवगतः सा आहता समायाता दृष्टः कुमरो ज्ञातस्तया भ्रातृहत्तान्तः तया कुमरोपि गुफामध्ये आकारितः
तत्र गच्छ मदनमञ्जर्यां वारितः तां तत्रैवमुक्त्वा कुमरोऽग्रं चलितः कियन्मार्गं यावद्दत्तेन कुमारेण प्रचण्ड शुण्डादण्ड प्रभग्न तरुकोटि निष्ट
गिरितटः सर्वेगं सम्मुख मागच्छन् यम इव रौद्ररूपी गजीदृष्टः ततः कुमारी रथा दुतीर्य गजाभिमुखं प्रचलितः उत्तरीय वस्त्रविष्टिकां कृत्वा
गजाग्रं सुमीच गजस्तत् प्रहारार्थं शुण्डादण्ड मधः क्षिपन् यावद्दीपन्न तस्मात्ता कुमार स्तद्वन्तद्वये पादौ कृत्वा तत् स्वान्धे ऽधिरूढः वज्र
कठिनाभ्यां स्वमुष्टिभ्यां तत् कुम्भस्थल द्वयं जघान कुमारेण प्रकाशमितस्ततो भ्रामयित्वा स गजी वशीकृतः पथात् स गजी गौरिव शान्तीकृतो
सुक्तञ्च तत्रैव पुनः कुमारी रथे निविष्टोऽग्रं चलितः कियन्मार्गं यावद्दच्छति कुमारस्तावत् कुण्डलीकृत लाङ्गलः स्वरवेण गिरिप्रति कन्दान्
विस्तारयन् विद्युच्चञ्चललोचनः सर्वोपमां रसनां स्वमुख कुहरात्रिष्कासयन् सिंहः समायातः तेनापि समं कुमारोयुद्धं कृतवान् कुमारेण कर्कश
प्रहारैर्जर्जरितः सिंहस्तत्रैव पतितः कुमारस्ततोऽग्रं चलितः सर्वोप्युपद्रवोपि मार्गे विद्ययैव निवर्त्तितः कुशलेन कुमारः स्त्रीद्वयसंभक्तः शङ्खपुरे प्रायः
प्रवेश महीत्सवः प्रकामं पितृभ्यां कृत. सर्वेषां पीराणां प्रमानन्दः सम्पन्नः तत्र सुखेन कुमार स्तिष्ठति अन्यदा वसन्ते मदन मञ्जर्या सह कुमार
एकाक्षेवक्रीडा वनेगतः तत्र रात्रौ मदनमञ्जरी सर्पेण दृष्टा मृतेव सञ्जाता कुमारस्तु तन्मीहादग्नी प्रविशन् गगनमार्गेण गच्छता विद्याधरेण

व्रतति सति तेन चौरिण तत्रगर भ्रम्य सुपित अन्यदा तत्र नगरे मूलदेवी राजा राज्ये उपविष्ट सकथ राजा तत्र सहत इति तदाब्धान् मुच्यते उज्जयिन्यां
 नगया सर्वगणिका प्रधाना देवदत्ता नामा गणिकास्ति तस्या गृहेऽचली नामा व्यवहारि पुत्र परदेगायातो भोगान् भुङ्क्ते मार्गितमर्थं च ददाति तस्या
 एव गृहे परदेगायातो राजपुत्रो मूलदेवोऽतिरूप सोभाग्य स्तयैवगुणवडगामानितोऽचल प्रच्छन्नमायाति भोगानपि भुङ्क्ते सातु मूलदेवेन एकमेव प्रेमवती
 बभूव पर अचल स्तनरूप न जानाति एकदा देवदत्ता जनन्या उक्त पुत्रि किमेतेन मूलदेवेन नि खेन अचलमेव भज मूलदेव त्वज देवदत्ता प्राह अथ
 पण्डितोऽतीव सौन्दर्यादि गुणवान् जननी प्राह अस्य मूलदेवस्य नि खत्वेन सर्वेपि गुणागता अचलस्य स्वखत्वेन सर्वेष्वीदायां दिगुणा सति यस्योदाय
 तस्य सर्वगुणाधारत्व चेन्न मन्यसे तदास्य मूलदेवस्य अचलस्यापि च श्रीदार्यपरीचा कुरु ततो देवदत्तया एकादासो मूलदेवस्य पार्श्वे प्रे पिता एकाच अच
 लस्य पार्श्वे हयोरपि दासीहय प्रत्येकमेव मुवाच देवदत्ता इचुयष्टि मार्गयति तदा मूलदेव इचुयष्टि सुगन्धादिना सस्कार कृत्वाप्ययति तदा देवदत्ता
 अस्वा प्रत्याह पश्य मूलदेवस्य विवेकिता तदैव अचलेन इचुयष्टिभृत शकट प्रे पित अथा अका मूलदेवस्य हेपिणी अचलस्य पार्श्वे गत्वा देवदत्ताया मूलदेवा
 मत्त स्वरूपमूचे नचलेनीत्त तथा कुरु यथाह मूलदेव गृह्णामि तयोक्तमवश्य मया तद्भोगावसरो ब्राप्य अचलेन तस्यादीनाराष्टयत दत्त सा गृहे गत्वा
 देवदत्ताया इदमकथयत् अचलीऽथ त्वरितकार्यसमुत्पन्ने क्वचिद्ग्रामे चन्तितीस्ति सोऽथ नायास्यति तथाप्यथ दिनसत्क भाटक प्रे पितमस्ति एवमुक्त्वादीना
 राष्टयत तथा देवदत्ताया दत्त देवदत्तयापि मूलदेवस्तदानीमाकारित सोऽथागतस्तस्या शयनीयेसु स्वाभोगे प्रहृत्त तस्या विलाया तथाऽऽक्या मूलदेव देव
 दत्ता समोगस्वरूप अचलस्य ब्रापित अचलोऽपि सपरिवार स्तत्रायात देवदत्ता त सपरिवारमायात दृष्ट्वा मूलदेव शयनीयाधचिच्छेप इतस्ततो वस्त्राणि
 विस्तारयामास अचलम् हारे स्वपरिवार मुक्त्वा तद्वा सगृहान्तर्गत्वा शयनीये उपविष्ट देवदत्ता तु न किञ्चिदुवाच नापि तस्य किञ्चिद्विलेपनाद्युपचार

चकार अचलेन शयनीयाधः प्रविष्टो मूलदेवो ज्ञातः तस्या इदमूचे अथ मयाऽतस्थेनैवाभ्यङ्गनज्ञाने करिष्ये तदा देहदत्तयोक्तं शयनीयवस्त्रविनाशी भविष्यति स आख्यत् तवापूर्वं वस्त्रसहितं अपूर्वं शयनीयं दास्यामीत्युक्त्वा तत्रे वाभ्यङ्गं स्नान चकार तन्मलक्षित्री मूलदेवः शय्याधस्य इतस्तत द्यलत् अचलेन शय्या वस्त्रमपसार्य केशेषु गृहीत्वानिक्कासितः उक्तमुच्चखरेणयाहिल जीवन्नेव मया मुक्तः अपराधसु तवेदृशीस्त्रि यत्सांप्रतमेव त्वं मयाहन्य से परं कृपया त्वं मुच्यते त्वमपि कदाचिन्ममापराधे ईदृशीभूयाः एवमचलेनीक्ती लज्जितो मूलदेवः कुमार उज्जयिन्यानिर्गतीविन्ना तटमार्गं प्रस्थपितः तदा तस्य एकः पुरुषो मिलितः मूलदेवेन पृष्टं क्व त्वं यास्यसि तेनोक्तं वेत्ना तटयास्यामि मूलदेवेनोक्तं अहमपि तत्रैव प्रस्थितोस्मि आवां सहैव व्रजामः तेनोक्तं एवं भवत्विति द्वावपि सहैव प्रस्थितौ तस्य पुरुषस्य शम्बलम्बर्त्तते मूलदेवस्य किमपि शम्बलं नास्ति अन्तरा अटवी समायाता द्वावप्यटव्यां प्रविष्टौ मूलदेवश्चिन्तयति एष मे सम्बलविभागं करिष्यते स च भोजनसमये स्वयं भुक्ते न किञ्चिद्ददाति मूलदेवसु चिन्तितं अद्यानेन न किञ्चिद्दत्तं परं कल्पेदास्यति इत्याशयैवाग्रतो गच्छति एवं दिनतयं यावन्मूलदेवेन न किञ्चिद्भुक्तं चतुर्थदिने मूलदेवेन स पुरुषः पृष्ठः अत्र कचिप्यत्यासन्नी ग्रामोस्तिन वा तेनोक्तं त्त स्तिर्यक् प्रदेशनाति दूरे ग्रामो वर्त्तते परमहं तत्र नायास्यामि अग्रे यास्यामीत्युक्त्वा स पुरुषोऽग्रे चलितः मूलदेव एकाक्यैव तत्रगतः भिक्षां भ्रमता च मूलदेवेन राधा कुल्माषालब्धाः तान् वस्त्राञ्चले गृहीत्वा मूलदेवो ग्रामाद्बहिर्याति तावतामासीपवासं पारणके यतिरेकीभिचार्यं ग्रामान्तः प्रविश्यन् मूलदेवेन दृष्ट. भक्त्युत्सासेनते कुल्माषा मूलदेवेन तस्मै साधवे दत्ताः साधुरपि द्रव्य चैतकालभावशुद्धां स्नान् गृहीतवान् मूलदेवेन परमया भक्त्या भणितं धन्त्राणं खुनराणं कुम्भासाहुन्ति साहुपारण्येण अथ तत् प्रदेशाधिष्ठात्रा देव्या मूलदेवस्योक्तं वत्सए तस्या गाथाया द्वितीवाडे यन्मार्गयसि तद्ददामीति मूलदेवेन गाथा द्वितीयाधमिदं कृतं गणि अश्वदेवदत्त दन्ति सहस्रस्र रज्जश्च देवतया भणितं एतत्सवाचिरेण भविष्यति ततो मूलदेवो वेत्नातटे गतः

देव्य कृत्वा सुप्त तत्र कार्पटिकापि वद्वव सुप्तास्त्रन्ति तेषा मध्ये एकेन कार्पटिकेन स्वमुखे प्रविशद्यन्द्नी दृष्ट' तादृश्य एव स्वप्नी मूलदेवेन दृष्ट' कार्पटिकेनतु प्रातरुत्वाय गुरो पुर स्वप्न उक्त गुरुणापित्त मय घृत गुड सहित मण्डक प्रास्य सौति वभापे मूलदेवस्तत उत्याय नगरान्त स्वप्नपाठकगृहे गत्वा घन विनय कृत्वा स्वप्नपाठकाय स्वप्नमाचख्यौ तेनीक्त सप्तमदिवसे तत्र राज्य भविष्यतीति तस्मिन्नवसरे तत्रा पुत्री राजान्त सामन्तैर्भन्विभिष्य पद्याभिषिक्त इक्षि सप्तमदिवसे मूलदेव समीपे समायाता हेपारवच्चक्रे स्वपृष्ठौ मूलदेव मध्यारोपितवान् सामन्तार्योयोग्यमिति कृत्वा राज्ये चभिषिक्त सप्तमदिवसे मूलदेव स्तत्र सहय दन्तिराज्य प्राप्त उज्जयनी नृपिण साई प्रीतिश्चकार अनेक द्रव्य लचप्रागृतानि प्रेषितवान एकदा मूलदेवेन तत्पार्श्वे देवदत्ता मागिता तेन प्रीतिपरवशेन प्रेषिता मूलदेवेन स्वपृष्टराज्ञी कृता तया सम यथेष्ट मूलदेवा भोगान् भुङ्क्ते अन्यदा तत्र समुद्रमुग्री दक्षल समायात माण्डपिकै शुक्लचोया बहो मूलदेवराज्ञ पुर आनीत मूलदेवराजा उपलक्षित' कथितच्च 'त्व मामुपलचयति स आहकस्त्वा नीपलचयति त्व महाराज मूलदेवेनीक्त सीह मूलदेव इत्यक्ता बन्धनाम्नीक्षितो विसर्जितश्च एव मूलदेवस्तत्र नियन्तो राज्य करोति स मूलदेवो नगर नीकेभ्य द्यौर पराभव ज्ञात्वाऽप्य नगर रचक कृतवान् सीपि चौर गृहीतु न शक्त तदा मूलदेव स्वय नीलपट्ट प्राहत्व रात्रौ निर्गत इतस्ततो भ्रमयन् यत्र सतुवक्रो मण्डिकचोरोऽस्ति तत्रैवायातस्तत्पार्श्वे कपटनिद्रया सुप्त अपरेपि दारिद्र्यभग्ना पुरुपास्तत्र सुप्तास्त्रन्ति मण्डिके तावता क्रन्द कृता यावमध्यरात्रि समायाता तदानी तत उत्याय सर्वेषु त्यापित मूलदेवाप्युत्यापित आया तु मया सादं सर्वानपि धनवत करोमीति वदत ते सात्र पुरान्तभ्रान्त्वा एकस्य धनिकस्य गृहे चात्र दत्त्वा बहूनि धनानि निष्वास्य सर्वेषा तेषा शिरसि पीडलकादत्ता मूलदेवस्य शिरसि एक पीट निष्कादत्त सर्वेष्ये कृत्वा स्वय गुरुपाणि पृष्ठौ स्थित श्मशानान्तर्भूमिगृहे संवपि प्रवेष्टिता पीडलकधनानि कूपान्तश्चिषेप सर्वेषामपि तेषा याद

श्रीचं तत्रस्थया चौर भगिन्यादत्तं स्वयं पादचालनञ्चक्रे मूलदेव पादचालनावसरे तत्पादतलेपद्मं दृष्ट्वा कुमार्यादिना चिन्तितं क्रीष्यं महान् राजति ज्ञात
वतीनायं मया विनास्य इति मत्वा तथा मूलदेवस्य नेत्र सजाकृता सततो मूलदेवो नष्टः पञ्चात्तया चौरस्य स्व भ्रातुरुक्तं एषः पुरुषीनष्टः भ्रातापि गृहीत
खड्गस्तत्पृष्ठौ चलितः मूलदेवोपि प्रत्यासन्नमायातं दृष्ट्वा क्वचित् स्थाने बन्धुर पाथाण शिवलिङ्गं स्वीत्तरीय वस्त्रेणाच्छाद्य स्वयमन्तरितः स्थितः कीपा
न्येन चौरिण तत्रागत्य स एवायं पुरुष इति कृत्वा शिवलिङ्ग मस्तके कपः लोहमय खड्गप्रहारीदत्तः तच्छिवलिङ्ग द्विधाकृतं हतो मया स पुरुषः इति
जानन् स्वस्थाने गत्वा सुप्तः प्रभाते समण्डिक तुन्नकश्चतुः पथान्तः समागत्य तथैवक्रं दान् कुर्वन् स्थितः राज्ञा च प्रभाते स्वपुरुषैः स आकारितः राज
पुरुषेषु तत्रायतेषु तेन चिन्तितं तदानीं मया स पुरुषो न हतः किन्तु दृपदाविव खड्गप्रहारीदत्तः योनष्टः पुरुषः सीवश्य मत्तल्यो राजा ते नैवमे पुरुष
माहातुं प्रेषिताः यामिता वत्तत्र अथेती न नष्टु शक्यते यद्वाव्यं तद्भवत्विति चिन्तयन्नेवासौतैः पुरुषैः गनै गनैर्ब्रजन् राजसभायामानीतः राज्ञायसी
अभ्युत्थानादिना मानितः अर्द्धासने निवेशितः आश्रासितः स्वनेपथ्य समस्तस्य नेपथ्योदत्तः स्वभोज्यसमंभोज्यमपिकारितः अन्यदातस्य उक्तं स्वभगिनीं मैम
देहि तेन सा दत्ता सा परिणीता राज्ञा स्वप्ने मपाली कृता अन्यदा राज्ञा उक्तं द्रव्यं मे विलोक्यन्ते त्वं धना स्वकीयोसि ततो मे द्रव्यं देहि तत् चिन्ता तु
मैमैवास्ति तेनराजमार्गितं द्रव्यं दत्तं स राजपाज्जं सुखेन तिष्ठति अन्यदा पुनरपि राज्ञाद्रव्यं मार्गितं तेन दत्तं राज्ञा तस्य पुनर्महान् सत्कारः कृतः पुनरपि
राज्ञाद्रव्यं मार्गितं तेनापि दत्त एवमन्तरान्तरा राज्ञा सत्कारपूर्वतस्य द्रव्यं गृहीत भगिनी पृष्टा अथास्यस्य किञ्चिद्धनं सा प्राह अय रिक्तीकृतस्त्वया नातः
परमस्य किञ्चिद्धनमस्तीति युत्वा राज्ञासौ मण्डिकधीरः शूलायामारोपितः अत्रायमुपनयो यथाय सकार्यकार्यपि मण्डिकधीरो मूलदेवेन यावन्नाभं तावत्
रचितः तथा धर्मार्थिनापि सयमलाभहेतुकं जीवितं रक्षणीयं यावत्कालं संयमलाभः तावत्कालं जीवितमौषधादिभिः कृत्वा रक्षणीयं नान्यथेति कृदं

निरोद्धेण उवेद मोक्ष आसे जहा सिक्तियवन्धारी पुब्बाद् वासाद् चरेपमत्तो तन्हासुणी खिप्प सुवेद सुख्ख ८ सापुच्छे दो निरोधेन मोक्ष उवेति गुर्वादिम्य पिनैव प्रवर्त्तनं छन्दस्तस्य निरोधी निवारण तेन गुवात्रया प्रवर्त्तनेन निर्भयस्थान प्राप्नोति को यथा यिञ्चित वर्मधारी अग्धी यथा यथा ग्रब्ध इवाये यिञ्चा जाता अस्थेति यिञ्चित वर्मसवाह धरतीति वर्मधारी सन्नाह धारक एतादृश सुयिञ्चित कवचधारी चाञ्चोऽब्धवारयिञ्चायां स्थित ऋद्धी निरोधेन स्वेच्छागमननियेधेन मोक्षं प्राप्नोति निर्भय स्थान प्राप्नोति शत्रुभिर्हन्तु न शक्वते हे साधी पूर्वाणि पूर्वप्रमितानि वर्षाणि यावत् अप्र मत्त सन् चर साधुमार्गे विहर तस्मात् अप्रमत्तविहारान्मुनि चिप्र मोक्ष उपैति ८ अत्र कुलपुत्रयिञ्चिताऽब्धयोदाहरण एकेन राज्ञा हयो कुल पुत्रयो यिञ्चणाय अग्धी दत्ती एकेन कुलपुत्रेण प्रथमोधावन बलगादि कला यिञ्चितो द्वितीयसु द्वितीयकुलपुत्रेण न यिञ्चित सप्रामावसरं प्रथमोऽब्धी अथ क पीतइव सप्रामसागरमवगाह्य पार गत सुखी बभूव द्वितीयसु सप्राममध्ये एव मृत अत्रायपुपनयो यथासावन्न कुलपुत्रेण यिञ्चित तथा धर्मार्थं पि स्वात त्रविहरती गुरुयिञ्चित यिवमाप्नोति स पुज्वमेव न लभेन्न पच्छा एसीवमा सासयवाइयाण विसीयइ सिटिले आउयमि कालेवणीए सरोरस्स भेए ८ य पुरुप पूव एव अप्रमत्तत्वं न लभेत स पुरुप पथाटपि पूर्वमिव अप्रमत्तत्वं न लभेत एषा शाब्धतवादिन निरुपक्रमायथां उपमा

गाय मलावधसी ॥७॥ छद् निरोद्धेण उवेद मोक्ष आसेजहा सिक्खियवन्म धारी । पुब्बाद् वासाद् चरेपमत्तो

आपणी छन्दो र्धे आपणी चतुराद् कांइ न करे जे वीतरागे कर्हो छे तिम गुरुनी आत्ता लइन कर ता माच जाय अग्धी यथा यिञ्चित वाणधारी जिम वीडा यिञ्चित भली पाखर पेहेरावी छे असवार नाम न केडे चाले ती वेरी जीती आवे तिम साधु पणी इच्छा रु धती मोक्ष जाय पूर्वाणि वर्षाणि चरेत् आनृत साधू पूर्ववर्षं लगी अप्रमत्त थकी विचरे तस्मात् साधु गोप्त्र उपैति मोक्ष एहवी करणी करे ती साधू उतावली मोक्ष जाय ८ स पूर्वमेव

प्रकर्षेण हात्वा इति प्रहाय त्वङ्गा पुन किं कृत्वा लोक प्राणि समूह समया शत्रुमित्रोपरिसाम्यभावेन समित्य सम्यग ज्ञात्वा १० अत्र ब्राह्मणोक्त्या एको ब्राह्मण परदेशे गत्वा सर्वशास्त्रपारंगो भूत्वा स्वदेशे समायात तस्य प्रकारमपाण्डित्य दृष्ट्वा एकेन ब्राह्मणेन कन्या दत्त्वा तेन परिणीता सच लोके भूय दक्षिणा लभते धनवान् जात तस्या भार्यायास्ते न बहूनि आभरणानि दत्तानि सापि तानि स्वाङ्गे परिहितार्थेय रक्षति नचाङ्गाकदाचिदप्युत्तार यति तेनैकदा तस्या कथित एष सुसुप्रामोस्ति नित्यमाभरणपरिधानमयुक्त कदाचियद्यत्र चौरा समायान्ति तदा तवाङ्गकदर्थना भवति सा प्राह यदा चौरा समायास्यन्ति तदा ललितमङ्गादभरणान्यहमुत्तारयिष्यामि अयदा तस्या गृहे एव चौरा समायाता सा तदानीं निबडमङ्गलम्ना याभरणानि स्वाङ्गादुत्तारयितमममथा तथैव स्थिता तस्यासाभरणा पाणायवयवाच्छिखा तैर्गृहीता साच महती कदर्थना प्राप्ता सृता एवमथेपि प्राकृतकर्मविधाक कालेन विवेकमेतु गच्छति समिच्च लोग समयामहेसो अप्याण रक्खी चरमप्यमत्तो अत्र प्रमाद परिहारा परिहारयो वैशिष्ट्यमहिलद्वयो रुदाहरण एका वणिग्महिला प्रीयित पतिका निजयसु श्रुयथा परागृहव्यापारसु प्रमत्ता दासादीना यथाहं भोजनार्थपि अददाना तैर्मुक्ता ततो गृहगतेन भर्ता स्वगृहे भृत्य विभवदानि दृष्ट्वा सास्त्रो निष्कामिता ततो वणिजा बहुद्रव्येण अया परिणीता सा च न स्वदेशश्रुया करोति यथाह भृत्यान् भोजयन्ती कार्यसु नियुञ्जयन्ती च भर्ता गृहस्वामिनी कृता इहेव जन्मनि प्रथम स्त्रीवत्प्रमादादोषान् प्राप्नोति अप्रमादात् द्वितीय स्त्रीवदगुणान वाप्नोति महेसो अप्याण रक्खी चरमप्यमत्तो ॥१०॥ सुहु २ मोह गुणो जय त अणो गृह्णा समाण चर त फासा फुसति असम

विचरे जीव रचान्करतु १० सुहुमुहु वारवार शब्दादीन् जयत साधु किञ्चवा के वार २ मोहनो जीते के समयमार्गं गच्छन्तु अनेकरूपस्वर्गो स्थगन्ति अस मन्त्रस अनुकूल प्रतिकूल यथा स्यात्तथा नाना प्रकारे साधने विचरतानि स्वर्गो अनुकूल यथास्यात् नानाप्रकारना स्वर्गं आयोसाधुने फरसे के भूडा भला

उत्तराथ्यने असंस्तृताधिकारम् सम्पूर्णम् भावितात्मा अणगार श्रीबूटे रायजी तच्छिष्य भगवान विजय साधुना सशोधितम्

विनयेत् गवस्फेद्येत् सायां न वेवेत लीभ प्रसङ्गात् परित्यजेत् जेसङ्गया तुच्छ परप्यवाङ्गे तेषिञ्ज दोसाण गयापरञ्जा एए अहभृत्ति दुगञ्जमाणो कङ्गे
 गुणे जावसरीरभेउत्तिवेमि १३ ये परमवादिन संकृता तुच्छा यदृच्छामि धानतयानि सारा तेषिञ्जदो साण गया प्रेमहेपावुगता रागहेपावुगता
 सन्ति पुनस्तेपरञ्जा परवगा रागहेपयस्ता सन्ति एते अधर्महेतु त्वात् अधर्मा इति असुना प्रकारेण सुगुप्तु मान तत्परिचयनिवारयन् निन्द्याया
 सर्वत्र निषेधात् न निन्दत् गुणान् ज्ञानादीन् काचेत अभिलषेत् कथ यावत् शरीर भेद शरीरस्य भेद पतन स्यादित्यर्थ इति प्रमादाप्रमादयो
 हेयो पादेय सूचक असंस्कृत प्रथम पदोपलक्षित असंस्कृताख्य चतुर्थ मध्ययन सम्पूर्ण ४ इति श्रीमदुत्तराथ्ययन सूत्रार्थ दीपिकायां उपध्याय श्रीलक्ष्मी
 कीर्त्तिगणित्य सत्त्वोवक्ष्य गणिविरचितायां चतुर्थीध्यानस्यार्थ सम्पूर्ण ॥ ४ अथ पूर्वोध्यानने यावच्छरीर भेद इति ब्रूवतामरण कालेऽपि अप्रमाद
 कार्य इत्युक्त सचमरण विभाग ज्ञानत स्यात् अती मरण भेदमाह इति चतुर्थ पञ्चमयो सम्बन्ध अणवसिमहोहसि एगेतित्रे दुरुत्तर तत्पणगे महा
 पत्रे इम पञ्चमुदाहर १ व्याख्या एके महापुरुषपागौतमादय घातिकर्म रहिता अर्णवात् ससार समुद्रात्तीर्णा पार प्राप्ता कीदृयात् अर्णवात् महीषात्

विणएञ्जमाण माय नसेवेञ्जपरिञ्जलोह १२॥ जेसखया तुच्छपरप्यवाङ्गेतेपेञ्ज दोसाणुगया परञ्जा एए अह भृत्ति
 दुग छमाणोकखिगुणेजावसरीरभे उत्तिवेमि १३॥ असखयज्जभयण सम्मत्त । अणवसि महोहसि एगेतित्रे दुरुत्तर

अथयन प्रारभ्यते ४ अर्णवे महो धिस सारसमुद्रे महा जेहनो प्रवाह छे एहवो ससारसमुद्र वीहा मणो छे एक कथित् दुरुत्तर विषमस्थान तीर्थ एक

महान् श्रीषीयस्य समहौषस्तस्मात् अत्र प्राकृतत्वा द्विभक्ति व्यत्ययः हे जंबू तत्र देवमनुष्य सभाया एकस्मिन् काले अत्र भरतक्षेत्रे एकस्य तीर्थं करस्य विद्यमानत्वात् ऐकीमहावीरः इमं प्रश्नं प्रष्टव्यार्थं रूपं प्रश्नयोग्यं वाक्यं उदाजङ्गे उदाहृतवान् कथं भूतः एकः महाप्राज्ञः महती केवलात्मिका प्रजात्रप्तियस्य स महाप्राज्ञः १ सन्तिमेय दुवेठाणा अक्खा या मारणंतिया अकाम मरणञ्चैव स काम मरणन्तहा २ इमे प्रत्यक्षेद्वेस्थाने आख्याते जीवनि वासाश्रयौ आख्यातो पूर्वतीर्थं करैः कथितौ कीदृशेद्वेस्थाने मारणान्तिके मरणमेव अन्ती मरणन्त सूत्र भवं मारणान्तिकं तस्मिन् मरणवस्थायां जाते इत्यर्थः तद्वे स्थाने एक अकाम मरणञ्च पुन रन्धत् तथा सकाम मरणं अकाम मरणं वाल मरणं स काम मरणं पण्डित मरणञ्चैव शब्दोपादपूर्णाथौ मरणं सप्तदशधा आवीचीमरणं १ आवधिमरणं अन्तिम ३ बलय ४ वयावर्त्त ५ अन्तः शल्य ६ तंझव ७ पण्डित ८ बाल ९ मित्र १० कृद्दस्य ११ केवली १२ विहायस १३ गृडपृष्ठ १४ भत्तपरिजा १५ इङ्गिनी १६ पादपीपगमन १७ १ बालाणं अकामं तु मरणं तु असयंभवे पण्डियाणं सकामं तु उक्तीसिणं सयंभवे १२ बालानां मूर्खाणां अकाम अकामेन अनीप्सितत्वेन स्मियते अस्मिन् इति अकाम मरणं असकृत् वारं वारं भवित तु पुनः पण्डिता सकाम सहकामे न ईप्सितेन स्मियतेऽस्मिन् इति सकाम मरणं यस्मिन् आगते सति असन्तस्थ तथा उत्सव भूतत्वेन सकामं इव सकामं

तत्पण्णे महापण्णे इमंपण्ह मुदाहरे ॥१॥संतिमेय दुवेठाणा अक्खाया मारणंतिया अकाम मरणंचैव सकाम मरणं

महापुरुषतीर्थकर साधु ए संसारसमुद्रतया दुस्तरः तत्र एको महाप्राज्ञः तिहां एक महाबुद्धिन्तः इदं प्रश्नं उदाहरित् कथितवान् एक साधु ए प्रश्न कहे ती इंतो १ सन्ति विद्यते मे मम हे स्थानके सन्ति छे माहरे दीयस्थानके आख्याताः मारणांतिकाः कक्खा मरणने अक्सरे एकं अकाममरणं निचये न एत्त स्थानके अकाममरण कहुं द्वितीयं सकाम मरण तथा वीजं स्थानक सकाम मरणनी कहुं २ बालानां मूर्खाणां विवेकरहिता नां प्रकामजे

तस्मै प्रवर्त्तते तं प्रति कश्चिद्वक्ति भील धर्मं कुरु तदा स वक्ति मया परलोकिको न दृष्टः इमाश्चर्यरतिः कामभोग सुखं रतिः चचुर्दृष्टा प्रत्यक्ष दृश्यमाना वर्त्तते ५ इत्या गया इमे कामा कालिया जी अणागया की जाण्ड परे लीए अत्यि वा नत्यि वा पुणो ६ इमे कामाः कामभोगाः हस्तागताः हस्ते आगताः हस्तागता स्वाधीना वर्त्तन्ते इत्यर्थः ये अनगताः आगामि जन्मनि भविष्यन्तीति आगामिनः कामभोग सुखास्ते कालिका कालिभावा कालिकाः अनिधिताः की जानाति परलोकः परभयः अस्ति वा नास्ति वा इतिभावः ६ जणैण सति' नीलामि इइबाले पगभई कामभोगागुराएणं कैसं सम्पड्वज्जई ७ ततः स कामभोग रसगृहः पुमान् बालः इति प्रगल्भते इति धार्थ्यं गृह्णाति इत्युक्ता धृष्टो भवति इतीति कि अहं जनेन साईं भवि

दिष्टे परेलीए चक्खु दिट्ठा इमा रई ॥५॥ इत्या गया इमे कामा कालिया जी अणागया । की जाण्ड परेलीए अत्यिवा नत्यिवा पुणो ॥६॥ जणैणमधिं होक्खामि इइ बाले पगभई । काम भोगागु राएणं कैसंसं पड्वज्जई ॥७॥

भोगने विपे गृह हुवा छे लपटाई रच्चा छे एके स्या भाया गच्छन्ति ते एकांति कूडो वीने तथा क्रूरकर्म करे न से दृष्टः परं लोकः परलोकसे दीठो नधी चचुर्दृष्टाड मारतिः एकाम भोग ए स्तीनां सुख प्रत्यक्ष दीसे छे ५ हस्तागताः इमे कामाः एकाम भोगहस्त प्राप्त छे एकाम भोग हुं भोग हुं एते कालिकाः गब्धाद्याः ये आगताः एकामभोग छीडीने धर्म करी जिम आगे सुगु पामो कोण जाणे आगे कि स्युं छे आगे कुणे दीठुं छे की जानाति पर लोकः कोण जाणे परलोक अस्ति वा नास्ति वा छे किवा नही छे ६ लीजिन साहुं भयियामि लंपट थकी धेठाड करे जिअ एतला लोकनी गति हुस्ये तिम माहरी पणगति हुस्ये इति मूर्खः प्रगल्भ ते अयलवत इम करी मूर्ख धेठाई करी प्रवल्दये छे काम भोगहुं रागे न काम भोगने रागे करी लोयं स

माइहः मायाकारकः कापद्यवान् पिशुनः परनिन्दकः पुनः शठी वेथाद्यन्यथा करणेन धूर्तः मूर्खो वा सुरामासं च भुञ्जानोऽपि मे मम एतत् श्रेयः कानि इति मन्यते अतएव शठ इत्यर्थः ८ कायसा वयसामत्ते वित्ते गिद्धि अइत्यिसु दुहश्चो मलं सञ्चण्ड्रै सिंसुनागुल्बमद्वियं १० पुनः कौट्यसंका येनमत्तः पुनःर्वचसामत्त. पुनःवित्ते द्रव्ये गृह्यः लोभी च पुनः स्त्रीषु गृह्यः कायेनमत्तः यतस्ततः प्रहृत्तिमान् बलवान् अहं रूपवान् अहं इति इति चिन्तयन् वचसा आत्मगुणान् कथयन् सुखरीह इति वा चिन्तयन् उपलक्षणात् मनसा मदाध्यातो धारणादि शक्तिमान् अहं इति चिन्तयन् सदुहश्चोत्ति द्वेधा द्वाभ्यां रागद्वेषाभ्या मलं सञ्चिनुते मलसञ्चयं कुरुते कः कां इव शिशुनागः अलसी द्वीन्द्रिय जीवविशेषः भूनागः यथा सृत्तिकां सञ्चनुते स च स्निग्धतनु तथा बहिः प्रदेशे शरीरे रेणुभि रवगुण्णते अन्तश्च सृत्तिकां एव अत्राति ततश्च सृत्तिकातो बहिर्निःसरव सूर्यकिरणैः शुभ्यन् क्लिश्यति विनश्यति विनश्य च सृत्तिकाया एव हृद्धिं कुरुते तथा सोपिमलं कर्ममलं वर्द्धयति कर्मणा एव उत्पद्यन्ते पुनः कर्ममल हृद्धिं करोतीत्यर्थ १० तत्रोपुट्टो आयङ्गेण गिलाणो परितप्ये पमीओ परलीगस्स कम्मणुपे हि अप्पणी ११ ततोऽटकर्ममल सञ्चयादनन्तरं आतङ्गेन रोगेन सृष्टः सन् ग्लानः ग्लानिं प्राप्तः परितप्यते परिखिद्यते परलीकात् प्रभीतः कथभूतः सः आत्मनः कर्मानुपेची यदा रोगादियस्ती भवति तदा स्वयं जानाति मम कर्मणां विपाकीजातः मया पुरायानि अशुभानि कर्माणि कृतानि तस्मादहं परलीकेपि दुःखी भविष्यामि इति खल्लतकर्मापेची खल्लतकर्म विचारक

पिसुणे सटे । भुंज माणे सुरं मंसं सेय मेयंति मन्नइ ॥८॥ कायसा वयसा मत्ते वित्ते गिद्धि इत्यिसु । दुहश्चो मलं

हिसन् मूर्खः सृषावादौ हिंसा करे बाल सृषावाद बोले माइहत्ति मायायुक्तः परदोष भाषको मायाइ करी सहित चाडी खावे निन्दा करे भुंजानः सन् मद्यमांसं मद्यमांस खातो थको श्रेय प्रसस्य इति मन्यते श्रेय रुडी करी माने ८ कायेन वचसा मद्वान् कायाइ करी वचने करीमत्त मातो द्रव्ये

असीलानी गति विद्यतेयवयस्यांज्ञती क्रूर कर्मणा बालानां मूर्खीणा आत्महितविध्वंसकानां प्रगाढा वेदनास्ति १२ तथो ववाश्य ठाण जहामि तमणस्सु य
 अहा कम्महिं गच्छन्ती सीपच्छा परितप्पइ १३ तत्र नरक्षिपु श्रीपपातिकं स्थानं वर्तते उपपाते भव श्रीपपातिक तत्र श्रीपपातिके स्थाने अन्तमुहूर्त्तादिन
 स्तरं छेदनभेदन ताडन तर्जनादिकं स्यात् यथा यथा तत्परकादिस्थानं मे मया अशुश्रुतं वर्तते प्रवधारित इति चिन्तयन् पथात् आयुञ्जये यथा कर्मभि
 गच्छन् स परितप्यति १३ जहा सा गडिउजाणं सयं हिच्चा महापह विसम मगमीइनी अकोभगंमि सोयइ १४ यथा शाकटिक. समं समीचीन
 महापथं राजमार्गं हिलाल्यक्षा विपसं मार्गं उतीर्णः सन् यानं शकटं अक्खे धुरि भग्नेसति श्रीचते शकटं चिन्तयति शकटभणस्य शोकं करोति
 यतीधिग् मां अहं जानन् अपि शकटभणं वाष्ट मवाप्तवान् १४ एव धम्मं विउक्क्या अहयां पडिनज्जिया बाले मच्चुसुट पत्ते अक्खे भग्गेवसोयइ १५
 एव असुना प्रकारेण धर्मं व्युत्पाप्य विशेषेण उक्कथ्य अधर्मं प्रतिपद्य वाली मूर्खः म्हुलुपुरा मरणं सुखं प्राप्तः सन् श्रीचते शोकं कुरुते कइव अच्चे
 भग्ने शाकटिक इव १५ तत्रो से मरणं तमि बाले सतप्पइ भया अकाम मरणं मरइ धुत्तेव कलिणा जिण १६ ततः स मूर्खी मरणां ते भयात् संतसते
 संत्तासं प्राप्नोति अकास मरणं म्रियते म्रियमाणः सन् शोकं विदधाति क इव धूर्त्तः द्यूतकारी कनिना द्यूतदोपेन जितः केनचित् ततोधिजेन दुष्टेन
 जितः गृहीतद्रव्यः सन् श्रीचते तथा श्रीचते इत्यर्थः अनेन सह मया किमर्थं क्रीडा कृता अहं हारितः १६ एय पजाममरणं बालाणं तु पवेइय एत्तो

महापहं । विसमं मग्ग सोइणी अक्खे भगंमि सोयइ ॥१४॥ एवं धम्मं विउक्कम्म अहम्मं पडिनज्जिया । बाले मच्चु

समी मोटी मार्गं जाणती यको छांडीने विपसमार्गे गंतु प्रहत्तः विपसमार्गे जावा मान् गाडुं लेईने चक्रमध्ये स्थितं काष्ठे भग्ने शोचा तं गाडीनी धुरी
 भागे यके श्रीचे पिच्छतावे १४ एवं धम्मं व्यतिकम्य उक्कथे एणे दृष्टति श्री तिर्थकरनी भाव्यो धर्मं क्राहीने यधर्मं प्रतिपद्यते धर्मं मार्गं छोडीने अधर्म

दानि भवन्तीत्यर्थः २१ पिंडीलएव दुस्तीले नरगाप्रो न मुच्चई भिक्खाए वा गिहल्ये वा सुव्वए कम्मई दिव २२ पिंडीलगोपि भिच्चुर्यदि नरकात्र सुच्यते तदा दुःशीलः कषायादि युक्तसु नरकात्र सुच्यते एव पिंडं परदत्तग्रासं अवलगते सेवते इति पिंडीलगः अत्र निचयमाह भिजादीभिच्चुरथवा गृहस्थो वा भवेत् तयोर्भिच्चादगृहस्थयोः साधुश्रावकयोर्मध्ये यः सुव्रतः सुष्टुशीभनानि व्रतानि यस्यः ससुव्रतः सदिवं स्वर्गं क्रमति व्रजतीत्यर्थः अत्रद्रमककथा यथा राजगृहे कंचित् द्रमकः उद्यानिकानिर्गतजनेभ्यो भिच्चामलभमानो रुष्टः सर्वेषां चूर्णनाय वैभार गिरिशिलाश्चालयन् शिलां तर्निपतितः शिलातले चूर्णितवयुः सप्तमनरकइतः एवं भिच्चुरपि दुर्धानेन दुःशीलत्वान्नरकमेव गच्छतीति परमार्थः २३ अगारि सामाद्र यद्गाइ सट्टीकाएण फासए पोसहं दुहअपीपक्खं एगराइ न हावए १३ आगारी गृहस्थः सामायकांगानि सामाय कस्य अङ्गानि सामायकांगानि निःसंकित निःकांचित निर्विति किस्सिता मूढ दृष्टि प्रमुखाणि कायेन स्पृशति कीदृशः सन् अड्डी अडावान् सन् पुनर्गृहस्थः उभयोः शुकल कृष्णपक्षयोः पौषधं सेवते चतुर्दशी पूर्णिमा स्यादियु पौषधं आहार पौषधादिकं कुर्यात् एकरात्रिं अपि एकदिनं न हापयेत् न हानिं कुर्यादित्यर्थः रात्रियहणं दिवा व्याकुलतायां रात्रौ अपि पौषध कुर्यात् चेत् एवं नस्यात् तदा चतुर्दशी अष्टमी उद्दिष्टा महाकल्याणक पूर्णिमाचतुर्मासकलयस्य दिवसे पौषधं कुर्यात् सामायिकां गत्वे नैव

इयंगाइ सट्टीकाएण फासए । पोसहं दुहअपी पक्खं एगराइ न हावए । २३। एवं सिक्खा समावास्स गिहवासेवि

तुं थकी देवलोके जाइ २२ गृहस्थः सामायिकांगानि गृहस्थ सामायिकना अंग अडावान् कायेन स्पृशति अडावंत आवक कायाइ करीने फरसे पाले सुइमने अहीरातेः पौषधादिक द्वयो पक्षयोः पोसह चउदस अंधारी उजालीनी करे सुव भावे एक दिनमपि न हा यति न त्यजति एके रात्रि पणि पोसहनी हानि न करे जी दिवसे न थाइ ती रात्रे करे २३ एवं शिच्चा समापन्नः सन् इणि ! प्रकारे शिच्चा अंगीकार

के च गृहस्थाः ये परनिर्हताः सन्ति परिसमन्तात् निर्हताः विधूत कषाय मला. तानि कानि स्थानानि उत्तराणि सर्वेभ्यो देवलीकिभ्यः उपरिस्थानानि पश्चानुत्तरविमानानि पुनः कीदृशानि तानि विमोहानि अज्ञानरहितानि येषु स्थानेषु उत्पन्नां देवानां मिथ्या त्वाभावात् सम्यक्तं भवति इत्यती विमोहानि पुनः कीदृशानि द्युतिमन्तिदीप्तियुक्तानि प्राप्ततत्वात् लिङ्ग व्यत्ययः पुनः कीदृशानि स्थानानि यच्चैर्देवैः समाकीर्णानि सहितानि

गोवा देवेवावि महिद्विष्टु ॥२५॥ उत्तराद् विमोहाद् ज्युर्द्विमंताणु पुव्वसो । सामाद्गणाद् जर्कखिंहिं आवासाद् जसं सिणो ॥२६॥ दीहाडया इड्डिमंता समिद्धा कामरुविणो । अहुणो ववष संवासा भुज्जो अच्चिमालिप्रभा ॥२७॥ तारिण ठाणाणि गच्छंति सिक्खिता संजमं तवं । भिवखाएवा गिहथेवा जेसंति परिनिव्वुडा ॥२८॥ तेषिं सोच्चा सपुज्जा

शेष कर्म रहे ती महद्विक देवता थाइ २५ अनुत्तरेषु विगतमीहे अनुत्तरविमानने विषे मोहनी कर्म नथी जिहां मिथात्वी नही उपजे सम्यक्ती हुवे दीप्तवंतः अनुक्रमेण सर्वदेव लोक थकी ज्यौतीवंत छे अनुक्रम सर्वदेव लोके समाकीर्णाः व्याप्ताः देवैः विमान केह वाक्के देवतांइ भया छे इदृशाः आवा साखल यशस्विनः एहवा आवास छे यशवंत छे देवता २६ दीर्घायुपः ऋद्धिवंताः दीर्घ आउखाना धणी ऋद्धिवतः समृद्धाः अतिदीप्ताः स्वेच्छया रूपका रिणः समृद्ध छे वैक्रिय रूपनवा करी सुखभीगवे छे अधुनीपपन्न शंकासाः तत्काल जपनासरिखी सूर्यसरिखी प्रभा छे जेहनी भूयो बहवः ऊर्कस्य सम प्रभाः बली धणी छे सूर्यनी माला सरिखी प्रभा क्रांति २७ तानि पूर्वीत्तास्थानानिगच्छन्ति एहवी देवली कविपे एहवे स्थानने जाये जपजे अभ्यस्य सप्त दशधा संयमन्त पवार भेदे सीखीने सतर भेदे सयमसीखीने भिचुकी वा गृहस्थी वा तपस्वी अथवा गृहस्थां जे केचित् उपग्रमति जिणे आपणो आत्मा

उत्तराध्ययने मरणाधिकारम् सम्पूर्णं भावितात्मा अणुगार श्रीबूँटे रायजी तच्छिष्य भगवान विजय साधुना संशोधितम्

एषु सो मन्त्री न सन्त सन्ति मरणन्ते सोलवन्ता बहुसुया २८ सोलवन्तः साध्वचारसहिताः बहुश्रुताः साधवी मरणन्ते मरण समीपे समा गते सति न सत्वसन्ति न भयं प्राप्नुवन्ति किं कृत्वा तेषां सत्पूजानां संयतानां भावितभिवृणां उक्त स्वरूप स्थानप्राप्तिं श्रुत्वा पुनः कीदृशानां संयतानां वश्यवतां २८ तुलिया विससमादाय दयाधम्मस खन्ति विपसी इज्जमेहावी तहामूएण अप्पणा ३० मेधावी बुद्धिमान् साधुस्तथा भूतेन विषय कषाय रहितेन आत्मना विप्रसीदेत् विशेषेण प्रसन्नतां भजेत् किं कृत्वा बालपण्डित मरणे तुलिया इति तोलयित्वा परीच पुनर्विशेषं आदाय बालमरणात् पण्डितमरणात् च विशेषं विशिष्टत्वं आदाय गृहीत्वा तथैव दया धर्मस्ययति धर्मस्य क्षत्वा विशेषं आदाय अन्धेभ्यो धर्मैभ्यः क्षमया साधु धर्मोविशिष्ट इति ज्ञात्वा विप्रसीदेत् कषयादिभ्यो विरक्तो भवेदित्यर्थः ३० तत्रो काले अभिषेण सद्धी तालि समन्ति ए विण्ड ज्जालो महारिस भेय देहस्स कखए ३१ ततः कषायो पणमनानन्तरं काले मरण समये अभिप्रितेसति रुचितेसति अद्धी अघावान् अन्तिके गुरणां समीपे

भेयं देहस्स कंखए ॥३१॥ अहकालंमि संपत्ते आघायायसमुत्थयं । सकाम मरणं मरइतिगहमन्नयरं मुणित्तिदेमि ।३२।

समय गुरने पारि यावत् अतत्त्वज्ञा पुरुषाः जे तत्त्वना अजाण पुरुष छे भेदं देहस्य कां चयेत् देहीनी भेदवाछे मरण वाछे ३१ अथ काले सम्प्राप्ते अथ काल आवी प्राप्त हुअी अघातायसमुत्थितं देहत्याग संलेखणां करी हर्षे समाधि मरण करे देही छांडि पाप कर्म स काम मरणं म्रियते सकाम मरणे करी मरे चयाणां भक्तप्रत्याख्यान १ इंगना २ पादपीपगम ३ एतेषां तयाणां मध्ये एकेन मरणेन मध्ये मुनिः म्रियते एत्रिहुं मरण मांहि एके

तादृग्य भयात्स्फेठयेत् मरणभय न कुर्यात् देहस्य भेद काचित् शरीरत्याग अभिलषेत् यादृशो हर्षो दीचावसरे यादृशो हर्षं सलेखनावसरे तादृशो हर्षामरणसमयेपि विधेय नभेतव्य मित्वर्थं ३१ अह कालमि सम्यक्ते आवा याय समुत्साय सकाममरण मरद्दई तिग्मवयर मुष्टित्तिवेत्ति ३२ अथ काले मरणे सम्प्राप्ते सति मुनि समुच्छय अभ्यन्तर शरीर बाह्य शरीरश्च अभ्यन्तर कर्मण सरोर बाह्य शरीरक शरीर आघाय विनाश त्रयाणां सकाममरणानां मध्ये अन्ये तरेण एकेन सकाममरणेन म्रियते तानि त्रीणि सकाममरणानि इमानि भक्त प्रत्याख्यान १ इ गिनी २ पादपोषगमना ३ ग्यानानि यत्र भक्त्यस्य त्रिविधस्य च आहारस्य प्रत्याख्यान भक्त प्रत्याख्यान १ यत्र मण्डल कृत्वा मध्ये प्रविश्य मण्डला बहिर्ननि स्थियते तदिद्विनी मरण २ यत्र छिन्न हृत्तयाखावत् एकेन पार्श्वेन निपत्यते पार्श्वस्य परावर्त्तो न क्रियते तत्पादपोषगमन ३ एतृणां त्रयाणां मध्ये अन्यतरेण मरणेन म्रियते इति सुधर्मास्वामी जम्बू अह भगवद्दत्तसा त्वां त्रवीमि ३२ इति अकाम सकामकरणीय अध्ययन पञ्चम इति श्रीमदुत्तराध्ययन सूत्राय दीपिकाया उपध्याय श्रीलक्ष्मीकोर्त्तिर्गणेशिय लक्ष्मीवल्लभ गणि विरचिताया अकाम सकाममरणीयाग्यस्य पञ्चमस्यार्थं । ५ पूर्वस्मिन् अध्ययने अकाम सकाममरणे उक्ते तत्र सकाममरण निग्रयस्य भवति ततो निग्रयस्य आचार पटे अकामज्जयण समत्त ५ । जावति विज्ञापुरिसा सर्व्वे ते दुवस्वसभवा । लुप्प तिवहुत्सोमूढा ससार मिश्रण तगे ॥१॥

मरणे करो मरे ३२ अकाम मरण अध्ययन कथा टव्यार्थं सपूर्णम ५ ॥ हिवे छट्टी अध्ययन कहे छे ॥ यावत अतस्वशा पुरुषा जितलना अजाण पुरुषहे सव ते दु खसभवाभवति सषलाए दु खना विभागी होस्ते दारिद्रोपयुक्ता भवन्ति अनेक वारान ते मूर्खा ते मूर्ख घणौ वार दरिद्रि हुवे दु ख देखे छेदन भेदन तण्ण ससारे अतर रहिते मूर्ख अग्यानी अत ससार माहिली पाइ फिरे १ आलोच्य पङ्कित तस्मात् हे पङ्कित तेणे कारणे तु देखि विचार पाय

तन्मातृपुत्र एतत् त्वया समयम परिपालयेदित्यर्थं ५ थावर जङ्गम चैव धण धन उवक्तर पञ्चमाणस्स कम्बोहि नाल दुक्खा उमो अणे ६ पुनरेतत्सव यत्तु कर्मभि पथ्यमानस्य जीवस्य दु खान्कीचने अल समय न भवति एतत्कि स्यावर गृह्यादिक च पुनर्जङ्गम पुत्रमित्थ भृत्यादि पुनर्धन गणमादिधान्य व्रीह्यादि पुनरुपस्करं गृह्योपकरण ६ अज्जत्य सव्वञ्चोसव्व दिक्खपाणे पियायए नहणे पाणियोपाणे भववेराउ उवरए ७ साधु सर्वत सर्वप्रकारेण सव्व अज्जाल सुव्वदुक्खादिक दिस्स इति दृष्टा सर्वप्रकारेण सर्वं सुखदु ख्यादिक आत्मनिस्थित ज्ञात्वा सुखदु खयोर्वेदक आत्मान ज्ञात्वा इष्ट सवो गादिहेतुभ्य समुत्पन्न सुख सर्वस्यात्मन प्रिय स्यात् इष्ट वियोगादिहेतुभ्य समुत्पन्न दुक्ख सर्वस्यात्मन अप्रिय ज्ञात्वा इत्यर्थं च पुन प्राणिनी जीवान्

अज्जत्य सव्वञ्चो सव्व दिक्ख पाणे पियायए । नहणे पाणियो पाणे भय वेराउ उवरए । ७। आयाण नरय दिक्ख
नायद्दज्ज तणामवि । दोगु छी अप्पणोपाएदिक्ख भु जेज्ज भोयण । ८। इहमेगेउ मस्सति अपच्चक्खाय पावग । आय

सुख दुखधान्यादि नरक हेतव दृष्टा ए सर्वं दुखसुख आत्मा धक्की उपजे पळे तेह भणी धान्यादिक परियह धक्की नरकनी हेतु देतो देखोनि दिक्ख ० दृष्टा एणे तथा प्राणिन प्रियात्मकान् दृष्टा सर्वं जीवने आपापयो प्राण वासही छे इमजाणीने न हन्यात् प्राणिना प्राणीन इम जाणीने हणे नही मारे नही जीव प्राणीने भयात् वैराच उपरतो निहत्त भयवैर इति साधु निवर्त्यो छे ७ धन धान्यादि नरकहेतु दृष्टा धन धाने करी नरगनी हेतु देखोनि न गृह्यति अद्दुत्त तणमपि तणामात पोण अप्पणोपाणे लेवे महीं आत्मगङ्गापर आत्मन पात्रे काष्ठादिमये आपणा आत्मानो निदा करे काठना आ पणा पात्र मांहि पात्र गृह्णिभिर्दत्त भोजन भुजोत गृह्णथे दीधो सुभ्रतो आहार जीमे ८ इह जगति एके केचित् इति मन्यन्ते ए स सारमाहि कीदृक्

प्रियात्मनी दृष्टा प्रियः आत्मा येषान्ते प्रियात्मनः सर्वे जीवावि इच्छन्तीति जीविष' न मरिञ्जिष' इति दृष्ट्वा हृदिविचार्य प्राणिनो जीवस्य प्राणान् इन्द्रियोच्छ्वास निःश्वासा युर्बलरूपान् न हन्यात् भयात् वैरात् च उपरमेत निवर्त्तत अथवा कथम्भूतः साधुः भयात् वैरात् उपरतो निवर्त्तितः इति साधुविशेषणं कर्त्तव्यं ७ आयाणं नरयन्दिस्स नायइज्जतणा मवि दीगुच्छी अप्पणीपाए दिन्नं भुञ्जिज्जभीयणं ँ साधुसूण' अपिनाय इज्ज इति न आददीत अदत्तं न गृह्णीत किं क्त्वा आदानं नरकं दृष्ट्वा आदीयते इत्यादानं धनधान्यादिकं परि ग्रहं नरकं नरकहेतुत्वात् नरकं ज्ञात्वा इत्यर्थः पुनः साधुः पाएदिस्सं पात्रेदत्तं गृहस्थेन पात्रमध्ये प्रचित्तं भोजनं शुद्धाहारि भुञ्जेज्ज इति भुञ्जीत कथम्भूतः सन् अप्पणी दुगंछी आत्मनी जुगुप्पीसन् आहारसमये आत्मनिन्दकः सन् अहीधिक् मस आत्मानं अयं आत्मादेही वा आहारं विनाधर्मकरणे असमर्थः किं करोमि धर्मनिर्वाहार्थं मस्मै भाटकन्दीयते इति चिन्तयन् आहारं कुर्यात् न तु बलवीर्यं पृष्टायर्थं आहारं विदधीयते इति चिन्तयेत् अत्र अदत्तपरिग्रहा श्रवद्वय निरोधात् अन्ये षा मय्या श्रवाणां निरोधीयुक्त एव ँ इहमेगी उमन्नन्ति अपच्चक्खाय पावगं आयरियं विदिताणं सब्बदुक्खा विमुच्चइं ँ इह अस्मिन् संसारे एके केचित् कापिलिकादयो ज्ञानवादिनः इति मन्यन्ते इतीति किं पापकं हिंसादिकं अप्रत्याख्याय पापं अनालोच्यापि मनुष्यः आचारिकं सक्कीयमतोद्भवानुष्ठान

रियं विदिताणं सब्ब दुक्खावि मुच्चइं ॥६॥ भगंता अकरंताय बंध मोक्ख पइस्सिणो । वाया विरिय मेत्तेणं समासा

अन्यदर्शनो इम मानी के पाप अपरित्यज्य पापने अणपचखीने पापने निज माचारं विदित्वा ज्ञात्वा आपणो आचार जाणीने सर्वं दुःखेभ्यो मुच्यते सर्वदुःख थकी सूकाइं ँ इह जगत् इह विश्वे एके कुतीर्यादयः एवं मन्यन्ते ज्ञानमेव मुक्तिः एव वदंति क्रियां अकुर्वतः क्रिया काइ करी नहीं भणीइजमय्या कीज ए जीव मुक्ति जाइ बन्धमोच्च स्थापकः बन्धमोचनो कहणहार वचनवीर्यं वचनाडम्बरमालेण वचनाडम्बरमाले करीने

समूह विदित्वा ज्ञात्वा सर्वदुःखात् विमुच्यते एतावता तत्त्वज्ञानात् मोक्षावाप्ति इति वदन्ति जैनानां तु ज्ञानक्रियाभ्यां मोक्ष ज्ञानयादिना तु ज्ञानमेवमुक्त्या इति ८ भणन्ता अकरिन्ताय बन्धमोक्षं पदत्रिणी वायावीरिय मित्ते ण समासासन्ति अप्पय १० पुनस्ते एव ज्ञानवादिनो बन्धमोक्ष प्रतिज्ञिन वाचा वीयमात्रेण केवल वाक शूरत्वेन आत्मानं समास्वामयन्ति बन्धय मोक्षय मोक्षय बन्धमोक्षौ तयो प्रतिज्ञा आद्य ज्ञान येयान्ते बन्धमोक्ष प्रतिज्ञिन बन्धमोक्षज्ञा इत्यर्थं मनएव मनुयाणा कारण बन्धमोक्षयो यत्रैवा लिङ्गिता कान्ता तत्रैवा लिङ्गिता सुता इत्यादि प्रतिज्ञा कुर्वाणा ते किं कुर्वन्त आत्मानं आत्मासयन्ति भणन्तीज्ञान अभ्यसन्त च पुन अकुर्वन्त क्रिया अनाचरन्त प्रत्याख्यानतप पौषध व्रतादिका क्रिया निन्दन्त ज्ञानमेव सुखद्वयतयाज्ञी कुर्वन्त इत्यर्थं नचित्ता तापए भासा कश्चो विज्जाणु सासण विसन्ना पावकम्महि बालापिण्डिय माण्णिणी ११ पण्डित मानिन आत्मानं पण्डितं अना प्राणाहृदारधारिणा इति न जानन्ति इति अध्याहार इतीति किञ्चित्वा प्राकृतं सखताया पटभाषा अथवा अया अपिदेश विशेषात् नानारूपा भाषा वा पापेभ्यो दु खेभ्यो न त्वायन्ते नरचन्ते तर्हि विद्याना अनुशासन अनुशिक्षण विद्यानुशासनं कुत स्वीयते न त्वायते इत्यर्थं अथवा विद्याना विचित्रमन्त्रालिकानां रोहिणी प्रसन्निका गोरीगन्धार्यादि मोडयविद्या देव्यधिष्ठिताना अनुशासन अनुशिक्षण आराधनं कुतो नर

संति अप्पग ॥१०॥ न चित्ता तापए भासा कश्चो विज्जाणु सासण । विसन्ना पावकम्महि बाला पण्डिय

स्वस्योभाव कुर्वन्ति आत्मानं इमं कश्चिने आपणी आत्मानं आखासना दिइ १० चित्वा सखतादिमयी भाषा जीव न रचति चित्वा सखतादिमयि भाषा जीवत्वानि नरक पठता राखे न्हो कुतो विद्यानुशासन विद्यापठनं कुतो रचति विद्यानु पठवु जीवे पापं हुती राखे किन्तु न राखे मग्ना पापं कम्मं सु पापं कम्मं विपे खूतो छे मध्ये मग्गं हुआ मूर्खा रागद्वेषकृता पण्डितमानिन एव आत्मानं मन्यते बालं अज्ञानी आपणा अत्मानं पण्डितं करि माने ११

काचायते-कोट्टयास्ते वाला अतत्वज्ञाः पुनः कोट्टयास्ते पापकर्मभिर्विपन्नाः विविध अनिकप्रकारं यथास्यात्तथा सन्ना. पापपद्मे पु कलिता इत्यर्थ १२
 जिकेइ सररीरे सत्ता, वनेरुवेय सब्वसी मणसा कायवकेणं सब्वते दुक्खसम्भवाः १२ ये केचन ज्ञानवादिनः शरीरियत्ताः सन्ति शरीरे सुखान्वियिणः सन्तिः
 तथा पुनर्येवणं शरीरस्य गौरादिके च पुनस्तथा रूपे सुन्दर नयननासादिके च शब्दात् शब्दे रसेगन्धे स्पर्शे च सर्वथा मनसा कायेन वाक्येन सक्ताः संल
 ग्नाः सन्ति ते सर्वे दुक्खसम्भवाः दुक्खस्य सम्भवा दुक्खभाजन भवन्ति मृगपतङ्ग मीन मधुप मातङ्गवत् इहलोकिके यथामरण दुक्खभाजः परलोकिय्यात्ते
 ध्यानेन मृता दुक्खिनास्युरित्यर्थ १२ आवन्नादीह मज्जाणं संसारंमि अणन्तए तस्मा सुच्चटिसम्पत्त अप्पत्तत्तो परिव्वए १२ ते अज्ञानवादिनो विपयिण
 अनन्तके अपारे संसारे दीर्घं अञ्चानं दीर्घं मार्गं आपन्ना प्राप्ता सन्तितस्मात्कारणात् सर्वादिगं भवन्मरणरूपांअष्टादशभावदिश दृष्टासाधुरप्रमत्तः प्रमाद

माणिकी ॥११॥ जे केइ सररीरे सता वण्णे सुवेय सब्वसी । मगसा काय वक्खेणं सब्वते दुक्ख संभवा ॥१२॥
 आवग्णा दीह मज्जाणं संसारंमि अणं तए । तस्मा सब्व दिसं पत्त अप्पत्तो परिव्वए ॥१३॥ वहिया उट्टु मादाय नाव

जे केचित् सररीरे सत्ता मूर्च्छिता इह शरीरे एगरीरने विपे के इसल प्राणी समूर्च्छां हे शरीरे गौरवादिके सुंरो कार वण्णे रूपे सर्वप्रकारे रूपे करी वण्णे
 करी सर्व प्रकारे करी मनसा कायेन वाक्येन दुःखकरा भवन्ति मनयचनकागाइ करी ते जीव ते सर्वे दुःखयुक्ता भवन्ति ते सब्वलाइ दुःख सहित होवे १२
 प्राप्ता दीर्घं अञ्चानं भवन्मरण रूपं संसार समुद्र तेहने मार्गे पथा ते मार्गे किस्सा के दीर्घं लांवा के संसारे अन्तरहिते वली संसारी किस्सा के अतपार
 करीने रहैत के तस्मात् कारणात् सर्वदिगं सर्वगलागत्यं दृष्टा तिणे कारणे सर्वगति आगति देखीने अपमत्तः परिव्वजित् अहो साधु ए स्वरूप जाणी

रहितं सन् विचरेत् अष्टादशभावद्वितीय इमा पुढवि १ जलर जलण ३ वाज ४ मूला ५ ख ध ६ गा ७ पौरवीयाय ८ विट् ति १० चउ ११ पचदिसतिरि १२ नारया १३ देवसषाया १४ समुच्छिम् १५ कम्पा १६ कम्पाय १७ मणुयातहतरदीवा १८ भावदिसादिस इज ससारीनिययमे आहि इति १ ससारे प्रमादिनी जीवा इमासु अष्टादशभावदियासु पुन पुनम् मतीत्यर्थ १३ बहिया ऊट्टमादाय ना वकखे कया इवि पुव्वकम्भखयड्याए इम देह समुद्धरे १४ साधु पूर्वकर्म चयाध इम देह समुद्धरेत् सम्यक शुद्धाहारेण धारयेत् पुन कदापि च परोपहीपसगादिभि पौडितोपि न कस्यापि साहाय्य अवकाशेत् अभिलयेत् अथवा कदापि विषयादिन्धी न स्पृहयेत् किं कृत्वा बहिया ससाराद्विहस्तात् ससाराद्विहभूर्त्त ऊर्ध्वं लोकायस्थान मोच आदाय अभिलय १४ विगिच कमुणा हेउ कालकखी परिव्वए माय पिडस्य पाणस कड लडूण भकए १५ कालकाही अवसरत्त साधु कर्मणा हेतु कर्मणा कारण मिया त्वाविरतिकपाय योगादिक विगिच विविच आत्मन सकायात पृथककाल्य परिव्वजिक्क यममार्गे सच्चरेत् काल खान्नियानुष्ठानस्य अवसर काइरतीत्यैव गील कालकाही पुन स साधु पिण्डस्य आहारस्य तथा पानस्य पानीयस्य सावा परिमाण लब्धा भचयेत् यावत्या मात्रया आत्मसयमनिवाह स्यात्

कखे कयाद्वि पुव्व कम्म खय द्वाए इम देह समुद्धरे ॥१४॥ विगि च कम्मणोहेउ काल कखी परिव्वए । माय

ससारतो अप्रमत्त थको विचरे १३ ससारात् बहिभूतोउड्ड इति मोचमादाय मनसि चिन्तयित्वा ससार थको उचीमोच तेहने मनमाहि राखीने ऋदि विषयादिक न वाचयेत् कदाचित् ऋद्विषययादिकने बाखे नही मन माहि किवारे ए पूर्व कर्म चयाथ पूर्वकर्म घयने अर्थे इम देह समुद्धरेत् पालयेत् पूव कर्म चय करणुने अर्थे देहीने राखे धरे १४ विगच दूरीकाल्य कर्मवधकारण इत्यादि कर्मनी हेतु मिया विगचे दूरि करे, कालकखी सन परिव्वजित् कालवेत्ताए क्रिया करतो थकी विचरे सावा पिण्डस्य अन्नादि पानस्य ज्ञात्वा सावा आहार पाणीनी जाणीनी गृहस्यै स्वार्थे कृत लब्धाभचयेत् गृहस्यै

राय वनपत्रिख बाबादेर का भा ० सं ० व ० ८९ भा ०

तावत्परिमाणं आहारं पानीयं च गृहीत्वा आहारं पानीयं च कुर्यात् इत्यर्थः कथंभूतं प्राहारं कण्डं गृहस्थेन प्रात्मार्यं कृतं प्राकृतत्वात् विभक्तिव्यत्ययः १५
संनिहिं च न कुब्जिञ्जा लेवमायाद् संजए पक्खी पत्तं समादाय निरवेक्खी परिब्बये १६ च पुनः संयतः साधुर्लेपमातयापि सन्निधिं न कुर्यात् लेपस्य
मात्रा लेपमात्रा तथा लेपमात्रया सं सम्यक् प्रकारेण निधेयते स्थाप्यते दुर्गती प्राक्का येन स सन्निधिष्टतगुडादिसस्य स्तं न कुर्यात् यावता पात्रं लिप्य
ते तावन्मात्रं अपि घृतादिकं न सस्येत् भिचुराहारं क्त्वा पत्तं समादाय पात्रं गृहीत्वा निरपेचः सन् निःसृष्टः सन् परित्रजेत् साधु मार्गं प्रवर्त्तते क
द्रव पक्खी इव यथा पक्खी आहारं क्त्वा पत्तं तनूश्चमात्रं गृहीत्वा उड्डीयते तथा साधुरपि कुचिसंवली भवेत् १६ एसणास मिप्प्री लज्जूगामि अनिअ

पिंडस्य पाणस्य कण्डं लङ्गण भक्खए ॥१५॥ संनिहिंच न कुर्व्विञ्जा लेवमायाए संजए पक्खी पत्तं समादाय निर
विक्खी परिब्बए ॥१६॥ एसणा समिअो लज्जूगामि अणियअो चरे अप्पमत्तो पमत्तेहिं पिंडवायं गवेसए ॥१७॥ एवं -

आपणे अर्थेनीपजाव्थी के आहार सूभती स्ये १५ सन्निधिं अस्मादिकं संसस्यं न कुर्यात् विगयलिगारमात्रपिण रात्रे राखिनही लेपमात्रमपि साधु सस्य
न कुर्यात् लेपमात्र थोड़ी पिणसस्य राखे नहीं पचिपत् पचं सस्यं क्त्वा जिम पंत्ती उडे तिवारे पांख एकठी करीने उडे तिम यती धांदि पीये पात्रां
एकठा करीने चाले तथासुनीः निरपेथी सन् विचरेत् तिम साधु निरपेत्ती थकी विचरे १६ एपणासमिति विपयेसावधानः लज्जावान् साधू लज्जावंत के
ग्राम नगरादी अनित्य वासः गाम नगरने विपे अनियत वासी थकी विचरे अप्रमत्तः सन् प्रमत्तः सन् गृहस्थः साधु प्रमाद रहित के गृहस्थ प्रमादी के
परिगृहपास थोपिंडपात्रं भिषां विलीकयेत् भित्ताआहारलिद सूभती १७ एवं पूर्वोक्तं स भगवान् उक्तवान् सर्वोक्तज्ञानीसर्वाधिकदर्शी उत्कृष्टज्ञाननी

उत्तरराश्यायने खुडियज्जमयणाधिकारम् सं० भावितात्मा अणगार श्रीबूटे रायजी तच्छिष्य भगवान विजय साधुना संशोधितं

समयान्तरेणयुगपदुत्पत्तिः सूचिता अनयोः कथञ्चिद्देोऽभेदश्च सूचितः पुनरुक्तदोषेन ज्ञेयः १८ इति द्वागकनिग्रथित्वाध्ययनं सपूर्णं अत्राध्ययने द्वागकस्य साधोनिर्गम्यत्व सुक्तमित्यर्थः इति श्रीमदुत्तराध्ययन सूत्रार्थ दीपिकायां उपाध्याय श्रीलक्ष्मीकीर्तिगणेशिष्य लक्ष्मीबलभगणिविरचितायां द्वागक नियन्यितत्वाध्ययनस्य षष्ठस्यार्थः संपूर्णः । ६। अत्र पूर्वोध्ययने साधोनिर्गम्यत्वं उक्तं तच्चयीरसेषु अष्टधुर्भवति तस्यैवस्यात् रसगृहस्य कष्टमुत्पद्यते तेन रसगृहस्य कष्टीत्यत्ति दृष्टान्तसूचकं उरन्नादि पञ्चदृष्टान्तमयं सप्तमं उरन्नीयाख्यं कथ्यते प्रति षष्ठ सप्तमयोः सम्बन्धः जहाएसं समुद्दिस्स कीदृषीसिज्जाएलयं श्रीयणं जवसन्दिज्जा पीसिज्जा विसयङ्गणे १ व्याख्या यथा कीपि कश्चिन्निर्दयः पुमान् आदेशं आदिश्यते विधिव्यापारेण प्रैर्यते परिजनी यस्मिन् प्रागतेस आदेशस्त प्राघूर्णकं समुद्दिश्य आश्रित्य स्वकीय गृहाङ्गणे एलकं एडकं ऊरणकं पीपयेत् तस्मै एलकाय श्रीदनं सम्यक् धान्यं यव म्मुद्ग माषादिकं दद्यात् ततश्च पीषयेत् पुनः पीपयेदित्युक्तं तत् अत्यादरख्यापनार्थं अपिशब्दः सभायनेसंभायतेएव एवंविधः कोपि गुरुकर्मा इत्यर्थः १ अत्रोदाहरणं यथा एक मूरणकं प्राघूर्णकार्थं प्रीथमाणं लालमानं दृष्ट्वा एको वत्सः खिन्नः क्षीरमपिवन् गवामानापृष्ठः कथं न वत्सः क्षीरं पिवसि स आह

त्तिवमि ॥१८॥ खुडागज्जमयणं समत्तं ६॥ जहाएसं समुद्दिस्स कीदृ पीसिज्जा एलयं । श्रीयणं जव संदिज्जा पीसिज्जावि

यथा आदेशं प्राघूर्णकं उद्दिश्य प्राङ्गुणां ने निमीत्ते उद्दिग्निने कोपि एलक मोढकं पीषयति कीदृ मोढाने पीषे पीषे श्रीदनं भक्तं जवमुद्गादि दद्यात् जव मूग मोठ तेहने दीजे पुष्टिं कुर्यात् स्वकीयांगणे पुष्टि कीजे आपणा घरेने आंगणे १ ततः स उरन्म्रः पुष्टः उपचित मांसः समर्थो

मातरेय करणक सर्वं लोकैर्पील्यते व्रीहीर्घायते पुत्रश्च विविधैरलङ्कारैरलङ्क्रियते अहन्तु मन्दभाग्य शुक्लान्यपि तृणानि न प्राप्नोमि न च निर्मल
पानोयामपि न प्राप्नोति न च मां कोपिला लयति माताप्राह पुत्र अस्मैतानि आतुरचिह्नानि यथा मर्तुकाम आतुरो यद्यन्मार्गयति पथ्यमपथ्यस्ववा
तत्तत्सर्वमथस्थ दीयते अथास्मै मारयिष्यते तदा त्वद्रक्षसि अन्यदा तत्र प्राघूर्णक समायात तदर्थन्त मूरणक मार्यमाण दृष्टमाभीत सबल पुनस्त यपानम
कुर्वन् मात्वानुश्लिष्ट पुत्र किं त्वभीतोसि पूव मयोक्त न स्मरसि किं आतुरचिह्नान्ये तानीति यएव व्रीही घारित प्रकाम लालित सएव मार्यते त्वन्तु
शुक्लान्येव तृणानि चरितवानसीति माभेपीनैव मारिष्यसे इति माता उक्त्वोक्तसुसेनैव स्नान्यपान मकरात् एव यो यघेष्ट विविधास्वाद लम्पटोऽधर्म
माचरति सनरकार्युर्बभ्रातीत्यर्थ इति करणकदृष्टान्त १ तत्रोसे पुत्रे परिवृटे जायमेए महीदरे पीणिए विडले देहे आए सपरिकल्पए २ तत सए
लक कीदृयोजात तत स उरभ्र पुष्ट उपचितमास परिष्ठत युवादी समर्थ सर्वेष्वन्येषु उरभ्येषु मुख्यइव दृश्यमाण पुन कौद्वय जातमेदा पुष्टौ

सय गणे ॥१॥ तत्रो से पुष्टे परिवृटे जायमेए महीदरे । पीणिए विडले देहे । आएस परिकल्पए ॥२॥ जाव नएड
आएसे तावज्जीवद्र से दुही । अह पत्तन्मि आएसे सीस छित्तूण भुजई ॥३॥ जहा खलु से उरभ्ये आएसाए

जात तठा केडे उपचित प्रीढीदर जातमेद मातो हुओ मीदहुद्र पेट मीढो हुओ पुष्टिर्विशाल देह पुष्ट हुओ छे जेहनी देह प्राघूर्ण बांछति हवे घर
नो धणो प्राहु णां ने वाछे छे प्राहुणो आवे तो भलो घाद्र आदेसने वाछेते २ यावन्नायातिप्राघूर्णक जेतले पाहुणो न आवे तावज्जीवृते सदु खवानजिहा
ताइ ते मीढी दुखो घकी जीवे अथवा पुरस दूसे करो जीवे अथ प्राप्ति प्राघूर्णे अथ प्राहुणो आव्यो वाट जीता घका मस्तक छित्वा भूज्यते मस्तक

भूत चतुर्थघातुः पुनः कीदृशी महोदरो विशालकुचिः पुन कीदृशः प्रीणितः यथेक्षित भोजनादिना सन्तुष्टीकृतः एतादृशः सन् स उरभः विपुले विलोकीणे देहेसति आदेशं प्राघूर्णकं परिकांचति प्रतिच्छति इव २ जावनएव आएसे तावजीवइ सेदुही अहपत्तं मि आएसे सीसंच्छित्तूण भुंजई ३ सउर भस्त्रावज्जीवति प्राणान् धारयति कीदृशः स दुक्खी दुक्खं अस्य भावी इति दुक्खीभापिनि भूतीपचारात् यद्यपि वर्त्तमानकाले तस्य सुखमस्ति तथापि दुक्ख प्रागामि कलात् दुःखी उच्यते तावत् इति किं यावत् आणशः प्राघूर्णकी न एति न आगच्छति अथ आदेशे प्राप्तं सति शीर्षं छित्वा स उरभः आदेशेन समं स्वाभिनापि भुज्यते ३ जहासि खलु उरभे आए साए समीहिए एवं बाले अहन्निई हई न रयाउअ' ४ यथा स उरभः आदेशाय

समीहिए । एवं बाले अहं मिठ्ठे इहई नरथा उयं ॥४॥ हिंसे बाले मुसा वाई अद्वागंमि विलोवए । अण दत्त हरति
णे माई कम्भु हरे सटे ॥५॥ इत्थी विसय गिद्धिय महारंभ परिग्गहे । भुंजमाणे सुरं मंसं परिवूटे परं दमे ॥६॥

केदीने खाइ मोढाने ३ यथा स निचये नोरभः जीमते खलु निचय खं उरण प्राघूर्ण कायकल्पित प्राहुणाने अर्थे राखीने विणास्योः एवं मूर्खी धर्म हिनः एम मूर्खवालक अधर्मो वांछते नरकायुषं बांछे नरकनू आउखूं ४ प्राण घातकी मूर्खं स्रपावादी जीवगारे कूठ बीते अध्वनि मार्गे विलोपकी लूटकः वाटपाड़े घर लूटे अन्यै रदत्तं हरति चीर अदत्तादान लिइ चीरी करे वसुकः कस्यार्थं हरिथामी मूर्खः माया करे केहनी धन हरं स दाएहज ध्यान मन मांहि रहे ५ स्त्रीलीलुपः विषयासनः वली वालमूर्खं किय्या के स्त्रीने विषे गृह हुआ के तीव्रारभ परि गृहजुक्तः घणी आरभ घणी परि यह तेणे युक्त के भुंजमानः सुरामांसं मांस खाइं मद्य पीइं समर्थं अन्यदमनशीलः इसी बलवत वीजाने दमे ६ अजस्य पक्कमांस

समीहित कल्पित एव इति तथावाल' कार्योकार्यं विचाररहित अधर्मिष्ठ नरकायु इहते इव नरक गतियोग्य कर्मकरणे नरकाय कल्पित इत्यर्थं ६ हिमे वाले सुसावाइ अद्याण मि विलीवए अत्रदत्त हरे तणे माईकद्रु हरे सटे ५ इत्थी विसयगिहिय महारभ परिंगहे युञ्जमाणे सुर मस पुखिठे परन्दमे ६ अयककर भोईय तुन्दिलेचिय सीणिए आयुय नरएकहु जहाए सवए लए ७ तिसुभिर्गाथाभि पूर्वोक्तमेव दृढयति एता द्यो १२ नारजे इति नरकगतो नरकायु अर्थात् नरकस्य आयुकाचति नरकगति योयकर्मा चरणालनर नरकगति एव वाव्यति १२काय कल्पित क'कश्य एलक पूर्वोक्त उरभ्र आदेश इव यथा केनचित पापेन यथेष्ठित भोजनेन पीपित उरभ्र' आदेश इच्छति कीदृश स द्विस्त्री हिसनयील पुन कीदृश वाली अन्नानी पुन कीदृश अध्वनि विलोपक जिनमार्गलोपक, पुन कीदृश अन्यादत्तहर अन्येपा अदत्त हरतीति अन्यादत्तहर अदत्तादान सेवी इत्यर्थं पुन कीदृश स्तेन्य चौयेण कल्पितवृत्ति पुन कीदृग्मायी कापव्ययुक्त पुन कीदृक् कस्य अर्थं नु इति वितर्के हरियामीति विचारी यस्य स कत्रहर पुन कीदृश शठी वक्राचार ५ पुन कीदृश स्त्री विपयेगृह पुन कीदृश महारभ परिग्रह महान्ती आरभपरिग्रहो यस्य समहारभपरिग्रह महारभो पुनर्महापरिग्रही पुन कीदृश सुरां मय मास चमु जान पुन कीदृश परिहृद उपचित मासत्वेन स्थूल पुन कीदृश परदम पर अन्य जीव दमतीति परदम परपीडाकारक आकार्यं परजीवोपघातक इत्यर्थं ६ पुन कीदृश अथककर भोईय तु दिले चियलोहिण । आउय नरए कखे जहाए सवएलए ॥७॥ आसण सयण जाण वित्त कामिय

भीजी छालागु मस घण पचायोनि करकराटक रती खाइ प्रोढीदर उपचित रत्त पेटमोटी हुनो लोहि पीण उपचित इओ आयुक्क नरके बाह्वति आउ ए नुरकनु वाके यथा आदेश प्राधूर्णक एल वाह्वति जिम प्राहु णा नेमो डीवा के इतिम जाणवी ७ आसन ग्रयन यान प्रवहण विशेष बाजोठ

हृदिका दृष्टान्तः तु पुनः कश्चिद्राजा अपथ्यं आत्मफलं भुक्त्वा राज्यं हारितवान् हारयेत् वा अत्र भोगसुखस्य तुच्छत्वोपरिकारिकाक्या म् दृष्टान्तं इयोदाह
 र्दिका दृष्टान्तः सतद्वासनिकांकटौ त्रधा सार्धेन समग्रह प्रस्थितः मार्गे भोजनार्थं
 एकाकारिकणी भञ्जिताः एकाकारिकणी अर्वाष्टिष्टाश्लि
 र्दिका दृष्टान्तः एतेन कुर्वता महोपक्रमेण कार्यापण सहस्रमर्जितं सतद्वासनिकांकटौ त्रधा सार्धेन समग्रह प्रस्थितः मार्गे भोजनार्थं
 एकाकारिकणी भञ्जिताः एकाकारिकणी अर्वाष्टिष्टाश्लि
 र्दिका दृष्टान्तः एतेन कुर्वता महोपक्रमेण कार्यापण सहस्रमर्जितं सतद्वासनिकांकटौ त्रधा सार्धेन समग्रह प्रस्थितः मार्गे भोजनार्थं
 एकाकारिकणी भञ्जिताः एकाकारिकणी अर्वाष्टिष्टाश्लि

कामाणां अतिशयं सहस्रं गुणिया भुञ्जी आउं कामाय दिव्यिया । १२ । अणुगवासाण्डया जासा पसाष्ट उष्टिई जाणि

कामाणां अतिशयं सहस्रं गुणिया भुञ्जी आउं कामाय दिव्यिया । १२ । अणुगवासाण्डया जासा पसाष्ट उष्टिई जाणि
 कामाणां अतिशयं सहस्रं गुणिया भुञ्जी आउं कामाय दिव्यिया । १२ । अणुगवासाण्डया जासा पसाष्ट उष्टिई जाणि
 कामाणां अतिशयं सहस्रं गुणिया भुञ्जी आउं कामाय दिव्यिया । १२ । अणुगवासाण्डया जासा पसाष्ट उष्टिई जाणि

राजधनपत्रिका राजधानी का आ. सं. व. ४२ नं. भाग

साहार्यन्ते इति परमार्थं ११ एवं माणस्यगा कामा देवकामाण अन्तिए सहस्रगुणिआ भुल्लो आउ कामाय दिव्विया १२ एव अनुनाप्रकारेण का
 किन्याअफल दृष्टान्तेन काकिण्णाम्ब सदया मानुथका कामा देवसुखाना अन्तिके देवसुखाना समीपेत्ते या मनुथका माहि देवकामाना अपे भूयो
 वार२ सहस्र गुणिता दिव्यका' कामाद्य यथा मनुथकामाना अये वार२ सहस्र गुणितास्तथा आयुरपि मनुथायदेवायुपी रन्तर ज्ञेय १२ अणे गवा
 सा नउया आ सा पव वउठिई जाणि जीयति दुग्गे हा जणे वाससयाउए १३ प्रत्रावत क्रिया सहितज्ञानयुक्तस्य वा स्थिति विद्यते सा भवता अस्माक
 च प्रतीतास्ति तय स्थितीयानिअनेकवर्षअयनयुतानिअनेकानि असख्ये यानिवर्षअयनयुतानि येयु तानि अनेकवर्षअयनयुतानि अथात् यानि पत्थीपमसाग
 राणि भवन्ति अत्र प्राकृतत्वात् अनेकवर्ष अयन युता इति पुञ्जिन्न निदेश्य प्राकृतत्वात् अथवा यत्र देवस्थितौ अनेकवर्ष अयन युता यानि इति ये कामा'
 भवन्तितानि सर्वाणि पत्थीप सागराणि तत्रमाणाआयुपि दिव्य स्थितिविषयभूतानि दुग्गेधयो दुग्गेधयो दुग्गेधयो दुग्गेधयो दुग्गेधयो दुग्गेधयो
 मनुथविषयी जीर्यन्ते हार्यन्ते देवयोनिगीयायु कामसुखरहिता क्रियन्ते तुच्छ मनुथसुखलब्धा मूर्खो देवस्थिति सुखहेतना भवन्ति अतएव दुग्गेध
 सदत्यक्त दुग्गेटामेधा येयान्ते दुग्गेध स इति जहा यतित्रिबणिगा मूलद्वित्चूण निगया एगीतत्यलहए लाभ एगी मूलेण आगन्ती १४ एगी मूलन्मि

जीयति दुग्गे हा जणेवाससयाउए ॥१३॥ जहायतिस्त्रिबणिगा मूलधित्तुणनिगया । एगीतत्यलहए लाभ एगीमूलेण

लाख गुणा कोजे एतले नियुतांग हीइ ते आक चौरासो लाख गुणा कोजे एतले नियुताग हीइ ते आक चौरासो लाख गुणा कोजे एतले नियुक्त होइ
 एहथा नियुक्त पत्थीपम सागरोपम देवने आउखो वर्त्ते के १२ अनेक वरस सख्या रहीत अयनयुत नाम काल विधिप; ८४ लाख वर्ष या सा पुण्यवर्ता
 स्थिति प्रुपा सागरोपमा स्थिति सिद्धान्त ने विषे प्रसिद्ध उत्कृष्टी स्थिति हीइ यानि वर्षाणि युतानि हारयति दुग्गेध माणस एतलो देवता नु आउखु'

मनुष्यत्व मूलद्रव्य सद्व्यय प्रिय यो मनुष्य भवात् ष्युत्वादेवो भवेत् तदा देवत्व लाभतुल्य प्रिय यत्पुनर्मनुष्याणां नरकस्तिर्यक्तत्वं प्राप्तिर्भवेत् तदा मूलच्छेदेन ध्रुवं निश्चितं दुर्भाग्यत्वं प्रिय १६ दुःखी गर्द्वबालस्तत्र आवद् बह मूलिया देवत्तमाणुसत्तच्छ जञ्चिए लीलयासटे १७ बालस्य मूर्खस्य द्विधा गतिर्भवेत् कथञ्च भूतागति आवद् बह मूलिया आपद्वध मूलिका आपद विपदीवध स्ताडनादि आपद्वध वधश्च आपद्वधौ तौ मूल यस्या सा आपद्वधमूलिका ज इति यस्मात् कारणात् स बालो मूर्खो देवत्व मानुषत्वश्च हारित कीदृश्य सन् लीलया लाम्पत्येन जित पुन कीदृश्य शठ धूर्त्त १७ तत्रो जिएसद् होद्द दुविष्ट दुग्गद्दए दुग्गहातस्त उन्मगा अद्वाएसु चिरादवि १८ ततो देवत्व मनुष्यत्व जयात् देवगति मनुष्यगति हारणात् स मूर्ख सङ्गहार २ दुर्गति इतो भवति इत्यथाहार तस्य बालस्य सूचिरादपि अद्वाए प्रभृतेपि आगामि निकाले उन्मगा उन्मज्जन उन्मजातस्या दुर्गते सकाशात्ति सृतिदुर्लभा

बह मूलिया । देवत्त माणुसत्तच ज जिए लीलुया सटे । १७। तत्रो जिएसद् होद्द दुविष्ट दुग्गद्द गए । दुग्गहा तस्य उन्मगा अद्वाएसु चिरादवि । १८। एव जीय स पहाए तुलिया वालच पडिय । मूलियते पवेसति माणुसु जोणि

रागद्वेषाकुण्ठितस्य मूर्खेने वेगति नरक अने तियश्च गति होवे आगच्छति वधकारि का गति आपदा रूपवधरूपगति तेहनी मूलच्छे यद्यस्मात् देवत्व मानुषत्व च यथा हारित जिणे कारणे तिले मनुष्ये मूर्खं देव पण मणुष्य पण हाथी लीलुप ग्ध्र शठ मायावान् लीलुपी के स्त्रीने विपे शठमाया घणी करे १७ तत जीषस्य स्वय भवति सदा तत तिणे कारणे जीवने सदा होद्द द्विधा दुर्गति गत सन नरकतिय च नीगति माहि गयी थकी थाधो दुर्लभ तस्य निम्हार अस्वस्य हारित देवगति मनुष्यगति तेहने नरक तियंच गति घी निसरु दोहिलु तिणे ते भणी देवगति नरकगति हारीने काले

रुद्धंमि आउए कसुहैउं पुरीकाउं जोगक्खेमं नसख्विदे २४ संनिरुद्धे संच्चित्तं आयुषिदमे प्रत्यचा. मनुथ सख्वन्धिन कामा कुथाग्रमात्रा सन्तीत्यध्याहार एवं सत्यपिजन कस्यहेतुं पुरस्खत्यकं हेतुं किङ्कारणमाश्रित्ययोगेण पुन क्षेमं न सख्विदेन सख्वित्ते योगं क्षेमश्च कथं न जानातीत्याश्चर्यंमित्यर्थ २४ इह कामानियदृस्स अत्तद्धे अवरज्ज्झई सुच्चानि आउयं मगं जंमुज्जी परिभस्सई २५ इहेति अतदृष्टांतपक्षके क्रमात् अपायवहुलत्वं १ तुच्छत्वं २ आयव्ययतो लाभ हारणं समुद्र जलदृष्टान्तं च ज्ञात्वा इह नरभवे कच्चिदुगुरुकर्मा जीवस्सस्य कामात् भोगसुखात् अनिहत्तस्य आत्मार्थो मोक्ष. अवरार्थ्यतिनश्यति विषयिणो जीवस्य मोक्षो न भवतीत्यर्थ अत्र हेतुमाह जंइति यस्मात् कारणात् स गुरुकर्मा जीवो नैयायिकं मार्गं मोक्ष मार्गं श्रुत्वा वारं२ परिभ्रम्यति संसार

एवं माणुस्सयाकामादेवकामाण अंतिए ।२३॥ कुसगगमित्ता इमेकामा सन्निरुद्धंमि आउए । कसुहैउं पुरा
काउं जोगक्खेमं नसंविदि ॥२४॥ इह कामानियदृस्स अत्तद्धे अवरज्ज्झई । सोच्चानियाउयंमगं जंमुज्जी परिभ

न जाणे २२ यथा कुशग्रे उदकं जिमडा भने अग्निपाणी नोबिंदुओ पुनः समुद्रेण समतां करोति समुद्रना पाणीनी परे एवं मानुथकाः कामभोगाः ज्ञातव्याः इम मनुथना कामभोग जाणवा देव भोगना समीपे देवताना कामभोग समुद्र सरिखा के २३ कुसाग्रविदुप्रमाणाः सन्ति एते काम भोगाः डाभने अग्रभागे पाणीनाटीवका सरीखा मनुथना कामभोग के संच्चित्तं आयुषि थोडो आजखे थद्र किं हेतू आश्रित्य गृहीत्वा किंसुं हेतु कारण आश्रयीने आगलि करीने योग क्षेमं न जानीते अप्राप्तस्य प्रापणं योगप्राप्तस्य पालनं क्षेमः अनपामी वलुनेद्र पामी जेते योग कहीद्र पामी वलुने भलीपरि पाली जे ते खेम कहीद्र ते जाणीने नहीं २४ इह जगति कामेभ्यो अनिहत्तस्य ए जीवडो कामभोग थकी निहत्ति नहीं हुओ के आत्मार्थं स्वर्गादि

उत्तराध्ययने एलकाङ्क्याणाधिकारम् सं० भावितात्मा अणगार श्रीबूटै रायजी तच्छिष्य भगवान विजय साधुना संशोधितं

वा पुनर्यत् आशु संपूर्णं प्रचरंच भवति पुनर्यत्र सुखं भवति एतेषां सर्वेषां अनुसरपदेन विशेषणं कर्तव्यं अनंतर सर्वात्कष्टं देवभवापिचया एतद्वक्तव्यं २७
बालस्य पस्य बालत्वं अहम् पडिवज्जिया चिन्ना धम्मं अहम्मिडे नरए उववज्जइ २८ हे शिथलं बालस्य हिताहितज्ञान रक्षितस्य बालत्वं मूर्खत्वं पश्य
स अधिभिष्टी बाली धर्मं त्यक्त्वा अधर्मं प्रतिपद्य नरके उत्पद्यते २८ धीरस्य पस्य धीरत्वं सव्वधम्माणुवत्तिणो चिन्ना अधम्मं धम्मिडे देवेषु उववज्जइ २९
हे शिथ धीरस्य पण्डितस्य धीरत्वं पश्यत्वं विचारयधिया राजते इति धीरः धियं बुद्धिं राति ददातीति धीरः तस्य कीदृशस्य सर्वधर्मानुवर्त्तिन सर्वे ये

अधम्मिडे नरएसु उववज्जइ २८॥ धीरस्यपस्यधीरत्तं सव्वधम्माणु वत्तिणो । चिन्ना अधम्मं धम्मिडे देवेषु उववज्जइ २९
तुलियाण बालभावं अबालं चैव पंडिए । चद्रजण बालभावं अबालं सेवइ मुणि चिन्विमि ३० ॥ एलकज्जभयणं ७॥

विषे इतलावाना हे तत्र स उत्पद्यते ते कुले मनुष्य पणे उपजे २७ मूर्खस्य पश्य मूर्खत्वं मूर्खपणुं देखो अधम्मं प्रतिपद्यते अधर्मं अङ्गीकार करे हे
त्यक्त्वा धर्मं अधर्मिष्टः धर्मने क्खीडीने अधर्मं अङ्गीकार करे हे नरकेषु उत्पद्यते नरकने विषे जो उपजे तीहीपणजीवने २८ धीरस्य पश्य धीरत्वं धीर
मनुष्य तु धीरपणुं देखीने सर्वत्र धर्मानुवर्त्तिनः सर्वज्ञनी भायी धम्मं तेहना अनुवर्त्तिंति करे हे त्यक्त्वा अधर्मं धर्मिष्टः सन् अधर्मं मार्गं क्खंडीने धर्म
मार्गं प्रवर्त्थीं थकी देवेषु उत्पद्यते देवलीकने विषे देवता हुइ २९ तीलयिला विचार्यं मूर्खस्य मूर्खत्वं मूर्खपणी देखीने पण्डितभावं च पण्डितः मुनिः
पण्डितसाधु पण्डीतपणी आदरी त्यक्त्वा मूर्खलक्षणं मूर्खपणुं क्खंडीने पण्डित सेवते मुनिः इति समाप्तवीमि अबाल भाव पण्डित पणी तत्वार्थं सेवे ३०

चान्यादयो धर्मास्तान् अनुवर्तितुं अनुकूलत्वेन चरितुं शील यस्य सर्वधर्मानुवर्तते तस्य चान्यादिदशविध धर्मधारकस्य कीदृश धीरत्वं तदाह सधर्मिणी धीर अधर्मं त्यक्त्वा देवेषु उत्पद्यते २८. तुलियाण बालभाव अवाल चैवपडिए चइ जण बालभाव अवाल सेवइ सुणीत्तिवेमि ३०. सुनिस्तीर्थं करादेयकारी साधुरेव अमुना प्रकारेण बालस्य बालभाव च पुन पण्डितस्य अवाल पण्डितत्वं तुलिया इति तोलयित्वा एकारो वाक्यालङ्कारे पयात् पण्डितस्तत्र पुमान् बालभाव मूर्खत्वं त्यक्त्वा अवाल पण्डितत्वं सेवयेत् अङ्गीकुयादित्यर्थ इति अह त्रवीमि सुधमा स्वामी जवूखामिन प्रत्याह ३० इति श्रीरञ्जोपाय्य सममं अध्ययन संपूर्णं ७ इति श्रीमदुत्तराध्ययन सूत्रार्थ दीपिकाया उपधायाय श्रीलक्ष्मीकीर्त्तिगणित्थिप्य लक्ष्मीबल्लभगणिविरचिताया सममाध्ययनस्यार्थ संपूर्णं ॥ ७ ॥ अष्टम अध्यायन कथ्यते पूर्वस्मिन् अध्ययने विषयत्यागं छत्तं स च निर्लोभस्यैव भवति ततोऽष्टम अध्ययन कपिलस्य महासुने ईष्टान्त गर्भितनिर्नाभत्वं हठीकरण कथ्यते पूर्वं क कपिल कथञ्च स सुनिर्जात अतस्तदुत्पत्तिं रुच्यतेयया कोया व्यानगर्वाजितं शतु राजान् राज्यं करोति तत्र काश्यपी ब्राह्मणं स चतुर्दश विद्यास्थानपारां पौराणां राज्ञां राज्ञातीवसम्भतं तस्य राज्ञा महती हस्तिर्दत्ता काश्यप ब्राह्मणस्य ययानाम्नी भार्यावर्त्तते तयो कपिलनामा पुत्रीमिति तस्मिन् कपिले बाले एव सति काश्यपी ब्राह्मणं कालद्रतं तदधिकारो राज्ञाऽन्यस्मै ब्राह्मणायदत्तं सो अश्वा रूढं कृत्रेण धियमाणेन नगरान्तं व्रजति एकदातं तथा व्रजन्तं दृष्ट्वा यथाभ्युयं रुरोद कपिलेन पृष्टं मातं किं रीदपीति सा प्राह वत्स तव पिता इदृश्या

अधुवैचसासयमीससारमि दुक्त्वपडराए । किं नामरोज्जतकम्सय जेणाह दुग्गइ नगच्छेज्जा १॥ विजरित्तुपुव्वस

इति श्रीएलका अध्ययननी टिप्पणी संपूर्णम् ॥७॥ अधुवैचसासयमीससारं नही अशास्त्रती छे नीचल नही ससार दुक्त्व प्रचुरे ए ससार अने कडुखे करी भग्नी छे किं तत्रामिति सभावने भयेत् ततं कर्म अनुष्ठान पाचसे चोर बील्या स्वामी इस्वी कीइ अनुष्ठान धर्ममार्गं छे येनाह दुर्गति न

समस्तके लीच छतवान् गासन देवतया तस्य रजोहरणादि लिङ्ग मर्पित कपिलो द्रव्य भावाभ्या यति भूत्वा राज्ञ पुर समागत राज्ञा भणित त्वया विचारित स ब्राह्म जहा लाहो तद्वा लोहा लाहा लोहीपवद्दु देमास कणयकज्ज कीडीएवि न निद्रियमिति विचार्योह यत्तद्व्य सयमीजात राज्ञो कौटिमपि तथाह ददामि तेनोक्त सर्वोपि परियहो मया न्युत्पृष्टो नमे कीव्यापि कार्यमित्युक्त्वा स यमणस्ततोवि हृत पणमामान् यावत् क्वद्यस्य एवासीत् पथात्केवलीजात इत्यय राजगृह नगरान्तराल मार्गे बलभद्र प्रमुखाचोरा सन्ति एतेषा प्रतिवीधोमत्तो भविष्यतीति ज्ञात्वा स कपिल केवली गत तैर्दृष्ट प्रीक्ष्य भी यमण नृत्य कुरु केवली प्राहवादक कोपि नास्ति ततस्ते पञ्चगत चौरास्तालानि कुट्टयन्ति कपिल केवली गायति तद्गीत हत्तमाह अथुवे आसासयमि ससारमि दुक्ख पडराए कि नाम इज्जत कयय जेणाह दुग्गइ न गच्छिज्जा १ भोजना अस्मिन् ससारि तत्कर्मक कि नाम कि सभाव्यते तत्कि कमवर्त्तते तत् कि क्रियानुष्ठान वर्त्तते येन कर्मणा अह दुर्गति नगच्छेय केवलिन सगयस्य दुर्गति गमनस्य च उभयो रभापि प्रतिवीधापेचया इति केवली भगवान् इद ब्राह्म कथभूते ससारि अथुवे नव नव स्थानक निवास सज्ञावात् अस्थिरे पुन कीदृशे ससारिऽप्याश्वतेऽनित्ये पुन कीदृशे ससारि दु ख प्रसुरे दु खे शरीरिक मानसिके पुष्टे प्रसुरे पूर्णे जन्मजरा मृत्युमहिति १ विजहिन्तु पुब्बसजोग न सिण्हेह कहम्मि कुब्बिज्जा

योग नसिण्हेह कहिविकुब्बे वज्जा । असिण्हेह सिण्हेह करेहिदोसपदोसिहि मुच्चएभिकवू २॥ ततोनाण दसणसमग्गे

गच्छेत् जे धर्मेने अगीकार कागा यका दु दुर्गतिने विपे नजाउ १ लज्जा पूर्वसयोग माच पित्तादि तिवारे कपिल ऋपि तंहना वचन साभलीने घरने सवन्ध छांडोने कुब्बापि स्त्रे ह न कुर्यात् स्त्रे ह कीद वसु उपरे न करे स्त्रे हकारेवपि पुत्रादिपु स्त्रे हना कारणहार पुत्रकलत्रादिक ते उपरे सनेह न करे एव कुर्वन् इहलोक परलोकैऽपि दुःखैर्मुच्यते भिक्षु इम कारु साधु इहलोक परलोकना दु ख थी छूटे २ ततोन्तर ज्ञानदर्शनपूर्ण कपिलमुनि कपिल

विवश्यामिषदोष विषय एव गृह्णितुत्वात् आमिषं विषयामिषत्त देवदोष जीवस्य दूशण करणत्वात् विषयामिषदोष स्तल विशेषेण सन्नो निमग्नः विषयामिषदोष विषय पुन कीदृश हित निश्रेय्य स बुद्धिपर्यस्त हितं आत्मसुखं निश्रेय्यसौ मीज हितस्य निश्रेय्यस्य हित निश्रेय्यसौ तयो विषये याबुद्धि हितनिश्रेय्य स बुद्धिस्तस्या शकासात् विशेषेण पर्यस्त पराङ्मुख हितनिश्रेय्य सन्नो विषयस्य स्वर्गपवर्गसुखादभट इत्यर्थ ५ दुप रिच्यया इमे कामानोसुजहा अधोर पुरिसिंहिं अहसन्ति सच्यया साह जे तरन्ति अतरं वणिग्या वा ६ इमे प्रसिद्धाकामाः अधीर पुरुषैर्नसुजहा न सुखे न हातुं योग्या इत्यर्थः मिष्टान्नादि भोजनवत् कीदृशा इमे कामाः अतएव दुःपरित्यजाः अथ केचित् सुव्रताः साधवः सन्ति ये अतरन्तरीतुं अशक्यं ससारन्तरन्तिकेइव वणिजइव यथा वणिजाः सामुद्रिकाः व्यापारिणः अतरं महासमुद्रं प्रवहणैस्तरन्ति अत वा शब्दोहि इवार्थे ६ समणा सुएगे वयमाणा पाण बहंमिया अयाणन्ता मन्दानिरय गच्छन्ति बाला पावियाहि दिद्वीहि ७ एके केचित् कुतीर्थाः मिथ्यालिनः पापिकाभिः पाप हेतुकाभिर्दृष्टिभिः बुद्धिभिः प्राणबधं अधर्मं अजानन्तः नरकं गच्छन्ति कथमूतास्ते मृगाः अविवेकिनः पुनः कीदृवास्ते मन्दाः जडाः यथा केचित् रोगग्रस्ताभिर्दृष्टिभिः सस्यग् मार्गं अजानन्तः कस्मिन् चित् दुःकष व्याप्ते मार्गे व्रजन्ति पुनस्ते केचित् कुतीर्थाः किं कुर्वन्तः सुदृति वयं अमणाः इति

अहसन्ति सुव्वया साह जे तरन्ति अतरं वणिग्यावा ६॥ समणा सु एगे वयमाणा पाणवहंमिया अयाणन्ता । मंदा

सः एके केचित् परतीर्थिकाः इति वदन्ति केदकपरतीर्थी इम कहे अरुहे अमण साध के प्राणवधं मृगाव अजानन्तः जीवमार धर्मनी मार्ग जाणे नहीं मूर्खाः मिथ्यात्व पीडिताः नरकं गच्छन्ति मंदमूर्ख मीथ्यात्व करो पीडा थका नरके जाइ विवेकहीनाः पापदृष्टिभिः मूर्ख विवेके करो हीन पापनेज विषे दृष्ट के जेहनी ७ न हि प्राणवधं अनुजानन् अनुमोदयन् प्राणवध करे वली प्राणी बध करो अनुमोदना करे कदाचित् सर्व दुक्तेभ्यो न मुच्यते

वयमाणा वदन्त यमण धमरहिता अपि स्वस्मिन् यमणत्व मन्यमाना इत्यर्थं यदि प्राणबध अपि न जानन्ति तदाऽप्ये पा मृपावादादीनाञ्च प्रानन्तेषु कृतएव सन्भाव्यते कथञ्चूतास्ते मन्दमिथात्वरोगयस्तापुन कथञ्चूतास्ते बाला विवेकहीनत्वं हितेया पापशास्त्रेषु धर्मशास्त्रेषु बुद्धिवात् तथया ब्रह्मण ब्राह्मण आलभित इन्द्राय च च आलभित मरुद्भौ वैश्य तमसे शूद्र तथा यस्य बुद्धिर्नलियेत हत्वा सर्वमिदं जगत् आकाशमिव पङ्के न नासौ पापिन लिप्यते १ धर्मोहि बालै रज्ञेय ८ नहुपाण बह अणुजाणे मुचिञ्ज कयाद् सव्वदुक्खाण एवा यरिएहि अक्खाय जेहि इमे साहुपन्नत्तो धम्मो ८ ते आर्ये पूण्यै आचार्ये एव आख्यात इत्युक्तं ते कै ये आचार्ये अय साधुधर्म साध्याचार अथवा सम्यग् धर्मं प्रपन्नं कथित इतीति कि जीव प्राणिवध जीवस्य हिंसा अनुजानन् अनुमीदग्नं हुइति निश्चयेन कदापि सर्वदुःखिभ्यो न मुच्येत अत्र प्राणिवधस्य अनुमीदनाया स्वागत करणकारुण्यो रपि त्याग उक्त प्राणबधकरण कारणामतित्यागाच्च मृपावादा दत्ता दान मेयुन परियहादी नामपि करणकारणानुमतस्यापि निषेधा

नरयगच्छ त्वालापावियाहि दिट्ठीहि ७॥ नहुपाणवह अणुजाणे मुचिञ्जकयाद् सव्वदुक्खाण । एवा यरिएहि अक्खा
हिजेहि इमीसाहु धम्मोपसत्तो ८॥ पाणेतनाद् वाएज्जा सेसमीएत्ति बुच्चइं । ताइं तच्चोसे पावय कम्म निज्जाइउदय

कदाचित् सर्वं दुःखं यको मृकाइनहो एव आचार्ये स्तोत्रैर्इरेरख्यात इमं तोत्रं करण धरे कश्चु ये अय साधु धर्मोप्रपन्नं कथित जे तीर्थंकरे ए साधु धर्मं कश्चु प्ररुण्यो ८ प्राणान् नातिपातयेत् विनाशयेत् विनासनं करे प्राणी जीवने मारि नही ससाधु समित कथ्यते ते साधुपाच समिते समितो कहीइ ततो अनन्तर पापकर्म निश्चयेन न गच्छति ते पुरस पापने विसे न जाये यथाख्यात् उच्च प्रदेशात् उच्च प्रदेश यी पाणी टली

ज्ञेयः ८ पाण्डयना इवा इज्जा से समीदृति बुद्धे तार्ई तन्नीसे पावय कम्म' निज्जाइ उदगं वथलाओ ९ यः साधुः प्राणान् जीवान् न अतिपातयेत् न विनाशयेत् स्वयं न हिंसात् च शब्दात् प्राणहिंसायाः कारणानुमत्योरपिनिषेधः उक्तः सत्ताता जीवरचाकारी साधुः समित उच्यते सिद्धति अथ अनन्तरं सर्वजीवरचनात् अनन्तरं ततस्तस्मात् समितात् संभ्रिति गुणयुक्तात्साधीः पापकं कर्म अशुभं कर्मनिर्याति निर्गच्छति कस्मा क्कामिव स्थलात् उन्नतभूतलात् उदकं पानीय निर्गच्छति उन्नतभूतले यथा उदकं न तिष्ठति तथा समितिसाधी पातकं न तिष्ठति इत्यर्थः ९ जगनिस्त्रिएहिं भूएहिं तसनामिहिं थावरैहिं च नी तेसिं मारभे दडं मणसा वयसा कायसा चिव १० जगत् लोकस्तत्र निश्रिताः आश्रिता स्त्रेषु जगन्निश्रिते त्रेषु थावरैषु च जीवेषु मनसा वचसा च पुनः कायेनतेषु दडं न समारभेतबधं न कुर्यादित्यर्थः अलो ज्ययिन्यां आइयुलस्य कथा १० अवन्त्यां आइयुतचीरैहवा मालवकीराट् सूपकार हस्त्रे विक्रीत स्त्रेन लावकादिभारयेत्युक्तेऽभारयथपेटया हतस्त्रथाथ मारयन् गाढं कुव्यमानं आरटन् राज्ञा श्रुत्वादृध्यामानोत उक्तचकिरेनजीवान् हिंसि सोऽवक् अहंश्राद्धो नहन्मि ततो राज्ञावशब्दे र्यमाणी जीवान्नघ्नन् हस्त्रये चिन्तोपिनाहन् ततः प्रसन्नस्तं स्रज्ञा रक्षां चक्रे यथा समारपिन प्राणानपिवधेकार्षादेवं प्राणत्यागिष्यन्त्ये यत्वं सुद्धे सणा व थलाओ ९॥ जग निस्त्रिएहिं भूएहिं तसनामिहिं थावरैहिं च । नेतेसिं मारभे दडं मणसा वयस कायसा चिव १०॥

निषेवित अपि स्थिविरी ग्लानश्च येन आहारेण शरीरे सुखं स्यात्तदाहारं सेवेत अयमर्थो ज्ञेयः १२ जे लक्षणंच सुविणंच अंगविज्जं च जेपउं जंत न हुते समणा वुच्चन्ति एवं आयरिएहिं अक्खायं १३ हुइति निश्चयेन ते अमणा उच्यन्ते आचार्यैः एवं आख्यातं तेके ये लक्षणं सामुद्रकशास्त्रीकं द्वाविंशत्यं माणं मषातिलादिकं च पुनः स्वप्नं स्वप्नशास्त्रं गजारीहणात् भवेद्राज्यं औप्राप्तिः फलिताम्रस्यसौभाग्यं साख्यदर्शनादित्यादि अंग विद्यां अद्गस्फुरणफलशास्त्रं यथाशिरसः स्फुरणे राज्यं बाह्वीश्च मित मिलापः जङ्घयोर्भोगसङ्गमः इत्यादि सर्वं मिथ्या श्रुतं साधुना न प्रयोज्यमित्यर्थः यदाह धर्मदासगणित्त्वमाश्रमण जोइसनिमित्त अक्खरं कोउअ आएसभूयकभेहिं करणाणुमीयण्जि साहुस्स तवक्खञ्जी हीइ १३ इह जोवियं अनियमित्ता पभद्धा समाहि जोएहिं ते कामभोगरसगिद्धा उववज्जंति आसुरे काए १४ ते कामभोगरसगृह्णा आसुरे काये उत्पद्यन्ते किं क्खत्वा

विज्जंच जेपउंजंति । नहुतेसमणा वुच्चंति एवं आयरिएहिं अक्खायं ॥१३॥ इहजीवियं अणियमित्तापम्यग्गसमाहिजो गेहिं । तेकामभोगरसगिद्धा उववज्जंति आसुरे काए ॥१४॥ तत्तोविय उव्वट्ठिता संसारं बहु अणुपरियट्ठति । बहुकम्म

पुरुषलक्षण स्वप्नो विचार कहे अंग विद्या अंगस्फुरणदिफलं शरीर फुरके तेहना विचार कहे नते अमणाः उच्यन्ते एतलावाना जे करे तेहने साधु न कहीइ एवं तीर्थकरै राख्या तं इम तीर्थं करे आचार्ये कञ्ची १३ इह जन्मनि जीवतं अनियंत्रिता नियमरहिताः इहां आपणी आक्खा तप जप करीने यत्त्वे नहीं वसि करे नही प्रमथ्ठाः समाधि योगिभ्यो समाधि यकी भ्रष्ट थयी ते काम रस गृह्णाः ते पुरुष जे कामभोग रसे गृह्ण हुवे के उत्पद्यन्ते आसुरे काए असुरकायेषु ते पुरुष असुर असुर निकायमांहि जाइ १४ ततोपि उदृष्टत्य असुरनिकायात् ते असुर काय थी नीसरीने संसारं बहु भ्रमन्तिः संसारमांहि

इह अस्मिन् ससारे जीवित आत्मान तपो विधानादिना अनियमिता इति अनियत्र अवगीकृत्य ते के ये समाधियोगेभ्य प्रभृष्टा समाधिना स्वर्ग्येण योगा मनो याक काथाना एको भावा समाधियोगास्तेभ्य प्रभृष्टा प्रकंपेण अध पतिता पुन कीदृशस्ते कामभोगरस गृह्णा विषयसेवन स्वादलोला आसरे काये असुरकुमारयोनी अत्र अनियत्ता इत्युक्ते न किञ्चित् अनुष्ठान कृत्वा असुरकुमारत्वेन उत्पद्यन्ते नितरा अतिशयेनय मिथ्यानियम्य न नियम्य अनियम्य उत्कृष्ट तप अकृत्वा इत्यर्थ १७ तत्तो विय उच्चञ्चिता ससार बहु अणुपरियदति वहकग्नयेवलिप्ताण वोही होइ सुदुहृहतिस्ति १५ ततोपि च तत असुरनिकायात् उह्वल्य निश्चय बहु ससार अनुपर्यटन्ति बहुन ससार भ्रमन्ति पुनस्तेपा ससारे भ्रमता वोधि सम्यक्त लब्धिसुदुर्लभा भवति कथभूताना तेषा बहु कर्मलेपलिप्ताना प्रचुरकर्मपद्म खरटिताना १५ कसिण पि जो इम लोय पडिपुत्र दलिज्जइक्कस्सतिणाविसे नत्तु सिज्जा

लेवल्लिप्ताण वोही होइ सुदुहृहतिस्ति । १५। कसिणपि जो इम लोय पडिपुण दलिज्ज एकस्स तेणाविसेन तूसिज्जा इइ दुप्पूरए इमेआया ॥१६॥ जह्ण लाभोतहा लोभोलाभालोभो पवट्टइ । दोमासकय कज्ज कीडोएवि ननिद्विय ॥१७॥

परिभ्रमण करे घणो बहु कर्म लेपलिप्ताना घणो जे कर्ममल तेह्णो लेप तिणे करी लिपाणा छे तेषा पुरुपाणा वोधि जिन धर्म प्राप्ति दुर्लभा भयन्ति ते पुरुषने जिनधम नो प्राप्ति बलो सम्यक्तनी प्राप्ति दीहिलि हुवे १५ समस्तमपि इद लोक सधलाइ इह लोकने विये धनादिभि पूर्ण भूत्वा एकस्स ददाति धनादिके भरोनि कीइएक पुरुषने दीजे तेनापि स न तोपयेत् तोपणि ते पुरुष सन्तोपाइ नही इत्विव अय आत्मा दु पुरी असगुष्ट ए जीण आत्मा सन्तोथो न जाइ १६ यथा लाभ स्याथा लोभ जिमलाभ हीय तिम लोभ बधे विमाएक नक कार्ये कृत दीइ मासासी नापि अर्थे मागवागर्था हतो

इन्द्रदुर्णर ए इमे आया १६ यदि शब्दस्य अध्याहार यदि कश्चित् इन्द्रादि देव एकस्य कस्यचित्पुरुषस्य प्रतिपूर्णं धनधान्यादि पदार्थैर्भूतं क्वात्स्रं समस्त लोक विखं दर्यात् तदापि तेन धनधान्यादि परिपूर्णं समस्त लोकदानेन स पुरुषो न तुष्येत् इति हेतो अय आत्वा दु पूरकः दुखेन पूर्यते इति दु पूर दुःपूर एव दुःपूरक १६ जहालाही तहालोही लाहालोही पवट्टई दोमास कयं कज्जं कीडीएव न निद्वियं १७ पूर्वोक्तमर्थ एव दृश्यति यथा लाभरुया लोभ लाभालोभः प्रवर्द्धते द्विमापकृतं द्विमापार्थं द्विमापमितस्वर्णग्रहणार्थं कृतं कार्यं स्वर्णं कीटिभिरपि न निद्वियं न निद्वितं पूर्णं न जातं इत्यर्थः माष तु पञ्चगुंजाप्रमाणं माषद्वय प्रमितस्वर्णं न कार्यं दास्या पुष्यतांबूलवस्त्रा भूषणभूत्यादिरूपं तत्कार्यं कीटिद्रव्यं शापि परिपूर्णं नाभूत् स्त्रीमूलाहि दृश्या इति हेतोः तत्परिहारार्थं गाथा माह १७ नी रक्वसीसु गिज्जिज्जा गंडवत्यासु गिगचिचासु जाथो पुरिसंपलोभित्ता खिलंति जहावदासिहिं १८ राचसीषु नी गृह्णेत् न विश्वसेत् ज्ञानादिजीवितापहारात् राचसीलुक्तं कथं भूतासु स्त्रीषु गंडवत्तसु गंडं गडु स्तदुपयत्वात् उच्चैः कुचौ वक्षसि यासां ता गण्डवत्तसु स्तासु गंडवत्तसु उच्च कुचस्फोटकवत्तसु वैराग्यीत्यादनार्थं कुचयोर्गण्डुपमानं बीभत्सीत्यादं उपमानं पुनः कीटिश्रीषु स्त्रीषु अनैकचित्तासु अनैकेषु पुरुषेषु चित्त यासां ता अनैकचित्तास्तासु अथवा अनैकेषां पुरुषाणां चित्तं यासु ता अनैकचित्ता स्तासु अथवा अनैकानि चित्तानि सङ्ख्य विकल्परूपाणि चिन्तनानि यासां ता अनैक चित्ता स्तासु याः स्त्रियो राचसा पुरुषं कुलीन मानवं प्रलीभयित्वा त्वमेव मम भर्ता त्वमेव मम जीवितं विकल्परूपाणि चिन्तनानि यासां ता अनैक चित्ता स्तासु याः स्त्रियो राचसा पुरुषं कुलीन मानवं प्रलीभयित्वा त्वमेव मम भर्ता त्वमेव मम जीवितं

नीरक्वसीसु गिज्जिज्जा गंडवत्यासु गिगचिचासु । जाउपुरिसंपलोभित्ता खिलंति जहावदासिहिं । १८। नारीसु नोपगि

कोद्यापि न निष्ठित कीडा न गमे चञ्ची पीण स्थीर रञ्ची नहीं १७ राचसीषु स्त्रीषु न गृह्णी भवेत् स्त्री राचसी छे एहने विषे गृह्ण हीषु नहीं गंडुहाच रूप ग्रथियुक्तहृदयासु कुचरूप गंड के जेहने हिथे अनैक ठाम जेहने चित्त के या स्त्रिय पुरुषं या वाक्केन विप्रतार्यं जे स्त्री पुरुषने लोभा वीने रमे

त्वमेव मम शरण इवादि वचनैर्वगीकृत्य नीतितुत्याद्य ते पुरुषे सह रमन्ते क्रीडन्ति कै र्यथा दासै र्यथा एव दासे क्रीडन्ति ते कुलीनपुरुषा अपि स्त्रीभि र्व्यानीहिता सन्ती दास प्राया भयन्ति यथा दासा गम्यता स्त्रीयता इद कार्यं क्रियता इद कार्यं मा क्रियता इतिवचन युत्वा स्वाम्यादेशकारिणी भयन्ति तथा नारीणां वगवर्त्तिन पुरुषा किङ्करा भवतीत्यर्थं १८ नारीसु नीपगिज्जिञ्जा इत्यौ विषयजहे अणगारे धम्मच पेसन नच्चा तस्य इविव्ज्जिङ्कू अप्याण १९ अनगार साधु स्तोप न गृधेत् न गृधि कुर्वीत अनगार स्त्रिय विशेषेण प्रजह्यात् परित्वजिता पुनर्भिद्धधर्मं ब्रह्मचर्यादिरूप पेशल मनोज्ञा वा तत्र धर्मे आमान स्यापयेत् १९ इइ ए स धर्मे अब्बाए कविलेणच विसुत्त पत्रेण तरिहिति जे उकाहिति तेहि आराहिया दुवेलोगत्तिवेमि २० इति अपुना प्रकारेण एव धर्मं कपिलेन आत्यात कथित कथभुतेन कपिलेन विशुद्धप्रज्ञेन केवलज्ञानयुने ७ ये पुरुषा कपिलकेवलिनीत धर्मं करि

ज्जेञ्जा इत्यौविषयजहे अणगारे । धम्म चपेसल नच्चातत्यठवेज्ज भिव्वू अप्याण ॥१९॥ इइ एसधम्मं अब्बाएकविले णच विसुत्त पम्मे ण । तरिहितिजेत्त काहि ति तेहि आराहिया दुवे लोगत्तिवेमि । २० । काविलीयज्जयण सम्मत्त ॥ ८ ॥

क्रीडन्ति यथा दासीभि सहखेलावे पुरुषने पक्के दासिनोपरि आइ आपणेवशिकरे १८ नारीय नीपगट्ट कुयात् स्त्रीने विपेगट्टपणु ७ करवु स्त्रियोविधि प्रकारे त्वजेत् यतीस्त्रीने ऋषीजरआदरे नही धर्मं रस्य ज्ञात्वाधर्मं भनीजाशीने तत्रधम्मं स्यापयेत्साधु आत्मान तीहा धर्माने विपेसाधू आपणा आत्माने थापे १९ इति एण धम्म आस्थात ए धम्म कस्य कपिनेन पृथिणा विशुद्धप्रज्ञेन कपिलकेवलीइ एधम्मपाचसे चीर आगे कच्चु शुत्त युधने धणीइ ते जे धम्म करस्ये तेतरस्ये ते आराधितो ही नीकौत्तिणि पुण्यासाइ दीइ लोक आराध्या इति समाप्ती ब्रवीमि २ इति श्रीकपिलनुनि अध्ययन टब्बी सपूर्णम् ॥ ८ ॥

थन्ति ते पुरुषाः ससार तरिथन्ति पुनस्ते पुरुषैः द्वौ अपि लीकी आराधितौ सफलौ कृतौ इत्ययं इत्यादि दीधकान् कपिलीकानि शुत्वा तत्र केषिचौराः प्रथमेनैव दीधकेन प्रतिबुद्धाः केचित् द्वितीयेन एषं पञ्चगतचौरा अपि प्रतिबुद्धाः प्रव्राजिताय इति कापिलीय अध्ययनं प्रष्टमं सपूर्णं ॥ इति श्रीमदुत्तराध्ययनसूत्रार्थदीपिकायां उपाध्याय श्रीलक्ष्मीकीर्त्तिगणपिष्य लक्ष्मीवक्त्रभगणि विरचिताया कापिलिकाध्ययनस्यार्यः सपूर्णः ॥८॥ अथ नवमं अध्ययनं कथ्यते अष्टमेऽध्ययने हिनिर्लीभत्वं उक्तं निःलीभं पुरुषोहि इन्द्रादिभिः पूज्यः स्यात् नवमेऽध्ययने नमि राजर्षिरिन्द्रेण आगल्य भाव पूर्वकं वन्दितः इति अष्टमनवमाध्ययनयोः सम्बन्धः तत्र नमिश्च प्रत्ये क्रबुद्धः प्रत्ये क उवायत्वारः समकालसुरलीकाचवनप्रत्ये क प्रतिबोध प्रवज्याग्रहणकेवलप्रानोत्वत्ति सिद्धि गमनभाजो जाता स्तेषु प्रथमः करकडू १ द्वितीयो हिसुरः २ तृतीयो नमि राजा ३ चतुर्थो नगति ४ इति तेषां प्रत्ये कनुजाना कथा न कं उच्यते तत्र प्रथमं करकडू कथा यथा करकडूकलिङ्गसु पञ्चालसु यदुग्रही ननीराया विदेहसु गन्धारेसुय निगर् १ श्रीवासु पूज्य जिनपतिकल्याणकपचका स्ते विनष्टपापायां चम्पायां नगर्यां दधिवाहन नामा नृपोभूत् तस्य चेटकमहाराज पुत्री पद्मावती प्रियाजाता साऽन्यदा गर्भिणी बभूव गर्भानुभावेन च तस्याइदं दीहदसुत्यत्र अहं पुंवेपथरा भर्त्रा धृता तपत्रा गजाग्रभागा रूढा प्रारामे सत्परामि लज्जया इदं दीहद भूपतिः पुरीवक्तु मगला सा जगाम्नी बभूव राजाऽन्यदा तस्याः क्षगाङ्ग कारणं पृष्टं अति निर्वन्धे न सा स्वदीहदद्भययामास राजा अत्यन्तं तुष्टस्तां पटहस्ति स्तन्धे समारीष्य स्वयं तच्छि रसि क्लृप्तं धृतवान् तादृश एव राजा गगारूढ राज्ञी पत्ताज्ञागस्थितौ वने ययौ तस्मिन् समये तत्र जलदारभी यभूव तत्र सप्तकी प्रसुख विविध हज पुष्प गन्धैर्जलसिक्त सृष्टन्धै य विहलीभूतः स करो मदीनत्तः स्ववासभूमिं स्मरन् प्रटवीं प्रति अधावत् भगवार्ः पदातिभिनासौ न स्पृष्टः तेन गर्जेन गर्भान्वितया कदलीकीमल शरीरयाराज्या साई स राजा मराटव्यानीतः सम विपमोत्रत दूरासन्माननेक भावान् पत्यन् भूपतिर्वटसेकमायातं दृष्ट्वा

भार्या प्रतोदम वदत् हे भद्रे पुर स्थस्यास्य वटस्य ग्राखामि कामवलम्बि थास्व अहमप्येकां ग्राखामाश्रियिथामि गजसु एव मेवया तु एव मुञ्जा राजा
वटग्राखार्या लग्न राश्रीतुभयव्ययावटावलम्ब कर्तुं मचमा हस्तिनाऽग्रतीनीता राज्ञातुवटादुत्तीर्यथनै ग्रनैर्भिलित सैन्य पत्नीविरहदुक्खितयम्प्यायां
प्रविष्ट राश्री दुष्टेन तेन हस्तिना महती महती मटवी नीता टपाकुल स हस्तो चतुर्दिक्षुपानीय पश्यन एक सरी दृष्ट्वा तत्प्रात्या मवतीर्यया वदप
यतति तावत्साराश्री हृद्यावलम्बेन तत्स्त्वन्वा दुत्ततार गजसु यीषतापित सरोत्तर्विवेय राश्रीक तार दृष्ट्वा भयभीतासती मनसि एव चिन्तया
मास कचतन्नगर कच साथी कतलन्दिर कसा सुखयथा दुर्कर्मणां विपाकात् सर्वमेगत अथवात् वनेविचित्र स्वापदैये त्रमादवशगाया मम मृत्युर्भवि
ष्यति तदा मम दुर्गति रेवेति मत्वाऽप्रमत्ता सती आराधना व्यधात् सुकृतानि अनुमीय सर्वजीवेषु क्षमा कृत्वाचानयन साकार प्रपेदेनमङ्कार
ध्यायन्ती तत उत्थाय सा एकयादिगगच्छन्ती पुरस्तादेक तापस ददर्श तापसे नैयमेव पृष्ठा वत्से ल्व कस्य पुत्रीकस्य प्रिया आकृत्यै व ल्व मया भूरि भाग्या
भ्राता इय कातवावस्था कथय वय अभया यमिन त्म सा राश्री तापस निर्यिकार निर्मलकर ब्रावा स्वहत्तान्त शकल जगौ एतस्या राज्ञा पितु
येटक राश्री मित्त्रे ण तेन तापसेन उक्त वत्से ल्वयानात पर चिन्ताकार्या अभय सर्व विपदामासद सर्ववस्तूनाम नित्यता चिन्तनीया एव प्रतिबोध
सा राश्री तेनतापसेन स्वायम नीता तस्या प्राण्या शफलैकारिता अथच सदेश सीञ्जिता नीत्वा स तापस एव जगाद हे पुत्रि अत पर हलकृष्टा
सा व्याधरा वर्तते सा मुनिभिर्नोक्त्या ततोह पथाहलामि अय मार्गो दन्तपुरस्य वर्तते तत दन्तवक्रनामा राजा वर्तते इत सुसार्थेन त्व पुरेगच्छे
एव निगद्य स तापस स्वायम जगाम राश्री तु पुरान्त साध्यपाथये जगाम साध्या पृष्टे तया सकलीपि वृत्तान्त कथित साध्वी तस्या एव सुय
देश ददौ अश्विन् वनेदु खागरे ससारे सुखाभासएव सर्वेषा सर्वोपि भवनिस्तारी भवद्विस्त्राज्य एव साध्वी वचसा वैराग्यवृत्ता सा तदैवदीक्षा जग्राह

सन्नत विघ्नभियां सती सन्तमपि गर्भं न जगौ कालान्तरे तस्या उदरहृदौ साध्व्या पृष्टं किं मे तत्तवेति तयोक्तं सम पूर्वावस्था सम्भवौ गर्भो वर्तते मया तु व्रतविघ्न भयान्नीकृत ततो महत्तरा साध्वीतां साध्वीं उड्डाहभयेन एकान्ते संस्थापयामास काले सा पुत्रं प्रसूयरत्नकं वलेन सखीतं पितृनाम सुद्रां कितञ्च कृत्वा श्मसाने द्वाग्भूमीच श्मसानपतिर्जनं गम स्तं बालकन्तथाविध भालीकर गृहीत्वा च अनपत्यायाः स्वपत्न्याः समर्थयत् सा श्रमणी गुप्त चर्ययातं श्रितिकर ज्ञाला महत्तरया अग्ने एव माचख्यौ कृत एव मया बाली जातस्ततो मयात्यक्तः सवाली लोकीत्तर कान्तिर्जन गमधाम्नि दत्ताप कार्णिकं नामावहृधे सा साध्वी सततं बहिर्रजन्ती पुत्रस्त्रे हेन मातङ्गा सह कीमतालापैः सङ्गतिं चक्रे सवालकः प्रतिवेशिक बालकैस्सह क्रीडन् महत्ते जसा शृश राजते आगर्भं बहुशाकाय शनदीपिण तस्य बालकस्य कण्डूलतादीपो भवत् स्वयं राजचेष्टां कुर्वाणः सवालः परबालै सामन्तीकृतै देह कण्डू याकरैः कारयति ततो लोकै करकण्डूरिति नाम दत्तं सा साध्वी तद्दहनविलोकनार्थं मातङ्ग पाटके निरन्तरं याति भिच्चालब्धं मोदकादि तल्लै ददाति श्रमणत्वेष्यपत्यजा प्रीतिस्तस्या दुस्तरैरिति बालकीपि तस्या दृष्टयाः बहुविनय करोति प्रीतिश्च दधाति स बालक शङ्खवर्षः पितुरादेशात् स्वशानं रचति अन्यदा तस्मिन् श्मसाने रञ्जितसति कीपि साधुर्लंबु साधु प्रति तत् श्मसानस्थं सुलक्षणं वंशं दर्शितवान् उक्तवांच मूलाच तुरङ्गुलत इमं वंशमादाय स्व समीपे स्थापयति सोऽव्यं राज्यं प्राप्नोति इद साधुवचसेन बालकेन तत्रस्थेनैकेन द्विजेन श्रुतं द्विजश्रुतं वंशं आ चतुरङ्गभूलं खित्वा यावद् गृह्णाति तावत्करकण्डूना तत्करात् संवशी गृह्णीतः स्वकरे गृह्णीतः कलह कुर्वती द्विजस्य करकण्डूना उक्तं मत् पितृश्मसानवतीत्य वंशं नाहमन्यस्मै दास्ये स ब्राह्मण करकण्डू बालश्चेति द्वावपिवि वदन्ती नगराधिकारि पुरोगती नगराधिकारिभिर्भणितं अहीवालतवायं वंशः किं करिष्यति सप्राह ममायं राज्यं दास्यति तदाधिकारिणः स्मिता एव मुचु यदा तवराज्यं भवति तदा ल्याऽस्य ब्राह्मणस्य एकीशामीटियः शिशु तद्वचः ऋषीकृत्य स्वगृहमगात्

स विप्रोन्व विप्रै स भूयन्तम्बाल हन्तु सुपाक्रमत् त द्विजोपक्रमं ज्ञात्वा करकण्डूपिताजनङ्गमा स्व कालत्र पुत्रयुक्त स्तन्देश विहाय अने श्रत् स कुटम्ब
मजनङ्गम चितितलक्रामन् कञ्चनपुरञ्जगाम तत्र अपुत्रे नृपे मृते सचिवैरधि वासितसुरग करकण्डू दृष्ट्वा हेपारव क्ततवान् त सलक्षण दृष्ट्वा नगर
लोक जय जयारवञ्चक्रु अवादितान्यपि वाद्यानि स्वय निनदु स्वय कृत्र शिरसिस्थित ततो मालैरपि नवीनानि वस्त्राणि परिधाय सकरकण्डूस्त
अथ आरुरोह यावद्वरलीकै परमप्रमोदेन स पुरान्त प्रवेग्यते तावद्विप्रास्त स्त्रै च्छोयमिति कृत्वा नमे निरे तदा क्रुड स शिशुस्त वशदण्ड रत्नमिव
करे जयाह अधिष्ठाट देवैर्व्योम्नि इति घट इमराजान मवगणयिष्यति तस्य मूर्द्धि असोदण्ड पतियति इत्युक्त्वा सुरास्तच्छिरसि पुण्यदृष्टिञ्चक्र भीता
सन्ती विप्रा तस्य सुतिकृत्वा वारम्बार मागोवाद मुचरन्ति करकण्डूरेव मुवाच अहो ब्राह्मणा एते भवद्विद्याण्डाला गर्हितस्तत सर्वेप्यमीवाटधा
वा स्तयायाण्डाला सस्कारैर्ब्राह्मणा काया सस्कारादेव ब्राह्मणो जायते न तु जाल्या कश्चिद्ब्राह्मणो भवतीति भवदागम वचनात् अयति ब्राह्मणा
प्रकामभीतास्तवरवाटधानवा स्तव्या याण्डाला ब्राह्मणी कृता १ अत्युत्सवेन काञ्चनपुरे प्रवेशित सकरकण्डूरुमात्यै र्दृपपट्टेऽभिपिक्त क्रमान्तहा प्रता
पोऽभूत् अन्यदा सव स प्रतिवादी विप्रस्त भूप नियम्य ग्रामाभिलापुक सन् करकण्डू नृपपर्यदिप्राप्त करकण्डू नीपलक्ष्य तस्य विप्रस्योक्त तवयदिष्ट तल
द्यय ब्राह्मणेनीक्त मद्गृह चम्पाया वृत्तते तेन तद्विषयग्राम एकमहमीहे अथ करकण्डू नृपतिचपापूरुनाथस्य , दधिवाहन भूपते अस्मै द्विजाय त्वद्विषय
ग्राममेक देहोति आत्मा प्राहिणीत् आत्राहारिण करकण्डू नृपस्य दूत विस्मितचित्त क्रुडय चम्पापति दधिवाहन प्राह अरे स न्नेच्छेत्वाल स नृगतुल्य
करकण्डू सिंहतुङ्गेन मयासह विरुध्यते परवस्वभिलाप भवस्य पातकस्य तव स्वामिन शुचि मत्खड्गतीर्थज्ञान दास्यति एवमुक्त्वा दधिवाहो न तिरस्वत
सदूतन्तत्र गत्वा करकण्डू नृपाय यथार्थमवदत् करकण्डू नृपोपि प्रकाम क्रुड स्वसेन्यपरिहृत अम्पापुरसपीपे समायात दधिवाहो नोपि पुरोदुर्गं सन्नेष्ट २

स्वयं बहिर्निस्सार उभयोः सैन्यसञ्जीभृतेऽयावता योद्धुं लग्ने तावत्साध्वी तत्रागत्य करकण्डूवृपतिं प्रति एवमूचे अही करकण्डूवृप त्वया अनुचितं पिशा
सह युद्धं किमार्थं करकण्डूवृपः प्राह हे महासति कथमेष दधिवाहनीस्वाकं पिता साध्वी स्वस्वरूपमखिलमूचे आर्यां मातर दधिवाहनञ्च पितरं मत्वा
करकण्डूवृपो जहर्ष तथापि करकण्डूवृपोभिमानात् स्वपितरं दधिवाहनं नतुं नोत्सहते तदा साध्वप्रपि दधिवाहनसमीपे गताः दधिवाहन भृत्यैरुप
लक्षिता दधिवाहनभूपाय राज्ञी साध्वीरूपासमागतति वर्द्धापनिका दत्ता अथ दधिवाहन वृपोपि तां साध्वीं ननाम गर्भहृत्तान्तं पप्रच्छ साध्वी जज्ञे
सीयं ते तनयः येन सह त्वया युद्धमारब्धं अथ दधिवाहनवृपः प्रीतात्मा पादचारी करकण्डूवृपं प्रति गत्वा वत्स उत्तिष्ठेलुक्ता तं उत्थाप्य आश्लिष्य च
शिरसि अजिघ्रत् हर्षांशु जलसहितै स्तोर्धजलैः पुलो यं राज्यद्वयेपि दधिवाहनेनाभियुक्तः दधिवाहनः कर्म विनाशाय स्वयं दीचां गृहीतवान् कारकण्डू
वृपो राज्यद्वयं पालयामास चम्पायामिव स्ववासमकरोत् तस्य गोकुलानि दृष्टानि आसन् संस्थान आकृतिवर्णविशिष्टानि गोकुलानि कीटिसख्यानि तेन
मेलितानि सतानि निरन्तर पश्यन् प्रकामं प्रमोद लभते अन्येषुः स्फाटिकसमान एको गोवत्स स्तेन गोकुलमध्ये दृष्टः अथ करकण्डूवृपान्तदुग्धपानैः प्रत्यहं
पोषणीय इति गोपालान् स आदिष्टवान् अन्यदा समासे पुंष्टतनुर्बलशाली घनघर्घरशब्देन अन्यद्वयभान् त्रासयन् भूपतिना दृष्टः तथापि भूपते स्वस्मिन्
दृष्टे प्रीतिरेव बभूव साम्राज्यकार्यकरण्व्यग्री भूपति कतिचिद्वर्षाणि यावद्गोकुलेनायातः अन्यदा तद्दर्शनोत्कण्ठः सभूपतिस्तत्र समायातः स दृष्टः क्व इति
गोपालान् भूपतिः पप्रच्छ गोपालैर्जराजीर्णं पतित दृशनी हीनवली वत्सैर्घटितदेहः कृशाङ्गः सदर्शितः तं तथाविधं दृष्ट्वा भवदशां विषमां विचारयन्
करकण्डू राजा एव चिन्तयति यथाऽसौ द्वयमः पूर्वावस्थां मनोहरां परित्यज्य इमां वृद्धावस्थां प्राप्तः तथा सर्वोपि ससारी संसारी नवां नवामवस्था माप्नोति
मोक्षे चैव एकावस्था मोक्षसु जिन धर्मादेव प्राप्यते अतो जिनधर्ममेव सम्यगाराधयामीति परं वैराग्य प्राप्तः करकण्डू राजा स्वयमेव प्राग्भव संस्कारी

दयात् प्रतिबुद्ध सद्य धासनदेव्यर्पितलिङ्गमृणवद्राज्य परित्यज्यप्रब्रज्यामहेतुत्त च श्वेत सुजात सुविभक्त्यद्ग गोटागणेष्वीक्ष्य ह्यप जरात् ऋदि च वृद्धिश्च
 समीक्ष्य वीधान् कलिङ्गराजपि रवाप धर्म १ इति करकडू चरित्र समाप्त इदानी करकडू राजा प्रतिबुद्ध स्तदानीमेव द्विसुख राजा प्रतिबुद्ध स्ततो
 द्विसुखचरित्र प्रीचते काम्पिल्यपुरे जयवर्ध राजा तस्य गुणमालाप्रियास्ति अन्येषु जयवर्मा राजा स्वपतीनिव माह अद्भुत आस्थानमण्डप कुरुतयाशुभ्रैस्ते
 भूमिपूजा पुरस्सर भूमिभाग परीक्ष्य सुसुहृते खात विराचत तत्रखाते पञ्चमदिवसे नानामणि मण्डित खमणिरिव प्रज्वलन् सुकुटो दृष्ट तैर्विज्रप्तो राजा
 सद्य भूमितस्त सुकुट जग्राह विचित्रवादित्रुनिर्घोष पूर्व महतीलखेन त सुकुट स्वयहे प्रावेगयत् वस्त्रायै सत्कृता गिल्पिनी विमानसदृशा अस्थान
 मण्डप सद्यत्क्रु चित्रकरै स्तत् सद्यएव विचित्रित भूय शुद्धमुहूर्ते त सुकुट मस्तके निधाय तस्मिन्नास्थानमण्डपेषु सिंहासणे निधियेण तस्मिन् मण्डुटे
 मूढस्थिते सति राज्ञो मुखद्वय दृश्यते तदनुसराना लीके द्विसुखतया विख्यात अर्धेय सुकुटकथा अवन्तीयिन चण्डप्रद्योतिन शुता खदूत प्रहित दृतीपि
 तत्र गत्वा द्विसुख प्रतिएव मवादीत् राजन् तव सुकुटमिम चण्डप्रद्योत भूपति मर्गयति यदि तव जीवितेन कार्यं तदा तस्याय प्रैथ एव दूतवच
 शुत्वा द्विसुखनेन्द्र प्रोवाच रे दूत तव स्वामिन मम सुकुटग्रहणाभिलाष स्वयन्नु हारणायैव जातोस्ति त्व तत्र गत्वा सखामिन द्रूया शिवा देवी
 राज्ञी १ अननगिरि नामा हस्ती २ अग्निभीरुनामा रथ ३ लोहजङ्घनामा दूतयेति ४ वसुचतुष्टय ममार्थितामित्युक्ता द्विसुखनृपेण स दूतो गले
 धृत्वा निष्कासित उज्जयिनीं गत्वा चण्डप्रद्योताय तद्वचो निवेदयामास क्व, कीथ चण्डप्रद्योत त्वपतिर्गणनायक तुरगगजेन्द्ररथपदाति दलपरिवेष्टित
 स्थाने स्थाने प्राभृतपूर्वकमथ्यागतानेकराजसै न्यवर्द्धमानवल पञ्चालदेयसीम प्राप द्विगुणोक्ताहोद्विसुखटप ते सप्तसुते सेनिकलजैथ परिहृतचण्डप्रद्योत
 स सुवमगात् तयोर्वीर स धामी बभूव सुकुटप्रभावात् द्विसुख राज्ञस्तदाद्विगुण भुजवल प्रससार क्षणेन सकलमपि चण्डप्रद्योतवल तेन भग्न नष्ट च चण्ड

प्रथीतं रथान्निपाल्य वद्वा च स्वपुरं निन्देद्विमुखं नृपसूतं स्वावासि भयरीत्या रञ्जितवान् अन्यदा चण्डप्रथीतेन प्रकाम स्वरूपां सलावण्यां कन्यां दृष्ट्वा यामिकानामिवमुक्तां अस्य द्विसुखराजः कति अपत्यानि सन्ति इयं अंगजाकस्य यामिका जसुः अस्य राज्ञी वनमालापत्नी सप्तसुतान् सुपुत्रे अन्यदा तथा धिन्तितं मया सप्तपुत्रा जाताः लालिताश्च पुत्रो तुनैकापि जातेति मन्मनीरथपूतं चै सामदनयचमारराध अन्यदा सा कल्पद्रुमकलिकां स्वप्ने ददर्श क्रमेणैसां सुपुत्रे यच्चोपयाचितं दत्त्वाऽस्या मदनमञ्जरीति नाम कृतं साम्प्रतं सर्वलोक चमत्कारकारी यौवनागमि इयं जातेति यामिकावचनं श्रुत्वा अप्सरी धिकं तद्रूपं च दृष्ट्वा कामार्त्तं चण्डप्रथीतश्चिन्तयति इयं चेन्मम पत्नी स्यात्तदा मम जीवितं सफलं स्यात् राज्यभ्रंशोपि मे कल्याणाय जातः यदियं दृष्ट्वा चेदद्विमुख राजा इनां मद्य दत्ते तदा अहमस्य यावज्जीवं सेवको भवामि चण्डप्रथीतस्येष्टशः परिणाम स्याद्ययिकैज्जाला द्विमुखराज्ञे कथितः राजा ज्ञया यामिकै चण्डप्रथीतः सभायामानीतः द्विसुखराज्ञाऽन्युत्थानं कृत्वा चण्डप्रथीतः स्वार्धासने निसेवितः प्रांजलीभूय एवं बभाषे मत्प्राणास्तववशगा सन्ति मच्छियस्त्वदायत्ता सन्ति त्व मम प्रभुरसि अहमतः परं सदैव तव सेवकीस्मि अथ तद्भाववेत्ताद्विसुखराजा चण्डप्रथीताय तदैव निजां पुत्रीं कृदौ ज्योतिर्विधिः सुसुहृत्ते दत्ते चण्डप्रथीत नृप्यो द्विसुखराजपुत्रीं परिणीतवान् करमीचावसरे च तस्मै घनं द्रव्यं दत्तमवन्तीदिशं च दत्तवान् कन्या सहितं चण्ड प्रथीत स्वदेशे द्विसुखो विसर्जितवान् अन्यदा द्विसुखनरेन्द्रस्य पुरे लोकेरिन्द्रस्तम्भोऽनुतः कृतः पूजितश्च द्विसुखनृपोऽपितं भृश पूजितवान् तस्मिन्महे व्यतीते अन्येद्यु स्तं इन्द्रस्तम्भं विलुप्तशोभं अमिथ्यान्त पतित द्विसुखराजा ददर्श एवं च चिन्तितवान् जनैर्यं पूजितो मणिमाला तुसुजादिभिश्च शृङ्गा रितः सीयमिन्द्रस्तम्भः साम्प्रतमी दृश्यो जातः यथायं स्तम्भः पूर्वापरावस्थाभेदमाप्तः तथा सर्वोपिसंसारीभिर्नाना भिन्नामवस्थां प्राप्नोति अवस्था भेदकारणे रागद्वेषाविव तत्प्रलयसु समताश्रयणाद्भवति समताचममता परित्यागाद्भवति ममतापरित्यागासु संयमस्त्रिना न भवती तिवैराग्यमापन्नः शासन देवता

षेण राज्ञः समुद्रदत्ता भार्यासुती सागर देवदत्ताभिधानौ धार्मिकौ जातौ अन्यदातौ द्वादशतीर्थं कारस्य दृढसुव्रतस्य बहु व्यतिक्रान्ति तीर्थेषु गुरु समीपे दीक्षां अष्टह्वीतां तृतीये दिवसेतौ द्वावपि विद्युत्पतितेन सृत्वा शुक्र देवलीके महर्षिकी देवी अभूतां अन्य द्युस्ती देवी अत्रैव भरते श्रीनिमि जिनिखरं इति पृष्ठवन्तौ भगवान् नौ अद्यापि कियान् संसार स्थिति स भगवान्प्राह युवयोर्मध्ये एकोऽत्रैव भरते मिथलापुरीं विजयसेन भूपतेः पद्मरथाख्यः पुत्री भावी एकलु सुदर्शनपुरे युगबाहु पुत्री मदनरेखा कुञ्चिसम्भूती नमि नामा भविष्यति तस्मिन् भवेद्वावपि युवांशिव पदं प्राप्स्यथ एवं नमिजि न वचनं निशम्य निजमायुः पूर्णं विधाय एकी मिथिलापुरि पद्मरथो वृषोऽभवत् तेन पद्मरथेन अखापहृतेन तस्मिन् वने समायातेन हे महाशुभावे स पुत्री दृष्टी गृहीतश्च मिथिलायां नीत्वा स्वपत्नैः समर्पितः तज्जन्महीच्छ्वी महान् विहितः अत्रान्तरे तत्र नन्दीश्वर प्रासादेन्तरिचादिकं विमानमततारतम्यादिकी दिव्यविभूषाधर सुरीनिर्गल्यमदन रेखान्ति. प्रदक्षिणी कृत्य प्रथमं प्रणनाम पद्यान्मुनिं प्रणम्य अग्रे निविष्टः सुरः मणिरथ विद्याधरेन्द्रेण विनय विपूर्यां सकारणं पृष्टः ससुर प्राह अह पूर्वभवयुगबाहुर्मणि रथनान्ना ब्रह्मज्ञानिहत. अनयाममाराधनाऽनशनादि कृत्यानि कारितानि तत् प्रभावादहमी दृश्योदीव्रह्मदेवलीके देवोजात ततो धर्माचार्यत्वादहमिमां प्रथमं प्रणत एव खेचरं प्रतिबोध स सुरीमदनरेखां जगौ हे सति त्वं समादिश किल्ले प्रिय कुर्वसाप्राह मममुक्तिरेव प्रिया नान्यत्किमपि तथापि सुताननं द्रष्टुस्तु काम्नान्त्वमितो मिथिला पुरीनय तत्राहन्निर्हृतात्मनापरलीकहितं करि थ्यामि इत्युक्त वतीतां देवी मिथिला पुरीनिनाय तत्र प्रथमं मदनरेखाञ्जिन चैल्यानि नत्वा अमणी नाशुपाश्रये जगाम वन्दित्वा पुरीनिविष्टान्तां प्रव वर्त्तिना एवं प्रति बोधयामास मूढचेतसोजनाऽर्माहिनाभवच्चय मिच्छन्तोपि मीह वशेन पुत्रादिषु स्त्रेहं कुर्वन्ति संसारं हिमात् पितृबन्धु भगिनी दयिता वधूप्रियतम पुत्रादीनां अनन्तश्च सम्बन्धो जाताः लक्ष्मी कुटुम्ब देहादिकं सर्वं विनश्वरं धर्मएवैकः शाश्वत इत्यादि साध्वीवाक्यैः प्रतिबुद्धा

सा सती देवेन पुत्रदर्शनार्थं प्रार्थिता एवमाह भवद्भिः कारणं मे म पूरेण ममाल । अत परन्तु साध्वीचरणा एव शरणं मिल्युक्ता साध्वी सनीपे साप्रब्रज्या जग्राह देवस्ता यन्दिवा स्वस्थाने जगाम पद्मरथस्य गृहे यथायम्बाली वर्द्धते तथा २ तस्यान्धे राजानोऽनमत् तत पद्मरथ राजातस्य बालस्य नमिरिति नाम कृतवान् हवि ब्रजतस्तस्य बालस्य कलाचार्यसेवनात् सर्वा कला समायाता सकललोक लोचनहर शीवनमथस्या यात पित्रा च अष्टाधिक सहस्र राजकन्या पाणियहण कारयितं पद्मरथोऽस्मै राज्यं दत्वा स्वयं तपस्या गृहीत्वा केवलज्ञानं प्राप्यभीचद्रुतवान् नमिराजा प्राज्य राज्यपालया मास न्यायेन यय पात्रमभूत् अथ पूर्व युगवाहु हत्वा मणिरथवृष सिद्धमनोरथ स्वधाम जगाम तत्र तदानीमेष प्रबुद्ध सर्पेण दष्ट सुय नरक जगाम ह्योर्मात्तो रुर्देहिकां कृत्वा मन्त्रिभिर्युगवाहु पुत्रयन्द्र युगराज्येऽभिषिक्तं सन्याये न राज्यं पालयति अन्यदा नमिराज्ञो धवलकात्तर्गजो मदीकृतं भालान् स्तम्भमुनमून्य अपरान् हस्तिनीऽश्वा मानुषान् चन्द्रयथा नृप नगरसीम्नि समायात चन्द्रयथा वृषस्तमागत शुला समन्ताल्लु भट्टं वेदयित्वा स्वयं वग्रीकृत्य च जग्राह नमिराजाष्ट भिदिनैस्त्वा वार्तां शुला नमियन्द्र दृशोन्तिके दूतं प्रै पितवान् दूतोपि तत्र गत्वा धवलकरिणं मार्गयामास कुपितयन्द्रयथा दूतद्वले धत्वा नगराद्दक्षिर्निष्कासयामास दूतोपिनमे पुरं गत्वा स्वापमानं जगो कुपितो नमिराजाऽतुलसैन्यैर्वेष्टितोऽच्छिन्नं प्रयागे सुदर्शनपुरसमीपे समायात चन्द्रयथा भूपति स्वसैन्यवेष्टितो यावदभिसुखं युषार्थंश्चलितं तावदपगं कुनैर्वारितो मन्त्रिभिरिव मूचे स्वामिन् कीदृ सञ्जीकृत्य तव साम्प्रतं पुरान्तरवस्थात् युक्तं कालविलम्बेन एतल्काय कर्त्तव्यं ततश्चन्द्रयथा कीदृशतन्नीभिर्जलाद्युपस्करैश्च सञ्जी कृतवान् नमिस्त कीदृ स्वसैन्यैर्वेष्टयत् अथ स्ये सैनिके सह जर्षस्थानां सैनिकानां महानं सयामं प्रवहन्तमि कीदृशं विविधानुपायानं करोति चन्द्रयथा नृपन्तु कीदृशं विविधानं उपायानं करोति अग्निं अक्सरे तयोर्माता साध्वी मदनरेखा प्रवर्त्तिनी अनुज्ञाप्य तत्सयामं वारणाय प्रथमं नमिराज

सैन्ये समायात् नमि रपितां साध्वी न नाम आसने चीपविश्य नमे पुरः सासन्धी एवं वाचं विस्वारयामास अगन्तदुःखैक भाजनेस्मिन् संसारे दृभवं प्राथपपयैस्व' किं सुहृसे राजन् तव बन्धुना चन्द्रयथा सा स्वयमागती हस्तीचिद्रुहीत स्खहितेन समं किं युष्मं करोषि क्रुद्धस्तं न किञ्चिद्वेत्सि यदुक्तं लीभी पश्येन्नप्राप्तिं कामिनीं कासुकस्तथा भ्रमं पश्येदयोन्मत्तोन किञ्चिच्चक्रुधाकुलः १ इदं साध्वी वचीनिशम्य नमिश्चिन्तयामास अयञ्चन्द्रयथा युगबाहु भवोस्ति अहन्तु पद्मरथपुत्रीस्मि इयं साध्वी सयवादिनी सती कथं ममचनेन समं भ्राट्वलं वदतीति विन्यश्य साध्वी प्रत्येवं भाषतेस्म हे पूज्ये असौक्य अहंक मित्र कुलसम्भवयो मदेतयो कथं भ्राट्वलं वदसीति नमिना उक्ते साध्वीप्राह वत्स यौवन ऐख्यंभवं मदं मुक्ता यदि ऋणीषि तदा सकलं स्वरूपं कथ्यते अथ श्रोतु मुलकाय नमि नृपाय सर्वं पूर्वस्वरूपं साध्वी जगाद पुनरेव बभापि सुदर्शनपुरस्वामी युगबाहुस्ववास्य पिता अहं मदनरेखा तवमार्तति पद्म रथसु तवपालक' पितेति अनेन भ्रात्रासमं माविरोधं कुरु बुद्धा स्वहितमिति साध्वीप्रीक्तं युगबाहु नामाङ्कित करमुद्रा दर्शनतः सर्वं नमिः सत्यं विवे दतां साध्वीं प्रकामश्चित्तोक्तासेन स्वमातरं मत्वा विशेषान्नमिः प्रणनाम उवाच च मातर्यत् त्वया प्रीक्तं तत्सर्वं तथमेव नातकाचिद्विचारणा अस्मि मिय करमुद्रा युगबाहुसु तलं ज्ञापयति अयञ्चन्द्रयामिः ज्येष्ठभ्राता भवत्येव परंलोकः कथं प्रत्याज्यते लघुभ्राट् वास्तव्यती ज्येष्ठसेत् सन्धुखमायाति तदाह मुचितं विनयं कुर्वन् श्रीभामसुहृदामि एवं नमि नृपीक्त माकर्ण' सा साध्वी दुर्गाद्वार बर्त्मना प्रविश्य राजसीधे जगाम चन्द्रयथा भृपसुताम कस्मा दागता मुपलब्ध स्वमातरं साध्वी विशेषादभ्युत्थाय नतवान् उचितासनीपविष्टान्तां साध्वी हतान्तं पृष्ठवान् साध्वी सकलहतान्तं नमिराज मिलनं यावत् कथयामास चन्द्रयथा नृपस्त नमिं निजलघुभ्रातरं मत्वा सभालोकान् प्रत्येकसुयाच सुलभा सन्ति सर्वेषां पुत्रपद्मप्रादयः शुभा. दुर्लभः सोदरो बन्धुर्लभ्यते सुकतैर्यदि १ इत्युक्त्वा चन्द्रयथा नृपीपि पुराब्रह्मिर्निर्गतः नमि रपित क्येष्ठभ्रातरं भग्या गच्छन्तं दृष्ट्वा सिंहासना दुत्याथ भृतलमिल

चिहरा प्रथनाम चन्द्रयगा नृपोपि स्वकाराभ्यां भूतला दुत्याप्य भ्रममालि लिङ्ग तुल्याकारौ तुल्यवर्णौ तौ एक माटपिष्टसम्भूतत्वेन तदा परमप्रीतिपद
जातो लोके सहीदरी घ्रातो चन्द्रयगा नृपसु तदानीमिव न मिवन्विसुदर्शनपुर राज्य ददौ स्वय सयामाङ्गण मध्ये दीचा सलौ क्रमेण राज्यद्वय
पालयन्मि चितो प्रषण्डाञ्चा जप्ते अयदानमिर्वपुपि दाषल्वरीजात पूर्वं कर्मदोषिण तस्य परमासिकी पीडामहती उत्पन्ना निद्रामपि न लेभे अन्त
पुरो नूपरगन्धापि कर्णशूलाय आसन् नमि राप्ती दाषल्वरयान्तये स्वयं चन्दन घर्षयन्तीनां अन्तपुरीणा बलयशब्दा रोमसुभल प्राया बभूवु तनता
भिर्बलयानि समस्तान्युत्तारितानि एकैक मङ्गलाय रचित तदानीं गन्धाश्रवणेन नमिना कथिन्निकटस्य सेवक पृष्ट कथमधुना कङ्कणशब्दान
श्रूयते तेनोक्त स्वामिन् भवत् पीडाकरत्वेनान्त पुरीभि कङ्कणान्युत्तारितानि एकैक मङ्गलाय रचितमितिनै कैक कङ्कणशब्दा श्रूयते परस्पर घर्षा
भावात् एय तद्वच श्रुत्वा प्रतिबुद्धी नमिरेव चिन्तयामास यथा सयोगत शुभा अशुभा शब्दा जायन्ते तथा रागादिकादीषा सयोगत एव भवन्ति
यद्यस्माद्रोगादह मुक्त स्यान्तदा सबसङ्ग विसुखदीचा गृह्णामि तस्येति ध्यायमानस्य राती सुखेन निद्रा समायाता निद्राया स्वप्नमेव दर्शं गजमा
रुह्य अह मन्दिर गिरिमारूढ प्रात प्रतिबुद्ध नीरोगीजात स एव व्यञ्चित यत् अम पर्वत कायहमदर्शं एव मूहापीड कुर्वतस्सस्य जातिस्मरण सुत्यत्र
नमिराजा पूर्वभव दर्शयं यदाह पूर्वभवे शुक्र कल्पे सुरोऽभवतदाहंल्लम्बाभिमिक करणाय अहमस्मिन् भिरौ अगम अथ कङ्कणदृष्टान्तेन एकल्व सुख
कारोति चिन्तयन् प्रत्येक बुद्धल प्राप्य प्रव्रजितो नमि तदाराज्य अन्त पुर एकपदेत्वजन्त नमि ब्राह्मणरूपेण शक्र समागल परोचितावाग् प्रथत
वाच शक्रपरीचा समये नमिराज सत्कं शक्रप्रथ नमि राजर्षि उत्तररूप उत्तराथयनांतर्नवममध्यन जात इति नमिचरित सपूर्णम् । अथ यदाती नमि
प्रतिबुद्ध स्तदानीमिव नगति नृप प्रतिबुद्ध अथ नगतिनृप चरित्र कथन्ते अस्मिन् भर्त्सि पृङ्खडंन नाम नगर अस्ति । तत्र सिहरयो राजा वर्त्तते

गन्धारदेशाधिपति स्तस्य राज्ञी अन्यदा ही अश्वी प्राश्रुते समायातौ तयो परिचार्थं एकस्मिन् तुरङ्गे राजा अधिरूढ. एकस्मिन्चतुरङ्गे अपरी नरआरुढः
 तेन सममपरैश्च अश्ववारशतैः परिहृती भूपतिर्वाञ्छामिकायां गतः परीचां कुर्वता च राज्ञा अश्वः प्रधानगत्या विसुक्त. सोऽपि बलवता वेगेन निर्ययी ।
 यथा यथा राजा बलां आकर्षयति तथा स वायुवेगा जात पुरोपवनानि अतिक्रम्य सी अश्वी राजानं लावा महाटव्यां प्रविष्ट. आन्तेन भूयेन तदा
 अस्या बलां विमुक्ता तदा राजा एवं विपरीता अश्वं मन्यतेस्म. तस्मादुत्तीर्थ राजा भूमिचरो बभूव तच्च पानीयं पाययित्वा वृजे बबन्ध स्वप्राणवृत्तिं फलै
 विदधे तत एक नगमारुह्य कचिप्रदेशे सदरमेकं महावासं ददर्श राजा कर्तृहलात्तस्मिन्नावासि प्रविष्टः तत्र एकाकिनीं पवित्रगातां कन्या भूपति ईष्ट
 वान् सा राजानं आगच्छन्तं दृष्ट्वा भूरिहर्षां आसनं ददौ राजा जचे का त्वं कीयमद्रिनिवास किमिदं रम्यं धाम सा प्राह भूपालप्रथमं मत्पा
 शियहणं कुरु साम्प्रतं सिंहविशिष्टं लग्नमस्ति पथात्सर्ववृत्तान्तमहं कथयिष्यामि तथेयुक्ते नरपतिस्तत्र तथा समं पूजितं जिनविश्वप्रणस्य उद्वाहमाष क्वं अलं
 चकार भूपतिना परिणीता सा कन्या विविधान् भोगोपचारान् चकार विचित्राश्च भक्तौ दर्शयामास अक्सरे राजा तां प्रत्येवमाह विमलः पुष्टैरावयोः
 सम्बन्धी जातोस्ति परलं स्वहृत्तान्तं वद कासि त्वं कथमत्रै काकिनी वससिस्वभर्त्वा एवमुक्ते सा स्वसम्बन्धं मूलती वक्तु मारेभि चितिप्रतिष्ठे नगरे जितशत्रु,
 तृपीऽस्ति सी अन्यदा परदेशायात चरानेवाह अही मद्राज्ये किञ्चित् ग्यूनमस्ति ते प्राहुः सर्वमस्ति तव राज्ये परं विचित्र चित्तामसभा नास्ति
 ततो नृपति चित्तकरान् आकार्यसमागृहभित्तिभागा सर्वेषां समाचितयितुं दत्ताः सर्वेपि चित्तकराः स्वस्वभित्तिः भागान् गाढीयमेन चित्त्रियन्ते तत्रै को
 वृद्धचित्तकः सकलचित्त कलाविदी स्वभित्तिभागं चिन्तियितुमारब्धवान् सहायशून्यस्य तस्य निरन्तरं गृहहत. कनकमञ्जरी रूपयती पुत्री भक्तं तत्वानयति
 अन्यदा सा स्वगृहायभक्त मानयन्ती राजमार्गे गच्छन्ति अश्ववारमेकं ददर्श स च बालस्त्री अश्ववारमेकं अपि राजमार्गे त्वरितमश्ववाहयत्

लीकास्तु तद्भूयादितस्ततो नष्टा साऽपि क्वचिद्वा स्थिता पद्यात् तत्रायाता भक्तपात्रहस्ता ता आगता वीच्य स ह्येव चित्तकार पुरयोत्सर्गार्थं बह्विजं
 गाम एकत्र आहार पात्र माच्छादयित्वा सा क्वचिद्विदिदेशे वर्णकैर्मयूरपिच्छे मालिलेख अथ तत्र राजा सम्प्राप्त भित्तिचित्राणि पश्यन् कुमार्यालेखिते
 क्वेकिपिच्छे साघात्पीच्छे मयमान कर चिन्नेप भित्त्वास्फालनतो नखभङ्गेन विलचीभूत त नृप सामान्य पुरपमेव जाणन्ती सा चित्रकरपुत्री एव माह
 चतुर्थं पादस्त्व मया लब्ध नृप प्राह पूर्वं त्वया केन त्रयपादा लब्धा साम्प्रतमह काय त्वया चतुर्थं पादो लब्ध सा प्राह श्रूयता यो अथ महाराज मार्गे
 लरित मग्न वाहयन् बालस्त्री प्रमुखजनाना आसमुत्वादन दृष्ट स मूर्ख्यले प्रथम पादो दृष्ट ॥१॥ द्वितीय पाद इती राजाय कुटम्बलीकसहितै
 यित्रकरैस्सम भित्तिभाग जरातुरस्य एकस्य मम पितुर्ददौ तृतीय पादौ मम पिता यो नित्य भक्ते समायाते बह्वियाति चतुर्थं सुत्व योऽस्मिन् भुक्ति
 देशे मन्त्रिखिते मयूरपिच्छे कर चिन्नेप परमेत्र त्वया निविस्रष्ट यदत्र सुधा दृष्टे भित्तिदेशे निराधारा मयूरपिच्छस्थिति एव तस्या यच्चत्तुरी
 रञ्जितो राजा तत्पाणिग्रहण बाब्धककसन् तस्या पितु समीपे स्वमन्त्रिण प्रेपयित्वा तां प्रार्थित्वा तां दत्त्वा सुमुहूर्त्ते परणीता राज्ञ प्रकाम
 प्रेमपात्र बभूव सर्वान्त परोपमुखा जाता विविधानि द्रूयानि रत्नाभरणानिच आस सादएकदा तया मदनभिधानाद्य दासी रहसी एव बभापे भद्र यदा
 मदनगाती भूपतिस्त्वपिति तदा त्वया अह एव प्रष्टव्या स्वामिनो कथा कथयेति तयोक्त अवश्य महन्तदानी अह प्रश्रयिये अत्ररातिसमये राजा तत्पृष्टहे
 समायात तां भुक्त्वा रतयान्तो यावत् स्वपिति तापता दास्या इय दृष्टा सामिनी कथा कथयराज्ञीप्राह यावद्राजा निद्रा नाप्नोति तावन्मीन कुरु पथात्
 त्वदपे यथेष्ट कथुकथयिथामि राजाऽपिता कथां श्रोतुकाम कपटनिद्रासुषाप पुनर्दास्यासाम्प्रत कथा कथयेति दृष्टा चित्रकरपुत्री कथा कथयितु भारभे
 मधुपुरे वरुणश्रेष्ठो एक करप्रमाण देवकुल अकारयत् चतु करप्रमाणो देवस्तत्र स्थापित सतत्कै देव चिन्तितार्थं दायको बभुव अथ दासीप्राह एक इस्ते

देवकुले षट्कः प्रमाणोदेवः कथं मात इति तथा पृष्टे सा राज्ञी प्राह इमं रहस्यं तव कल्पे रातौ कथयिष्यामि अथतु निद्रा समायातीति प्रोचसा राज्ञी राजशय्या पुरी भूमौसुप्ता सादासीतां दृष्ट्वा स्वगृहे गता राजा मनस्यैवं चिन्तयामास कल्प्य रात्रावपीदं कथानकं मया श्रोतव्यमिति निश्चित्य राजा सुप्तः सुखनिद्रा सवाप द्वितीयदिनेऽपि राजा तस्या एव गृहे रात्रौ समायातः रात्रार्धं यावत् सुखं भेजे पद्याद्रत शान्तौ राजा पूर्वं कथानकं श्रवणाय कपटनिद्रयासुप्तः दासीप्राह स्वामिनी कल्प कथानकं रहस्यं वद राज्ञीप्राह एक हस्ते देवकुले चलारः करायस्य स चतु करो देवो नारायणादिवा स्वातस्थापित इत्यर्थं एका कथा १ अथ तृतीयदिने रात्रावपि राजा तथैव कपटनिद्रयासुप्तः दासी पुनः कथा मय कथयति तामाह सा प्राह बिन्ध्या चले पर्वते कोपि रक्ता शोकद्रुम प्रौढोऽस्ति तस्या घनानि पलाणि सन्ति परव्यायाना भवत् दासीप्राह पत्राहतस्य तस्य प्छाया कथं नजायते राज्ञीप्राह एतद्रहस्यस्तय कल्पे रात्रौ कथयिष्यामि अद्याह रतशान्ता निद्रासुख मनु भयिष्यामोत्युक्त्वा सुप्ता सा दासीतु स्वगृहे गता अपर रात्रौ राजा भोगान् भुङ्क्ता तथैव तत्र सुप्तः दासीप्राह स्वामिनी कल्प्य सत्कथा रहस्य कथनीयं राज्ञीप्राह तस्य हृदयस्य सूर्यातस्य मूर्ध्नि छाया नास्ति अथएव छायाऽस्तीत्यर्थं इति द्वितीय कथा २ अथ पुनस्तथैव रातौ नृपेसुप्ते दासी पृष्ट्वा राज्ञीप्राह कथा क्वचिन्निवेशे कश्चिदीष्टयरन् कदापि बब्बूलतरु ददर्श तदाभिमुखां ग्रीवां कुर्वन् अप्राप्तयाखः प्रकामं खिन्न स्तस्यैव बब्बूलतरीरपरि उत्सवं कृतवान् दासी राज्ञीं प्रपच्छ हे स्वामिनीकथमेतद् घटते स्व ग्रीवया बब्बूलतरुर्नप्राप्त तदुपरिकथमसौ उत्सर्गञ्चकार राज्ञीप्राह अथ निद्रासमायातीति नैवै तत्कथा रहस्यं कल्प्य रात्रावश्यं कथयिष्यामि इत्युक्त्वा सुप्ता कल्प्य दिनरात्रावपि तथैव नृपे सुप्ते दासी पृष्टां राज्ञी तत्कथा तत्त्वं प्राह स उष्ट्रः कूपमध्यस्थं तं बब्बूलतरु ददर्शति परमार्थं इति तृतीयकथा ३ पुनस्तथैव नृपे सुप्ते रातौ दासी पृष्ट्वा सा राज्ञी कथामाचख्यौ कश्चिन्नगरि काचिकल्प्या भुसं रूपयोभाग्यवती अस्ति तदर्थं तन्माह पिष्टभ्यां तयोनरा भाङ्गताः समायाता तदानीं

कविता इत्यादिमात्रं गता गता मम मीमांसिको परस्मैपदानां प्रसिद्धो भगवन्माहभूत् द्वितीयस्तत्रापि विप्रदाता तद्गमो परित्यागं प्रकारं ततोयम्
 पुत्रमागच्छन्, गतं नाम तद्दत्तेन तपितायां मित्रा कृता प्रथमं वृत्त्यं सद्योजीवयन् कृत्वाप्युत्थिता तान् शौचान् ददयं रात्रौ दार्शोप्राह दे मणि
 श्रुत्वात्प्रा कृत्वाया शौचरीण्ड दामोप्राह पृष्ट नवेदि त्रीषु मूषि रात्रौप्राह पृष्ट निद्राममायाति इत्युक्त्वा मुना द्वितीयदिन रात्रौ दासो पृष्टा या
 पश्यन् यदाप्या गन्त्रीयत् स पिता ग गद्गीतु स चम्पु, यो भग्नपिण्ड दत्ता स तस्यति इति इति षट्पुत्रं कथा ४ तस्यैव रात्रौ नृपे गुप्ते
 दामो पृष्टा रात्रौ प्राह अयित नृप पश्यन्वो दिव्यममङ्गार परं मग्न भूमिगृह्णन् नोकात् सुवर्णकारे अत्रोपटत् तस्यैव सुवर्णकारं सन्त्या
 पतितां प्रातःप्रातः रात्रौप्राह दे मगो क्षेत्रं पत्तलानोक्तमहिते सुगन्तभूमिगृहे यामिनो मृग कथं प्रातः प्राह नाह वेदि त्वमेव मूषि द्वाप्री
 प्राह पृष्ट मीमांसं निद्रा ममागतोऽनुक्त्वा सुता द्वितीय दिनरात्रौ दामो पृष्टा सा प्राह स सुवर्णकारो रात्रान्योस्तीति परस्मैर्च इति पश्यमी
 कृता १११ पुत्रोऽप्यत्र रात्रौ पुत्रे नृपे दामो पृष्टा सा प्राह केनापि रात्रा हो मनित्रयो निद्रिद्रपेत्वा पितो समुद्रमध्ये प्रशशितो जापि तट
 माऽटोमम इतिपिषरेत् पश्यीता उवाच तो ह्येन पृष्टो भो युवयोऽयं चित्तयो कतमो दिवसोयं तयो मध्ये एक प्राह पृष्ट पृष्ट पृष्टो दिवस
 रात्रौ प्राह ४ मणि तेन चतुर्या दिवस कथं प्रातः दामोप्राह पृष्ट नवेदि त्व मेव मूषि रात्रौ तु पृष्ट साम्प्रत निद्रा समायातीत्युक्त्वा सुता
 द्वितीय दिनरात्रौ दामो पृष्टा रात्रौ प्राह स चम्पुं दिवसका पुत्रपुत्र्युक्त्वा रो कसते इति परस्मैर्च इतिपटो कथा ११२ पुत्रान्यदादागो पृष्टा सा
 रात्रौ रात्रौ कृत्वा मापन्वो जापित लो सपत्नी इत्येव भवेत्त नित्रागभूपयानि पित्यां चिप्यमुद्राश्च दत्वा पानीक भूमौ सुमीष पश्यदा माप्यो सप्यो
 नित्राग्ने गता मंपयो न विषनं विनोऽन्ततां पेटो मुद्रात्पत्तं पनेकाभरयेति सप्यादेकं चार निष्काप्यं पत्तनयाय ददौ तनया च न्यपति चष्टे त ग्गाव

कार कियलालान्तरं सास्त्री तवायात तां पेटों दूरादवलीक्य एवं ज्ञातवती यदस्याः पित्या मध्यान्महारीऽनयाऽपहृत इति सा सपत्नी चौर्येण द्रुषया मास सपत्नी शपथान् करोतिर्निरापहारं न मन्ये तदासास्त्रीतां सपत्नीं दुष्टदेवपादस्पर्शं शपथाय आकर्षितवती तदानीं भयभ्रान्ता सपत्नीं तं हारन्त नयाष्टहादानोय तस्यै ददौ दासी प्राह हे स्वामिनी तथा कथं ज्ञाती हारापहारः राज्ञी प्राह कलत्र रालौ कथयिथामि इत्युक्त्वा सुगा द्वितीय दिनरालौ पुनस्तया पृष्टा राज्ञीप्राह सापिठौ स्वच्छकाचमयी अस्त्रोति परमार्थ इति सप्तमी कथा ॥७॥ कस्यचिद्राज कनया केनापि खेटेनाऽपहृता तस्य राज्ञः चत्वार पुरुषाः सन्ति एकोनिमित्त वेदी द्वितीयोरथ क्व लतीय सहस्रयोधा चतुर्थो वैद्य तत्र निमित्त वेदी दिसं विविद रथ क्लृप्त्वं रथ चकार खगा मिनं तं रथमारुह्य सहस्रयो धाबैद्यश्च विद्याधरपुरेगतौ सहस्रयोधी तं खेटं हतवान् हन्यमानेन तेन खेटेन कनया शिरच्छिन्नं तदैव तेन वैद्येन श्रीष धेन शिरः सजीजितं राजा तु पद्यादागतैभ्यः एभ्यश्चतुर्थं स्त्रां सुतां ददौ कन्या आह एषु मध्ये यी मया सह चिताप्रवेगं करिष्यति तमहं वरिष्यामि प्रीच सा कन्या सुरङ्गा द्वारि रचितायां प्रविष्टाः यस्तया सह तत्र प्रविष्ट स तां कन्यां जडवान् दासी प्राह हे स्वामिनी चतुर्षु मध्ये को अत्र प्रविष्ट राज्ञी प्राह अथ रतिश्रान्ताया मे निद्रा समायातीत्युक्त्वा सुगा द्वितीयवासरालौ पुनर्दासि प्रष्टाः राज्ञी प्राह निमित्तवेदि इय न मरिष्यति इति मत्वा चितां प्रविष्ट स्त्रमूढवान् इति परमार्थ इति अष्टमी कथा ।८। पुनरपि रालौ दासी पृष्टा राज्ञी कथामाह जयपुर नगरे सुन्दरनामा राजास्ति असौ अन्यदा विपरीताश्वेन एकएवाटव्यां नीतः वलां शिथिलोक्त्व अश्वत् स राजा उत्तीर्णः तमश्वं क्वचित्तरो बद्धा स्वयमितस्ततो भ्रमन् स कस्मिंश्चित् सरसि जलं पपी तत्रैकां सुरुपां तापसपुत्रां ददर्श तापसपुत्रा हुतः स तापसाश्रमं प्राप तत्र तापसास्त्रस्य शृशं सत्कारं चक्रुः सा कन्या तापसैर्दत्ता राज्ञा च परणीता तां नवीडां कन्यां गृह्णीत्वा तमेवाश्वमधिगृह्य पद्याद्वलितः अन्तरालमार्गं क्वचित् सरपाल्यां राजा सुप्तोपि जायन्नेवास्ति राज्ञा तु

रहसि एकाकिनौ कपाट युगलं दत्त्वा गृहान्तः प्रविश्य पूर्ववस्त्राणि प्राहृत्य आत्मानं एवं न निन्द आत्मानं तवायं पूर्ववेषः साम्प्रत राजप्रसादादुत्तरा
मवस्थां प्राप्य गर्वं माकुर्याः एव मालिनः शिखां ददतां दृष्ट्वा सपत्नी राजानं एवं विन्नपया मासुः स्वामिन्नेषा ह्युद्रा तवाहर्निशङ्काम्निं कुरुते यद्यस्माकं
वचनं न मन्यते तदा मध्याह्ने स्वयं तद्गृहे गत्वा तस्याः स्वरूपं विलोकय भूपतिस्तासां वाक्यं निशम्य मध्याह्ने तस्याः गृहेगतः सा तु तथैव पुर्वेन
पथ परिधाय आत्मन् शिखां ददती भूपतीना दृष्ट्वाः सर्वाणि तद्वचास्थपि श्रुतानि राजा तस्याः निगर्वतां ज्ञात्वा परमा प्रमोद मवापद्मं पट्टराज्ञी
चकार विशेषात्मनी विनीदं इयञ्चकार अन्यदा तन्नगरीद्यानि विमलाचार्याः समायाताः राज्ञासह नृप स्तद्वन्दनाय तत्रागतः नगरलोकीपि तद्वन्दनार्थं
गतः तदा विमलाचार्यी देशना चकार चित्रकरसुता नृपञ्च ह्यवपि प्रतिबुद्धी श्रावकधर्मं गृहीतवन्ती परस्परमना वाधया त्रिवर्गं साधनं कुरुतः
अनेद्युस्तया दत्त पञ्च परमेष्ठी श्रीनमस्कार. स पिता मृतो व्यस्त्रीजातः कालान्तरिणाऽहन्तं धर्ममाराध्यः चित्रकरसुता राज्ञी मृता देवीत्वं प्राप
ततश्चुत्वा वैताब्ध्ये तीरणाभिधि पुरे दृढयज्ञी खेचरस्य पुत्री कनकमाला बभूव प्राप्तयौवनां तामेकदा वीच्य कन्दर्पं तप्तौ वासव नामा
कश्चित् खेचरीपहृत्य अत्र महा अद्री सुक्ता खचित्ते प्रमोदं बभार अत्र विद्याबलात् समग्रां सामग्रीं विधाय स वासव विद्याधरो यावद्दन्धर्वीहाहाय
ससुप्तुकोऽभवत् तावत् कनकमालाग्रजसर्षतेजा स्तदनुपदिकस्तत्रायात स्तं वासवं विद्याधर मधिचिन्तवान् तौ ह्यवपि कोपाद् घोरं युषं कुर्वाणी परस्पर
प्रहारतौ मृतौ कनकमाला तु भृसं श्लाघ्यीकं चकार तदानीं कश्चिदेव स्तत्रागत्य कनकमाला प्रत्येवमवदत् पुत्नीश्लाघ्यीकं मुञ्च चित्तं स्वस्थं कुरु इदृश्य
एवसंसारीस्त्रि लं मम पूर्वभवपुञ्जी अभूः तिष्ठत्वमत्रैव गिरी अत्र स्थिताया स्तव सर्वं भव्यं भविष्यति एवं देववचनमाकर्ण्य कनकमाला चिन्तयामास को
असौ देवः कथमस्थानं पुञ्जी असौ मयि स्त्रिह्यति अहमप्यस्मिन् स्त्रिह्यामि यावदेवं कनकमाला चिन्तयति तावत्तज्जनको विद्याधरेन्द्रो दृढयज्ञिना साधा

वन् तत्रायात स्वपुत्र स्वणतेजसम्भिरोधन वासवविद्याधर च मृत दृष्टाक्षिद्रमस्तकाश्च ता पुत्रीदृष्ट्वाएव विचारयामास अयमुत इय सुता अय ग्रतु स्वयो
 प्यमो इदृगवस्था प्राप्ता स्वश्रोत्रम जगत्सर्वं दृश्यते एव ध्यायतस्तस्य दृढगङ्गिविद्याधरस्य जातिस्मरणमुत्पन्न असौ सासनदेवीप्रदत्तवैषयारण्यमणोयतिर
 भूत् प्रश्न सशस्त्रर स्तया पुत्र्या सह त श्रमण ननाम जीवन्ती ता पुत्री वीक्ष्य स चारण्यमण स्त व्यन्तर नमन्त अपृच्छत् किमिदमिन्द्रजाल मया दृष्ट
 व्यन्तर प्राह तव पुत्री गतु, मिथो निर्युध्य मृतो इयच कन्या जीवन्त्यपि मया तव मृता दर्शिता मुनिप्राह कथ त्वया मृता कृता सव्यन्तर स्मृत्वा एवमाह
 हे मुनिना यक एतत् यात्तां मृतु चिति प्रविष्टवृत्तेर्जितगती रिय प्राग्भवे पत्नी अभवत् चित्वाङ्गदनाश्च दितकृती ममैषा पुत्री अभवत् एतया प्राग्भवे
 अख्यसमये मम नमस्कारा दत्ता तत्रभाषादह व्यन्तरो जात एषा अपि मृता देवी जाता देवी त्वमनुभूय तव सुता अच भवे जज्ञे तेन विद्याधरेणापहृत्य
 अत्र चैत्ये सुक्ता यात्रार्थं माया तेन मया दृष्टा एतस्या बन्धो चौरै च मृते यावदिमा महमाश्रयामि तावद्भवन्तीत्र प्राप्ता मया विमृष्ट इयमनेन जनकेन
 सम माया खिति मया एतस्या गोप न माया विहितता यत्तव निराश त्व मया तदानी कृत तत चन्तव्य मुनिरुचे अहो व्यन्तरया त्ववा तदा माया
 कृता सा मम तव माया अपहरिणो जाता तेन सम भवतीपकृत न किमप्यपराध एवमुक्त्वा स मुनिर्हर्षाग्निप दत्वा अन्यत विजहार अथ प्राग्भव
 हत्तान्त मृत्वा सा कन्या जाति स्मृति भागभूत प्राग्जन्म जनक व्यन्तर प्राह तात त पूर्वभवपति मेलय व्यन्तर प्राह स ते प्राग्भवभर्ता
 जितगत्तु, मृपति देवो भूय मृत साम्प्रत सिहरथी नाम राजा जातीन्ति स गन्धार देशे पुडवर्द्धन नगरा दखापहृतीश्च सनायास्वति
 स हि त्वामचैवु सकनसामग्रया परिणियति यावत स इहाभ्येति तावत त्वमत्रैव तिष्ठेयुक्त्वा सव्यन्तर पुराचले शाश्वत जिनिद्विस्वानि न तु
 गतवान् इम सर्वहत्तान्त कथयित्वा सा कथा राजान् प्रत्याह स्वामिन त्वमत्र मन्नाथ्याकर्षित समायात सिहरथ राजापि इमा पूर्वभव

बुद्धः स्वयं सम्बुद्ध इति द्वितीयगाथाया अर्थः अथ प्रथमगाथाया अर्थं सनमि पूर्वदेवलोके देव आसीत् तेन इत्युक्तं च इज्जण देवलोगाञ्चो देव लोकात् च्युत्वा सनमिर्भूपी मानुष्य लोके मनुष्य जन्मनि उत्पन्न सच न मि भूप उपशान्तमीहनीय सन् पौराणिकी जातिं पूर्वजस्य देवलोकादौ स्मरति अत्र वर्तमान निर्देशं स्तत्कालापेक्षया उक्तः २ सो देवलोग सरिसे अन्ते उरवरगञ्चो वरे भीए भुजित्तु नमीराया बुद्धो भोगे परिच्चयइ ३ स नमी राजा बुद्धो ज्ञात तत्व सन् भोगान् परित्यजति किं कृत्वा भोगान् भुक्त्वा कथम्भूतान् भोगान् वरान् स्त्रीसमूहे प्राप्तः सन् कीदृशेन्तः पुरेदेव लोक सदृशे देवाङ्गना सदृशे इत्यर्थः भुक्तभोगस्य पुरुषस्य भोगः दुस्त्यज इति हेतो भोगान् परित्यजतीत्युक्तं ३ महिलं स पुरजणवयं वलमारोहच्च परियणं सब्वं चिच्चा अभिनिक्खन्ती एगन्त महद्धिञ्चो भयवं ४ स भगवान् महात्म्यवान् यथखीनमीराजा एकान्तं द्रव्यतो वनषण्डादिक भयवंसहसंबुद्धो अणुत्तरेधम्मं । पुत्तंठवित्तरुज्जे अभिनिक्खमई नमीराया ॥२॥ सोदेवलोग सरिसे अंतैउरवर गउवरे

भीए भुंजित्तु नमीराया बुद्धोभोगे परिच्चयइ ॥३॥ महिलंसपुर जणवयं वलमारोहंच परियणं सब्वं चिच्चा अभिनि

वंत जातिस्मरण उपनाथका स्वयं आत्मने सबुद्ध आपणपि धर्मने विपे प्रतिबोध पाय्या पुनं स्थापयित्वा राज्ये पुत्रने राज्ये थापीने अभिनिःकामति नमी राजा दिक्षा गृहीतार स नमी देवलोक सदृशान् भोगान् ते नमीराजा देवलोकसरीखा अंतपुरगतः वरान् भोगान् अंतैउरीने विषे वर प्रधान भोग भुक्त्वा नमी राजा भोगभोगवोने नमी राजा ज्ञानतत्व भोगान् परित्यजति ज्ञातपक्षे प्रतिबुद्ध इञ्चो यकी भोगने छाडे ३ मधिलां नगरीं जनपद सहोता मीथला नगरे देसहीत छडे हत्थ्यादी चतुरङ्गसैन्यं अन्तःपुरं परिजनं सर्वचतुरङ्गिणी सेना हाथी घोडा रथ पायक अंतै वरस घलीपारीवार सर्वदेश त्यक्त्वा

अभिनिःक्रामति सति गृहात् कुटम्बात्क्रोधमानमायादिभ्यो वा निःसरति सति कथभूते नमो राजपौ राजा चासौ ऋषिश्च राजर्षिस्त्रिन् राजर्षी राज्यवस्थायां अपि ऋषिरिव ऋषि स्तस्मिन् राजपौ ५ अब्भुद्विय रायरिसि पव्वजाठाण सुत्तमं सक्को माहणरुवेण इमं वयण सब्बवी ६ नसि राजर्षिं शक्रः ब्राह्मणरूपेण इदं वचनमब्रवीत् कथं भूतं राजर्षिं उत्तमं प्रब्रज्याया स्थानं प्रब्रज्यास्यानं ज्ञानदर्शनचारित्वादिगुणानां निवासं प्रति चञ्चुत्थितं उच्यते मिल्यर्थं ६ कितु भी अज्ज महिलाए कोलाहलगं संकुला सुच्चंति दारुणा मद्दा पासाएसु गिहिसुय ७ किं इति प्रयेतुइति वितर्कं भी इति आमंणे भी राजर्षे अथ मिथिलायां प्रासादेषु देवगृहेषु भूपमन्दिरेषु च पुनस्त्रिकचतुष्क चचरादिषु दारुणाः हृदये उहेगीत्यादका विलापाः क्रन्दितादयः शब्दा कि नु श्रूयन्ते इति इन्द्रो राजर्षिं नमि पृच्छति मेल्यर्थः कीदृशाः शब्दाः कोलाहलकयंकुलाः प्रब्रक्त शब्दव्याप्ताः ७ एयमट्टं निसासित्ता हेजकारणची इत्थी तत्थो नमो रायरिसि देविदं इणमव्ववी ८ ततः इन्द्रप्रश्नानन्तरं नमो राजर्षिदेवेन्द्रं इदं श्रुवीत् किं एतत्त्वं इत्यर्थं प्रतिपादकं शब्दं निशस्य श्रुत्वा कथंभूती नमो राजर्षिः हेतुकारणाभ्यां चीदित प्रेरितः हेतुकारणनीदितः तत्र हेतु पञ्चावयवपाठ्यरूपं कारणञ्च येन विना कार्यस्य उत्पत्तिर्न भवति पञ्च अवयवा इमे प्रतिज्ञा १ हेतु २ उदाहरण ३ उपनय ४ निगमन ५ रूपाः पञ्चवचनं प्रतिज्ञा १ साध्यसाधकं हेतुः २ तत्सादृश्य

अज्जमहिलाए कोलाहलग संकुला । सुच्चंति दारुणा सद्दापासाएसु गिहिसुय । ७ ॥ एयमट्टं निसासित्ता हेजकारण

कोलाहली राजा मीथुला नगरो कोलाहल्ले व्याप्ताः कोलाहल्ले करो व्यस्त ए श्रूयते रीद्राः शब्दास्ते कथं एहवा रीद्रशब्द किम समलादृष्टे प्रासादेषु च प्रसादनेविषे धरने विषे ७ एतदर्थं श्रुत्वा एहत्तुं अर्पितांभलीने पञ्चावयवमनुमानवाक्यं हेतुः अनन्यथा मिडनियत पूर्वभावित्वं कारणत्व तेन प्रेरीतहेतु पञ्चावयवरूपप्रतिज्ञा हेतु २ उदाहरण २ उपनय ४ निगमनानि ५ ए पञ्चावयवरूपहेतुं अने कारणे तीणे प्रेरीयो ततः प्रयत्नतानतरं नमिराजर्षिं ते प्रश्न कीर्थां

दर्शन उदाहरण ३ उदाहरणैः साध्यैः न च सयोजन उपनय ४ हेतु उदाहरणोपनयै साध्यस्य निययोकरण निगमन ५ तथैव दृश्यति तव धर्मा
र्थिन' अग्राग्रगतात् गृह्यात् कुटम्बाहानि सरण दीचाग्रहण अयुक्त इति प्रतिज्ञावाक्य कस्मादेती आक्रन्द्यादि दारुणशब्दहेतुत्वात् इद हेतुवाक्य २
यत् यत् आक्रन्द्यादि दारुणशब्दहेतुक भवति तत् धर्मार्थिन पुरुषस्य अयुक्त किवत् हिसादिकर्मवत् यथा हिसादिकर्म आक्रन्द्यादि दारुण शब्दहेतुक
तत् हिसादिकर्म च धर्मार्थिनोपि अयुक्त भवति इद उदाहरणवाक्य तस्मात् तथा तवापि धर्मार्थिनो नि सरण अयुक्त ४ इद उपनयवाक्य तस्मादाक्र
न्द्यादि दारुण रौद्र शब्द हेतुत्वात् हिसादि कर्मवत् सर्वथा तव गृह्यात् नगरात् कुटम्बात् नि सरण अयुक्तमेव ५ इति निगमनवाक्य इति पञ्चावयववाचको
हेतुरुच्यते कारण दर्शयति यत् यस्य पूव असती वस्तुन उत्पादक तत् तस्य कारणभवती गृह्यान्निग्रहण दारुणशब्दकार्यस्य कारण प्रेय यदा भवत
गृह्यान्नि मण पूर्वजात तदा पयात् आक्रदादि शब्दलक्षण काय जात यदा भवती दीचाग्रहण न स्यात् तदा आक्रन्द्यादिशब्दश्च कथ स्यादित्यर्थ एव
हेतु कारणाभ्या इन्द्रेण प्रेरितो नमि राजर्षिरथ यदयुवीत्तदये तनया गाथयाश्च ८ महिलाए चैत्रए वल्ले सीयच्छाए मणोरमे पत्तपुष्पफलोविए बहुण
वड्डुणेमया ८ वाएण होरमाणमि चैत्रयमि मणोरमे दुहिआ असरणा अत्ता एए कदति भोगगा १० नमि राजर्षि कि अवुवीदित्वाह मिथिलाया
नगथा चैल्ले उद्यानि भो एते खगा पघिण' क्रन्दन्ति कोलाहन कुर्वन्ति चिति पतपुष्पफलादोना उपचय चित्या साधुचित्य चित्तमेव चेल्य उद्यान

चोद्वंशो । तत्रो नमीरायरिसी देविद इगमव्वी । ८। मिहिलाए चैत्रएवल्लेसीयच्छाए मणोरमे । पत्तपुष्पफलोविएवड्डु

पक्षी नमी राजवृष्टिपि प्रते देवेन्द्र एव अन्नवीत् देवेन्द्र इन्द्र इम कहती कुश्रो ८ मीथलाया उद्याने वृक्षे मीथुला नगरीने विपे चेल्लेने विपे वृक्षने विपे
सीतनकायायुल्ले मनीरमाव्ये गीतलकाया के रनवायोम्य'गीतलकरी के पतपुष्पफलोपिती पतफल फलसहित के बहुना खगादीना लोकाणा च बहुगुणे

शास्त्रे तैर्यम् १० एयम् निसामिप्ता हैजकारण पोरपो तथो नमिराय रिमि देविन्दोश्च मन्वयो ११ ततस्तदनन्तरेदेवेन्द्रा नमिराजपि प्रति इदं
 वचनमात्म्यपत्र पत्रवोत् किं ज्ञाता एत पय निगम्य कोढगो देवेन्द्र हेतुकारणयोर्विषयेनमि राजर्षिणा प्रेरिता पृथ हि
 इन्द्रेण ममि राजपि प्रति इत्थुष भो नमि राचर्षिं एतेषां पाकृन्दादि दारुणगण्यहेतुत्वात् तव दोषायपक्षेण भयत् पुनस्तेषां पाकृन्दादिगण्यरूपकार्यस्य
 ता दोषापक्षेण एवकारण इत्युक्ते गति नमिराचर्षिणा च तेषां पाकृन्दादि दारुणगण्यस्य स्वार्थ एव हेतुकारणे उक्ते तेन प्रसिद्धीय भयदुर्गो हेतु
 कारणाय गिहभेय इति राजर्षिणा इन्द्र प्रेरिता मन् इदं यान नमिराजपि प्रति पुत्रक्याचेर्यम् ११ एम सक्तीय वाउय एय उक्कन्ति मन्दिरे भयवं
 पत्ने उत्तमोप कोमर्ष नावदेव्या १२ हे भगवन् एय प्रत्वर्धोम्नियायुय दृग्गते पुनरेतत् प्रत्वर्ध मन्दिरे दृष्टो तदेवध्याहार तवगृह प्रान्ति हे भग
 वन् तेन इति तत्र कारेण पयसानं इति यावदान्दारे तत् पत्न पुर राज्ञोयग कीमण इति कप्तात् कारणत् नोपेक्षमे नापलीकमे यत् यत् ज्ञात
 मोगम् भवति तत्तत् घोषणोयं यया पामोयं ज्ञानादि तथा इत् भवत पत्नपुरं अपि ज्ञानमान प्रयलीकनीय १२ एयमद्रं ० हे तथो नमोरायरिक्ती
 देविन्द्र इत्यमन्तो १२ पय गायया पर्यन्तु पूर्वपत् पयमेव विरिय नमिराचर्षिं देवेन्द्रस्य वचन श्रुत्वा देवेन्द्र प्रति इदं प्राचीत् १३ किम प्रवो
 दिन्वा पृथ्वसामो चोगामो नेमिमो नेमिमो नत्यकिञ्चन महिनाए उक्कमाणीए न मे उक्कद किञ्चण १४ भो प्राप्त्र पय सुग यथा गामया वसाम सुग

मन्दिरे । भयय पतंतरे तेण कीमाण नात्र पेयत्तहि ॥१७॥ एयमद्र निसामिप्ता हैज कारण चोर्द्धो । तथो नमोराय
 पागिवाय महित १५ हे एतदग्ने मन्दिरे ए तुकार मन्दिरे दार्कं हे हे भगवन् पत्नपुर ए तुकारी पते उरो मणिना माहे दार्कं हे कप्तान् त्वं
 इत्यभोक्तयमे माष्टम् किम न यो जीता १२ एतर्यं श्रुत्वा ए पय मांभनीने हेतुकारणे मेको १३ सुग यथा गालनायसाम प्रागान् पारयाम भो

राय वनपत्रिष्ठ अष्टादशोऽध्यायः ०७ १४ भाषा

न्तिष्ठामः सुखं यथा स्यात्तथा जीवाम प्राणान् धारयामः सोइति अस्माक किञ्चनमपि स्वल्पमपि ज्ञानदर्शनाभ्यां विना अपरं किमपि स्वकीयं नास्ति यत्किञ्चित् आत्मीयं भवति तत् विलीक्यते अग्नि जलाद्युपद्रव्येभ्यो रच्यते यदात्मीय न भवति तस्यार्थं केन खियते यदुक्तं एगोमे सासश्री अप्पानाण दंसण संजुञ्जी सेसामे वाहिराभावा सब्बे संजागलक्वणा १ तदेव दर्शयति मिथिलायां नगर्या दृश्यमानायां सत्वां सें सम किमपि न दृश्यते इति हेतोः सर्वेपि स्वजन धनधान्यादयः पदार्थाः मत्तोऽतिथयेन भिन्ना एतेषां विनाशिनचाम्माकं विनाश इत्यर्थः १४ चत्त पुत्तकलत्तस्स निब्बावारस्स भिक्खुणो

रिसी देविंदं द्रणमज्जवी ॥१३॥ सुहं वसामो जीवामो जेसिं मोनत्व्य किंचणं । सहिलाए डज्जमाणीए नमे डज्जमद्र किंचणं ॥१४॥ चत्त पुत्त कलत्तस्स निब्बावारस्स भिक्खुणो पियं नविज्जए किंचि अप्पियंपि न विज्जए ॥१५॥ वहुं खुमुणिणी भइं अणगारस्स भिक्खुणी । सब्बओ विष्णुमुक्कस्स एगंत मणुपस्सओ ॥१६॥ एयमइं निसामित्ता हेज्जका

ब्राह्मण सुखे वस कुं सुखे जीवुं कुं येषां अस्माकं नास्वल्पमपि किञ्चन जेह भणो माहरं कार नयो मथिलायां दशमानायां मथिला नगरी दाभतां थक्का न मम दृश्यति किञ्चित् माहरं काइ दाभ वुं वल तुं नयो १४ तत्तपुत्तकलत्तस्य क्वांगा जिणे पुत्त कलत्त कहतां स्त्री निर्वापारस्य क्कथादिरहित स्य भिञ्जी गृहस्थना व्यापार थो रहित पिय न विद्यते किञ्चिद्द प्रे स नयो किस्सो यस्स जपरि अप्पियं अपि न विद्यते कोइ वल जपरि द्वेषणिनथो १५ बइखु निद्ययेन सुनीनां मप्रलं साधुने घणं भद्र कन्थाण के गृह रहितस्य भिञ्जी गृहस्थनी व्यापार तिणे करी रहित माधु सर्वतः विप्र मुक्कस्य सत्तलो आरम्भ तिणे करी रहित के एकांत मीव' चिन्तयत एकांत मीघ मार्गं चिन्तये के १६ एतदर्थं श्रुत्वा ए पर्यं साभलोने इत् कारणे प्रेरित हेतु

पिय न विज्ञापे किञ्चिदभ्युपययि न विज्ञापे १५ एतादृशस्यभिर्बोधिभिर्वाचरस्य प्रियप्रियश्च किमपि न विद्यते कथञ्च तस्यभिर्बोधि त्वय्यप्रुधकवचस्य त्वक्तानि
पुष्पकनसाणि येन सत्यज्ञ पुष्पकनघ्नस्य परिहृत सुतभायस्य पुन कीदृशस्य निर्व्यापारस्य ध्यापारात् निर्गती नित्यापारस्तस्य निरारम्भस्य पञ्च
वियतिक्रियारहितस्य १५ यद्दुखमुनिषो भद्र अणगारस्य भिक्वणो सच्चञ्चोविष्यमुक्त्वा एगन्तमणुपञ्चश्री १६ सुदृति पिययेन मुने साधीर्वद्भुद्र
प्रपुर सुख यस्मिन् कथञ्च तस्य मुने अणगारस्य नियतवास रहितस्य पुन कीदृशस्य मुने भिक्वया गृहीताहारस्य किञ्चुर्वती मुने एकान्त असुपयत
एकएव अह इत्यन्तो नियय एकान्तस्य नियय विचारयत एकल भावना भावयत पुन कीदृशस्य मुने सर्वत परिग्रहात् विप्रमुक्तस्य १६ एयमट्ट ० हे
तथो नमोरायरिसि देविन्दोद्गण मन्ववी १७ इति नमिराजयेर्वचन युत्वा देवेन्द्र पुनर्नमिराजयिं प्रतीद अत्रवीत् १७ पागार कारयित्ताण गोपुरद्वयज्ञगा
णिय उपूलगसयणीषो तथोगच्छमिस्त्वित्या १८ हे चतिय तत पथात् त्वद्गच्छसिदीचाय गच्छेत्यर्थं किं कृत्वापूर्वं नगरस्य रघार्थं प्राकार कोट्ट कार
यित्वा पुनस्तस्य प्राकारस्य गी पुराणि कारयित्वा प्रतोलीकथनात् एव अर्गला सहित या दृढ कपाटानि कारयित्वा पुनस्तस्यप्राकारस्य अट्टालकानि
षकारयित्वा अट्टालकानि हि प्राकारकोटको परिवर्त्तानि उच्यन्ते भुजानां उपरिस्य गृहाणि सभामस्थानानि कारयित्वा पुनस्तस्य
प्राकारस्य उपूलग इति खातिका कारयित्वा तत्र प्रकारे गतन्तो हि यन्त्रविशेषा याहि एक वार चालिता सत्य गतसख्या

रण चोर्द्धयो । तथो नमि रायरिसि देविदोद्गण मन्ववी ॥१७॥ पागार कारदत्ताण गोपुरद्वयगणिय । उसूलग सय

कारो प्रेम्बो १७ प्राकार कारयित्वा अहो नमो रात्रापि कोटकरो नवास खरा गोपुर प्रतोलहा राणि अट्टालक युद्धस्थानानि ते नगरियुद्धस्या
नक्त जे कोट उपरे वेमो जूढ करे खानि काम तत्र दृपदर्जे पण यन्त्राणि खाद्दो कली यन्त्राणी जनादीक करवाने तत गच्छ हे चतिय एत

कान् सुभटान् विनाशयति दूरमार कुहकवाण आरावादि पापाण यन्तादीन् कारयित्वा पथात् व्रजित् अत्र हे चक्षिय इति सम्बोधनं उक्तान्ते न चक्षियो हि रक्षाकरणे समर्थः स्यात् क्षतात् प्रहारात् भयात् लायते इति चक्षियः योहि चक्षियः स्यात् स पुर रक्षां प्रति क्षम एव स्यात् इति हेतोः चक्षियेति संबोधनं प्रोक्तं १८ एयमट्टं ० हे० तन्त्री नमीरायरिसी देविन्द इणमव्ववी १८ इति देविन्दस्य वचः श्रुत्वा पुनर्नमि राजर्षि देवेन्द्रं प्रति इदं अब्रवीत् २८ सद्यच्च नगरं किञ्चा तव सम्बर मगल खन्ती निजण पागारन्ति गुत्तं दुपधं सगं २० धणुं परिक्रमं किञ्चा जीवच्च इरियं सयाधि इक्ष्वके यणं किञ्चा सच्चैणं पलिमन्यए २१ तव नारायजुत्तेणं भित्तूणं कम्मकचुयं सुणी विगयसप्पामो भवाओ परिचई २२ तिस्रमि. गाथाभिः इन्द्रवाक्यस्य प्रत्युत्तरं ददाति भो प्राञ्ज मुनिजिन वचन प्रमाण क्ल्लाधुर्भवात् संसारात् परिसुचते परिसमन्तात् सुक्त भवति मुक्ति सौख्य भाक् स्यात् कथम्भूतो मुनिर्विगत संग्राम विगतः संग्रामी यस्मात् स विगत संग्रामः सर्वशत्रूणां विजयात् संग्रामरहितो जात इत्यर्थः समुनिः किं कृत्वा विगत संग्रामी

रघीओ तओ गच्छसि खत्तिया ॥१८॥ एयमट्टं निसामित्ता हेजकारण चीईओ । तओ नमी रायरिसी देविदंइरण
सव्ववी ॥१९॥ सड्धच्च गगरं किञ्चा तवसंवर मगलं । खंतीनिडणपागारं तिगुत्तं दुप्पधंसगं । २० । धणुपरकम्मं किञ्चा

लावांना करी पछे जाइ जे १८ एतदर्थं श्रुत्वा एहबुं अर्थं सांभलीने हेतु कारणे प्रेरित १८ अथा तच्च बुद्धिच्च नगरं कृत्वा तस्वनी सहस्रणाए नगर करीने ततः सवरं गोपुरार्गलां तपः अने सतरे भेदे संवमए अर्गलाकी माउ कीधा क्षमारूपीयोनगरने पासे गढ कीधी के क्षमारथ्यं प्रकारे विभिर्गुप्तभिः गुप्तं चिष्टतं विहृ गुप्ते करी गढ विप्रो के २० पराक्रमं मयं धनुः कृत्वा पराक्रमरूप धनुस्त्व कीधा के इर्या रूपं जीव प्रत्यक्षा कृत्वा इर्या रूप

जात स्तदाह यडां तव यवण रुचिरुपां समस्त गुणाधारभूता भगवद्वचने स्वैर्यं बुद्धि नगर कृत्वा तत्र यदा नगरे उपशम वैराग्य विवेकादीनि गी पुराणि कृत्वा इति अनुक्तमपि गृह्यते तपो द्वादशविध सयम सप्तदशविध अर्गला प्रधान कपाट अपि अगला ततोर्गला कपाट कृत्वा पुनस्तस्य श्रद्धानगरस्य चान्ति प्रालार कृत्वा चर्मा यत्र कृत्वा कथञ्चूत प्राकार निपुण परिपूर्णं धन धान्यपानीयादिभिर्गृता पुन कथञ्चूत प्राकारान्ति सभिर्गुप्तिभिर्गुप्त रचित गोपुरीद्वालकीत्सूलक खातिका स्थानीयादिभ्यो रचित पुन कीदृश प्राकार दुपुर्धर्षिक यत्तुभिर्दुरा कलनोय पूव इन्द्रेण प्राकारादीन् कारयित्वेति उक्त तस्योत्तरमिदं ज्ञेय श्रुना प्राकारादौ सशमीविधेय इत्याह सुनिर्विगत सशमा स्यात् विजयीस्यात् इत्यर्थं पराक्रम क्रियायां बलस्फोरण धनु कृत्वा च पुनस्तस्य धनुष सदा द्रव्यां द्रव्यां समितिञ्चीया प्रत्यञ्चा कृत्वा च पुनस्तस्य पराक्रम धनुषो धृति धैर्यं धमाभिरति केतन शृङ्गमय धनुर्मध्ये काष्ठ मुष्टिस्थान कृत्वा तत् केतनञ्च स्रायुना दृढ बध्यते इदमपि धैर्यकेतन शृङ्गधनुर्मध्यस्थकाष्ठ

जीवच द्रवरिय सया । धिद्र चक्येण किञ्चा सञ्चेण पलिमथए ।२१। तवनाराय जुत्तेण भित्तणकम्म कचुय । मुणीवि गय सगामो भवाञ्चो परिमुच्चई ॥२२। एयमइ निसामित्ता हेज्ज कारण चीईञ्चो । तञ्चो नमिरायरिसि देविदो इण

धनुषो प्रत्य चा तातो कोधो धृति सन्तोप मुष्टि कृत्वा धनुर्मध्यतसन्तोप मूठि कोधो धनुषो मध्यभागे सत्येन बध्नीयात् बन्धे वेष्टयेत् सत्यवचने करोने तेह मूठीने लपेटे बन्धने दीये २१ तपोमय लीहवाणयुक्त नवारि भेदे तप तेहज हुञ्चो लीहनो वाण तीर भित्वा विदार्यं कर्मकचुक कर्मसनाह इणे तीरे कुरो कर्म कचुककर्म सनाह भेदे मुनि विगतसग्राम मुनीम्बर ससारसम्बन्धी सग्राम अणकरतो धकी भवात् ससारात् परिमुच्यते ससार धकी

मम कदाचिद्मन न भविष्यति स एव मां गे गृह कुर्यात् अत्र गृहकरण तु मार्गस्थानभिवर्ज्ये यस्य तु गमनस्य निधयो भवेत् समागे गृह न कुर्यादेव
अहस्तु नसगयित मम सगयोनास्ति इति हाईं सम्यक्तादि गुणयुक्तानां सुक्तिनिवासयोग्यत्वेन यत्रैव गन्तु इच्छेत् तत्रैव स्थापय रग्गृह अथवा सा
सय इति यावत् अविनगर गृह कुर्यादित्यर्थ २६ एयमठ हे० तत्रो नमिराय रिसिन्दे विन्दी इणमधवी २७ तत पुनर्देविन्दी नमिराजर्षेवचन शुत्वा
नमिराजपि प्रतोद यचनमव्रवीत् २७ आमीसे लोमहारैय गच्छिभैर्येय तकरे नगरस्व खेम काजण तत्रो गच्छसि खत्तिया २८ हे च्छियत्व ततस्सद

निसामित्ता हेज कारण चोईत्रो तत्रो नमी रायरिसि देविद इण मव्ववी ॥२५॥ ससय लुसो कुणर्दलो मग्गेकुणर्द
घर । जत्वैव ग तुमिच्छेज्जा तत्व कुव्वेज्जा सासय ॥२६॥ एयमठ निसामित्ता हेज कारण चोईत्रो । तत्रो नमि राय
रिसि देविदो इण मव्ववी ॥२७॥ आमीसे लोमहारैय ग ठिभैएय तकरे । नगरस्व खेम काजण तत्रो गच्छसि ख

जाजे २४ एतदर्थं निगम्य शुत्वा एहवी अर्थं सागलीने हेतुकारणे प्रेरिता २५ नमी राजा बहेत् हे ब्राह्मण स पुमान सय्य कुरुते ते पुरुष सन्दे हकारे
जे मां गे गृह करोति जे मार्गं माहे घर करे यत्रैव गन्तुमिच्छेत् तेह नगरने विपेज जावो बाछे तत्रैव कुरुते यागत गृह सुत्तिरूप सुत्तरूप
यागने घरे जाइ तिहा घर करे विचे घर कुण करे २६ एतदर्थं निगम्य शुत्वा एहवी अर्थं सागलीने हेतुकारणै प्रेरित २७ आरुमन्तात् मुष्ण तीति
आमीपकान् लोमाहारान् प्राणीन् जे लोकने मूसे चोरो करोने माणस मारे वाट लूटेधाडपाडे अन्विभेदकान तस्सरान् गठी छोडा चोर प्रति नगरस्य
खेम ज्जला एहवा चोर निवारीने नगरने खेम कल्याण करीने तत गच्छ हे चनिय तिवार पक्की हे चत्रो तु जाजे २८ एतदर्थं निगम्य शुत्वा एअर्थ

नगरं गच्छेः किं कृत्वा नगरस्य चेमं कृत्वा तत्र नगरे आमीषाली महाराः च पुनर्ग्रन्थि भेदास्त्राकराः खातपातका लुण्ठका विद्यन्ते तान् नगरात् बहि
नि.कास्य सुखं कृत्वा पद्यात्वं दीक्षा गृहीतव्या आमीषादयोहि एते तस्कराणां भेदा संति आसमन्तात् सुग्रन्थि चोरयन्ति इत्यामीषास्त्रान् निवार्य
लीमहरास्ते उच्यन्ते अति निर्दयत्वेन परस्य पूर्वं प्राणान् हृत्वा पथात् द्रव्यं गृह्णन्ति लीमहातन्तुना पट्टसूत्र मयपात्रेन प्राणान्
हरन्तीति लीमहाराः पाशवाहकास्त्रान् निवार्य पुनर्ग्रन्थिद्रव्यं अग्निं पुर्षुरक कर्त्तिका चुरकादि प्रयोगेण भिन्दन्ति विदारयन्तीति अग्निभेदा
स्त्रान् सर्वान् तस्करान् निराकार्यं नगरं तस्कररहितं कृत्वा पद्यात्परित्रजे रित्यर्थः २८ एयमष्टं० हे० तत्रो नमी रायरिसी देबिन्दं
इणमव्ववी २८ तत एतद्वचनं शुला इन्द्रं प्रति नमिराजर्षिं रिदमव्रवीत् २९ असदन्तु मणुस्त्रेहिं मिच्छादण्णोप जुञ्जए अकारिण्य
वज्जन्ति सुचर्द्धे कारगीजणी ३० असकदारं २ मनुष्यैर्गिथ्या ह्यथैव अपराधरहितेषु निरपराधिजीविषु ज्ञानादहङ्कारा हादण्डः प्रयुज्यते यतीहि
अत्र संसारे अकारिण आमीषादि क्रूरकर्मणां अकर्त्तरी बध्यन्ते कारकाय आमीषादीनां क्रूरकर्मणां कर्त्तारस्य जनामुच्यन्ते अनेन तेषां तु श्राव

त्तिया ॥२८॥ एयमष्टं निसासिप्ता हेज कारण चोर्द्धो । तत्रो नमी रायरिसी देविदं द्रण मव्ववी ॥२९॥ असदंतु
मणुस्त्रेहिं मिच्छादणो पजुंजर्द्धे । अकारिणोत्थ वज्जन्ति सुचर्द्धे कारत्रो जणो ॥३०॥ एयमष्टं निसासिप्ता हेजकारण

सांभलीने हे तूकारणैः प्रेरितः २८ असकत् बारंवार मनुष्ये असयंवार वार मनुष्ये मिथ्या दण्डः प्रयुज्यते भूठा दण्ड करे के अकारिणी निरापराधी
बध्यन्ते जे निरपराध के चीरी न थी करता तेहने मारेके चौर्यकारकी जगः सुच्यते कुच्यते जे मनुष्य चीरी करे ते मुकाद के छूटे के ३० एतदर्थ

सहस्रं जयेत् कथञ्चैते संग्रामे दुर्जये अथवा कथञ्चूतं सुभटसहस्राणा सहस्रं दुर्जयं दुःखेन जयी यस्य तत् दुर्जयं यं कथित् एकः एतादृश सुभटः
 स्यात् यः सुभटानां दशलज जयेत् एकः पुन एतादृशः पुरुषः स्यात् य आत्मानं दुष्टाचारे प्रहृतन्तेन सह युद्धेत् आत्मना सहयुद्धं शूर्यादित्यर्थ
 एष आत्मविजयः से इति तस्य आत्मजयिनः परस उक्तृष्टी जय प्रोक्तः कीर्थः योहि आत्मविजयी पुमान् भवति तस्य पुरुषस्य दशतस्य सुभटविजयनः
 पुरुषात् महान् जयवादः दशलज्य सुभटजितुः सकागात् आत्मविजयी पुमान् बलिष्ठ इत्यर्थः ३४ अप्पाण मेव जञ्जाहि किन्ते जुञ्जेण वज्जन्त्री अप्पाण
 मेव अप्पाणं जुइत्ता सुहमेइए ३५ ततश्च आत्मनासहैवं युध्यस्वति तव बाहो न युइ न बाह्य सगामेण किं न किमपीत्यर्थं बाह्य पार्थिवादि विजयी व्यर्थ
 एवेत्यर्थः आत्मना एव आत्मानं जित्वा मुनि सुखं एधते प्राप्नोतीत्यर्थः अत्र आत्माशब्दे न मन सर्वत सूत्रकत्वात् पुंसकत्व एतति गच्छति प्राप्नोति
 नवीनानि २ अथयसाय स्थानां तराणीत्यात्मा मन उच्यन्ते ३५ पश्चिन्दियाणि कीहं माणं मायन्त हेव लोहश्च दुर्जयश्चैव अप्पाणं सब्बमप्ये जि एजिय ३६
 भो प्राञ्ज आत्मान एव दुर्जयं तस्मिन् आत्मनि जिते सर्वं एतत् जितं एतत् कि कित्तदाह पश्चिन्दियाणि च पुनः क्रीधोमानो माया तथैव लोभैयका
 रात् मिथ्यात्वा विरति कथायादिक एतत्सर्वं अरिचक्रं आत्मनिजिते जितं इतिज्ञेयं यत्पूर्वं ये केचित्पार्थिवा ननसा इत्थत्तं तस्योत्तरं प्रोक्तं ३६

णवज्जन्त्री । अप्पाणमेव अप्पाणं जुइत्ता सुहमेए ॥३५॥ पंचिदियाणा कीहंमाणं मायंतहेवलीहंच । दुर्जयंचैव अप्पा

जई यडी सुभट ३४ आत्मानैव सह युद्धं कुरु आपणे आत्मा सघाते युद्ध करोते तव वाद्य युद्धे न किं एरुरि वाग युद्ध संगतस्य जाम आत्मानैव आत्मानं
 आपणी आत्मा अपि ज आत्मानि जीपे जीत्वा सुखं प्राप्नोति जीतीनि मग पामि ३५ पश्चेन्द्रियाणि क्रोधश्च पंचि इन्द्रीनि क्रोध गानसाया तथैव
 लोभ च तिमज लोभ एव आत्मा दुर्जयः इणे करोनि आत्मा दुर्जय के जेजीतवी दोहिलो के सर्वमपि आत्मानि जिते सति सर्वं जीतं एक आत्मा जीणे

एयमष्टु हे० तत्रो नमिराय रिरिन्दे विन्दो इणमव्ववी३० एतहचन शुत्वा इन्द्र पुनर्नमि राजपि प्रतीद अत्रवीत्३० जइत्ता विडले जन्ने भोइत्ता समण माहणेदया भुञ्जाय जहाय तत्रो गच्छसि खत्तिया ३८ रागहेपयोस्वाग निधिल्य अय जिन धम्मैथ्यं परीच्चित्तु इन्द्र प्राह भो च्चत्तिय तत पयात्त्व गच्छ कि क्खत्वा विपुलान् विस्तीर्णान् यजान् याजयित्वा विस्तीर्णान् यजान् कारयित्वा त्वयं अमण ब्राह्मणान् भोजयित्वा पञ्चात् अमण ब्राह्मणादिभ्यो गवादीन् दत्त्वा च पुनभुक्त्वा शब्दरूप रसगन्धस्पर्शादि विषयान् भक्त्वा राजर्षित्वेन स्वयमेवयागाने द्रष्टा यजान् अग्नेधेदीन् क्खत्वा यत् प्राणिना

ण सव्वमण्ये जिएजिय ।३६। एयमष्टु निसामित्ता हेज कारणचोईओ । तत्रो नमिरायरसि देविदो इणमव्ववी ।३७।
जइत्ताविडले जन्ने भोइत्ता समणमाहणे । दच्चा भोच्चा यजहायतत्रो गच्छसि खत्तिया ।३८। एयमष्टु निसामित्ता हे०
जकारण चोईओ । तत्रो नमी रायरिसी देविदइण मव्ववी ।३९। जो सहस्स सहस्साण मासिमास्से गवदए । तस्सावि

जीवो तेणे सर्वं ज्जोत्य ३६ एतदर्थं नियम्य यत्वा एहवो अर्थं साभनीने हेतु कारणै प्रेरित, ३७ यजित्वा क्खत्वा विपुलान् यजान् अहो च्चत्तिय यत्र विपुल विस्तीर्णं करोने भोजयित्वा अमण ब्राह्मणान् यमणयाक्कादि ब्राह्मवेदना जाण तेही जीमाडीने दत्त्वा स्वर्णादि भुक्त्वा भोमान् जिहाय स्वय यत्र क्खत्वा स्वर्णादिकदे इने भोग भोगवोने ज्याग करोने जेहाय जेहेभ्य पूज्येभ्य तत गच्छ हे च्चत्तिय पछे तु जायजे हे च्चत्तिय ३८ एतदर्थं निशम्य शुत्वा ए अर्थं साभनीने हेतुकारणे प्रेरित ३८ य सहस्स गुणित दशमस्वरूप जे पुरुष दशमस्वरूप मासे मासे गवा दयात् गाय मासे मासे दीये हे तस्मादपि स जम त्रये तेहदेवा धको पोण सजम त्रये सजम भलो साधुने यद्यपि किञ्चित् न ददाति यद्यपि साधु काइ नही देताछे तो पणि सजमत्रये य ४०

प्रौतिकरं स्यात् तत् धर्मायस्यात् यथा अहिंसादि तथा अमूनि यजापन भोजन दान भोगयजनादीनि धर्मायत्युरित्यर्थं ३८ एयमहं० हे० तन्नो नमो रायरिसिं देविन्द्रे इणमव्ववी ३८ ततः पुनर्नमि राजर्वि देवेन्द्रं प्रतीदं यत्रवीत् ३८ जी सहस्रं सहस्राणं मासे मासे गवन्दए तस्साविसञ्जमी सेओ अन्दितस्स विकिञ्चणं ४० यः गवां सहस्राणां सहस्रं अर्थादश्लचं गवां मासे मासे दानपात्रेभ्यो दद्यात् तस्यैवं विधस्य गवां दयसहस्रदाय कस्यापि तस्मात् गवां दानात् साधोः संयमः आश्रवादिभ्यो विराग श्रेयान् अतिशयेन प्रशस्यः अत्र साधोरितिपदं अध्याहार्यं कीदृशस्य साधो किञ्चित्सख्यं वलु अपि अददानस्य अदातुरित्यर्थः ४० एयमहं० हे० तन्नो नमिराय रिसिन्दे विन्दो इणमव्ववी ४१ एतत् पूर्वोक्तमर्थं युत्वा नमिराजर्वि प्रतिदेवेन्द्रः पुनर व्रवीत् ४१ घोरा समञ्च इत्ताणं अन्नं पत्येसि आसमं इहेव पीसहरओ भवाहि मए आहिव ४२ अथ चतुर्णीमाश्रमाणां मध्ये प्रथमं गृहस्याश्रमं एव वर्णयति प्रवर्ज्यां दार्शं च परीचयति भी मनुजाधिप घोराश्रमं गृहस्याश्रम लज्जा अन्यं भिक्षुकाश्रमं प्रार्थयसि घोरो हीनसख्खेनरे निर्वोदमशक्यः आश्राय्यते विश्रामी गृह्णते यस्मिन् स आश्रमः आश्रमाश्रवारः ब्रह्मचारी १ गृही २ वाश्रमस्य ३

संजमीसिओ अदिंतस्सवि किंचणं १४०। एयमहं निसामित्ता हेजकारण चोईओ । तन्नो नमिरायरिसिं देविन्द्रेण मव्ववी ॥४१॥ घोराससंचइत्ताणंअसंपत्येसिआसमं । इहेवपीसहरओ भवाहिमणुयाहिव ॥४२॥ एयमहं निसामित्ता

एतदर्थं नियम्य युत्वा ए अर्थं शांभलीने हेतु कारणैः प्रेरितः ४१ घोराश्रमं गृहधर्मरूपं लज्जा धीर दोहिलो गृहस्याश्रम खीडीने अन्यमाश्रम प्रार्थयसि अनेरो आश्रम प्रार्थं के इहेव पीष धरती इहाज घरने विपे रत सावधान होइ अही नमी राजा अधिपती ४२ एतदर्थं

भिषुक्पा ४ तत्र गृहिणां आश्रमो हि दुरनुचर पालयितुमशक्य स्त परित्यज्य अन्य अपर हीनबलानां कातराणां सुखेन उदरभरणसमर्थं भिषुक्पा
 मायम बाब्बसि यत् उक्त गृहायमसमी धर्मो न भूतो न भविष्यति पालयन्ति नरा शूरा क्लीवा पापण्डमाश्रिता १ सुदुर्वह परिश्राय घोर गार्ह
 स्थमायमं मुण्डनग्न जटावेपा कल्पिता कुचिपूर्त्तये २ सर्वत सुन्दरा भिषा रसा यत्र पृथकर स्यादैक्यामिकौ सेवा नृपत्वं सातयामिक ३ तस्मा
 दिद कातराणां आचरित भवाद्यनां शूराणां न योग्य इति द्वाद इहैव अत्रैव गृहस्थायमे यौपधे रत चातुर्दयी पूर्णिमोद्दिष्टामावस्थाष्टम्यादितिथियु
 उपवासदिरतो भव अणुवतीपलक्षण चैतत् अस्योपादान पर्वदिनेषु अथग्न तपोनुष्ठानस्थापक यत् यत् घोर दुष्कर तत् घर्नार्थिना नरेण अतुष्टेयं यथा
 अनगमादि इति अन्तर्गते हेतुकारणे स्वयमेव श्रेये ४२ एयमङ्क ० हे०तश्चो नमीरायरिसी देविद इणमज्ववी ४३ अथ नमि राजर्षि देवेन्द्र प्रतिगृहस्थाग्रमा
 त्मिषुक्पायमे अधिकलाभ दर्ययति धर्मव्यापारपरो हि अधिकलाभ दृष्टिर्भवेत् ४३ मासेर जप्त्तो बालो कुसणेण तु मुजए न सो स्रक्वायधम्मस्स कलि
 अग्वर सोनसि ४४ य कयिवासी निधिदेकी नर मासेर कुमार्येणै य भुक्ते ननु कराङ्गस्यादिना भुक्ते यद्वा य कयित यावत् भोजनादि कुयस्य दर्भ
 स्यापे अधितिष्ठति तावदेव भुक्ते अधिक न भुक्ते अन्त्याहारो स्यादित्यर्थ अथवा यो बालोऽज्ञानी मासेर कुमार्येणै व भुक्ते कुमार्येण आहाररहसि

हेज कारण चोर्द्धो तश्चो नमी रायरिसी देविदङ्गण मज्ववी ४३। मासिमासिउ लो बालो कुसणेणतु मुजए । न

नियम्य गृत्वा एहो अर्थं ग्राभन्तीने हेतु कारणे प्रेरित ४३ मासे मासे य बाल मूर्खे तास मास खमण कीइ एक ग्राप्तानो निथ्या दष्टो करेत्ति कुया
 पमात्, नाधिक भुक्ते पारये मास यमणने जेतलीडामनी अयभागे अवे तेतली खाइ स य ताग्यातचारिचधर्मस्य भगवन्तनी भायो चारिच रूपधर्म

कुर्यात् श्रेष्ठं न किमपि भुंक्ते इत्यर्थं एतादृक् कठानुष्ठानकारीः सोऽपि स्वाच्चातधर्मं षोडशीं अपि कलां न अर्धति न प्राप्नोति सुष्ठुनिरवद्यं आख्यात
 स्वाख्यातस्तस्य स्वाख्यातस्य जिनीक्तस्य सयम धर्मस्य चारित्तस्य यः षोडशीभाग स्वतत्तुलीयि अज्ञानी लाभालाभस्य अज्ञः दुःशाश्रुभीजी नस्यादित्यर्थः
 तस्माद्गृहे तिष्ठतस्तप कुर्वती बालस्य यथा ख्यात चारित्र पालकस्य साधोर्महदन्तरं गृह्णी अतीव धर्मात्मा भवति तथापि सर्वसावद्यत्यागी न भवति
 देश विरत एव स्यात् तस्मात् सर्वं निरवद्यत्वात् जिनीक्तत्वात् मोक्षार्थिना निरवद्य धर्म एव आश्रयणीयः सावद्यस्तु न आश्रयणीयः आत्मघातादि
 वत् ४३ एयमष्टं० हे०तत्रो नमिरायरिसिं देवेन्दो इणमव्ववी४४ तत पुनर्नमिराजर्षिं प्रति देवेन्द्र इदमव्ववीत्४४ हिरणं सुवर्णं मणिसुत्तं कंसं द्रूसञ्च
 वाहणं कीस वड्डावइत्ताणं तत्रो गच्छसि खत्तिया ४५ अथ द्रव्यलीभ त्यागं परीचि तुमाह हे चत्तिय हिरण्यं घटितं स्वर्णं सुवर्णं अघटितं मणयञ्चन्द्र
 कान्त्याथाः इन्द्रनीलाथाः वासुत्तं सुक्ताफलं कास्यङ्गांय भाजनादि द्रव्यं वस्त्रादि वाहनं रथास्वादि कौशं भाण्डागारं एतत् वृद्धिं प्राप्य बद्धं यित्वा ततस्त्वं

सोसुअक्खाय धम्मस्सफलं अघड्ढ सोलसिं ॥४४॥ एयमष्टं निसामित्ता हेज्जकारण चीइओ । तत्रो नमि रायरिसिं देविं
 दोइरण मव्ववी ॥४५॥ हिरणं सुवर्णं मणिसुत्तं कंसं द्रूसंच वाहणं । कंसं वड्डावइत्ताणं तत्रो गच्छसि खत्तिया ॥४६॥

तदने षोडशां कलां न अर्धयन्ती न प्राप्नोति सोलमी कला एने पोहचे नहीं ४४ एतदर्थं नियम्य शुत्वा एहवो अर्थं सांभलीने हेतुकारणैः प्रेरित ४५
 रूपं सुवर्णं इन्द्रनीलाथा सुक्ताफलं रूपुं सोनुं मणि इन्द्रनीलादि कास्यं वस्तं रथादिका थाली चरवी वस्त वाहण वहल प्रमुख भण्डारं वृद्धिं नीला
 भण्डार भरीने भण्डारवधारीने ततः गच्छ हे चत्तियः तिवार पक्की जाजे तुं हे चत्तियः ४६ एतदर्थं नीयम्य शुत्वा ए अर्थं सांभलीने हेतुकारणैः

दीपायै गच्छ अथाय मागय य अपरिपूर्णेच्छो भवति स धर्मानुष्ठान योग्यो न भवति यथा मग्न्य अपरिपूर्णेच्छोहितवान् सा कांची भवति ४५
एयमः ० हे तत्रो नमोरायरिसो देविन्द इणमव्वो ४६ एतत् वचन शुत्वानमिराजर्षि देदेन्द्र प्रति पुनरव्वीत युवण रूप्यस यपव्वयाभवेसियाहु केलास
समा असुया नरस्य लुदस्य न तेहि किञ्चि द्रच्छाहु आगाससमा अणन्तिया ४८ पुढवीसाली जवाचिव हिरण्य पसुभियाह पढिपुन्न नालमेगस्य इद्र विज्जा
तवदरे ४८ सुवर्णस्य तु पुन रूप्यस्य च असत्यका बहव कैलायसमा अलुच्चासु वादाचि बहुयस्मात् कारणात्ययता भवेयु तदापि लुब्धस्य लोभ
अन्त नरस्यतै कैनाग पर्वत प्रमाणै स्वर्णरूप्य पुञ्चैर्नकिञ्चिदित्यर्थ लोभवत पुरषस्य कदापीच्छा पूर्तिर्नस्यात् इदृति निचयेन द्रच्छा आकाशसमा
अनन्तिका अपारा ४८ पुनरिच्छाया एव प्राग्यमाह पृथिवी समुद्रान्ता ग्रालय कलमापाटिक्य लोहितादेव भीज्यादय स्तण्डुला यवधान्यानि च
यद्दात् अन्यान्यपि गोधूम सुन्नादीनि हिरण्य सवण घटितदीनारादि द्रव्य हिरण्यग्रहेण अन्या अपि ताम्रकस्तोरदिधातव पशुभिर्गवाश्वगज

एयमः निसामिता हेज कारण चोर्द्धी । तत्रो नमो रायरिसी देविद द्रण मव्ववी ॥४७॥ सुवस्य रूप्य

स्य पव्वयाभवे सियाहु केलास समाश्रसखया । नरस्य लुदस्य न तेहि किञ्चि द्रच्छाहु आगाससमा अणन्तिया ॥४८॥

प्रेरित ४० सर्वर्णरूप्यस्य पर्वत प्रमाणा राययो भवेयु सोतारूपानो पर्वतप्रमाण राशिदिगलो इच्छो स्यान्नचित कैलायपर्वतसमाना असत्याता
नेरु पर्वत तुया मेरु पयतसरीखा असत्याता सीना रूपाना पर्वत नरस्य लुब्धस्य नतै कैलाससमे सुवणादिकिञ्चित् लोभी आपुणपनि दीजे तोही सयो
पत पामे द्रच्छा इ निधित आकाशसमा अनन्ता द्रव्य असत्याता दृष्या अनन्ती आकाशत् ४८ पृथ्वीयालयो यवाय ए सवली पृथ्वी शक्ति जय सीना

खरीष्टादिभि सह प्रतिपूर्णं समस्तं एव एकस्य पुरुषस्य इच्छा पूर्तयेन अलं न समर्थं भवति इदं इति एतत् विदित्वा साधुस्तपश्चरेत् तपः कुर्यात् इच्छानिरोध एव तपस्तत् विदध्यात् तपसा एव इच्छा पूर्तिः स्यात् तथाच सति सा कांचलं असिद्धं सन्तुष्ट तथा मम चाकांचणीय वस्तु न एव अभावात् ४८ एयमष्टं० हे०तगी नसिंरायरिसिं देविन्दो इणमव्ववी ५० अथ पुनर्नमि मुनि प्रतिदेवेन्द्र इदं आह अच्छेरग मभ्युयए भोए च यस्मिपल्यिवा असन्ते कामे पत्ये सि सङ्गये ण विहवसि ५१ हे पार्थिव एतत् आश्रयं वर्तते यत्त्वं एवस्विधोपि अइतान् रमणीयान् भोगान् लजसि भोगलगाय अस तोऽविद्यमानान् अप्रत्यक्षान् कामान् विषयसुखानि स्वर्गपवर्गं सौख्यानि प्रार्थयसे एतत् अपि आश्रयं अथवा तवात्रकीदीयः अतिलोभस्य विजृम्भितं एतत् अलब्ध प्रधान प्रधानतर भोग सुखाभिलाष रूपेण विकल्पेन विहन्यसे विवाध्यसे अष्टष्ट स्वर्गपवर्गं सुखलोभेन प्रत्यक्षाणि भोगसुखानि लक्षा

पुढवी साली जवा चैव हिरण्यं पशुभिरगृह्येत् । पडिपुगां ना लभेगन्ना इदं विजा तवंचरे ॥४९॥ एयमष्टं निसामित्ता -
हेजकारण चोईत्रो तत्रो नमिं रायरिसिं देविंदा इणमव्ववी ॥५०॥ अच्छेरगमभ्युयए भोगीचयसि पल्यिवा । असंतं

रूपा हाथी हिरण्यं पशुभिः अग्नादीनि धोडा प्रसुखतिणे प्रतिपूर्णं न समर्थः एकस्य एकने प्रतिपूर्णं भरीने एक मनुयने देजे ती हि तेहनी लथ्या पूरी न हीद इति विदित्वा तपः चरेदभिवेत इज जागीने तप करे ४८ एतदर्थं निगम्य श्रुत्वा एह्वं अर्थं सांभलीने हेतुकारणैः प्रेरितः ५० आश्रयं वर्तते यत्त्वं अइतकान् आश्रयना करणहारामहा अइत भोगान् लजसि हे पार्थिवएहवा भोगने छेडि के असंतः अविद्यमानान् कामान् प्रार्थयसे तदाश्रयं कृता भोग छांडीने अछता भोगनी यांछा करे के सत्त्वेन उत्तरीचार अप्राप्तं भोगाभिलाष रूपेण विकल्पे ण विहन्यसे संकल्पविकल्प करीने

पथात्तापेन त्व पीडसे इत्यर्थं य सद्दिवेकी भवेत्सत्वाथ वन् त्वक्ता अलव्य वस्तुनि सामिलापो नस्यात् ५१ एयमद्र ० हे० तन्त्री० देविन्दो इणमब्जवी ५२ तत पुनर्निराजर्षिं देवेन्द्र प्रतीदम ब्रवीत् ५२ सस्र कामा विसङ्ग्रामा कामा आसीविसोवमा कामे पत्ये माणा अकामाभङ्गति दुग्द ५३ एते कामा विपया विपिषयाधा विधायित्वात् सत्य सत्य सदृशा देहमथ्य प्रविष्ट त्, टित भद्रितुल्या प्रतिचरण पीडोत्पादिका पुन कामा विप विष सदृशा यथा विप तालपुटादि भङ्घित सत् मरणीत्यादक तथा कामा अपि धर्मजीवित विनाशिका सुखेन मधुरत्व सुत्याय पद्यान्मरण सुत्यादयन्ति दारुणत्वान् पुन कामा आगो विपीपमा आगोदाढा विप येपान्ते आगो विषा सर्पास्तिषा उपमा येपान्ते आगो विपीपमा सर्पसदृशा यथा सर्पदृष्टा जीवा म्रियन्ते तथा कामैर्दंष्टा जीवा म्रियन्ते यथा हि फण मण भूपता सर्पा शोभना दृश्यन्ते स्पष्टाय विनाशायस्य एतादृशान प्रार्थयन्तीजना दुर्गति यान्ति कीदृशा जना अकामा कामसुखाभिलाष वाञ्छतोपि अलभमाना अप्राप्त मनोरथा कामिनी नरकादौ ब्रजन्तीत्यर्थं तस्मादेते प्रत्येच्च

कामिपत्येसि सकष्येण विहत्रसि ॥५१॥ एयमद्र निसामित्ता हेज कारण चोईत्त्री । तन्त्री गमी रायरिसी
देविद इणमज्ववी ॥५२॥ सस्र कामा विसकामा कामा आसी विसोपमा । कामेपत्ये माणा अकामा जति

सुखकाद नहीं आगे भलाके इम करीने तु सर्वखावे के ५१ एतदथ िशम्य शुत्वा ए अर्थसामलीने हेतु कारणे प्रेरित ५२ कामा पुन कीदृक विधा विप शल्योपमा अही ब्राह्मण ए काम भोग विप शरीखा के गत्य सरीखा के पुन कामभोगा कीदृशा आशीवीष उपमावली कामभोग केइवाके आसी वीष मरीखा के कामान् प्राथयमा ॥ कामभोगाने बाके के वीण मीलता नधी शमेख्यमानापि यान्ति दुर्गति अणसेवता यका वीण दुर्गतेने विपे जाइ ५३

सुखीत्यादका अपिकामाः कष्टदायकत्वात् सयम धर्मश्च सकलकष्ट हरत्वात् विवेकिभिः कामाख्याया सयमीयाद्याः इति हार्दं ५३ अथ कथं दुर्गतिं यान्तीत्याहं अहीव यद्दकीर्हेणं माणैणं अहमागई मायागइ पडिग्घात्री लोभाओ दुहओभयं ५४ जीव ग्रीधेन अधी व्रजति नरके याति मानेन अधमागतिर्भवति गर्दभीष्टमहिष शूकरादि गतिः स्यात् साययासुगतेः प्रतिघातः मायासुगते रगला भवति लोभात् द्विधाणिभयं स्यात् ऐहिकं पारलौकिकश्च भय दुक्खं स्यात् कामप्रार्थते हि अवश्यं भाविनः क्रीधादयस्ते चक्रीधादय ईदृशाः ततः कथन्तत् प्रार्थनातो दुर्गतिर्नस्यात् एवं वचन युक्तिं श्रुत्वा इन्द्री नमिराजपिं प्रतिजोभयितुम शक्त. किं अकरोदित्याह ५४ अथ जज्जि जणमाहण रूवं विज्जव्विजण इन्दत्तं वन्दइ अभित्युणन्तो इमाहिं महुराहिं बग्गूहिं ५५ इंद्री नमिराजर्धिं प्रति वन्दते किं कुर्वन् इमाभिः प्रत्यक्ष वक्ष्यमाणभि र्मधुराभिः वाग्भिः सुवन् किं क्खत्वा ब्राह्मणरूपं

दुग्गइं ॥५३॥ अहीवयइ कीर्हेणं माणैणंअह मागइं । माया गइं पडिग्घाओ लोहाओ दुहओ भयं ॥५४॥ अवउज्जिम् -
जणमाहणा रूवं विज्जव्विजणा इंदत्तं । वंदइ अभित्युणंती इमाइं महुराहिं बग्गूहिं ॥५५॥ अही तेनिज्जिओ कीहो

अधी व्रजति क्रीधेन अधीगति जाइ क्रीधे करीने मानेन अधसा गति माने करी अधमगत पाप्मीए सायया गतिप्रतिघातं आया भली गतनेहणे लोभात् द्विधा नयः इहलौकिके परलौकिकेपि भय लोभ यकी भवो भवने विषे भय जपजे ५४ अपीह्य लय्या ब्राह्मणरूपं ब्राह्मणनू रूपच्छांडीने पूरीकरीने रूपं विकुर्व्य इन्द्रत्वं इन्द्रनू रूपविज्जव्वि वोक्खुवीने वंदिते सुत्तिं कुर्वन् इन्द्र नमी राजऋधिने वादि सुत करतो यकी आभिर्मधूरभिर्वाग्भिः इसील धुरीमीठीवाणोइ करीने ५५ अही इति आश्चर्ये लया निर्जितः क्रीधः अही माहानुभाव क्रीध जील्यो अही इति आश्चर्ये ते लया मानः पराजितः अही पुण्यात्मानं मान

पिवा इति प्रेत्य पूरलोकपि उत्तमी भविषति लोकस्य उत्तमीतमं अतिशयप्रधान स्थानं एतादृशं सिद्धिं सुक्तिस्थानं गच्छसि त्वं गमिष्यसि अत्र लीगुत्तमुत्तमं इत्यत्र सकारः प्राकृतत्वात् लीकीत्तमीत्तमां इति वक्तव्यं ५८ एवं अभियुगन्ती रायरिसिं उत्तमाए सद्याए पायाहिणं करन्ती पुणो पुणो वन्दए सकी ५८ शन इद्री नमिराजर्षिं पुनः पुनर्वन्दते भूयो भूयो नमस्खरुते किं कुर्वन् प्रदक्षिणां कुर्वन् पुनः किं कुर्वन् उत्तमया प्रधानया अदया रचाभक्त्या अभिष्टन् सुति कुर्वन् इत्यर्थः ५८ ती वन्दिजाणपाए चकं कुसलवखणे सुणिवरस आगासे शुप्पइत्री ललिय चवल कुखलकिरीडी ६० तो इति ततः शक्रः आकाशं गनु उत्पतितः उड्डित किं क्त्वा सुनिवरस्य राजर्षेः पादौ वन्दित्वा कीदृशी सुनेः पादौ चक्रां कुशलचणी राज्ञी हि

मद्वं । अहोते उत्तमाखंती अहोते मुत्ति उत्तमा ॥१७॥ इहंसि उत्तमा भंति पेञ्जा होहिसि उत्तमो लीगुत्त मुत्तमं
ठाणं सिद्धिं गच्छसि नीरञ्चो ॥५८॥ एवं अभियुगन्ती रायरिसिं उत्तमाए सद्याए । पायाहिणं करंती पुणोपुणो ~

ताहरं सुकमाल पणं अहो तव प्रधागा चया अहो नमी तुम्हमांहि उत्तम प्रधान चमा अहो ते तव सुक्तीर्निर्लोभ ता अं ठा अहो नमी तुम्ह मांहि निर्लोभता पणं अंठ प्रधान हे भदन्त इह जयानि त्वं गे ठः असि हे पूज्य इह भवने विषे तुं उत्तमछे पद्यादागामि भवे भविष्यसि उत्तमः प्रधानः पर लोकने विषे पीण तुं उत्तम हुस्स लीकीत्तमं स्थानं लोकने विषे जे उत्तम स्थानक तेठाम मीचं जास्यसि नीरजः कर्म रजो रहीत सीङ्गे वीषे जाइसी कर्मरहीत थकी ५८ एवं पूर्वीत्त रीत्या अभीष्टवन् इन्द्रे इगस्त्वो थकी राजरिषि नगि अं ठया अद्याः राजन्हविने उत्तम अद्याइं कारीने किं कुर्वन् प्रदी क्षणा कुर्वन् प्रदीक्षणा देतु थकी पुनः पुन वारंवार इन्द्रवन्दना करे ५८ ततः वन्दित्वा पादौ ऋषीश्वरना पगवांदिने किंविशिष्टी

पादयोयक्तां कुशलचण स्यात् कोट्टय गक्क ललित चपल कुण्डलकिरीटी लरिते सविलासे चपले चञ्चले चते कुण्डले च यस्य स ललित चपल कुण्डल
किरीट सुगट अस्तोति किरीटी ललित चपलकुण्डलायासी किरीटी च ललित चपल सुन्दर कुण्डल मुकुटधारक इत्यर्थ ६०
नमो नमेद् अग्राण सक सहेण चोद्दञ्चो चद्र जणगीह वेदेही सामन्ने पञ्जवट्टिञ्चो ६१ नमिराजर्षि आत्मान विनयधर्मे भावयति कथम्भूतो नमि
गक्के ण शाचात्प्रकारेण प्रत्यवीभूय चोदित गृहीत मनोभाव परीक्षिताग्रय सामिवेदेहेषु विदेहदेशाधिप गृह लक्षा यामण्ये
अमणसाधो कर्म यामण्य साधधर्म स्वत पर्यपस्थित उच्यते भूत् परि उपसर्गेण अयमथोद्योग्यते स्वयमेव उच्यते न तु इद्र प्रेरणातो धर्मेविभूतो
भूदिति भाव ६१ एव करेति सबुडा पण्डिया पवित्रकवणा विणियट्टन्ति भोगिस जहा से नमी रायरिसी त्तिवेमि ६२ सबुडा सम्यक ज्ञाततत्त्वा
पण्डिता सुनिश्चितयास्त्रार्था एव अनुताप्रकारेण कुर्वन्ति भोगिभ्यो विग्रेपण निवर्त्तन्ते कीदृशा सबुडा प्रविचचना प्रकपेण अभ्यासातिशयेन विच

वदए संक्का ॥५५॥ ता वदिउण पाए चक्क कुसलक्खणे सुणिवरस्स आगासिणुप्पद्दञ्चो ललियचवलकु डल तिरीडी ॥६०॥

नमी नमेद् अग्राण सक संकेण चोद्दञ्चो । चद्रजण गेह वद्रदेही सामण्णे पञ्जवट्टिञ्चो ॥६१॥ एव करेति

मुनिपादौ चक्राङ्कुशलचणीपिती चत्त अशुय साथीयो प्रमुखसहिते के पगमुनीखरना अर्थात् शास्त्रीकसुभलचणयुक्त हे चरणकमल इन्द्रआकाशे उल्ल
तित इन्द्र आकाशने घोषे अयो ललोत्तपल कुण्डरानुकटवान मनोहर चपल कुण्डल अने मुफट पहत्या के द्र द्रे ६० एव अमुना प्रकारेण कुर्वन्ती
साचात् गक्के ण प्रेरित प्रत्यच आवोने इद्र परीक्षा कोधो त्यक्ता गेह विदेहदेशीइव घर विदेहदेश क्वाडीने चारित्ते उद्युक्त अभवत् चारीतने

क्षण क्षियासहित ज्ञानयुक्त इत्यर्थं कश्च भोगिभ्यो निवर्त्तन्ते यथा नमि राजर्षिः भोगिभ्यो निवर्त्तित इति अहं व्रवीमिसुधर्मास्वामी जम्बूस्वामीनं प्रतिवदति ६२ इति नमि प्रव्रज्याख्यनवमं अध्वयनं ॥ इति श्रीसदुत्तराध्वयन सूत्रार्थदीपिकायां उपाध्याय श्रीलक्ष्मीकीर्त्तिर्गण शिथलक्ष्मोवल्लभ गणिविचितायां नवमाध्वयनस्यार्थः सपूर्णः ॥८॥ अथ दशमं अध्वयन प्रारभ्यते । नवमेऽध्वयने चारिलविषये निष्कम्बलं उक्तं तत् निष्कम्बलं शिख्यातएव भवति ततो दशमेऽध्वयने शिख्यां वदति इति नवमदशमा ध्वयनयोः सम्बन्धः दशममध्वयनं श्रीगीत मसुद्दिश्य श्रीवीरेणाभिहतं इति गीतमवक्तव्यता तावदुच्यते पृष्टि चम्या नाज्ञौ नगरी तत्र सालनामा राजामहा शालिनामा युवराजा तयो भोगिनो यशोमती तस्याः पिठरनामा भर्तास्ति यशोमती कुञ्चिसस्यूतः पिठरपुत्रो गागलि नामा वर्त्तते अन्यदा भगवान् श्री महावीरस्तत्र समबसूतः सालराजा महाशालादि परिहृतस्तत्रागतो भगवन्तं वन्दित्वाथे धरणीतलीपविष्ट श्रीमहावीरकृतमिमां देशनामशृणोत् मानुष्यादिका धर्मसाधनसामग्री दुर्लभास्ति मिथ्यात्वादयो धर्मप्रतिबन्ध हेतवो बहवो वर्त्तन्ते महारभादीनि नरककारणानि सन्ति जन्मादि दुःखप्रचुरः ससारीस्ति कथायाः संसारपरिभ्रमणहेतवस्सन्ति कथापपरित्यागी च मीचप्रसिरिति भगवद्देशनां श्रुत्वा संवेगसुपागतः सालराजाजिनेन्द्र प्रत्येवसुवाच भगवच्चरणमूलेहं तपस्याभादास्ये परं महासालं यावद्भ्राज्ये स्थापयामि तावच्छ्रीभगवद्भिरन्यत विहारी न कार्यः भगवता उक्तं प्रतिबन्धं मा कार्षीरिति

संगुढा पंडिया पवियक्त्वणा । विणियदृति भोगिसु जहासे नमी रायसिस्त्रिवेभि ॥२१॥ नमिऽध्वयणं रासूतं ॥८॥

विषे उच्यत सावधान हुञ्जी ६१ एव अनुना प्रकारेण कुर्वन्ती इम कहे सय बुढाः पण्डिताः प्रविचक्षणः पण्डितविचक्षण जाण साधु विशेषेण निवर्त्तन्ते भोगिभ्य भोगथकी विशेषे नीवर्त्ते यथा सनधि राजर्षि इच्छांथा तिम छंडे इति समाप्तौव्रवीमि जिम नमि राजा ६२ इति नमि प्रव्रज्याध्वयन समाप्तं ॥८॥

जितकपाया निर्मलत्राचर्यधरा स्वाध्यायध्यानगता दुर्धरेण तपधरणा अन्तप्रान्ताहारा शुक्लमास रुधिरा कृशशरीरा भवन्ति इमां गीतमन्त्रियमापा
 देगनां यत्वा वैश्रमणमनस्थेय विसम्बादो जात अहो एतेषा विशेषपुष्टियतिधर शरीर यतिवर्णने चेद्वयमिति वैश्रमणमनोवितक ज्ञात्वा गीतमसूदा
 पुण्डरीकाध्ययन प्ररूपितवान् तथाच पुष्कलावती विजये पुण्डरीकिकायां नगर्या महापद्म राजाभवत् तस्य पद्मावती राती बभूव तस्या कुचिसमूती
 पुण्डरीक कण्डरीक नामानी पुत्री जाती पितर्युपरते पुण्डरीकी राजा जात कण्डरीकी युवराजा जात अन्यदा तत्र स्वविरा साधव समायाता
 स्थिता नलनीषनउद्याने कण्डरीक सहित पुण्डरीकस्तत्र गतो वन्दित्वा निपण स्तेषा देशनां श्रुत्वा पुण्डरीक श्रावकधर्म प्रपन्नवान कण्डरीक प्रबुध
 स्तान् प्रत्येव जगाद अह भवचिकटे प्रनव्या गृहोये नवर पुण्डरीकराजान प्रतिवृच्छामीयुक्ता पुण्डरीक प्रति अह प्रनजामीत्युक्तवान पुण्डरीकीष्याह
 मा इदानी त्व प्रनज्यां गृहाण तवाय राज्याभियेक करोमि त्व निचिन्त सन् राज्य पालय यद्येष्ट सुख भुज कण्डरीकी नैतदङ्गी कुरुते पुन २ प्रनज्या
 ग्रहमेव कुरुते यायदसौ राज्यादिलोभिन गृहे स्थापयितु पुण्डरीकेण शक्यते तावत्कथमकष्ट पुण्डरीकीस्य दर्शयति अय सयम सत्य दुर्वहदु खचयकर पर
 यातुकास्वादसदृश गङ्गाप्रसुख महानदो प्रवाहसन्न खगमनवहसाध्य भुजाभ्यां समुद्रतरणवत् कष्टानुष्ठेय अत्र हाविशति परीपहा सोढव्या तत सुकु
 मालगरीरेण भवता नार सयम परिपालयितु शक्य तस्माद्गृहएव तिष्ठ राज्यसुख च नु जिति पुण्डरीकीशोक्त कण्डरीक प्राह वापुरुषाणा परलोकपरा
 ब्रह्मणां इहलोक विषयसुखदृष्ट्यावता अय सयमी दु पालीस्ति अहच विषयसुखपराभुख परलोकस सुख शूरविवरोक्षीति नाह सयनादिभेभीति वदत
 कण्डरीक पुण्डरीकराजा सयमग्रहणार्थं मनुशतवान् पुण्डरीककारितमहामह पूर्वक कणरीक सयम गृहीतवान क्रमेण स्वविरातिके एकादशगणानि
 पपाठ चतुर्थपष्ठाष्टमादि तपासि प्रत्यह चकार एकदा तस्य तपस्विताम्रप पारणक्षे तुच्छाहारैर्दधिज्वरादयो रोगा प्रादुर्भूता म्नाथाप्यसो स्वविरे सम

विहारं चकार एकूदा ते स्थविरा काण्डरीकेण समं विहरन्तः पुण्डरीकिण्यां नगर्यां समायाता नलिनीवने समवसृता पुण्डरीकराजा तेषां वन्दनया
तत्रायातः स्थविराणां देशनां श्रुत्वा काण्डरीकं ऋषिं वन्दते तद्वपुः सरीगं पश्यति पुनः स्थविरान्तिके समागत्य एवमवादीत् यदि स्थविराणामाज्ञा स्यात्
तदा काण्डरीकमुनर्वपुषि प्रासुकौषधादिभिश्चिकित्सा कारयामि यूयं मम यानशालायां तावत्कालं तिष्ठत ततस्ते स्थविराः काण्डरीकेण समं यानशालायां
गत्वा स्थिताः ततः स पुण्डरीक राजा काण्डरीकस्य प्रासुकौषधैश्चिकित्सां कारयति त्वरितमेव तस्य रोगोपशान्तिर्जाता. स्थविरास्ततो विहारं चक्रुः
रोगात् कादिप्रसुक्तोपि काण्डरीकमुनिर्मनोज्ञाहारादि सूचिं तस्ततो विहारं कर्तुं नेच्छति काण्डरीकस्य तादृशं स्वरूपमाकर्ण्य पुण्डरीकराजा
तदन्तिके समागत्य एवमाह धन्यस्त्वं कृतपुण्यस्त्वं सुलब्धभगुण्यभवस्त्वं येन राज्यं मन्तःपुरं परिहृत्य संयममाहृतवान् एवं द्विवारं त्रिवारवा
पुण्डरीकेणोक्ते प्राप्तलज्जं पुण्डरीकराजानमापृच्छ्य काण्डरीकः स्थविरैः समं ततो विजहार कियत्कालं उगविहारं कृत्वा पद्यात्संयमाद्विखिन्नः
शनैः स्थविरान्तिकाभिर्गत्य पुण्डरीकिन्यां नगर्यां अशोकवनिकायां अशोकवस्य पादपस्याधः समागत्य शिलापद्मारूढ उपहतमनः संकल्पः विकल्प
किञ्चिद्ध्ययन्नेव तिष्ठति ततः पुण्डरीकधात्री प्रसङ्गात्तत्रायाता तां दृष्ट्वा पुण्डरीकाय न्यवेदयत् पुण्डरीकोपि ततागत्य तं त्रिं प्रदक्षिणी
कृत्य धन्यस्त्वमित्यादि उक्तवान् काण्डरीकस्य तद्वचनं न रोचति सर्वथा संयमादृग्भ्रष्टं तं ज्ञात्वा पुण्डरीकः पुनरेवमुवाच अहो भ्रातस्ते यदि
विषयार्थस्तदं राज्यं गृह्णाणित्युया तं राज्यं अभिषिक्तवान् स्वयं तु पञ्चमीष्टिकं सोचं संयममुपात्तवान् काण्डरीक सत्कं पात्रीपकरणदिकं च
गृह्णीतवान् स्थविराणामन्तिके प्रवृज्जां गृह्णीत्वा हारं गृह्णीथे नान्यथेत्यभिग्रहं कृत्वा स्थविराभिसुखमेकाक्येव चलितः काण्डरीकसु राजगृहान्तं गत्वा
तस्मिन्नेव दिने सरसमाहारं भुक्तवान् रात्रौ च तस्य तदाहारसारात् कृग्रयरीरस्य उदरे महाव्यथा उत्पन्ना न कोपि तस्यांतिके मन्त्रसामन्तादिकश्चि

किंत्वार्थं समायाति प्रवृज्यापरित्यागादयोग्य इत्यय सर्व्वैरपि लोकेरुपेक्षित आर्त्तं रौद्रध्यानीपपन्नकाल कृत्वा सप्तमनरकपृथिव्या नारकिलिनीत्यत्र पुण्ड्र
 रीकरु खविरातिजे गत्वा पुनर्दीचा गृह्येतवान् प्रथममष्टम तप कृतवान् पारणके च शीतलरुचाहारेण वपुषि महावेदना समुत्पन्ना स्तस्तेन अनशन
 विहित चत्वारि शरणानि कृतानि आलोचितप्रतिक्रान्त पुण्डरीक काल कृत्वा सर्वार्थसिद्धिविमाने देवलिनीत्यत्र इम आख्यात वैश्रमणार्थे उक्त्वा एव
 पुनरुवाच अहो देवानुप्रियदुर्बलशरीरोपि कण्डरीक सप्तमी गतवान् सबलशरीरोपि पुण्डरीक सर्वार्थसिद्धि विमाने यतास्तस्माद्दुर्बलशरीर सयमसाधा
 सबनशरीर तद्व्याघातक एव नियमीनास्ति किन्तु ध्यानमेव तत्साधनयस्य शुभध्यान स सयमाराधक यस्तुप्रपथ्यान सस यमविराधक एव गीतमत्त्वामि
 थाख्यान् श्रुत्वा वैश्रमणी वन्दित्वा स्वस्थान गत गीतम प्रभाते चैत्यानि नमस्कृत्य अष्टापदाब्रह्मवतरतिष्ठ तापसास्तदा एवमाहु यूयमस्मद्गुरवी वय
 भवच्छिष्या भवाम गीतमस्वामी भणति मम धर्माचार्यं खिलीकगुरुर्वर्द्धमाननामास्ति तेच भणति युस्माकमप्याचार्यो वर्त्तते गीतम प्राह इंद्रशो मीन
 धमाचार्यो वर्त्तते यथा सर्वत्र सर्वदर्यो रूपसम्पदा तिरस्कृत त्रिलोकरूप किकरी कृतसकलसुरासुरविरचितसमवशरणीपविष्ट उपरिधृतच्छत्रय सुरेन्द्र
 दीप्यमानचामरयुगल चतुस्त्रिगदतिशयनिधान श्रमणभगवान श्रीमहावीरनामा वर्त्तते एव वीतरागस्वरूपमाकर्त्स्व तेषा तापसाना सम्यक्तीचय
 सम्यन्न तत सर्वेपि तापसा गीतमस्वामिना प्रवृजिता शासने देव्या तेषा सर्वेषां लिङ्गायुपनीतानि तै सर्वे श्रियै सह गीतमस्वामी ततयलित
 कस्त्रिधिश्रामे गत भिचावला जाता गीतमिनीक यद्भवता रोचते तद्भक्त्य मया नीयते तैरुक्त पायसमानीय सर्वलब्धिसपत्नी गीतम क्वचिद्गृहे पतद्गु
 ग्रह पायसेन भूतवान् उपायये आगत्य सर्वेषां तेषा मण्डल्यायुपवेशितानां पात्रेषु चीर परिवेषितवान् नच चीर क्षीण भवति महा नसिकलब्धिमता
 गीतमेन पतद्गृहे अगुह्येपात् जेमतामेव सेवालतापसानामीदृश परिणामी जात अहो अस्माक शुभकर्मादयो जात यतो अनभ्रष्टिसदृश समस्त

शास्त्रार्थं पारगात्री द्वयी गुरुश्रामिर्लब्ध इत्यादि भारता भाषयता वेषां तदेषु त्वेवञ्जानमृत्युश्च त्रिरातापगानां तु भोजनानन्तरं चरितानां भगवत्स
 मीपे प्राप्तानां भर्गवतः कृत्वाट्टियिभृतिं च पद्मता यवाग्निथ युताथवगाय योगिनो वैराग्यनमृत्युश्च' केषु तापगानां तु ज्ञानिन मानात्ता तादृशानां वा
 सायिनैव केवलज्ञानमृत्युश्च गीतमगामो भगवत्पराणी प्रपनाम नै तापममृत्युश्च अपि न नि रश्चितीजुन अत्रियोति प्रमिद्वर रन्तिता. गीतममृत्युतो
 भणति दृशगच्छत भगवन्तं प्रणमन भगवान् योर' ताड गीतस केरिनिनी नागातय ततो गीतमन्देशं निष्ठा दृक्कत दृशो ततः पर रीतरस्य रत्नपुति
 जीता ततो भगवान् योमरापीरो गीतमग्नामिनं प्रत्या गीतमपुोपपरिगिती न तत्र नदि मान् सगोस्कीति तत् एवमन्तं ता भगवन्तं नो
 त्यद्वितीजीवश्चप्रिद्वे व भवे तातागं त्वेवगानमृत्युश्च' इत्यर्थात्ता वेगरेति ता यथा इति निर्गोभिपरिगतस इति ताः इति
 कार्यीरिति तदानीं गामो मारापीरो द्रुमपततामथयन परपिततान् इदं ताथयन गामो यतीतय भगवता योमरापीरो प्ररिगतिति रीतद्रुमराप
 यनहृहृतो ततो ये यद्वति उत्तराययतनपे योमरापी र्गोधिनालि न समता एव योमराप नर' इत्यस्या दूरत एव निताए तत्र रत्न
 यवए एवं मग पापजीरियं समं गीतमगापसाग' आग्या भगवान् योमरापीरोत गीतमग्नामिनमृत्तियुत्तमन्ति इत्यर्थात्ता र्गोधिनालि

द्रुमपतए पडुयाग ज्ञाननिवउद्र ताड रागाग यवाए । एव सगुगान् जीपिय सत्य गीतमगाप साग । ३१ । एतस्ये वा
 द्रुम पतक पाण्डुर पतं यथा तिलार्पणं रिरे पातो यान् निपयन्ति यतीमर्दि यम ग यतीरि र सिम रीति ता योः ३१ । पर ताड यवापिय
 रात्रि जाड तियादि पातो एतेदो पक्वो दरे एवं सगुगानो अग्निः इत सगुगानु तदित्यय यमारां दे सतगति रीययता इति ३१ ।
 गीतम समयनाए प्रसाद मकर पी' इत्यादि यतनी मेल योधिनालि' अग्निः इति सिमरी रीरिदिः तिर्भे गीतम रने

गौतम एव अनेन दृष्टान्तेन मनुजाना मनुष्याणां जीवित जानीहि त्व समय समयमात्रमपि मा प्रमादी प्रमादमा कुर्या अत्र समयगतग्रहण अत्यन्त प्रमादनिवारणार्थं अनेन केन दृष्टान्तेन तत् दृष्टान्तमाह यथा रात्रिगणना अत्यये गमने रात्रीणा गणा रात्रिगखा कालपरिणामा रात्रिदिवससमूहा स्तेया अत्यये अतिक्रमे पांडरक द्रुमपत्रक पत्र हन्तात् शिथिलप्राय पर्ण पिपतति तथैव दिनाना अत्यये आयुर्लक्षणे वृन्ते शिथिले जाते सति जीवित शरीर पतति जीवी जातो यस्मिन् तत् जीवित शरीरमित्यर्थं जीवितस्य कालस्य विनाशमावात् जीवितशब्देन शरीरसुच्यते १ यदाह निर्दुक्तिकार परियत्तिय लावव चलतसिधितु अतविटग पत्र वसण पत्र कालेपत्ते भण्ड गाह १ जहत्तुक्के तहचक्के तुक्केवि अहीहिआ जहा अक्के अप्पाहंइ पडत पडुअपत्त किसलयाण २ नविअलिय नविअहीही उहावी किसलयपडुपत्ताण उवमा खलए सकया भविय जणविवीहडाए ३ यथा हि किसलयानि पाडुपत्ते ण अनुशिय ते तथा अन्वीपि योवनगर्हितो अनुशासनीय अथायुपी अनित्यत्वमाह कुसग्गे जह्मीसविदुए शीव चिट्ठइ लवमाणए एव मणुवाण

आस विदुए शीव चिट्ठइ लवमाणए । एव मणुवाण जीविय समय गीयममापमायए । २। इइ इत्तरियमि आउए
जीविए बहु पच्चवायए । विहुणाहि स्य पुरे काड समय गीयममापमायए । ३। दुल्लहै खलु माणुसे भवे चिरकातिण

वायरो आवे तिवारे खोसी पडे एव मनुष्याणा जीवितव्य इम मनुष्य नो आयुखी अस्थिरहे समयमपि हे गौतम मा प्रमादी हे गौतम समय मात्र पीण प्रमाद मतकरजे २ इत्युक्त प्रकारेण त्वरित स्वपकाल भावि आयुपि धोडा आयुष का जीविते वह्न प्रत्यवाय उपघात सहित आउखा माहि घणा विपन्न कष्टहे विधु निहि जीवान पृथक कुरंरज कर्म पुराकत पूर्वकत कर्म जीव शो दूरि करि समय मपि हे गौतम मा प्रमादी ३ दुर्लभो निययेन

जोवियं समयं गीयममापमायए २ हे गौतमसमयमात्रमपि मा प्रमादीः तत्र हेतुमाह यथा कुशस्थायि अवस्थायविंदुर्लम्बमानः सन् स्त्रीक स्त्रीककालं तिष्ठति वातादिनां प्रेर्यमाणः सन् पतति तथा मनुष्याणां जीवितं आयुरस्थिरं ज्ञेयं एवं आयुषीऽनित्यत्वं ज्ञात्वा धर्मे प्रमादी न विधेय इत्यर्थं २ इन्द्रइत्तरियंमि आज्ञए जीवियए बहुपञ्चवायए विहुणाहिरयं पुरे कण्डं समयं० ३ इत्युक्तादृष्टान्ते न इत्यरे खल्यकाल परिमाणे अनुत्थस्य आयुषि भी गौतमपुराजतं रजः प्राचीनकृतं पातकं दुष्कर्म विग्रीयेण धुनीहि जीवात् पृथक्कुरु हे गौतम पुनर्जीवितिके अर्थात् सोपक्रमे आयुषि बहवः प्रत्यावाया उपघातहेतवो अर्ध्व यसायादयो वर्त्तते यस्मिन् तत् बहुप्रत्यवायकं तस्मिन् बहुप्रत्यवायके समयं अपि मा प्रमादं कुर्याः अत्रायुः शब्दे न निरुपक्रमं आयुर्भूयते जीवितशब्दे न सोपक्रम भूयते एति प्राप्नोति उपक्रमहेतुभि रनपवर्त्तय तथा यथा स्थित्या एव अनुभवं इति आयुः तस्मिन् आयुषि निरुपक्रमे आयुषि खल्यपरिमाणेऽपि दुःखतं दूरीकुरु यद्यपि पूर्वकोटि प्रमाणमायुर्भवति तथापि देवापेक्षया खल्यमेव ज्ञेयं अल्पप्रत्यात् यदुक्तं धनेषु जीवितव्येषु रतिकामेषु भारत अदृष्टाः प्राणिनः सर्वे याताः यास्यन्ति यान्ति च अत्र सोपक्रमनिरुपक्रमायु ज्ञानं केवलिन एव भवेत् ३ दुःखहे खलु माणसे भवे चिरकालेणविसव्वप्राणिणं गाढायविवागकर्मणो समयं० ४ खलु इति निययेन सर्वप्राणिनां सर्वजीवानां चिरकालेनापि मनुष्यो भवो दुर्लभो दुःप्राप्तो वर्त्तते तत्र हेतुमाह कर्मणां

विसव्वप्राणिणं । गाढाय विवाग कम्मणो समयं गीयममापमायए । ४। पुढ्विकाय मद्गण्ड उक्खोसं जीवोउ संवसे

मानुष्यो भवः हे गौतम ए मनुष्यनीभव नियय करो पामवो दीहिलीवइकाले नापि सर्वप्राणीनां चिरकाले सर्वजीवने पाम वादोहि लाछे गाढाना श्रयि तुम शक्यः तथादृढाः यतो विपाकाः उदया कर्मणां गाढा तीव्र कर्मणां चिरकाल ना लागाछे तेह भणौ तीडतां दीहिला समयमपि हे गौतम माप्रादी ४ पृथ्वीकायऽधि गंत प्राप्त पृथ्वीकाय माहिं गयाथका जीव उत्तकृष्टीजीव उत्तकृष्टः संवसति रहेंतेकहछे काल संख्यातोतं असंख्या तो

गती जीव उत्कृष्टं संख्यातीतं कालं श्रसख्योत्सर्पिण्यवसर्पिणी प्रमाणं कालं सम्बसेत् तस्मात् ७ वाउकाय० ८ एवं जीवी वायुकायं अधिगतीपि उत्कृष्टं असंख्योत् सर्पिण्य सर्पिणी प्रमाणं कालं सम्बसेत् तस्मात् समयमात्रमपि प्रमादं माकुर्याः ८ वणस्सइ कायमइ गत्री उक्तीसं जीवी उवसम्बसे काल मणन्तं दुरन्तं समयज्ञीय ममापमायए ९ जीवः संसारी वनस्यतिकाय अधिगतः उत्कृष्टं कालं अनन्तं उत्सर्पिण्यवसर्पिणीमानं अनन्त कायिकापिचं वसेत् कथम्भूतं अनन्तकालन्दूरन्तं दृष्टेती यस्य स दुरन्तस्तन्ते हि वनस्यतिकाय मध्यगता जीवास्तत् स्थानात् उदृत्ता अपि प्रायेयि विशिष्टं नरादिभवं न लभन्ते तस्मात् दुरन्तमिति विशेषण ९ बेन्द्रिय काय मइगत्री उक्तीसं जीवी उवसम्बसे कालं सहिज्ज सन्नियं समयं ० १० हीन्द्रिय कायं जीवः अधिगतः सन् उत्कृष्टं कालं संख्यात सन्नकं संख्याता संज्ञायस्य स संख्यात संज्ञकस्त्वं संख्यातसंज्ञकं संख्यात

वीउ वसंवसे । कालमणन्तं दुरन्तं समयं गीयममापमायए ॥९॥ बेद्र'दियकाय मइगत्री उक्तीसं जीवीउ संवसे । कालंसंखि ०
ज्जसस्सियं समयं गीयममापमायए ॥१०॥ तेद्र'दियकाय मइगत्री उक्तीसं जीवीउ वसंवसे । कालंसंखिज्जसस्सियं समयं गी

वनस्यति कायमधि गतः प्राप्तः वनस्यती कायमांहि गयी थकीजीव उत्कृष्ट जीव सम्बसति उत्कृष्ट रहे जीव नवरं कालमनं तमित्यनंतकालपिचया अन तीत्सर्पिणीत्रव सर्पिणी प्रमाणं अनन्ती उत्सर्पिणी अत्रसर्पिणी काल रहे समयमपि हे गीतम मा प्रमादी ९ द्विन्द्रियकायमधिगत प्राप्तः वेन्द्रियकायमांहि गया थकी जीव उत्कृष्टं जीव सम्बसति उत्कृष्टी जीव वसे रहे कालं संख्यात वर्षसहस्रात्मकं संख्याता काल रहे संख्याता वरस रहे समयमपि हे गीत म माप्रमादी १० लीन्द्रियकायं अधिगतः प्राप्ती जीवः तेन्द्रीयमांहि गया थकां जीवः उत्कृष्ट जीव सम्बसति उत्कृष्टी कालजीव रहे कालसख्यातवर्ष

त्व प्राप्ती अपि उत्तरोत्तर गुणाग्नि दुर्लभा इत्यर्थं १६ लडूण विमाण सत्तण आयरित्त पुणरावि दुल्लह बहवेदसुयामिलक्खुया समय० १७ मनुष्यत्व
अपि नय्या आर्यत्व आर्यदेशीयत्ति भाव पुनरपि दुर्लभ यद्यपि मनुष्यत्व जीव प्राप्तीति तदापि आर्यदेशे दुर्लभमित्यर्थं यपदेशेषु धर्माधर्म
जीवाचीव विचार स आर्यदेशस्तत्रोत्ति दुर्लभा पुनरपि बहवो जीवादस्यवधीरा देगानां प्रात्ते पर्वतादिपु निवासकारिण सुस्करा भवन्ति
मोक्षे येपां याक सम्यक् केनापि न प्रायते ते मोक्षे उच्यन्ते पुलिन्दाना हलानेष्टा शबरावरटा भटा माला भिला किराताय सर्वपि मोक्षेजा
तय तत्र च धर्माधर्मज्ञान दुर्लभ तस्मात् समयमात्रमपि प्रमाद माङ्गुर्या १७ लडूणवि आयरियत्तण अहीण पच्चिन्दियसाहु दुल्लहा विगिलिन्दिय
याहुदीसइ समय १८ आर्यत्व आर्यदेशोत्पत्ति भाव अपि लब्धाहु इति पुनरर्थे अहीन पच्चिन्दियता पुनर्दुर्लभा इति वाहुत्वेन वहनां विकलेन्द्रि
तादृश्यते विकलानि रोगायपहतानि इन्द्रियाणि येषान्ते विकलेन्द्रिया सादृश्यते बहवोहि दुर्कर्म वशात् रोगीन्द्रिकेण

याहुदीसई समयगोयममापमायए ॥१७॥ अहीणपचि दियत्तपिसिलहे उत्तमधम्मसुइहुदुल्लहा । कुतित्थि निसिवए

जणे समयगोयममापमायए ॥१८॥ लडूणवि उत्तमसुय सदहणा पुणरावि दुल्लहा । मिच्छत्तनिसिवएजणे समयगोयम

वाहुत्वेन विकलेन्द्रिय तादृश्य ते वणालोकइन्द्रोद्द करो हीणदीसे हे समयमपि हे गौतम मा प्रमादी १७ अहीन पच्चिन्द्रीयत्वमप्यति दुर्लभ सयत्तपि
सेत्तहे कयचित् नभेत तथापि उत्तम धर्म्यस्य युति दुर्लभा पाचिद्री परगढा पाय्या पणि शुद्धधर्मनी सुणवी दुर्लभ कुतीर्थीसिवते लोका कुतीर्थना सेय
पहार घण नीज दिग्गे हे समयमपि हे गौतम मा प्रमादी १८ लब्धापि उत्तमां श्रति उत्तमधर्मसाभन्वी श्रडा पुनरपि दुर्लभा वर्त्तते धर्मसाभन्वी पीण

स्यादित्यर्थः तस्मान् शीत्रबले सति धर्मश्रवणादरः कर्तव्यः तत्र समयमात्ममपि त्वं मा प्रमादी २२ परिजूरइते सरीरयं केसापंडुरया ह्वंति ते से चक्षुबले ० २२ गाथाया पूर्वार्धे स्थार्थः पूर्ववत् ज्ञेयः तत्पूर्वसत्क चतुर्बलं हीयति तत् हानी च धर्मकरणं दुर्लभं ज्ञात्वा प्रमादं मा कुर्याः २२ परिजूरइते सरीरय० से घ्राणबलिय० २३ तत् पूर्वसत्कं अपि घ्राणबलं नासाबलं हीयति तस्मान्नायाबले सति त्वया सुरभिदुरभिमग्न्य ग्रहणेन विषये रागहेषकरणे वेलायां प्रमादी न विधेयः २३ परिजूरइ० सेजिम्बबले यहायई समयं० २४ तत् जिह्वाबलं हीयति यादृश्यं तरुणावस्थायां भवेत् तादृश्यं हृडावस्थायां न स्यात् तस्मान्जिह्वा बले सति स्वाध्यायादिकरणे प्रमादं माकुर्याः २४ परिजूरइते सरीरयं० सेफ्रा सबले यहा यए सम० २५ तत्स्पर्शबलं शरीरबलं हीयति यादृश्यं यौवने शरीरं बलं भवेत् तादृश्यं जरायां न स्यात् तस्माद्दर्मानुष्ठानादी प्रमादं माकुर्या २५ परिजूरइते सरीरयं० से सबबले यहायई सम० २६ तत् तरुणावस्था सत्कंसर्वबलङ्कर चरणदन्तादीनां बलं हीयति तस्मात्समयमात्ममपित्वं माग्रमादी १६ अरई गण्डुम्बिगुइवा आयङ्गा विजिह्वा

तिते । सेजिम्बबलिय हायई समयंगोयममापमायए ॥२४॥ परिजूरइते सरीरयं केसापंडुरया ह्वंतिते । सेफ्रासबलिय हायई समयंगोयममापमायए ।२५॥ परिजूरइते सरीरयं केसापंडुरया ह्वंतिते ।

प्रमादी २४ परिजीर्यते तव शरीरं प्रति शरीरजीर्णं थाइछे केया. खे ताः भवन्ति तव केश धवला दुस्ये से सर्वं बलात् क्षीयते देहनी स्पर्शनी बलश्री क्खी पळे के समयमपि हे गीतम मा प्रमादी २५ परिजीर्यते तव शरीरं प्रति शरीरं जीर्णं थाइ छे केयाः खे ता भवन्ति तव केश धवला हुइ छे से सर्वबलात् हीयते कर चरणावयवानां शरीरनी बल श्रीकु थाई छे समयमपि हे गीतम मा प्रमादी २६ अरतिः वातादिजन्यं चित्तीदिगं

किं किमिव कुशुदं कमलं पानीयमिव यथा कुशुदं पानीयं त्यक्त्वा पृथक् तिष्ठति तथा त्वमपि स्नेहल्यक्त्वा पृथक् भवेत्यर्थः कीदृशं पानीयं शारदं शरदि
 ऋतौ भवं शारदं अत्र पानीयस्य शारदसिन्धुः विशेषणं मनोरमत्वं स्त्रीहस्य दर्शितं एते हीहि संसारिणो जीवस्य मनोहरो जगति से शब्दीष्य शब्दार्थ
 अथ त्व सर्वस्नेह वर्जितं सन् समयमात्रमपि प्रमादं मातुर्याः २८ चिन्त्वा धणञ्चारियं पव्वङ्गोहि सि अणगारियं सावन्तं पुणोवि आइए समयं ० २८
 हे गीतम् यदित्वं अनगारितां साधुत्वं प्रव्रजितोसि प्रकषेण प्राप्तीसि किं क्त्वा धनञ्च पुनर्भार्यां त्यक्त्वा तदा पुनरपि वागन्त्यक्तं मापिव लक्ते वक्षुणि
 ग्रहणादर मातुर्याः सममात्रमपि मा प्रमादीः २९ अत्र उज्जिमित्त बंधवं विउलंचेव धणोहसंचयं मातंवि इयं गविसए सम० ३० हे गीतम् भिल
 बान्धवं अत्र उज्जिमय अपीह्यत्यक्त्वा च पुनर्द्धनौ घसचयं धनस्यञ्चौघ समूहो धनो घसस्य सच्यो राशीकरणं तदपि अपीह्यत्यक्त्वा बित्तीय इति द्वितीय

चिन्त्वाधणञ्च भारियं पव्वङ्गो हि सि अणगारियं । मावंतंपुणोवि आइए समयं गीयम मा पमायए । २९। अत्र उज्जिमय
 मित्तबंधवं विउलंचेव धणोहसंचयं । सातंबीइयंगविसए समयंगीयममापमायए । ३०। न हुजिणे अज्जादिस्सुद्धं बहू

मा प्रमादी २८ त्यक्त्वा धनं पुनः भार्यां धनं अने भार्यां छोड़ीनि प्रव्रजितः अनगारतां दीचालीधी छे अणगार हुञ्जी छे मा भोगादिकं वां तं पुनरपि न
 गवेषय कांमभोग सर्वतेवस्था छे ते बली अङ्गीकार मतः करे समयमपि हे गीतम् मा प्रमादी २९ अपीह्य त्यक्त्वा मित्ताणि च बान्धवांच्छं जा छे मित्त
 तथा बान्धव भाई विपुल पुन एव द्रव्य समूह विपुलविस्तीर्णं जे धन संचा हता ते सर्वं छांड्या छे मातन्मित्रादिकं गवेषयः एतावता मेलीने बीजीवार
 बली गवेषणा करे मति समयमपि हे गीतम् मा प्रमादी ३० नहु निधये जिनीय दृश्यते वर्त्तमान काले बीतराग नथी दीसता बहुमती दृश्यते

एव अन्वयनिर्दिष्टं बालवर्णनात् ॥ १० ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

थार पुनरित्यय तत् मितवान् य धनो वसत्रयादि मागविपयेत् तस्मात् समयमात्रमपि माप्रमादो ३० नहुजिणे प्रज्जदिससरे बहुमए दिस्सए गग
 देमिए मन्पइने याउ एपणे समय० ३१ पुनरपि गोतगादोन् हटोकोरति श्रीमहावीर इ गीतम सम्प्रति इदानीं मयि विद्यमाने प्रत्यघ प्रमाणेन
 गृहणमाने सति नैयायिके मुक्तिरूपे पथिमार्गविपये माप्रमाद भयात् कुर्यात् यद्यपि तद्यपि नास्ति तथापि अह विद्यमानोऽस्मि इति
 सांप्रत समयया भायेन प्रमादस्याज्य अये तु महिरहेऽपि एतादृश्या भाविनो भव्यतना भवियन्ति ये इति विचिन्त्य इत्वगुमान प्रमाणे विधाय
 नैयायिके मार्गे साधधर्मे मयि च स्थिरा भवियन्ति तत् किं अनुमानं कृत्वा अप्रमादिन स्थिराय भवियन्ति तदाहमार्ग इव सुनि नार प्रतिपत्या
 इव देयित कथितो मार्गदेमित अयच्छ्रीय दयाधर्मी मुक्तिमार्गइय कथितो ह्ययते अय इदानीं जिनो न ह्ययते कथभूतीय मार्गदेशित बहुमत
 पद्भिम्यहनां वामतो बहुमत अथवा बहुयोमाता न यायस्मिन् स बहुमत नै गगसग्रह व्यवहार ऋजु सुत्रमय्द समभिष्ट इव यथादि रात्र नया
 लक प्राणदर्शन पारिव्रजि माघमार्गं अपरमतेदि एकान्त वादित्व तस्मादय जैन मतसु बहुमत एवस्मिन्धीय मुक्तिमार्गं अतीत्यार्थं दर्शित
 पिन केवलिनं विना तस्मात् अस्य बहुमतस्य मुनिमार्गस्य एव भव्या प्राथ्यन्ति वेदय मुनिमार्गोऽस्तिपिनो नाम्नि तदा थाल्य मार्गस्य कणि
 इहापि प्रामोत् न च स कवित् वणाऽपि सामान्य किन्तु अस्य धर्मस्थोपदेष्टा कचिदाप्तो जिन एव भवितु मर्हति इति महिरहेऽपि अप्रमादिनो
 भवियन्ति मयि सम्प्रति केवलिनं सति अस्मिन् नैयायिके पथि सर्वथा प्रमादस्याय एवेति भाव्यं नित्यत आयो मुक्तिलाभो ताक्षो यस्मिन् गनै
 यायिको प्राणदर्शनचारित्व रूप एवथयाप्रक इत्यर्थं अथ पुनरपि अस्या गाया गान्धर्मयोऽप्यस्ति हे गीतम अथ इदानीं भव्या जिन देवी न
 ह्यते ह्यगते इति क्रिया वनात् भवान् इति पद प्रमुष मपि गृह्यते परं बहुभिर्मतोमान्यो ज्ञातो वा बहुमत अथात् प्रसिद्ध मार्गइय गित्य भवन

मार्गो देशिती मद्या तवोपदिष्टः स मार्गस्त्वया विलोक्यते एव तस्मात् सम्प्रति इदानीं मयि जिने सति नैयायिके मार्गं मरुक्ते मार्गं समयमात्रमपि माप्रमादीः मयि विद्यमाने सति मयि विषये मीहात् भवान् जिनी न वर्तसे पद्यात्वं जिनी भावी तस्मादिदानीं मद्भवने प्रामाख्यं विधेयं इत्यर्थः ३१ अवसीह्य कण्ट्यापहं उत्तिन्नोसि पहं महालयं गच्छसि मगं विसीह्यं सम० ३१ हे गौतम त्वं महालयं पत्या न सुत्तीर्णोसि प्राप्नोसि महान् सत्यक् ज्ञान दर्शनचारित्र लक्षणः आलयः आश्रयो यस्मिन् स महालयस्तं महालयं एतादृशं पत्यानं राजमार्गं प्राप्नोसि किं कृत्वा कण्टकपथं भव शोध्य कण्टकानां बोध चरकसत्यादीनां पत्याः कण्टकपथ आकारः प्राकृतिकः अथवा कण्डेः कुतीर्थिकैः आकीर्णो व्याप्तः कुत्सितः पत्याः कण्टकापथस्तं परिहृत्य सम्यक् सुक्तिमार्गं राजमार्गमिव प्राप्नोसि हे गौतम यदि विशेषेण शोधिते निरवद्ये मार्गे गच्छसि तदा समयं अपि प्रमादं

मएदिस्त्रमगदेसिए । संपद्रुनेयाउएपहे समयंगीयममापमायए ॥३१॥ अवसोहिय कंटयापहंउत्तिन्नोसिपहं महालयं गच्छसि मगं विसीहिया समयंगीयममापमायए । ३२। अवले जहभारवाहए मामग्गेविसभेव गाहिया । पच्छापच्छाणु

मार्गदेशकः घणा मत सुक्तिमार्गना देशाडणहारदीसिछे सम्प्रति मीचमार्गे पथि साम्रतहवणा मीचमार्गने विपे प्रमाद मत करे समयमपि हे गौतम मा प्रमादी ३१ अवशोध्यपरिहृत्य कण्टकानां द्रव्यतथूलकण्टकादीनां भावतः चरकादि कंटानी मार्गलाब्धो हे चरकादीपायंडी तेहने पणी मार्गलाब्धो हे उत्तीर्णोसि पथं महान्तं लाब्धो हे मीटा मार्गं गच्छसि मार्गे त्वं विसीह्य भलो परे मार्गं सोभीने तुं जाइसी सुक्तने विषे ते कारणे करीने समयमपि हे गौतम मा प्रमादी ३२ अवली यथा भारवाहक निबल जिम भारवाहक मार्गविषम भ्रवगाद्य प्रयिश्य त्यक्त अङ्गीकृत भार माथे भार लीधो हे विषम

त्व मा कुर्यां ३२ प्रबन्ने जह भारवाहए मामगं विसमे वगाहिया पच्छाणुतावए समय० ३३ हे गौतम यथा कथित् भारवाहको विपम माग प्रवगाद्य विपमे मार्गं स्वर्णादि भारसुत्याव्य समे मार्गे अवल स्यात् स च भारवाहक पद्यात् गृहमा गत पद्यादनुतथ्यते पद्या सापपीडित स्यात् कौर्धं यथाकधिङ्गारवाहक सिरसि कतिचिद्द्विनानि यावत् विपमे मार्गे स्वर्णादि भारमुद्दहति तदनन्तर कुचचित्पायाणादि सद्गुने मार्गे भारिणाक्रान्तीह मिति ज्ञात्वा त भारमुत्सृजति स च भारवाहक पद्याद् गृहमागत सन् निर्दन्त्वेन पद्यादनुतथ्यते पद्यात्ताप पीडित स्यात् तथा त्वमपि विपम माग तारुण्यादि वयोविशेष महाव्रतभार मुद्वाह्य समे मार्गे यौवनीत्तारे कुत्रचित्परीषदादिना खलन् महाव्रत भार त्यजन् प्रबन्ने भवन् पयादत्ये वयसि आगत स यमधनरहितो भूत्वा मा पद्यादनुतथ्ये मा पद्यात्तापपीडितो भूया इति विचिन्त्य समयमात्रमपि मा प्रमादो ३३ तिणीडुसि अणयमह कि पुणचिद्दसि तीरमागश्चो अभि तुरपार गमित्तए सम० ३४ हे गौतम त्व अर्णव भवसमुद्र तीर्णं एव असि उल्लङ्घित प्रायोसि कि पुनस्तीर आगत सन् तिष्ठसि श्रीदासीन्य भजसि हे गौतम भवार्णवस्य पारगन्तु अभिल्वस्व पारगमने उत्सालो भव इत्यर्थं तीर

तावए समयगोयममापमायए ॥३३॥ तिष्णोहिसि अण्वमहकिपुण चिद्दसितीरमागश्चो । अभितुरपारगमित्तए समय

भार सर्व लाब्धो हे चीरकाले पापढी तेहनो पीणमार्गं लाब्धो हे दीहिलो पद्यात् पद्यात्ताप क्तस्या पछे ते भारवाहक मारग लाब्धा पछी पछतावे शटनी मार्गं लाब्धो हे चर धोडो सोमार्गं आदे रद्या हे तिवारे भारनाखीदीह हे गौतम मार्गं लाधीने धोडामाही भारनाख्यो समयमपि हे गौतममा प्रमादो ३३ तीर्णोसि भवसागर महांत हे गौतम ससारसमुद्रतयो हे कि पुनस्तिष्ठसितीरमागत हे गौतम काठे आवीवैठा काह हे अभि सन्नु स्वमुक्ति ग तुल्वरा गोघ्न भव पार अर्थाग्मुक्तिपदगन्तु हे गौतम तु शीघ्र मुक्ति जाह समयमपि हे गौतम मा प्रमादो ३४ अण्वमहकिपुण चिद्दसितीरमागश्चो चपकत्रेणि

मत्र सुक्तिपदपुच्यते तस्मात्समयमात्रमपि मा प्रमादोः ३४ अकले वरसेणिमुस्त्रिया सिद्धिं गीयमलीयं गच्छसि खिमंच सिवं अणुत्तरं सजयं० ३५ हे गीतम त्व सिद्धिं सिद्धिं नाम कं लीकं स्थानं गमिष्यसि प्राप्ससि किं छावा अकलेवरश्रेणिं उत्सृज्य न विद्यते कलेवरं शरीरं देवां ते अकलेवराः सिद्धा स्त्रिषां श्रेणि उत्तरोत्तरप्रशस्तमनः परिणति पद्धतिः क्षपकश्रेणि स्त्रिं उत्सृज्य उत्तरोत्तरसंयसस्थानग्राह्या उन्नतां द्रवत्वात्वा कथयश्रुतं सिद्धिं लीकं त्वेस परचक्राद्युपद्रवरहित पुन कोदृशं शिव सकलदुरितीपशमं पुनः कोदृश प्रनुत्तरं सर्वोत्कृष्टं ३५ बुद्धे परिनिवृद्धिचरे गामगए नगरेवसंजए संतिमगचबूहए समयं० ३६ हे गीतम परिनिवृत्तः शांतरससहितः सन् चरसंयमं सेवस्व कीदृशः ग्रामे गतो ग्रामगतः च पुनर्नगरे गतः च शब्दात् वने वा स्थितः पुन कोदृशः संयत् सम्यक् यत्वं शुर्वाणः पुनः कोदृश बुद्धी ज्ञाततत्त्वः च पुन हे गीतम शांतिमार्गं त्वं ब्रंहये भव्यजनानां उपदेशधारेण

गीयममापमायए ॥३४॥ अकलेवर सेणिमुस्त्रिया सिद्धिं गीयमलीयं गच्छसि । खिमंचसिवंअणुत्तरं समयं गीयमनापमा
यए ॥३५॥ बुद्धेपरिनिवृद्धे चरेगामगएनगरेव संजए । संतिमगं चबूहए समयं गीयममापमायए । ३६। बुद्धस्त्रानिससम्भ

नेविषे चढीने पछे सुक्तिजाइ सिद्धिं हे गीतम लीकं गच्छसि हे गीतम सिद्धिलीकने विषे जाईसि परचक्रादि रहितं शिवं सर्वोत्तमं सुक्तिः कीसी छे खिम कल्याणनी करणहार छे शिव उपद्रव रहितछे सर्वोत्कृष्टछे समयमपि गीतम मा प्रमादो ३५ ज्ञाततत्वपरीनीहं तक्षधायः समयचरेत् तत्त्व जाणे छे कषाय आपणे वशी कोधा छे इम विचरजे सुक्तिमार्गं बुद्धिं नयेत् सयतः गाम नगरने विषे शीतल हुओ श्री शकी विचरे सुक्तिं मार्गंच बुद्धिं नयेत् उपशम मार्गव धारे उपसम मार्गं बुद्धि करे समयमपि हे गीतम मा प्रमादो ३६ वीरस्य श्रुत्वा भाषित बुद्धतीर्थकर तेहनी वचनसांभली सुटु कथितं तीर्थकर भली कथी

इति प्रापये अतः कार्यं समयमात्रमपि मा प्रमादो २६ बुद्धस्य निसम्भ भासिय सुकहियमदृष्यो वसोहिय राग दीप्त च छिदिया सिद्धि गण गोयमुत्ति वेनि २७ गीतम सिद्धि मुक्तिस्थान प्राप्त कि कृत्वा बहस्य योमहावीर देवस्य सुदृसो भन भापित सुभासित सम्बक उपदेय त्रिगम्य श्रीतद्वारेण ह्यय धाय च पुन राग हेप च छिन्वा कीदृश सुभाषित सुकथित सुतरां अतिशयेन शोभनप्रकारेण उपमायोगिन कथित वाक्यप्रबन्धेन रचितमित्यर्थं सुधर्मा स्वामी जवूस्वामिन पुर आह यथा योमहावीरदेवेन गीतमादि शिष्याये कथित तथाह तवाग्र्ये ब्रवीमोत्यर्थं ३७ इति दुमपत्रास्य अध्ययन दयम सम्पूर्णम् ॥१॥ इति योमदुत्तराध्ययनसूत्रार्थदोषिकायां उपाध्याय श्रीलक्ष्मीकोत्तिगणिशिल्लोवत्तभगणिविरचितायां दशमाध्ययनस्यार्थं सम्पूर्णं १० अथ दशमेऽध्ययने प्रमादपरिहाराय उपदेयो दत्त सच विवेकिन एव स्यात् विवेकी च बहुश्रुतो भवेत् अत एवाद्य अध्ययन बहुश्रुतास्य बहुश्रुतपर्येन

भासिय सुकहियमदृष्यो वसोहिय । राग दीप्तचछिदियासिद्धिगण गणगोयमत्तिवेनि ॥३७॥ दुमपत्रजम्भयणसम्पत्त ॥१०॥

सजोगात्रिष्यमुक्त्वा अणगारस्यभिव्रुणो । आचारपाठकरिस्मानि आणुपुण्विसुण्येहमे । १। जेयाविहोद्र निव्विजेयधे

अर्थपदै रूपयोभित अर्थ अने पद तेषे करो योभित छे राग हेपच छिन्वात् रागहेप छेदीने सिद्ध गते गत गीतम इति समाप्ती ब्रवीमी गीतनमुत्ति पुहता २७ इति योदुमपत्रकाध्ययन सम्पूर्णम् ॥१०॥ सजोग रहितस्य बाह्य सजोग घर धन माल वेटा वेटी प्रमुख अतरङ्ग सयोग पार करायसजोगवाद्य अन्तरसयोग सर्वं छांढा छे अनगारस्य भिद्यो घररहित भिद्यसयतीने आचार प्रकटी करिथामि ते साधुनो आचार प्रगट करोसु अन्तुत्तमेण श्रुत ते मन कथयत अनुक्रमे मुक्त्वा कहता सांभलो १ यथापि भवन्ति निर्विद्य विद्या रहित जे साधुं विद्याइ करी हीन दुवे

मुच्यते सूत्रं संजोगाविष्यमुक्तस्य अणगारस्य भिक्वुणो आचारं पाउकरिस्सामि आणपुब्बिं सुणेहमे १ हेजंबू संयोगात् विप्रसुक्तस्य अनगारस्य भिक्वोः आचारं साधुयोग्यक्रियां बहुश्रुतपूजा रूपं बहुश्रुतस्वरूपज्ञानं आतुपूव्यां अनुक्रमेण प्रादुःकरिथामि प्रकटी करिथामि मे, मम कथयिथतः त्वं शृणु १ अथवा साधो आचारं आकारं बहुश्रुतस्य आकारं बहुश्रुतः कीदृग् स्यात् तत् प्रकटी करिथामि १ प्रथमं तत् परिज्ञानार्थं अबहुश्रुतस्य लक्षणमाह ॥ जिया विहीर निब्बिक्के थडे लुडे अण्णिग्गहे अभिक्खणं उल्लवई अविणीए अबहुस्सुए २ यथ यो मनुष्यो निर्विद्यो भवति अपिग्रब्दात् सविद्यो वा भवति स चेत् स्तब्धा अहङ्कारी भवति पुनर्लुब्धो भवति रसादिषु लोलुपो भवति पुनर्यो अनिग्रह इन्द्रिय दमरहितो भवति पुनर्यः अभीक्ष्णं वारं उल्लपति उवा बल्ये न यथा तथा अविचारितं लपति वाचालो भवति स पुरुष अविनीतो विनयधर्मरहितोऽबहुश्रुत उच्यते सविद्योपि अबहुश्रुतः स्यात् चेत्सवियत्वस्य फलं न प्राप्नुयात् तद्विपरोतो बहुश्रुतः स्यात् अबहुश्रुतस्य कारणमाह २ अह पंचहिं ठाणेहिं जेसिं सिक्खा न लभई थंभाकीहापमाणं ३ रोगिणालस्सुए ण ३ अथ शीतुः पुरुषस्य उल्क्षणता करणे ये. पञ्चभिः स्थानैः प्रकारे ग्रिथाग्रहणा असिचना रूपान लभ्यते न प्राप्यते तानि पञ्चस्थानानि शृणु इत्यध्याहारः स्तम्भः क्रोधः प्रमादः रोग आलस्यं च स्तम्भात् अहङ्कारात् ग्रिचायोग्यो न भवति तथा क्रोधात् अपिग्रिचायोग्यो न भवति तथा पुनः प्रमादेन मदविषयकषायनिद्राविकथा रूपेण उपदेशयोग्यो न स्यात् तथा रोगेण वातपित्तश्लेष्मादिव्याधिना ग्रिचाग्रहणाही न भवति तथा

लुडेअण्णिग्गहे । अभिक्खणं उवल्लवई अविणीएअवहुस्सुए ॥२॥ अहपंचहिंठाणेहिं जेहिंसिक्खानलभई थंभाकीहापमा

स्तम्भः लुब्धः रसादिग्रहः स्तम्बरहे लोभ करे इन्द्रोप्रापणा वय न करे अहङ्कार करे अभिक्खण पुनः २ वार वारं उल्लपति वार वारबीले लबाडी करे स अविनीतः अबहुश्रुतः उच्यते ते साधु अविनीत अबहुश्रुत कहे जे २ अथ पञ्चभिः स्थानैः हवे पांचे थानके करी ये सिचाग्रहणं न लभ्यते सूत्र अर्थने

अभोक्षणवार २ क्रीधो भवति क्रोध करोति च पुन प्रबन्ध क्रीधस्य इति कुपितोपि क्रोमलवचनै रपि क्रोधस्य अल्पजन क्रोधस्य खिरीभाव प्रकुरुते
मित्तीयमाणोपि मित्त समालु अय इति विचिन्त्यमानोपि पथावमति त्वजति कोर्ध पूव हि मित्रभाव कृत्वा पद्यात् ल्वरित मित्रत्व तौटयति ननु सा
धयोहि कतापि मित्तत्व जे हभाव केनापि सह न कर्तुं सयोगादिप्र भुक्ता भवेयु न्नादिं काय मित्तित्तमाणी वमइ इत्यक्त अत्रहि पट् जीवनिकायेषु
व्रत ग्रहणसमये मैनी विधाय शिथिला चारित्वेन ता मैत्री यज्यु रित्यर्थ अथवा केनापि धर्मशिक्षा शास्त्रार्थ दानादिना उपकार कृत स च हित
कारकत्वात् मित्त प्रायस्तत्र उपकार लोपत्वेन कृतपत्त्वेन मित्तत्व यमति अविशीतस्यै तत्तत्रण इत्यर्थ पुनर्यं शुत लब्धामाद्यति ज्ञानाभ्यासादहङ्कार
करोति विद्या मदीत्यस्त इत्यर्थ ७ अपि शब्द स भावनाया य पाप परिचेपी अपि सभाव्यते पापै समिति गुप्ति खलनै परिचि पति तिरस्करोती
त्वेष शील पाप परिचेपी स मिति गुप्ति विराधक प्रति तिरस्करोति कोर्ध कदाचित् कश्चित् स मिति गुप्तिषु अज्ञानि तथा खलति तदा त प्रति
धिक्करोति छिद्र इष्टान्य निन्दतीत्यथ तथा मित्रेषु अपि कष्यति मित्रेभ्योपि शिचादाहत्वसर्वस्य क्रध्वति स्वय करोति तां वा कीधयति
पुन सुतरां अतिशयेन प्रियस्य मित्तस्य हितवाञ्छकस्य गुर्वादेरपि रहसि एतान्ते पापक पाप एवपापक अवरुणयाट भापते कोर्ध अग्रत प्रिय वक्ति
पृष्ठत दीप वक्ति इत्यर्थ ८ पुन प्रकीर्णवादी प्रकीर्ण असबड वदतीति प्रकीर्णवादी अथवा प्रतिज्ञया च इद इत्य एव इत्यादि निययभाषणशील पुन

अविपावपरिक्लेषी अविमित्तसु कुप्यई सुप्पियस्याविमिच्छारहेभासद् पावग । ८ । पद्मस्यवादीदुहिते यद्वलुष्टे अग्निगर्गहे

मित्त उपरि कोपे रोस करे सुप्रियस्यापि मित्तस्य अत्र अने वली जे अपणी गाढो मीत छे वालो एकात भापते अशुग हितसु पणि एकाते भू डू योले
निन्दा करे ८ प्रतिज्ञावादी शिचय भापानी वोलणहार मित्रादिकसू द्रीहकारो स्वथ १ लुब्ध ११ रसगृध्र १२ सप्रिभाग रहित सम्मिभाग न करे

असत्यादिभाषो न स्यात् ३ भावेन अचपल सूत्रे अर्थ अनागते असमाप्ते सत्येव अये तन गृह्णाति ४ अचपलस्थार्थ २ पुनर्य अमायी मायास्थास्तीति मायी शुभ मिष्टावाहारादौ आचायादोर्णा अयञ्चक ३ पुनर्य अकुतूहल न विद्यते कुतूहल यस्य स अकतूहल कुडक इन्द्रजाल भगल विद्या नाटका दीर्णा न नविलोकक इत्यर्थ ४ १० अप्य चाहिक्विवद् पवधच न कुब्धे मित्तिज्जमाणी भयई सुय लडु, नमज्जइ ११ पुनर्योऽल्प अधिचिपति अस्य गब्धोऽत्र भावार्थ क अपि न अधिचिपति किमपि कठिनेर्वचने न निर्भक्षयति इत्यर्थ ५ च पुन प्रयन्ध न करोति अतुरकाल क्रोध न रक्षति दीर्घ रोपी नस्यादित्यर्थ ६ मित्तीयमाण भजते मित्रत्व कर्त्तार सेवते कोर्थ य कश्चित् स्वस्मै विद्यादानाद्यपकार कुर्यात् तस्मै स्वयमपि प्रत्युपकार करोति क्तप्तो न स्यात् इत्यर्थ ७ पुन श्रुत लब्धा न माद्यति मर न करोति ८ अष्टम स्थान ११ नय पाव परिक्रवे वी नयमित्ते सु कप्पई अप्पियस्सावि मित्तस्य

अकुतूहले ॥१०॥ अप्पचाहिक्विवती पवधचपकुञ्जती । मित्तिज्जमाणोभयती सुयलडु नमज्जती ॥११॥ नयपावपरिक्रवे वी नयमित्तेसुकुप्पती अप्पियस्साविमित्तस्य रहेकल्लाणभासई ॥१२॥ कलहडडमरवज्जए बुद्धे अभिजाडुगोरिरिमपडि

स्वल्पमपि नाधिचपति कठोरवचन न बोले कदेहो ५ क्रोधवर्द्धनश्च न कुरुते क्रोध वधारे नही ६ मीत्रे यतामपि भज्यते ७ सर्वभूत जीवादिकसु मीत्राद् पत्नी राखे सदाद् श्रुत लब्धा न माद्यति ८ शास्त्रमणीने मदन करे सर्वथा ११ नच पाप परीक्षिपी आचार्यादिकनी निन्दा न करे नच मित्रेभ्य कुप्यति मित्र उपरे कोपे नही १० अप्रियस्यापि मित्रस्य अणितस्य लमीत्वाद् करे ११ एकान्ते रम्य भापते एकान्ते भली भली वात करे १२ कलहडडमर वर्जित कलह करो वर्जित वचनकलह न करे बुद्धिवान् सयमभारवाहक ज्ञात तत्वनी जाणसुविनीत झीमान लज्जावत १४ प्रति सलीन प्रतिज्ञा

रहे कर्त्तव्ये भासई १२ च पुन- पापपरिज्ञेयो न भवति पापे न परिधिपति तिरस्कारोतीत्येव शील पापपरोक्षेपी समिति गुह्यादिषु स्वयं स्वल्पनं कृत्वा आचार्यादिभिः शिष्यमाणः सन् आचार्यादीनां न भवति ८ न च भित्तिभ्यः कुप्यति अपराधि सत्यपि मित्रोपरि क्रीधं न करोति १० पुनर्योमित्यस्य मम भित्तत्वाप्रीक्षास्य अप्रियस्य च अपराधि सत्यपि पूर्वघातं सुघातमनुस्मरन् रहसि अपि कल्याणं एव भव्यं एव भाषते न च तस्य दूषणं वदतीत्यर्थः ११ कलहं हस्रवर्जं इ बुपेय अभिजाद् गौहिरिसं पडिसंलीने सुविणी इति बुद्धई १२ पुनर्यं कलहं उमरं वर्जयति तत्र कलहं वाक्य युद्धं त्यजति उमरं चपेटा सुष्टिलतादिभिर्युद्धं तयोरुभयो वर्जकी यो भवति १२ पुनर्बुद्धिमान् बुद्धोऽवसरज्ञो भवति पुनर्योऽभिजातिगो भवति अभिजातिं कुलीनतां गच्छति प्राप्नोतीति अभिजातिग-गुरुकुलवास सेवक इत्यर्थः १३ पुनर्यो क्लीमान् क्ली विद्यते यस्य स क्लीमान् कलुषाध्यवसाये अकार्यकरणे तपायुक्त इत्यर्थः १४ प्रति सलो न गुरु सकाशेऽन्यतवाद्गत स्ततो न चेटते चेष्टां न करोति स प्रतिसंलीन उच्यते य एतादृशी भवति स विनीत उच्यते अथ पूर्वोक्त पञ्चदशस्थानानां सुविनीतलकारणानां नामान्याह गुरो रासनात् द्रव्यभावतो नीचासनीपवसनं १ अचपलत्वं २ अमायित्वं ३ अकृत्तुहलत्वं ४ कस्यापि अनिर्भक्तन ५ अदीर्घरीपल ६ मितस्य उपकारकारणं ७ विद्या भदस्य प्रकरणं ८ आचार्यादीनां मर्मस्याऽनुत्पटाटनं ९

संलीने सुविणीएति बुद्धई ॥१३॥ वसेगुग्नुलेनिघ्नंजोगवं उवहागावं । पियकरेपियंवाई ससिद्धंलधुमरहई ॥१४॥

वान् आपणो इन्द्रो दसे सुविनीत इति उच्यते ते प्रिय सुविनीत प्राज्ञाकारी कहीये १३ वसेत् गुरु कुलपासे निलं निरन्तरं तिष्ठन्ति सुविनीत प्रिय सदाश्च गुरुपासे वसे योगवान् उपधानवान् योगवान् धर्मव्यापारविधिकर्त्ता तपो विशेषस्तपठनादौ जिम उपधान प्रीयंकरः प्रियवादी प्रेम करे प्रेम बोली सयिचां लब्धुं अर्हती ते प्रिय प्रिस्थानि योग्य हीवे १४ यथा गतगतपयो दुग्धं निघ्नं जिम संत दूधे भग्यो द्याभ्यां विराजते दीद् प्रकारे वाहिरि

मित्राय क्रोधस्य अनुत्यादन १० अपराधि सत्वपि मित्रस्य अमित्रस्य वा परपुष्टे द्रूपणस्य अभ्यापण ११ कलह उमरवर्जन १२ गुरुकुलवास सेवन १३ नञ्जावल १४ प्रतिमनोनत्व एतानि पञ्चदसस्थानानि सुविनीतस्य ज्ञेयानि १३ अथ सुविनीत कीदृक स्यादित्याह वसे गुरुकुम्भेनिष्ठ जोग्य उग्रहाणव पिय वाइ से सिकउ लबु, मरहइ १३ स मुनि गिवा लब्ध, अर्हति गिचाये योग्यो भवति स इतिक यो गुरुकुले नित्य वसेत् गुरो पूयस्य विद्यादोक्षादायकस्य वा कुले गच्छे सवाटके वायावज्जीव तिष्ठेत् पुनर्यो मुनि योगवान योगी धर्मव्यापार सचिद्यते यस्य स स योगवान अथवा योगी, टाड्रसलउपम्वहनिस्वर्थ पुनर्य साधु उपधानया उपधान अगोपागादीना सिद्धांतां पठनाराधनार्थ आचान्नीपवास निर्वि ज्ञय, रि नत्रण तयो विगेष सचिद्यते यस्य स उपधानवान् सिद्धाताराधन तपीयुक्त इत्यर्थ पुनर्य साधु प्रियङ्कर आघार्थादीना श्रितकारक पुनर्य प्रियमादो प्रियो यादोऽस्यास्तोति प्रियवादो प्रियभापो एतैर्लक्षणैर्युक्ती मुनि गिचा प्राप्त योग्या भवति १४ अथ बहुयत प्रतिपत्तिरूप आचार स्तवहारि षाह जहाथो सत्व मिपय निहित दुहथो विरायइ एव बहुसुए भिक्षू धम्मी कितीतहा सुय १५ यथा सत्वे निहित पयो दुग्ध द्विधापि विराजते उभय प्रकारेण गोभते पयो धवल अथच पुन यथेपि धवले अत्यन्त धवलत्वे न वर्णो विराजते एव असुना प्रकारेण शखसधुदुग्ध दृष्टातेन बहुयुते भिषो धर्मो

जहासखमिपय गिहित दुहथोविवायइ एव बहुसुए भिक्षूधम्मी कितीतहा सुय ॥१५॥ जरासे कवोयाण आइन्ने

भोतरो उज्वल धक्ती सोभे एव असुना प्रकारेण बहुयुती भिच्छु इन बहुयुत साधु धर्मकीर्ति तथा युत तिम साधु धर्म अने कीर्त्ति करीने सोभे १५ यथा अत्र कम्बोज देगजातीना जिन कम्बोजदेसना उपना अत्र अग्वाना मध्ये आकीर्ण कयक स्यात् गुणै प्राप्तकयक प्रधान सुजात, घोडा माहि

शाली एव शृङ्गे यस्य स तीक्ष्णशृङ्गः पुनः कथम्भूती बहुश्रुतः जात उल्यन्त्री गणस्य कार्यरूपधुर प्रतिघोरियकलेन गुष्टः स्तन्धी यस्य सजातस्तन्धः पुनः कोदशी बहुश्रुती यूथाधिपतिः यूथस्य चतुर्विध सप्तस्य अधिपति यूथापति एवं बहुश्रुती यूथाधिप हृषभवत् आचार्यादिपदवीं प्राप्तः सन् विराजते १८ जहासे तिक्वदाढे उदग्ने दुपहंसए सीहे मियाणपवरे एवं० २० यथासिंहो मृगाणां अरण्यजीवानां मध्ये प्रवरः प्रधानः स्यात् एवं बहुश्रुतीपि सिंह इव अन्यतीर्थाय मृगाणां मध्ये प्रकर्षेण श्रेष्ठः स्यात् कथंभूतः सिंहः तीक्ष्णदंष्ट्र पुनः कीदृश सिंहः उदग्रः उदग्रः उदग्रः कथम्भूतः दुपहंस्यकः दुरभिभवः अन्यै जीर्विदुष्ट्यः दु सह इत्यर्थः बहुश्रुतीपि सिंहइव कथम्भूती बहुश्रुत तीक्ष्णाः सप्तनयविद्या रूपा दंष्ट्रा यस्य स तीक्ष्णदंष्ट्रः अतएव उल्काटः दुर्जयः

तिक्व सिंगे जायखंधे विरायई । वसहे जूहाहिवई एवं हवइ बहुश्रुए ॥१८॥ जहासितिक्व दाढे उदग्ने दुपहंसए
सीहे मियाण पवरे एवं हवई बहुश्रुए ॥२०॥ जहा से वासुदेवे संख चक्र गयाधरे । अप्पडिहय बले जीहे एवं हवइ •

श्रुतः इम ए हाथीने दृष्टान्ते करी अन्यदर्शनीये अजय हुवे बहुश्रुतसाध १८ यथा सः तीक्ष्णः शृङ्गः जिमतीयासी गडानी धणी जातीपचितभूतः स्तन्धीः स्येति हृषभः उपचितसूल स्तंधे करो विराजीत छे हृषभः यूथाधिपतिः जिम हृषभ गायनायुथ मांहि सीभे एवं भवन्ति बहुश्रुतः इमवहुश्रुत हुवे १८ यथा तीक्ष्ण दंष्ट्रः जिम तीक्ष्णदाढसहितः उदग्रः उल्काटी अतएव दुःप्रधर्षकी अन्यै दुरभिभवनीयः अनरे जीवं पराभवीसके नही यथासिंहो मृगाणां प्रवरः जिम सीह मृगमाहि प्रधान एव भवति बहुश्रुतः २० यथा सवासुदेव जिमते वासुदेव संख १ चक्र २ गदाभ्ररः संखचक्रगदाप्रमुख ए धारे अप्रति हतबलयोधः किणही जील्यु न जाइ इत्यु महाशुभट हुवे एवंविधः बहुश्रुती भवन्ति २१ यथा स चतुरन्तः जिम चक्रवर्त्ति चतुरङ्गिणी सेनानी नायक

पुन कथम्भूती बहुयुत दु प्रहस्यक अय तीर्थदुर्घं च कलितु मयक्य इत्यर्थं २ जहासे वासुदेवे सखचक्र गयाधरे अप्पडिहय बले जीहे एव० २१
यथा स प्रसिद्धी वासुदेव अप्रतिहतबल स्यात् अप्रतिहत केनापि अनिवारित बल यस्य स अप्रतिहतबल एव बहुयुतोपि केनापि परमतिना अनि
वारितबल स्यात् कीदृगी वासुदेव शखचक्र गदाधर वासुदेवस्य हि रत्नसप्तक स्यात् चक्र धणुह रुग्मी मणी गया होइतहयवणमाला सुखा सत्तद्
माइ रयणाइ वानुदेवस्य १ अत्र त्रयाणां एव ग्रहण बहुयुतेन साम्नाय सप्ताना मध्ये त्रयाणा एव प्राधान्य नम्यस्ति पुन कीदृशो वासुदेव योष
युध्यति यत्र न प्रतिसहरतीति योष यदुक्त युवे सुरा वासुदेवा खमासुरा अरिहन्ता तपसुरा भोगसुरा चक्रबद्धी वासुदेवोहि स्वग्ररीरेण
युइ कृत्वा यत्र नू जयतीत्यर्थं एव बहुयुतोपि वासुदेव वत् कीदृगी बहुयुत सखचक्र गदातुल्यानि रत्नत्रयाणि ज्ञानदर्शनचारित्ररूपाणि धरतीति
शखचक्रगदाधर पुन कीदृगी बहुयुतो योष अन्तरङ्ग यत्रुघातक अत्र बहुयुतस्य वासुदेवोपमान २१ जहासे चाउरन्ते चक्रबद्धी महद्विया, च
उद् सरयणाहिवद् एव० २२ यथा स इति प्रसिद्ध चक्रवर्ती विराजते इत्यवाहारन्तया बहुयुतोपि विराजते कीदृग्यकृवर्ती चातुरन्त चतुर्भि हय गज
रथपदातिभि सेनागै अन्तोऽरोणा यिनाशयस्य सचाउरत चतुरत एव चातुरत आसमुद्र आदिमाचल विविधविद्याधर इन्द्र गीत कीर्ति तथा एक
च्छत्र पट पण्डराग्यपालक चातुरन्त पुन कीदृग्यकृवर्ती महर्षिक महती ऋद्धियस्य स महर्षिक चतु पटि सहयान्त पुरनारीणा गथासु वैकृत्य

बहुसुए ॥२१॥ जहासे चाउ रते चक्रबद्धी महिद्विए । चउदस रयणा हिवद् एव हवद् बहुसुए ॥२२॥ जहा से स

चक्रवर्त्ति महाऋद्धिनी धणो चक्रवर्त्तिने मीटो ऋद्धि पुवे चतुर्दशरत्नाधिपति स्यात् चक्रदे रत्नवनिधाननो अधिपति होइ सुख भोगवे एव भयती बहु
युत २२ यथा सहस्राच्च जिमते इ द्र महस्राच हजारनेचनी धणी बज्रहस्त देत्यपुरदमन बज्रहाथने विपे रद्दे दैत्यने विणसाडे शक्र देवाधिपती

शक्ति' विधाय ररुमाणः वैकियादि ऋषि सहितः इत्यर्थः दिव्यानुकारि लक्ष्मीयुक्ती वा पुनः कीदृश्य सकृवर्त्ती चतुर्दशरत्नाधिपतिः चतुर्दशरत्नानि अमूनि सेनापति १ गृहपति २ पुरोहित ३ गज ४ हय ५ सूत्रधार ६ स्त्री ७ चक्र ८ छत्र ९ चर्म १० मणि ११ काकिनी १२ खड्ग १३ दण्ड १४ एतेषां रत्नानां स्वामी एवं बहुयुतोपि कीदृशी बहुयुतः चतुर्भिः दानशील तपी भावलक्षणेर्धनैरन्तश्चतसृषां गतीनां यस्य स चतुरन्त चतुरन्त एव चतुरन्तः चतुर्दशरत्नाधिपतिः चतुर्दशपूर्वरूपाणि रत्नानि तेषामधिप इत्यर्थः पुनः कीदृशी बहुयुतः महर्षिजाः महलः ऋषयः आमर्षौषधिव प्रौषधिलेखीपध्या दद्या यस्य समहर्षिक लब्धि ऋषिसहित इत्यर्थः अथवा महती ऋषिज्ञानसम्पत्तिर्यस्य स महर्षिकः २२ जहासे सहस्रकृते वज्रपाणी पुरन्दरे सके देवा हि वर्द्धे एवं० २२ यथा स इति प्रसिद्धः शक्र इन्द्रो विराजते तथा बहुश्रुतोपि विराजते कीदृशः शक्रः सहस्राक्षः सहस्रं अक्षीणि यस्य स सहस्राक्षः सहस्रनेत्र कीदृशः वज्रपाणिः वज्रशस्त्र हस्तः पुनः कीदृश पुरन्दरः पुराणि दैत्यनगराणि दारयति विध्वंसयतीति पुरन्दरः दैत्यनगर विध्वंसकः पुनः कीदृश देवाधिपतिर्देवेषु अधिपति देवाधिपतिः देवेषु अधिक ज्ञान्तिधारी अथ कीदृशी बहुश्रुत शक्रः सहस्रं अक्षीण्युतज्ञानानि यस्य स सहस्राक्षः सहस्रसंख्यै रचिभिर्नैत्रिव श्रुतज्ञानभेदैः पश्यतीत्यर्थः पुनः कीदृशी बहुश्रुत शक्रः वज्रपाणिः वज्र वजाकारं पाणी यस्य स वज्रपाणिः विद्यावतः पूज्यस्य हस्तमध्ये त्र्यलक्षणस्य सम्भवात् पुनः कथंभूतो बहुश्रुतः शक्रः पुरन्दरः पुरं स्वतनुं दारयति तपसा दुर्बलीकरोतीति पुरन्दर तपस्वी इत्यर्थः

हस्तस्रक्ते वज्रपाणी पुरंदरे । सके देवा हिवर्द्धे एवं हवद्र बहुश्रुए ॥३३॥ जहा से तिमिरविद्धंसे उत्तिद्धंते दिवायरे ।

शक्र इन्द्र देवता माहि अधिपति हुवे एवं भवति बहुश्रुत २३ यथा सः तिमिरान्धकारविध्वंसकः जिम दियाकरः सूर्य अन्यकार फेडि, तिम उर्द्धं गच्छन् दिनकारः सूर्य उचो घटती सूर्य तिम तेजसा जलतैव ज्वालाशुत्तमः इम बहुश्रुतः अज्ञानरूप अन्धकार टाले तपतेजे कारी दीपे बहुश्रुत २४ यथा स

मास्यां बहुश्रुतरूप उडुपतिर्भव्य जनान्नादकी भवतीतिभावः पुनः कीदृशी बहुश्रुतीडुपतिः साधुभिर्नबन्त्रैरिव परिवृतः सहितः पुनः कीदृशी बहुश्रुतीडुपति प्रतिपूर्णं सर्वधर्म कलाभि संपूर्णं इत्यर्थं २५ जहासे सामाद्रयाणं कुठागारेसुरक्खिए नाणाघन्न पडियुणे एव० २६ यथा स इति प्रसिद्धः सामाज कानां महागृहस्थानां कीष्टागारी विराजते तथा बहुश्रुतीपि विराजते समूहस्तंइतीति सामाजिका कौटम्बिकानां कथयन्तु कीष्टागार सुरचित सुतरां अतिशयेन चीर मूषकादिभ्य उपद्रव्येभ्यो रचितः सुरचितः पुन कीदृशकीष्टागार नानाधान्य प्रतिपूर्णं चतुर्विंशतिधान्यैः प्रतिपूर्णं भूत अथ बहुश्रुत कीदृश सुरचित सुतरां अतिशयेन गच्छ संघाटस्य सुनिभिर्यत्नेन रचितः पुनर्नानाप्रकारै रक्षी पाप्नादिरूपैर्धान्यैः प्रतिपूर्णं इत्यर्थः, २६ जहासे दुमाणपवरा जम्बू नाम सुदंसणा अणाटियस्स देवस्स एवं० २७ यथा द्रुमाणां मध्ये जम्बू नामा सुदर्शना इत्यपरनामा दुमोत्तचः प्रवर

बहुसुए । २५। जहासे सामाद्रयाणं कीष्टागारिसु रक्खिए । नाणाधसा पडियुणे एवं हवद्द बहुसुए । २६। जहासे दु
माण पवरा जंबूनाम सुदंसणा । अणाटियस्स देवस्स एवं हवद्द बहुसुए । २७॥ जहा सा नईण पवरा सलिला सागरं

सकलथाद्रचितः कीठारमाहि भली परिचौरादिक उंदरादिका थकी वसु जले करी राखे नानाधान्य प्रतिपूर्णः नानाप्रकारना धान्यतेणे करी भग्ना थकी सीमे एवं भवति बहुश्रुतसाधु २६ यथा स द्रुमाणां मध्ये प्रवरा जिम सघना एचमाहि प्रवर प्रधान सीमे जंबू नामाभिधानेन सुदर्शन नामाभिधानः जंबू खेनामे बीजी नाम सुदर्शन अनाहतस्य अनाढीयाइसे नामे देवता तेहनुं धानक एवं भवति बहुश्रुत साधु २७ यथा ग्रीता नदीनां मध्ये प्रवराः जिम सीता नदी सर्व नदीमाहि सुख्य सलिला समुद्रगामिनी भवति सलिला कही पछे नदीसागर समुद्रमाहे जाइ सीता पूर्ववाहिनी सीतीदा पथिमवा

प्रधान गोभते तथा बहुयुतो सर्वमुनिना मध्ये प्रधानो विराजते स च जम्बू सुदर्शना नामा ह्यत्र अनादिकस्य जम्बूद्वीपाधिष्ठात् देवस्य वर्त्तते तस्य हि जम्बूद्वीपायित्तत्वेन सर्वहृद्येभ्य प्रधानत्व त्रैय मित्यर्थं बहुयुतोपि मिष्टफल सदृश सिद्धान्तार्थं फलद देवादिभिरभिगम्य २७ ज हासा नद्वणपयरा सलिना सागररङ्गना सीया नीलवन्तपवहा एव० १८ यथा सा इति प्रसिद्धा नदीना मध्ये सीता गन्धो नदी प्रयरा प्रधाना गोभते तथा बहुयुतोपि गोभते कथम्भूता सीतानदी सलिला सलिल पानीय अस्या अस्तोति सलिलानित्यनीरा पुन कथम्भूता सीता सागररङ्गना सागर गच्छतीति सागरगमा पुन कीदृश्या सीता सीलवन्त पवहा नीलवत पर्वतात् प्रवाहो यस्या सा नीलवत् प्रवाहा नील पर्वतादुत्तीणा इत्यर्थं बहुयुतोपि साधूना मध्ये प्रधान निर्मलजलतुल्य सिद्धान्त संहित पुन सागरमिव सुतिस्थान गामी पुनर्बहुयुतो नीलवत् पर्वतसदृशोन्नतकुलात् प्रसूला उत्तम कुनप्रसूतो हि सद्दिया विनयीदार्यगामीयादिगुणयुक्त स्यात् २८ जहासेर्नृगाणपवरे सुमह मन्दरे गिरी नाणो सहि पञ्जलि ए एव ह्यवद् २९ यथा स इति प्रसिद्धो नगाना पर्वताना मध्ये सुतरा अतिग्रयेन महान उच्चैस्तरौ मन्दरो मेरु गिरि मेरु पर्वत गोभते तथा बहुयुतोपि गोभते कथम्भूतो मेरु नानीपधो प्रज्वलित नानाप्रकाराभि रौपधीभि ग्रन्थ विग्रह्या सञ्जीवनी सरोद्धिणी चिवायम्बो विपापहारिणो गन्त निवारिणो भूत नाग दमन्यादिभि मूर्त्तीभि प्रज्वलितो जाज्वल्यमान एव बहुयुत सर्व साधूना प्रवरी गुणै

गमा । सीयानीलवत पवहा एव एवद् बहुयुत एव २८ जहासे नगाण पवरे सुमह मन्दरो गिरी नाणो सहि पञ्जलि ए

हिनी सीता सोतीदा नीलवतोद्भवासीता नदी नीलवत पर्वत युती उपनी जीन सर्व नदी माहि तु गभे तिम बहुयुत गच्छमाहे सोभे सुसाधु २९ यथा स इति प्रसिद्धो नगाना पर्वताना मध्ये सुतरा अतिग्रये मेरु रोमन्दरोमेरु गिरिभिरुपर्वत गोभते नानीपधिभि

प्रवरी गुणेश्वरः श्रुतस्य माहात्म्येन प्रत्यन्तं स्थिरः परपादिवाद्वाला प्रचलः प्रनेकलम्घतिगयसिद्धि रूपाभि रोगधीभि र्मियात्वाभकारेपि
वज्रस्वामि मानतुं ग कुमुदचन्द्रादिवत् जैनयासन प्रभाननारूप प्रकाशकारकः २६ जहासे सयंभूरमणे उदनी प्रकृता प्रोदए नाणारयण पट्टिपुणे एव० ३०
यथा स इति प्रसिद्धः स्वयंभूरमण नामा चरसीदधि विराजते तथा बहुश्रुतीपि विराजते कार्यभूत स्वयंभूरमणोदधिः प्रचयं ग्रागतं प्रविनायि उदकं
जलं यस्य स प्रचयीदकः पुनः कार्यभूतः स्वयंभूरमण समुद्रः नानारत्नप्रतिपूर्णः बहुप्रकारैः असस्यै मणिगोभृतः तथा बहुश्रुतीपि स्वयंभूरमणस्य कथं
भूतः बहुश्रुतः अचयज्ञानीदक अचयज्ञान जलः पुनर्बहुश्रुत स्वयंभूरमण समुद्रवत् नानाप्रकारातिगयरूपरतौ सपूर्णः ३० समुद्रगंभीरसमादुरासया

एवं हवद् बहुश्रुए २६ जहासे सयंभु रमणे उदही पद्वप्रोदए नागा रयण पडिपुणे एवं इवद् बहुश्रुए ३० समुद्र
गंभीरसमा दुरासया अचक्षिया केगद् दुष्पाहंसया गुग्गुणा पुगा विडलाना ताडुणी खवित्तु कर्म गद्गमुत्तमंगया ३१

प्रज्वलित नानाप्रकारनी श्रीपधी गने रत तिणे तेजवत यतो जाशुग्यमान दीपती ग्रीषे एव भवति बहुश्रुत २६ यथा स स्वयंभु रमण समुद्र जोमते
स्वयंभु रमण समुद्र जलचयरहितः प्रखूटपांणी छे जे समुद्रने विपे नानारतैः सरकतादिभि प्रतिपूर्णः स्यात् नानाप्रकारना रत्न तिणे करो भग्ना छे
एव भवति बहुश्रुतः २० समुद्रगंभीरसया सदृशाः अनाकायनीया समुद्रनी परि गभीर छे प्रनाकलनीय जोश्रकनी सजे नहीं परिपद्मादिनात्तगपि
पराभनं कर्तुं न समर्थोः किणो परिसह पराभव करो सकोद् नहीं परिसह कोद् गहन जीती सजे नहीं श्रुतेन पूर्ण विस्मरेण वायथी रचकाः सिद्धान्ते
करोने पूर्णभखा पूर्वजीवना रचक नपयित्वा कर्म सर्वकर्म घपावीने उतमां गतिं गता उतमगतिने विपे गया ३१ तस्मात् श्रुतं पठनीय तिणे कारणे

[प्रचक्रिया केषु दुष्पहसया सुयस्य पुषा विडलस्य ताद्रुषो खवित्तुकस्य गद्रसुत्तमगया] ३१ एतादृशा श्रुतस्य पूर्णा बहुश्रुता उत्तमा गति गता प्रधान स्थान मुक्ति प्राप्ता किं कृत्वा कर्माणि चिपयित्वा श्रुतस्य पूर्णा इत्यत्र तृतीयास्थाने पद्ये श्रुतेन श्रुतज्ञाने पूर्णा कीदृशस्य श्रुतस्य विपुलस्य विस्तीर्णस्य अनेकैरुत्तुक्तिदृष्टात उत्सर्गवादनयायनेक रहस्यार्थयुक्तस्य कीदृश्या बहुश्रुता समुद्रगभीरसमा समुद्रस्य गाभीर्येण तुल्या समुद्रगभीरसमा पुन कीदृश्या दुराशया केनापि परवादिना कपट कृत्वा न आश्रयणीया केनापि ठगितु अशक्या इत्यर्थं पुन कथभृता अचकितता अचासिता परीपहैस्त्रास अप्रापिता पुन कीदृश्या दुःप्रहस्या परिव्रादिभिः पराभवितुमशक्या एतादृश्या श्रुतज्ञानधरा मोच गता गच्छन्ति गमित्यन्ति ३१ [तन्हासु अमच्चिद्विल्ला उत्तमदृग्वेसए जेणप्पाण पर चैव सिद्धि सपाउण्णिजा भेत्तिवेमि] ३२ उत्तमार्थं गवेपको मोचार्थी पुमान् तस्मात् बहुश्रुतस्य मोचप्राप्तियोग्यत्वात् श्रुत सिद्धान्तं अधितिष्ठेत् उत्तमयासी अर्थय उत्तमार्थी मोचार्थस्त गवेपते इति उत्तमार्थं गवेपक येन श्रुतेन आत्मानश्च पुन परमपि सिद्धि प्रापयेत् मीच गमयेत् कीर्थं बहुश्रुत स्वयमपि मोच प्राप्नोति अन्य अपि स्वसेवक मोच प्रापयतीत्यर्थं इत्यह ब्रवीमि इति सुधमास्वामी जबू स्वामिन प्रत्याह ३२ इति बहुश्रुतपूजास्य एकादश अथयन सपूर्ण ॥११॥ इति श्रीमदुत्तराध्ययनसूत्रार्थदीपिकाया उपाध्याय श्रीसख्मीकीर्त्तिगणेशिथ सख्मीवल्लभगणिविरचिताया बहुश्रुतपूजाध्ययनस्यार्थं सपूर्ण ॥११॥ अथ द्वादश प्रारभ्यते एकादशे बहुश्रुतेनापि तपो विधेय इति एकादशद्वाद

तन्हासुय महिद्वैज्जा उत्तमदृ गवेसए जेणप्पाण परचैव सिद्धि सपाउणेज्जासित्तिवेमि ३२ बहुश्रुतयज्जयणसम्भत्त ॥११॥

सिद्धान्त भणु उत्तमार्थो मोच तस्य गवेपत उत्तम अर्थं मोचतेहना गवेपक जीवे छे येन कृत्वा आत्मान परश्च जिणे सिद्धान्ते करी आपणा आत्मानि अने परगिचादीकने सिद्धि प्रापयति तिस्तारयति इत्यर्थं मुक्ति सम्प्राप्त इति समाप्ती ब्रवीमि ३२ इति श्री बहुश्रुताख्यमध्ययन सपूर्णम् ॥११॥

जात जातिमदकरिणास्य चण्डालकुलीत्यसिजाता म बाल सोभाग्यरूपरहितो धान्ययानामपि हसनीय तस्य बल इति नाम प्रतिष्ठित सच वर्षमान
प्रकाम क्लेगकारिलिन संवंपामुद्देगकारी जात अन्यदा वसन्तीकवे प्राप्ति चाण्डालकुटुम्बानि विविधखाद्यपानकरणाय पुराहृद्भिर्मितानि सन्ति स बल
नामा बानक परवानैस्त्वम तेग कुर्वन् प्रातिहृद्देर्निर्यद दूरस्य स विलासक्रीडापराणि परबालानि पश्यति पर मध्ये समायातु न शक्नोति
तन्निश्चय सरे तत्र सर्वे निर्गत सविप इति कृत्वा चाण्डाले मीरित पुनस्तत्र प्रलम्बमलङ्किक निर्गत निर्धिपमिति कृत्वा तेनैविनाशित
तादृग्य मरण दृष्टा तेन बलवानेनचित्तित निजेनेवदोषेणप्राणिन पराभव सर्वतप्राप्तुर्वति यद्यह सर्प सदृग सयियस्तादा पराभवपद
प्राप्त यद्यलसिक्वन्निरपराधी भविष्यन्तदा न मे कथित्वराभयो भविष्यदिति सत्यभावयन्तास्य जातिधारणमुत्पन्न विमान वाससुखकृतितमार्गमा
गत जातिमदविपाकोऽपि द्वात सर्वे गमागतेन दीक्षा गृह्यता स हरिकेशीवल शुद्धक्रिया पालयत् पष्ठाटमदशमहादशमासादित पक्षीपन
क्रमेण विहार कुर्वन् वाराणसी गरी प्राप्त तत्र तित्दकवने मण्डिकयच्चप्रासादे स्थितो मासचपणादितप करोति तद्गुणायर्जितय यच्चस्त
महर्षिं निरन्तर सेवते अयदा तत्र वने एको परो यच प्रापूर्णक समागत तेन मण्डिकयचस्य पृष्ट कथ ल मद्ने साम्मत नायासि तीक्ष्ण ग्रहमिह
स्थितमिम मुनि सेवे एतद्गुणायर्जितया यत्र गन्तु नोक्तहे सोध्यागन्तुको यद्यस्तद्गुणायर्जितो बभूव आगन्तुकयच्चेण मण्डिकयचस्थीक्त एतादृया मुनयो
मद्नेपि सन्ति तत्र गत्वा अथ तान् सेवामहे इत्यक्त्वा क्षवपि ती तत्र गतो विकथादि प्रमादपरास्ते तत्र ताभ्या दृष्टा तेभ्यो विरक्तौ तो यद्यो पयात्तत्रा
गत्य हरिकेशीवल महामुनि प्रणमत प्रयह सेयतेम अन्यदा तत्र यथायतने वाराणसीपति कौशिकराजपुत्री भद्रा नाची नानाविध परजनानुगता
पूजासामर्थी गृह्यत्वा समायाता यद्य प्रतिमा पूजयित्वा प्रदक्षिण कुर्वन्ती मलक्लिन्न वक्षगात दुस्सह्यतप करणक्षग गुरूप त महामुनि दृष्ट्वा यूक्तुत

कीदृश स साधु जितेंद्रिय पुत्र कीदृश पुत्र कीदृश पुन सम्भूत पुन कीदृश मुनि मन्यते जिनान्ना इति मुनि जिनान्नापालक इत्यर्थं जितानि इन्द्रियाणि येन स जितेंद्रियो गुणत्रयधर गुणत्रय ज्ञानदर्शन चारित्र्यास्य धरतीति गुणत्रय धर १ [इरिए सणभासाए उच्चार समिद्धसुय जञ्चो आयाण निक्खेवे सजञ्चो सुसमाहिञ्चो] २ पुन कथमृती हरिकेशबलो मुनि इय्येपणा भाषोच्चार स मितिय जञ्चो इति यती यत्तवान् ईर्यां च एपणा च भाषा च उच्चारथ इय्येपणा भाषोच्चारास्तेषा समितय सम्यग व्यवहारा इय्येपणा भाषोच्चार समितय स्वास ईरण ईर्यां गमनागमन तस्य समितौ गमनागमन व्यवहारे यत्तवान एरण एपणा आहारयहण तत् समितिरपणा समितिसूत यत्तवा एव

सोवागकुलसभूञ्चो गुणुत्तरधरो सुणी । इरिएसवलो नाम आसी भिक्खू जिद्ध दिञ्चो ॥१॥ इरिएसणभासाए उच्चारे समिद्धसुय । जञ्चो आयाण निक्खेवे सजुञ्चो सुसमाहिञ्चो ॥२॥ मणगुत्तो वयगुत्तो कायगुत्तो जिद्ध दिञ्चो । भिक्ख

चण्डानकुली इय सीपाककहीद चण्डाल तेहने कुले उपनो सर्वोत्तम गुणधरोमुनि सर्व उत्तम जे गुण तेहनी धरणहार छे साधु हरिके गवलीनाम हरिकियो चण्डालनी जाति छे वलीखी नाम छे आसीत् अभूत् भित्तु जितेंद्रिय आसीत् हुञ्चो साधु जितेंद्रिय आपणा इद्रि जित्या छे १ इय्येपणा भाषाया इर्यां समति एपणा समति भाषा समति पुरोप समितियु च उच्चारपा सवण समितिनं बिपे यत्त वान ग्रहणे मीचने च भांडा प्रसुए मूजेती पूजेनि मूकेले ती पूजेनि लिद्ध सयमान्वित सुसमाधित सतरह विधि सयम पाले समाधि यत्तछे समाधिमाहि वत्तछे २ मनो गुप्तवान् मन जेहने गुप्त छे काय गुप्तवान वचन जेहने गुप्त छे काय गुप्तवान जितेंद्रिय काया जेहनी गुप्त छे

मन्वो ५ ते ब्राह्मणा विवेकविक्राना इदं वचनं अनुवाक्यं कोट्यास्ते जातिमदं प्रतिस्थाप्य जातिमदेन ब्राह्मणं ब्राह्मण्युद्भवत्वेन यो मदीऽऽहङ्कारस्तिन प्रतिस्थाप्य अनन्वा जातिमदं प्रतिस्थाप्य पुनः कोट्या हिंसका जीवहिंसाकरणशीला पुनः कोट्या अजितेन्द्रिया विषया सक्ता पुनः कोट्या अब्रह्मचारिणी मैथुनाभिनाथिण अब्रह्मणि कामसेवनायां चरन्ति रमन्ते इति अब्रह्मचारिण कुयीला इत्यर्थं ते ब्राह्मणा किं अनुवन् इत्याह [कयरे आगच्छ इदं कथं काले विक्राने पीकनासे श्रोमचेलए पसु पिसायभूए स करटूस परिहरियकण्ठे] ६ कतर कौय आगच्छति अतिययेन इति कतर एका र प्राकृतत्वाए परमय कोट्या दीसूरूपी बीभत्सरूप दीसवचन बीभत्सार्थं वाचक पुनः कोट्य काल कालवर्णं पुनः कोट्यु विकरालो विक्रतागोपा

अणारिया ॥४॥ जाडमय पडिवडाहिसगा अजिडू दिया । अबभचारिणो वालाडूम वयणमव्ववी । ५। कयरे आगच्छडू •
दित्तखे काले विगराने पीकनासे । उमचेलए पसु पिसायभूए सकरटस परिहरिय कठे ॥६॥ कयरे तुम इय अद

प्रतिवधा ते ब्राह्मणकिस्या हे जातिना मदतिणे करो नुब्रमाणपातक अजितेन्द्रिययो ब्राह्मण केहयके हीसाजीय बध करे हे इन्द्री जेणे जीत्या नथी अब्रह्मचारोणी मूर्खा बली ब्राह्मण किस्या हे अब्रह्मचारी कुगीलिया हे वाला मूर्ख इदं वचनं अनुवोत हवे ते ब्राह्मण यतीने एहवावचन कहे हे ५ कतर त्व आगच्छति हे बीभत्सरूप कतरकोणरे वू आवे हे कुलित दैत्यरूपेणा काल दस्तुदिना विकराल हे फीकनास तु कालो हे मोटा दात हे तेह भणो योकराल हे मोटो धूननाशिकाहे हे उच्छिष्टवस्त्रधारक पीसाचभूत भेला वस्त्र हे घणी धूनशरीरलागी हे तेह भणी पणी पिशाचदीभि हे उल्करटिका यक्षनिचिप्त कण्ठ जकरडाना पयां वस्त्र लेइ ते गले पहगा हे जीणे जतीये ६ कतर इत्येव दुष्ट अदर्शी ब्राह्मण बोल्या कोण

न न्यातव्यमित्यर्थं तैवाप्तौ रित्यपि सति स सायुषु किमपि न श्रवादीन् तदा तद्रूपस्य यच्चस्य कृत्यमाह ७ [जल्दो तद्विदुय रत्नवासी अणुकम्पयो तस्य महासुणिस्स पञ्चायत्तनियग सरीर इमाद् वयणाद् सुदा हरित्या] ८ तस्मिन्काले तित्दुकहचवासी यच्च इमानि वक्ष्यमाणानि वचनानि उदाहा दीत् श्रवोषदित्यर्थं किं कृत्वा निजक शरीर प्रच्छन्न विधाय सायुषरीरे प्रवेग कृत्वा कथभूत स यच्च तस्य मुने श्रुतकम्पक श्रुत रूपं कम्पते चेटते इत्यनुकम्पक साधो गेयक इत्यर्थं तित्दुकानमध्ये एको महान् तित्दुकहचोस्ति तस्य हृद्यस्याधस्तस्य चैत्यमस्ति तत्र साधु कायोस गेण तिष्ठति तस्य साधोर्मानुष्ठान इदा गुणरागी गेयक सजातोस्ति इतिभाव स यच्च इत्यवादीत् ८ [समणो अह सञ्जघ्नी कभयारी विरघोषण ययण

तद्विदुय रत्नवासी अणुकपत्रो तस्य महासुणिस्स पञ्चायत्तनियग सरीर इमाद् वयणाद् उदाहरित्या । ८ ।
समणो अह सजघोषमयारी विरघो धणपयण परिगहाओ । परप्पवित्तखओ भिक्खकाले अन्नस्स अट्ठा इरमाग

हो मत उभो ररे क्कोम उभो के ७ तत्र यत्प्रपाटके यच्च तित्दुकहचवासी तेह यत्प्रपाटानि विपे एक तित्दुकनमि हृच के ते हृचमाहि एक यच्च ररे के पनुकम्पया भग्वा महामुने हवे ते जच्च ते सायुनो भक्तने वान्ते प्रच्छाय स तनु अट्ठग्य कृत्वा आत्माद् शरीर आपणु शरीर आच्छाद्य ठाकीनि यतीना शरीरमे सक्रमतेने इमानि वचनानि उदाहृतवान् इत्या वचन बोधवा लागी यतीना शरीरमाहि पेसिने यच्च ८ अह यमण अह स यत अह प्रम्हवारी पद्दो ब्राह्मणो इ माध णु स यती णु वनचारी णु निहत धनसजन परियहात् विरमो क्खओ धन आपणो परिवार सर्व परियहपणि क्खायो परार्थ निष्पद्य भिक्खाक्खने पराद् अर्थे नीपना के प्राहार पणो भिघने काले भिघाविलाद् अन्नस्यार्थेह यत्प्रपाटके प्रागतोस्सि ए यत्प्रपाटानि विपे अन्नने अर्थे

परिणहात्री परंप्रवित्तस्रडभिक्षकाले अन्नस्र अद्राह मागञ्जीसि] ९ स यत्नः किम वीचत् तदाह भी ब्राह्मणा भवन्निरुक्तं कीसिरत्वं तस्योत्तर अहं
अमणीसि आस्यति तपसि अमं करोतीति अमणस्तपस्वी पुनरहं संयतः सावद्य व्यापारेभ्यो निवर्तितः पुनरहं ब्रह्मचारी ब्रह्मणि भोगत्यागे चरति
रमते इत्थिवं शोली ब्रह्मचारी पुनरहं धनपचन परिग्रहात् विरत तत्र धनं गी महिथखादि चतुःपदरूपं पचनं आहारादिपाकः परिग्रही गणिमधरि
ममेथ्य परिच्छेद्यादि द्रव्यरूपः कया आशया इहा गतीसि अस्वीत्तरं भी ब्राह्मणा भिक्षाकाले भिक्षावसरे अन्नस्य अर्थाय अन्नगतोसि कीदृशस्य
अन्नस्य परप्रवृत्तस्य परस्मै परार्थं प्रवृत्तं पक्वं परप्रवृत्तं गृहस्थेन आकार्यं राषं ९ [वियरिज्जइ खज्जइ भुज्जइ य अन्नं पभूयं भवयाणमेवं जाणाहि मेज्जा
यण जीविणुत्ति सेसावसेसंलहञ्जी तवस्सी १० अत्र भवयाणं इति भवतां एतत्समीपत रवर्त्ति अन्नं प्रभूतं अयते इति अन्नं भक्ष्यं प्रभूतं प्रचुरं विद्यते
तदेव प्रचुरत्वं दर्शयति वियरिज्ज इति वित्तीयते दीनहीना नाथेभ्य सर्वेभ्यो वित्तीयते विधेयेण दीयते पुनः खायते खद्यक एतपूरादिकं स शब्दं भक्ष्यते
पुनर्भुज्यते तण्डुल सुद्गदात्यादि स एतं आकण्ठं अश्ववहार्यते इत्यनेन अन्नकाचित् कस्यापि भक्ष्यवस्तुनीन्युनतानदृश्यते यूयं मे इति मां याचन जीविनं
जानीत याचनेन भिक्षया जीविनं जीवितव्यं अस्येति याचन जीवीतं इति अस्मात् कारणात् तपस्वी मत्तत्रणी सुनिरपि अत्र शेषावशेषं शेषात् अपि
ओसि ॥९॥ वियरिज्जइखज्जइ भुंज्जइय अन्नंप्रभूयं भवयाणमेयं । जाणाहिमेजायण जिविणोत्ति सेसावसेसं लहञ्जी

आव्यो हुं ९ दीयते खाद्यानि खायते भक्तरूपादि यन्न कहे के अही ब्राह्मणी तुम्ही अन्न जिमो छो चोखा दालि रोटी प्रमुख धान्यं प्रचुरं भवतां एतत्
तुम्हारा यन्न वाडा मांही ए धानघणा दीसे के जानोतया च नजीवी इति अही ब्राह्मणी मुम्हने तुम्ही याचना जीवी जाणी हुं भिक्षा मांगीने आजीवीका
करु हुं शेषावशेष छडरितं अन्तप्रान्तलभेत तपस्वी अही ब्राह्मणी अम्हसरिखी जगद्यो सांभरं ताडुं तपस्वीने यो १० संसृतं उत्पादितं भोजनं ब्राम्ह

श्रेय श्रेयावशीय उद्धरित प्राप्तप्रायमाहार लभता प्राप्नोत इत्यपि यूय जानीतकीर्णं स मुनिरवादीत् अत्र अत्र यत्र तत्र परिष्ठाप्यते भवद्विरतादृशो बुद्धि कारणोया अय तपस्वो आहाराय आगतोस्ति अयमपि श्रेयावशीय आहार प्राप्नोत इति विचार्य मद्या शुद्धमाहार दीयतामिति यच्चैषोक्तं सति ते ब्राह्मणा किं प्राङ्गुरित्याह १० [उक्त्वउड भोयणमाहणाथ अत्तद्विय सिद्धमिहगपक्व न उव्यय एरिसमन्नपाण दाहामुतुम्भ किमह ठिओसि] ११ २ भिषो इह यस्मिन् यज्ञपाटके भोजन यत् उपकृत घृतद्विन्वाधान्यक मिरच लवण जीरकादिभि घृतीपस्तार शाकादिक पुनरिहसिद्ध पतुर्विधाहार राड यत्तते तद् २ भिषो आहार एकपच यत्तते एक पक्षी ब्राह्मणो यस्य तत् एतपच एतदाहार शूद्रेभ्यो नदेयमस्ति ब्राह्मणाना वत्तते पुनरिद आहार

तवस्त्री ॥१०॥ उक्त्वउड भोयण माहणाथ अत्तद्विय सिद्धमिहगपक्व । णउव्ययएरिसमन्नपाण दाहामुतुम्भ किमिहठिओसि ११ धलेसुवीयाद् ववेतिकासगातहेवगिन्नेसुयआससाएयाएसडाएदलाहिमज्जआराहएपुससिणखुखित्त । १२।

णानो ब्राह्मण कहे छे ए आहार पांशी ब्राह्मणाने काजे नोपनी छे आत्माथ नियन्न इह एक एक ब्राह्मणैभ्य एव देय अने वली आत्माने अर्थे नोपनी एक पच कूट ब्राह्मण वीजा को इने देयो नहीं नच वय इदम अत्र पान अन्हे इस्लो अत्र तुम्हने तुम्य न दास्याम कि इहस्वितोऽसि नहि द्याइहा जाइ उभो छे ११ यषो वाच उच भूभागीपु वीजानि वपति कीटम्बिका कलवी उ चा यलने विपे वीजवाये तथा निम्बेयु नीच भूमियु वपति पान्यशय तिम वनी नोची भूमिकानि विपे वाकेधाननीची भूमिकानि विपे वावे धाननी आस्या करे एतदुपमयाथइयाददध मद्य एखे तनीउपमाकरीनेसुम्भने पणियो आराधयेत् पुण्य इद निधितधैत अही ब्राह्मणो ए धैत पवित्र छे भलो छे तुम्हो आराधो १२ ब्राह्मणा ऊपु धैवाणि अस्माक ज्ञातानि लोके अन्हे साधु

आत्मार्थिकं आत्मार्थमभव आत्मार्थिकं ब्राम्हणैरपि आत्मनैवभोज्यं नत्वन्यस्यैचित् देयमित्यर्थः तु इति तेन हेतुनावय एतादृशं ब्राम्हणभोज्यं अन्नपानं तुभ्य न दास्यामः इह त्वं किं स्थितोसि अस्माकं धर्म्यशास्त्रे उक्तमस्ति न शूद्राय मतिं दद्यात् नोच्छिष्टं न हविः कृतं नचास्योपदिशेद्वर्ग्यं नचास्यावृतमादिशेत् १।११ तदा यच्चः पुनरवादीत् [यज्ञेशुवीयाइं ववंति कासयातहेव निरुं सुय आससाए एयाइ सद्वाएदलाहिंसज्जं आराहिए पुन्नमिणं खुखेत्तं] १२ एतया अनया उपमया अद्यया भाववनया मद्यं ददुक्खंखु इति निचयेन इदं सन्नचरणं पुखं शुभं चेतं आराधयत एतया इति कया उपमया तां उपमां आह कर्षकाः क्षेत्रीकारका नरा आशंसया विचारण्या काले वर्षाकाले स्थलेपु उच्चप्रदेशेषु तथैव निजेषु निम्नभूमिगण्डेषु बोजानि वपन्ति कीर्थः वर्षा काले क्षेत्रीकारका वीज वपन्त एवं चिन्तयति यदि प्रसुरा वर्षा भविष्यन्ति तदा स्थलेषु फलावाप्तिर्भविष्यति यदि च अस्याः वर्षा भविष्यन्ति तदा निम्न प्रदेशेषु फलावाप्तिर्भविष्यति उभयत्र उच्च नीचप्रदेशेषु बीजं वपन्ति न पुनरेकत्रैव बीजं वपन्ति यदि यूप्यं ब्राम्हणा निम्नभूमिसदृशा खादा अहं स्थलभूमिसदृशी गखः मल्लमपि दातव्यं न केवलं यूयमेव चेतप्राया किन्तु अहमपि पुख्यचेचमस्तीति भावः १२ इति श्रुत्वा ते ब्राम्हणा स्त प्रत्यवुखदाह [खित्ताणि अहं विइयाणि लोए जहिं पक्किन्ना विरुहंति पुन्ना जेमाहणा जाइ विज्जीववेया ताइं सुखित्ताइं सुपे ससाइ] १३ अरे पाषण्डपाथ तानि क्षेत्राणि अस्माभिर्विदितानि वर्त्तन्ते इति अध्याहार जहिं इति यत चेतेषु प्रज्जीर्णानि उत्तानि बीजानि प्रदत्तानि

खित्ताणिअहं विदियाणिलोए जहिंपक्किन्नाविरुहंतिपुन्ना । जेमाहणाजाइ विज्जीववेयाताइं तुखित्ताइं सुपेसलाइं । १३

ब्राम्हण कहे छे जेदाननां चेत छे ते अन्ने जाण छुं यत्र चेतेषु वसानि सति प्रादुर्भवन्ति पूर्णानि जे चेतने विषे व्योवी थकां उगे पुख ये ब्राम्हणाः जाति विद्योपपत्ताः जे ब्राम्हण योग करी विद्या करी सहित छे उत्तम जाति छे घणौ विद्या जाणिछे तानि, चेत्याणि सुपयलानि मनोज्ञानि इत्या ब्राम्हण अहारे

दानानि पूर्णानि विवक्षति विगोपिय उद्वृष्टानि भयानि विभक्तिनिद्रथलयसु प्राजातत्वात् ये ब्राम्हणा जातिविद्योपयेता स्ते तु ब्राम्हणा युक्तरां प्रतिगयेत् येयानानि मनोहराणि चेतानि प्रो यानि तत्र जातिब्राम्हणत्व विद्याविदाययन जातिय विद्याच जातिविद्ये ताभ्या उपपेता सङ्गिता जाति विद्योपपेता उप षप इता इत्यत्र गवध्यादियु पररूपमियनेन उपपन्नस्य प्रकारतोप पथादादगुणेन सिद्धि यदुक्त समयोत्रिये दान विगुण ब्राम्हण त्रुरे गृह प्रपुणमाचार्यं पनत्त वेदपारगे २ इत्यतत्वात् वेदपाठगा ब्राम्हणा पुत्र्य चेतानि १२ अथ यत्र श्राद्ध [कोहोय माणोयवहीयजेसि मोस अदत्त च परिगृह च तेमाहणाजाद् विज्ञा विद्वाणा ताद् तु खित्ताद् सुपावयाद्] १४ भो ब्राम्हणा वेर्पा भवतां मध्ये क्रोधो वर्त्तते च पुनर्मानमाया लोभाच्च वर्त्तते प्रकारात् मानादीनां गृहण च पुनर्वधो जोषहिता वर्त्तते अदत्त अदत्तादान मध्यस्ति च यद्वात् मैयुन कामा शक्तिरस्ति च पुन परिग्रही वर्त्तते ते पूयनेब्राम्हणा जाति विद्याविद्वाणा क्रिया कर्मविवेकेण चातुर्वर्ण्यं व्यवस्थित इति वचनात् ब्राम्हणत्व जातिमान् ब्राम्हण ब्राम्हण ब्राम्हणोभ्यां उत्त्वन्नो चते कि तु ब्राम्हणत्वे न ब्राम्हणक्रिया निष्ठत्वे न ब्राम्हणस्मितेन जातिधर्मेण विगिष्टो ब्राम्हण उच्यते तच्चात् युष्मासु ब्राम्हणियनिष्ठत्व ब्राम्हणस्य अभावात् न जातिरस्ति ब्राम्हणा ब्राम्हण्येण इति नचणोपित्वात् न पुनर्यूय विद्या युजा शिवायासु शिरति रूपफलभावात् विद्यायान् अपि यावत् विरतिमान् सन् प्रायवात् मखरहरिण न कणदि तावत् स विद्यायान् ७ उच्यते विद्या अपि परमार्थत स्ताएव उच्यते यासपश्चा अथ परिहार उक्त तन्नाश्च भवन्तो विद्या

योहोयमाणोयवहीयजेसि मोस अदत्तचपरिगृहच । तेमाहणाजाद् विज्ञाविद्वाणा ताद् तुखित्ताद् सुपावयाद् ॥१४॥

पुण्यां चैव मनुष्यर कक्षा १२ अथ यचोवाच कोपय मााय वपय वेर्पा क्रोधमारु छे जे माहिवली वध करे छे जीवमारु छे सुपावादय अदत्तश्च परि गृहण मयावाद बोने अदत्तादानलिद् परिगृह राखे ये ब्राम्हणा जातविद्या विद्वाणा तेब्राम्हण जाति विद्याद् करीने हीन तानि चेतानि सुपायकान्येव

किमय याग कुर्वीष प्रथम यागोपि भवद्भिर्नैवायते कानि तर्हि चैतानीत्याह हे ब्राम्हणा मुनीन् सुपेयलानि श्रत्यन्त सुन्दराणि देवाणि जानीथ ये मुनय उद्यावचानि गृह्णाणि उत्तमाधमानि कुलानि भिवायं चरन्ति अथवा उद्यावयाद् उद्यानि महान्ति वृत्तानि उद्यवृत्तानि चेयां तानि उद्यवृत्तानि प्रकारप्राकृतत्वात् महावृत्तधराणितानि चैत्राणिभ्यानिश्रियानि इत्यर्थ १५ तदा ह्यावा किं प्राहु [अस्मावयाथ पठिकूलभासो पभाससे कितुरगसि अम्ह अविष्य विणस्सु अत्रपाथ नयथ दहासुतमनियठा] १६ किन्तु इति शब्दो निन्दाक्रीधवाचकौ शरे नियठा शरे दरिद्रि त्व उपाध्यायानां प्रतिज्ञूलभापो सन् अस्माक सकागे अस्माक प्रत्यक्ष प्रभापसे प्रकषेण यथा तथा भापसे असवढ वचन द्रूपे तस्मादरे एतत् अत्रपान यिनश्रुत एतदाहार सटु पततु अपि परमेतदाहार तुभ्य उपाध्याय प्रतिकूलवा दिनेनदम १६ तदावच प्राह [समिद्धि मज्ज सुसमाहिअस्स गुत्तोहि गुत्तस्स जिह् दियस्स जइमेनदाहिल्यइहेसणिल्ल किमज्ज जन्नाणलभि त्यलाम्] १७ यदि मे मम इह अस्मिन् यत्तपाटके एषणीयं गढ आहार अथ अक्सरे न दास्यथ तदा यजानां लाभ पुण्यप्राप्ति रूप फल किं लप्स्यथ अपि तु न किम पीत्वय पातदान विना किमपि न फल इत्यर्थं कथमूतस्य मम तिसृभि गुप्तिभिर्गमस्य पुन को द्रव्यस्य पशुभि समितिभि सु श्रत्यन्त समाहितस्य यत्ता

समिद्धंरिमज्ज सुसमाहियस्स गुत्तोहिगुत्तस्सजिह् दियस्स । जइमेणादाहिल्य अहिसणिल्ल किमज्ज जन्नाणलभेत्य

ध्याम तव अत्रपान हे निषय्य तुम्हने ए अत्रपाणी काह नही थां तुपरहोजा १६ साधुशवाच सुमतिभि सुसमाधितस्य यद्य कहे हे पाषे समते करी सनाधिततो ह्यो गुप्तिभि गुमस्यनिन्दियाय अने हु त्रिहु गुप्ति करो गुप्त छु पचि इ द्री मे आपणा जोत्या हे यदि मे मम यूय न दास्यथ एषणीय वगु तो तुम्हे सुम्हतो आहार एषणीय सुम्हने नही थो तदा किमत्र यजानां लाभ लक्षिय तो ते प्राज एह यत्तु फल स्यु पामस्यो १७ यिमा प्राहु

स्व पुनः कीदृशस्य मम जितेन्द्रियस्य जितानि इन्द्रियाणि येन स जितेन्द्रियस्तस्य अत्र चतुर्थी स्थाने एतादृशाय पात्राय मन्त्रं चेतु यूयं प्राप्नुकमाहारं न दास्यथ तदा भवतां सर्वमपि हृद्या फलस्य अभवात् १७ अथोपाध्याय आह [कि इत्य खत्ता उवजीश्या वा अज्जावया वा सह खंडिएहि एयंखुदुडेण फलेण हंता कंठमि धित्त्वाखलिज्जतीण] १८ केचित् अत्र प्रस्मिन् यत्रपाठके जत्रा चत्रियाः उपव्योतिपः अस्मिन्ः उपसमीपे अग्निस्मीपवर्त्तिनः पात्रा स्थानस्थाः या अथवा अध्यापकाः वेदपाठजा सदिति अध्याहारः कायभूता पाठकाः खंडिकैः क्वात् संहिताः ये एनं मुंउं दंडेन वंययध्या फलेन विखा दिना हत्वा कठ गृहीत्वा गलहस्त दत्त्वा खलयेयु इतो यत्रस्थानान्निःकासयेयु जोडत्यनयः इत्युक्तं तत् प्राकृतत्वात् ये इति यत्कथं प्राकृतत्वाद्दचन व्यत्ययः १८ [अज्जावयाणं वयणं सुगित्ता उदाश्या तस्य नञ् कुमाराः दण्डे हिं वित्ते हिं कसेहिं चैव समागया तं द्रुसिताडयन्ति] १९ तत्र तस्मिन् यत्र

लामं ॥१०॥ केएत्यखत्ताउवजीश्यावा अज्जावयावासहखंडिएहिं । एयंतुदंडेगाफलेगाहता कंठमिधित्त्वा खलेज्जा -
जोणं ॥१८॥ अज्जावयाणं वयणं सुगित्ता उदाश्यातत्यवह्लकुमारा । दंडेहिवित्तेहिकसेहिंचैव समागयातंद्रुसिताल

कथित् अग्य क्षत्रिया चाथवा उव जीई या अग्निरयक्ता वृत्तण वीगा कीद्रे छे रे प्रच क्षत्रिय अथवा अग्निरयक्ता अध्यापकाः सह क्वात्तैः उपाध्याय इहां कीद्रे के क्वात् सहित यः एनं नियन्त्यं दण्डे न फलेन हत्वा जे एह जतीने दण्डे करी फल वीजोरा प्रसुखे करी हणीकण्डं गृहीत्तानि कासयेत् गले भालिने एहने काठी परी १८ अध्यापकानां वचनं शुत्वा उपाध्यायानां वचनसांगलीनि उदापिताः तत्र वहव कुमाराः मारवा भणी वृत्तणना क्रीकरा वषा दीया दण्डैः वेत्तैः कसेष तर्ज्जनकैचैव निययेन दण्डे करीने ताजणे करीने वाधि करीने समागता सस्त तं मुनिं ताडयन्ति प्राध्या यका ते

शरीरार० [देवाभि श्रीगण निश्रीद्रणं दिव्या सुरन्ना मणसा न भाया नरिन्द्र देविन्द्रभि वदिणं जीणामिवन्ताद्रसिणा सएसो] २१ सा भद्रा किमवा दीप् तदाह भी व्राम्हाणा एषः स ऋषिर्वर्त्तते येन ऋषिणा अहम्वांता प्रहल्यक्ता कथम्भूतेन ऋषिणा नरेन्द्र देवेन्द्रादिभिः वन्दितेन कीदृशा अहं राज्ञा दत्ता अस्मै अर्पिता अनेन ऋषिणा अहं राज्ञादीयमानास्मि तदा मनसा पिन ध्याता न अभिलषिता कीदृशेन राज्ञा देयाभिभोगेन नियोजितेन देवस्य यत्नस्य अभियोगी बलाकारो देवाभियोगस्तेन यच्च देवहठेन नियोजितेन प्रेरितेन इत्यर्थः एतादृशो यन्यागी मुनि रस्ति तस्मात् भवद्भिर्न कदर्थः इति भद्रा राजकन्या व्राम्हाणान् अवादीत् २१ पुनः सा किमाह [एसो हुसो उगतवो महष्पाजिन्द्रिञ्चो सञ्जय वंभयारी जीमितयानिच्छद् दिज्जमाणिं पिउणासयं कोसलिएण रत्ता] २२ इद्वति निययेन उपलचिती मया एयः उग्रतपा महात्मा वर्त्तते उग्रंतपो यस्य स उग्रतपा महान् प्रयस्य आत्मायस्य स महात्मापुरुष स इतिकः यस्तपस्वी कौशलिकेन पिता मम जनकेन राज्ञा स्वयं ब्रालना तदादीयमानां मां न ऐच्छेत् न वाव्यतिसू कीदृश एष जितेन्द्रियः पुनः कीदृशः सयतः सप्तदशविध संयमधारी पुनः कीदृशो ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्यवान् २२ [महायसो एस महाणभागी घोरबञ्चो घोर परक्रमीय माएयंहीलह अहीलणिज्जं मासव्वेते एणभेण्हिज्जा] २३ पुन एयः साधुर्महायया वर्त्तते पुनर्महादुभागः अचिन्त्यातिशयः पुनरेय

एसोहूसोउगतवो महष्पाजिद्रुदिञ्चो संजञ्चोवंभयारी । जीमितयाणेच्छद् दिज्जमाणिं पिउणा सयंकोसलिएणरत्ता २२॥

निय येन स साधुः उग्रतपाः महर्षिः ते एजसाधू छे उग्रतपस्वी महात्मा जितेन्द्रियः संजतः ब्रह्मचारी किस्वा छे साधु इन्द्रो जीणे जीत्या छे संजम पाले छे ब्रह्मचारी छे यः मांपिता दीयमानां न इच्छन्ति जिकी यती मुक्ते देता यका ने पिता स्वयं ब्रालना कौशलिकेन राजाहारी पिता कौश लिक राजा आपरती मुक्ते देता हता पर इणे यतीद्र मुक्ते वांछी नहीं अत्रिकार कीधी नहीं २२ महायया एय मुनिर्महादुभाव ए जती महाययनी

घोरपुत्री दुर्बर महावृत्तधारी पुनर्घोर पराक्रमी रौद्र मनोबल क्रीधादि षट् कथायाणां जये रौद्र सामर्थ्य स्तम्भात् एन तपस्विन माहीलयथ कथञ्चूत एन अहीलनीयं प्रवगणनाय प्रयोग्य स्तवनाहं मिल्यर्थं एष भे इति भवती युष्मान् सर्वान् मानिर्घाचीत् मा भस्मसात् कार्षीत् इति यदा दृपपुत्रा उक्त तदा यच्च किं प्रकापीर्दित्याह २३ [एयाद् तीसे वयणाद् सुधा पत्नीद् भद्राद् सुभासियाद् द्रुसिस्ववेया वडि यद्वयाए जक्त्वा कुमारो विणिवार यन्ति] २४ यथा परिवारसंहिता ऋषे वैया हृत्यर्थं कुमारात् ब्राम्हणबालकान् विशेषेण निवारयन्ति किं क्षत्वा तस्या सोमदेवस्य यन्नाधिपस्य पुरो हितस्य पत्न्या भद्राया वचनानि श्रुत्वा कीदृशानि वचनानि सुभापितानि सुष्टुभापितानि प्रकासितानि २४ [ते घोररूवा ठिद् प्रन्त लिक्ते असुरा तद्धिन्त जगतालयन्ति ते भिन्नदेहे रुहिर वमन्ते पासितु भद्राएष माहुमुज्जो] २५ ते यच्चास्तदा तस्मिन्काले तान् जनान्

महाजसो एसमहाणुभागी घोरव्वञ्चो घोरपरक्कमोय । माएयहीलह अहीलणिञ्ज मासव्वेतेएण भेणिद्दहेज्जा ॥२३॥
एयाद् तीसे वयणाद् सोच्चापतीएभद्राए सुभासियाद् । द्रुसिस्ववेयावडियद्वयाए जक्त्वा कुमारेविणिवारयति । २४॥

धर्षी महानुभाव छे घोरपुत्री घोर पराक्रमय बीजानीयती धत्वा नजाद् एहया वृत्तनी पालणहारके घणा जे जलवत छे मा एन हीलय अहीलनीय अय प्राप्तुमयञ्च देवा भणी एहनीं हीलना मत करो ए साधु अनिन्दनीक छे मा सर्वानपि युष्मान् तेजसा निर्हहेत् रखे तुम्हने सवसा एने तपने तेजे करो भस्म करे २१ एतानि तस्या वचनानि श्रुत्वा एहवा वचनसांभलोने सोमदेव पुरोधस पत्नी सुभद्राया सुभापितानि सोमदेवपुरोहित तेदनी स्त्री भद्रा तेदना भनावचन ऋषे वैयाष्टत्य निमित्ता यचपतीना वैया वच्चनिमित्त सावधान इथो वैयावचकरवा लागी यचा कुमाराण् विनिवारयती यच्च देवता

ब्राम्हणान् ताडयन्ति चपेटादिभिर्घ्नन्ति कीदृशास्ति यच्चा. घोररूपा पुनः कीदृशास्ति अन्तरिक्षे आकाशे स्थिताः पुनः कीदृशास्ति आसुराः असुरपरिणाम
युक्ताः उपै चते असुरा इव इत्यर्थः तेहि यस्मिन् यज्ञपाटकेते इतितान् भग्नदेहान् दृष्ट्वा भद्राभूय. पुनरपि इदं वचनं आहुरिति आह ब्रूते प्राकृतत्वाद्बचन
व्यत्यय तान् किं कुर्वन्ती रुधिरं वमन्तः २५ [गिरिं नहेहिंखणह अयं दन्तेहिं खायह जायवेयं पाएहि हणह जे भिक्खं अवमन्नह] २६ अरे वराका इति
अथाहार यूयं नखैः करजैर्गिरिं पर्वतं खनयइव इह शब्दस्य गह्वरं सर्वत कर्त्तव्यं पुनर्दन्ते रयी लोहं खादधभजययइव पुनर्जातवेदसं अग्निं पादे
ईनयइव अग्निं चरणैः स्पर्शयथइव येयूयं भिज् साधुं अवमन्थ अस्य भिची रपमानं कुकथ गिरिलीहाग्नीनां उपमानं प्रनर्थ फलहेतुत्वात् उक्तं २६

तेषो ररूवाठियञ्चतलिकखे असुरातहिं तंजातालयंति । ते भिन्नदेहे रुहिरं वमंते पासित्तु भद्दाद्रुणमाहुमुज्जी । २५॥
गिरिं गहेहिंखणह अयं दंतेहिंखायह । जायवेयं पाएहिं हणह जे भिक्खुं अवमन्नह ॥ २६॥ आसीविमोउगगतवोमहेसी

ब्राम्हणा कुमरने निवारे छे २४ ते घोर रौद्रा वारणधारिण स्थिताः आकाशे ते यज्ञ घोररूद्र करीने आकाशे विपे जभा छे यज्ञः तत यज्ञपाटके
तत् छात लोकां घ्नन्ति यज्ञ देवता ते यज्ञ ठामे छात्रने मारि ताडे छे तान् बालकान् भिन्नदेहात् ते बालक धरतीद्र' पद्या छे रुधिर वमता मीढा यकी
लोहीनाखे छे दृष्ट्वा भद्रा इदं प्राहुः पुनः इस्य स्वरूप ब्राम्हण नू देखी भद्रा जौली २५ पर्वततलैः खनय अही ब्राम्हणी तुम्हे नखे करी पर्वतखणी छी
लोहं दन्तैः खादयथ लीह दंति करोति तुम्हे खाग्री छी अग्निं पादे. हणथ अग्निपणी करोने सर्वावांछी छी ये भिज् यूयं अवमन्थत जे तुम्हे साधने
अवगणी छी होली छी २६ आशीविपलधिवन्तः उग्रतपा मर्हयिः भद्रा कहे छे एयती प्रागोविप लक्ष्मिनी धणी छे उपतपकरे छे मोटी ऋषीगर्जर छे

अथ एवासाकं शरणं इत्युक्त्वा अभ्युपागच्छत यदि यूयं जीवितं वा अथ याधनं इह इच्छथ यतः एष साधुः तपस्वी कुपितः सन् लोकं समस्तं नगरादिकं दहेत् २८ [अवहेडिय पिडि स उत्तमंगे पसारिया बाहु अकम्मचिद्धे निज्जे रियत्थे रुहिरं वमन्ते उट्टं मुहे निगय जीहनित्ते] २९ [ति पासिया खण्डिय कट्टभूए विमणो विसिन्नी अहमाहणोसी इस्सिम्यसाए इस्स भारियाप्री हीलच्च निन्दच्च खमाहभन्ते] ३० युग्मं अथानन्तरं स ब्राम्हणः ऋषिं प्रसादयति कीदृशः स ब्राम्हणः स भार्यं पत्नीसहितः सह भार्यया भद्रया सहवर्त्तते इति स भार्यः कथं कथं प्रसादयति तदाह हे भदन्ते हे पूज्यहीलां असकृत अपमानञ्च पुनर्निन्दां हास्माभिः भवतां निन्दाकृता तां निन्दां यूयं चमध्वं कीदृशो ब्राम्हणो विमनाः विदूनमनाः पुनः कीदृशो विधित्तः विजे

पसारियाबाहु अकम्मचिद्धे । निम्भरियच्छेरुहिरं वमन्ते उट्टं मुहेणिगयजीहणेत्ते ॥२९॥ तेपासिया खंडियकट्टभूए विमणोविसन्नी अहमाहणोसी । इस्सिपसाएइ सभारियाओ हीलंच गिंदंचखमाहभन्ते ॥३०॥ बालेहिं मूढेहिं अया •

२८ अवहेडिता अधीनामितः दृष्टावधिः मस्तकान् माया पूठादि साफेया के मोहडा पुठानि कीधा के प्रसारितवाहन् भ्रकर्मचेष्टान् व्यापाररहितान् वाहपसारी के, चेष्टा काइं नथो करता हाथ पगहलावता चलावता नथो प्रसारित नेत्रान् रुधिरं वमन्तः आंखि पसारि के मुख थकी लोहीनाखि के उट्टं सुखान् निर्गतजिह्वा नेत्रान् सुख उंचा कीधा के जीभ बाहिर काढी के नेत्र फाटा के २९ तां तां दृष्टा द्वात्रान् काष्ठभूतान् ते द्वालने एहवे हवाल पद्या देखेने मनोरहितः विषादप्राप्तः सन् स ब्राम्हणः ते यज्ञनी कारावणहारपुरीहित विषाद पाप्मी मन भूंडी होइ गयो हवे सु थास्से ऋषि प्रसन्नं करोति सभार्या भार्या सहित हवे ते ब्राम्हण भार्यासहित ऋषिनि प्रसन्न करे के अवज्ञां निन्दा चमस्व हे भदंत तुम्हारी हीसा कीधी के निन्दा कीधी

पेण दीन कि छत्वा तान् खण्डिका। कावान् काटभूतान् काठसदयान् निघेष्टितान् दृष्ट्वा पुन कोदयान् तान् प्रवहेठित पृष्टि स उत्सर्गागान् प्रवेष्टि
ठितानि पृष्ठ गायत् नामितानि पृष्टे गत्वा लग्नानि सन्ति योभनानि उत्सर्गागानि मस्तकानि येपान्ते प्रवहेठित पृष्ट स उत्सर्गागा स्नान् पयाद्गम
पृष्ट देग सत्तनमस्तकान् पुन कोदयान् प्रयारित्वाह कर्मचेष्टान् प्रसारिता प्रलम्बीकृता बाहवो यैस्ते प्रसारितवाहव न विद्यते कर्मणि अग्नि
विषये इत्थन घृतादिनिषेपणे चेष्टा सामर्थ्यं येपान्ते अकर्मचेष्टा प्रसारित बाहवयते अकर्म चेष्टाय प्रसारित बाह्वकर्म चेष्टा स्नान् बाहुप्रसारणत्वेन दूरे
पतिते धनदर्शकान् इत्यर्थं पुन कोदयान् निर्भरिताद्यान् निर्भरितानि प्रसारितानि अचीणि यैस्ते निर्भरिताद्यास्तान् तरलितनेत्रान् पुनस्तान्
कि कुर्यत रुधिर वमत मुग्धात् २१ अथ पुन कोदयान् जर्हमुखान जर्हवदनान् पुन कोदयान् निर्गतजिह्वा नेत्रान् जिह्वा च नेत्र च
जिह्वा नेत्रे निर्गते जिह्वा नेत्रे येपान्ते निर्गते जिह्वा नेत्रास्तान् ३० अथ स द्याम्हणो हरिकेश ऋपि कीदृशैर्वचने प्रसादयति तानि वचनान्याह
[बावेष्टि मूढेष्टि पयाणष्टि जहोलियातय्यउगाहभते महप्यसाया इषिणीष्टवति नहुमुणीकोवपराहयति] ३१ भो पूज्या भो भदता एभिर्वालै
गिष्ठभिर्मूढे ऋपायमोहनोयवगैर्भूवृष्टिताष्टित विवेकविकलैज इति यस्मात् कारणात् यथ अवहोलिताअवगण्यिता तस्य इति तस्य अवहोलनस्याप
राधपमथ ऋपयोमहाप्रसादा भवति अतोव निर्मलचेतसो भवति न पुनर्मनय कोपपरायणा भवति मुनय चमा वन्तो भवन्ति ३१ तदामुनि

णष्टि जहोलियातय्य खमाहभते । महप्यसाया इस्सिणीहवति नहुमुणी कोहपराभवति ॥३१॥ पुब्बिच द्रुगिहच

जे हे पूय हे भगवंत तु एमि १० गिष्ठभि मूढेरप्राने वालके मूढे अघ्नानीये यत् यूय हीलिता पीडिता तस्य चमस्य तुम्हने हील्या पीड्या ते खमो
हे भदता महा प्रसवंचिमा ऋपयो भवन्ति प्रसवंचित्त महाप्रसाद वन्तयो ऋपयोगर इवे इ नियित मुनय कोपपरानहवन्तीर्थं मुनीवर कोपने यग्नि न

च पुन, धम वस्तुनां स्वभाव श्रयवा धम दयविध साध्याचार विज्ञानाना अर्थधर्मज्ञा इत्यर्थं पुन कथभूता यूय भूति सर्वजीवरचा तव प्रज्ञा येषां ते भूतिप्रज्ञा तस्मात् वय तुभ्य इति युष्माकं ग्ररण उपेयम उपागता स्म प्राप्ता स्म अन्हे शब्देन वयमिति ज्ञेय कीदृशा यूय सर्वजनन समागता सर्व कुटुम्बपरिवारेण सनागता मिलिता ३३ [अर्चे मुते महाभागा नतेकिचिन अचिमो भुजाहि सालिम कूर नाणावजण सञ्जुय] ३४ हे महाभाग ते तव सव अपि अर्चयाम ते तव सर्वमपि ज्ञावयाम ते तव वय किमपि चरणधूनि अपि न अर्चयाम के वय ये त्वां अर्चयाम त्व उ देवाना पूजाहे वय तव का पूजा कुर्म एतादृशो का पूजास्ति या तव योग्या परन्तु वय दासभाव कुर्म इत्यर्थं सालिम इति सालिमय सम्यग् जातिशुद्ध सालिनिष्यत्र कूर त दुलभीज्य भुजाहि भुल्ल कथभूत कूर नानाथञ्जनस युत बहुविधै व्यञ्जनैर्दध्यादिभि सहित ३४ [इम च मे अल्पिपभूयमन्न त भजसु अन्ह अणुमा

भागा णतेकिचिणअचिमो । भु जाहिसालिमकूर याणावजण सञ्जुय ॥३४॥ इमचमे अल्पिपभूयमन्न तभु जसु अन्ह अणुगगहट्टा । वाटति पडिच्छेद्भत्तपाण मासस्मजपारणए महप्पा ॥३५॥ तहिय ग धोदय पुफ्फवास दिव्वातहि वसु

वयं तव हे महानुभागा पूजां क्वां तुम्हने न कि पी अर्चते भूध्व गृह्याण सालिनिष्यत्र कूर स्वामी जीएचोखानीपना छे सालनो नीपनी छे ए कूर नाना विध विजनसयुक्त विधि विधिनां सात्तणा सहित एचावल जिमो ३४ इद च मम प्रभूत प्रचूर खड खाद्य ए अन्हारे अत्र पकयान घणो इच्छे तदगृह्याण अण्णाक प्रसाद करणाय ए आहार तुम्हे जोमो अन्ह जपरि क्कपा करीने ततो मुनि वाठ एवमनु इत्युक्ता गृह्णाति भक्तपान तिवारे यती घणो आग्रह देखीने भातपाणो लिद्दि विहरे मामोपवासस्य पारणे महात्मा मुनि मास खमणने पारणे माहात्मा ३५ तदा दानावसरे गन्धीदक पुष्पाव हृष्टि कीता

हृदा वाटंति पङ्क्तिश्च भक्तपाणं मासस्त्रयोपारणए महण्या] ३५ हे स्वामिन् मे मम इदं प्रत्यक्ष खंडमंडकादिकं अन्नं प्रभूत वर्त्तते प्रचुर वर्त्तते पूर्वमपि शालमयं क्रूरं ग्रहणं क्षतं अन्न च पुनरन्नग्रहणं तत्सर्वान्न प्राधान्य ख्यापनार्थं तद्भोज्यं भञ्ज इति ब्राम्हणे. प्रोक्ते सति सुनि प्राह बाढं इत्युक्त्वा तथास्तु वाढ शब्दोद्गीकारे एवं एव करोमि गृह्णीथामीत्युक्त्वा साधुर्मासस्यपारणके भक्तपान आहारपानीयं प्रतीच्छति अङ्गीकरोति कथम्भूत स सुनिर्मं हात्मा महान् निर्मली नि कषाय आत्मायस्य स महात्मा महापुरुष ३५ [तद्विद्यं गन्धीदय पुष्पवासं दिव्वा तर्हिं वसुहारायवुष्टा पहयाओ दुंदुहिओसु रेहिं आमासे अहीदाणं चवुष्ट] ३६ तर्हिं तस्मिन् यत्रपाटकेसुनिना आहारे गृह्णीते सति गन्धीदक पुष्पवर्षमभूदिति शेषः सुगन्धपानीय कुसुमवर्षा आसन् इत्यर्थः च पुनस्तस्मिन् स्थाने दिव्या प्रधानादेवै क्षतावसुधारा वृष्टा स्वर्णदीनाराणां वृष्टिरभूत् वसु द्रव्यं तस्य धारा सतत पातजनिता वसुधारा सा वृष्टा देवै पातिता इत्यर्थः तु पुनः आकाशे सुरै दुन्दुभय प्रहता देवैः आकाशे वादित्राणि वादितानि च पुन आकाशे अहीदानं २ इति घुष्टं देवैः शब्दितं ३६ तदा च द्विजा विस्मिता किमाहुः तत् आह [सकळं खुदी स इतवी विसेसो नदी सई जाइ विसेस कीइ सो वागपुत्तं हरिएससाहुं जत्से रिसा इच्छि महाणभागा] ३७ सुइति निययेन तपोविशेषः साचात् दृश्यते जातिविशेषः कीपि न दृश्यते तपो माहात्म्यं दृश्यते जातिमाहात्म्यं किमपि न दृश्यते श्वाकपुत्रं चांखालपुत्रं तं हरिकिय साधुं पश्यत इति शेष तं इति किं यस्य हरिकियस्य साधोः एतादृशी सर्वजनप्रसिद्धा ऋद्धिर्वर्त्तते देव

हाराय वुष्टा । पहयाओ दुंदुहीओ सुरेहिं आगासे अहो दाणं चवुष्ट । ३६ । सकळं खुदीसइ तवोविसेसो नदीसईजाइ

यतीने आहार लेतां यकां सुरभी पांणी फूलनी वृष्टिइई तस्मिन् समये द्रव्य वृष्टिः क्षता देवैः तेह समे देवताइ' द्रव्यनी वर्षा कीधी वादिता वाजिन्न विशेषाः देवैः देवता ए देव दुंदुभी वजाडी आकाशे अही दानमपि घोषितं आकाशने विषे अही दानमही दानं इसी घोषणा कीधी २६ साचात्

स्वायत्थजीवानां विराधना अथ च स्नानादौ अप्कायस्य जीवानां विराधयति तत् तत्वज्ञैर्न सम्यक् दृष्टं सम्यग् न कथितमित्यर्थः यदुक्तं स्नानं मनोमलत्यागी यागश्चेन्द्रियरोधनं अभिददर्शनं ज्ञानं ध्यानं निर्विषयं मनः इति ३८ [कुसंच जूवंतणकडुमिं सायंच पायं उदयं फुसन्ता पाणाइ भूयाइ' विहेडयंता भुज्जी विमंदापकरेह पावं] ३९ भो ब्राह्मणाः मन्दा यूयं भूयोपि पुनरपि शुद्धिकरणप्रस्तावपि पापं प्रकुरुथ पूर्वमपि संसारकार्यकरण प्रस्तावे आरंभं कृत्वा प्राणान् भूतानि विनाशय पातकमुपार्जितं पुनर्धर्मं कारणप्रस्तावे तदेव क्रियते इत्यर्थं किं कुर्वन्तः कुशं दर्भं यूयं यज्ञस्त्राभं लणं वीरणादिनडादिकं काष्ठं शमीवृक्षस्ये म्थनं अग्निं च एतस्त्वं प्रतिगृह्यत एतस्मायं सम्भ्याकाले च पुनः प्रातः प्रभाते उदकं पानीयं सृशन्तः आचमनं कुर्वन्तः अतएव प्राणान् ह्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियान् भूतान् तरुन् पृथिव्यादीन् अपि तदाधारभूतान् विहेयंतः विशेषेण हिंसन्त इत्यर्थः एतेषां एव प्राणभूतसत्वानां विराधनेन हिंसा भवति पुनरेतेषामेव शुद्धिकरणकालेऽपि विराधना विधीयते कुतोऽस्माकं शुद्धिर्भविती इति न जानन्ति अतएव मन्दा मूर्खाः यत उक्तं दृष्टिपूर्वं चरेन्मागं वस्त्रपूतं पिवेज्जलं ज्ञानपूतं सृजधर्मं सत्यपूतं वदेद्वचः ३९ अथ प्रत्युत्पन्नशङ्कास्ति ब्राह्मणाधर्मं पप्रच्छुः [कहं चरे भिक्खु वयं जयामीपावीइ कम्माइ' पणुत्तयामी अक्वाहिणी संजयजक्खपूइया कहं सुसुइ' कुसलावयति] ४० हे भिची वयं कथं चरेमहि कस्यां क्रियायां प्रवर्तमहि हे भिची पुनर्वयं कथं ययामी यागं कुर्मः पुनर्वयं पापानि पापहेतूनि कर्माणि पणुत्तयामः प्रणुदामः हे यच्च पूजित हे संयतिन्द्रिय कुशलाः धर्म

सायंच पायं उदयं फुसंता । पाणाइ भूयाइ' विहेडयंता भुज्जीवि मंदा पकरेह पावं ॥३९॥ कहंचरे भिक्खु वयं

समय प्रभात समय पाणीनि फरसी छे प्राणान् ह्रीन्द्रियादीन् भूतान् पृथ्यादीन् विहेडयत बेद्रियादिक जीव पृथ्यादिक एकीन्द्र जीवते धर्म बुद्धे करी तुहे मारी छी पुनरपि पापसञ्चयं कुरुथ मूर्खाः आगे पाप करोनि मूर्खे भाल्मानि घण मेली करो छे ३९ अथ विप्रा प्राइ' हे भिक्खुः वयं कथं चरामी

माययोः सहकारिण्येन क्रीडलोभयोरपि त्यागी ज्ञेयः एतान् सर्वान् पापहेयून् ज्ञात्वा पुनस्त्यक्त्वा साधवो यतनया चरन्ति अतो भवद्भिरपि एवं चरितव्यमित्यर्थः ४१ अथ द्वितीयप्रश्नस्य कथं यजाम इत्यस्य उत्तरमाह [सुसंबुडा पंचहिंसं वरेहि इह जीवियं अणवकं खमाणा वी सट्टकाया सुइच्चत्तदेहा महाजबं जयइ जन्न सिट्ठं] ४२ भी वृहण्णा पञ्चभिः सखरैः हिंसा मृषा अदत्त मैथुनपरिग्रह विरमणैः सुसम्बुताः सुतरां प्रतिशयेन संसृता आच्छादिता अणवः निरुण पापागमनद्वाराः सुसंसृताः संयमिनः जन्नसिट्ठं यन्नयेष्ठं जयन्ति कुर्वन्तीत्यर्थः यन्नपु अष्टो यन्नयेष्ठसं अथवा अष्टो यन्नः अष्टयन्नसं प्राकृतत्वात् यन्नयेष्ठं इति श्रियं कीदृशं अष्टयन्नं महाजयं महान् जयः कर्मांरीणां विनायी यस्मिन् स महाजयसं कीदृशाः सुसंसृताः इहास्मिन् मनुथ जन्मनि जीवित प्रसावादसंयमजीवितव्य अनवकांचमाणाः असंयम अनौसंत इत्यर्थः पुनः कीदृशाः सुसंसृताः व्युत्सृष्टदेहाः विशेषणपरीषहीपसर्गसहने उत्सृष्ट कल्पितः कायी येस्ते व्युत्सृष्टदेहाः पुनः कीदृशाः शुचयो निर्मलवृताः पुनः कीदृशाः त्यक्तदेहाः त्यक्तो निर्ममत्वेन परिचर्याभावेन अवगण्णीतो देहो येस्ते त्यक्तदेहाः एतादृशाः साधवस्विष्टं यन्नं कुर्वन्ति एष एव कर्मप्रसूटनोपाय इत्युक्तं ततो भवन्तीत्येवं यजतामिति भावः यजमानस्य कान्युपकारणानि इति पुनर्वृहण्याः पृच्छन्तिस्म ४२ [केतेजीई केवतेजीइठाणं कातिसुया किंचते कारिसंगं पहायते कयरासंति भिक्खु कयरेण हीमिण इणासि

पंचहिं संवरेहिं इह जीवियं अणवकं खमाणा । वोसट्टकाया सुइच्चत्त देहा महाजयं जयइ जणसिट्ठं । ४२ । केतेजीई

अवाच्छत. इह ससार मांहि जीवितव्यनीवांछा पण्णिनकरे जे इं घणा दिन जीवु इम न वांछि व्युत्सृष्टकाया निरतिचारदेहो त्यक्तदेहाः शुश्रूषा भावात् देही प्रापणी जणे वीसिरावो छे अतीचारकोइ नलगाडि ईदृश्यं मुनयो महायज्ञं कर्मजयरूपं यन्नं यजति कुर्वति यन्नं अष्टं साधु भगवंतं अष्ट उत्तम इस्या यन्न करे ४२ कः तवाग्निः किं तव ज्योतिः स्थानं कुण्डं वृहण्य कहे छे अही साधु तुम्हारे अग्नि कहेवो छे अने

जोड़] ४३ हे मुने ते तव कि ज्योति कोऽग्निं कि पुनस्ते तवज्योति स्थान षग्निस्थान षग्निं कु छ किमस्ति ते तव कापुन त्रुषोष्टतादिप्रशेष कादर्थ्यं च पुन स्ते तव करोपात्रं अन्यदोपनकारण किमस्ति चिध्याप्यमानीर्गुर्येन उदीर्यते सन्मु ष्ते तत्करीपां गन्तव कि वियते ष पुन एधा कातरा का समिध याभिरग्निं प्रज्या न्यते ता का सन्ति च पुन शान्तिर्दरितोपगमहेतु रथ्यनपद्धति स्वकतराकास्ति हे भिक्षोत्व कतरेण्यद्भिति केन होमिन इवन विधिज्योति रग्निं जुहोयिष्यग्निं प्रोष्यसि पटञ्जीवनिकायविराधापिनाहि यज्ञो न स्यात् हेभिष्ठीभवता पट् जीवनिकायविराधनानुपूर्वं निपिबा षतो सुनिते ब्राह्मणा यज्ञ यज्ञोपकरणसामर्थे ष पप्रच्छ ४३ अथ सुनिर्मुनिर्योग्य यज्ञमाह [तवोजोर्द्वी जीवोजोर्द्वी ठाण जीगासु या सरीर कारिसङ्ग

केवते जोड्ढाणा कातेसुया किचते कारिसग । पहायते कयरासति भिवखू कयरेण होमिण हुणासि जोड्ढ १४३। •
तवो जोर्द्वी जीवो जोड्ढ ठाण जीगोसूया सरीर कारिसग । कम्म पहासजमजोग सती होम हुणाभीड्ढसिण पसत्य १४४

तुम्हारे षग्निनु स्थानक केहेतु हे का तव षट्, कादर्वीकि घृतादिप्रे पणपात्र अग्निदोपनकारण काठ किस्थो तुम्हारे अग्निमाहि घृतालवानी चाटुओ हे भिष्ठी तषट् धनानि कानि सन्ति अहो साधु तुम्हारे इ धणकेहवा हे केन होमिन इवन करोपि किसे होमि करोी अग्निने होमो छो ४३ साधोवाच तपो ज्योति जीवो ज्योति स्थान कुण्ड तपो ज्योति कही जीव ज्योति नु स्थानक कक्षी मनोयोगादय सधा घृतपेषणपात्राणि शरीर तपो रुहोपकलात् करोष मनोयोगवचन योग सूय कष्टता धोधानत्तरापात्र शरीररु ती तप कीजे ते करोप कही अे कर्माणि इ धनरूपाणि सयमयोगरूपा साति आठकर्म रूपर धप सवमईपयोग शान्ति ईदय होम करोमि ष्यपीणां प्रशस्त ष्यपि कहे के एहवो होमइ कर छु ए रिपीयरने प्रशस्त कक्षी छे ४६ क तव

कस्य पद्मा संयम ज्ञीगसन्ती होमं हुणामि इसिणं पसत्यं] ४४ भी ब्राम्हणा अस्माकं तपोज्योतिः तपः अग्निरस्ति कर्मन्वनदाहकत्वात् द्वादशविधं हि तपः सकल कर्मकाष्ठानि प्रज्वालयति जीवोज्योतिः स्थानं जीवोऽग्निकुण्डं तपसः आधारत्वात् मनीवाक्काय योगास्ते शुचोदर्थोऽज्ञेयाः मनीवाक्काय योगैः शुभ व्यापाराः दृढस्थानीया स्तपोऽग्निं प्रज्वलन इतवो वर्तन्ते शरीरं करीषांगं तेनैव शरीरेण ततोऽग्निर्हीप्यते शरीरसाहाय्येन तप स्यादित्यर्थः शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनमित्युक्ते कर्माणि एधाइन्वनानि कर्मन्वनानि तपोऽग्निं प्रज्वालयन्ति महा दुष्टकर्मकारिणीपि तपसा निर्मलाः संजाताः संयमजोगः शान्तिः संयमस्य सप्तदशविधस्य योग सम्बन्धः स शान्तिः सर्वजीवानां उपद्रव निवारकत्वात् अनेन होमिन अहं तपोऽग्निं जुहोमि कथञ्चूतेन होमिन ऋषीणां प्रशस्तेन सुनीनां योग्येन साधवीहि एतादृश्यं यन्नं कुर्वन्ति न अपरे एतादृश्यं कर्तुं समर्था भवन्ति ४४ यन्नस्वरूपं तु साधुनीक्तं अथ ब्राम्हणा स्नानस्वरूपं पृच्छन्ति [किं हरणं केयते सन्तितित्ये कहिसिन्नाश्री वरयं जहासि आयक्वणे सञ्जय जक्व पूइया इच्छामुनालं भवञ्चो सगासि] ४५ हे ऋषे यच्चपूजितत्वं नः अस्मान् आचक्ष्वबूहि वयं भवतः सकाशात् ज्ञातुं इच्छामः हे मुने ते तवकी क्रुदः कः स्नानकरणयोग्य जलाधारः किं पुन तव शान्ति तीर्थं शान्त्यै पापशान्ति निमित्तं तीर्थं शान्तिं तीर्थं पुख्यत्वेन तीर्थे दानादि बीजयुक्तं पातकशमनं पुख्योपार्जकञ्च स्यात् कुरुत्वेत्त्रादिसदृश्यं

केतेहरणं केयतेसन्तितित्ये कहिसियहाश्री वरयंजहासि । आद्रक्वणे संजयजक्वपूइयाद्रक्वामुणाळं भवञ्चो

क्रुदः क तव पापोपशमनाय तीर्थं कोण तुम्हारे द्रहः कवण तुम्हारे पाप दूरकरवानुं तीर्थकवण तुम्हारे कुल स्नानः त्वं रजः कर्ममलं जहासि किहां स्नान कीर्थां कर्मरूपमेलले कथयनी अस्माकं भी संयत यच्चपूजितं कहे अम्हने साधु यच्च पूजितं वाञ्छामि तव समीपे ज्ञातुं वांछ कुं ताहरे पासि जाणवनि ४५ धर्मरूपी द्रहः ब्रम्हरूपं शान्ति तीर्थं धर्मरूपद्रह ब्रम्हज्ञान शान्ति तीर्थं निर्मलमलरहितं आत्मा जीव भली लेस्या तेहने विषे यत् स्यातः

स्नानं दृष्टं परैर्यश्च प्रीक्तं कथम्भूतं एतत् स्नानं महास्नानं सर्वेषु स्नानेषु उत्तमं पुनः कीदृशं तत् स्नानं ऋषीणां प्रशस्तं सुनीनां योग्यं येन स्नानेन स्नाताः कृतशीचा विमलाः कर्ममलरहिताः अतएव विशुद्धाः निःकलङ्का महर्षयो सुनीश्वराः उत्तमं प्रधानं स्थानं अर्थान् मोक्षस्थानं प्राप्ताः इति अहं त्रवीमि जम्बूस्वामिनं प्रति श्री सुधर्मास्वामी प्राह इति हरिकेशीयं अध्ययनं द्वादशं सम्पूर्णं १२ इति श्रीमदुत्तराध्यय न सूत्रार्थं दीपीकायां उपाध्याय श्रीलक्ष्मी कौर्त्तिगणेशिथ्य लक्ष्मीवल्लभगणिविरचितायां हरिकेशीयाध्ययन स्यार्थः सम्पूर्णं १२ अथ त्रयोदशमस्मा रम्यते तपः कुर्वता पुरुषेण निदानं न कार्यं इत्याह । इति द्वादश त्रयोदशयोः सम्बन्धः चित्रसम्भूत साध्वी. सम्बन्धमाह साकेतनगरे चन्द्रावतंशकस्य राज्ञः पुलो मुनिचन्द्रनामा बभूव स च निहत्त काम भोग लब्धः सागरचन्द्रस्य मुनेः समीपे प्रव्रजितः गुरुभिः समं विहरन्नन्यदा एकस्मिन् ग्रामे प्रविष्टः सार्धेन सह सर्वेपि साधवश्चलिताः सार्धं भ्रष्टोसावटव्यां पतितः तत्र चलारी गोपाल दारकास्तं ह्युत्लषाक्रान्तं पश्यन्ति शुद्धै रग्यनादिभिः प्रतिजायति यतिना तेषां पुरोदेश्यनाकताः ते गोपाल दारकाः प्रतिबुद्धास्तदन्तिके प्रव्रज्यां गृहीतवन्तः तैः सर्वैः शुद्धादीच्चा पालिता धार्यां तु दीच्चापालितैव परं मललिङ्गवस्त्रादि जुगुप्सा कृता ते चलारीपि देवलीकं गताः तत्र जुगुप्साकारकौ द्वीदेवलीकच्युती दृश्युरे नगरे सांडिल्य ब्राम्हणस्य यथोमत्या दास्याः पुत्रलेनीत्यन्वौ युग्मजातौ बभूवतुः अतिक्रान्त बालभावी तौ यौवनं प्राप्तौ अन्यदा जैतरचरणार्थं तौ अटव्यां गतौ रालौ वटपादपाधः सुप्तौ तत्रै को दारको वटकोटरात्रिर्गतेन सर्पेण दष्टः द्वितीयः

विमुद्धा महारिसी उत्तमठाणं पतेत्तिवेमि । ४७ । इति हरिएसज्जयणं सम्भत्तं ॥ १२ ॥

निर्मला जेहने विपे स्नान कीधा यकी निर्मल हुआ शुद्ध हुआ यका महासुनि यः उत्तमं स्थानं प्राप्त इति त्रवीमि मोटो साधु उत्तम स्थानकने विपे प्राप्त हुआ मुक्ति गया एहवुं कहे सुधर्मा स्वामी ४७. इति हरिकेशी अध्ययन संपूर्णम् द्वादशमध्ययनप्ररूपीतः सम्पूर्णम् ॥ १२ ॥ त्रयोदशम अध्ययन प्राह १

कुर्वन्तु ममीपरिप्रसाद सर्वनागरिकोवित प्रदानेन पुनरेवम्बिधमपराधवदकरियाम इत्यादि चक्रिणाप्युक्तोसौयावश्च प्रशाम्यति तावदुद्यानस्थित
साधुर्जनापवादानं कुपित ज्ञात्वा तस्य समीपमागत एव उवाच भी समूतसाधो उपशामयकीपानल उपशम प्रधाना यमणा भवन्ति अप
राधेपि न कोपस्यावकाय ददति क्रोध सर्वधम्मानुष्ठान निष्कलीकारकोस्ति यतउक्त मासुववासुकरइचिक्त्वणवासुनिसेवद्व पठइनाशुसुक्काणुनिश्च अप्याण
भायर धारइदुइरवभषेरभिक्षासणभुञ्जइ जासरोसतसुसयणु धम्मनिष्कलु सम्पञ्जइ इत्यादिकैथिचसाधूपदैर्यै समूतस्य उपशान्त क्रोध तेलीलिया
स इत्ता ततस्त्रीहावपितप्रदेयाविहत्तो तदुद्यान चित्तित पैताभ्या स लेखनाकृता साम्प्रतमावयोर्युक्त मनशन कर्तुं । इति विचार्यताभ्या
मनशन विहित सनत्कुमार चक्रिणा न मुचि मन्विणो हत्तान्तो ज्ञात दुतै सह रल्लुबइ कृत प्रापितश्च तदुद्यानि तयो समीपे ताभ्यां
समीचित सनत्कुमारोपि तयोर्वन्दनाय साक्त पुर परीवार सुत्वायात सर्वलोकसहितश्चक्रो तयो पादयुग्मे प्रणत चक्रिण स्त्रीरत्न सुनन्दापिञ्चीत्
सुत्वात्तयो पादे प्रणता तस्याल कस्यार्थानुभवेन समूतयतिना निदान कतुमारब्ध तदानी चित्रमुनिना एव चिन्तित अहो दुर्जयल मोहस्य अहो
दुर्दीप्तता इन्द्रियाणा येन समाचरित विहृष्ट तपस्करोपि विदित जिन वचनीप्यय युयती बालाग्र स्वर्णेत्य अश्ववस्यति तत प्रतिबोधित कामिन चित्र
मुनिना तस्य समूत मुने रेव भणित आतरे तदध्ववसायाविहति कुरु एतेहि भोगा असारा परिणाम दारुणा ससार परिश्रमण इतश्च स्मृति एतेषु
मानिदान कुरनिदानात्तव घोरानुष्ठान नैवताटक फलद भपियति एव चित्र मुनिना प्रतिबोधितोपि समूतो न निदान तत्याजययस्य तपस फल
अस्ति तदाइ भवान्तरे चक्रवर्त्ती भूया समिति निकाचित निदान ततो मत्वासीधर्मं देवलीके हावपि देवो ज्ञाती ततयुगतथित जीव पुरमताल नगरे
इत्थपुत्रोजात रुभूत जीवसुतयुगत कापिल्यपुरे ब्रम्हनाम राजा तस्य चलनी नास्ती भार्यास्तस्या कुक्षी चतुर्दश स्वप्न सूचित उत्पन्न क्रमिण जातस्य

तयोक्त बालोय यत्त दुःप्रपतिनात्रार्थे काचिच्छ्रद्धा कार्या ततो दीर्घदृष्टेर्नील त्व पुत्र वात्सल्ये नन किमपि स्वहित वेत्ति अयमवयव मावयो रति विघ्नकर
स्तदवयवमय मारणोय मयि स्वाधीने तवान्ये पुत्रा बहवो भविष्यन्ति एतादृश दीर्घ नृपवचस्तयाप्तौ कृत यत उक्त महिला आल कुलहर महिला
सोयमिदुशरियखित्त महिला दुग्गददार महिला जोषो अण्णथाण १ मारद्वयिय भत्तार इणइ सुअत्तहपणासए अत्य नियगेहिपिपीलावइणारी रागा
उरापावा २ बुलिन्या भणित कथमेप मारणीय कथञ्च लोकापवादी न भवति दीर्घनृपणीत्त साम्प्रतमस्य विवाह क्रियते पथात्सर्वमावयो चिन्तित
भविष्यति ताभ्यां बृहदत्तस्य कस्यचिद्रात्र कन्या पाणिपहण कारित तयो शयनाय अनेकस्यश्च ग्रत सखिविष्ट गूढ निर्गमहार जतुगृह कारित इतश्च
धनु मन्त्रिणा दीर्घ नृपाय एव विघ्नस एव मम पुत्रोवर धतुरे तद्राज्य कार्यकरण समर्थो वर्त्तते अह पुन परलोक हितदुरोमि दीर्घ नृपणीत्त इह
स्थित एवत्व दानादि धर्मं कुरुतस्यै तद्वच प्रतिपद्य धनुमन्त्रिणा गङ्गातीरे महती प्रपाकारिता तत्र पथिक परिव्राजकादीनां यथेष्टदानं दातु
प्रप्त दानोपचारा वर्जितै परिव्राजकादिभिर्हि गव्यूत प्रमाणा सुरङ्गा जतुगृह यावत्खानिता जतुगृहान्त सुरङ्गा द्वारि शिलादत्ता इतय बुलिन्या
महताढम्बरेण यधूमधित कुमारस्तत्र प्रवेयित तत समय परिवारो विसर्जित वरधनु कुमारपार्श्वेस्थित एव स्वपितागदित वृत्तान्तानुसारेण
सावधानी जायन्ते च सुप्त ब्रह्मदत्त कुमारस्तु एक यथाया तथा बन्धासह सुप्त गत रात्रि प्रहरयुग्म तदा तत्रबुलिन्या सहस्रेण अग्निकन्दुकोयस्त
तेन तददृष्ट सप्त तातुदब्रह्मान दृष्ट्वा विनिद्रो ब्रह्मदत्त स्वमित्त वरधनु प्रपच्छ किमेतदिति वरधनुना सर्वं बुलिनी स्वरूप कथित पुन कथित इयश्च
कथा राजपुत्री न किन्तु काप्यग्या तस्मादस्या भीहोमना गपिन कार्ये त्वमस्यां शिलायां पादप्रहार कुरु येनाया निर्गच्छाव वरधनुत्त सर्वं ब्रह्मद
त्तेन कृत ततो दावपि निर्गल्य सुरङ्गाद्वहिर्द्वेमे समायाती तत्र च धनुमन्त्रिणा पूर्वमेवही तुरङ्गमी पुत्रधी च सुञ्जीस ताभ्यां तयो सङ्केत कथित तुर

प्राकृढी तावपि कुमारी ततश्चलितौ एकेन दिवसे न पञ्चाशद्योजन मातं भूभागङ्गती दीर्घं मार्गं खेदेन तुरङ्गमौ व्यापन्नी तत पादचारेण गच्छन्ती
 तौ कौटोभिधान ग्रामङ्गती कुमारेण वरधनुर्भणित मां क्षुधा वाधते वरधनुः कुमारं बहिरैवापवेश्य स्वयं ग्राममध्ये प्रविष्टः नापितं गृहीत्वा तत्रायातः
 कुमारस्य मस्तकं सुण्डापितं परिधापितानि कषाय वस्त्राणि चतुरङ्गल प्रमाण पटवन्धुः कुमारस्य स्त्री वस्त्रालङ्कृते हृदिद्वयः वरधनुनापि विषपरिवर्तनः
 कृतः तादृश विषधरौ द्वावपि ग्राममध्ये प्रविष्टौ तावता एको द्विज स्व मन्दिरान्निर्गम्य अभिमुख मागत्य तौ कुमारी प्रत्येवमाह आगच्छता
 मस्मदृष्टे भुञ्जतां तेनेत्युक्ते तौ द्वावपि तद् गृहे गतौ ब्राह्मणेन राजरूप प्रतिपत्ति पूर्वकं भोजितौ भोजनान्ते च एकाप्रवर महिला बन्धुमती
 नाम्नी कन्यां उदिश्य ब्रह्मदत्त कुमार मस्तकेऽञ्चान् प्रतिपत्ति भणति च एयोऽस्याः कन्याया वरोस्त्विति वरधनुना भणितं किमेतस्य मूर्खस्य बटुकस्य
 कृते एतावानायास क्रियते यतो गृहस्वामिना भणित श्रूयतामम्रादाया स सत्तान्तः पूर्वं सुव्रत नैमिचित्ति केनाख्यातं यथाऽस्याः बालिकायाः पद्मा
 च्छादित वक्षःस्थल समिन्नी भवद्गृहे भोजनकारो वरो भविष्यति सोयमस्या योग्यीवर इति तस्मिन्नेव दिने तस्याः कन्यायाः कुमारेण पाणि
 ग्रहणं कारितं सुदितौ गृहस्वामी कुमारस्य एकरात्री तत्रस्थितः क्षितीयदिने वरधनुना कुमारस्योक्तं आवाभ्यां दूरे गन्तव्यं दीर्घं राजा सत्रत्वेनात्र
 स्थातुमावयीरयुक्त मिति तौ द्वावपि बन्धुमत्याः स्वरूपं कथयित्वा निर्गती गच्छन्ताविकदा कस्मिन्निहू गामे गतौ तदा क्रान्तं कुमारं बहिरूपवेश्य
 वरधनुः सलिलमानितुं ग्राममध्ये प्रविष्टः त्वरितमेव पद्याटागत्य एवं कुमारस्योक्तान् ब्रह्मदत्तस्य जनापवादी मया श्रुतः यदीर्घं त्वरेण ब्रह्मदत्तमार्गं
 सर्वत्र सैन्यैर्बन्धितोस्ति तत कुमारं आवाभितौ नय्यावः नष्टौ ततो द्वावपि उन्मा मार्गेण वृजन्ती महाद्वीं प्राप्ती तत कुमारं बटाध उपवेश्य
 वरधनुर्जलमानितु मितस्वतो बभ्राम दिनावसाने वरधनु दीर्घं पृष्ट वृप भट्टेष्ट प्रकामं यटि सुध्यादिभिर्हन्यमानः कुमारं दर्शयेति प्रीच्य

मानय कमारासन्न प्रदेशे प्रापित तापता वरधनुना कमारास्य केनाथ लक्षिता सन्ना कृता भट्टे रदष्ट एव ब्रह्मदत्तो नष्ट पतितय दुर्गमि कान्तारि च्युधा
 टपायभार्त्तं कुमारस्मृतौये दिने तामटवी मतिश्रान्त स्तापसमीक ददर्श दृष्टे च तस्मिन् कुमारस्य जीयिता सा जाता कुमारैण तापस पृष्ट भगवन् क्वा
 भवदायम तेन आसन्न एवाकादायम इत्युक्त्वा कुलपतिसमीप नीत कुमारैण प्रथत कुलपति इलपतिना भणित वत्स कुत इह भवदागमा कुमारैण
 सकनोपि स्वदृत्तान्त कथित कुलपतिना उक्त ब्रह्म भवज्जनकस्य दुल्लभता ततस्त्व निज चेवावास प्राप्नोसि सुखेनात्र तिष्ठ इत्यभिप्राय तापसस्य ज्ञात्वा
 कुमारस्तत्रैव सुख तिष्ठन्मि अच्यदा तत्र वपोकान समायात तदापी निश्चिन्तेन कुमारैण तत्र तापसात्तिके सकला धनुर्वेदादिज कला अभ्यस्ता
 अन्यदा शरकाले फलमूलकान्दनिमित्त तापसेषु गच्छन्तु ब्रह्मदत्तकुमारोपि तै सम वने गत यन्त्रिय पश्यता तेन एको महाहस्ति इष्ट कुमारस्तदभि
 सुख चलित कुमार दृष्टा हस्तिना गजगर्जाख हत कुमारैण तस्य पुरी निजमुत्तरीय वस्त्र निश्चित करिणापि तत्पुत्रणात् शृङ्गादण्डेन गृहीत क्षिप्त
 च गगनतले यावत् क्रीधान्यो जात तावत् कुमारैण हल क्षाला तद्वसा स्वकराभ्या गृहीत ततस्तेन नानाविध क्रीडया परिश्रमनीलाकरीमुक्त स पद्याद्
 गन्तु प्रपन्न तत् पृष्टौ कुमारीपि चलित इतत्र अग्रे गच्छन् कुमार पूर्वोपर दिग्विभागे परिभ्रमन् गिरिनदीतटसन्नविष्ट जोर्णभवनभित्तिमात्रोप
 लक्षित जोर्ण नगरमेक ददर्श तन्मध्ये प्रविष्टयत्तुश्च दृष्टि धिपन् पार्श्वपरिसुल्लखितस्वस्त्रविकटवयकुडग ददर्श कुमारैण तत् खड्ग तथैव कोतुकाहा
 दित एकप्रहारेण निपतित वयकुडग ययान्तरालस्थित च निपतित रूपमेक स्फुरदोष्ठ मनीहराकार शिर कमल दृष्टा सम्भ्रान्तेन कुमारैण एव
 चिन्तित हा धिगसु व्यवसितस्य धिक्त्रे बाहुबलस्येति कुमार स्व निनिन्द पथात्तापाक्रान्तेन तेन कुमारैण दृष्ट धूमपानलालस कवच्य समधिकममृति
 स्तस्य पुनर्जाता ईतस्तत पश्यता कुमारेण पुन प्रवरमुद्यान दृष्ट तत्र भ्रमन् अग्रीकतरपरिचितमेक सप्तभूमिक आवास कुमारी दृष्टवान् तन्मध्ये प्रविष्ट

कुमारः क्रमेण सप्तभूमिकामारूढः तत्र विकसितकमलदलाचीं प्रवरां महिलां पश्यतिस्म कुमारेण सा पृथा कासि त्वमिति ततः सा स्वसद्भावं कथयितुं प्रवृत्ता महाभाग मम व्यतिकरो महान् वर्तते ततस्त्वमेव प्रथमं स्ववृत्तान्तं वद कस्त्वं कुतः समायातः एवं तथा पृष्टे कुमार आख्यत् अहं पञ्चालाधिपति ब्रह्मराजपुत्री ब्रह्मदत्तीस्मीति कुमारोक्तिश्रवणानन्तरं हर्षोत्फुल्लनयना सा अभ्युत्थिता तस्यैव चरणी निपत्य रोदितुं प्रवृत्ता ततः कारुण्यहृदयेन कुमारेण सा पुनरेवं भणितामुखसुन्नतं कुरु भारदेत्याखासिता सा कुमारेण त्वं स्ववृत्तान्तं वदेत्युक्त्वा साचख्यौ कुमार अहं तव मातुलस्य पुष्पचूलस्य राश्रः पुत्री तवैव पित्रा दत्ता विवाहदिवसं प्रतीच्यमाणा निजगृहोद्यान दीर्घिकापुलिने क्रीडन्ती दुष्टविद्याधरेणात्वानीता यावदहं स्वजनविरहराग्निसेताया इह तिष्ठामि तावत् त्वं अतर्कितदृष्टिसमोज्वायातः अथ मम जीविताया सञ्जाता यत् त्वं मयादृष्टः कुमारेणोक्तं स मम शत्रुः कासि येन तद्वलं पश्यामि तथा भणितं स्वामिन् ममानेन शङ्करी नाम्नी विद्यादत्ता कथितं च इयं विद्या पठितमात्वा तव दासदासी सखी परिवारा भूत्वा आदेशं करिष्यति तुवा न्तिकमागतं प्रत्यनीकं निवारयिष्यति दूरस्थस्यापि मम चेष्टितं पृथा सती इयं तव कथयिष्यति साद्य मया प्राप्ता स्मृता सती मम तर्चेष्टितं प्राह यथा स उन्नतनामा विद्याधरः पूर्णपुण्याया स्तव वलात् स्यतेजस्य सीढमग्नस्तस्वामत्र सुता निजभगिनीं श्रापनाय श्रापिकीं विद्यां प्रेषयित्वा च स्वयं विद्यां साधयितुं वंशकुडङ्गे गतोस्ति ततो निर्गतमात्रस्त्वां परिणियतीति ममाद्य तथा विद्यया कथितं एतत्तस्याः वचः श्रुत्वा ब्रह्मदत्तेनीक्तं वंशकुडङ्गस्यस्य तस्मै विद्याधरस्य मया साग्रतमेव शिरश्छिन्नं तयोक्तं आर्यपुत्र श्रीभनं कृतं यत्स दुरात्मा निहतः ततः सा कुमारेण गन्धर्वविवाहेन परिणीता तथा समं विलसन् कुमारः कियलालं तत्र स्थितः अन्यदा कुमारेण तत्र दिव्यवलयानां शब्दः श्रुतः कुमारेणोक्तं कोयं शब्दः श्रूयते तयोक्तं कुमार एषा तव वैरिभगिनी खण्डयीखा नाम्नी विद्याधर कुमार परवृत्ता स्वभ्राट्रनिमित्तविवाहोपकरणानि गृह्णीत्वा समायाता त्वमितस्त्वरितमपक्रम यावदेता सा महमभिप्रायं

वेद्यि यद्येतासा तयोपरि रागो भवियति तदाह प्रासादीपरिस्थितां रत्ना पताका चालयिथामि अथा तुसेतामिति कुमारस्तदृष्टहाहृदिर्गत्वा दूरे स्थित
 जह्विलोकते तावच्चान्दितां धवलपताकां दृष्ट्वा शनै २ स्तब्धदेशादपक्रान्त प्राप्ती गिरिनि कुञ्जमध्ये तत्र भ्रमता कुमारेण एक सरोवर दृष्ट तत्र स्नान कृत्वा
 सर पश्चिमतीरे उत्तीर्ण्य कुमारं दृष्ट्वा एका वरकया चिन्तित च अहो मे पुण्यपरिणति येनैषा कया मे दृणोचरसमागता तयाप्यसौ कुमार स्नेह
 निर्भर विलीकित कुमार विलोकयन्ती साग्रे प्रस्थिता सौकया वेलया तथा कन्या एका दासी प्रे पिता तथा कुमाराय वस्त्रयुगल पुण्यताबूलादिक
 दत्त वक्तु च या युष्माभि सरस्तीरे कन्या दृष्ट्वा तथा सर्वमिदं प्रे पित लावखलतिका नाग्री अह तस्या दासी अस्मि तयाच ममेदमादिष्ट एन महानु
 भाव कुमार मन तत्र महामन्त्रिणी शरीरस्थिति कारय ततस्तत्र कुमार यूयमागच्छत तत कुमारस्तथा सह तदैवामाल्यमन्दिरे गत तत्र दृष्ट्वा
 मन्त्रिण्ययमुक्त मन्दिन लत्त्रामि पुष्पाय प्रे पितोस्ति प्रकामं अस्थादर कत्त व्य मन्त्रिणा राधैव कृत द्वितीयदिने कुमारी मन्त्रिणा राज्ञ सभाया नौत
 अभ्युल्यतेन राज्ञा कुमारस्य धुरि आसन दत्त दृष्ट्वा हत्तान्त कुमारेण सर्वोपि कथित अथ विविधभक्त्या भोजितस्य कुमारस्य एवमुक्त राज्ञा कुमार
 तत्र भक्तिरज्जादृष्ट्यै कापि कत्तु न पायती परमियमेवास्माक भक्तिर्यदिय कन्या तत्र प्राभ्युत्थिता सुमुहुर्ते तयोर्विवाहो जात कुमारस्तथा सम विलासन
 सुखेन तत्र तिष्ठति अन्यदा कुमारेण तस्या प्रियाया दृष्ट किमर्थमेकाकिने मध्येव दृपेण दत्ता सा उवाच आर्यपुत्र एष मदीय पिता बलवत्तरवैरिसन्ता
 पित इमां विपमपत्नि समाधित अत्र तातपतमा श्रीमत्याद्यतुर्णा पुत्राणामुपरि अह पुत्री जाता अहमतीव पितुर्वक्त्रभा योवनस्था अन्यदा पित्रा उक्ता
 पुत्रि मम सर्वेपि राजागी विरुडा सन्ति तेन त्व इह स्थितैव योग्य वर गवेषय ततोह ग्रामाहृदिस्तस्य सरस्तीरे समायातान् पथिकान् विलोकयन्ती
 स्थिता तदानी त्वं तत्रायाती मया भाग्यात् प्राप्तयेति परमार्थं तत श्रीकान्तया सम विषयसुखमनुभवतस्तस्य सुखेन वासरयान्ति अन्यदा स पत्नी

पतिः कुमारिण समं निजसैन्यविष्टितः स्वविरोधि नृप देशभङ्गाय चलित मार्गे गच्छतस्त्रस्य कचित्स्त्रीरे वरधनुर्मिलितः कुमारिणीपलचितः कुमारं दृष्ट्वा स रोदितुं प्रहृत्तः कुमारिण बहुशकारं वारितः स्थितः कुमारिण पृष्टं मची दूरीभूतेन त्वया किमनुभूतं वरधनुः प्राह कुमारतदानीं त्वां वटाध उप विश्व अहं जलार्थं गतः सर एकं दृष्टवान् ततो जलं गृहीत्वा तवान्तिके यावदहभागतुं प्रहृत्तः तावत्प्रजवडकवचैर्दीर्घदृपभटैः सहसाम्मिलितैरहसुप लचितस्त्राडितश्च उक्तं चक्रवर्हदत्तइति मयीक्तं अहं न जानामि ततो दृढतरं ताडितो अहमवदं ब्रह्मन्मची व्याघ्रेण भचित तैरुक्तं तं देशं दर्शय तैर्मार्य मारीहं तवान्तिकदेशमागल्य तदानीं त्वां संज्ञामकार्यं लयि ततो नष्टे अहं पुनस्त्रैर्भृगं ताजमानं स्वमुखेपरिब्राजकदत्तां गुटिकां क्षिप्तवान् तत्प्रभावदहं निश्चये जातः ततस्त्रे सृतीयमिति ज्ञात्वा सर्वेपि भटागताः तेषां गमनानन्तरं चिरकालेन भया गुटिकासुखान्निष्कासिता ततः सचेतनीहं त्वां गवेप यितुं प्रहृत्तः न मया दृष्टस्त्वं ततोहमेकं शमं गतः तत्र दृष्ट एकः प्ररित्राजकः तेनीक्तं अहं तव तातस्य मिलं सुभगनामा तव पिता धनुर्नष्टः मातानु दीर्घेण गृहीता मातङ्गपाटे चिन्तास्तीति शुत्वाहमतीव दुःखित काम्पिल्यपुरे गतः कापालिकवेषं कृत्वा मातङ्गवत्तरं वञ्चयित्वा मातङ्गपाटकाश्रितरं निष्कासितवान् एकस्मिन् ग्रामे पितृमित्रस्य देवशर्म ब्राह्मणस्य गृहे सातरं सुक्ता त्वाभन्वे पयन्नहमिहायातः इत्थं यावत्ती वरधनु वृद्धदत्तौ वार्त्ता कुरुत तावदेक पुरुपसत्वागल्य एवसुवाच यथा महाभाग भवता कचिदितस्ततो न पर्यटितश्च त्वद्भविष्यणार्थं दीर्घवियुक्ता नृपा इहागताः सन्तीति शुत्वा तौ ह्रावपि ततो वनात्रष्टी भ्रमन्तौ कौशांब्यां गतौ तत्र बहिरुद्यानि द्वयोश्चैष्ठिस्तयोः सागरदत्तदुडिलनाम्नीः कर्कुटयुगलं लक्ष्मणकरणपूर्वकं योषुं प्रहृत्तं द्रष्टुं कौतुकेन तौ तत्रैव स्थितौ बुडिलक, कुट्टेन सागरदत्तकुट्टेन प्रहारेण जर्जरीकृती भृगु सागरदत्तेन प्रेर्यमाणोपि स्वकुर्कुटो बुडिलकुर्कुटेन समं पुनर्योषुं नाभिलषति हारितं लबं सागरदत्तेन अत्रान्तरे वरधनुना उक्तं भी सागरदत्त एवसुजातिरपि कुर्कुटः कथं भग्नः ममात्रार्थे विस्मयोस्ति यदि

मायती अत्रावसरं कुमारैः तथा प्रहरणशक्तिर्दिशिता यथा सर्वेपि चौरसुभटा कुमारप्रहाराजर्जराः सर्वास्तु दिक्षु गताः कुमारस्ततो रथारूढी चलित-
वरधनुना उक्तः कुमार यूय दृढशान्ता स्ततो सुहृत्सखमनुभवत ततो रत्नवत्या सह कुमारः प्रसुप्तः गिरिनिदी एकामार्गे समायता
तावतुरङ्गमाः अमखिन्नानां च लन्ति तत कथञ्चित् प्रतिबुद्ध कुमारः अमखिन्नान् तुरंगमान् पश्यन् रथां च वरधनुसपश्यन् जलनिमित्तं वरधनुर्गती
भविष्यतीति चिन्तितवान् इतस्ततः पश्यन् कुमारः रथाश्रभागरुधिरावलितं ददर्श ततो व्यापादितो वरधशुरिति ज्ञात्वा हा हा हती मे सुहृत् इति
श्रीकार्कः कुमारी रथोल्लास्यपात मूर्च्छंश्च प्राप्तवान् पुनरपि लब्धचेतन्य एवं विललाप हा भातः हा वरधनु मित्र त्वं क्वगतीसीति विलपन् कुमारः
कथमपि रत्नवत्या रक्षित कुमारः रत्नवन्ती प्रत्येवमाह सुन्दरि न ज्ञायते वरधनु र्ततो जीवन्नास्तीति ततोहं तदन्वेषणार्थं पञ्चाङ्गजामि तथा भणितं
आर्यपुत्र अवसरो नास्ति पञ्चाङ्गलनस्य येनाहमेकाकिनो चौरखापदादिभीमं चारख्यमिदं अत्र च निकण्टवर्त्ती सीमावकाशोस्ति येन परिरक्षाना कुशकङ्क
टकाः पश्यन्ति एतद्रत्नवतीवचः प्रतिपद्य रत्नवत्या सहकुमारः पथि गन्तुं प्रवृत्तः मगधदेशसंस्थितमेकं गामं प्राप्त तत्र प्रविश्यन् कुमारः सभामध्यस्थितेन
ग्रामाधिपतिना दृष्टः दर्शनानन्तरमेव एष न सामान्यः पुरुष इति ज्ञात्वा सोपचारं प्रतिपत्वा पूजितो नीतद्य स्वगृहं दत्तस्त्वत्सुखावासः तत्र सुखं
तिष्ठन् एकग्रामाधिपतिना भणितः कुमारत्वं विखिन्न इव लब्धसि कुमारेणोक्तं मम भ्राता चौरिण सह भण्डन कुर्वन् न जानि कामयवस्थां प्राप्तः ततो
मया तदन्वेषणार्थं तत्र गन्तव्यं ग्रामाधिपेनीतां अलं खेदेन यद्यस्या मठव्यां सभविष्यति तदाऽवशमिह प्राप्ताम् इति भणित्वा प्रेखितानिज पुरुषा
अटव्यां गत्वा समायताः कथयन्ति अस्माभिः सर्वत्र स पुरुषो गवेषित परं क्वचिन्न दृष्टः किन्तु प्रहारपतितो बाण एवैष दृष्टः ततः कुमारी वरधनुर्मृत
इति चिरकालं शोकं चकार एकदा रात्रौ तस्मिन् ग्रामे चौरधाटिः पतितता सा च बाणैः कुमारेण जर्जरीकृता नष्टा अथ हर्षितो ग्रामाधिपतिर्ग्रामञ्च

अथ ग्रामाधिपतिमाष्टच्छ ततयलित कुमार क्रमेण राजगृह प्राप्तं तत्र नगरादृष्टि परित्राजकायमे रत्नवतीमुक्ता स्वय नगराभ्यन्तरे गत तत्रै कस्मिन् प्रदेशे धवलगृह दृष्ट तदन्तप्रविष्टे न कुमारेण हे कन्ये दृष्टे ताभ्यां कुमार दृष्ट्वा प्रकटितानुरागाभ्यां भणित कुमारयुवनादृश्यामपि पुरुषाणां राजजनसुकृज्य भूमितु कि युक्त कुमारेणोक्त सजन कं येनैव यूय भणय ताभ्यामुक्त प्रसाद कृत्वा आसनेनिवेश्य तु भवन्त तत उपविष्ट आसने कुमार ताभ्यां कमार रस्य मञ्जनस्नानायुपचारं कृत्वा उक्त कुमार यूयतामग्रहत्तान्त इद्वैव भरतचेत्रे वैताब्ज गिरिदक्षिण्ये णिमण्डने शिवमन्दरे नगरे ज्वलनशिखी राजा तस्य विद्युच्छिखा नाम्नी देवी तभ्या आवां हे पुत्री अस्मद्भ्राता उन्मत्तो नाम वर्त्तते अन्यदा अस्मत्पिताग्निशिखाभिधानिन मित्रेण सम यावदगोष्ठ्यां प्रविष्टस्तिष्ठति तस्मिन्वसरेऽष्टापदपर्यताभिमुख ब्रजन्त सुरासुरसमूह पश्यति रात्रापि पुत्रीसहितस्तत्र गन्तु प्रहृत्त अष्टापदे प्राप्नोतिजनप्रतिमाय यन्दिता कर्पूरागरधूपानुपचारो महान् कृत प्रदक्षिणात्तय कृत्वा निर्गच्छता रात्र्याऽथोक्त पादपस्थाध उपविष्ट चारणमुनियुगल दृष्ट प्रणतश्च तत्रोपविष्टस्य राज्ञ पुरस्तादगुरुणा एव धर्मदेगना कर्तुमारब्धा असार ससार शरीर भगुर शरदभ्रोपम जीवित तडिद्विलसितानुकारि यौवन किपाकफलोपमा भोगा सन्ध्याराग सम विषयसुख कुशाग्रजलविन्दुचञ्चला लक्ष्मी सुलभ दुःख दुर्लभं सुख अनिवारितप्रसरो मृत्यु तस्मादेव स्थिते सति भो भव्या मोह प्रमर च्छिन्दन्तु जिनेन्द्रधर्मे मनो नयन्तु एव चारण्यमणदेवाना युवा सुरादयो यथा गत प्रतिगता तदालम्बावसरिणाग्निशिखिना भणित यथा एतासा वाचिकानां की भर्त्ता भवियति चारण्यमणाभ्यामुक्त एते हे कन्ये भ्राट्वधकारिणो तार्थ्यो भवियत तयो रेतद्वच युवा राजा श्याममुखो जात अस्मि यवसरे आवाभ्यामुक्त तात साम्प्रतमेव साधुभ्यामुक्त ससारस्वरप तत आवयो रल एव विधावसानेन विषयसुखेन आवयोरेतद्वचस्तातेन प्रतिपन्न आवाभ्याप भ्राट्वधे हेन स्वदेहसुखकारणानि त्यक्तानि भ्रातुरेव स्नानभोजनादिचिन्ता कुर्वन्त्या आवां तिष्ठाय अन्यदाऽऽदृभूत्वा पृथिवी भूमता दृष्टा

कुमारभवनात्पुत्रीपुष्पवती कन्यका तद्रूपा चित्तस्त्रां हृत्वा आगता परं तत् दृष्टिं सोढुमन्वमी विद्यां साधितुं गतः अतः परं वृत्तान्ती युष्माकं
 ज्ञानगीचरोऽस्ति तस्मिन् काले भवदन्तिकादागत्य पुष्पवत्या आययीर्भूत्बद्धत्तान्तः कथितः ततः शोकभरेण आवां रोदितुं प्रवृत्ते मधुरवचनैः पुष्पवत्या
 रथिते तदा आवां शङ्करोविद्या एवं वक्तुं प्रवृत्ता असौ भूत्बद्धकारी ब्रह्मदत्तचक्रवर्ती भविष्यति युवां सुगिववनं किं न स्मरथ एतद्दत्तचक्रवर्त्तुं आवाभ्यां
 जातापुरागाभ्यां मानितं परं पुष्पवत्या वालिकया स्त्री हरससंभूतया रक्तपताकां विहाय श्लेषतपताकां चाखिता तद्दर्शनानन्तरं त्वमन्यत्र कुत्रापि गतः
 नानाविधग्रामाकर नगरादिषु भूमन्तीभ्यां आवाभ्यां त्वां न क्वचिद्दृष्टः ततो विखिन्ने आवां द्रुहागते साम्प्रतमलातर्कितहिरण्यसमं तव दर्शनं जातं ततो
 महाभाग पुष्पवती व्यतिकरं स्मृत्वा कुरु अस्मत् समीहितं एवं श्रुत्वा कुमारिण सहर्षं मानित गन्धर्वविवाहेन तयोः पाण्डिग्रहणं कृतं एक रात्रौ ताभ्यां
 समं उषित्वा प्रभते कुमारस्त्रायोरैवसुवाच युवां पुष्पवत्या समं गच्छतं तथा समं तावत् स्थातव्यं यावन्नम राज्यलाभो भवति एवं श्रुत्वा ते गते द्वावत्
 कुमारी न तद्वल्लहं न तं परिजनं पश्यति चिन्तितवाञ्छ एषा विद्याधरी आयति चिन्तयन् रत्नवती गविषणा निमित्तं तापसायमाभिसुखं गतः न च
 तत्र रत्नवती दृष्टा न चाग्यः कोपि पुरुषो दृष्टः ततः कां पृच्छामोति विचार्य इतस्ततः पश्यति तावदेको भद्राकृतिः पुरुषस्तत्रायातः कुमारिण स पृष्टः
 भो महाभाग एवंविध रूपनेपथ्या एका स्त्री मयात् सुक्ता कल्पेऽद्य वा त्वया दृष्टा तेन भणितं पुत्र त्वं किं तस्या रत्नवत्या भर्ता कुमारी भणति एवं तेन
 भणितं कल्पे सा मया रुदती दृष्टा अपराङ्मकाले तस्याः समीपे गतः पृष्टा च सा मया पुलिका क्वासि त्वं कुतः समागताः किंतीशिककारणं क्वा त्वया
 गन्तव्यं तथा किञ्चिक्थिते सामया प्रत्यभिज्ञाता मम त्वं दौहित्री भवसोति उदित्वा मया तस्य लषपितु समीपे गत्वा श्रिष्टा तेनाप्युपलक्ष्य सा विशेषा
 दरेण स्वमन्दिरे प्रवेशिता सर्वत्र त्वं गवेधितः परं न क्वचिद्दृष्टः साम्प्रतं सुन्दरं जातं यत् त्वं लब्धः एवमुक्त्वा नीत कुमारस्तद्दृष्टहे उपचारः कृतः तत्र मही

क्षयेन रत्नयती पाणिपहण कुमार कृतवात् तथा सह विषयसुख मनुभवत् कियलाल तस्यै अन्यदा वरधनुर्वर्ष दिवसोऽथेति उक्त्वा तद्गृहे कुमा
 रेण ब्राह्मणादयो भोजिता अस्यवसरे वरधनु कृतब्राह्मणवेधो भोजन निमित्त मागत एव भणितु प्रहस्य भो ब्रापयन्तु तस्य भोज्यताणि यथा
 यदि मम भोज्य प्रयच्छत तदा तस्य परनीकवर्तिन उदरे भोज्य संक्रमति गृहपुरुषै स्तद्वच कुमारायशिष्ट कुमारोपि गृहाद्वर्षिर्गंत दृष्टो वरधनु
 प्रत्यभिघ्नतस्य गाढ कमारेणा लिङ्गित गृहमध्ये प्रवेष्टित स्नानमज्जन भोजनादिभि सत्कृतय अनन्तर कुमारेण पृष्टो वरधनु स्वहृत्तान्त जगौ यथा
 तस्यां रात्रौ निद्रायग मुपागतेषु युष्मासु सप्तपृष्टती धावित्वा चोरेण एकेन बुडङ्गान्तरितीन मम पादे बाणप्रहार कृत तद्देदना परवशोऽह निपतितो मही
 तले पर अपाय भीरुत्वेन मया युष्माक न निवेदित रयन्तु अग्रे चलित अहन्तु गनै पतित हृद्यान्तराले चलन् महता कष्टेन तस्मिन् ग्रामे प्राप्त यत्र
 यूयं स्थिता तेन ग्रामाधिपतिना सत्कृत युष्माक प्रहृत्ति श्रुत्वाऽहमद्य प्रगुणोभूतो भोजन प्रस्तावे समागत यूय मद्यमहाग्याम्बलिता अय तयो
 स्तत्राऽवियुक्तयो सद्यप दिवसायान्ति अयदा ताभ्यां परस्परमेव विचारित यथा आयस्यां कियलाल मुक्तपुरुषा कराभ्या स्यातथ्य एवं च चिन्तयती
 स्वयौर्गत कियान्काल अन्यदा तत्र समायाती मधुमास मदननक्षीसुधे जायमाने सर्वलोको नगराद्वर्षि क्रीडितु मायात वरधनु इमारावपि कौतु
 केन नगराद्वर्षिर्गती निर्भर क्रीडारस निमग्ने लोकेऽतर्कितएव पातित मिठीनिरुशोरात्र हस्ती तनायात समुच्छलित कोलाहलो भग्न क्रीडा
 रसो नष्ट समन्तावारी निकर एका च बालिका समुपेत पयोधरा नश्यन्ती तस्य हस्तिनो दृष्टौ पतिता सा यरण मार्गयन्ती इतस्तत पश्यति तस्या
 परिजना पूत् कुर्वन्ति भयभ्रान्तायास्या पुरोऽभूला कुमारेण स करोहकृत एषा मोचिता सोपिकरीतां मुक्त्वा रोपवग विस्तारित सोचा प्रसा
 रित शृण्वादष्ट ग्रीध कुमाराभिमुख धावित कुमारेणापि उत्तरोय वस्त गजाभिमुख प्रथित तद्वत् शृण्वा गृहोत्था गगने प्रक्षिप्त गग

पूर्व भवन्नाह शुद्धार्थं श्लोकाहं मिदं रचितं यथा अश्वदासी मृगौ हसी मातङ्गावमरी तथा इदं श्लोकाहं कृत्वा चक्रिणा वरधनु सेनापते एतं इदं श्लोकाहं सर्वत्र निर्घोषय एतत्पश्चिमाहं यः पूरयति तस्य राजा राज्यहं ददाति इदं श्लोकाहं सर्वलोकैः शिष्यित ते यत्र तत्र निर्घोषयन्ति अत्रावसरे स पूर्वं भवसम्बन्धोभ्राता चित्रजीव पुरिमताल नगरे इत्यु पुत्री भूत्वा सञ्जात जातिस्मरणी गृहीतव्रत स्त्रत्र नगरे मनोरमा विधाने आरामि समवस्यतः तत्र प्रासुक्ते भूभागी पात्रीपकरणानि निश्चिष्य धर्मध्यानोपगतः कायोत्तरेण स्थितः अत्रान्तरे आरघटिकेन पञ्चमानं तत् श्लोकाहं मुनिनाश्रुतं ज्ञानोप योगिन स्व भ्रातृस्वरूप सर्वमवगम्य मुनिना उत्तरचरणेण्यंपूरितं एषा नौपटिकाजाति अन्योन्याभ्यां वियुक्तयोः ततोऽसावारघटिकस्तत् श्लोकाहं लिखित्वा प्रफुल्लास्य पद्मजी गतो राजकुल पठितश्चक्रिणः पुरः तं पूर्णः श्लोक ततः पूर्व भव भ्रातृस्त्रे हातिरेकेण चक्री सूक्ष्मं गतः क्षुभिता सभा रोषवशं गतेन सेव कवर्गेण आरघटिकश्चपेटाभिर्हन्तुमारब्धः हन्यमाग तेन जघे इदं पदद्वयं मया न पूरितं किन्तु वनस्थितेन मुनिनेति विलपन्नसौ सोचिती गतमूर्च्छेण चक्रिणा पूर्वभवभ्रातृमुनि समागतं श्रुत्वा तद्भक्तिने हाकट्ट चित्ती ब्रह्मदत्त चक्री सपरिकरो निर्ययौ उद्याने तं मुनिं ददर्श वंदित्वाग्ने उपयिष्टः मुनिना प्यारब्धा धर्मदेगना दर्शिता भवनिर्गुणता वर्णिता कर्मबन्धहेतवः श्लाघितो मोक्षमार्गः ख्यापितः शिवसौख्यातिशयः इमां देयनां श्रुत्वा पर्वत्सम्बिता जाता ब्रह्मदत्तसु अभवित एवमाह भगवन् यथा ह्यसप्रसुखेन वयमाह्लादिता रूथा राजस्त्रीकारेण साम्प्रतंममनाह्लादयन्तु पद्यादायां तपः सममेव करिथावः एतदेव वा तपसः फलं मुनिराह युक्तमिदं वचो भवता सुपकारोद्यतानां परं इयं मानुष्यता दुर्लभा सतातं पतनशीलमायु श्रीसङ्गला मन वस्थिता धर्मबुद्धि विषयाः विपाक कटव विषयासत्तानां च ध्रुवी नरकपातः दुर्लभं पुनर्मोक्षवीजं विरतिरज्ञं तत्यागात्रकपातहेतुः कतिपयदिनभावि राज्याश्रयण न विदुषां चित्तमाह्लादयति तत परित्यज्य कदाशयं प्राग्भवानुभूतः दुःखानिम्नरपिविजिनवचनाच्छतरसं सञ्चरतदुक्तशार्ङ्गेण सफलीकुरु

मनुयज्ञसेति न प्राह भगवन्, परागोपेतादृष्टसुखवाञ्छाज्ञानतालक्षणे तस्यैवमादि-५ कश्च मत्स्यभोहित मुनिराह ससारमुख भूक्त परभवे महते दुःखाय
भात्रीतितत्त्वाग कार्ये एव बुद्धिगो वार वारमुक्तोपि यदा चक्रवर्त्तो नप्रतिवध्यते तदा मुनिना चिन्तित या ज्ञान पूर्वभवे सनतकमार चक्रिस्त्रीरक्षकेग
सम्बन्धनजाताभिलाषातिरेकेण स रूतभवेयुनामया निवार्यमाणेपि चक्रवर्त्तियदवो प्राप्तिनिदान कृत तस्येदृश्य फल अतः कारणादसौ दुष्टाध्यवसायो
जिज्ञासवनामसाय इयमेवित मुनिपत्नी विजहार क्रमेण मोक्षगत चक्रिणोपि प्रकारमुखमनुभवत कियान्कालो नीत अग्यन्त एकेन पर्यपरिचितेन
द्विजातिनोक्तोसौ भो राजाधिराज ममेदृशो बाळा समुत्पन्नास्त्रियचक्रि भोजन भक्ते चक्रिणोक्त भो द्विजमामक भोजन भोक्तु, त्वमद्यत यतो मा विद्याय
मज्ञोजन प्रत्यस्य न परिणतिततोप्राङ्गणेनोक्त चिन्तुते राज्य लक्ष्मीमाहात्म्य यदब्रमावदानेप्यालीचयसि ततश्चक्रिणा तस्य भोजनमङ्गीकृत स्वगृहे
निनया स्वभोजन दानेन भोजितयासो भार्या युत्रस्य यादुद्विष्ट पोतादि कुटुम्बान्वित भोभन कृत्वा स स्वगृहे गत रात्रायत्यक्तजातीन्माद प्रसरोक्तौ अन
पेदिग माष्टस्युपाभगिनोव्यतिकरी महशवेदना गृहचिन् प्रवृत्तीःकार्ये माचरितु द्विज हितोये दिने मदनोन्मादो पशक्तौ परिजनस्य निजमास्य दर्शितु
अपारयधिर्गती नगरात् द्विज एव चिन्तयामास अनिमित्तवैरिणाचक्रिणाह विडम्बित अमपयहता तेन द्विजेन यने भ्रमता एकीऽजयानकोदष्ट स
कङ्कराभिरत्रत्य पत्राणिकाणो जुयन् लब्धमेधोवर्त्तते द्विजे न चिन्तित महिवचित कार्यकरोयमिति कृत्वोपचरितस्तेनदान सन्मानादिभि कथित
नेन स्वाभिययोस्य रक्षितेनापि प्रतिपन्न अग्यदा गृहव्यवृत्तौ ब्रह्मदत्तस्य सुचान्तरित तमुनाऽनेन अमीच वेधिनानिचित्तगोलि कया समकाल
उत्पादिते मोचने राध्रातइत्तान् अग्यस्य उत्पन्नकोयेन अस्ती स युत्रवात्यवो धातित चक्रिणाऽन्ये द्विजा धातिता अग्यन्त कोपिन च चक्रिणा मन्विण
एव गुरु यथा प्रांक्षणा ना अघोणि कर्पयित्वास्यालेनिचिप्य स्थाल मम पुरोनिधिदि यतोऽहन्तानि स्वहस्तेन मर्दयित्वावैरयाननसुखमनभयामि मन्य

पुणनाश्री पुरिमतालमि सेड्डिकुलमि विसाले धम्म सीकरण पज्जइ श्री २ काम्मिल्ले नगरे ब्रह्मराजा तद्गार्या चुनयी पुत्र सभ्त जीवी ब्रह्मदत्त सञ्जात चित्तचित्रजीव पुन पुरिमताननारे वियाले विन्तीणे एकस्मिन् श्रेष्ठिन कुलेय्येष्ठिपुत्र सञ्जात सच चित्र जीवस्तत्र श्रेष्ठिपुत्रत्वे न समुत्पद्य अनुक्रमेण तारुण्ये धम श्रुत्वा प्रव्रजित प्रव्रच्या त्रग्रहोत २ काम्मिन्न भियनयरे समागयादो विचित्त सभूयासुह दुक्कफलविपाग कहन्तिते एहमे कम्म ३ अण सचित्त जीवी गृहोतदिच्च समुत्पद्य जाति स्मृयादिज्ञानी विहरन् कापिये नगरे समागत तत्रैव कापिये नगरे ब्रह्मदत्तोपि खद्य पक्कवत्तिपद म्मि द्धति एरुदा देवोपनोत मन्दारक पट्टच्च पुण्याणा माला साधम्य दृष्टा समुत्पद्य जातिस्मृतिरभूत् तदा च ब्रह्मदत्ते न आसदासो मृगी हसो मातङ्गो अमरो तथा इति श्लोकाद् स्वम्यु सस्वन् गनित छात्वा नगरे उदघोपणा कारिताय कश्चिदये तन श्लोकाद् पूरयति तस्मै वाञ्छित ददामि राज्याब्दददामि अस्मिन्ने वावसरे आढवोधनार्थं समागतन चित्रजीव साधुनाइ मानो पष्ठिका जातिरन्योन्याभ्या वियुज्योरिति श्लोकोत्तराद् पूरित तद्वनमध्ये अरिषट्ठ भानकेण आरामिकेण साधुमुखेन श्रुत्वा राज्ञोय उक्त राजापि श्रुत्वा मूच्छा प्रापततो राज्ञा दृष्टेन कुट्टितेन तेनीत्त मया श्लोकाद् पूरित नास्ति कित्तु आरामे कायोत्तर्गस्थितेन एकेन साधुना पूरित ब्रह्मदत्त चक्रधरेण गीकापूरयात् ज्ञातोय साधुर्ममभ्राता ततो राजा सुनिसमीपितीऽत एव सूत्रकारे णान कापिये नगरे इत्यपि चित्रसभूत जीवी चक्रवर्त्ति सुनीमरौ समागतो एकत्र मिलितो तोच सुसदु खफलविपाक सुकृत दु क्तकर्मानुभावरूप

सभूया सुरदुग्ध फलविवाग करं तिते । एज्ज मेक्षस्य ॥ ३ ॥ चक्षवट्ठी महिड्डीश्री वभदत्तो महायसो भायर बहुमा

कापिये नगरे कापील्लनगरनेविये समागतो मिलितौ हावपिचित्रसभूतीजीवी एकठामि मिन्धा पित्तसभूतिना जीदवे भाइ एदाठा इत्था सुउदु ७ फलविपाक सुखदु खनालेफलतेहनी विपाक भोगवतीही एकैकस्य परस्पर कथयत तेवे भाइ माहेमाहि सुगदु खभोगव्यातेहनी वात कहिणे ३

वर्त्तते इति शेषः दोचायां सुख किमपि नास्ति तस्मात् हे साधीत्व इमा प्रत्यक्ष दृश्यमानान् भोगान् भुव्य कथञ्भूतः सन् नाटकैर्द्वौतिशद्विधै गीतैर्गा
 न्यर्वशास्त्रोक्तैर्वादिर्भरतशालोक्तै मृदङ्गादिभिस्तथा नारीजनैः परिहृत सन् विषयसुखानि अनुभव अत्र नारीजनानामिव ग्रहणं कृतं अग्नयेषां
 गजाश्ववस्त्रासन द्रव्यादीनां ग्रहणं न कृत तत्तु तस्य स्त्रीलोलुपत्वात् सर्वविषयेषु स्त्रीणामिव प्राधान्यात् १४ तं पुञ्जनिहेणकयाणुरायं नराहिवं कामगुणे
 सुगिद्वं धम्मस्मि श्रीतस्सहिंयाणुपेहो चित्तोइम वयणमुदाहरित्या १५ यदा तु ब्रह्मदत्तेन सम्भूतजीवन चित्तजीवं साधुं प्रतिउत्तं तदा चित्रजीव साधु,
 चित्रइदं वचनं त ब्रह्मदत्त नराधिपं चक्रिण प्रति उदाजहार अवादीत् कथञ्भूत त ब्रह्मदत्तं पूर्वज्ञे हेन दातादुरागं पूर्वभववान्वय मे म्णा विहित प्रीति
 भाव पुन कथञ्भूतं नराधिप कामगुणेषु विषयसुखेषु मृद्वं लोषुपं कीदृशश्चित्त जीवसाधु धर्माश्रितः पुनः कीदृशश्चित्त तस्य ब्रह्मदत्तस्य
 हितानुप्रेक्षो हितवाञ्छकः हित अनुप्रेक्षते इत्येव श्रीलहितानुप्रेक्षो १५ किं उदाजहारित्याह सत्त्वं विलम्बियङ्गीय सत्त्वं नष्टं विडम्बिय सत्त्वं आम

परिवारयती । भुंजाहि भोगाद् इमाद् भिक्खू समरोयइ पव्वज्जाहु दुक्खं ॥ १४ ॥ तं पुञ्जनिहेण कयाणुरागं
 नाराहिवं कामगुणे सुगिद्वं । धम्मं स्मिञ्चोतस्सहिंयाणुपेहो चित्तो इमं वयण मुदाहरित्या ॥ १५ ॥ सत्त्वं विलंविद्यंगीयं

ननाटकीधांके भोभिन्नु इमान् भोगान् भुलुं अहोसाधुतु एभोगभोगविममप्रवृज्यादुःखरूपारोचते सुभने दोचादुक्खरूप लागिके १४ तं वृत्तदत्तं पूर्वज्ञे हेन
 कृतागुरागं ब्रह्मदत्तपूर्वमव ज्ञे हेकरोने रागधखीयतीजपरि नराधिपं चक्रवर्त्तीनां कामगुणेषु मृद्वं नराधिपचक्रवर्त्ति प्रतिं केहवुक्के राजाकामनेत्रिपिण्डइ
 श्रीके धर्माश्रितः तस्यराज्ञीहितचित्तक चित्रसाधुधर्मेने विपे आश्रयके राजा जपरिहित चित्तवेच्छे चित्तःइद वचन उदाहृतान् । चित्रसाधुइ स्युं वचन

रणाभारा सखे कामा दुहावहा १६ हे राजन् गीत सब विन्वित विलापतुप सव नाय नाटक विडम्बित भूतावेष्टित पीतमवादिजनाग विधिप
तुप सनाणि आभरणानि भारतुल्यानि सर्वे कामा दुखावहा दुसुदायका गजपतद् भृङ्ग मोन कुरङ्गादीनामिव बन्धन मरणादिकष्टदा इत्यर्थ १६
वानाभिरभिस दुहावहेम नतसुह कामगुणिसु राय विरक्तकामाणतवीदृणाण ज भिक्खुण सीलगुणिरयाण १७ हे राजन् विरक्तकामाणा विरक्ता
कानेय इति निरक्तकामान्तेरा निप्रियिणा भिक्खुणा साधूना यत्तुख वर्त्तत तत्तुख वत्ततगुणेषु श्रद्धादियु इन्द्रियसुखेषु कामिनां पुरुषाणा नास्ति
कोदयेणु कामगुणेषु चालाभिरभिसु बालाना निर्द्वैकाणा अभिरामावानाभिरामास्तेषु मूर्खाहिविषयेषु रज्यन्ते पुन कीदृयेषु कामगुणेषु दुखावहेषु
दुखदायकेषु कोदयाना भिक्खणा तपोधनाना तपएवधन येपान्ते तपोधनास्तेषा पुन कीदृशाना शीलगुणेरताना शीलस्थगुणा गुणकारिणी नव

सख नट्ट विडवीय । सर्व्वे आभरणभारा सर्व्वे कामा दुहावहा ॥१६॥ चालाभिरभिसु दुहावहेसु शतसुहकामगुणेषु
राय विरक्तकामाण तपोहणाण । जभिक्खुण सीतगुणे रयाण ॥ १७ ॥ नरिट् जाई अहमाणराणसीवागजाइ दुहओ

नीचतिकेहे नगरदित रूप गीत सखगीतविलापरूपके सवनाय विड वनप्राय सर्व्वनाटक विडवनाप्रायके सवे आभरणा भारभूता सधला आभ
रणभारभूत सवेकामा दुखदायका सर्व्वकाम सुखदुखनादेशहारके सुनिराह १६ चालाना मूर्खाणाऽभिरभिसु हर्षोत्यादकेषु दुक्ककारणेषु एकामत्रिके
यानकमूखीहने भनानागेदर्भजपने भी राजन् इदये प कामगुणेषु ततसुख नहि अहीरावा एहवाकामगुणनेविपेते सुखनही विरक्ताकामाना तपोध
नानां कामभोग्यो विरक्तग्राहेतपजधनके यातसुखभिक्खुण शीलगुणेरतातातसुख अनानास्ति तिसुएसाधुनेके सोलनेविपिसुखवीजिठानेही १७

विधि ब्रह्मगुप्तस्त्रीषु रताः आसक्तास्तेषां १७ नरिदजाई अहमा नराण सीवा गजाई दुहृगीगयाण जहिवंयं सब्जणस्सवेसा वसीयसीवाग निविसणेषु १८
 हे नरेन्द्रनराणां मनुयाणां मध्ये अधसानिद्याजातिः श्वाकस्य चण्डालस्य जातिर्वर्त्तते सा जातिर्द्वयोपरि आवयोर्गताः प्राप्ताणं इति वाक्यालङ्कारे
 यस्यां जाती आवां सर्वजनस्यद्वेष्यी अभूव श्वापाक निवसनेषु चण्डालगृहेषु वसीय आवां अबसात् १८ तीसे उजाई इउपावियाए बुच्छामि सीवाग
 निविसणेषु सब्बस लीगस्स दुगंछणिज्जा इहंतु कम्माइ'पुरे कडाइ' १८ तस्यां व जाती तु पापिकायां पापिष्ठायां श्वापाकनिवसनेषु घाण्डालगृहेषु बुच्छामु
 इति उषिती निवासं अकार्थं कीदृशी आवां सर्वस्य लोकस्य जुगुप्सनीयी हीलनीयी इहतु अस्मिन् जन्मनि पुराकृतानि कर्माणि प्रकटीभूतानीत्यर्थं
 प्राचीनजन्मनि सस्यगनुष्ठानरूपाणि कृतानि तेषां फलानि जातिकुलवलैश्वयंरूपाणि इह प्रकटितानि तस्मात् धर्मकरणे प्रमादीनयिधेय इत्यभिप्रायः १८

गयाणं । जहिवंयं सब्ब जणस्सवेस्सावसीय सोदागणि वेसणेषु ॥ १८ ॥ तीसेय जाईयउपावियाए बुच्छामुसो
 दागणि वेसणेषु । सब्बस्स लीगस्सदुगं छणिज्जा । इहंतु कम्माइ' पुरे कडाइ' ॥ १८ ॥ सो दाणिसिं राय महाणुभा

हे नरिन्द्र हे राजा अधमा जातिः मनुयाणां हे राजन् अधमाजाति मनुथमांहिं चंडालजातिः द्वयोरपिगल्पोरभूत् ते चंडालनीजाति आपण्वे जणनेइई
 यत्रगतीवयं सर्वजनस्य द्वेष्यी अप्रीतिकरीजाती ते चंडालरीगतरं विषे आपेनिदनीकहुआ अप्रीतिनाविषे करणहारसर्वलोकानिस्थितौश्वपाकचंडालगृहेषु
 आपणचंडालनाघर मांहि वस्यारहा १८ तस्यांजातीप्राप्तार्यति चंडालनीजातिपांम्याथकां स्थितौचांडालगृहेषु चांडालनाघरमांहिरहाथका सर्वस्थलोकस्य
 जुगुप्सनीयानिनिदनीं यानिसर्वलोकने'जुगुप्सनियनिदनीकहुआ इहजन्मनिपुराकृतानि कर्माणि शुभानि उदयंगतानि एजन्मने विषे पाकलि भयेजे

सोदाणिसिराय महाशुभाभी महद्विभी पुत्रफलोववेत्त्री च इत्तु भोगाद् प्रसामयाद् आदानहेतु अभिनिवडमाहि २ हे राजन् यस्व सभूत पुरात्रासो मोदाणिसि इति सत्वमिदानीं रागा चक्रधरी महानुभागी माहात्म्य सहितो जातोसि कीदृशो राजा महर्षिको विशालस्त्रीक पुन कीदृक् पुत्र फलोपपात पुत्र्यफलसहित तस्मात् आदानहेतो आदानस्य चारिवधर्मस्य हेतो आदीयते स विवेकै रित्यादान चारिवधर्मस्य हेतो अभिनिवड माहि अभिनि क्रम अभिसमस्तात् नि क्रमे गृहपायास्व नि मरसाधुर्वैत्वर्थ कि कृत्वा अयाग्यतान् अनित्यान् भोगान् त्यक्त्वा पुराकृतस्य धर्मस्य फल चैतृत्वया इदानी भुचन्ते तदा इदानीमपि धन अङ्गीकुर्यतोये याग्यत सुखभाक् स्यादिति भाष २० धर्मस्य अकरणे दोषमाह इह जीविएराय असा यमि धणियतु पुवार अकुञ्चमाणो सेसो अइमथ सुहीयणोए २१ हे राजन् इह अस्मिन् मनुष्यजीविते मनुष्यायपि पुण्यानि

गो । महिद्विभी पुत्रफलो ववेत्त्री । च इत्तु भोगाद् असासयाद् आदानहेतु अभिनिवडमाहि ॥ २० ॥ इह जीविए राय असासयमि । धणिय तु पुत्राद् अकुञ्चमाणो । से सोयदं मत्तु सुहो वणीए । धम्म अकाजण परम्मिलोए ॥ २१ ॥

प्रभकर्मजोयाइताने उदेषा व्येयके १८ अस्मिन्काले हे राजन् महाशुभागीधर्मसे हे राजन् इहकालने विपे तु माहाशुभावर्त्तके महर्षिक धर्मफलोप पेतोयुत्तमद्वियतके पुत्रेय करोमहितके त्यजामोगान् अयाग्यतान् । भोगच्छीने अयाग्यताछेत्याने आदानमोघ तत्तन्मिच्च दीग्याग्यहाण आदान आदान कइइमोचतेहने निमित्तदिब्याले २ इह जीविते राजन् आसास्यतेसतो एजीवितस्य हे राजन् अयाग्यताछे अत्यर्थपुण्यानि अकुञ्चमानोजीव तु यको मगोण्यतेपयात्तस्य सुत्र उपनोतेमतिपके जीवजीमरण आवते क्रोधिदूखीहीइ धर्म अकृत्वा परलोके गच्छति २१ यथा इहलोके सिद्धीसुग गृहीत्वा

अशुवाणी मनुष्याः सुकृतानि न करोति स दु कर्मभिर्दुःखुत्स उपनीतः सन् धर्मं अकृत्वा परस्मिन्लीनिगत ग्रीचते पञ्चात्तापं कुरुते मरणसमये एव जानाति हामयो मनुष्यजन्य प्राप्य धर्मो न कृत इति चिन्तां करोति कथञ्च ते जीवति धणियतु अत्यन्तं अग्राह्यते २१ जहेहसीहि गमियंगहाय पञ्च गुरं निद्रहु संतकाले एतत्समाया वपिया कालं भित्तिं सहरा भवति २२ यथा इह संसारे सिद्धी सृगं स्वयं नयति तस्मिन् मनुष्यस्य मरणकाले माता च पुनः पिता च पुनर्भ्राता एते सर्वे अंगधरा न भवन्ति अंगं जीवितव्य भाग धारयन्ति न्युनानीयमानं नर रजन्तीति अंगधरा स्वजीवितव्यदायकान भवन्तीत्यर्थः २२ पुनर्दुःखादपि न त्रायन्ते इत्याह गतस्मादुक्त्वं विभयन्तिनाद्रो नमित्तवगानसुया नबंधवा इक्की सयं पञ्चगुहोद्र दुक्त्वं कतारभिवं अणुजाइकर्म २३ पुन हे राजन् मनुष्यस्य अयाव् दु सार्त्तस्य नरस्य दु त गारीरिकं मानसिकं दुःखं ज्ञातय स्वजनाः न विभजति

जहेह सीहोवभियं गहाय । मच्च नरंणे इहु अंतकाले । गतन्नामायावपि यापभाया । कालंसि तस्मं स हरा भवति ॥ २२ ॥ गतस्स दुक्त्वं विभयं तिणाद्रो । गमित्तपगगाण सुत्राण बंधवा । एकोसयं पञ्चगुहोद्र दुक्त्वं कत्ता

यांति जिमडं हांसी हृद्यगलाने भ्रालीने लेईजाइ यथाशुच्यः नरं नयति हुनिधितं प्रांतसमवेति मकाल मनुष्यने अं त्यसमये लेईजाय न तस्य माता वा पिता वा बांधवा वा तेहने माता न पिता न भाई तस्मिन् जाले सहरा दु सुसंभाविनी न भवति ते कालने विदे ते मगाते हजीवनु दुक्त्वं मोई वंटावेन ही २२ न तस्य वा दुक्त्वं ज्ञातयोऽपि तेहगु दुक्त्वं ज्ञाति पणिवटावोसजे नही नमित्तवर्गाः समूहाः नरूलाः न बांधवाः न मिच्छुक्त्वं जे च वि न जेठानभाइ एकीजीव प्रत्युभवति स्वयं दुक्त्वं वेदयति एकलीजजीवदूकणसहे कर्त्तारमिव अनुयांति गच्छति कर्मकारणकारने पठे कर्मजाय ॥ २३ ॥ त्यथाहि पद भार्यादि

दुःखं विभागिनो न भवन्ति भित्तयग नित्तममूढा पुन सुता अगना पुनवान्यथा आतरोपि न दुःखं विभजन्ति तदा किं भवतीत्याह एकीय जो योऽसधार स्वयमेव दुःग प्रयगुभवति एकाको स्वयमेव दुःखं असाता वेदनीभुक्ते कथं स्वजनादिवर्गे सति एकी दुःखं भुक्ते तत्राह कर्म शभाशुभरूप कतारं एव अगुयाति अनुगच्छति यं कर्मणा कत्ता सएव कर्मणा भीलास्वादिति भाव यदुक्तं यथा धेनसहयेषु वली विदन्ति मातरं तथा पुराकृत कमकसार मागच्छति १ २ २ चिगादुपयच च उष्यच चित्तं गिह धनं च सत्त्वं सकम्पवीची अक्सीपयाद् परं भव सुन्दरपावग वा २ ४ अगरण भायनां उजा एकत्वभायना वदति अयं स्वकाम्ना द्वितीयो जीव स्वकर्म स्वकर्म स्वकर्म स्वकर्म स्वकर्म द्वितीय स्वकर्म सहितीय चीन सुन्दर देवनोकादिग्यान वा अथवा पापक नरकादिग्यान एवमिधं परं भव अन्यनोक अयं सत् प्रयाति किं कृत्वा द्विपद भायादि च पुनद्भुत पत् गजात्तादि चैव इच्छुचेत्तादिगृह सप्तभूमिकादिधन दीनारादि रजत स्वर्णादिधान्य तण्डुल गोधूमादि च गव्याहस्त्राभरण सार रत्नादि एतत् सव यज्ञादिलाजीव परमये व्रजतीत्यर्थं २ ४ अयं मरणादनंतरं पर्यात्तस्य पुत्रकलत्रादयं किं कुर्वतीत्याह त इह तुच्छं सरीरगमे विद्म्यददहिय उपाव

रमेव अगुजा रूकम् ॥ २३ ॥ चित्रा दुपय चउष्य चखित्त गिह धनं च सत्त्वं । सकम्पवीची अक्सी पया ।

इ परं भयं सुन्दरं पात्रग वा ॥ २४ ॥ त एकं तुच्छं सरीरगं से विद्धं गयं दहिय उपावर्गेण । भञ्जाय पुत्तावियणाप

पुत्रपत्यादि सुरगादिद्विपदपुत्रपदादीनि चैत्र गृह धनं धान्यं च सर्वं त्वज्ञा जीवकर्मद्वितीयं कर्मसहाय अक्सीपरयगं प्रयाति गच्छति एजीवश्रापणा कर्ममात्रे नेने परस्वयकीपायपरनीके परं लोके शुभाशुभ पाप अशुभ वा परलौकिक जाइ भला कर्मकोषाद्दुतीदेवतायाइभुं डाकर्मकीधामुं होगति जाइ

नीणं भज्जाय पुत्नी वियनाय श्रीय दायारमन्नं मणुसङ्गमन्ति २५ से इति तस्य मृतस्य पुरुषस्य तत् एककं जीवरहितं अतएव तुच्छं असार शरीरं
 चितीगतं श्मशानाग्नि प्राप्तं पावके दग्ध्वा भस्मसात् कृत्वा पद्मात् तस्य भार्या च पुनः पुत्रापि च पुनर्जातयः स्वजनाः एते सर्वेऽपि अन्यं दातारं अनु
 संक्रमन्ति कीर्थं यदा कथित् पुरुषो म्रियते तदा तच्छरीरं प्रज्वाल्यतस्य स्त्रीपुत्रत्रान्धवाः अन्यं स्व निर्वाहकर्तारं धनादिदायकं सेवन्ते सर्वेऽपि स्वार्थं
 साधन परायणा भवन्ति २५ उवणिज्जइ जीवियमप्यमाय वन्नं जराहरइ नरस्सराया पञ्चालरायावयणं सुणाहि माकासि कम्माइ महालयाइ २६
 हे राजन् नरस्यप्राणिनी जीवितं आयुप्रमाणं यथा स्यात्तथा कर्मभिर्दुल्यवे उपनीयते पुनर्जायते सत्यपि नरस्य वर्णं शरीरसौन्दर्यं जराहरति वृद्धावस्था
 रूपं विनाशयति तस्मात् हे पञ्चालराज हे पाञ्चालदेशधिप वषनं मम वाक्यं शृणु महालयानि महान्ति मांसमन्वणादीनि कर्माणि त्वं माकार्षीः २६
 अथ नृपतिराह अहंपि जानामिज हे हसाहजंसे तुमं साहसिवक्त्रेयं भोगाइसेसङ्गकरा भवन्ति जेदुज्जया अज्जी अम्हारिसेहिं २७ हे साधी इह
 जगति यथा वर्तते तथाहं अपिजानामि यत् त्वं मे मम एतत् वाक्यं सहग्रिययसि गियारूपेण साधिकययसि परं किइरोसि इसे प्रत्यक्षं भुज्यमानाः

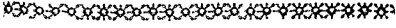
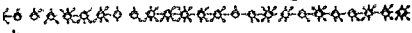
उय । दातार मन्नं अणुसंक्रमन्ति ॥ २५ ॥ उवणिज्जइ जीविय मपसायं । वन्नं जराहरइणरस्सरायं । पञ्चाल रायावय

॥ २४ ॥ तं एकअसारदेहंरोगैर्भृतां ते एकएयरीररोगिकरीने भग्यो चिताप्राप्तं दग्धं अग्निनापच्छेएशरीर च हिमांहि वालीइ अग्निस्सु वालीइ भार्या
 च पुत्रा पि ज्ञातयः स्त्रीपुत्रचाति प्रसुखइष्टकार्यकरदातार अन्यजनयाति निश्चयतः तेहने चाल्योस्तीवेटाज्ञातीप्रमुखवीजाजनने जाइ आयये बीजानी
 धाकरोसेवाकरे ॥ २५ ॥ उपनीयतेचयं प्राप्नोति जीवितव्यं निरंतरएजोयितव्यनिरंतरत्रयपमिच्छे आठखुं निरंतरओकुपडेछे भो राजन् यण्णजराहरति
 नरस्य अहीराजामनुथनीवर्णरूपजराहंछे भोपञ्चालराजन्वचनं शृणु अहीपचालदेशनाराजायचनयांभलिमाकार्षीत् कर्माणि महारौद्राणि अहीराजात्

भोगा सदकारा भवन्ति वन्धनकारा भवन्ति कीदृशा इमे भोगा हे आर्य येभोगा अस्माद्द्वैगुं एकर्मभि दुर्जया दुष्पजा २७ हल्यणपुरमिचित्ताद
इण नरवद महद्विय कामभोगेसुगिद्वे ण नियण मसुह कड २८ हस्तिनागपुरे भो चित्रमया निदान क्त कीदृश निदान अशुभ भोगाभिलापत्वात्
अशुभ कि जला नरपति सनत्कुमार चक्रिण दृष्टा कीदृश चक्रिण महर्षि क कीदृशेन मया कामभोगेसु गृडेन इन्द्रियसुखलोलुपेन २८ तस्मै अप
टिक तस्य इम एयारिसफल जाणमाणो विज प्रथ कामभोगेसु सुच्छिन्ने २८ तस्य निदानस्य प्राग्भवकृतभोगाभिलापस्य इम प्रत्यक्ष भुज्यमान एता
इय वक्ष्यमाण फल जात कथभूतस्य तस्य निदानस्य अप्रतिक्रान्तस्य अनालोचितस्य यस्मिन् अवसरे हस्तिनागपुरे आवा धनग्रन कृत्वा प्रसुप्तौ तदा

ण सुणाहि । साकासि कग्गाद्र महालयाद्र ॥ २६ ॥ अएपि जाणामि जहेह साहजमे तुम साहसि वक्कमेय ।
भोगा इमे सगकराहवति । जेटुज्जाया अज्जो अन्हारिसेहि ॥ २७ ॥ हल्यण पुर मिचित्तादद्दूणं णरवद महिद्वीय ।
कामभोगेसु गिद्वे ण । णिया णमसुह कड ॥ २८ ॥ तस्मै अप्पडिक तस्य इम एयारिस फल जाणमाणोविजधम्म ।

महारीद्रभू बा कर्मकरेमति ॥ २६ ॥ अहमपि जानामि, यथाद्द्वैजगति हे साधी अहो साधुः पणिभनीपरिजाणु छुयत ममत्वभापयसि वाफ्य एतत
अहो साधु जेतु वातमुभनेकहैच्छेसुभने उपदेसदियेच्छेभोसाधीभोगा मग्गादय इमे प्रतिवपीत्पादका भवति अहो यतीएभोगभुक्तेने प्रतिबधकारणदुबेच्छे
धम माहि अतराय करेच्छे ये भोगा इग्गाद्वै कातरे जेएभोग अग्गसरिपाकातर अज्ञानीने छोडता ॥ २७ ॥ हस्ति नागपुरेभोचारित्रहेचीव हस्ती
नागपुरने विपे दृष्टा । नरपतिसनत्कुमारचक्रिण महर्षिक देखीनेसनत्क भारवक्कवर्त्तिनीच्छेदि कामभोगेसुगृधे नकामभोगेनैविपेग्गद्वुव सुर्द्धितदुव



चक्रधरस्य स्तोत्रस्य केशपाशो मम चरणे लग्नस्तदा मया निदानं कृतः तदात्वयाह निवारितः भो भ्रातः त्वं निदानं माकार्षीः चेन्निदानं कृतः स्यात्
 तदा मिथ्या दुःकृतं दातव्यं त्वया इत्युक्तं पि अहं निदानान्न निवृत्त इत्यर्थः जंइति यस्मात् अहंजिनोक्तं धर्मं जानन् अपि कामगोत्रेषु सुतरां
 अतिशयेन मूर्च्छितोस्मि इन्द्रियसुखेषु बुद्धीस्मिन्निचित् ज्ञानस्य एतदेवफलं ज्ञानीविषयिभ्यो विरक्तः स्यात् अहं ज्ञाने सत्यपि विषयेषु रमा मे तन्निदानं
 स्यैव फलमित्यर्थः २८ नागोजहापङ्कजलावसन्ती ददुःखलं नाभिसमे इतीरं एवं वयं कामगुणेषुगिद्धा न भिक्षुणी मगमासणुव्वयामी ३० हे साधो यथा
 नागो हस्तीपङ्कजलावसक्तः अल्पजले बहुपङ्के अवसन्तीत्यन्तं निमग्नस्तीरं दृष्ट्वाऽपि न अभिसमेति तीरस्य तटस्य अभिसुखं गतोपितटं न प्राप्नोति
 तीरन्तुदूरतः परन्तुस्थलं अपि दृष्ट्वा न उच्चभूमिं प्राप्नोति एवं अशुनाप्रकारेण अनेन दृष्टान्तेन वयं इति अस्मादृशाः कामगुणेषु शब्दरूप रसगन्धस्पर्शा
 दिपुं च्छदाः लोभिनी भिक्षोर्मार्गं साधुमार्गं साश्चाचारं न अनुव्रजामः न प्राप्नमः तस्मात् किंजुसौवयं विषयिणी जानन्तोप्य जानन्त इव जाता इत्यर्थः ३०
 अब्बिइकालोत्तरियन्ति राइश्री नया विभोगा पुरिसाणनिच्चा उविच्चभोगा पुरिसच्चयन्ति दुमंजहाखीण फलं वपक्खी ३१ अथ सुनिः संसारस्य अनित्य

कामभोगेषु सुच्छिञ्चो ॥ २९ ॥ षागोजहापंकजलावसन्ती । ददुःखलंणाभि समेति तीरं । एवं वयं कामगुणेषुगिद्धाण
 भिक्षुणीसज्जामणुव्वयामी ॥ ३० ॥ अब्बि इकालोत्तरंति राइश्रीणयावि भोगा पुरिसाणनिच्चा । उव्विच्चभोगा पुरिसं

निदानं अशुभं कृतं तिवारे मे भूङ्घनीयाणु कोधू २८ तस्य नोदानस्य ममअनालोचितस्य ते नियाणोमे आलीयो नहीमीच्छामीदुव्वलड्दीधोनही
 इदं एतादृगं फलं जातं एअहारेत्तचित्तेहनीफलहुउं जानन्नपि यदहं धर्मं जेहभणोधर्मनोमार्गहुं जाणुं छुं एधर्मनाफल कामभोगेषु मूर्च्छितं कामभोग

गिबोसि आरम्भ परिग्रहेषु मीहकश्री इतिउ विष्णुलावो गच्छागिरायं आमन्तिश्रीसि ३३ हे राजन् अहं गच्छामि अहं ब्रजामि मयालं आमन्ति
तोसि मया लं' पृष्टोसि धातूनां प्रनिकार्थत्वात् हे राजन् तुष्क इति तव भोगान् त्यक्तं, बुद्धिर्नास्ति अनार्यकार्याणां भोगा एव कारणानिसन्ती अती
भोगान् अनार्यकार्याण्यपि ल्यत्, मतिर्नास्ति पुन आरम्भ परिग्रहेषु लं गृह्योसि बुद्ध्योसि आरम्भ परिग्रहान् न त्यजसि इत्यर्थः एतावान् विप्रलापः
विधिधवचनोपन्यासः मीधः कृतः निरर्थकः कृत जलविलोडनवत् व्यर्थोजातः तस्मात् कारणात् अथाहं त्वत्तः सकाशात् अन्यत्र ब्रजामि
तवाज्ञास्ति इत्युक्ता सुनिर्गत अथ सुनौगते सति ब्रह्मदत्तस्य किमभूत्तदाह ३३ पञ्चालरायावियवंबदत्तो साहुस्स तस्सवयणं अक्काठं अणु
त्तरे बुञ्जियकाम भोगे अणुत्तरे सो नरणे पविट्ठी ३४ पञ्चालदेशानां राजा पाञ्चालराजो ब्रह्मदत्तशक्रवर्तिरपि अनुत्तरे सकल नरकवासिभ्य उत्कृष्टे
अप्रतिष्ठान नास्त्रि प्रविष्टस्त्वोत्पन्न इत्यर्थः किं कृत्वा अनुत्तरान् सर्वोत्कृष्टान् कामभोगान् भुङ्क्ता पुनः किं कृत्वा तस्य चित्त जीवसाधोर्वचनं उपदेश
वाक्यं अकृत्वा निदानकारवास्य नरकगतिरेवतस्य गुरु कर्मत्वान्न साधो रूपदेशावकायो जात इत्यर्थः ३४ चित्तोधिकामेहि विरक्तकामी उदगचारित्त

सु ॥ मीहं काउएत्तिउविष्णुलावो । गच्छामिरायं आमन्तिश्रीसि ॥ ३३ ॥ पञ्चालरायावियवंबदत्तो साहुस्स तस्सवयणं

यथाचीणफलं ह्यत्र पचिथस्तजन्ति जिमखीणफलस्यचने पञ्चीच्छांडे २१ यदिलं भोगास्सत्तां, न समर्थः जीतुं भोगच्छांडवाने समर्थं नहीं तदाकर्माणि
आर्याणि उत्तमानि कुरुभोराजन् तुं आर्यउत्तमकर्मकरिभलं कर्मकरिपर्मस्थितः सर्वलोकेषु दयावान् धर्मने विप्रेरहाथकासर्वजीवने विषेदयाकरे अतो नर
भवात् देवीविक्रियदेही भविष्यसि एमनुथसि एमनुथानाभवथी देवताही ईं सवेक्रियशरीरनीधणी ३२ अथ यदा सनप्रति बुध्यते तदा सुनिराहः न तपभो
गान् त्यक्तं, बुद्धि भोगच्छोडवाताहरी बुद्धिनथी गृध्ररूपमस्ति आरंभपरिग्रहेषु तुं मूर्च्छितहुश्रीदे आरंभपरिग्रहने विषे मयामीह ह्यथा कृतः एतावान्

तवी महेशो अणुत्तर सञ्जमपालइत्ता अणुत्तर सिद्धिगर गयोत्ति वेमि ३५ चित्तोपि पूर्वं भवचित्तजीव साधुरपि महर्षिर्महामुनि अनुत्तर सर्वोपरि यत्ति निदिस्थानइत्त कि छत्वा अनन्तरस्त्रिनाम्ना विगुड सप्तदशविध सयम पालयित्वा कथभूत स साधु कामिभ्यो विरक्तकाम भोगिभ्यो विरक्ताभिलाष पुन कोट्टम स उदयचारित्त तपा उदय प्रधान साध्याचार सर्वविरतिलक्षण दशविधरूप चारित्त तपो द्वादशविध यस्य स उदय चरित्ततपा एता दृग सन् मोच प्राप्तयित्त जीव सुत्तरि ति सुधमास्वामी जम्बूस्वामिन वादति ९ जम्बू अह तवाग्रे इति ब्रवीमि ३५ इति चित्तसम्भूतीय तयोदय चित्तसम्भूतीय अध्ययन सपण ॥१३ अथ चतुर्दशेश्वरनिदिहि निदानस्य दोष उक्त चतुर्दशेश्वरनिदिहि निदानस्य गुणगाह अथ सुत्यतस्त्रुनिदात्ता राहित्यमेव मुक्ते कारण इत्युच्यते तत्र सम्प्रदाय यैः शौ गीपदारकौ चित्तसम्भूत पूर्वभव नित्तौ साधुधेवाकरैः देवलीकं गती

अकाउ । अणुत्तरेसु जिय काम भोगि अणुत्तरेसोत्तरएपविद्धो ॥३४॥ चित्तोविकामिहि विरक्तकामो । उदगचारित्तत वीमहेसी । अणुत्तर सजमपालइत्ता अणुत्तर सिद्धिगद्द गउत्तिवेमि ॥ ३५ ॥ चित्तसम्भूदुज्जयण सम्मत्त ॥१३॥

प्रनापाएने वचनान्नापफोकटकीधो गच्छानि हे राजन् निमचित्तोसि पृष्टोऽसित्व हे राजन् जाठ तु तुम्हनेपुच्छीछे ३३ पचालराजापि ब्रह्मदत्त पचाल देयनीराजा ब्रह्मदत्त तस्य साधो वचन अल्लतातिसाधूषु वचन अणकरीने सर्वोत्तमान कामभोगान् भूक्षा अणुत्तरसर्वथकीठत्तजटीनरकने विपियपनी ३४ चित्त सम्भूतपिण एकामभोगांयकोविरक्तययोत्तिकामको अभिलाषावांछाजिष्णो एहवीयको उदयप्रधानचारित्ततपवतमीटोऽरिपीखरसाधु महाशुभावनिभं नशेअनसगम यथा ध्यातचारित्तनिश्चलपानोने जैसाध अष्टकमजोतीने प्रधानसिद्धगतिप्रतैप्राप्तययोसिद्धस्थानिके पडु तो इमकडु पु ति वेमि ॥ ३५ ॥

यतो प्रायोजाति मरणमुपय तत प्रतिबुद्धी तौ साधून् वन्दित्वा गती माहपितृसमीप अध्वयनीं वाक्ये भ्रात्र्या मातापितरौ प्रतियोधितौ तद्धन
 निष्पुत्राजानत्र रात्रौ प्रतियोधितवतो एष पडपिनीवा गृहोत प्रप्रत्या केवल ज्ञानमासाद्य मीच गता अथ सूत्र व्याख्यायते देवाभयित्ताणपुरे
 भयनिश्चिरसु प्राण विमाणयास्तो पुरे पुराणे उच्यते नामे साए समिद्धे सुरली अरथे १ सकामसे सेण पुराकएण जुले सुदगेसुयते पसूया निख्विच
 मसाएभग उहाय जिण दमण मरण पयत्रा २ गाथादयेसन्ध केचित् जीवा येपा केनापि न प्रायते यतोहि पूर्वश्चतुर्णामपि गोपजीवाना नाम
 नील यो पुनर्दो चित्रमभूताभ्याम् श्वगेपी अभूतो तो इम्य व्यवहारिण सुतल्लिन उत्पन्नो तयो पुनयत्वारोमित जीवा स्तेपां अपि नामनेकापिनन्नायते
 एष पडपि जीवा पूर्य अनिर्दिट नामानोऽभूवन् अहो पग्गत धम्मस्य माहात्मा जीवानां भव्यकर्मपरिपाकत्व च केचित् जीवा पूर्वस्मिन् भवे देवो
 भूय देवल प्रायसोऽथम् देवलीके नन्दिनी गुमविमाने एकत्र निवास कृत्वा स्वकर्मशेषेण पुण्यप्रकृति लक्षणस्य शेषेण ते पडपिजीवा

देवा भवित्ताण पुरे भवसो केई चुया एगविमाणवासी पुरे पुराणे उमुयारणामे खाए समिद्धे सुरलोय रग्गे । १। स
 काम्म सेसिण पुराकएण जुलेसुदगेसुयतेपसूया । निख्विण ससार भया जहाय जिणिटमगा सरण पवणा ॥ २ ॥ पुम

देवो भयिवा पूर्वभवे पाच्छया भवने यिपि देवता होररे केचित् यत्वा एकपदमगुलविमानवाग्मिनी एइकजीव पद्मगुल्ल विमानधी च बीने
 नगरे चिरतनइ सुकारागमनगर पुराणेछे जूनीछे प्रसिद्धेरिद्धि युते सुरलीकइवरम्यवलीनगरकेइवुद्धे सर्वत्र प्रसिद्धे ऋषसहीतछे देवलोकाणी
 परिरम्यमनीहररे १ स्वकर्मशेषेणपुराहतेन प्रापणाकृतकर्मतेइने अनुसारे जुले उत्तमे उल्लटद्विजचक्रियजाति रूपे प्रसूतापटजीवा उत्तमवलने विधिछ

द्रुकारनाम्नि पुरे पुराणि पुरातने नगरे पुनः ख्याते सर्वत्र प्रसिद्धे पुनः सृष्ट्वा धनधान्य पूर्णे पुन स्ररलीकवत् रम्ये उदग्रे उल्कटे क्षत्रियादिके प्रसूता उत्पन्ना कथं भूतेन स्वकर्मशेषेण, पुरातनेन पूर्वजन्मीपार्जितेन ते जीवा द्रुकारपुरे समुत्पद्य तत्र संसारभयात् निर्वेद्य निर्वेदं प्राप्य चतुर्गति भ्रमण भयादुद्देगस् आसाद्य तदा जहाय इति भोगान् त्यक्त्वा जिनेन्द्रमार्गं जिनेन्द्रमार्गं स्वं ज्ञान दर्शन चारित्ररूपं मोक्षस्य मार्गं शरणं जन्म जरा मृत्यु भयापहं स्थान प्रपन्नाः प्राप्ताः इति गाथाद्वयार्थः २ पुनत्तमागम्य कुमारदेवी पुरोहित्रीतस्त्रजसायपत्नी विसाल किन्तीयत हा सुयारी रायत्य देवी कमला वईय ३ तेषांषणां अपि पृथक् भेदं दर्शयति सूक्तकारः तेषां पणां मध्ये ही जीवी गोपी पुं स्वं आगम्य पुरुष वेद त्वं प्राप्य कुमारो जातो मृत्यु ब्राह्मणस्य पुत्रो समुत्पन्नो अत्र कुमारत्वेन एवं उक्तौ यो हि अपरिणी तो एव दीक्षां जगृहतु. तृतीयो जीवः पुरोहितो भृगुनामा ब्राह्मणा द्यासीत् तद्गार्या यशानाम्नी चतुर्थोजीवः तथा विशालाविस्तीर्णकीर्त्तिर्यस्य स विशाल कीर्त्तिः; एतादृशः द्रुकार नामा राजा पंचमीजीवः च पुनः द्रुह राज्ञ भवे एव तस्यैव राज्ञी देवी राज्ञी कमलावती जाता इति षष्टीजीवः एते षडपि जीवाः स्व स्व आयुचयेद्युत्वा केचिदग्रतः केचित्पृथीत्वूर्व सबधेन एकत्र नगरे मिलिताः इत्यर्थः ३ जाई जरा मच्चभयाभिभूया बहिं विहाराभिनिविष्टचित्ता संसारचक्रंस्व विमीक्षणदृष्ट्वा तै कामगुणे

तमागम्य कुमार देवी पुरोहित्री तस्य जसायपत्नी विसाल किन्तीय तहो सुयारी रायत्यदेवी कमलावईय ॥ ३ ॥

जीवदेवलीकथकी चवीने आवीने उपनासंसारभयात् निविन्नाभीताजहायभोगान् त्यक्त्वा संसारनाभयथकी वीहनासर्वभोगच्छाडीनेजिनेन्द्र मार्गे सरणं प्रपन्नाश्रयिताः तोर्थं करनीभायीमार्गतेहनूं शरणकीधूं २ पुरुषत्वं प्राप्य कुमारो हो द्विजपुत्रो वै ब्राह्मणनाविटा भृगुनामातृतीय पुरोहितः चतुर्थी तस्य पुरोहितः तस्य जप्तानाम्नी पत्नी विस्तीर्ण कीर्त्तिस्वथाद्रुकारो नाम राजा पांचमीद्रुषु,कारराजा तस्य च कमलावती देवी एतेषट्जीवाउत्पन्नाः ३

विरता ४ ती दो कुमारी कामगुणिय ग्रन्थरूप रसगन्धर्भ्योविरली जाती कि कला द्रुण इति द्वादश साधून् यिनोक्त्य श्रयवा शब्दादिविपयान्
मोगनाति विभूतान् दृग् किमप्यस्मारचक्रस्य विमोचार्थं ससारस्य चातुर्गतिकस्य यत् चक्र योनि कुलभेदात्मनूहयक्रवद भ्रमण यातस्य विमोच
नार्थं निशरणाय कोटरी ती कुमारी जाति जराशृय भयाभिभूती जन्मजरामरणभयेन पीडितौ पुन कोटरी ती कुमारी वह्निर्विहाराभिनिविष्ट
चित्तो नति सनाराद्विहार स्थान वह्निर्विहारी मोक्षमग्निन् अभिनिविष्ट उवादेर चित्त ययो स्त्री वह्निर्विहाराभि निविष्टचित्तौ ४ पियपुत्तगादुत्रिवि
माहणम् सकम्पसोनम् पुरोहित्यम् सरित्तुपोराणियतयजाद् तथा सुचित्र तय सजम च ५ ब्राह्मणस्य भृगुनाग्र पुरोहितस्य राष्ट्र पूज्यस्य दो
प्रियपुत्रको नपु यनभपुत्री यो श्राम्ता ताभ्यां हाभ्यां पुरोहितस्य वस्त्रभ पुत्राभ्यां तथा तेन प्रकारेण तपो द्वादशविधिय पुन सयम सप्तदशविधं सुधीर्णं

जाडजरा मच्चु भयाभि भूया वह्नि विहाराभिनिविष्टचित्ता । ससार चक्रम्प विमोक्खणद्वादष्टू गते काम गुणेविरता ॥४॥
पिय पुत्तगा देन्नि विमाहणम्प स कामसी नम्प पुरोहित्यम् । सरित्तुपोराणिय तल्य जाद् तथा सुचित्र तवसजमच ॥५॥

अथ दिनपुत्री नम्रजरामरणभोतीषुवे ब्राह्मणनायेटा जन्मजरामरणयो वीहना कुमारी वह्निर्विहारी मोक्षेदत्तचित्तौ ते ब्राह्मणनायेटामोक्षने विपे
वित्तदोध्योमगार चक्रस्य मोचार्थं त्यागार्थं ससार चक्रयकी प्रापणा श्रामानिसु कायवानी श्रयं साधून् द्वादशी कामगुणेभ्यो विरली साधूने देखीने ब्राह्मण
नायेटाजांनभोगयकोविरत्तुपुत्रा ४ पुत्री अभिष्टी पुत्री प्रियपुत्रकीदायपि ब्राह्मणस्य भृगुनामापुरोहित वषु वेटावास्वाहं सकर्मशीलस्य पुरोहितस्य यजन
यागनादितत्परम् पुरोहित प्रापणापटजर्मतेहनेविपे सावधानहं यत्प्रतर्पण करीम्पुत्राचिरतनां तत्र जाति ते ब्राह्मणनायेटानि जाति मरण उपपु

सुतरां अतिशयेन निदानादि शब्दरहितेन आचरित सञ्चित कि क्त्वा तत्र तस्मिन् शभि एव पुरातनीं जाति स्मृत्वा जाति स्मरणं प्राप्य कीदृशस्य पुरोहितस्य स्व कर्मशीलस्य स्वकीय ब्राह्मणस्य यजनादिकं षट् विधं कर्मस्वकर्म तदेवशील आचारी यस्य स स्वकर्मशीलस्तस्य राज्ञ शान्ति पुष्ट्यादिकार कस्य ५ ते काम भोगेसु असज्जमाणामाणुस्य एतुंजे आविदिब्बा सुक्खाभिकंखी अभिजाय सट्टा तातं उवागस्म इमं उदाहु ६ ती ही पुरोहित कुमारी तातं स्वजनक उपागम्यतातसमीपे आगत्य इदं अत्रे वक्ष्यमाणं वचनं उदाजङ्गतुः वाक्यं जचतुरित्यर्थं कीदृशौ ती कुमारी मानुषकेषुकामभोगेषु असज्जमाणाइति असज्जी अनादरी अपितु पुनर्यादव्याः कामभोगास्तेष्वपि असज्जी एतावतामनुष्यदेव संबधिकामसुखेषु त्यक्ती यस्मै पुनः कीदृशौ ती मोक्षाभिक चिणी सकल कर्म चयाभिलाषिणी इत्यर्थः पुनः कीदृशौ ती अभिजात श्चौ उत्पन्नतत्त्वश्चौ इत्यर्थ ६ किं जसु रित्याह असासयं ददुइमविहार बहु अंतरायं नयदीह आउं तम्हागिहंसिं नरइं लभामी आमतयामीचरिस्सासुमीणं ७ भीतात आवां गृहेरतिं सुखं न लभमहे

ते काम भोगेसु असज्जमाणामाणुस्य एतुं जेयाविदिब्बा । सोक्खाभिकंखी अभिजाय सट्टा तातं उवागस्म इमं उदा हु ॥ ६ ॥ अससासयं ददुं इमं विहारं बहु अंतरायं णय दीह माउ । तम्हा गिहंसिं नरइं लभामी आमं तथा

तथा सुचरितं तपः सजमचपाच्छिलाभवने विषे जेतपजपकोधाहतति सर्वसांभय्या ५ ती ही कामभोगेषु अरजंतौ विरक्तौतिवेजणकांमभोगनें विषे अरंजताथका मानुयसत्रधोषु च दिव्येषु च मनुयसबधियाभोगदेवसंबधीभोग मीचाभिलाषिणी उत्पन्नतत्वबुद्धीमीचनवांछेच्छे तत्त्वनीरुचि उपनीच्छे पितरं प्रतिआगम्ये दं वचनं कथीत वती ते ब्राह्मणनविटापिताने पास आवी इम कहवालागा ६ असास्ततं दृष्ट्वा इदं विहारं मानुषं जन्मएमनुष्यनी

तस्मात्कारणात् आशामव त आशमव यावहेत्वा पृच्छायहे आवा ही अपि मौन चरिथाव मुनीभावी मौन साधुधम अग्नौकारियावद्यर्थं आया गृहे रति ननभायहे तत् कि क्त्वा इम विहार इम मनुयत्वावस्थान अग्रावत अनिथ दृष्टा कीदृश विहार बहु अतराय बहव अतराया यस्मिन् स इतरायज्ञ च पुनस्तत्र विहारैः मनुच भवेदेषं पचीपमसागरोपसादिक नास्ति मनुयाणा हि स्वयमेवायुर्वहवोतराया मति तस्माद्गृहे आययी सर्वथा प्रोत्तिर्नास्तीत्यर्थं ७ अहतायगोतत्यमुणीण्यतेस्मितवस्रवाघायकर वयासी इम वय वैशविदोवयति जहानहीर असुराण लोगी ८ अथ पुत्राभ्या एव उक्ते सति तदाख्यानतर तात कप्तमोर्जनकोशुगु पुरोहितस्तत्रावसरे तत्र ग्रामेवार्त्सि इति तयो तपसी व्याघातकर इद वचन अवादीत् कथ भूतशयीमुन्यो अमणयो द्रयतस्तु ब्राह्मणपुत्री अगृहोत्तवैषी भावतस्त एतसयमोतौस्तस्माद्भावसुन्योरित्यर्थं कि अवादीदित्याह ते पुत्री वेदविद वेदथा इद वचन वदति यथा येन कारणेन यजुताना जनाना लोको गतिर्नास्ति न विद्यते सुतो येपा ते असुतास्तेषा असुताना अपुत्राणा यतीहि पुत्र विना धर्माज्ञा प्रदानाद्यभावात् पुथया मित्रमाणन्वेनानां गतित्व पितृणा स्यात् यदाह भगवान् अपुत्रस्य गतिनास्ति सगो

मोचरिन्नामिमोण ॥ ७ ॥ अह तायश्चौ तत्वमुणीणतेस्मितवस्रवाघाय कार वयासी इम वय वैश विदो वयति

जमारोग्रसायतो अत्रायोवहवो अतरायारचदोषनापुबलएमनुयने जमारे अतरायवणो आउगु षीड तस्मात् कारणात् अतिनलभावहेतिणिका रणि अही तात अन्हे घरमाहिरति सतीपयास्या न होछा एतएव आमत्राव पृच्छाम चरिथानो मौन मुनिव्रत इमी कारणं तुलने पूछाद्या आदेगमा गांछादित्यनिस्था आदेययो ७ अथ तात पिता तत्र तगिन् समये भाव सुनि रूपयी हवे पितते भाव चारित्वियाने तपस व्याघातकरवचीथवादीत् तपने अतरायनो वचन कहवालागा भी पुत्री इद वचन वेदविदो वन्तो हे वेदाग्रो वेदनाजाणइमकहेछे यथा असुताना अपुत्राणी परलोकीन भवति

खानि सदृशा वर्तन्ते अनयानां ऐहिकपारलौकिक दुःखानां उत्पत्ति स्थान सदृशा भवन्तीत्यर्थं तदेवाह कीदृशा काम भोगा जगन्मात्रसुखा घणमात्र
 भेदन काले एष सुखयन्तीति घणमात्रसुखा पुन कीदृशा बहुकाल दुःखा बहुकाल नरकादिषु दुःख येभ्यस्ती बहुकालदुःखा पुन कीदृशा प्रकाम
 दुःखा प्रकाम अयन्त दुःख येभ्य प्रकामदुःखा पुन कीदृशा अनिकामसुखा अप्रकष्टसुखा तुच्छसुखा इत्यर्थं पुन कीदृशा ससारस्य भव भ्रमणस्य
 मोक्ष ससार मोक्षस्य विपक्षभूता यत्र, भूता ससारभ्रमण द्वन्द्वकारिण इत्यर्थ १३ परिव्यय ते अणियत्तकामि अहो अराश्री परितपसाया अशुष्यमत्ते
 धपभेसमरणे पपुत्तिमद्यु, पुरिसीजरस्य १७ एतादृश पुरुयोग्यतु प्राप्नोति च पुनर्जरा प्राप्नोति कीदृश सन् परिव्रजन् परिसमन्तात् विषयसुखलाभार्थं
 इतन्ततो भ्रमन् पुन कीदृशोऽनिवृत्तकाम ७ निवृत्त कामोऽभिलाषी यस्य स अनिवृत्तकाम अनिवृत्ते च्छ इत्यर्थं पुन कीदृश अह नति अहनिराल
 इति रात्रोपरितपमान आपत्वाद्दहो अराश्री इति स्थिति अहो रात्रे अप्राप्तयसु प्राप्तिसिद्धिं चिन्तामन्चिन्ताचितयादग्ध पुन कीदृश अन्य
 प्रसत्त अत्ये स्वजनमातापिठ पत्रकनत्रभ्रात्रादय तदर्थं प्रसत्तस्तत्कायकरणासता अन्य प्रसत्त पुन कीदृश धन एष या विविधीपायेधनवाब्धन्
 इत्यय एव भेद मूढ पमान् म्रियते स्वाथ किमपि न करोति पुन स्थितौ पूर्णया एकदाशुभ्युर्वाजरावा अवश्य प्राप्नोत्विति भाव १० इमव मे

अणिगामसोक्त्या ससारमोक्तस्य विपक्षस्य भयाक्त्वाणी अगत्याणु कामभोगा ॥१३॥ परिव्ययते अणियत्त कामे

माने १२ स्तोत्रकाल सुखकरा अप्सोऽग्या चिरकान दुःखदायका धोडाकाल सुखनाकरणहार दुःखदोषे अतिशयेन दुःखकरा प्रकट
 सुखरहिता घणिकाल एहयो जोवडी दुःखभोगवे स्वल्पमात्र सुख ससारे मोक्षस्य सुक्तिमागस्य विपक्षभूता शत्रुरूपा मोक्षमार्गनावयरो मोक्षजा
 वादिदे नहो अनयानां खानिय कामभोगा एकामभोग अनर्तनीखाण्डि सर्वे अनर्थ एहयो जपजे हे पिता १३ परिव्रजन् विषय सुखलाभाय काम

अथि इमं च नयि इमं च मे किञ्च इमं अकिञ्च तं एव मेव लालप्यमाणं हराहरन्तिकहं पमाये १५ पुनः पूर्वोक्तमेव द्रढयति हरा कालास्त्रं मनुथ हरन्ति हरन्ति प्राणिनां आयुरिति हराः दिवसरजन्यादयः कालाः तं किं कुर्वन्तं एव मेव लालप्यमानं व्यक्तं वचनं वदन्तं एव मिति किं इदं च मे मम अस्ति इदं प्रत्यक्षं धान्यादिकं मम गृहे वर्त्तते पुनरिदं च रजतलवर्णा भरण्यादिकं मे मम नास्ति च पुनरिदं मम क्लयं षट् ऋतु सुखं गृहादिकं करणीय वर्त्तते इदं च मे मम अक्ल्यं वाणिज्यादि अकरणीयं अस्मिन् वाणिज्ये लाभो नास्ति तस्मान्नक्ल्यं अक्ल्यं इत्यर्थः इति हेतो भी तात कयं प्रमादीत कथं प्रमादं क्लयार्थात् प्रमादं कर्त्तुं कथं उचित इत्यर्थः १५ धणं पभूयं सह इत्थी याहिं सयणातहा काम गुणायगामा तवं कएतप्य इजस लीगी त सब्वसाहोणमिहेव तुक्कं १६ अथ पुनः पुरोहितस्तौ लोभ यितु माह भी पुत्रौ यस्य कृते यदर्थं लोकीजनः तपस्तप्यते तत्सर्वं इह

अहो यराओ परितप्यमाणे अन्नप्यसत्ते धणमेसमाणे पप्योत्ति मचुं पुरिसीजरंच ॥१४॥ इमंचमे अथि इमंचवणथि •
इमंचमेकिञ्च इमंचअकिञ्च तंएवमेवं लालप्यमाणं हराहरंतित्तिकहं पमाए ॥१५ धणं पभूयंसह इत्थियाहिं सयणात

सुखसक्ता उरइ परइभमे फिरे अपूर्ण अभोलाषथकी ननि वृत्त्याक्केकाम अहीराबं च परितप्यमानः रात्रिदीनने विषे तपतुथकी आर्त्तध्यानि रुद्रध्यानि परितपती अन्नर्थं प्रसत्तं प्रमादवान् धनं गविषयन् प्रमादीथकीपरकी धनगविषतु फिरे स्तीकमात्रमिले अहकारकरती पुरुषाः मृत्युं जरां च प्राप्तुवंति पुरुष जरामृत्युपामे १४ इदं मे अस्ति इदं च मे नास्ति एहारे वसुक्छे इदं च मे कर्मकर्त्तव्यं ए अहारे क्लयकरतुक्छे इदं च मे अक्ल्यं एहारे क्लयनथोकरतुं त पुरुषं एवमेव पृथैवलालप्यमानं वदन्ते ते पुरुषने इमकहतानि कालवटिका हरती परलीकं न यति कालनीषिडीआउखानिहरे

अथ जीवाद्याकाशानां संसृदाय सयोगात् चैतन्यरूपो जीव उत्पद्यते इत्यर्थः बदरी छन्नि गुडमधूक प्यापानोयादि द्रव्याणा मीलापान् मदशक्तिरिव पूर्वं असत् उत्पद्यते तथा भूतानां सयोगात् चेताना उत्पद्यते पुनः सजीवी न पश्यति न अवतिष्ठति शरीरनाशे तन्नाश शरीरसति पञ्चभूतैलापि सति स भवेत् पञ्चभूतानां पृथग्भावे तस्यापि नाशएव एवमिति केन प्रकारेण जीवा पूर्वं प्रविद्यमानाः उत्पद्यन्ते तदटान्तमाह यथा एव च गज्जोल एवाथे अग्नि अरणीत्री अरणीतः अग्निमयनकाष्ठतः पूर्वं अदृश्यमाणोपि सयोगात् उपरित नारणि काष्ठेन अधीवंगार्कादि काष्ठसंयोगात् अग्निः उत्पद्यते नत्वे काकनि अरणिकाष्ठे पूर्वं अग्निदंडः एव चोरिष्टतं चोरमपि पूर्वमुष्णी ह्यल्पद्यात् तन्मध्ये तन्नां स्त्रोक प्रक्षिप्य चतुर्यामंस्त्रानी ह्यल्पद्वाग्मन्वानेन विलीयते तदा तत् पूर्वंअसदेवष्टतउत्पद्यते एवं महातिलेषु उत्तमतिलेषु यन्वादिमयन सयोगात् तिलेभ्यस्तैल पूर्वं प्रत्यक्षं प्रविद्यमानमपि उत्पद्यते अरणि काष्ठादधः काष्ठसयोगाभावे चैतन्यरूपजीवाभावइत्यर्थ १८ अथएतस्य उत्तस्योत्तरन्तीप्राहत्तु. नोद्भन्दियगिज्ज अमुत्तभावाविय हीद्भनिचो

णवा कामगुणे हिंचेव समणा भविस्माभो गुणोहधारी । वहिं विहारा अभिगन्मभिक्खं ॥१७ जहाय अग्णी अरणी अ संतोखीरिघथंतिह महातिलेषु एमेवजाया सरीरंसिमत्ता संमुक्खइणा सद्दणावचिडे ॥१८ नोद्भं दिवगिज्ज अमुत्तभावा

कारे धननुं किं स्वक्रांस स्वजनेन किं अथवा कामगुणे किंचेव पुनरेव स्वजन संघाते किसाकामभोगस्युंहे सुकस्यु निचेकरिने नमण भविद्यावः गुणीघधारिणो यतीहुस्यां गुणना समूह तेहना धरणहार ग्रामादि विहारकरणो अभिगम्य प्राह्लय मंगीसतभिजां ग्रामादिकने विषे विहारकरस्या भिद्या मांगवी अगीकारकरिने १७ अथ पिता आह गालेव पूर्वं नास्ति इत्याह यथा अग्नि वह्निः अरणिकाटात् अविद्यमानोपि उत्पद्यते जिम अरणीना

अकथहेतु निय यश्चवशो संसारहेतु च भवति बन्ध१८हे तात अय आमा अमूचभावात् इन्द्रियपादो मोदतिताति गदरूप रसगन्धस्पर्शादीनां प्रभाव
त्व अमूर्तं च तस्मात् अमूर्तत्वात् इन्द्रियपादो नास्ति यो अमूर्तो भवति स इन्द्रियपादो भवति स अमूर्तोऽपि न
सभवति यत्र घटादि पुनरप्यत्र अमूर्तभावात् अपि नित्योयजोव बद्द द्रव्यत्वमिति अमूर्तत्वमिति अमूर्तत्वमिति चेदत्र
अमूर्तं आत्मा तदा कथमस्य बन्ध तत्रोत्तर वदत अस्य जीवस्य यरोरे बन्धोऽनियतो नियत अथात्महेतुर्वर्तते कोऽर्थ आत्मनि अधिकात्त्व भवतीति
अथात्म मित्यात्वाविरति कषाय योगादिक तदेवहेतु कारण यस्य स अथात्महेतु अस्य जीवस्य य बन्धोऽभवति स मित्यात्वादिभिर्हेतुभिरपस्यादिति
यथा अमूर्तं स्यापि आकाशश्च घटादौ इव घटोत्पादमकार्षेयहेते आकाशस्य बन्धोऽजायते तथा आत्मनः यरोरे बन्ध इत्यर्थं च पुनरुभया संसारस्य हेतु

अमूर्तभावाविय होद्गुणितो अजम्बल्यहेतु णिययस्यवधो । संसारहेतु चवयति वध ॥१८ जहावय धम्ममयाणमाग्रापाव •

काटने विषे अस्मि उपजे हृत समुच्छिन्न महा तिनैतैः उत्वयते दूधने विषे वी उपजे तिनने विपेतैः उपजे १ पुत्रो एवमेव यरोरे सत्वाजीवा
समुच्छिन्ते १ पुत्रघ्नो इम यरोरने विषे जोव स मुच्छिन्न रक्षाहे स मुच्छिन्न यरोरनाये तत्राय स्यात् न अस्मिन्निति यात यरोर मास्मिन्नं मूर्च्छिं एयरोरे
नानासधो तेहनो नाग काटनेविदे अग्नि उपजे १८ अयपुत्री आहतु न भवति इन्द्रिये पादो आत्मा अमूर्तत्वात् ए आत्मा इन्द्रियेकरि नदीने
अमूर्तपणायको अमूर्त्तिभावादपि स्यात् नित्य मूर्त्तिर्नहीहे अरुपीहे इद्रीपपाच्छे पर नित्ययासतीहे अथात्म मित्यादितरेषु सत्कारणको
नियतो नियतो अस्य बन्ध कर्म सत्र्येय आत्मसबधोया आत्मनिविषे रक्षी के मित्या त्वादि तेहनो हेते निये करिकर्मनी बधयाये तथाहि अरुपी लीवोपि
रूपिकर्मादिभाजन तथा संसारवर्तुर्गति भ्रमणरूप तरेतु तत् कारण वदति कमयय १८ यथा यत् धर्मसम्पत्तुत्वं अजातत अहे धर्मरूपसम्पत्तु

०
 भव भ्रमणस्य कारण बन्ध वदन्ति यावत् शरीरेण बन्ध स्तावदय जीवो भव भ्रमणं करोतीत्यर्थः यदुक्तं वेदातिपि कर्मवत्सो भवेज्जीव कार्गसुक्ताभवेत् शिव इति १८ जहावर्यं धम्ममयाणसाणा पावं पुराकम्मकासिमोहा उरुभमाणा परिरक्खयता तन्नेव भुज्जीविसमाय रामी २० हे तात यथा पुरा पूर्व मोहात् तत्वस्य अज्ञानात् आवा मर्थे वयं पापं पापहेतुकं कर्म अकार्यं आवां किं कुर्वणी धर्मं सम्यक्तादितत्वं अजानानो पुनः कथं भूतो अवरुध्यमानो गृहान्निः शरणं अप्राप्यमानो पुनरावां कथं भूतो परिरुध्यमाणो साधु दर्शनाहार्यमाणो पुरा इंद्रगो आवां अज्ञात तलौ पापकर्म परायणो अभूव तत्यापं कर्मभूयः पुनर्नैव समाचराव न कुर्वः इत्यर्थः २० अभ्याहयमिलोगमि सब्बो परिवारिए अमीहाहिपडन्तीहिं गिहिं स नरइलमे २१ भी तात अस्मिन् लोके जगति आवां गृहे गृहवासि रतिं न लभावहे कथं भूते लोके अमीषामि अवश्यं भेदिकाभिः शस्त्र धाराकाराभिः पतन्तीभिः आगच्छन्तीभि अभ्याहते पीडिते पतन्तीभिः शस्त्र धाराभिः कदर्थिते पुनः कथं भूते लोके सर्वतः सर्वासुदिनु परिवारिते परिवेष्टिते वा गुरादौ पतित मृगवत् दुःखितौ

पुराकम्म सकासि मोहा । उरुभमाणा परिरक्खयंता तन्नेव भुज्जीविसमायरामो ॥२० अभ्याहयंलि लोयंमि सब्बो परिवारिए अमीहाहिं पडती हिंगिहंसि नरइलमे ॥२१ केण अभ्याहओ लोओकेणवा परिवारिओ वावाअमीहा

अजाणतायका पुरापूर्वं पापकर्मकृतवती मोहात् अज्ञानात् पाच्छिन्नाभवनेविये अन्हे पापकर्मकोधा ज्ञानपणायको सेवके रध्यमानाः साधारणमाणाः सेवकेरुंधोजताथकाराखितायका तत् पापकर्म भूयोपिन समाचरामः ते पापकर्म अरुं वली नहीं करं २० अभ्याह ते पीडिते कर्मभिः लोके किये करोने सर्वलोक पीडाके सर्वतथ परिवारिते वेष्टीते सघलेइ वोटीके अबंध्य गस्त्रादिभि पतंतोभिः अतितीखानहीं लनहीए सस्त्रपडेके गृहेपु रतिं

स्व २१ तदा पुरोहितोऽपृच्छत् केण अभ्राह्मणे लोभो केणवा परिवारित्री काथाअमीहावत्ता जायाचिन्ता परोडु मे २१ हे पुत्रो केन लोक अभ्याहृत वा श्रयवा केनाय लोक परिवेष्टित वा श्रयवा का अमीषा अवश्य गेदिका यस्त धारा लक्षा हे पुत्रो अह इति चिन्ता परो भवामि २१ तदा पुत्रो प्रत्येक प्रग्रानो उत्तर वदत मञ्जुणाअभ्राह्मणे लोभो जराए परिवारित्री अमीषारयणी दुस्ता एवत्ताय वियाणह २२ हे तात एव एव अगुना प्रकारिण जगत् जानीहि एव मिति कथ तदाह लोकीय सुगरूपो मृत्युना व्याधिग अभ्याहृत पीडित स च मृत्युहि सर्वस्य जन्तो पृष्टेधावति जरया हृदलिन परिवेष्टित जोर्यते ग्रोर अनयेति जरापलित मात मिह जरानीथते बलवीर्यं पराक्रमणां हानि रेवजरा तथा सर्वे जगत् परिवेष्टितमस्ति तथा एव मृत्युजंगलन्तु घातयति न केवलारात्रय एव भवन्ति अय रात्रि ग्रहण भयोत्यादमायं स्त्री लिङ्ग ग्रहस्य अमीषा इत्यस्योपमार्थं ज्ञेय २२ जाजा बुध इरयणी नसापडिनियत्तई अहम् कुणमाणस अफलाजगितरार्द्रो २३ हे तात याथारजग्यस्तत्त्वम्बवादि यसायव्युत् क्रामन्ति तास्वार जन्मोन प्रति निवर्तन्ते पुनर्यापुव्यनायान्ति अधर्मं कुवत पुरुपस्य रात्रयो दिवसाय अफलागिरयका यान्ति तस्माहर्माषरेण सफला विधेया इत्यर्थ २३

दुस्ताजाया चितापरोहुमे ॥ २२ मञ्जुणाअभ्राह्मणे लोभो जराए परिवारित्रीअमीषारयणीवुत्ताएवताय वियाणह ॥ २३

समाधि न लभामहे घने विपे अन्हे रतिसमाधिनहोपामाका २१ पिता आह केन पीडोतालोक कि एलोककिणिपीडोके केनवा परिवारित्री वेष्टीत केने वधणे सषलेवोव्याछे अमीषा यस्तुल्यकाप्रोक्ताकुण सफल भद्राणि कही हे जाती अह चितापरोभवामि हे पुत्रह चितातुरहाड कु २२ मृत्युना पीडितोलीक मरणेलोक पोथाछे जरयापरिवेष्टीत जराह वोव्याछे अमीषा रजस्य प्रोक्ता सफरा शास्त्रनी श्रेष्ठितरात्रिकही भो तात एव जानीत दिवसजेजाइ ते पणिआउलु घटावेछे २३ या यागच्छति रजनी जे जे रात जाइके न सापडोनीवर्तते ते पाछोलेय ले गही अधर्मं कुर्वन्त

तदेव पुनरप्याह तुः जाजा वच्च इरयणो नसापडि नियत्तई धम्मं तु कुणमाणस्स सफलाजन्तिराइंओ २४ पूर्वाइस्यार्थस्तथैव हे तात धर्म कुर्वाणस्य पुत्र
 षस्य रात्र्योदिवसांश्च सफलायांन्ति धर्माचरणं विग्नानिः फला इत्यर्थः प्राकृतत्वात् वचनव्यत्ययः नृजन्मनः फलं धर्माचरणं धर्माचरणं हि व्रतं विना
 नस्यात् अतश्चावां व्रतं गृहीथावः नृजन्मनि रात्रि दिवसाम् स फलान् कुरिथावइति भावः २४ तद्वचनान्त्व बोधो भृगु पुरोहितः पुली प्रत्याह एगओ
 सखसित्ताणं दुहओी समत्त सञ्जया पञ्चाजायागमिस्सामोभिव्वमाणे कुले कुले २५ हे पुली इयञ्चइयञ्चइये आवां युथाञ्च सर्वेपि सम्यक्ता संयुताः सन्तः
 एवातएकत्वं गृहवासि सम्यक् सुखिन उषित्वागृहस्वा अमं संसेव्य पथाहृषावस्थायां गमिथामः प्रामनगरारण्यादिषु मास कल्पादि क्रमेण प्रव्रजिथामः
 इत्यर्थः किं कुर्वाणाः कुले कुले गृहे गृहे अन्नतिचं छ हत्था गोचर्ययाभिस्यमाणाः भिचां गृह्णन्तोभिव्वमीभि विष्याल इत्यर्थः २५ तदा तो पुली जनकं
 प्रत्याह तुः जस्सत्थिमच्चुणासक्ख जस्सवत्थि पनायणं जीजाणइनमरिस्सामिसीहु कइं सएसिया २६ हे तात हु इति निसयेन स एव पुरुषः इति

जाजावच्चइरयणी न सापडि नियत्तई अहम्मं कुणमाणस्स अफलाजंति राइंओ ॥ २४ ॥ जाजावच्चइरयणी नसा
 पडिनियत्तई । धम्मं च कुणमाणस्स सफला जंतिराइंओ ॥ २५ ॥ एगओ संवसित्ताणं दुहओी संमत्त संजुआ । पञ्चा

जीवस्य अर्थं करता जीवने निःफलायांतिरात्रयः निःफला जायंते रात्रि २४ या या रात्रिर्गच्छति सा रात्रिः सफलं जाति सफलजाइच्छे २५
 अथ पिताआह एक गृहवासे स्थित्वा एकठा घरमाहें रहेंके पितारी पुली च सम्यक्तादि व्रतसहिताः पिता वेदा सम्यक्तादि व्रतलेइंने घरे रथा पञ्चात्
 भो जाती गमिथामि पछे आपणजास्सा कुले २ गृहे २ भिचा मलभमाना घरि २ भोक्सांगासाप्रका २६ यस्य घरस्य मृत्युना. सहसस्य सैती चस्ति

कांति इति प्रार्थयति सुपदति स्त्र आगामिदिने प्रभाते इदं स्थात् अद्यनजात तर्हि किं कल्पेस्यादित्यर्थ इति सूचितयति स इति कः यस्य पुरुषस्य मृत्युनासहकालेन सह सुख्य मित्वत्वं अस्ति य एव जानाति मृत्युर्मंसखावर्त्तते च शब्दः पुनरर्थं पुनरर्थस्य पुरुषस्य मृत्यो पलायन अस्ति य, पुरुष एव जानाति मृत्युर्मे मम किं करिष्यति यदा मृत्यु, रायास्यति तदाश्च प्रपलाय्य कुचचिद्वन्यवयास्यामि अहं मृत्यु, गोचरो न भविष्यामि पुनरर्थ एव जानाति अहं न मरिष्यामि अहं चिरञ्जीवी अस्मि २६ अन्ने व धन्य पडिवज्जयामी जहि पवत्रान पुणभयामी अथागय नेवय अल्लि क्खिषी सदाखमन्ने विणइत्तु, राग २७ भो तात अद्वैयत धर्मं वयं प्रतिपद्यामहे आर्पत्वात् किं क्खत्वा रागं अहं खजनदिपुं प्रेमविण इत्तु इति विनीयस्फोटयित्वा कीदृश धर्मं ने इति नो अस्माकं अदा चम अदया तल्लरथाचमो योग्यस्स यतो हि साधु धर्मं अहं अहं सर्वथा निवार्यं तल्लरथियं कार्यो तथा हीनो हि साधु

जाया गमिस्सामी भिक्खमाणा कुले कुले ॥२६॥ जस्सत्थि मच्चु, यासक्खं जस्सवत्थि पलायणं जीवाणइत्तु मरिस्सामि ।
सोहुक्कक्खे सुएसिया ॥२७॥ अज्जीवधम्मं पडिवज्जयामी जहिपवत्तान पुणम्मवामी । अथागय नेवय अत्थिकिंकिं

जह पुरुषने यमस्य मीताइइवे यस्य अस्ति मरणत् पलायन जेहने मरणथीनासथानी अत्तिके यो जानाति न मरिष्यामि जेजाण्हेह नइी मण स कांति वाइति इदं कल्पे करिष्यामि ते वाइए एहं काले कामकरीस २६ भो तात अद्वैयधम्मं प्रतिपद्यामः अइी तात अहं अजइजधम्मं अगीकार करस्यां य प्रपत्ता पुनर्नभवाम जे धर्मं अगीकारकीयाधकांवल्लो ससारमाहिन्हीअवा विषयं सोइयादिनेव अस्ति किंचित् अयासं प विषयं सखनीअ प्राप्तिकाइ नयी जीव ससारमाहिफोइता अथाभोगव्याइे अदा अभिलाषमध्ययुक्ता नो अस्माकं अमारी अइाइे रागकोइवानां २७ हे पुत्रो प्रज्ञीणपुतस्य

सुखी भूत्वा ब्रह्मले प्रधान मार्गं प्रब्रज्यारूपं मोक्षमार्गं गमिष्याव २० भुत्तारसाभीद्र जहातिणैवञ्चो न जीवियद्वाप्रजहाति भोए लाभं अलाभं वस
हृद्य दुक्खं संक्खमाणी चरिस्सामि मोयं २१ अथ भृगु ब्रह्मणीं प्रत्याह भीद्र इति हे भवति हे ब्रह्मणिरसाः शृङ्गारादयो भोगाद्य भुक्ताः सत्तीनिइति
नीऽस्मान् जहतित्यजन्ति वयो यौवनं अपित्यजति हे ब्रह्मणि भोगान् जीवितव्यार्थं न प्रजहामि किं तु लाभं च पुनरलाभञ्च पुनः सुखञ्च पुनर्दुक्खं
संक्खमाणः समतयाईवमाणः समभावेन पश्यन् अहं मौनं चरिष्यामि मुनेः कर्ममौनं सुनयो हि लाभालाभे सुखे दु खे जीविते मरणे तथा शत्रोमिले
तणेस्त्वैषे साधवः समचेत्तस १ यस्मिन् साधुपदे रसेषु जीवितव्येषु निःसृहलं तन्मुनित्वं अंगीकरिष्यामि ३१ साह्रतुमंसीयरियाण संभरे कुन्नील्वहंसी
पडिसुत्तगामी भुंजाहि भोगादमए समाणं दुक्खं खुभिक्खायरिया विहारी ३३ अथ पुनर्ब्रह्मणीप्राह हे पुरोहितलं मयासमं भोगान् भुंख्खह इत्यलं

मुता कामगुणेपकामं पच्छा गमिस्सामीपहाण मगं ॥३१॥ भुत्तारसा भीद्र जहाद्दणेषुठं न जीवियद्वा पहयामि
भोए । लाभं अलाभंच सुहंच दुक्खं संक्खमाणी चरिस्सामि मोणं ॥३२॥ साह्र तुमंसीयरियाण संभरे कुन्नीवहंसी

कामभोगान् प्रकामं सेवामहे तिणेकारणिए कामभोग आपणभोगबीद्र अतिसेवये पयात् गमिष्यामि आश्रयिष्यामः प्रधानमार्गं मुक्तिमार्गं पच्छे आपण
आदरस्यां प्रधानमार्गं मुक्तिमार्गं मोक्षमार्गं २१ रसाः विधयाः भुक्ताः हे भद्रं प्रियेनीऽस्मान् वयो यौवनं रूपं त्यजति हे ब्राह्मणी भोग भोगव्यां हतां
यौवनवयजादरेह नही मानजायके ऽवस्था न जीवितार्थं त्यजामि भोगान् असंयमज्जीवितार्थं न पर भवभोगवांकाए कामभोग पेटभराने अर्थे इह
लोकार्थे नही छोडता लाभं अलाभ पुमं सुखं दुक्खं लाभं अलाभ सुख दुख इथन् पथन् प्राणान् चरिष्यामी मुनिभावं भोगवतीषकीजीव परिव्या

पुत्राय पर्ययमङ्ग तंदि कहि नाणुगमिस्समेका ३६ पुत्री हो अपि पतिभृगु पुरोहित एते तयोपि महा इति मादलयित्वामलम्बन्धि स्त्री ह जाल भोगाभिचङ्ग जालब्धिवापलन्ति परियान्ति परिसमन्तात् यान्ति समयमाध्वनि चरति इत्यर्थ एतेके इव क्रोधा क्रोच पचिणीहसा हस पचिणी वाते इव यथा क्रोचपचिणी हस पचिणय ततानि विक्रीणीनिजालानि दलयित्वाभिलासमक्रामन्त नाना प्रदेगात् उल्लङ्घयन्तो नभसि परियान्ति गगने परि यान्ति स्वेच्छयाविशरन्ति अत्र हि विषय सुख जालोपम निरवनेपत्वात्साधुवर्त्मनम कल्प उत्तमजीवानां क्रोच विहङ्गह स विहङ्गभोपमान यदा एते तयोपि मान्यक्ता व्रजन्ति तदा अह एकाकिनीतान् कथ न अनु गमित्यामि अपि तु अनु गमित्याम्येव ३६ पुरोहित त स सुय सदार सुवाभिनिकुम्भ पहायभोए कुटम्बसार विठलुत्तमन्त राय अभिक्व ससुवायदेवी ३६ अथ यदा च तुषा प्रव्रज्यायां मनोभूत् तदा कि अभूत् इत्याह राजान त इपु कारिण देवीकमला यभीष्ण थार २ समुवाच सम्यक् प्रकारेण ग्रिय्या पूर्वकमुवाच कि क्षाला पुरोहित भृगु स एत पुत्र सद्धित सदार स पत्नीक

समद्रक्कमता तथाणि जालाणि दलित्तुहसा । पलेति पुत्राय पर्ययमङ्ग तेह कहनाणु गमित्तमङ्को ॥३६॥ पुरोहि यत
ससुय सदार सोच्चाभिनिक्रामपरायभोए डुडवसार विउत्तमतराय अभिक्व ससुवायदेवी ॥३७॥ वतासी

भिषाचथा चरतिइ स्या धोरपुरुष भिष्याचथाविचरे दीच्यानेई सुकृती आहारलोइ ३५ अथ व्राह्मणी प्रबुढा आह यथा नभसि आकागे क्रोचपचिण जिम आकायनेविपे क्रोचपखी यथा तानि रचितानि जालानि दर्नत्वाह सा गच्छन्ति क्रोच पखियाने हसाने जालमाध्याहे ते जालतोडीने आत्मार लडोजाइ तथा परियाति गच्छ ति पुत्री पतिप ममतिमए माहरावे विटाएभरतारभोग जालकीडीनेजाइहे तान् प्रति अह एका कथनागुगमि

भोगान् प्रहाय प्रकपेण्यत्वात् पुनर्भुलं विस्तीर्णं उत्तमं तं कुटम्बसार प्रहायत्यत्वात् कुटम्ब खजन वर्गं सार धनधान्यादिकं उभयमपित्यत्वात् अभिनिः
क्राम्य गृहान्निर्गत्य प्रव्रजित इति श्रुत्वा तस्य पुरोहितस्य धनादिकं गृह्णन्त राजान राज्ञी ग्राह इत्यर्थं ३७ वन्तासी पुरिसीराय नसीहीद्रूपससिञ्ची
माहृणेष परिचत्तं धरुं आयात्रीसिच्छसि ३८ राज्ञी किं उवाचिय्याह हे राजन् यीवान्ताशोसपुरुषः प्रशंसनीयो न भवेत् ज्ञाध्वी न भवेत् हे राजन्
ब्राह्मणे न परित्यक्तं धनं ल आदातुं इच्छसि प्राप्त्येन त्यक्तं धनं वान्ताहार सद्य गृहीत्वा त्व ज्ञाध्वी न भवियसीत्यर्थः वां तं वदनादुद्गतं आहारं
अन्नातोत्येवंशीलीवान्ताशो वान्ताहारभीक्ताइत्यर्थं ३८ सव्यं जगद्भद्रं तुहं सव्यं पा पिधण भवे सव्यं पिते प्रपञ्चत्तनेवताणायतं तव ३९ हे राजन्
यदि सर्वं जगत्प्रस्तीपि भूलोकस्तव भवेत् भवायत्तः स्यात् वाय वा सर्वमपि धनं रजतरार्णरजादिकं अपि तद् भवेत् तत्सर्वं जगत् पुनः सर्वं अपि
धनन्ते तव अपर्याप्तमेवेत् तव इच्छा पूरणाय असमर्थं स्यात् यत इच्छया अनन्तत्वात् पुनस्तत्सर्वं जगत् तत्सर्वं धनं त्राणाय नरण भया द्रवणायन

पुरिसोरायं नसीहीद्रूप संसिञ्ची । माहृणेष परिचत्तं धणं आयात्री मिच्छसि । ३८ । सञ्जगं जद्रुहंसव्वंवाविधणं
भवे । सव्वं पिते अपञ्चत्तं नेवताणायतंतव । ३९ ॥ मरिहिसिरायं जयातयावामणोरमे कामगुणे पहाय एक्कोहु धम्मो

थामि तेसाथेहं पण्णिजाइसिएकलीरहीनेस्युकणं ३६ तं पुरोहितं सुतकलत्रसहितं ते पुरोहितने वेटावायडिसाथे श्रुत्वा गृह्णात् निर्गत्यभोगांस्त्वत्ता
सुणेनेदीख्यालिइक्के भोगच्छांडीने धनधान्यादिगृह्णन्तं स्त्रीजुर्वतं धनधान्यं त्रगीकरताराजाने अभीक्षणं पुनः सम्यग् उच्यते कमलावती देवीहीवे राजाने
वारंवार कमलावती देवी कहे ३७ भोरान् वमनभीजी पुरुषः अहो राजा वम्यो आहारजे पुरुषकारे स न भवति प्रसंसनीयः ते पुरुष प्रशंस वा योग्य

बन भवेत् यदि जगत् धात्र इच्छा पूरणाय अथ च नरपा द्रव्याय असमर्थं तदा किं ब्राह्मण परित्यक्त धन ग्रहणेतित्यर्थं ३८ मरिचिसिराय जया तथा वामणोरभे कामगुणोपहाय एको दु धर्मो नर देवताण न विज्जद्र ग्रथमिहे इकिचि ३० हे राजन् यदा तदा यस्मिन् तस्मिन् काले मनोरमान् मनो हरान् कामगुणान् प्रहाय प्रकंपेण यत्कामरियसि प्रियमाणस्य पुरुषस्य च धनादि साथे नभवति हे नरदेवदु इति निययेन एकोधर्म एवनाण गरण विद्यते इह जगति इह सुखी वा जीवस्य अथत् किंचित् त्राण न विद्यते ४० नाह रमे पक्विणि पजरे यास ताण छिन्ना चरिणामि मोण अकिचिणा उज्जुकडा निरामिसा परिगहारअनि अत्त दोसा ४१ अह इहेति अथाहार हे रान् अह नरमे रति न प्राप्नोति वा गच्छ इवार्थं पचिणी पजरे इव यथा पचिणी पजरेरति न प्राप्नोति अह सन्तानच्छिन्नासती मौन सुनीनां आचार चरियामि करियामि छिन्न सन्तान खे इ सत्ततिर्ययासाक्खिन्न सन्ताना पुन कथ भूता सतो अह अकिचिना स चित्ताचिसिधिविध परियहरहिता पुन्नुह कथ भूतासती ऋजुमायारहित छत तपो धर्म ययासा ऋजु कता पुन कथ भूतासती निरामिपासती नि क्लान्ता आमिपात् विपयादिपदार्थात् इति

नरदेवताण । नविज्जई अत्तमिहेह किचि ॥४०॥ नाह रमेपक्विणि पजरेवा सताणछिन्ना चरिणामिमोण । अकि

न इह ब्राह्मणेन परोत्वक्त ब्राह्मणेच्छीञ्जीजद्र धन वित्त गृहीतु मिच्छसि जेधन तेहने लेतु वाच्छे ३८ सर्वं जगत् यदितव सर्वजगत् तुभनेदीजे अथवा स्वर्णादिक सर्वताहरेदुये सर्वमपि तव अपर्याप्त अस्पूर्णं सर्वति अपर्याप्ततोहितोनि न स्यात् रक्षणाय तत्सर्वं तत्र धनएधन तुभनेराखी सकेनही ताहरीत्वथापूरो न हीइ ३८ हे रानन् यदा तदा कालेषु मरियसि हे राजन यदा तदाकानितु मरोग मनोरमान कामगुणान् त्यक्त्वा मनोहरए कामभोग छोडीने हे नरदेव एकधम्मएव ताण गरण हे राजा एकधम्मजीवनेराखणहारखे दुर्गति पडताने न विद्यति अन्यत् इहलोकि किंचित् बीजी वरु

निरामिषाविषयप्रदयः पदार्था हि विषय जीवानां गृह्णितुं त्वादात्मिणीपमा एतस्मादहं निर्विषयासती पुनः कथं भूतासती अहं परियहारम्ब निहृत्तदीया परियग्रहश्च आरम्बश्च परियग्रहारश्चौ ती निहृत्तौ दीयी यस्या सा परियग्रहारम्ब निहृत्तदीया ४१ दवगिणा जहारन्ने डज्जमाणि सुजं तु सु अन्नेसत्तापसो यन्ति राग दीसवसप्रया ४१ अपरं यथा यरणी जीवेषु दक्षमानेषु सत्सु अर्थे अदग्धाः सत्ताः प्रमीदं ते हर्षिताः भवन्ति मनसि एवं जानन्ति एतेज्वलन्ति तदाज्वलं तु वयं अदग्धास्ति गसः कथं भूतास्ते रागद्वैयरीयप्रताः रागद्वैयप्रस्ताः ४१ एव मेव वयं मूढा काम भोगिसु सुच्छिया डज्ज माणं न बुज्जामी रागदीसगिणा जगं ४३ एवं अमुनैव दृष्टान्ति न वयं मूढाः अविचिकिन काम भोगिसु मूर्च्छिता. सन्तः रागद्वैपाग्निनजगत् दद्यमाणं न बुध्यामहे नजानीमहे वयमिति बहुवचनात् बह्वोऽस्मा दगाजोवा प्रति ज्ञापनार्थं ४२ भोगि भुचावमिस्साय लडु भूय विहारिणी आमीयमाणा

चणाउज्जु कडा निरामिसापरिगगहारंभ नियतदीसा ॥४१॥ दवगिणा जहारन्ने डज्जमाणिसु जंतुसु । अन्नेसत्ताप
मेयंति रागदीस वसंगया ॥४२॥ एवमेव वयंमूढा कामभोगिसु सुच्छिया डज्जमाणा ननुज्जामो । रागदीसगिणा

धर्मवोना जीवने रागवगान्हार सारणानोनथी ४० नाहरमेपजिणोश्च भवपंजरं जिम पयिपांजरा मांहे संतीय न पानेतिमहुं ए भवपांजरामांहरति नहीपायुक्कु संतति च्छिन्ना स्त्रे हरहिता चरिष्यामि मोनंहुं स्त्रे हेकरीरहित मोनन्नतआदरोदिष्यायहस्तावास लेईसे द्रव्यतो हिरण्यादिरहिताः कपायादि रहोताः विषयादिमुक्ताः द्रव्यरहित कपायरहित विषयरहित परियग्रहंभदोपरहिता परियग्रहं पने प्रारभदोपतिणेकरीररित्छे ४१ दवाग्निना यथाऽरथे दावानल अग्नि अटवीने वीपिनागीयकी दक्षमानेषु जतुषु दाभतायका जीवनेदेखीने अन्ये प्राणिनः प्रमीदयति तुयंति वीजाजीव आरथ

गच्छन्ति दियाकामकामा इव ४४ धन्यास्तेजो वा इव ध्याहार जे जीवा भोगान् भुजा पुनरुत्तरजाले वा त्वात्कला अर्थासाधवो भूवा ध्यामीदमाना साधारणीयायुटानेन सन्तुष्टा सन्तीगच्छन्ति विचरन्ति वाञ्छित स्थान त्रजन्ति ते जीवा के इव कामक्रमादिजो इवक्राम खेच्छया क्रमो विचरणे येयां ते काम क्रमा खेच्छाचारिण अप्रति बढविहारलेन यत्र २ सयमनिर्वाहस्तत्र २ यान्तीत्यायय पुन कथ भूतास्ते जीवा लघु भूतविहारिण नवर्वायुस्तद्रूतास्तदुपमा सन्तीविहरन्तीत्येव गीला लघु भूतविहारिण अथ वा लघुशासो भूतय लघु भूतो वायुस्तद्वत् विहरतीत्येव गीला लघु भूत विहारिण यायुरिवा प्रतिबढ विहारिण ४४ इमे यवबा फन्दन्ति ममहृत्यज्जमागया वयञ्च सत्ताकामिसु भविस्सामी जहाइमे ४५ हे आर्य इमे च प्रत्यक्षा शब्द रूपरसगन्धस्पर्शादय पदाद्या बडा नियन्त्रिता सुदृढी कृता ममहस्ते पुनस्त वहस्ते आगता अपि फन्दन्ति अस्थिति धर्म तया गल्वराइ

जग ॥४३॥ भोगेभोच्चावमित्ताय लहुभ्य विहारिणो । अमेयमाणा गच्छति दियाकाम कामा इव ॥४४॥ इमेय वद्या फन्दति ममहृत्यज्जमागया वयञ्च सत्ताकामिसु भविस्सामी जहाइमे ॥४५॥ सामिस सुललदिसु वज्जमाण निरामिस

नातेहने देखीने खुसोथाइ रागहे पवथगता रागहे पनेवसि पढायका ४२ एवमेव वय मूढा इम अन्दे मूलं कामभोगिणु मृच्छिता कामभोगने विपे मूच्छापाम्याहे दयुरान न बुडगामोनवेद याम दाभुताथकानथोजाणता रागहे पादिना जगदिसु रागहे पनी वथिपढायका न जाना ४३ पूर्वं भोगान् भुजा तत्र वाला पडलां भोग भोगवपके छाडीने अप्रतिबढ विहारिणीयतय हलूयाह चाथकावायूनीपरि अप्रतिवचयकी विहारकरे, ध्यामीद माना इर्पयुक्ता गच्छति हर्षसहितथकाजाइ दिजा पचिण इव खेच्छाचारिण जिमपखी आपणीइच्छाइकडे ४४ इमे प्रत्यक्षा शब्दादय वद्या राग

दृश्यन्ते सुरचित्ता अप्रियान्तीत्यर्थः यतादृगीषु गल्वरेषु कामेषु पञ्चावयं गत्वा सञ्जातान्तिता जाताः तन्मातृ एतेषु गल्वरेषु कः स्रेहः हे स्वामिन् आवां यथा इमे पुरीहितादयः चलानीजाताः यथा भविष्याम. ४५ सामिस कुलल द्विस वक्रगाणं निरामिसं आमिसं सब्यमुक्त्ताविहरामिनिरामिसा ४६ हे राजन् अहं सर्वं आमिषं अग्निगृहेतुं धन धान्यादिकं उज्जिताल्लता निरामिपात्वत्तसन्नासतो अप्रति व्रतविहार तथा विहरिष्यामि किं कृत्वा सामिषं आमिष सहितं कुललं गृहं अपरं पचिणं वा परैरिति अन्वैर्धमानं दृष्ट्वा सामिषः पत्नी हि आमिषाहारिपत्निभि पीञ्जते अथ वा सामिषं सस्पृहं भोजनाद्यर्थे नन्व्यं कुललं पचिणं परैर्धमानं दृष्ट्वा वतो हि पचिणो यदा गृह्यन्ते तदा तान् भक्ष्यं दर्शयित्वापागा दिना कथ्यन्ते आमिषाहारी गजुनिषु आमिषदर्शने नैव लोभयित्वाभीनवत् पथर्त सह आमिषेण आमिषरसाम्बादलोभेन वर्त्तते इति सामिषस्तं सामिषं ४६ गिञ्जीवमे उनचाणं कामे संसारवट्टिणे उरगोगुवनपासिब्व सारमाणी तणुं चरे ४७ हे राजन् त्वमपि विपयेभ्य गरमानः सन् तनुं स्वल्पं यतन याचरे. इति चरम विपयेभ्यो भीति पट्टे २ विधिया इत्यर्थः किं जला गृह्णीषमान् पूर्वोक्तसामिष कुलनीषमान् विपय लीलपान् जनेान्

आमिसं सब्यमुज्जिता विहरिस्वामि निरामिसा ॥४६॥ गिञ्जी वक्षेउ गञ्जाणं कामे संसारवट्टिणे । उरगो सुवन्न पासेब्व

द्वेपरचित्ता फंदंति स्थिरा न भयंति एकामभोग भली परिर राग्यायका धोरनहोर मम इन्ने समागताऽपि माह राहायनेमिषे आवायकाहे वयं पुनः कामभीगेषु आसत्ताः अन्हे कामभोगनिमिषे आसत्तद्ग्राहू भविष्यामः इदृगाः यदा पुरीहितादयः जिमणपुरीहितादिकद्वेवहे तिमहीस्थां अन्हे पिण ४५ सामिषं मांसयुक्तं कुललं पचिणं दृष्ट्वा मांससहोत पंगीनेदिष्टीने पंगीमानं निरामिषेण जे तामरचित पंगीने ते मांससहोत पंगीने पोडे मांसखोसीनीइ एवं आमिष धनवाव्याटि सब्यत्वात् इग आमिषसग्गिणं धनधाव्य छीउने विहरिष्यामि निरामिषा विपयरहिता निरामिषेषुआ

परकमा ५० एवंदे कमसीबुद्धा सत्वेधम्म परायणा जन्ममच्चुभउविगा दुवलसंत्त गविसिणो ५१ तिसुभि कुलजं एव असुना प्रकारेणते सर्वपि क्कनगोऽयु क्रमेण पडपि जीवा बुद्धा प्रति वीधं प्राप्ताः किं क्कत्वा विपुलं विस्तीर्णं राज्यं त्यक्त्वा च पुनर्दुस्वजान् कामभोगान् त्यक्त्वा कथं भूतास्ते सर्वे निर्विषया विषयाभिलापरहिता पुनः कथं भूताः निरामिया स्वजनादि सत्तरहिता पुनः कीदृगा निपरिग्रहा वागाभ्यन्तर परिग्रहरहिताः ४८ पुनस्तेजीवाः किं क्कत्वा प्रतिवीधं प्राप्ता सम्यं सम्यक् प्रकारेण धर्मं साधु धर्मं विज्ञाय पुनर्वरान् दुर्लभान् प्रधानान् कामगुणान् त्यक्त्वा कामस्य मदनस्य गुणकारित्वात् काम वृद्धिकरत्वात् गुणाः कामगुणास्तान् कामगुणान् यक् चन्दनवनितादीन् कामीदीपनीपधादीन् त्यक्त्वा अत्र पुनः कामगुण ग्रहण तेषां अतिगवल्याप नार्थं पुनः किं क्कत्वा घोरं अघोर पुरुषैर्दुरुचरं यथा स्यात् तौर्धं करोद्दिष्टत्तपो द्वादशगविधं प्रगृह्य भावतीक्ष्णकृत्य पुनः कथं भूता ते सर्वे घोर पराक्रमी घोरं पराक्रमं धर्मानुष्ठान विधियेषां ते घोर पराकमा पुनः कीदृगा ते सर्वे धर्म परायणाः धर्मधाने तत्परा इत्यर्थः पुनः कीदृगान्ते जन्म मृत्यु भयो

चद्रुता विडलं रज्जं कामभोगिय दुम्वए । निव्विसया निरामिसा निद्वेहानिपरिगहा । ४९ ॥ समं धम्मं विया
गित्ता चिच्चाकामगुणे वरे तवंपगिज्झ हक्खायं घोरं घोर परकमा ॥५०॥ एवंते कमसो बुद्धा सत्वेधम्म परायणा

दुस्वजन् वलो छीडतां दीहिला इस्या कामभोग छीड्या निर्विषयाः निरामिपाविषयत्णारहित वोपयरहित बुद्धा नीस्से हानिः परिग्रहाः स्से चरहोत परिग्रहं रहित इत्था ४८ सम्यक् धर्मं ज्ञात्वा साचाधर्मजांणेने त्यक्त्वा कामगुणान् वरान्वरप्रधान कामभोग त्वजीनेतपो गृह्णोत्वाययास्यात् तौर्धं करभापितं तौर्धं करनी भायोतपऽंगोकारकरोने घोर रोद्धः घोरपरकमो संतो चक्रुत् घोरपरकमीं करोने ५० एवं असुना प्रकारेण ते पडपौ जीवाः क्रमेण पुना

दिग्ना जन्मरण भोति भोता पुनस्ते सर्वे किं कर्तुं मिच्छन् दुःखस्यान्त गवेषिणा दुःखस्यान्त मोक्ष गवेषण मोक्षाभिलाषिण इत्यर्थं ५१ सासणे विगयमीहाण पुञ्चि भावण भाविया अचिरेण कालेण दुःखस्यन्तमुवागया ५१ पुनस्ते पडपि जीवा अचिरेण एवस्तीक कालेन दुःखस्य ससारस्य अस्स अवसान अर्थान् मोक्ष उपागता मोक्ष प्राप्ता कोट्टयास्सेविगत मोक्षानां वोतरागणां यासने तीर्थे पूव पर्वस्मिन् भवे भावणया सम्यक क्रिया भ्यास रूपया दादय विधमन परिणति रूपया भावितारजितात्मान ५१ अथ तेषां सर्वेषां पक्षां अपि जीवानां नामान्याह राया सह देवीए माहणोय पुरोहिन्धो माहणोदारगा चैव सव्वे ते परिनिव्वुडेत्तिवमि ५२ राजा इयु कारोदेव्या पट्ट राज्ञा कमलया सह ब्राह्मणो भृगुनामा पुरोहितो राष्ट्र पूज्य पुनर्वाह्मणो पुरोहितस्य पत्नी यया च पुनर्दारको ब्राह्मण ब्राह्मणो पुत्रो एते सर्वेपि परिनिर्हता मोक्ष प्राप्ता इति अह व्रवीमि इति सुधर्मास्वामीज

जन्ममच्च, भन्धो व्विगा दुःखस्यत गवैसिणो ॥५१॥ सासणे विगयमीहाण पुञ्च भावण भाविया । अचिरेणेवकालेण दुक्खस्यत सुवागया ५२॥ राया सहदेवीएमाहणोय पुरोहिन्धो । माहणी दारगाचैव सव्वे ते परिनिव्वुडेत्तिवमि ५३॥

इणा प्रकारेण जीवप्रतीवीधपास्या सर्वेऽपि धर्मपरायणा जाता तेसगलाद् धर्मेने विये तत्परइथा जन्ममृत्यु भयोदिग्ना जन्ममरणनाभयथोत्तमगाह्हे दुवडस्यतागवेषिणी मोक्षाभिलाषीण दुक्खनी अतकरवावाह्हे मोक्षवाह्हे ५१ यासने विगतमीक्षानां अर्हता जिनयासननेविपगत मोहइथाह्हे पूर्वजन्मभाव पायाभाविता पूर्वजन्मजातिस्मरण ज्ञानअपनीतिगी करीने आभाभावितह्हे सवेगजपनां स्तीकैनेवकालेन थोडाकालमाह्हि दुःखस्या त मोक्ष उपागता प्रीप्ता दुक्खमी अतकीधो सुत्ते पु हता ५२ राजादेव्या सह राजा रांणी ब्राह्मणथ पुरोहीत धमण पुरोहीत ब्राह्मणी दारको वा

ब्रह्मामिनं ग्राह ५३ इति इषु कारोय अथयन चतुर्दश सम्पूर्णं ॥१४॥ इति शोमदुत्तराध्ययन सूत्रार्थं दौषिकाया उपाध्याय शोचस्त्री कौत्सेर्गारं
 शिथ्य लक्ष्मी कौत्सिर्गणि शिथ्य लक्ष्मीवत्तमगणि विरचितायां इषुकारी यस्याध्ययनस्यार्थः सम्पूर्णं ॥१४॥ अथ पचदशं प्रारब्धाते ॥ चतुर्दशेऽध्ययनिन्दिनिदा
 नस्य गुणः प्रोक्त स च निर्निदान गुणी हि मुख्य ह्यत्याभिजीरेव भवति अतीभिर्जीर्लक्षणाहाह मीणश्चरिस्त्वामि समे च धम्म सहिए उज्जुवडेनिययाणच्छिन्ने
 सम्यवं जहेज्ज अकामकामो अत्रायएसो परिव्वएजेसिक्खू १ य एतादृश्यसन् परित्रजेत् अनियता अप्रतिवडं यथा स्यात्तथा विहरेत् विहार कुर्वात्
 सभित्तरुयते स इति कः यः पूर्वं मनसि एव जानाति अहं मीन सुनीनां कर्ममौनं साधु धर्मं चरियामि आमखं यहीकरियासि किं बाला धर्मं
 दशविधं पच्च महाव्रत दीचां समेयप्राय्य पुनयोदीचां गृहोत्वा सस्तव पूर्वपचात्तस्तवं परिचय कुटम्ब स्नेहं जहात् लजेत् पर कीदृशः सन् सहिए
 इति सहितः स्थविरैर्वेडु युतैः साधुभि सहितः साधुहिं एकाकीनतिटेत् इक्कसकश्ची धयोइत्युक्त्वात् अथ वा कयं भूतः सन् सहितः सन् स्वराहितं
 यस्य स स्वहितः आत्माहिताभिलाषी पुन कीदृशः उज्जुवडे ऋजु सरलहृतं मायारहित्तपो येन स ऋजु कृतः अगठानुठानकारीइत्यर्थः पुन कौट्टिशः
 निययाणच्छिन्ने छिन्ननिदान निदानशत्थरहित इत्यर्थं पुन कीदृशः अकामकामः न वियते कामस्य कामोऽभिलाषी यस्य स अगामकामः कामाभिलाष
 उमुयारिज्जं समत्तं ॥ १४ ॥ मीणां चरिस्त्वामि समेच्चधम्मं सहिएउज्जु कडेनिययाण छिन्ने । सयवं जहेज्ज अकामकामि

ब्राह्मणी आदोक्के जीव ब्राह्मणनविटविदं सर्वं ते पडपिपरोनिर्हता मीचप्राप्ताः सर्वोक्खए जीवमीणपास्यां ५३ इति श्रीचवदमा अध्ययननेत्रिवराजा
 इयुकारनी अध्ययनटव्वार्थसंपूर्णम् ॥ १४ ॥ अहं मीनं सेवियामिहं मीनं अंगोकार कर्णं इति चितयित्वा समिंचारित धर्मं प्राप्यचारित अगी
 कारकरीने अन्यः साधुभि सहितः रिजूसभाव निदान रहित अनिरा साधुसधाते सरलरूभादयकीनीयार्ण करोरहितनीयाणीनकरे स्वजनै सर

रहित पुन कोट्य अत्रापसौ अत्रतैवी यत्र कुने तस्य साधोस्तपोनियमादि गुणीन प्रातस्त्रय एष्यते आसादिक गृहीत वाञ्छते इत्येव ग्रील
अत्रतैवो य एव विध सभित्तुरियुच्यते अनेन सिद्धतयानि क्रम्यसिद्ध तयाविहरण भिक्षु त्वनिबन्धन प्रोक्त साधुना चतुर्भङ्गी यथा सिद्धताए निक्खमन्ति
सिद्धताए विहरन्ति सियालत्ताए निक्खमन्ति सियालत्ताए विहरन्ति सियालत्ताए निक्खमन्ति सियालत्ताए निक्खमन्ति सिद्धताए
विहरन्ति एय चतुर्भङ्गी उक्ता तत्र सर्वोत्तमासिद्धतयानि कुमण सिद्धतया पालन तच्च यथास्थासथा पुन राह १ रागो वरय चरे अलाटे विरएवेय
विययारत्तिय २ पचे अभिमूयसञ्चदसो जेकत्तिविनमुच्छिण सभिक्षू १ पुन सभिक्षु रित्युच्यते स इति क थोरगो परत यथा स्थासथा रागरहित यथा
स्थासथा चरेत् पर कोट्य सन् विरत असयम मागात्ति हत्त पुन कोट्य सन् वेदविदात्तरचित वेद्यते ज्ञायतेऽधोऽनेनेति वेद सिद्धान्तस्यास्य वेदन
विण् ज्ञान पेद्वित् सिद्धान्तज्ञान तेन आत्मारचितो दुर्गति पतनात् येन स वेदविदात्तरचित पुन कोट्य पत्रे प्राप्त हेयो पादेय बुद्धिमान् पुनर्य
अभि भूय परोपहान् जित्वा तिष्ठतीति अथाहार पुन कोट्य सर्वदर्शो सर्व प्राणि गण आत्मवत्पश्यतीति सर्वदर्शो पुनर्य कस्मि यिक्तचित्ताचित्तवत्
नि न सूचित अनोनप रचर्थ १ अहो स च्छ विदित्तधरे मुणी चरेलाटे निक्खमायगुत्ते अविगमणे असम्पद्धिडे त्रिकसिण अहियासए सभिक्षू ३ पुन

अत्रायएसी परिणए स भिक्षू ॥ १ रागोवरयचरे अलाटे विरए वेय वियाय रत्तियए । पन्ने अभिमूय सञ्चदसो

परिवय न करोतो कामाभिनापरहित सगास्य परीचय न करे कामाभीनाप रहितयको अत्रातकुल पश्यन् अनित्यत विहरे गाधु अत्रात लुग्गी
विये विचरे अनिजविहारियको १ रागरहित यथा स्यादेव विहरेत् लाट प्रधान रागरहित यको विदरे क्रोयाकरे विरत सजयात्तित आगमवेत्ता
आत्तरत्तु मसारथो विरत्तययाक्के सिद्धान्तजाण आपणाआत्मानि भलीरीतेराखेके प्राप्ता आत्मान पराजित्य सर्वदर्शो पण्डित आनानेजीते सर्ववर्त्तनी

राय धनपत्तियेव वाञ्छते ज्ञानेन साधुना चतुर्भङ्गी यथा सिद्धताए निक्खमन्ति

समिच्छुरित्युच्यते स इति कः य आक्रोशवधं वधश्च अनयोः स साहारः आक्रोशवधं वाक् तर्जनताडनं विदित्ता स कर्म फलं ज्ञात्वा धीरस्दा क्रोशवधादि सह न शोली मुनि वागुप्ति युक्तः सन् चरेत् साधु वर्त्मनि विहरेत् पुनः कीदृशः सन् लाडः साध्वशुष्टानेतत्परः पुनः कीदृशः नित्यं आत्मागुप्तः गुप्त असंयमस्थानिभ्योरचित आत्मायेनस गुप्तात्मा प्राकृतत्वा द्विपर्यय पुनः कीदृशः अव्यग्रमनाः अनाकुलचित्तः पुनः कीदृशः असं प्रहृष्ट आक्रोशादिषु न प्रहर्षवान् कथिलकदाचित् कर्मै चित् दुर्बचनैर्निर्भक्षयति तदा हर्षि तो न भवतीत्यर्थः पुनर्यः कृतस्त्रं समस्तं आक्रोशवधं अश्यास्ति सहते सम वृत्तिर्भवति स साधुरित्यर्थः ३ पं तं सयणासणं भद्रतासी उन्हं विविहं षट् समसगं अव्वगमणे असं पद्दिष्टे जेकसिणं अहियासएसभिक्वू ४ पुनर्यः प्रान्तं असारं अप्रधानं सयनं आसनं उपलक्षणत्वात् भोजनाच्छादिनादिकं भजिवासेवयित्वा पुनः शीतीयाञ्च पुनर्विधिष्व्दं समशकं रुधिरपानकरं जन्तु गणं सकलं प्राय अव्यग्रमनाभवेत् स्थिरचित्तीभवेत् पुनर्यः सम्यक् शयना सनभोजनाच्छादनलाभात् शीतायुप द्रव रहितस्थानलाभात् तथादंशमशकादिरहित स्थानलाभात् असंप्रहृष्टी भवति हर्षितो न भवति एतादृशः सन् दुःख सुखी भवति एतादृशः सन् एतत् सर्वं अध्यास्तेसमिच्छुरित्युच्यते ४ नी सार्कियमिच्छईने, पूयं नीवियव दणंगक्रीपसंसंसेसञ्जए सुव्व एतवस्सीसहिए आयगवेसएसभिक्वू ५ समिच्छुर्भवेत् स इति कः यः सत्कृतं सत्कारं आत्मनः सन्मुखं जनानां

जेकस्मिह विनमुच्छिए स भिक्वू २॥ अक्कोसवहंविदित्तुधीरे मुणीचरे लाटे निच्चमाय गुत्ते अवगमणे असंपहिह्ठे

जाणि जीवा जीवादिवस्तुनिमूच्छानकरोति साधु सचित्त अचित्त वस्तुपरि मूच्छानकरोति साधुकहीद्र २ आक्रोशवधं कर्मफलं प्रतिवध ज्ञात्वा आक्रोशनिर्भक्षे सारे कीदृ तो न करे क्रोध कर्मबंधगुं हेतुच्छे इमजाणी धीर क्रोप्रच्छाडि स मुनिः चरेत् प्रधानीनित्य असंयमस्थानिभ्यः गुप्तः सुनी विचरे वीहार करे प्रधानथकीजे असंयमनास्थानकर्तहथकी गुग अलगच्छे उद्विग्नमनाः संसारचिंतारहिताः मन आपणोठामिराखि संसारनी चिंता मांहि पयो नही

कृतम् संपूर्णं नियच्छति बध्नाति तादृशं नरं नारीं स्त्रीं सदा सर्वदा प्रजह्यात् कीर्थः येन पुरुषस्थ्यादिना कृत्वा स यमं याति येन कृत्वा मोहकर्मो
दयः स्यात् तं प्रति यत्प्रेक्ष्यन्ति सुखं तपोनिरतः पुनर्यस्तपस्वी तपोनिरतः पुनर्यः कौतूहलं स्थादि विषयं अथवा नारिकेंद्रजालानि कौतूहलं न चोपसेव्यं त स
भिस्तु रित्युच्यते ६ छिन्नं सरं भीममं तलिक्वं सुविणं लक्खणं दंडवत्यु विज्जं अंगवियारं सरस्सविजयं जीविज्जाहिं न जीवद्दं स भिक्खू ७ पुन स भिच्चु
रित्युच्यते सः कः यः इथादिभिर्विद्याभिर्न जीवति आजीविकां न करोति ताः काः विद्याः छियते इति छिन्नं वस्तादिनां मूपादिना दशनं अत्यादि
प्रज्वलनं कजल कर्दमादिना लिंपनं स्युनं इत्यादि शुभाशुभविचार सूचिका विद्या छिन्न मित्युच्यते यदाहि वस्त्रे नूतने किञ्चिद्विकारे सति विचारः
क्रियते यदुक्तं रत्नमालायां निवसत्यप्रराहि वस्तकीणे मनुजाः पार्श्वदगांत मध्ययोश्च अपरेपि च रत्नसां त्रयोशाः श्रयनेचा श्रनपादुकाश्च चैवं १ कज्जल
कर्दम गोमयलिप्ते वाससि दग्धवति स्फुरिते वा चित्त्वमिदं नवधा विहितेस्मिनिष्ट मनिष्ट फलञ्च सुधीभिः २ भोगप्राप्तिर्देवतांशे नरांशे पुत्रांसिः स्थादा
क्षसांशे च मृत्यु प्राप्ते सर्वांशेष्यनिष्टं फलं स्यात् प्रोक्तं वस्त्रे नूतने साध्वसाधुः इत्यादि विद्यया जीविकां न कुर्यात् स साधु पुनर्यः सरं इति स्वरविद्यां

सहिण् आय गविसण स भिक्खू ५ ॥ जेण पुणो जहाइ जीवियं मोहं वाकसिणं नियच्छेइ । नरनारिंपजहे सया तव
स्त्रीनय कौजहलं उवेइ स भिक्खू ६ ॥ छिन्नं सरं भीम मंतलिक्वं सुविण लक्खण दंडवत्यु विज्जं । अंगवियारं सरस्स

त्यजति संयमजीवितेन जे वातकरी संयमजीवित व्यकुटे ते वात न करे छांडीने कथायादिरूपं मोहनीयं संपूर्णं नेच्छती मोहनीयकर्मसर्वथा न वांछि
सर्वथा न करे नरनारीसंगप्रजहाती स तपस्वी पुरुष नारिनी संगच्छांडि ते तपस्वी कहेये छीडे सदा न च कुतूहलं करोति स भिच्चु कुतूहल तमासा

प्रयुक्ते स्वरहि पडज ऋयभगाधार मध्यम पञ्चमस्तथा धैवती निषध सप्ततची कण्ठीग्रया स्वरा षडजरौति मयूरी पञ्चमरागेण जल्पते पर श्रुत् इत्यादि
 यिया इत्यादि सङ्गीतगान्ध पुनर्भोम भूमी भवभोम भूकम्पादि ऋतु विना ह्रवादिफलन इत्यादि लक्षण इत्यादि विद्या पुनरातरिच अन्तरिचे आकाशे
 भव आन्तरिच उल्कापात धूमकेतु प्रमुख्याणा उदय विचार विद्या स्वप्न स्वप्नगत शुभाशुभलक्षण स्वप्नविद्या लक्षण स्त्रीपुरुषाणा सामुद्रिक शास्त्रीक तुरग
 गजादीनां ग्रानिहीव गजपरीचादिशास्त्रीक दण्ड दण्डविद्या वयदण्डादि पर्वस ख्याफलकथन वाशुविद्या प्रासादानां गृह्याणा विधारकथन वाल
 शास्त्रीक अङ्गविद्या शरीर स्पर्शनस्य नेतादीना स्फुरणस्य वा विचारोद्ग विचार शास्त्र पुन सरस्य विजय दुर्गा श्रगाली वायसतिसरादीना सरस्य
 विजयस्य सरस्य शुभाशुभ निरूपणाभ्यास य एताभिर्विद्याभिराजीविका न करोति सभिश्चुरित्यर्थ ७ नन्त मूल विविह विज्जचित्त वमण विरेयण
 धूमनेत्तमिणाण आठरे सरणन्ति गच्छियच्च त परित्राय परिव्वए समिक्खू ८ पुन सभिश्चुरित्युच्यते स इति क य एतत् सव परित्राय परिसमन्तात्
 भ्रात्वा परित्राय परिव्रजेत् साधु मार्गे चरेत् जाणियव्वानीसमायरितत्त्वा इत्युक्ते एतत् कि कि मन्त श्री प्रथतिक स्वाहान्त देवाराधन मूल मूल
 काराज हिमीगप पुण्यागरपु खादि गुण सूचक शास्त्र पुनर्विधिषि नाना प्रकार वैद्यचिन्तावैद्यकशास्त्रस्य श्रीपधचिकित्सालक्षणस्य चिन्तन वर्जयेद्विदत्त

विजयजो विज्जाहि न जीवद्द स भिक्खू ॥ ७ मत मूल विविह विज्जचित्त वमण विरेयण धूमनेत्त सिणाण आठरे

नकरेतेसाधू कहोजे ६ नखवस्त दतादीनाछेदनपडजातिराग वस्त्रादिछेदेवानालक्षण भूमिकपहोइतारातुटे उल्कापातह्वैआकाशनीवातकहे स्वप्नलक्षण दड
 लक्षण वासुविद्याप्रासादलक्षणस पुनविचारवत्तिसलक्षणपुरुषाणा वासुकविद्याधरप्रसाददेहरातेहनालक्षणपसुलक्षणघरलक्षणअगस्फुरण छ गालादिअदस्य
 अभ्यास अगफरकवांनोविचारशियालनावचनसय्दनीविचारय एताभि विद्याभि नजीवति सभिन्नु जेकीइएतलीविद्याकरीआजीविकानकरे ते सधुकहीजे ७

सूलो कुष्ठोमांसी ज्वरीघृतं इत्यादि पुनर्वसनं वमनादिकरणोपायं अथ वा वसन फलं ज्वरादीवसनं श्रेष्ठं तथा विरचनं विरेच गुण कथनं तदीपध प्रयोगचिन्तनं धूमो मनः शिलादि सबन्धी भूत चासनादिकः नेत्र शब्देन नेत्र संस्कारकं गुटी चूर्णादिकं स्नानं अपत्यार्थं मन्त्रीषधीभि संस्तृतजलै र्मूलादि स्नानं अथ वा रोगमुक्त स्नानं वा पुनः आतुरे इति आतुरस्य रोगादि पीडितस्य हा मातः इत्यादि स्मरणं आत्मनश्चिकित्सितं रोग प्रतीकार चिन्तनं परित्यजेत् एतत्सर्वं परिज्ञाय आत्मनः परस्य वा उभ यथा परिव्रजेत् साधु मार्गं यायादित्यर्थः ८ खत्तियगण उगाराय पुत्तामाहणभोद्वय विविहायसिष्पिणी नो ते सिंघय इसि लीग पूइयं तं परिन्नाय परिव्वए सभिक्वू ९ सभिलुरित्युचते स इति कः यस्तेषां गाथा पूर्वोक्तानां श्लोकः कीर्त्ति र्गथा एते भव्या पूजाइति एते पूजा श्रेण्याः एतेषां पूजा कर्त्तव्याः एतेषां कीर्त्तिकरणे एतेषां पूजाया उपदेशे च न कश्चित्तामः स्यात् साधुना एतेषां कीर्त्ति पूजन कर्त्तव्ये इत्यर्थः एतेके के ये चत्तियाः राजान तथा गणाः मक्कादीनां समूहाः पुनरग्राः कीटपाला राज पुताः राजकुमाराः ब्राह्मणाः प्रसिद्धा भोगिनी भोग वंगोद्भवाः अथ वा भोगिनीविषयभोक्ताः च पुनर्विधानाना प्रकाराः शिल्पिनश्चित्रकर सूत्रधार स्वर्णकारलीहकारादयो ये वर्त्तन्ते

सरगुतिगिच्छियंच । तं परिन्नाय परिव्वए स भिक्वू ॥ ८ खत्तिय गणउगारायपुत्तमाहण भोद्वय विविहाय सिष्पिणी

मत्तमूलिका विविध वैद्यचिता मतहरिणे गमेषि प्रमुख मूल जडो बूटो भांतीनीवेद्यपणानी चिंताकरे श्रीषधकाढाप्रमुखमनविरचनधूमप्रयोग स्नान श्रीषधदेईनवमनकरावे वीरचादीए गुदाइधूआदेई रोगमुक्तिने अर्थे स्नानकरावे आतुरे रोगादौमाटपीतादिस्मरणंआत्मनःचिगिच्छांरोग आव्या यकां मावापसंभारे एतलां पीताने रोग आव्याथकां न करे अने बीजाने पणिश्रीषधनकरे एतानि परित्यक्त्वा परिव्रजेत्सभिशु एतलां वांनाच्छांडि न करेते साधुकहोइ ८ चत्तियादि समूहं उग्र राजपुताः चत्तियना समूहकीटवाल राजपुताः राजानना वेटा ब्राह्मणभोगिनिथय ब्राह्मण नृपामाल्यादय

तान् परिभ्राय उभ यथा भ्रात्वा साधु साधुमार्गे परिव्रजित् ८ गिरिणीजे पव्वइएण दिट्ठा अपव्वइएणवसयुया हविज्जा तेसि इहलीइय फलट्ठा जोसयव नकरेइ सभिक्वू १० यन्तै गृहस्थै सह स्लोक फनार्थं सस्तव परिचय न करोति प्राकृतत्वात् तेसि इति तृतीयास्थाने पठ्यते ते गृहस्थे के ये गृहस्था परिव्रजिते नगृहीत दीक्षेण दृष्टा चय्यद् पुनरर्थे पुनरप्रव्रजितेन अगृहीतदीक्षेण गृहस्था अस्थितेन ससुता कृत परिचया ते सह भ्राताप सताप इह लोक स्वार्थायन कुर्यात् स साधुरित्यर्थं १० जङ्घिचि आहारपाथग विविह खाइ मसाइम परिसिलडु जीतन्तिविहेणनाण कम्मो मणवयण कायसुसम्भुडे सभिक्वू ११ सभिसुर्नभवति सक य परिसि इति परेय गृहस्थेभ्य आहार अत्रादिक पानक दुग्धादिक पुनर्विविध नाना प्रकार खादिनउज्जरादिक लघात इति तेन अग्रतपान खादिमन्वादिमादिना चतुर्विधेन त्रिविधेन मनोवाकाय योगेन न अनुकम्पते ग्लानबालादीन्

नोतेसि वयइ सिलोग पूय त परिभ्राय परिव्वए स भिक्वू ॥८॥ गिरिणीजे पव्वइएण दिट्ठा अपव्वइ एणवसयुया हविज्जा तेसिइहलीइय फलट्ठा जो सयव न करेइ स भिक्वू १०॥ सयणा सणपाण भोयण विविह खाइमसाइम

बोधनीपजोविन ब्राह्मण राजामेहेता आदेइने प्रधानादिक नोव चत्थियादीना वदति एतेभया ते चत्थियादिकानि प्रगसा न करे एमलापूजनीकळे एसववानाजाणोनेइडे करे नहो ते भोसुसाधूकहोइ ८ ये गृहस्था प्रव्रजितेन दृष्टा जे केइगृहस्थयतीइ दिव्यानेइने दीठाळे परीचयहअचीळे गृहस्था वस्थायासुपरिचोताभवतो अथवा गृहस्थावस्थानापूरा परोचोतळे तेपा इहलोक फलार्थं तेहस्यु इहलीकनेइर्थे य सस्तव परिचय न कुर्यात् स भिच्छु जे परिचयनकरे ते साधू १० ग्रयनायनपानभोजनापाटी वाजोठपाटीया आहारपाणी विविध खादिमन्वादीम परेय नानाप्रकारना खादि

न उप कुरुते कीर्थः य अग्रनपानखादिमस्वादिमाहारं लब्धा बालश्रद्धानां साधूनां तेनाहारेण सस्त्रिभागं न करोति स साधुर्नभवतीत्यर्थः अर्सान्ध्व भागीनहु तस्समीक्यं इत्युक्तेः पुन साधुः कीदृग् भवति मनो वाक्काय योगिन सुतरां संवृतः पिहितता श्रयद्वारः ११ सयणा सणपाणभोग्यं विविहं खाद्र मसाद्रमं परिसिं अदए पडिसेहि एनियंठे जेतत्यनपडस्राई सभिव् १२ पुनर्यः श्रयनासनपान भोजनं पुनर्वि विधं खादिमस्वादिमं परेण गृहस्थेन अदत्ते अथ वा गृहे साध्वी प्रतिषिद्धे सति तस्मिन् गृहस्थे प्रहेपं न करोति न प्रहेपि कीर्यः यदा कयित्साधुः कस्यचिद्गृहस्थस्य गृहेगतस्तस्य च गृह स्थस्य गृहे प्रभूतं श्रयनं श्रयथाश्च अग्रनं मीदकादिकं पानं खर्जूरद्राचादि पानीयं शर्करादि जलं प्राशकं तण्डुल प्रजालन जलं वा भोजनं तण्डुलदा ल्यादि पुनर्वि विध नाना प्रकारं खादिमं खर्जूरनालकेरगरिमादिकं स्वादिमं लवण एलाजाती फलतजादिकं वर्त्तन्ते परं स गृहस्थः साधवेन प्रद दाति अथ पुनर्निवारयति] रेभिद्धी अन्ननागन्तव्यं इति तद्वाक्यं श्रुत्वा इति न जानातिधिगुणं गृहस्थं दुष्टं यः प्रभूते वस्तुनिसतिमशं न ददाति

परिसिं अदए पडिसेहिण नियंठे जेतत्यनपञ्ची सद्दे स भिव् ॥१॥ जं किंचि आहारपाणं विविहंखाद्र मसाद्रमं परे सिं लहुं जोतंतिविहिणनाणु कंपेमण वयकाय सुसंवडेस भिव् ॥१२॥ आयामगंचेव जवोदगंच सीयंसो वीरंच

मस्वादिम गृहस्थनीं यांनीपनांछि आदिभ्यः प्रतिषिद्धी नियंथः यतोजाई जभारहा गृहस्थयोग्याजा परहो तुभने नहोयां नियंथ यः तत्र नप्रदं ख्येत् सभित्तुः इमसांभलीयती रीसनकरे कीपनकरे गृहस्थ उपरे ११ यत्किंचित् आहारपाणच जेजेई आहारपानीं विविधं खादिमस्वादिमंलब्धागृहस्थेभ्यः नानाभातिनाखादिम गृहस्थनाधरथकीयतीइं लोधाछि लब्धा गृहस्थेनः यः तेन आकारेण विविधेन नाशुकंपेत् न निंदयेत् मनीवाक्कायिससवृतं स

शोन सर्वदगो पन कोट्य उपयान्त कथारहित स्यात् सभिरित्युच्यते १६ असिप्य जीवी अगिहे अमिच्छे जिद्र दिए सब्बत्री विप्यमुक्के अणुक्क सादल्लुप्रप्य भक्खो चिच्चागिह एगचरे स भिक्खत्तिवेमि १६ स भिच्चुर्भवेत् स इतिक योत्तह द्रव्यभावभेदेन द्विविध त्यक्ता एक एकाको रागद्वेष रहित असहाया वा चरतोत्येक चर स्यात् कथभूत स अगिल्लजीवी शिलेन विज्ञानेन जीविते आजोविका करोतीति शिल्लजीवी न शिल्लजीवी अगिल्लजीवी चिनकरणादिविज्ञाने आजोवोकान करोतोत्यर्थ पुन कोट्य अत्तह न वियते ग्ह यस्य स अत्तह स्त्रीपरिचयरहित अथवा ग्हत्तस्ये सह परिचयरहित पन कोट्य अमित शत्रमितरहित पुन कोट्यो जित्तेन्द्रिय पुन कोट्य सर्वतो विप्रसुत्त वाद्याभ्यतर स योगादिप्रसुत्तो सयपरिग्रहरहित पन कोट्य अणकपाय मन्दकपायो इत्यर्थ पन कोट्य लक्ष्म्यभची लघूनि नि साराणि वल्लचणनि पावक कुल्लयमापादि प्रासुकाहाराणि तानि न्तोकानि भचितु योल यस्य स लघुल्य भचोनोरसस्तोकाहारकारोत्यर्थ अथवा लघुप्रासुकच तत अल्लच्च लघुल्य तदाहार भचितु योल यस्य स लघुल्यभचो अथ वा लघु चीणकभास चासी अल्लभचो च लघुल्य भचो इत्यह त्रवीमि इति श्रीसुधर्मास्वामीज बूस्वामिन प्राह १६ इति भिञ्जुलक्षणाध्ययन सपूर्ण १५ इति श्रीमदुत्तराध्ययन सूत्रार्थ दीपिकाया उपाध्याय श्रीलक्ष्मी कीर्त्तिगणि शिष्य लक्ष्मीवल्लभगणिविरचिताया

द्र दिए सब्बोविप्यमुक्के अणुक्कसार्द्धलहु अण्णभक्खी । चिच्चागिह एगचरे स भिक्खूत्तिवेमि ॥१६॥ भिक्खूत्तय

यात छिसारहित न कुत्तापि विरोधकारक स भिच्चु १५ शिल्लै यित्तादिभिर्नजीवति चीत्तामकरोवेचो आजोविकानकरे अणगार आमित्त जित्ते तिय सवतोविप्र सुत्त द्द द्विजोत्यादि वाद्याभ्यतर जेगाठिते हवीमकाणादि सल्लकपाय लघु अल्लजीवी थोडो कपाय थोडो जीमिक्के त्यक्तात्तह रागद्वेष रहित विचरत्त स भिच्च चरशोडोने रागद्वेषरहित विचरते साधु कहीजे १६ इति भिक्खू अध्ययन सपूर्णम् १५ श्रुतमया हे आयुफन हे चिरजीवी शिष्यमे

भेवनात् गुप्त सुरचित ब्रह्मचर्यं चरितुं सेवितुं शीलं यस्य स गुप्त ब्रह्मचारोऽस्थिरं ब्रह्मचर्यधारकं सन् सदासर्वदा अप्रमत्तं अप्रमादी सन् विहारं
 कुर्यात् यतो हि पूर्वं यं साधनं ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि शृणोति स साधुर्ब्रह्मचर्यपालनेऽस्थिरो भवति यदुक्तं सुखा जाणद कक्षाण सुखाजाणद पावग
 उभयपिजाणद सोऽथा जनेयत्त समायरे इति यत्वाजयुप्राह कयरेखुधेरेहि भगवन्ते हि दसवन्धवेर समाहिडाणापद्रता जेभिक्खु सुखानिसग्ग
 सञ्जमयहुने सम्बरवहुले समाहि बडुले गुत्ते गुत्ति दिए गुत्तवन्धयारी सया अप्य मत्ते विहरेज्जा हे स्वामिन् यानि ब्रह्मचर्यसमाधि स्थानानि भिक्षु साधु
 यश्रत् युत्वा अर्थत ह्यवधाय सयम वडुल सम्बर वडुल समाधि बडुल गुप्तो गुप्तेन्द्रिय गुप्त ब्रह्मचारी सदा अप्रमादी विहरेत् तानि खलु निययेन
 कतराणिकानि ब्रह्मचर्यं समाधि स्थानानि ते स्वविरैर्भगवद्भिर्दय्यं ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानानि प्रतिपादितानि यानि भिक्षु युत्वा नियम्य सयम वडुल

खलुतेधेरेहि भगवतेहि दसव भवे रसमाहिठाणापन्नत्ता जेभिक्खु सोच्चानिसम्मसजमवहुलेसत्रवहुले समाहि बडुले
 गुत्ते गुत्ति दिए गुत्तवन्धयारी सया अप्य मत्ते विहरिज्जा इमेखलुते धेरेहि भगवतेहि दसव भवे रसमाहिठाणापन्नत्ताजे

निगम्य अवधार्थं हियामाहे अवधारीने समाधि बडुल सजमपाले पापनेरोक्ता सवरबडुल सवरकरे समाधि बडुल आपणीचित्तामिराखे गुप्त
 गुप्तेन्द्रिय शरोरपचिंद द्वीगीपवीरान्ते गुप्तब्रह्मचर्यधारी गुप्तब्रह्मचर्यधारी सदा अप्रमत्तो विचरेत् सदासर्वदा अप्रमत्तयको विचरे २ कतराणि निय
 येन स्वविरोगणधरे ते यियपूखे हे पूज्यते स्थानकस्वविर भगवते दयवृद्धसेवनस्थान समाधीस्थानानि कथीतानि दशवृद्धाचर्यनास्थानकक्षा ३ अमुनि
 निययेन स्वविरैर् भगवद्भि ए निययस्यु स्वविरैर् भगवत दश वृद्धसेवन समाधिस्थानानि कथितानि दशविध वृद्धचर्यं समाधिस्थान कक्षा य भिक्षु

सम्बर बहुल गुप्त गुप्तेन्द्रियो गुप्त ब्रह्मचारी सदा अप्रमत्त सन् विहरेत् इति जम्बूखामिनः प्रश्नवाक्यं शुक्लासुधर्मास्वामी प्राह इमे खलु तेषिरेहि भगवन्तो हिं दसवभवेरसमाहिदृष्टाणा पनत्ता जेभिक्व सुचानि सम्भसंयमबहुले सम्बर बहुले समाहि गुप्ते गुप्ते दिये गुत्तवभयारी सया अप्पमत्ते विहरेज्जा हे जंबू इमानि प्रत्यचं वच्चमाणानि खलुनिधयेन तानिस्थविरैर्भगवन्निर्दशन्नृचर्यं समाधिस्थानानि शब्दतः शुत्वानि शस्य अर्थतोह्यवधार्यभिदुः साधुः संयम बहुलः समाधि बहुलो गुप्तो गुप्तेन्द्रियो गुप्त ब्रह्मचारी सर्वदा अप्रमत्तः अप्रतिबजविहारीसन् विचरेत् तानि समाधि स्थानानि निरूपयति तं जहा विविक्ताइ सयणासणा इंसे विज्जा सेनिगन्थेनी इंथो पसुपंडगसं सत्ता इस यणासणाइं सेविक्ताहवद सेनिगन्थे तद्यथा तानि यथा सन्ति तथा निरूपयामि हे जंबूसनिगन्थो भवेत् स इति क यो विवक्तानि स्तो पशु नपुंसकपंडगादिभि विरहितानि शयनानि पटिकासंस्तारकादीनि अर्थात् शयना

भिक्खु सोच्चानिसम्भ संजमबहुले संवरबहुले समाहिवहुले गुत्तेगुत्तिं दिये गुत्तवं भयारी सया अप्पमत्ते विहरिज्जातं ,
जहा विविक्ताइं सयणासणाइं सेविज्जा सेनिगन्थेनी इत्थीपसुपंडग संसत्ताइं सयणासणाइं सेविक्ता हवद तं

स्थानानि शुक्ला अर्थतो निसस्य संजम बहूले साधुचारिति या जेस्थानकनेसांभली संयमपाले आश्रवेकरीरहित धर्णी समाधिसहित गुप्तेन्द्रियः इंक्षी गुप्तकीधंछि नवगुप्ति सेवनात् नववृत्तचर्यनी वाछिपाले सदा अप्रमत्तो विहरेत् सदासर्वदा अप्रमत्तयकीविचरे तं जहा ४ विविक्तानि शयनासनानि फलकपादप्रोच्छनानिसेवते विविक्त कहतां एतलेवनेरहित उपाश्रयादिक सेवेतेनि अंथ साधू कहीये स्तिपसुपडके करीअना कीर्णं अब्याप्तरहीत नोस्त्रोपशुक्तोवव्याप्तानि शयनासनानि नहीस्त्रोतिरयंचनपुंसकेकरी शयनासन व्याप्तराछे शयनासनादी सेव्यमानस्य शयनासन सेवतायका

दीनां स्थानानि सेवित कायेन अनुभवेत् अथ श्रन्वयार्थं य स्त्री पशु पण्डकादि रहितस्थानानि सेवित सनिग्रन्थो भवेत् इत्यर्थं अथ व्यतिरेकेण धर्ममाह यस्मिन् सति यद्रवेत् सोन्वय यस्मिन् असति यत्र भवेत्स्यतिरेक व्यतिरेक दर्शयति नो इत्यो पशुपण्डगस सत्ताद् सयणासणाद् सेवित्ताहवद्रवेति गन्धे हे नवसूनिग्रन्थो नी भवेत् सक य स्त्री पशुपण्डकादिभि सेविताना शयनासनानां सेविता उपभोक्ता भवेत् इति यचन युत्वा शिष्य प्राह त मिति आथरियाह हे स्वामिन् तत् पूर्वाक्त कथ केनीत्यति प्रकारेणेति चे देव यदि मन्यसे इति शिष्येण प्रष्टव्ये सति आचार्य आह निगन्धस्सखलु इत्यि पशुपण्डगससत्ताद् सयणासणाद् सेवमाणस्सवभयारिस्सभचेरेसद्वावाकहावाविति गिच्छावा समुपज्जिजा भेयवालभेज्जलगाय वापा उणिज्जादीहका नियवारोगायक हविज्जा केवल्लिपसत्ताप्त्री धम्माप्त्रीभेज्जा तम्हाखलनो इत्यि पशुपण्डगससत्ताद् सयणासणाद् सेवित्ताहवद्रसे निगन्धे १ हे शिष्यखनु निययेन स्त्री पशुपण्डकादिभि स सत्तानिग्रयनासनानि सेव्य मानस्य निग्रन्धस्य ब्रम्हचर्यधारिणीपि साधोर्ब्रम्ह चर्येश्चा उत्यद्यते इमा स्त्री सेवेवानसं वै वा अथ वा अन्ये पा मपि स्तोपशुपण्डकादि सहित स्थाने स्थित ब्रम्हचारिण साधु दृष्ट्वा शद्वाडत्यद्यते कि मय एतादृशी विरुद्धाना सयना सनाना सेवी ब्रम्हचारो भवेत् नवा श्रामनसु ख्यादिभित्त्वन्तापहृत चित्ततयामिथ्यात्वी दयादेव स्त्री सेवने मैथुने नवलक्ष्य सूक्ष्म जीवाना बधोजिने प्रोक्त

कहमित्तिचेन्नाथरिआह निग यस्सखलु इत्यि पशुपण्डग ससत्ताद् सयणा सयणाद् सेवमाणस्सव भयारीस्स व भचेरेस

तिये करोस सत्त आकोर्ण व्याप्तसहित गयनायनादिसेवणहारहुवे नही ते निग्र थ साधुहुवे ५ आचाया आह गुरुकहेके निग्र यस्य निग्र थ साधुने निययेन खलु स्तोत्रोवपशुव्याप्ता निस्त्रोपग नपु सकसहित गय्यायनादि सेव्यमानस्य शयन आसन मेवतां सेव्यमानस्य ब्रम्हचारिण ब्रम्हचारोने ब्रम्हचये ब्रम्हचर्यने विपे गका ऊपले कखावाका ऊपले एयैव एव विधा स्वरुपाइति ख्यादीनां बांक्षाकिमितत्कण्टफलभावि विगतेच्छावेति समुत्पद्येत चारित्तस्य

तत्सत्यं वा इत्यादि रूपः संशय उत्पद्यते पुनत्रं ऋचारिणः कोक्षांस्त्री पशुपण्डकादिभि र्मैथुनेच्छा उत्पद्यते पुनत्रं ऋचारिणः साधीत्रं ऋचर्ये विचिकित्स उत्पद्यते मया वृहचर्यपालने एतावन्महकष्टं विधीयते तस्य वृहचर्यकष्टस्य फल भविष्यति नवा तस्माद्दरमे तेषां सेवनं एतेषां सेवने नतु सांप्रतं मम सुख जायते एतादृशीमति सशुल्यद्येत वा अथ वा भेदञ्चारित्रस्य विदारणं विनाशं लभेत् वा अथ वा उन्मादं कामिन पारवश्यं प्राप्नुयात् वा अथ वा तादृशी स्यादि सहितानि स्थानानि सेव्य मानस्य साधीर्दीर्घकालिकं प्रचरकाल भाविस्त्यादि सेवनाभिलाषील्कपंत आहारादौ अरुचिर्निद्राराहिहत्यादि दोषे रोगीदाघज्वरादिः आलस्यः शीघ्र घ्रातौ शूलादिः रोगश्च आतङ्गश्च अनयोः समाहारी रोगातकंशरीरे भवेत् यती हि कामाधिक्यात् कामिनांशरीरे दयकाम भावाजायन्ते यदुक्तं प्रथमे जायते चिन्ताद्वितीये द्रष्टुमिच्छति तृतीये दीर्घनिःश्वास चतुर्थे ज्वरमादिशेत् पञ्चमे दह्यते गात्रं षष्ठे भक्तं नरो चते सप्तमे च भवेत्कम्प उन्मादश्चाष्टमे तथा नवमे प्राण सन्देहो दशमे जीवितत्यजेत् कामिनं मदनेदिगा दशसञ्चारयतेह्यमी इति स्त्री दर्शनादशभावा

कावा कंखावा वितिगिच्छावा समुप्यञ्जिञ्जा भयंवालभिञ्जा उन्मायंवा पाउणिञ्जा दीहकालीयंवारोगायकं हविञ्जा
केव लिपगुप्ताञ्चो धम्माञ्चोभसिञ्जा तम्हाखलुनोद्रत्थिपसुपंडग संसत्ताड्रंसयणासणाड्रंसेविता भवद्र संनिगंथे ॥१॥

विनाशलभितेफलप्रति सन्देहजपजे हीयके न हीद्र भेदचारितनी नासपामे उन्मादं कामग्रहं वा अथवा प्राप्नुयात् उदमाद उपजे प्रभूतकालिभावी दीर्घकालताड्रं दाघज्वरादिशूलकादिरोगातंकीभवेत् दाघज्वरादीक रोग जपजे केवलो प्रज्ञप्तात् धम्मात् भ्रंस्यते केवलीनी भाथो धर्म्मथी अष्टह्वे तस्मात् न पशु क्लीव व्याप्तानि तस्मात् तिणे कारणे निगंथ स्त्री पशु नपुंसक शयनासनादि सेवनात् शयनासन सेवनही स निगंथो

उपपद्यन्ते अथ पुन केवलनि प्रस्रपात केवलनि प्रणोतात धमात् युत चारित्र रूपत्वस्येत् धर्माद्द्रष्टो भवेत् तस्मात् एतीया दूषणानां प्रादुर्भावात् खल
निपयेन स्त्री पशु पण्डक स सत्तानाशयनामनस्थानानां सेविता उपभोक्ताभिचूर्णोभवेत् सनियन्त्री भवेत् इति प्रथम ब्रम्हचर्यं समाधिस्थान एषा प्रथमा
ब्रम्हचर्यतरीर्वाटिका १ नो निगन्त्ये इत्योण कह कहत्ता हवद्से निगन्त्ये त कह मिति चेत् आयरियाह निगन्त्यस्म खलु इत्योण कह कहेमाणस्सवभया
रिस्स वभ्रचेरेसडापाकडावावित्तिक्ख्हा या समुप्पज्जिञ्जा भेय बालभेज्जा उम्माय वा पाउण्णिज्जादीहकालय वारीगाय कहविज्जा केवलपन्नत्ताओ धम्मा
ओ भसेज्जा तम्हा खल निगन्त्ये नोइत्योण कह कहेज्जा २ सनि यन्त्री भवति स इति क य स्त्रीणा अयात् एकाकिनोना स्त्रीणां एव कथा वाक्य
प्रत्यस्य रूपा वात्ता अथ वा स्त्रीणां जाति कुलनैपय्य विपया पद्दिनी चिद्विणी हस्तिनी मङ्किनी सुग्धामध्या प्रौढादि रूपां कार्णाटलाट सि हल देयोन्न
वाना नारीणा यर्थं ना रूपा वा कथा प्रति कथयितान भवति स साधुर्भवतीत्यर्थं स्त्रीणां ऽये कथा अथवा स्त्रीणां एव वर्णन करोति स साधुर्नस्यादिति
भाव इत्युक्ते शिष्य प्राह तत्कथमिति चेदेव यदि मन्यसे आचार्यं आह हे शिष्य खलु निययेन नियन्त्यस्य साधी स्त्रीणा कथा कथ मानस्य ब्रम्ह

नोनिगथेइत्योण कहकहिता हवद्सेनिगगथेतकहमितिचेत्आयरियाह । निगगथस्स खलुइत्योण कहकहेमाणस्स वभ
यारिस्स वभचेरे सकावा कखात्तावित्तिगिष्खावा समुप्पज्जिञ्जा भेयवालभिज्जा उम्मायवापाउण्णिज्जादीहकात्तियवारी

भवति तेनियथ साधूहीइ ६ न स्त्रीणा कथा कथयिता भवति नियथ साधु भगवत स्त्रीनी कथा न कहे ते नियथ तत् कथमितोचेत् शिष्यपूछे
स्वामोस्त्रीनी कथाका न कहे आचार्या आहु गुरुकहे नियथस्य साधी खलु निययेन स्त्री कथा वात्तां कथयतीयती स्त्रीनी कथाकहतयकी ब्रम्ह
चारिण ब्रम्हचारिने ब्रम्हचय ब्रम्हचयनेविये यका स्त्रीं सेवेनवा काष्ठात्ताका वम्हचय पालन फल भविष्यति नवाइति धर्मे स देह समुत्पद्यते सम्यक

चारिणीपि ब्रह्मचर्ये श्रद्धा एनां सेवामि न सेवामि वा इत्यादि रूपा वाऽथवा आकांक्षाऽत्रेतनानां पदानां पूर्ववदेय अर्थोऽज्ञेयः नवरं तस्मा इति तस्मात् श्रद्धादि दोष प्रादुर्भावात् खलु निश्चयेन नियम्य स्त्रीणां एवाग्रे स्त्रीणामिव वा केवलां कथां न कथयेत् २ इति द्वितीय ब्रह्मचर्य समाधिस्थानं एषाद्वितीया वा टिका अथ तृतीया माह नोनिगम्यो इत्योहिं सद्धिं संनिसिज्जागए विहरित्ताहवइसेनिगम्ये तं कहमिति चेत् आयरियाहनिगम्यस्स खलु इत्योहिं सद्धिं सन्नि सिज्जागयस्स विहरमाणस्स बभयारिस्स बभचेरेसद्धा वा तस्मा खलनो निगम्ये इत्योहिं सन्नि सिज्जागए विहरेज्जा ३ सनिगम्यो भवेत् यः

गायकंहविज्जा केवलपन्नताओ धम्माओभंसिज्जा तस्माखलुनोनिगम्ये इत्योहिं कंहं कहज्जा ॥२॥ नोनिगम्येधाइत्योहिंस
द्धिंसंनिसिज्जागए विहरित्ता हवइसेनिगम्ये तं कहमितिचे आयरिआहनिगम्येथस्स खलुइत्योहिंसद्धिसंनि सिज्जागयस्स

प्रकार उपजे भेदं वा लभेत् चारित्थी अष्टद्विवे जन्मादं वा प्रापयेत् उन्माद अथवापामि दीर्घकालिकं रोगातंकवा भवेत् घणकाल स्थाइं तेहने शरीरे रोगह्वे केवलि प्रजाप्त धर्मात् भस्यते केवली भाषीत धर्मथीचूके तस्मात् कारणात् खलु निश्चयेन न स्त्री पशु नपुंसक संसक्तानि शयनासनानि तिणेकारणे स्त्री पशु नपुंसकसहित शयनासन सेवेनहीं स साधुर्भवति ते साधुकहीद ननिग्रंथ. साधु स्त्रीणां कथां कथयति ते माटे साधुस्त्रीनी कथा कहे नहीं ७ न साधू स्त्रीणां साध्वं निषयंगत विचरेत् नहीं निग्रंथ साधू स्त्रीजाति संघाते वाजोठ प्रमुख आसने एकठा विचरणहार स्त्रीविस्ती जठेपक्षी घडी २ काचीनकल्पे स निग्रंथः एहवी ते साधू तत् कथमितिचेत् केन कारणेन तत्र आचार्यकहे निग्रंथस्य साधो साधुने खलु निश्चयेन स्त्रीणां साध्वं आसनाद्युपविष्टस्य साधोः निग्रंथा साधू स्त्रीजाति साथे आसन प्रमुखतीहविठानरहे विहारं कुर्वतः विहरे तेहने ब्रह्मचर्यवत ब्रह्मचर्य

स्त्रीभिः सार्धं निषिद्यानियोदन्ति अस्यां इति नियथापट्टिकापोठ फलक च तुककाद्यायनन्तानिपत्याङ्गत स्थित सन्विहत्ता श्रवस्यातान भवेत् कोर्यं य
स्त्रीभिः सह एकस्मिन् प्राप्तनेन उपविशेत् सनियन्ती भवेत् अत्राय सप्रदाय यत्रा सने पुरा स्त्री उपविष्टा भवति तत श्रासनात् स्त्रिया उल्लिताया सत्यां
मुहूर्त्तादनन्तरं तत् श्रासन साधोरुपविनयोग्य भवति त कश्च मिति चे आयरियाह अनयो पदयोरर्थं पूर्ववत् निगन्त्यस्य खलु इत्थी द्वि नि
पत्यस्य खलु स्त्रीभिः साह निपत्याङ्गतस्य प्राप्तस्य विहरमाणस्य तत्र स्थितस्य बृह्चर्येणो बृह्चर्ये मडादयो दोषा उत्पद्यन्ते तस्मात्कारणात् खलु
निययेन नियन्त्य स्त्रीभिः सह एकत्रासनेगत प्राप्तं सन् नो विशरेत् नोपविशेत् ३ इति तृतीय बृह्चर्यस्थान एषा तृतीया वा टिका ३ नोनिगन्त्ये
इत्येण इन्दियाद् मणोहराद् मणोरमाद् आलो इत्तानिष्कारसाहवद् सेनिगन्त्ये त कश्चमिति चे आयरियाह निगन्त्यस्य खलु इत्येण इन्दियाद् मणो
हराद् मणोरमाद् आलो एमाणस्य निष्कारमाणस्य बभयारिस्त्रबभचरे सद्वावाकखावाविति किञ्चावा समुपल्लिञ्जा भेद वालभेञ्जा उन्माय वा प्पड

विहरमाणस्य बभयारिस्त्रव भवेत् रेसकावाकखाना वित्तिगिच्छावा समुप्यल्लिञ्जाभे यवालभिञ्जा उन्मायवापाउणिञ्जा
दोहकालियवा रोगायकंहविञ्जाकिलिपन्नत्ताथो धम्माथो भ सिञ्जा तम्हाखलुनोनिग धेइत्थीहिंससिनिसिञ्जागए

वतनेपणि बृह्चर्येणो बृह्चर्येणो विषे मका वाष्ठा काशा जपजे बृह्चर्येणो विषे स देह उपजे पालु केनपालु एहवीस का उपजे भेद वा लभित उन्माद वा
उन्मादनकरे प्राप्नुयात् दीर्घकालिक स यधि रोग जपजे रोगातक रोग जपजे भवेत् दीर्घकाल केवली प्रपन्न धर्मात् भ्रश्यते केवली कथित धर्मशकी
पडे पूजे तस्मात् निययेन नियथ स्त्रोणा कया कथयन् स्त्रीसाधे एकासनेनियीदति साधू स्त्री साधुं नविहरति स साधूनि प्रथोभवति ते साधूनिपथ

गिञ्जा दोहकालियं वारीगायं कंह विञ्जातिवलि पणत्ताओ धग्माओभं सिञ्जा तम्हाखलुनोनिगन्थे इत्थीणं इन्दियाइं मणोहराइं मणोरमाइं आलीइञ्जा निज्जाइञ्जा ४ सनिग्रन्थो भवति, स इति कः यः स्त्रीणां मनीहराणि मनः हरन्ति दृष्टमावाणि चित्तं आधिपन्तीति मनीहराणि पुनर्मनीरमाणि मन रमस्यनुचित्त्वमानानि आह्लादयन्तीति मनीरमानि ईदृशानि इन्द्रियाणि नयन वदन जघन वचःस्थलनाभि कचादीनि प्रति आलीकयिता समन्ता द्रष्टानिध्यातानितरान्ध्यातानि ध्याता दर्शनादनन्तरं अतिग्रयेन चिन्तयितायो न भवेत् सनिग्रन्थो भवति इत्युक्ते शिष्यः पृच्छति तत्कथमिति चेत् आचार्य आह हे शिष्यनिग्रन्थस्य खलु निययेन निग्रन्थः स्त्रीणां मनीहराणि इन्द्रियाणि न आलीकयितानसमन्ताद्द्रष्टा अथ वा न ईषदपि द्रष्टान च तानि इन्द्रियाणि निध्यातानितराच्चिन्तयितान भवेत् स्त्री इन्द्रियाणां रागेन द्रष्टानितरान्ध्याता साधुर्नभवेदित्यर्थः ४ इदं चतुर्थं ब्रह्मचर्यं समा

विहरिञ्जा।शनोनिगन्थेइत्थीणंइं दियाइं मणोहराइं मणोरमाइं आलिइत्तानिज्जाइत्ताभवतिसिनिगन्थेतंकहभित्तिच ०
आयरिआहनिगन्थसखलुइत्थीणंइं दियाइं मणोहराइं मणोरमाइं आलिइत्तानिज्जाइत्ताभयारिसुबं भवे रिसंका

जाणवी ८ न निग्रन्थः स्त्रीणां इन्द्रियाणि मनीरमाणि दृष्ट्वा मनसिहर्यं न यति निग्रन्थ साधुस्त्रीणां मनीहर आखि प्रमुख इंद्रीदेखीनि मनहर्षेन जपजे जीविएतने एकांइं संदंरके एहवुं आलीकीनीजोईने नितरांध्यानवान् न भवति घणं रूपादिकनिचितवणहार न हीइ स निग्रन्थः साधुः तत् कथमितिचेत् ते किमन्नाचार्य आह आचार्यकहे निग्रन्थस्यसाधुनेनिचे स्त्रीणांस्त्रीना चतुरादीनोइं द्रियाणी मनीहराणीभलां मनीरमाणिमनसे सुखदाइंआलीक्यमानस्य दृष्टिमांडीजरहतानि नितरांध्यायमानस्यघणुं रूपादिकंध्यां न करतानिब्रह्मव्रतधारिण ब्रह्मचारीसाधुनेब्रह्मचर्ये ब्रह्मचर्यनेधिषिगंकाकांकावांका ब्रह्मचर्यनेविषे

पिण्याने ४ एवा चतुर्थी वा टिका अथ पञ्चमी प्राह नो निम्न ये इत्योप कुडन्तार सिवा दूसन्तारसि वा कूर्यसह वा कूर्यसह वागीय मर वायगियमहाकाश्रिय सद्यथा यिनवियमहवा सुणिसाहवद येनिय येत कइ मिति चे प्रायरियाहनिग यस्तखुलु इत्योप कुडन्तारसिवा दूसन्तार मियाभित्तार सिवा कूर्य मद्र वार इय सह वागीय सह वा इसियसह वायणिय य सह वा सुणमाणस वमयारिसवभेरे सहा वा कडा वा विति क्रिष्ठा वा समुप्यन्निजा मीय वानभिजा उन्माय वापाउणिजा दीहकाश्रिय रोगायं क इविजा केवलपश्चाथो धन्नाश्रोम सिजा तन्हा खुनुनिय ये इत्योप कुडन्तार मिया दूसन्तार सिवाभित्तारिसिवा कूर्यसहवारुप्रय सहवा गोयसह वा इसियसह वायणिय सद्यथा विलविय सह वा पुणमाने विहरेजा ५ मनिप यो भवेत् स इति क य कुद्यान्तरे कुष पापाणरचित तेन अन्तार व्यवधान कुष्यान्तरे स्थित्वा

वाक्यावावृत्तिगिष्ठावा समुप्यन्निजाभे यवानभिजाउन्मायवापाउणिजादीहकालियंवा रोगायंके इविजाकेवलि

पन्नसाथो धन्नाश्रोम सिजा तन्हा खुनुनिग येनोद्वलीण इन्द्रियाइ मणोरमाद्र अलिद्रत्तानिज्जा

पञ्चा ॥४॥ नोद्वलीण कुड तरसिवादूसतरसिवा भित्तियतरसिवा कुडय सहवारुद्रय सहवागीयसहवाइसियसहवा

मदेइ समुप्यद्यते ते धमने विये मदेइअपने भेदं वानभेतुर्मनोभिदपठे दीपंकानकषणाकानेजपनो रोगातकभवेत्तुरोगादिक अपजे केवलि प्रपसात् केव मीकयित धर्मयको भटहोइ तन्माणु निययेन ननिप य स्तोत्रां चपुरादीनि इ द्वियाणि मनोरमानि मनोषराणि चानोखजोईने नितराधानवान् न भवति स माण ८ माण न स्तोत्रा मीजातिना कुचातरिपुर्भित्तिने प्रातररुहे नही पापाणमद्र भीत दुष्यंतरिपु वा परियचने प्रातरे रुहे नही भित्तियरीपु

इत्यथाहारः दूधमन्तरे वा वस्त्र रचितभित्तरे परिच्छेदाया अन्तरेस्थित्वाभित्तरे मृत्तिकापक्केष्टिकाणांभित्ति व्यवधाने स्थित्वा वा इत्योणं इति स्त्रीणां कूड्यसहं सभोग समये भोक्तुर्मन प्रसक्तये कोकिलादिविहग शब्दानुरूपं कूजित शब्दं पुनः स्त्रीणां रुदित शब्दं भोग समये प्रेमकलङ्जनितं रोदन शब्दं वा अथ वा पुन गीत शब्दं वा पञ्चमरागादि हुङ्कार रूपं गीत शब्दं वा अथ वा पुनः स्त्रीणां हसित शब्दं कह कहादिकहा स्त्रीत्यादिकाऽऽट्टदंत नि कासनोद्भव शब्दं स्तनित शब्दं वा भोग समये दूरतर घनगर्जितानुकारि शब्दं वा क्रन्दित शब्दं वा प्रोषित भट्टु काणां विरहिणोनां भट्टवियोग दुःखात् जातं वा अथवा विलपित शब्दं भट्टगुणान् स्मारं २ प्रलापरूपं शब्दं प्रतिथः श्रोता न भवति स निरन्वोभवति इति शुत्वाश्लिथः पृच्छति तत्कथ केन कारणेन यदेव मुच्यते इति शुत्वा आचार्य आह हे श्लिथ खलु निघयेन कुड्यान्तरादियु पूर्वोक्तस्थानि स्त्रिला स्त्रीणां पूर्वोक्तान् कूजितादिशब्दान् शृण्वती निघन्यस्य वृहचारिणीऽपि वृहचर्ये शङ्कावाकांक्षाया इत्यादि ये दीपा उत्पद्यन्ते तस्मात्कारणात् खलु निघयेन

शण्डियसहंवाकंदियसहंवा विलवियसहंवासुगिता हवद्भूसेनिगंधे तं कहमितिचे आयरियाह निगंथस्य खलुइत्थीणं कुडुंतरंसिवा जावविलवियसहंवासुगामाणस्य बंभयारिसुवभंचेरेसंकावा कंखावा वितिगिच्छावा समुप्यज्जिज्जाभियं

वा भोतिने आंतरे रहेइनही इटमइभोत कुजित शब्देवा भोगने अवसरे वीलवो रुदितशब्देवा भोगने अवसरे रुदन शब्द गीतश-देवा रागरूप गीतशब्द हसितशब्दंवाहसवानिशब्द स्तनितशब्दंवा गर्जारवसब्दने करनी क्रंदितशब्दं वा विरहिणी नीश्रा क्रंदशब्द कंदियसहं वा विलपित शब्देवा विलविय सहं वा गुणसंभारो र विलाप करे रोविते शब्दएह वां सांभलणहारनहीई ननिगंधः ते साधुः कहीये तत्कथमितिचेत् ते किम आचार्याः प्राहुः आचार्य

मैथुन सेवनं पुनूस्त्राभिरिवसमं पूर्वक्रीडित गृहस्थावस्थायां पुरो द्युतादिक्रीडनं कृतं तस्य अनुसर्त्तामुद्दुचिन्तयिती नो भवेत् स साधुर्भवेत् इत्युक्तेः
 शिथः प्राह तल्लयमिति वेत् तदाचार्याह हे शिथ खलु निश्चयेन स्त्रीभिः सह पूर्वकृतं रतं मैथुनं पूर्वकृतं द्यूतादिक्रीडितम् अनुस्मरतः वारं २ चिन्तयती
 निग्रंथस्य साधोर्वृहचारिणो बृहचर्ये शङ्गादयो दोषा उत्पद्यन्ते तस्मात् खलु निश्चयेन निग्रंथः स्त्रीभिः सह पूर्वरतं पूर्वक्रीडितं प्रति अनुसर्त्तान् भवेत्
 स साधुर्भवेत् इति शष्टं बृहचर्यं समाधिस्थानम् इति षष्ठीवाटिका अथ सप्तमीं प्राह नो निग्रंथे पणीयम् आहारं आहरेत्ताहवइसेनिग्रंथे तं कहमिति चि

गंथितं कहमिति चि आयरि आह निग्रंथस्य खलु इत्थीणं पुव्वरंथं पुव्वकीलियं अणुसरमाणस्सवं भयारिस्सवं भवेत् रेसंका
 वा कंखावा वितिगिच्छावा समुप्यज्जिज्जाभं यंवालभिज्जा उम्मायंवा पाउणिज्जा दीहकालियंवा रोगायं कं हविज्जा •
 केवलपन्नत्ताओधम्माओ भं सिज्जा तम्हाखलुनोनिग्रंथे इत्थीणं पुव्वरंथं पुव्वकीलियं अणुसरिज्जा ॥६॥ नोपणीयं आहारं
 आहरित्ता भवइ सेनिग्रंथे तं कहमिति चि आयरि आह निग्रंथस्य खलुपणीयं पाणभोयणं आहारिमाणस्सवं भयारिस्स

निश्चयेन स्त्रीणां पूर्वरतं पूर्वं भोग भोग्या पूर्वकीलितं पूर्वइपासा रामति करी तत् अनुस्मरण मानस्यते संभारता साधुनि बृहवृत्तधारकस्य बृह
 वृत्ते शकाकरे कांक्षा वा वितिगिच्छा वास सुत्ययते भेद वा लभेत् भेदपामि उम्मादं वा प्राप्नुयात् दीर्घकालकं रोगातं कं भवेत् केवलि प्रत्तस धर्मात्
 अस्यते तस्मात् निग्रंथं न निश्चयेन स्त्रीणां पूर्वरतं पूर्वकीलितं अनुस्मरन् भवति स निग्रंथ इ नहि प्रणीतं दृतीपचितं आहारं आस्मति स साधुः नहि

आयरियाह निगद्यस्सखुपु पणीय पाणभीयण आहारिमाणस्सवभयारिस्सवभचेरे सका वा० तन्हाखलनोनिगद्ये पणीय आहरेज्जा ७ सनियन्थो भवेत्
य प्रणीतत्तलदृतादि विदुक्क उपससणत्वादयदपि सरस अत्तन्नाधातु हृदिकर कामीदीपकमाहार प्रति आहर्त्तान भवेत्तु य सरसाहार क्तु न
भवेत् सनियन्त तदा गिय पृच्छति तत्तथमिति चेत् तदा आचाय आह हे थिय निय यस्य साधी खलु निययेन प्रणीत सरस आहार भुञ्जानस्य
ब्रह्मचारिणो ब्रह्मचर्ययद्वादयो दीपा उत्पद्यन्ते तस्मात् इत्यादि दीप प्रादुर्भावात् निय थ प्रणीताहारकारी न भवेत् ७ इति सप्तम ब्रह्मचर्यं समाधि
स्थान इति सप्तमो वा टिका अयाट्ठी प्राह नो निगद्ये अइमायाए पाणभीयण आहरेसाहवइसे निगद्ये त कइमिति चेआयरियाह निगद्यस्स
खलु अइमायाए पाणभीयण आहारिमाणस्सवभयारिस्सवभचेरे सइवा० तन्हा खल नोनिगद्ये अइमायाएपाण भीयणभुञ्जिज्जाद सनिय यो भवेत् योइति

व भचेरे सकावाकखावाविति गिच्छावा समुप्यज्जिज्जा भेयवालभिज्जा उग्मायवापाउणिज्जा दीह कालिय वा रोगा
यकहविज्जा केवल पन्नत्ताओ धम्माओ मसिज्जातन्हा खलुनो निगद्ये पणीय आहार माहारेज्जा ॥७॥ नो अइमा

नोप थ साधू हृतने भरते एहवी आहार तेहनाकरणहारहवे नहो स निय थ तत्तथमितिचेत् आचार्यो आहु निय थस्य हृतोपचिताहार भुजमानस्य
साधुने निये प्रणीतभूता चूरिमा प्रमुखनो आहारकरताने ब्रह्मचारीने ब्रह्मचर्ये गकावा काचावा विचिकित्सावा समुत्पद्यते भेदवा लभेत् उग्मादवा
प्राप्र यात् दीर्घकालिकया रोगातक्क भवति केवली प्रप्रप्तात् धर्मात् भ्र स्यते तस्मात् निययेन नहि भवति निय थ हृतोपचित आहारस्य कर्त्ता स
निय थ ते साधु कहीजे द नहि साधु प्रतिमावाया भक्तपान गइति स साधु निय यसाधु पुरपने ३२ कवलास्त्रीने २८ नपु सकने २४

मात्रया द्वात्रिंशत्कवलाः पुरुषाणां आहारस्य मात्रा ततोधिकाहारं पानकं द्राघासर्करादिर्जल आहार्तान भवेत् यती हि आगमे पुरुषस्य द्वात्रिंशत्कवले
 आहारमात्राः स्त्रियस्तु अष्टाविंशति कवलेः आहार मात्रा नपुंसकस्य चतुर्विंशतिकवलैराहारस्य मात्रा उक्तास्ति बृहदारिणो हि अधिकआहारपानीयं न
 करणोयं इति श्रुत्वाश्रिय पृच्छति तत्कथमिति चेत्तदा आचार्यप्राह निगन्धस्य खलु अतिमात्रं आहारपानीयमाहत्त्वं माँवाधिकं आहारकर्तुं बृह
 चारिणो बृहचर्यैयङ्गादयो दोषा उत्पद्यन्ते तस्मात् शङ्गादि दोषाणां प्रादुर्भावात् खलु निचयेन निग्रन्धो अतिमात्रयापानीय भोजनं वा नमुञ्चेत्
 ऽ इत्यटमं बृहचर्यं समाधिस्थानं ऽ इत्यटमी वा टिका अथनवम्युच्यते नोनिगन्धे विभूसाणु वाई हवइ सेनिगन्धेते कइ मिति चेन्नायरियाह निगं
 धे खलु विभूसावति एवि श्रूसि य सरोरे इत्यो जणस्स अहि लसण्ज्जे हवइ तन्नोणं तस्सइत्यो जणेणं अहि लसिज्जमाणस्सबंभचेरे संकावा० तस्सा खलु नो

याए पाण भोअणं आहारित्ता भवइ से निगन्धे त कहमिति चे आयरि आह निगन्धस्स खलु अइमायाए पाण
 भोयणं आहारिमाणस्स वंभयारिस्स वंभचेरे संकावा कंखावा वितिगिच्छावा समुप्पज्जिज्जा भेयंवालभिज्जा उम्मायं
 वा पाउणिज्जादीहकालियं वा रोगायंकंहविज्जा केवलपन्नत्ताओ धम्माओ भंसिज्जा तस्सा खलु नोनिगन्धे अइ

एप्रमाणो अधिकरांणो भोजन आहारणहार न होइ ते साधुः तत् कथमितिचित् आचार्या प्राहः निग्रन्धस्य निचयेन इतिमात्रयापान भोजन कुर्वतः
 साधीः मानथको, अधिकपांणेनि आहारजिमे जीमतानि बृहचर्ये शंकावा कांजावा विचिकिच्छावा समुत्पद्यते भेदंवा लभेत् उन्मादंवा प्राप्नुयात् दीर्घ
 कालिकं वा रोगातं कं भवेत् केवलो प्रस्रप्तात् धम्मात् अस्यते तस्मात् निचयेन नहीं निग्रन्ध साधु अतिमात्राये षणोपांणी भोजन न भोगवि न जीमि

निगाये विभूस्त्रियवर्त्ति ए भवेत्त्वा ८ सनिययो भवेत् यो विभूपातुपातो नो भवेत् विभूपा सरीरयोभा अनुवर्त्तयितु अनुवर्त्तितु विधा तु विधा तु शील अस्त्रेति
तिविभूपातुवर्त्ती विभूपातुपातो वा शरीर शोभाकरणोपकरणेषु ज्ञान दत्तधावनादिभि सस्कारकर्त्ता न भवेत्ससाधुर्वृत्तचारी इति दुत्वा तदा
शिय आह तत्कथमिति चेत्तदा आचार्य आह खलु निययेन निययं साधुर्विभूपातुवर्त्तिक शरीरयोभाकारीविभूषितशरीर ज्ञानाद्यलङ्घत तनु पुमान्
स्त्रीजनस्य अभिनपणीय कामायवाञ्छनोयी भवेत् ततोण तत पश्चात्स्त्रीजनेन अभि लपणी यस्य वृद्धचारिणी वृद्धचर्यशकादयो दीया उत्पद्यन्ते

मायाए पाणभोयण भु जिज्जा ॥८॥ ना विभूसाणुवाइ भवद्द सेनिग्ग थे त कहमितिचे आयरिआहनिग्ग थय्य खलु
विभूसावत्तिए विभूस्त्रिय सरीरे इत्थिजणस्स अभिलसणिज्जेहवद्दतओण तस्स इत्थिजणेण अभिलसिज्जसाणस्सव भ •
यारिस्स व भचे रे सका वा कखा वा वितिगिक्खावा समुप्पज्जिज्जा भे यवालभिज्जा उम्माय वा पाउणिज्जा दीह

स नियय ते साधु कहीये ८ विभूपातु पातो शरीर वस्त्रादिकनौविभूखानीकरणहार इवेनही ते नियय साधुतेकिमद्दमजो श्रिय पच्छेत्तो ते गिरियने
आचार्यकहेछे नही नियय थ निये करीने विभूपातो करणहार विभूषित अनकत शरीरयकी स्त्रीजनने अभिलपनीय प्रार्थनीयदुवे तिवारे पच्छेतेह
निययने स्त्रीजने अभिलपीजता प्रार्थजिताथकाने वृद्धचारीने वृद्धचर्यना सेवनहारी वृद्धचार विषे वृद्धचर्यनिविषे सकापापती सदेह कखा स्त्री
प्रमुखनोयाक्का एकष्टनोफलछे क्रिया नही ते विचिकित्सा अतिसेकरी जपजे या अथया भेदचारितनी विनासपामे वा अथवा उम्माद कामनो विकार
पामे वा अथवा दीर्घकाल वणिकालरहे एहवो रोगदाघज्वरादिक आतकसूलादिक रोगदुवे केवली नाप्रप्रप्त भाष्या ज्ञानदर्शन चारित्र रूपश्रीदया

तस्मात् शंकादि द्वेषाणां प्रादुर्भावात् खलु निश्चयेन निग्रथी विभूषानुवर्त्तिको न भवेत् ८ इति नवमं ब्रूहचर्यं समाधिस्थानं ॥ ८ इति नवमीवा टीका ॥
 अथ दशमी कथ्यते नो निगन्थे सद्वृत्तस्य गन्धफासाणुवाङ्गं भवेज्जा हवद्भवेनिगन्थे तं कहमितिचेन्निर्याह निगन्थस्य खलुसद्वृत्तस्य गन्धफासाणुवाङ्ग
 यस्य बंधरे संका० तन्हा खलुनोनिगन्थे सद्वृत्त रसगन्धफासाणु वाङ्गं भवेज्जा १० स निग्रन्थी भवेत् स इति कः यः शब्दरूप रसगन्धस्पर्शानुपाती न
 भवेत् शब्द रूप रसश्च गन्धश्च शब्दरूप रसगन्धस्पर्शांनुपाती शब्दी मन्मनादिः रूपं स्त्री संबंधि
 लावर्ण्यं रसो मधुरादिः गन्धश्चन्दनागरकस्तूरिकादिः स्पर्शः कीमलः लक् सौख्यदः एषां भोक्ता साधुर्नस्यात् इत्युक्ते शिष्यः पृच्छति तत्कथमिति चेदा
 चार्यं आह निगन्थस्य खलुनिश्चयेन शब्दरूप रसगन्धस्पर्शानुपातिनी ब्रूहचारिणी ब्रूहचर्यं शंकादयोदीषा उत्पद्यन्ते तस्मात् शंकादिदीषाणां प्रादुर्भावात्
 खलुनिश्चयेन निग्रन्थः शब्दरूपरसगन्धस्पर्शानुपाती विषयासिषीनभवेत् १० अथात्र सर्वेषां दशानां समाधिस्थानानां संग्रह

कालीयं वा रोगायकं हविज्जा केवलपन्नत्ताञ्चो धम्माञ्चो भं सिज्जा । तन्हा खलुनोनिगन्थे विभूसाणुवाङ्गसिध्या ॥८॥
 नो सद्वृत्तवरसगंधफासाणु वाङ्गभवद्भवेनिगन्थे तं कहमितिचेन्निर्याह निगन्थस्य खलुसद्वृत्त रसगंधफासाणु

धर्मशकी अष्टथावे चूके तेहभणी खलु निश्चये निग्रन्थ साधु विभूषावान् नभवति शीभानी कारणहार नह्वे साधुशृंगार ८ नही साधुः शब्दरूप रसगंध
 स्पर्शानुपाती शाहकी भवति नहीं साधूमामणा वचनकटाच मधुरादि सुगंध कीमलादिक नो आग्रयणहारहीद ते निग्रन्थ साधु तत्कथमितिचेत्
 आचार्याः आहुः निग्रन्थस्य निश्चयेन शब्दरूप रसगंधस्पर्शानुपातिनः शाहकस्य निग्रन्थ साधुने निश्चये मामणा वचनकटाच मधुरादि सुगंध कीमला

श्रीकान् पयस्वपान् आह त जहा ज विवचित्तमणाद्भ्रं रहियथो जणियथो बभचरस्सरक्वडा आलयतु निसेवए १ साधुर्वृहचारो त आलय त उपाय्यये
 निपेवते तुपदपूरणे त क य आनयो विवक्त एकातभूत तत्रत्यवास्त्य स्त्रीजननेन च शब्दात् पशुपडकैरपि रहित पडकयद्ये न नपु सक उच्यते कालाकाल
 विभागागत साधोजन याडोजनचाश्रित्य 'विविक्तल ज्ञेय यदुक्त अट्टमी पक्खिएमोत्तु वयणाकालमेवय सेसकालमिइन्तीचीनियाड अकाल
 चारीश्री १ तस्मात् य आलयख्यादिभिरसेवितस्त आनय वृहचारो साधय निपेवते इत्यर्थं पुनर्यथालय अनाकीर्णो गृहस्थानां गृहाद्हरवर्ती
 किमर्थं वृहचर्यस्य रचार्यं योहि स्त्र वृहचर्यं रचितुमिच्छति स एतादृश उपाय्ययनिपेवते अत्र लिङ्गव्यत्यय प्राकृतत्वात् १ मणपद्माय जण्यणि काम

वाइयस्मव भयारिस्म व भर्चे रे सका वा काखा वा वितिगिच्छा वा समुप्यज्जिज्जा भंयवालभिवजा उन्माय वापाड
 णिज्जा दीहकालीय वा रोगायक हविज्जा केवलपन्नत्ताश्री धम्माश्री भ सिज्जा तम्हा खलुनोनिग धे सहरसरुव
 गंधफासाणु वाइहविज्जा दसने वभर्चे र समाहिठाणे भवद् भवति इत्यसिलोगा त जहा ज विवित्तमणाद्भ्रं

दिकनो आययणहार वृहचारोने वृहचर्ये शकावा कचावा विचिकिच्छा अथवा समुत्पद्यते भेदवालभेत् उन्माद वाप्राप्नुयात् अथवा उन्मादक पामि
 दीर्घकालिकरोगा त क या भवेत् चिरकालस्यायो रोगदुवे केवलो कथित धर्मात्प्रष्टोभवति धर्मथो चूके तस्मात् निखयेन नहीं निगृथ सद्द
 रूप रसगधस्योतुपातो भवति स निगृथ एतानि द्यन्नमृष्यं समाधिस्थानान्युक्तानि भवति एदश्ववृहचर्यं समाधिस्थानक कक्षा एण अधिकारे श्लोक
 कहिहे १० य विविकी रक्षस्थभू आकोर्णं ये विवित्त एकातनिरथ जन स्त्रीजननेन रहित स्त्रीजने करि रहित वृहचर्यस्य रचार्यं वृहचर्यनीरधाने

रागविवद्वय वभचैररत्नी भिक्खुथी कहंतु विवज्जाए २ अथद्वितीय वृहचर्य रतीभित्तु स्त्री कथां विवर्जयेत् स्त्रीणां कथा स्त्री कथा ता लज्जित कीदृशी कथा मनः प्रह्लाद जननीं अन्तः कारणस्य हर्षोत्पादिकां पुन कीदृशीं कामराग विवर्दनी विषय रागस्य अतिशयेन सुद्धिकर्त्री २ समञ्च संयंबंधी हि सङ्गहच अभिक्खणं बभचैररत्नी भिक्खू निच्चसोपरिवज्जाए ३ ब्रह्मचर्यरती भित्तुर्नित्यशोनिरन्तरं सर्वदा स्त्रीभि समं सस्त्ववं अर्थात् एकासनस्थित्वापरिचयं च पुन अभीक्ष्णं वारं २ सकथां स्त्री जातिभिः सहस्थित्वा बन्नीं वार्तां परिवर्जयेत् सर्वथात्यजेत् ३ अङ्गपञ्चसंठाणं चारुल्लवियदेहियं वम. चैररत्नीत्यीण

रहियं दुत्थीजणैणय वंभचै रस्सरक्खहाआलयंतु निसेवए ॥१॥ सण पट्हायजणणी कामराग विवद्वुणी वंभचै र रत्नी भिक्खुत्थी कहंतु विवज्जाए ॥२॥ समच सयंबंधीहि संकाहंचअभिक्खणं वंभचैर रत्नीभिक्खू निच्चसो परिवज्जाए ॥३॥ अगपच्चंग सठाणं चारुल्लवियदेहिय वंभचै र रत्नीत्थीणं चक्खुगिज्झं विवज्जाए ॥४॥ कुट्टयंरुडयंगीयं हसियंथणिय

अर्थ एवविधः उपाश्रयः सेवएत् एहवे उपाश्रय सेवे १ मनः प्रह्लादजननी मगनें हर्षनी जपजावणारीकामरागविवर्दनीं कामरागनीवधारण हारीएहवी वृहचर्यरतः सन् भिक्खुशीलवृत्तपालणहार साधुस्त्रीकथातु विवर्जयेत् स्त्रिनीकथा न करे वर्जे २ स्त्रिभिः समं संस्त्ववः परचयः स्त्रीसंघाते घणी परिचय संकथां च अभीक्ष्णं वारं २ स्त्रीसंघाते वारं २ वार्ता न करे ब्रह्मचर्ये रतः सन् भित्तु ब्रह्मचर्यनेविपेरत साधु नित्यं स परिचय वर्जयेत् नित्य ते परिचय वर्जे ३ अंगानि शिर प्रभृतीनि प्रत्यगानि कुच कटाचादीनि अंग शिरआदि दिङ्गे प्रत्यंग कुच कटाचादिका मनीहर उन्नत उल्लापः प्रेपितः चारु मीठीवीलवु नजरभरोजोवुं वृहचर्यरतः स्त्रीणां वृहचर्यने विपेरत साधुस्त्रीने चतुर्ग्राहं विवर्जयेत् स्त्रीनां मीठांवचन आखिना कटाचदेखे नहीं नेव

भिन्नु शरीरस्य परिसमन्तात् मण्डन नखक्रेगादीनां सक्ताकरण शृङ्गारार्थं परिवर्जयेत् पुनर्व्रह्मचर्यधारो विभूषां सम्यक् शर्दादिविहित शरीर गोभां परिवर्जयेत् १० सद्दे रुवेय गर्भे च रसे फासेतर्हवय पञ्चविहिकामगुणे निचसोपरिवज्जए ११ ब्रह्मचारीनित्यग सर्वदा शब्द कर्ण सुखद रूप नैव प्रीति कर पुनर्गन्धनासा सुखद तथा रसमधुरादिक तथैव स्पर्श त्वक प्रोतिकर एव पञ्च विधकाम गुणान् परिवर्जयेत् ११ अथ यत् पूर्वं उक्त शकाकाचादि द्रूपण म्यात् तत्सर्वं पृथक् दृष्टानेन द्रव्यति आलम्बीयो जणाद्बोद्योकोहायमणीरमा सयवो चैवनारीण तासि इन्दियदरसिण १ कद्रुय रुद्रय गीत हसिय भुत्तासिणाणियपणीय भक्तपाणश्च अद्रमाय पाणभीयण १ गन्तभूसणमिदृश्च कामभोगायदुज्जयानरस्ससगवेसिस्स विसन्तालउड जहा इति तिसृभिर्गा घाभि पूर्वाण्येव ब्रह्मचर्यं समाधिभ गकारणान्याह आत्मगवेषकस्य नरस्य स्त्रीजनस्य च एतत्सर्वं ब्रह्मचर्यं घातकरत्याज्य इत्यर्थं आत्मान ब्रह्मचर्यं जीवित

चे ररश्चो भिवक्वूसिगारत्य न धारए ॥६॥ सद्दे रुवेय ग धेय रसेफासि तर्हवय । पचविहिकामगुणे निचसो परिवज्जए ॥१०॥
आलउत्यो जणाद्बोद्योत्थी कहाय मणीरमा सयवो चैवनारीण तासिइ दिय दरसिण ॥११॥ कुद्रुय रुद्रयगीय हसिय भुत्ता

परिमडना शरीरनु मडन नख केग मू छ प्रमुख एहनो शोभावर्जे ब्रह्मचर्यं रतीभिश्च शीलवृतधारो साधु शृ गारार्थं न धारयेत् शृ गारने अर्थे धरे नहो ८ शब्देयद्रूप गधने विषे रसस्पर्शे तथाच तिमज पचविधान् कामगुणान् पाचे प्रकारे कामगुण प्रति नित्य स परिवर्जयेत् सदा वज्जे युक्चारी १० आनय स्त्रीजनाकीर्णं जे उपाययस्त्रीसु भस्त्रोके स्त्री कथा च मनोरमावली स्त्रीनी कथा मनोहर कहीद्रुहे स स्वय परिवचयो नारीभि सह स्त्रीनीपरिचय घणोहे तासा स्त्रीणा इ द्वियदर्शन अने स्त्रीना ज चचुरादींद्रियदेखवा ११ कुस्त्रीणा कूजित रुदित गीत स्त्रीना कूजितरीवु गीत

गवेषयतीति आत्मगवेषकस्तस्य वल्लभ ब्रम्हचर्यस्य किं भिव ताल पुटं विषमिव यथा शब्द इवार्थं यथा ताल पुटं विषं तालुक स्पर्शनमात्रा देवत्वविरितं जोवितं हन्ति तथा एतदपि त्वरितं ब्रम्हचर्यजोवितमपहरतीत्यर्थः तत् किं किं इत्याह स्त्री जनाकीर्णं आलयोद्यहं उपपन्नय १ पुनर्भनीरत्माः मनोहरा स्त्री कथा १ च पुननारोणां संस्त्ववः स्त्रीभिः सह एकासने उपविश्यनं परिचय करणं पुनस्तासां स्त्रीणां रागेण इन्द्रियाणां नयन वदनस्त नादीनां दर्शनं १ पुन स्त्रीणां कूजित तथा रुदितं पुनर्गीतं तथा हसितं पुनः स्त्रीभिः सहभुक्ता सनानि पुनस्तथा प्रथीतरसभक्त पानसेवनं पुनरति मात पानभोजनं १ पुनर्गात्र भूषणार्थं शोभाकरणं अधीरपुरषैस्त्वक्तमशक्याः एतत्सर्वं ब्रम्हचर्यं धारिणापरिहरणीयं १ दुज्जाएका

सियाणिय पणीयंभत्त प्राणं च अद्भुतं पाणभोग्यं ॥१२॥ गत्तभूसणमिदं च कामभोगाय दुज्जाया नरसंत्तगविसिख
विसं तालउडंजहा । १३। दुज्जाए कामभोगिय निच्चसो परिवज्जाए । संकाठाणाणि सव्वाणि वज्जेज्जा पणिहाणवं ॥१४।

हसितं पूर्वभुक्तानिभोगानि अशनानि हसवुं पाखिलाजे भोगभोग्या प्रथीतभक्तपानं च सरस आहारपानीं अतिमात्रायः पानभोजनमात्रायको अधिक आहारपांणो १२ गाल विभूषणं इष्टं च शरीरनीं शोभा भलीकरे तथा दुर्ज्याया कामभोगा एतलांवांना वृम्हचारी करे ती तेहने कामभोग जोततां दोहिला जीव्यान जाइ नरस्य आत्मगवेषिणः जे पुरुष आपणा आत्मानो गवेषीछे जाणिछे आत्मानि संसारथकीकाटु एतानि पूर्वोक्तानी तालपुट विष सदश्यानि एजिपुठे कक्षां वीलते आत्मागवेषीने तालपुटसरीपाछे १३ दुर्ज्यायान् कामभोगान् एकामभोग दुर्ज्यायछे नित्य सत्कार कामभोगं परि वर्जयेत् नित्य सदा कामभोगवर्जो तथा शंकास्थानानि सर्वाणि च वलीजे शकानां स्थानकते सर्ववर्जो वर्जयेत् प्रणिधानवान् वडवान् परिहरे एकाय

एते सर्वेपि तं ब्रह्मचारिणं नमस्कुरुवन्ति तं कं यो ब्रह्मचारी पुरुषः स्त्री जनो वा दुष्करं कर्तुं मयकां धर्मं करोति शीलधर्मं पालयति १६ एस धम्मे धुवेणितएसएसएजिणदेशिए सिद्धासिज्जन्ति चाणिणं सिज्जिस्सन्ति तहावरेत्तिवेमि १७ एष धर्मः अस्मिन्नध्ययने उक्तः ब्रह्मचर्यलक्षणो ध्रुवोस्त्रि परतीर्थे भिरनिपेधोस्त्रि तस्मात् प्रमाण प्रतिष्ठितः पुनर्नित्य त्रिकालियविनखरः अत एव शाखतः त्रिकाले फल दायकत्वात् पुनर्जिनैस्वीर्थकरैर्देशितः प्रकाशितः इति विशेषणैः अस्य शीलधर्मस्य प्रामाण्यं प्रकाशितं अनेन शीलधर्मेण बहवो जीवाः सिद्धा अतीतकाले सिद्धिं प्राप्ताः च पुन ते न धर्मेण कृत्वा इदानीं सिध्यन्ति तथा तेन प्रकारेण शील धर्मेण सेत्स्यन्ति सिद्धिं प्राप्स्यन्ति अत्राध्ययने सुहुमुहुर्वृह्मचर्यसमाधिस्थानानि प्रकाशितानि सुहुमुहुर्दूषणानि उक्तानि तत् अत्रशीले अत्यन्तपालनादर प्रकाशनायन तु पुनरुक्ति दोषो ज्ञेयः इति अहं त्रवीमि इति सुधर्मा स्वामीजंबूस्वामिनं प्राह १७ इति ब्रह्मचर्यं समाधिस्थानानां अध्ययनं षोडशं संपूर्णं १६ इति श्रीमदुत्तराध्ययन सूत्रार्थं दीपिकायां उपाध्याय श्रीलक्ष्मी कीर्त्तिगणि शिष्य लक्ष्मी

सिद्धिखंडितहावरेत्तिवेमि ॥ १० ॥ बंभचे रज्जयणं सोडसं समत्तं ॥ १६ ॥ जेकेडउपव्वडए नियंठे धम्मं सुणित्ता

करेत्ते १६ एषः धर्म्मो ध्रुवो नित्यः एधर्मनीचे शाखतोछे शाखतः जीनं तीर्थं करेण देसित साखतो धर्मं तीर्थं करे कहुं पूर्वं सीधाः अधुनापि सिद्धांति अनेन ब्रह्मचर्यं रूपेण धर्मेण पूर्वं सीधाहवणांपणिसीभ्भेछे एसीलधर्मथी तथा अपरे प्राणिनः आगामी काले सिद्धिं गमिथतो वीजापणि प्राणो आगत्याभवनेविषे सीभ्भस्ये १७ इति ब्रह्मचर्यं समाधिस्थानं समाप्त ॥ १६ ॥ सोलमा अध्ययनने विषेसीलगुणवर्णनं संपूर्णं अथ हिवे पाप यमणमाख्यातः अध्ययन सप्तदश मीप्रीचते १७ य कच्चिद्विनयीपपत्र निग्रयः यतीद्र धर्मं सांभली दीचालीधी धर्म्मशुल्वा विनयान्वितः सन् धर्मं

वत्प्रभगणि विरचिताया ब्रह्मचर्य समाधिस्थान पीडय सपूर्ण ॥१६॥ अथ सप्तदश अध्यायन प्रारभ्यते ॥ पीडये अध्ययने ब्रह्मचर्यं गुप्तय प्रकासितास्ता
गुप्तगुण पापम्यान वर्जनादेव भवति तस्मात्पापस्थान सेवनात्पाप शमनी भवति तत पाप शमण ज्ञानार्थं सप्तदश अध्यायन प्रकाशयते इति पीडय
सप्तदशयो सम्मत्य जेनेइश्री पञ्चइ एनियठे धर्म सुशिक्षाविषयोववन्ने सुदुर्लभं लहि उन्मीहि लाभ विहरेज्ज पच्छाय जहासुइतु १ य कश्चित् प्रव्रजितो
सहोतदोची निग्रघ साधु पूव धम श्रुतचारिण रूपधम शुल्लविनय ज्ञानदर्शन सेवनरूप उपपन्न प्राप्त सन् पुनर्यं साधु सुतरा अतिशयेन
दुर्लभ सुदुर्लभ बोधिनाम श्रोतोर्धं करस्य धर्मं सम्पत्तं लब्धा पद्यायया सुखं यथेच्छं निद्राविकथा प्रमादवत्त्वेन विचरेत सिहत्वेन धर्मं अङ्गीहृत्य
श्रुगलगत्या एव विचरेत स च प्रमादोगुरुणा हे शिष्यत्व अधोष्व इत्यक्तं सन् किं वक्ति तदाह १ सिज्जादटापाउरणमि अत्रिय उप्पज्जइमुत्तुतइयपाओ
जाणाभिज वइ आउसुत्ति किं नाम काहामि सुएणभन्ते १ हे गुरोशिज्जा उपाययो वसतिहंटावर्पा श्रोतातपपीडानि वृत्तकारास्ति प्रावरण वस्स श्रोता
व्यपद्रवहर शरोराच्छादक मे नम अस्मि वत्तते हे गुरो पुन भोक्त भोजन तथैव पातु पायोग्य उत्पद्यतेमिलति हे आयुषन् हे भगवन् यदत्तं
मान जीवादिवसु वर्त्तते तदपि अह जानामि इति हेतो हे भगवन् श्रुते न सिद्धान्ताध्ययने न किं करियामि अत्र हे भगवन् इत्यामन्त्तण चेपे
वर्त्तते कोप ये भगवन्तोऽधीयते तेपा अपि न अतोन्द्रियज्ञान तत् किं गलतालमोपेणियध्यवसितोय भवति स पाप शमण उच्यते इति इहापि सम्मध्यते

विश्रुतवन्ने सुदुर्लभं लहिश्रो वोहिलाभ विहरेज्ज पच्छाय जरासुइतु १। सिज्जादटा पाउरणमिअत्रिय उप्पज्जइं भोत्तु

साभनोने वोनय धम अगोकारकरोने पालयालागो सुदुर्लभं दोहिलू लब्धा लाभोने बोधिनाम सम्पत्तलेइने अगोकार करोने विहरेत पयात यया
सुग विचरे पछे रिया सुते १ गगयसति हठा वर्पाकालादी अम्तो उपायय हट्टेइ वपायालाग्य वस्सपणिमाहरेठे उत्पद्यते भोक्तु, तथैव पातु

अमण लक्षणेहोन अमणत्व मन्यमान पाप अमण उच्यते कोदृग् सवानोऽज्ञानोतिर्विवेकी इत्यथ ४ आयरिय उवञ्जायाण सम्म नीपडितप्पई अपडि पूर एयई पावसमणेत्ति वच्चइ ५ भान विपय पाप अमणत्व उच्चादर्शन विषय आह य आचायाणा पुनरुपाध्यायाना सम्यक प्रकारेण वै परीत्वराहि त्वे न न परिट्ठयति प्रीति न विट्ठयति पुनर्य अहदादीना यथा योय पूजाया पराड सुखी भवति अप्रति पूजकी भवति अघ वा उपकारकर्त्तुरपि उपकार विज्जाय । स्व प्रयुपकार क्रिमपि न करोति स अप्रतिपूजक उच्यते पुनराश्वीहजारी मनसि एव जानाति अह महापुरुषपीडिक्ख एताहमो सुनियं स्यात् स पाप अमण उच्यते ५ सम्महमाणि पाणाणि वीयाणि हरियाणि अअसण सजयमन्नमाणे पावसमणेत्ति वुच्चइ ६ य प्राणा गिद्विक्खि चतुरिन्द्रियान् मनदमानोऽजित्तयेन पोडयन च पुन बोजानिगालि गोधमादि सच्चित्तधान्यानि समर्दयति च पुनहंरितानि दूवादीनि फलपुप्पादीनि समर्दयति पुनर्य असरत सन् आमान सयत मन्यमान स पाप अमण उच्यते ६ सधार फल गम्योठ निसज्ज पायकम्बल अप्पमज्जियमारुहइ पावसजनेत्ति

समणेत्ति वुच्चइ । ४। आयरिय उवञ्जायाण सम्म नो परितप्पई । अप्पडिपूयएयइ पावसमणेत्ति वुच्चइ ॥५॥ सम्माइ माणीपाणाणि वीयाणि हरियाणिय । असजएसजयमन्नमाणे पावसमणेत्ति वुच्चइ ॥६॥ सधार फलग पीठ निसिज्ज

इत्यथते ते पाप अमणकहोइ ४ आचयोपाध्यायाना आचार्य उपाध्यायी सम्यक न परिसम्यक सुपुपा न करोति सम्यक प्रकारे शुशुषा न कर अप्रति सुखी गयणस्तथ उरु इतो तिमुरइ स्तथको त्रहकारी स पाप अमण इत्युच्यते ते पापयमण ५ समन्यन प्राणान वेट्टियादीन वोजाणि हरि तानि च दुवादीनि बोजनी लोटीमई असयत सन आमान सयत मन्यमाना असयतीधकी आपणा आत्माने सयतीकरीमाने स पापयमण इत्युच्यते ६

बुद्धे ७ पुनर्यः संसारं कस्बलादिकं फलकं पट्टिकादिकं पीठं सिंहासनादिकं निषयां निषीयते उपविष्यते इति निषयातां निषयां स्वाध्यायातापतना
दिक्रियायीयां भूमिं पादकस्बलं पाद पुञ्जनं इत्याद्युपकरणं अप्रमृज्यरजीहरणादिना प्रमार्जनं अहत्वा आरीहतेसपाप अमण
उच्यते ७ दवदवस्स चार्इ पमत्तेयप्रभित्वाणं उल्लङ्घणिय चण्डिय पावसमणेत्ति बुद्धे ८ पुनर्यः आहारायर्थं यदा व्रजति तदा दवदवइति घातै सुथिवी
उदयन् ग्रीव्रं २ व्रजति ईर्यासमिति न साधयति पुनरमोच्छं वारं २ प्रमत्तः प्रमादो सर्वाभि स मिति भिर्हीनस्यात् अप्रमत्तो न भवति पुनर्य उल्लंघनः
उल्लघयति अज्ञानिनां अथवा बालानां हास्याद्यविनयकट्टुणां भावयन् स्वकीयं आचारं अति क्रामयतीति उल्लघनः पुनर्यश्चंडः क्रीधीयातचित्तः स्यात्
स पाप यमण उच्यते ८ पडिले हेइ पमत्ते अवउज्झइ पायकस्बलं पडिलेहणा अणा उत्ते पावसमणेत्ति बुद्धे ९ पुनः पाप अमण स उच्यते स इति कः

पायकंवलं । अप्रमज्जियमाहइ पावसमणेत्ति बुद्धे ७ ॥ दवदवस्स चरइपमत्तेय अभिक्खणं । उल्लंघणियचंडिय पाव
समणेत्ति बुद्धे ८ ॥ पडिलेहेइ पमत्ते अवउज्झइ पायकंवलं । पडिलेहणा अणाउत्ते पावसमणेत्ति बुद्धे ९ ॥ पडि

स स्वारक काष्ठप्रयं पट्टक संयारो पूठउ वाजोठ स्वाध्याय भूमि पादपुञ्जनं सज्जायनी भूमीका पुच्छणं अप्रमृज्य आरीहति अणपूजेवसे पापयमण.
स उच्यते ७ द्रुतं द्रुतं भिच्चादी चरति जतावलां २ भिजाभणीजाइं प्रमत्तो भवति वारं वार प्रमत्तइइ वार वार वच्छ वालकादीनां लंघकं जुद्रवा
छडावालक लावीनि जाइ चंडसइसथकीरहे पापयमणः स उच्यते ८ प्रतिलेखयति प्रमत्तः सन् प्रमत्तयको पडिलेहणकरे सुंचति पादपूञ्जनं कंबलादि
भावेतीहां पृच्छणां कांवलानुक्ते प्रतिलेखनया अनुपयुक्तेः पडिलेहस्य असावधानसुते मनिकारी स पाप अमणेत्ति उच्यते ९ प्रतिलेखयति प्रमत्तः सन्

यो वस्तु पात्रादिक निजीपकरण प्रमत्त सन् प्रति लेखयति मनो विनाप्रति लेखयतीर्थं पुनर्यं पादेषु बल पाद पुच्छेन अथ वा पात्रकम्बल अपोष्कति यत्र तत्र अप्रमाजिते अप्रति लेखिते स्थले निश्चिपति अत्र पात्रकम्बल ग्रहणेन संवापधि ग्रहण कर्त्तव्यं पुनर्यं प्रतिलेखनायुक्तं प्रति लेखनाया स्वकीय मंगोपधि प्रति लेखनाया अनायुक्तं आत्मस्य भाक प्रत्यपेक्षानुपयुक्तं इत्यर्थं एतादृश पाप अमणी भवेत् १० पहिलेहेइ पमत्ते सेकिञ्चिदुनिसामिया गुरु परि भयइनिच पावसमणेत्ति बचइ ११ स पाप अमण इति उच्यते स क य साधुयत्किञ्चित् वस्तु उपाध्यायादिक प्रतिलेखयति तदा किञ्चिग्रम्य प्रतिनेगुयति कीर्थं यदा प्रतिनेगुनायसरेकचिदात्ताहुरीति तदा तद्वात्तां यवण व्यपचित्तं सन् प्रतिलेखयतीत्यर्थं पुनर्यो गुरुन् नित्य परि भवति स तापयति स पाप अमणी भयति ११ बहुताइपमुहरोधइ लइ अणिकहे असविभागी अचिचत्ते पाव समणेत्तिबुचइ १२ पुनयो बहुमायो प्रवरयागयुक्तो भवति पुनय प्रमुखर प्रकर्षेण वाचानी भवति पुनर्यस्तथोहकारी लीभो पुनर्योनिग्रह नवियते नियही यस्य स

लेहेइ पमत्तेसिकिचिहु निसामिया । गुरु परिभवेइ निच्च पाव समणेत्ति बुचइ १० ॥ बहुमाइ पमुहरी यडेलुवे
अनिगहे । असविभागी अवियत्ते पावसमणेत्ति बुचइ ११ ॥ विवायचउदेरेइ अहमे अत्तपन्नहा । बुगहे कलहे

प्रमत्तयकी पडिनेहे स साधु किचिव् विकथादिक निगम्य शुल्काकाइ विकथादिसामलीने गुरुभि गियत सन् गुरो पराभव करोति स पापअमण इति उच्यते १० बहुमायावान् प्रकर्षेण वा चाल घणी मायाकरोइ वाचाल घणीवीले स्तथ अहकार लुब्धो लोभवान् इन्द्रिय निग्रथरहित अहकार नाभो इदो जोयानहो सविभागरहित गुवादित्थपि अप्रोतिमान् स विभागनकरे आहार नीभागनकरे नही गुरु ऊपरि अप्रोति से हकरे पाप अमण

अग्निग्रह श्रवशोक्तान्द्रिय पुनर्योऽसं विभागी गुरुग्लानादीनां उचिताहारारानान प्रति सखिभजति पुनर्योऽचिद्यत्त इति गुर्वादिषु अप्रतीति कर्त्ता स पाप शमण इत्युच्यते १२ विवायच्चउदरेरे रेइ अहस्मी अत्तपद्महा वणहे कालहेरत्ते पावसमणेत्ति बुच्चई १३ यं पुनरेतादृशो भवति स पाप शमण इत्युच्यते सः कः यी विवादं वाक्कलहं उदीरयति उपशान्त मपि पुनरुज्ज्वालयति पुनर्यः अधर्म असदा चारतः पुनर्यआल्ल प्रज्जहा आत्तां स द्वीध, रूपतया हित्तां प्रज्जां हन्तीति प्राप्त प्रज्जहा तल्ल बुद्धिहन्ता पुनर्योऽय्त्तन्नी भवति विशेषेण उद्ग, हीदखादि प्रहारजनितयुद्धं व्य, द्रहस्सिन् रतः तथा पुनः कलहेतागुप्पे रतः १३ अथिरासणे कुक्कुईए जल्य तल्यनिसोयई आसणमि अणा उत्ते पाव समणेत्ति बुच्चई १४ पुनर्य अस्थिरासनी भवति अस्थिरं आसनं यस्य स अस्थिरासनः आसजेस्थिरं न तिष्ठतीत्यर्थः पुनर्यको कुचक की कुच्यं भण्डचेटादि हास्य सुख विकारादिकं तल्लारीतीति की कुचिक भण्डचेष्टाकारी पुनर्यो यच्च तत निषीदति स चित्त पृथिव्यां अप्राप्तुक भूमौतिष्ठति पुन आसने अनयुक्तः आसनं असावधानः स पाप शमण इत्युच्यते १४ स सरस्व गात्री सुयई सिज्जं न पडिडिहेई सत्थारए अणाउत्ते पावसमणेत्ति बुच्चई १५ पुनः सः कः यः सरजस्सपाद खणिति सत्थारजेरजीपणु ठितचरणः अप्रसृज्यैव शेते पुनर्य शिज्यां न प्रतिलेखयति शयां वसतिं उपाथयं न सस्यक् प्रतिलेखयति न प्रमार्जयति पुनर्यः

रत्ते पावसमणेत्ति बुच्चई १२॥ अथिरासणे कुक्कुईए जल्यतल्यनिसोयई । आसणं मिअणाउत्ते पावसमणेत्ति बुच्चई १३ ।

स उच्यते ११ विवादं कलह च उदीरयति विवादने उदरेरे कलहने उदरे अप्रथिष्ठः आलानी बुद्धिहतिनासयति अधर्शिष्ठ पापी आपरी बुद्धिने हणे विग्रहे दंदिप्रहार कलही वचनादि विवादे रक्तः विग्रह विषवाद कलहकरे चीउलगाळे कलहरत्त पाप शमण स उच्यते १२ अथिरासनः आसणथीरनहीं सुखादिचेष्टा कारक सुखादिकरी चेष्टाकरे यत्त तल्ल निषीदति जोहां तीहां वैसे आसणे पीठादी अनयुक्तः असावधान आसनपीठा

सन्तारते अनागण सन्तारक्रेने तदा पीरुपी अभगित्वा अविधिना असावधानत्वे नगते स पाप यमण उष्यते १५ दुबहहीविगइओ आहारिइ अभि
राग परए याओरुमे पाव समणेति यगइ १६ यो दुग्धदधिनीचिहती अभोएण वार२ आहारयति पुनय तप कमणि थरत तप कअणि थरति
धते स पाप यमण इउ, चाते १६ अत्त मिय खरमि आहारिय अभिल्लुण चीरओपडिचीएइ पाव समणेति बुचइ १७ पुनर्यं सूर्योऽस्तमिते सति
अभोएण प्रतिदिन आहारयति आहार करोति पुनयथोदित प्रेरित सन् प्रतिचोदयति केनचित् गोताधेन ग्रिचित सन् त पुन प्रतिग्रिप्ययति
स पाप यमण उचते १७ आरिय पत्थिवाइ परपासण्ड वेचइ गाण गणियदुक्काए पाव समणेत्तिबुचइ १८ पुनर्यं आचार्यपरित्यागी आचायान् परित्य
ज्जतेति आचार्यपरियागी आचायादि सरसाहार अपरेभ्योगानादिभ्योददति अग्रभ्य वदन्ति तप कुर्वं तु इत्यादि गुरुणा दूषण दत्वा पृथक भयति

ससरत्तपाथो सुयइ सेज्ज नपडिलेहइ । सवारए अणाउत्ते पावसमर्णं ति बुचइ १४ ॥ दुबहही विगइओ आहारिइ
अभिनखण । अरण तनोऊमे पावसमणेति बुचइ १५ ॥ अत्य तमियसर्म्मि आहारिइ अभिपल्लण चीइओ पडिचो

नोऊनेविये असावधान अणपडनेउयिने स पाप यमण इति उचते १२ स चित्त रीयुण पादो स्वपति सचित्तजम्मु भग्गा पगेसोयं सिग्गां वसति
अ प्रमाथयति उपायपडिनेहेनही पूणही सन्तारके अनायुक्त अथ असावधानरुहापडीलेहेनही उपायोगराखिओही
ते पाप यमण कहीये १४ दुग्ध दधिप्रगुगा विज्जतय दूध दहि इयादिकविगी आहारयति अभोएण वार २ आहार करे वारवार तप कअणि
पण तपनेविये रति नही तप न करे १ पापयमण उचते १५ अस्त गच्छतिसूर्ये अय मतांताइ आहारयति अभोएण वारवार जिमे वारवार

पुनर्यः परपाषाणान् सेवते इति परपाषण्डसेवक परेषु पाषण्डेषु रुद्वैश्यादि सुखं दृष्टातान् सेवते पुनर्योगाणं गणिकी भवति गणात् गणं षण्मासभ्यन्तर एव सक्तामतीति गाणं गणिकीऽत एवदुर्भूती दुराचारतयानिन्दनीयः इत्यर्थः स पाप श्रमण उच्यते १८ सयज्ञेहं परिचञ्ज परगेहं सिवावडेनिमित्ते ण यव वहरई पावसमणेत्तिवृच्चई १९ यः पुन स्वयं स्वकीयं गृह दीक्षां गृहीत्वा पूर्वं एकन्यत्ता परस्य अन्यस्य गृहस्थस्य गृहेपरगृहे व्याप्रियते आहारार्थी सन् तत् कार्थ्याणि कुरुते पुनर्योगनिमित्ते न शुभाशुभ कथनेन व्यवहरति द्रव्यं अर्जयति अथ वा गृहस्थ्यादिनिमित्तं व्यवहरति क्रय विक्रयादिकं कुरुते स पाप श्रमण इत्युच्यते १९ सन्नाइ पिण्डजेमेई निच्छई सामुदायिकं वाहेइ पावसमणेत्ति वुच्चई १० यः पुनः स्वज्जाति पिण्ड स्वकीय बन्धुभिर्दत्तं आहारं भुंक्ते रागपिण्डं भुंक्ते इत्यर्थः पुनर्यः सामुदायिकं सामुदायिकं गृहात् गृहात् गृहीतं भैक्ष्यं न इच्छति नवाच्छति

एइ पावसमणेत्ति वुच्चई १६ ॥ आयरिय परिब्वाइ परपासंड सेवए । गाणं गणिए दुभुए पावसमणेत्ति वुच्चई १७ ॥
सयं गेहं परिव्वज्ज परगेहं भिवावडे । निमित्तेणाय ववहरई पावसमणेत्ति वुच्चई १८ ॥ सन्नाइ पिण्डजेमेइ नेच्छई

गुरुभि श्रियतस्तानेव प्रतिश्रियति गुरुशैल्यादिधाथकां साहसो गुरनेसीखदे ते पापश्रमण कहीइ १६ आचार्य परित्यागी आचार्यने छोडीनि पर दर्शन शास्त्रे रत सेवाकारकः परदर्शननी सेवाकरे परदर्शननीनां शास्त्रभाणे षण्मासमध्ये नव नव गच्छं संक्रामतिछमासमांहिनवानवागच्छमांहिपेसे स पाप श्रमणः इति उच्यते १७ स्वकीयं गृहं परित्यज्य आपणं घरच्छाडीने परगृहे पिडार्थी सन् व्यापृतकृत्यं करोति पराए घरे कामकरे आहारनिमीत्ते निमित्त द्रव्यार्जनार्थं करोति द्रव्योपार्जनार्थं अर्थे निमित्तप्रकासे स पापश्रमण इत्युच्यते १८ सन्नातपिण्डं जीमयति आपणी जातिनाशयकी अहारलीइ

पुनर्यो गृहि निपत्या गृहिणी निपियागृहस्य गृहेगत्वा पत्य कादिक वाहयति आरोहति मञ्चमञ्चिकापीठिकादिषु तिष्ठतीत्यर्थं स पाप यमण उच्यते २० एगारिसे पञ्चकुसोनसबुडे रूपधरे मुणपपराणहिडिमे अयसिलोए अयसिलोए नसेइह नेव पर मिलोए २१ एताइयो रूप धरी मुनिवेपधरी स इह अग्निन् लोके न तथा परमि परस्मिन् लोकेपि न स गृहस्थोपि न भवति साधुरपि न भवति उभयतीपि भ्रष्ट इत्यथ स कोहय पञ्चकुयोल सटत पञ्चवते कुगीलाय पञ्च कुगीलाम्तइत् अस्मृतीऽजितेन्द्रिय अत्र प्राकृतत्वादकार लोप अथवा पञ्च कुगोले सटत सहित याहयाजिनमते पञ्च कुगीलाम्नाध्यवर्ती इत्यर्थं ओसत्रोपासत्यो हीड कुसीलीतहेवस सत्तो अह छन्दो वियए अयदग्निजाजिणमयग्नि १ पाप अमथोप्यव दनीय एव पुन कोहयो मुनि प्रवराणा प्रधान मुनीना मध्ये अथ स्थित स पाप यमण एतस्मिन्

सामुदाणिय । गिहिनिसेज्ज चवाहिड्ढ पावसमणेत्ति बुच्चइं १६ ॥ एयारिसिप चकुसील सबुडे रूपधरे मुणपपव
राणहिडिमे अयसिलोए विसमेवगरहिण नसेइहनेव परत्यलोए २० ॥ जेवज्जए एएसयाओ दोसे समुच्चए हीड्ढ

सामुदायिकि भिच्चां न वांरुत्ति तेधरनी भिच्चा न वांरुत्ते घणा घरनी गृहनिपत्या तूलिकादिका सेवते गृहस्थानापत्यक शीर्षपीठि प्रमुखधेये उपरिवेसे स पापयमण इति उच्यते १६ एताइया पञ्चकुगीला पार्श्वस्थादय वेपमात्रधारिका एपाच कुसिलियापासत्यादिक वैसमात्र तेहना धरणहार जसवो पासत्यो २ कुसीली ३ ४ ससत्तो ५ अहाऊदी एया च मुनिवेपधरा मुनिवराणा अधस्ताइतीं मुनिवरमाहि अधम भूडा अक्कीन् लोके विपयेनियएवस्यात् इहनीकी णिपि निर्दफहुइनेव परलोकेगर्हिती भवति न तेहने इहलीक सिद्धि न परलोके सिद्धि २० य वर्जयति एतान् सदापि दीपात् एदीपने जे

लोकै विषनिवर्गर्हितः विषभिव निन्द्यः विषवत् त्याज्यइत्यर्थः २१ जीवजाए एएस सया ओदी से सेसुव्वए हीइ सुणीएमज्जे अय सिलीए अमिय वपूइए आराहए लीगमिणं तहापरिन्तिवेमि २१ यः एए इति एतान् दीषान् सर्वदा वर्जयेत् स सुव्रत सुष्टुव्रतानि यस्य स सुव्रतः सहीज्वल व्रतधारी सर्व सुनीनां मध्ये एतस्मिन् लोके अमृत इव पूजितो भवेत् सर्वसुनीनां आदरणीयः स्यात् पुनः सुव्रत साधुः अस्मिन् लोके तथा परत परभवेपि आराधकः स्यात् २१ इति पाप श्रमणीयं १७ इति श्रीमदुत्तराध्ययन सूत्रार्थ दीपिकायां उपाध्याय श्रीलक्ष्मी कीर्त्तिगणि शिष्य लक्ष्मी वसुभनणि विरचितायां पाप श्रमणीयाख्यं सप्तदशमध्ययनं सम्पूर्णं ॥ १७ ॥ अथाष्टदशं अध्ययनं आरभ्यते ॥ सप्तदशेऽध्ययने पाप स्थानकनिवारणं उक्तं तत्पापस्थानं निवारणं संयमतो भवति स च संयमो हि भोगजयात् ऋद्धे स्था गात्र भवति स च भोगत्यागः संयतराजर्षिदृष्टान्तेन अष्टादशाध्ययनेन दृढयति इति सप्तदशाष्टा दशयीः सम्बन्ध कम्प्लेनयरेरायाउदिणबलवाहणे नामिण सञ्जएनामभिगव्वं उवनिगए १ काम्पिल्ये नगरे राजा अभूत् कीदृशः स राजा नाम्ना संयतः इति नाम प्रसिद्धेः पुन कीदृशः उदीर्णं बलवाहनः उदीर्णं उदयं प्राप्तं बलं येषां तानि उदीर्णं बलानि उदीर्णं बलानि वाहनानि यस्य स

सुणीणसज्जे अयंसिलीए असयंवपूइए आराहए दुहओ लीगमिणंत्तिवेमि॥२१ पावसमग्गिज्जं सम्मत्तं॥१७ कंपिल्लेनयरे

राया उदिस्स बलवाहणे । नामिण संजएनामं मिगवं उवनिगए १ ॥ हयाणीए गयाणीए रहाणीए उवनिगए । पाय

कोइवर्जे स सुव्रत सदाचारोभवति सुनीनां मध्ये तिकी साधू सुनीश्वरां माहिसदाचारहुयें तथास्मिन्लोकै अमृतमिवयः पूजितः इहलोकैनेविये अमृतनी परिपूजोइ इमलोकं परलोकच आराहयति आराहइ इणे प्रकारे इहलोकसाधेइति ब्रवीमिति म १ इति सतरमः इति सतरमध्ययनं उवार्थस्य संपूर्णं १७ कंपिल्यनुरेनगरे राजाकांपिलपुररम्यमनीहरछे उदयप्राप्त बलचतुरंगसेनासहित उदयप्राप्तहुओछे चतुरंगिणीसेनासहित नाम्नासयतराजासंयतीइस्येनामे

उदीर्णं बलवाहनं अथ वा यल चतुरङ्गं गजाङ्गरथसुभट रूपं वाहनं सविकाविशरि प्रमुखं बलं च वाह्यं च बलवाहने उदीर्णे उदयं प्राप्तं बलवाहनी यस्य स उदीर्णं बलं वाहनं स स यतो राजा मृगया उपनिर्गतं नगरात् आच्छेदकेगतं मृगया आच्छेदकं उच्यते १ इयाणीए गयाणीए रक्षाणी एत हे वय पायत्ताणीए महया सव्वञ्चो परिवारिए २ पुन कीदृश्यं स यतो वृष हयानां अनीकं तेन इयानीकेन घोटकटकेन तथा पुनर्गलानीकेन कुञ्जरकटकेन तथैव रथानीकेन पुनर्भहता प्रचुरेण पादात्यनीकेन सर्वत परिवारितं सर्वं मियं कुम्भित्ताहयगत्रोक्कं पिबुज्जाणकेसरि भीए सन्ते मिएतल्यं वहेइरसमुच्छिए ३ स स यतो वृषोहयेगतीऽस्वारुढस्तत्र कापिल्लोद्यानिकेशरिनाम्नि पूर्यं मृगान् चिद्याम्प्रे रयित्ता अग्नेन चासयित्ता तान् मृगान् वध्यति कीदृश्यं स यतो रसमुच्छितं रसस्त्रेपा मास्वादानु भवस्तत्र लोत्तुप कीदृशान् मृगान् भीतात् पुन कीदृशान् खानि प्राप्तान् ३ अह

ताणीए महया सव्वञ्चो परिवारिए २ ॥ मिएच्छुम्भित्ता हयगत्रो कापिल्लुज्जाणकेसरीभीएसतेमिए तल्यवहेइरसमुच्छिए ३ ॥ अहकेसर म्भित्ताणी अणगारे तवोधणे सज्जायज्जाणसजुत्ते धम्मज्जाणज्झियायद्र ४ । अण्णोव मडव

रात्रि मृगया आच्छेदके निर्गतं आच्छेदानी निमित्ते नीसयो १ इयवल हाथोऽस्वकटक गजवल हाथी कटक रथवल रथतथेवच तिमवली पादातनीकेन पायक घणा महतासर्वत परिवारितं वेद्येत सवलेपरिवारे वीव्योयकी २ मृगान् सोभयित्ता अग्वारुढ मृगानिसोभ उपजावि चलावीति धीहेच वीथज्जी कापिल्लोद्याने केसरनाम्नि कापिल्लनगरने पासे केसरीनामे उद्यान वन पडके भीतान् स तस्मान् मृगान् तत्र उद्यानिसयती राजाद्र विहाद्या मृगउ रक्षा परहादीढेहे इस्या मृगानि मारेके रसने विपे मूर्धितं वृध्वीयकी ३ अथ केसरिनाम्नि उद्याने हवे केसरीनाम उद्यानने विपे अणगार साधू भगवत

केसरमिडज्जानि अणगारेतवीधणे सज्जायज्जाणसंजुत्ते धम्मज्जाणज्जिक्कयायई४ अथ मृगान् तासमारणीत्यादनानन्तरं केसरि उद्यानि अनगर धर्मं ध्यान
 आज्ञाविनयादिकं ध्यायति धर्मध्यानं चिन्तयति काथभूतीनगारस्तपीधनं. तपएवधनं यस्य स तपीधनः पुनः कीदृश्यः स्वाध्यायध्यानसंयुक्तः ४ प्रफोव
 मंडवंमीज्जायईज्जाविद्यासवे तस्मागणमिएपासं वहइसे नराहिवे ५ अप्फोडवमंडवमि इति वृक्षाद्याकीर्णः अप्फोव सचासौ मण्डपश्च अप्फोवमण्डपस्तस्मिन्
 अप्फोवमण्डपेमण्डपीहिनागवक्कीद्राचादिभिर्विष्ठिते स्थाने इत्यर्थं. तस्मिन् निज्जुञ्जे लतावेष्टिते सोनगारः अप्फोवमण्डपेस्थितो ध्यानं ध्यायति धर्मध्यानं
 चिन्तयति कीदृश्य सोनगारः क्षपिताश्रवः क्षपिताश्रवः निरुद्धपापागमनहारः अत्र पूर्वगाथा यामपिध्यानं ध्यायति

मीज्जायइज्जा विद्यासवे । तस्मागणमिए पासंदहेइसे नराहिवे ५ । अह आसगञ्जी राया खिप्प मागम्मसो तहिं ।
 हए मिएउपासित्ता अणगारं तत्थापासई ६ । अहराया तत्थसंभंतो अणगारो मणाहञ्जी मएउमंदपुन्ने गां रसगि

तपीधन तप तेजधनछे जेहनछे जेहनं स्वाध्याय ध्यानसंयुक्तः सज्जायध्यानतिणे करो सहित धर्मध्यान ध्यावेछे ४ अनिक वृक्षयुक्ते मंडपे अनिक वृक्ष एकठा हएअछि
 तीहांछायाइ साधु वेठाछे ध्यायतो धर्मध्यानं धर्मध्यानध्याइछे साधुकेहवाछे क्षपिताश्रव आश्रव सर्वरुंध्याछे तस्य पाण्डे मृगाः आगता ते मंडपने
 पासे मृग आब्योछे वोहतीदेडिछे सनराधिपः वाधितुं मारयितुं लग्न ते संयतराजा मृगने मारवा लागी ५ अथानंतरं अश्वारुढी राजाहवे राजा
 घोडे चळ्ळीयको चिप्रं शीघ्रं आगत्य तस्मिन् मंडपसमीपे उतावली मंडपसमीपे आवीने हतान् मृगान् दृष्ट्वा माग्यो मृगपञ्चीछे ते राजादेखीने अणगार
 तत्र पश्यति वलीतीहां मंडपनेविपे यतीवेठादीठा ६ अथ राजा तत्र संभ्रांतः भीतः देखीने राजा संभ्रातहञ्जीवीहनी चिंतियति अनगारी मुनिः

अथ राज्ञा मुनिश्चरण वन्दना कृता ततो नन्तर स भगवान् ज्ञानाति श्रेय युक्ती नगार साधुमौनेन ध्यानं आश्रित. सन् पिण्डस्य पदस्य रूपस्य रूपातीता दिकं ध्यायन् अथ वा धर्मध्यानं आश्रित सन् राजानं संयत भूपं प्रति न निमंत्रयति न जल्पयति ततस्त्रस्माल्कारणात् मुनिरभाषणात् राजा भय द्रुती भयभ्रान्ती भूत् इति वक्ति च ८ सञ्जञ्चो अहमस्मीति भयवं वाहराहिमे कुपे तेएण अणगारे डहेज्जनरकोडिए १० किं वक्ति तदाह राजासनसि एवं जानातिस अयं साधुमीनीं चांजाल्वा किञ्चिद्विरूप ल्वरितं मा कुर्यात् तस्मात् स्वकीयं वृपल्वं स्व नाम सहितं अवादीत् इति भाव हे भगवन् ग्रह संयती राजासि इति हेतो हे भगवन् मेव्याहरमाज्जल्पय हे स्वामिन् भवादृशः साधु क्रुधः सन् तेजसा तेजी लेख्यादिनानरकोटिन्दहेत् तस्मात् स्वामिना क्रोधी न विधेय १० अमयं पत्थि वा तुज्जं अभयदाया भवाहिय अण्णिञ्चिजीवलीगं मिक्किं हि साएपसज्जसि ११ तदा मुनि राह हे पार्थिव हे राजन्

यवं अणगारेज्जभागमस्सिए । रायाणं नपडिमंतेइतञ्चोराया भयदुए ८ ॥ संजञ्चो अहमस्मीति भयवं वाहराहिमे । कुइ तेएण अणगारे डहेज्ज नरकोडीञ्चो १० ॥ अमयं पत्थिवातुज्जं अभयदाया भवाहिय । अण्णिञ्चिजीवलीगंमि

सन् स भगवान् हवेते साधुमीनकरीविठछे अणगारी ध्यानमाश्रित. स्थितः साधुध्यानध्यायके ध्यानमाहिं वत्तेछे राजानंनप्रतिसंलयति तिणिकारणी राजानि वीलाब्यी नहीं ततो राजा भयद्रुतभयभीतोजात तिवारेराजा भयभ्रान्त इञ्चो ८ सयतीनामा अहमस्सि संयतनामे राजाडुंछुं अनरीनथी हे भगवन् आलापय मांब्याहरमुभने वीलावी मुभस्युवातकरी कुपितः सन्तेजसा अणगारकीप्यीथकी यतीतेजे करीनेदहेअर कीटीः मनुथनीकोडिने वाले १० न्यपि लवाचःअभयदानभीपार्थिव तुभ्यंभी राजा तुभने अभयदानछे अभयदाता भवभवानपिजिममेतुभनेअभयदानदीधुतिमतुं सर्वजीवने प्रभयदानदे अनित्ये

तुभ्य अभय भय मा भवतु त्वमपि अभय दाता भवाहि इति भव च इति पाद पूरणे जीवाना अभयदान देहि जीवाना हिंसा माकुरु इत्यर्थ हे राजा
 अनित्ये जीवन्तीके समारे कि इति किमर्थं हिंसाया प्रसज्जसि प्रकर्षेण सज्जी भवति जीवन्तीकस्य अनित्यत्वमपि अनित्योसि किमर्थं प्राणि इध करोपि
 इत्यर्थं ११ नया मध्व परिषज्ज गन्तव्यमयसम्भते अणित्ते जीवन्तीगमि कि रज्ज मिपसज्जसो १२ हे राजन् यदा सर्वं अन्त पुरादिक कीटागार
 भण्डागारादिक परित्यज्यते तय परन्तीके गन्तव्य वर्त्तते कथ भूतस्य ते अवयस्य परवयस्य मरण समये जीवो जानाति न म्रियते पर कि करोति जीव
 परवग सन् येन्द्राचिना एव जीवो म्रियते यदुक्त मन्वे जीवावि इच्छन्ति जीविद्योतमरिज्जयो तेन हे नृप तव सर्वं परित्यज्यमर्त्तं ध्यमस्ति तदा अनित्ये
 जीवन्तीके अनित्ये स सारे कि राज्ये प्रसज्जमि प्रसङ्ग करोपि गृहो भवति १२ जीविय चेव रूढश्च यिज्ज सम्पायश्चल जत्यत मुज्जसोराय पिश्लय ना

किं हिंसाए पसज्जसो ११ ॥ जयासव्व परिचज्ज ग तव्व मवसस्यते । अणित्ते जीवलीग मि किरज्ज मि पसज्जसो १२
 जीवियचे वरूवच विज्जुसपायचवल जत्यत मुज्जसोराय पेच्चत्य नावनुज्जसे १३ ॥ दाराणिय मुयाचिव मित्ताय तर

जीवन्तीके अनित्ये जीवन्तीक मनुष्य पण कथ हिंसयासज्जी भवसि कां हिंसानि विपे आसकथाइहे ११ हे राजन् यस्मात् सवपरिवर्त्यजिणे कारणे
 सपण कांठोने गतव्य अयस्यते तयाने प्रवस्य परन्तीक जायु हे अनित्ये जीवन्तीके अनित्य जीवन्तीक मनुष्य पणु कि राज्ये प्रसज्जसि यद्दो राजाम्यु
 राण्यने विपे आमणत्तयो हे १२ हे राजन् जीवितव्य रूपच यद्दो राजाएथाउखुने रूप विद्युत्त पात यच्च चलवर्त्तते बीजलीनीभवत्कारते सरियु पचलके
 यवत्तं मुत्तमे हे राजन् हे राजा एह चीवितव्यने विपे न् मोहपामिहे मूर्खामिहे परलीकार्यं त्व न जानासि परलीकार्यं तु कांइ समभङ्ग । नयो १३

ववुज्जसि १३ हे राजन् जोवितं आयुः च पुनः रूप यरीरस्य सौन्दर्यं विद्युत्सम्पातचञ्चलं वर्त्तते विद्युतः सम्पातश्चलनं तद्वत् चञ्चलं वर्त्तते हे राजन् यत्र यस्मिन् आयुषि रूपे चल्मं सुहृसे मीहं प्राप्तीषि प्रेत्यार्थं परलोकार्थं नावबुध्यसे न जानासि १३ दाराणि य सुया चैव मितायतहबन्ध वा जीवं तमणु जीवन्ति मय नाणुव्वयन्ति य १४ हे राजन् दाराः स्त्रिय च पुनः सुताः आलजाः पुनर्मिताणि तथा बान्धवाः ज्ञातयो भाट प्रमुखा एते सर्वेपि जीवन्तं मनुष्यं अनुजीवन्ति जीवतो धनवतः पुरुषस्य पृष्टे उदर पूर्त्तिं कुर्वन्ति तस्य द्रव्यं भुञ्जन्ति इत्यर्थं परं तं पुरुषं मृतं न अनुव्रजन्ति मृतस्य तस्य पुरुषस्य पृष्टेकेपिन व्रजन्तीत्यर्थं तदा अन्यद्गृहादिकं किं पुनः सहयास्यतीति अतः क्लतघ्नेषु आदरो न विधेयः तस्मात्परिकरेकीरागः कर्त्तव्यः १४ नीहरन्ति गुयं पुत्तापि यरं परमदुक्खियापि यरीवितहा पुत्तो बन्धूरायातवं चरे १५ हे राजन् पुत्ता मृतं पितरं नीहरन्ति गृह्हाक्त्रिः कासयन्ति कीटश्याः

बंधवा । जीवंत मणुजीवंति मयंनानाणुव्वयंतिय १४ ॥ नीहरंति मयंपुत्ता पियरं परमदुक्खिया । पियरोवि तथा -
पुत्ते बंधूरायं तवंचरे १५ ॥ तत्रोतिणज्जिएदव्वेदारिय परिरक्खिए कीलंतन्ने नरारायं हट्टुट्ट मलंकिआ १६ ॥ तेणा

स्त्रीयःस्त्री सुता पुनः पुत्रतिमः मीत्राणि तथा बंधवाः मित्र तथा भाई तदुपार्जितं वित्तायुप भोगं अनुगच्छंति जीविते जीवतांथकां पुठे लागि सेवाकरे मृतनानुगच्छंति साइं पणिमूयापक्खी सांथे कीइ नजाइं १४ निष्काशयंति मृतं पुत्ताः पितामरे तिवारे पुत्र कहि वेगोकाढी पितरं परमदुक्खिता पितानि परमदुक्खियका पितरोऽपि तथापुवान् निष्कासयति पितापणि पुत्रने काढी मूअनि बांधवा बंधून् भी राजन् तस्मात्तपचर भाइ भाईने काढे तिणि वारणे राजा तप करि १५ ततो मरणानंतरंतेनार्ज्जितेनद्रव्येण तिवारे पक्खी पुत्र ते तात नी उपायी द्रव्य दारिषु च परिरचितेषु अने स्त्रीभली परिराखी

पुत्रा परम दुःखिता अत्यन्त शोकादिता पितरोपि जनका अपि तथा तेन प्रकारेण पुत्रान् मृतान् नि काशयन्ति एव बान्धवान् मृतान् नि काशयन्ति तस्मात् एव प्राप्त्वा हे राजन तपश्चरेत् तप कुरु इत्यर्थं १५ तद्योगेज्जिण्डर्वीदारिय परिरक्खिए कील तन्ने नराराय इड तुड मल क्किया १६ ततो नि सरणान्तर ते नैव पित्रायजितधनेन च पुनर्दारियु स्त्रीपु हे राजन अन्ये नरा क्रीडन्ति स्वामिनिमृते सति तस्य धने तस्य स्त्रीपु च अपरे मनुष्या एट तुट यथास्यात्तथाहर्षिता सन्तुष्टा सन्त अलङ्कृता अलङ्कृता कुर्वन्ति कथ भूते धने परिरचिन्ते समस्त प्रकारेण चौरान्नि प्रमुखेभ्य रचिन्ते यावत् स जीवति तावत् धनस्य स्त्रीषाञ्च रचा कुरुत मृते सति अन्ये भञ्जन्ति धन स्त्री प्रमुखा पदार्थास्तैव तिष्ठन्ति न च सार्धं समागन्ति कीर्धं वराकीजन दु खेन द्रव्य उत्पाद्य यत्ने न रचति दारात् अपि जीवितव्य भिवरचति अलङ्कारैर्नैवैर जयति तस्मिन् मृते सति ते नैव विन्ते न तैरेवदारैश्च अन्ये ह्यष्टा शरोरे पुलकादिमन्त तुष्टा आन्तर प्रीतिभाजोलङ्कृता विभूषिता सन्तो रमन्ते यत द्रष्टव्यो भव स्थितिरस्ति ततो हे राजन् तपश्चरेत् तप कुयादिति स वध १६ तेणा विज कय कम्म सुह वाज इवा दुह कम्मणातिण सञ्जुत्तो गच्छइ उपर भव १७ तेनापि मरणोन्मुखेन जीवेन यत् शुभ कर्म अय वाऽशुभ कर्म कृत भवेत् सुख दुःख वा उपार्जित स्यात् तेन शुभाशुभ लक्षणैः कर्मणा स युक्त सन् स जीव पर भव गच्छति एतापता जीवन्त्य सार्धे अन्यत् कि मपि नायाति खोपार्जित शुभाशुभ कर्म सार्धे समागच्छति १७ सोजण तस्ससो धम्म अणगारस्स अन्ति ए महया

विज कयकम्म सुहवाजद्रवाटुह । कम्म गातिण सजुत्तो गच्छइत्थो परभव १७ ॥ सोजण तस्ससो धम्म अणगारस्स

इतो भी राजन् अन्ये नरा क्रीडन्ति भु जतिते द्रव्य अने स्त्री तेहने बीजा पुरुष भोगवे एष्टा तुष्टा अलङ्कृता हर्षितहृत्प्राथका सतोप पामि भलाङ्गुहा ग्रहणापश्चरे १६ येनापि यत्कृत कर्मजोषि जीवे जे कर्मकीषाङ्के शुभ अथवा अशुभ भलु अथवा भ दु कर्मतेनैव स युक्त तेजकम्म सार्धे गच्छति परभव

सखे यनिर्व्वयं समावन्ती नराहिवी १८ स स यती राजा महयाइति महासखे गं निर्व्वेदं समापन्नः सखे गश्च निर्व्वेदश्च सखे गनिर्व्वेदं सखे गीभीचाभि
लाषः निर्व्वेद संसारादुद्दिग्गता स राजा उभयं प्राप्त इत्यर्थः किं क्त्वा तस्य अनगारस्य साधो अन्तिके समीपे धर्मं श्रुत्वा १८ सखे श्री चइउं रज्जं
निक्खन्ती जिणसासणे गद्दभालिस्स भगवन्नी अणगारस्स अन्ति ए १९ संयती राजा गर्दभालि नाम्नीऽनगारस्य अन्तिके समीपे जिणशासने वीतराग धर्मे
निःक्रान्त समागतः संसारान्द्रुहाच्चानि स्रुत जैनीं दीचामाश्रितः किं क्त्वा राज्यत्यक्त्वा १९ चिच्चारज्ज पव्वइत्ती खत्तिन्नी परिभासइं जहाति दीसइं
रूवं पसन्नं ते महामणो २० अत्र ब्रह्म संप्रदायो अयमस्ति स संयतराजर्षिर्गर्दभालिनामाचार्यस्य शिष्यो जात पश्चाद्दीतार्थो जातः समस्त साध्वाचारवि

अंतिए । महया संवेग निर्व्वयं समावन्ती नराहिवी १८ ॥ संजत्तो चइत्तोरज्जं निक्खन्ती जिणसासणे । गद्दभालिस्स
भगवन्नी अणगारस्स अंतिए १९ ॥ चिच्चारज्जं पव्वइए खत्ति ए परिभासइं । जहाति दीसइं रूवं पसन्नं ते तहामणो २०

जीवः ते जीव परलीकने वीषे जाइ १७ श्रुत्वा तस्य साधो वचनं गर्दभिल्ल आचार्यना वचन सांभलीनि अणगारस्य समीपे तयतीपासे धर्मं सांभलीनि महतां
संवेगेन निर्व्वेदं भवोद्दिग्गता मोक्षेच्छा घणोसंवेग ऊपनी संसारथी ऊभगी रूपं समापन्नः संप्राप्त नराधिपः मोक्षनीं इच्छाहइं राजानि १८ संयती
राजा राज्यं त्यक्त्वा संयती राजा राज्यच्छेदीने निःक्रान्तः चारित्रप्रपन्न जिणशासने चारितलीधो जिणशासने विषे गर्दभालि भगवंतः गर्दभालि भगवंतने
अनगारस्य समीपे साधू समीपे १९ त्यक्त्वादिशादिकां प्रवज्यांच गृहीत्वा किंचित्तनगरगतः तत्र चत्त्रियः सुरभवात् मनुथ भवे समागत्य सच पूर्व्वं भवस्सुत्वा
प्रव्रजितः स ऋषिः संयतस्य मिलित ततस्सरूपमाहः यथा न च दृश्यते रूपं विकाररहितं चत्त्रिय राजन्धषि संयतीने पूछेच्छे जेहवुं ताहरं रूपदीषेच्छे

चारदत्तो गुरोरदिशेन एकाको विहरन् एकस्मिन् ग्रामे एकदा समागतोऽस्ति तत्र ग्रामे चत्विशराजपिमिलित स चत्विश साधु स यत मुनि प्रतिभापते यदति पर स चत्विश मुनि कोट्योऽस्ति स हि पूर्वजन्मनि वैमानिक आसीत् ततयुत्वा एकस्मिन् चत्विश कुले समुत्पन्न तत्र कुतश्चित्तथा विधनिमित्त दर्शनादुत्पन्न जाति स्मृतिस्तत्त समुत्पन्न वैराग्यो राच्यत्यक्ता प्रव्रजित स चत्विशराजपिर निर्दिष्टनामाश्चत्विश जाति विशिष्टत्वात् चत्विश मुनिर्जाति स्मृति ज्ञानवान् स स यत मुनि दृष्ट्वा परिभापते स यतस्य ज्ञानपरीक्षा कर्तुं स यत मुनि मिल्यधाहार कि परि भापते तदाह हे साधो यथा येन प्रकारेण ते तव रूप बाह्याकार दृश्यते तथा तेन प्रकारेण तव मन प्रसन्न विकार रहित वर्त्तते अन्त कालुष्ये हि एव प्रसन्नताऽसम्भवात् २० पुन कि परिभापते इत्याह कि नामे कि गुत्ते कस्मदा एव माहणे कह पडियरसी बुद्धे कह विणीएत्ति बुच्चसि २१ हे साधो तव कि नाम तव कि गोत्र पुनकस्मदाए इति कस्मै अर्याय वा त्व माहन प्रव्रजितोसि हे साधो त्व बुद्धान कय प्रति चरसि त्व आचार्यान् केन प्रकारेण सेवसे पुन हे साधील कय विनीत इत्युच्यसे अह त्वा पृच्छामि २१ सञ्जओ नाम नामेण तहा गुत्ते ण गोयमी गहभाली ममा यरिया विज्ञाचरण पारगा २२ अथ चत्विश साधो प्रयानतर स यत साधु रुवाच हे साधो अह स यत इति नाम्ना अभिधानेन नाम प्रसिद्धोऽस्ति तथा पुनरह गोत्रेण गौतमोऽस्ति मम आचाया

किनामि किगुत्ते कस्मदाएवमाहणे । कहपडिय रसीबुद्धे कह विणीएत्ति बुच्चसि २१ ॥ सजओ नामनामेण तहा

तथा ते विकाररहित मन वर्त्तते तेहवोताहरो विकाररहित मनवर्त्तच्छे २० किनामा किगोत्र ताहर नामसुच्छे तारुगोत्रसुच्छे कस्मै अर्यायसा षणो मुनि जात तु कित्थे अर्ये जतीहओकेकयकेन प्रकारेण प्रतिचरसी बुद्धे आचायादिकनी सेवाजिमकरे कय विनीत इत्युच्यते कीणप्रकारि वीनीत कथोइ २१ सयत प्राह अहनाम्ना स यत स यती कहच्छे स यतीमाहरोनाम तथागोत्रेण गोत्तम गोतमगोत्र गहं भाविनामानो मम आचार्या

शुरुवीगर्द्भांलिनान्म कौटुशा मम गुरुव. विद्याचरण पारगा विद्या च चरणं च विद्याचरणे तयो पारगाः विद्याचरण पारगाः विद्याः श्रुतज्ञानं चरणं चारितं तयोः पारगामिनः अयं आशयः अहंतेर्गर्द्भांलि नामाचार्यं जीवघातान्निवर्त्तितं स्तुतिफलं उक्तञ्च ततस्तदर्थं साहनीस्त्रि यथा तदुपदेशं गुरुन् प्रतिचरामि तदुपदेशं सेवनाञ्च विनीतोस्त्रि इतिभावः अथ तद्गुण बहुमानतोऽप्युष्टोपि क्षत्रियमुनिराह २२ किरियं अकिरियं २ विनयं ३ अन्नाणञ्च ४ महाशुणौ एणहिं चउहिंठाणेहिं सेयन्ने किंप भासइ २३ हे संयत महाशुने एतैश्चतुर्भिः स्थानैर्मिथ्यात्वाधार भूतैर्हेतुभिः हत्वा सेयन्नाः किं प्रभाषंते सेयं जीवादिबसुजानंतीति सेयन्ना पदार्थज्ञाः कुलितं प्रजल्पन्ते एतावता एतैश्चतुर्भि हेतुभिर्मिथ्यात्विनः सर्वेचि षष्ट्यत्तर त्रिशतभेदाः पाषण्डिनो यथावस्थित तत्त्वं अज्ञानाना यथा तथा प्रलापिन सन्तितेलया ज्ञातव्याः तानिकानि चत्वारिस्थानानि क्रिया

गोत्तं या गोयमी गंद्दभाली मसाथरियाविज्जा चरण पारगा २२ ॥ किरियं २ अकिरियं २ विणयं ३ अन्नाणञ्च महा
मुणी एणहिं चउहिंठाणे हिंमेयन्ने किंपभासइ २३ ॥ इडपाउकरे बुद्धे नायए परिनिव्वुए । विज्जाचरण संपन्ने सच्चैसच्च

गर्द्भांलिनान्मे आचार्यं माहरी गुरुच्छे विद्याचारितपारगामिनः विद्याअने चारितपारगामीच्छे २२ अथ अप्रष्टीपि चत्तीआह क्रियावादी १ अक्रियावादी २ विनयवादी ३ अज्ञानवादी ४ पुनः महाशुने एतैः चतुर्भिस्थानैः तत्ववेत्ता एचिहुं स्थानके जे सुत्ति कहे ते भूठ म्पवादा वीले कुलितं भाय ते मिथ्याभाषिणेत्यर्थः २३ इति प्रादुरकार्षीत् प्रकटीकृत ज्ञात तत्वं सन् तत्त्वनेजाणे श्रीमहावीरे इमकह्यो ज्ञातक मोच्चं गतः ज्ञातकुलनो जपनीमीच्चगयो तथा विद्याचरणभ्यां संपन्नः सहित विद्या अनेचारित तिणेकरीसहित ज्ञानच्छे सत्यवीले सत्य पराक्रमः सांचीच्छे जेहने पराक्रम २४

जीवादिस्वरूपा १ पपात् प्रक्रियाजीवादिपदाधानां प्रक्रियानाम्बित्वरूपा २ विनय सर्वेभ्यो नमस्कारकरण ३ अज्ञान सर्वेषां पदार्थानां भव्य ४ एतेहि एकार्थ्यादित्वेन मियात्वनीप्तेया कुत्सितभाषणहिण्तेषां विचारस्य असहत्वात् यतोहि सर्वथा सर्वत्र सत्ताया सत्वात् सर्वत्रजीव स्यात् अजी वेपि जीव बुद्धि ग्यात् १ पुननाम्बित्वे आत्मनो नाम्बित्वेऽस्य प्रमाणबाधितत्वात् च जीवाजीवयो रुभयोरपि सादृश्य नास्त्वित्वात् २ सर्वत्र विनये क्रियमाणे निर्गुणे विनयस्य अशुभफलत्वात् विनयोपिस्थाने एव क्त फलद तस्मात् एकान्त विनयोपि न अष्ट ३ अज्ञान हि मुक्तिसाधने कारण नास्ति मुक्तेर्ग्रान्म्यैवकारणत्वात् हेयोपादेय पदार्थयोरपि ज्ञानेनैव साध्यत्वात् ज्ञान विनाहितअपि न जानाति तस्मात् अज्ञानमपि न अष्ट ४ तस्मात् क्रियावादिन १ प्रक्रियावादिन २ विनयवादिन ३ अज्ञानवादिन ४ सर्वेयेते एकान्तवादिनी मियात्विन कुतीर्थिन कुत्सितभाषिणीप्तेया एतेषां पापण्डिनां सर्वेभेदा ३६ ३ त्रिपटुत्तरविशती प्रमिताभवन्ति तत्र क्रियावादिनां १८० प्रक्रियावादिनां ८४ विनयवादिना ३२ अज्ञानवा दिनां ६७ कुत्सितभाषित हि नचै तत् स्वाभिप्रायेण कितु भगवद्ब्रह्मा एतेषां कुत्सितभाषित्व तदाह १३ इदृपाष्ठ करबुबे नायए परिनिब्बुए विज्जा चरण सपत्ते सचे सच परिक्रमे २४ इत्येते क्रियवादिन कुत्सित प्रभापन्ते इत्येव रूप वचन बुद्धीज्ञाततत्त्वोच्चापक श्रीमहावीर प्रादु २ करोत् प्रकटी चकार कीदृशीज्ञातक परिनिर्हृत कपाया भावात् परिसमन्तात्कीती भूत पुन कीदृशीज्ञातक विद्याचरणसपत्र विद्याशब्देन घायकोत्तमज्ञान चरण यथास्यात चारित्र ताभ्यां सपत्र सहित पुन कीदृश सत्यपराकम सत्यवीर्यसहित २४ तेषा फलमाह पडति

सुख

परिक्रमे २४ ॥ पडति नरएवोरे जेनरा पावकारिणो दिब्बच गय गच्छति चरित्ता धम्ममारिय २५ ॥ माया बुद्धय

पतति नरके घोरिपडे घोरनरकने विपे ये नरा पापकारिण जे मनुथ पापनाकरणहारहे दिव्य प्रधानगति गच्छति देवता सवधिनी गतिने विपे

माया

नरएघोरे जीनरा पावकारिणी दिव्यं च गङ्गच्छन्ति चरित्ता धम्मआरियं २५ पुनः क्षत्रिय मुनिर्वदन्ति हे महासुने ये पापकारिणीनरा पापं असत्यरू
पणं कुर्वन्तीति इत्येवं शीलाः पापकारिणी ये नरा भवन्ति ते नरा घोरि भीषणे नरकेपतंति च पुनधर्मं सत्यरूपणारूपञ्चरित्ता आराध्य दिव्यं दिवः
सखन्धिनी उत्तमांगतिं गच्छन्ति कथंभूतं धर्मं आरियं आर्यं वीतरागीक्तं इत्यर्थं अत्रपापं असत्यवचनं ज्ञेयं एवं ज्ञात्वा भीसंयत
भवता सत्यप्ररूपणपरैरेव भाव्यमित्यर्थः २५ कथमपि पापकारिण इत्याह माया बुद्धयमेयंतु सुसाभासा निरलिया संजममाणीवि अहं वसामि इति
याभिय २६ एतत्क्रियाऽक्रिया विजय अज्ञानवादिनां मायीक्तं मायया कपटेन उक्तं मायीक्तं शाब्दीक्तं ज्ञेयं एते सर्वेपि कपटेन सृषाभाषन्ते इत्यर्थः
एतेषां क्रियावादिनान्तु तस्मात्कारणात् सृषाभाषां असत्याभाषा निरर्थका सत्यार्थं रहिता अपि निश्चयेन तेनैवकारणेन हे साधी संयच्छन् पापात् निव
र्त्तितः सन् तेषां पाषण्डिनां असत्यरूपणात् निवर्त्तितः सन् अहं वसामि निरवद्योपाश्रयादी तिष्ठामि अत्राहं पाषण्डिनां वाक्यरूपपापात् निहृत्तः
तिष्ठामि इत्युक्तं तत् तस्य स्थिरोकरणार्थं यथाहं असत्प्ररूपणात् निहृत्तस्तथा लयापि निवर्त्तितव्यमित्यर्थः यत साधुः स्वयंसाधुमार्गस्थितः अपरं
अपि साधुमार्गस्थापयति च पुन हे साधी अहं इरियामि इरे इर्यया गच्छामि गौचर्यादौ भ्रमामि २६ सर्वे ते वैश्यामज्जं मिच्छादिठी अणारिया

मेयंतु सुसा भासा निरलिया । संजममाणोवि अहं वसामि इरियामिय ॥ २६ ॥ सव्वेते वैश्या मज्जं मिच्छदिठी

जाये वात्वा आर्यधर्मं उत्तम प्रधान धर्मं करीने २५ वचन मेतत् क्रिया वादिनां एवचन क्रियावादीबोले सृषा भाषा निरर्थका प्रयो
जना एभृठीभाषा निरर्थक तेभ्यो निवर्त्तमानोहते क्रियावादीथकी अलगीरह्योहत्तु भुटथकीनि वर्तेहुं त्येकतो वसामि उपाश्रये इरियाभिविचरामि
उपाश्रयमांहरहुं कुं विचरं हुं २६ ते सर्वे क्रियावादीनी ममविदिताः यथा अमीं क्षत्रिय साधु कहे संयतीनि एकियावादी सर्वमे जाण्हाछि मिथ्या

विष्मन्तानि परलोए मय्य जाणामि अप्पय १० हे माधो ते मयपि क्रिया अक्रिया विनया ज्ञानवादिन चत्वारोपि पापच्छिदो मया विदिताप्ताता एतेषत्वा रोपि मिया दटयो मियादर्गन युष्ठा पुन र्हे चत्वारोपि अनार्या अनार्यकर्म कर्त्तार सम्यग् मार्गे विलम्बका मया एतेया दृग्गा सन्ति तादृग्गा ज्ञाता पुनरेते मुने परलोके विद्यमाने सम्यक् प्रकारेण अप्यह आत्मान स्वस्य परस्य च जानामि आत्मापर लोकात् आगत ततोह पर लोके आत्मान च सम्यक् जानामि ते कृतोद्यिनोपि सम्यक् ज्ञातास्तेन कुतोर्थिनां सद्म न करोमि कथ जानामीत्याह अहमासि महापाण्ड इम वरिस सञ्चोयमी जासापाली महापाणो दिव्यायरि म सञ्चोवमा १८ हे मुने अह महाप्राणे विमाने पञ्चमे ब्रह्म लोके देव चास कथ भूत अह द्युति मान् द्युति विद्यति यस्य स द्युति मान् तेजसो पुन कथ भूतोह वपगतोपम वपगत जोविन पुरुषस्थी पमायस्या सौवर्प गतोपम कीर्थं यथा इह वर्पगतजीवो इदानीं परिपूर्णोयु

अणारिया । विज्जमाणे परलोए । सत्त जाणामि अप्पय ॥ २० ॥ अह मासि महापाणे जुद्धम वरिस सञ्चोवमे ।

जा सा पाली महापाली दिव्वा वरिस सञ्चोवमा ॥ २८ ॥ सेत्तुए वभलोयाञ्चो माणुम्म भव मागच्चो । अप्पणोय

दृष्टो पनाया मियात्तो पनायते पुर म परलोके नथी जाणे जीयसहजेइ पे दाहीयच्छे विद्यामाने परलोके परलोके विद्यमानच्छे सम्यक् आत्मान जानामि पामानेयणिभनोपरिजाणु इ २० अह यमूव ब्रह्म देवलोकेइ ब्रह्म देवलोकेनेपिपेइच्चो द्युतिमान् वर्पगतोपमे महाकातिनीधर्णी वर्पसीनी उपमार या मापणोपमा पण्योपम सागरोपमादि महापालो सागरोपम देवसवधिनी वपगतोपमा देवता सवधिनी सीवरसनी छपमा २८ अथ तो ब्रह्मलोकात् ब्रह्म देवलोकाच्चो च योने माणुव भवमागत मणुवने भवित्राच्चो आत्मानय परेया आपणो अने बीजानी आयुर्जानामि यथा भवति तथा

रुचते तथाहं तत्र विप्रानि परिपूर्णयुरभूवं तत्र च या पालिर्महापालिचसादिव्या स्थिति र्मे अभूत् इति शेषः पालि शब्दस्य कोर्थः पालिरिव पालि जीवित तथाहं तत्र धारणात् पालि शब्दे न भव स्थितिः कथ्यते सा चेह पत्नीपम प्रमाणा महापाली सागरीपम प्रमाणस्थितिः कथ्यते दिवि भवादिव्यादेव भव सम्बन्धिनो स्थितिरित्यर्थः कथम्भूतापालिर्महापालिच वर्षसतीपमा वर्ष शतै केशीधारहेतु भिरुपमीयते यां सा वर्षशतीपमाद्विविधापिदिव्या भवस्थिति स्तत्रास्ति परं मे महापालोदिव्या भवस्थिति रासैदिति आम्नायः दशसागरायुरहमासमित्यर्थ १८ सेचुञ्जी वम्भलीगाञ्जी माणुसं भवमागञ्जी अप्पणीयपरे सिद्ध आडं जाणे जहातहा १९ से इति सीहं इत्यध्याहारः सीहं ब्रह्मलीकात्पञ्च मदेवलीकात् चुप्रतः सन् मानुष्यं भवं नरसम्बन्धि जन्मसमागतः आत्मनः च पुनः परेषां च यथा तथा आयुर्जीवितं वर्त्तते तथा जानामि यस्य मानवस्य येन प्रकारेण आयुरस्ति तस्य तेन प्रकारेण सर्वं जानामि परं विपरीतं न जानामि सत्यं जानामि १९ नाणारुइं च छन्दन्तु परिवर्ज्ज्जि सव्वडा इइ विज्जामणु सच्चरे ३० हे सुने संयतः साधुनानाबुचि किंवा वाद्यादि मत विषयमभिलाषं परिवर्जयेत् च पुनः छन्दः स्वमति कल्पिताभि प्रायं नानाविधं परिवर्जयेत् च पुनर्ये अनर्थाः अनर्थ्य हे तवयेि सर्वार्थाः अशेष हिं सादयी गम्य त्वात्तान् परिवर्जयेदिति सम्बन्धः इत्येव रूपां विद्यां सम्यग्ज्ञान रूपां अनुलची ह्यल्य सच्चरे स्वं संयमा ध्वनियायाः अह मपि इति विद्यां ज्ञानं ज्ञात्वा अङ्गीकृत्य संयम मार्गीया मीति ल्यापि तथैव संचरितव्य मिति हाईम् ३०

परेसिंच आडं जाणे जहा तहा ॥ २९ ॥ नाणारुइं च छंदंच परिवर्ज्ज्जि संजए । अणुडा जेय सव्वथा । इइ

जिमआउखुं छेतिम जाणुकु २९ च्चविय सुनिरुवाच पुनः नानारुचं च परतीर्थिकानां अभिलाप अभिप्रायं परिवर्ज्जयेत् खेच्छापणं साधुबज्जे अनर्थ हेतुत्वात् ये च हिसादय अनर्थनां कारणेहे इत्येव रूपाविद्याः परिलज्ज्य अनुचरेत् साधुः ते सर्वच्छांडीने तपकरुंहुं अहोसंयतसाधु ३० निर्वर्त्ते हं

क्रियायाद्यादि नानारुचि वर्जन निवेद शब्दसूचना लक्षण तत् अक्षरविषयाकृत्य अथवा पूर्ण पद पूर्णपद सम्पूर्ण ज्ञान पदशब्देन ज्ञानमप्युच्यते
कीदृश पुण्यपदम् अर्थ धर्मीपगोभितम् अर्थते प्राच्यते इति अर्थ स्वर्गापवर्गं प्राप्तिकारणभूत अर्थय धर्मय अर्थधर्मो ताभ्याम् उपगोभितम् अर्थ धर्मीप
गोभितम् एतादृश जिनोक्त सिद्धास्तम् अर्थ धर्मसहित श्रुत्वा यदि भरतयक्रधरस्सम्पूर्णं भरतचेतव षट्छण्ड रुम्बाज्यन्यक्षा दीक्षा जग्राह तदा त्वया
प्यग्निं जिनोक्तागमे चलितथ्य महाजनो येनगत स पत्या इत्युक्त्वात् स कल नृपेपु ऋपभ पुत्रो भरतो सुख्य स्तेनाय मार्गं समाञ्चित इत्यर्थं अथात्र
भरत चक्रिण कथा अयोध्यां नगर्या श्रीरिपभदेव पुत्र पूर्वभवकृत मुनिजन वैयाहृत्यर्कित चक्रिभोग प्रथमचकी भरतनामास्ति तस्य नवनिधानाना
चतुर्दशरजाना हात्रि गत सहय नरपतीना द्विसप्तति सहय पुरवराणा पण वति कीटियामाणां चतुरशीति सहयहयगुरथानां षट्छण्डभरतस्य ऐश्वर्यं
कुर्वत स्वस पथानुसारेण साधमिकवास्य कुर्वत स्वय कारिताष्टापदशिर स स्थित चतुर्मुख योजनायामजिनायतनमभ्यस्थापितनिज २ वपु प्रस्थाणो
पेत श्रीऋपमादि चतुर्विंशति जिन प्रतिमावन्ददार्चन समाचरत श्रीभरत चक्रिण षष्टूर्ध्वलक्षास्त्विति कृन्तानि अन्यदा महाविभृत्वा उद्वर्त्ति तदेह
सर्वालङ्कारविभूषित सभरत चकी आदर्शं भुवनेगत तत्र स्वदेह प्रेक्षमाणस्य अङ्गनीय कम्पतित तच्च तेन न ज्ञात आदर्शभिक्तौ स्व देह पण्णततिन
पतितामुद्रिकास्कराङ्गुली अगोभमाना दृष्टा ततो द्वितीयां गुलीतीपि मुद्रिकाऽपनीता साध्य गोभमानादृष्टा तत कृमास्वर्वाङ्गाभरणानि उत्तारितानि

सोचा । अत्य धम्नो वसोहिय । भरहोवि भारह वास । चिद्धा कामाद्र पव्वडए ॥ ३४ ॥ सगरोवि सागर त ।

एतत्पुन्यपद श्रुत्वा एपुन्युपद सांभलीने आयुर्जानासि इति पृष्टे चत्रियाह कीदृश पद अर्थधर्माभ्या उपगोभित अर्थ अने धर्मतिक्षिकरी सहित्छ
भरतोपि चक्रवर्ती भारतवर्ष भरत चक्रवर्त्ति भरतलेखने छीडीने त्यक्ता कामाय दीक्षां प्रपन्न वली कामभोग छीडीने दीनालीधो ३४

तदा स्वगरीरं श्रुतीवायीभमानां निरीक्ष्य संवेगमापन्नवक्त्रो एवं चिंति तुं प्रहृतः श्रुही प्रागन्तुकद्रव्यै रेवेदंगरीरं ग्रीभते न रुभावसुन्दरं अपि च एतच्छरीरं सङ्गेन सुन्दरमपि वस्तु विनश्यति उक्तं च मण्डनं अस्य पाणं विविहं खाद्र मसा इमं सरीरसङ्गमाववं सर्वं पि असुदं भवे १ वरं दत्तं वरं पुष्कं वरं गन्ध विलिवणं विणस्सए सरीरेण वरंसयणमासणं २ निहाणं सव्वरीगाणं कयग्घमयिरं इमं पञ्चासुहभूअमयं अयकूपरिकमणं ३ तत एतच्छरी रकृते सर्वथान युक्तं अनेकपाप कर्मकरणेन मनुष्य जन्महारणं यत उक्तं लोहायनावञ्जलधीमिनत्ति सूत्राय वैडूर्यमणिं दृशाति स चन्दन प्रीषति भक्त रायैर्योमानुषलं नयतीन्द्रियार्थं १ इत्यादिकं चिंतयतः तस्य भरतस्य प्राप्तभावचारित्रस्य प्रवर्धमानशुभाध्य वसायस्य चपक श्रेणि प्रपन्नस्य केवल ज्ञान सुत्यन्नं शकृसूत्रसमायातः कथयति च द्रव्यलिङ्गं प्रपद्यस्व येन दीजा उत्तवं करोमि ततो भरतकेवलि नास्त्रमस्तुकेप शमौष्टिकी लीच कृतः गारुन देवतया चर जोहरणीपकरणानि दत्तानि दशसहस्यराजभिः समं प्रव्रजिती भरतः श्रेय चक्रिणस्तु सहस्य परिवारेण प्रव्रजिताः ततः शक्रेण वन्दिते सौ ग्रामाकरनगरैर्युन्नमन् भव्य सत्वान् प्रतिबोधयन् एकपूर्वत्वचं यावत् केवल पर्यायं पालयित्वा परिनिर्हृतं तत्पट्टे च शक्रेण आदित्ययशाष्टपोभिहितः इति भरत दृष्टांतः ३४ पुनस्तदेव महापुरुष दृष्टानि द्रष्टयति सगरीयसागरं तं भरहवासन्नराहिवी इस्सरियं केवलं हिशा दयाद्र परिनिष्कृषी ३५ हे सुने सगरीपि सगरना मानराधिपीपि दययासंयमेन परिनिष्टतः कर्मश्रीमुक्तः प्रत नराधिप शब्देन अपि शब्दात् द्वितीययकृष्वर्थ्यधिकारात् ३६ त्तोपि चक्रैत्रव गृह्यते किं कृत्वा भरत वर्षं भरतक्षेत्रं अर्थात् भरतक्षेत्र राज्यन्यक्षा पुनः केवलं परिपूर्णं एकच्छत्र रूपं ऐगर्ष्यं हिलालक्षा कीदृगं भरत वर्षं सागरां तं समुद्रान्त सहितं चुम्बहिमवत् पर्वतं यावत् विस्तीर्णं भरतक्षेत्र राज्यमित्यर्थः प्रत्र सगर चक्र वर्चिदृष्टान्तः तथाहि अयोध्यायां नगरीयां इल्लोककुलीङ्गवीजितयत्, तृपीस्ति तस्य भार्याविजयानाञ्ची अस्ति सुमितनामाजित यत्, सहोदरोयुवराजावर्त्तते तस्य यग्रीमती नाञ्ची भार्याभिश्च

जित शत्रु राश्याविजयानाम्नाथतुर्दश महाखण्ड सूचित पुत्र प्रसूत तस्य नाम अजित इति दत्त स च द्वितीयस्त्रीर्यकर इति सुमितययुराजपत्न्या यमीमत्यासगरनामाद्वितीयकवर्त्ती प्रसूत तौ हावपि योयन प्राप्नो पिढभ्या कन्या परिणायितौ कियताकालेन जित शत्रु राश्या निजिरान्येऽजित कुमार स्यापित सगरो युवराज्ये स्थापित सद्दीदर विजय सहितेन जितशत्रु, नृपेणदीक्षा गृहीता अजितराश्या च कियलाल राज्य परिपाल्यतीर्थ प्रवर्त्तन समये स्वराज्ये सगर स्थापयित्वा दीक्षा गृहीता सगरसु उत्पन्न चतुर्दशत्र साधित पट षण्णभरतक्षेत्रो राज्य पालयति तस्य पुत्रा पट्टि सहस्र स त्व्याकाजाता एकरात्रि उदरात् सर्वेषा तेषां मध्ये ज्येष्ठो जङ्गु, कुमारी वर्त्तते अन्यदा जङ्गु कुमारेण कथ चित्तगर सन्तोपित स उवाच जङ्गु, कुमार यत्तवरोचते तन्मार्गय जङ्गु उवाच तात ममास्थयमभिलाष यत्ता तानुश्रुतोह चतुर्दशत्रसहितोऽखिल भ्राष्टपरिहृत पुत्री परिभ्रमामि सगरचक्रिणा तत् प्रतिपन्न प्रशस्तमुहूर्त्ते सगरच क्रिण समीपास्त्रनिर्गत सबल बाहन अनेकजनपदेषु भ्रमन् प्राप्नोऽष्टापद पर्वते सैन्यमधस्ताद्विशेष्य स्वयमष्टापदपर्वतमारूढ दृष्टवांस्तत्र भरतनरेन्द्रकारित मणि कनक मय चतुर्विंशति जिन प्रतिमाधिष्ठित स्तूपशतसङ्गत जिनायतन तत्र जिन प्रतिमा अभिवन्द्य जङ्गु कुमारेण मन्त्रिण पृष्टकेन सुकतवता द्रुमतीवरमणोय जिन भवन कारित मन्त्रिणा कथित भवत् पूर्वजैन श्रीभरत चक्रिणेति श्रुत्वा

भरह वासं नराहिवो द्रुमरिय केवल हिच्चा दयाए परिनिबुञ्ची ॥३५॥ च द्रुता भारह वास चक्रवट्टी महिद्विञ्ची पञ्च

सगरोपि समुद्रपर्यंत सगर चक्रवर्त्तिपणि समुद्रपर्यंत भरतवर्षं भरतक्षेत्रे नराधिप राजा ऐश्वर्यं संपूर्णं त्वङ्गा सर्वऐश्वर्यं ऋद्धि छाडीने दया सजमे परिनिहन्ती सुप्ति गत दयाकहता सजम तपि करीने सुप्ति पोहता. ३५ दुर्जीगाथानु समास य त्वङ्गा भारत वर्षं भरतक्षेत्र छाडीने चक्रवर्त्ति महर्षिकं चक्रवर्त्तिं महाऋधिनी धर्षो प्रवज्यां अभ्युपगत दीचालीधी मधवा नामा महायया मधवा एहवनामे महायशनीधर्षी ३६

जङ्गु कुमारीष्वद्रुत् श्रुत्यः कश्चिदष्टापद सदृश पर्वतीस्ति यत्ने दृश्यमन्य चैत्यं कारयामः चत स्रष्टु, दिक्षु पुरुषास्तप्तवेषणाय प्रेषितास्ते सर्वत्र परिरुस्य समायाताः जचुः स्वामिन् ईदृशः पर्वतः क्वापि नास्ति जङ्गुनाभणितं यद्येवं वयं कुर्म्य एतस्यैव रत्नां यतीवचेत्रे काल क्रमेण लुब्धाः सर्वे नरा भविष्यन्ति अभिनवकारणात् पूर्वकृत परिपालनं श्रेयः तच्चदण्डरत्नं गृहीत्वा समन्तीष्टापदपार्श्वेषु जङ्गु प्रसुखा सर्वेऽपि कुमारा खातुं लग्नाः तच्च दण्डरत्नं योजन सदस्रं भित्वा प्राप्तं नागवनेषु तेन तानि भिन्नानि दृष्ट्वा नाग कुमाराः शरणङ्गवेषयन्ती गता नागरा जज्वलन प्रभसमीपे कथितः स्व भवन विदारणः हतान्तः सोऽपि सभ्रान्त उल्लिखितोऽवधिना ज्ञात्वा क्रोधीश्च भीभी किं भवद्भिर्दण्डरत्नेन पृच्छीविदार्य अस्मद्भवनीपद्रवः कृतः अविचार्य भवद्भिरेतत्कृतं यत उक्तं अप्रवहाए नूनं ह्रीद् बलं उत्तयाण भुवणं मिणियपक्वु बलेणश्चिय पडिइयङ्गीपईवंमि १ ततो नागराजीपथमननिमित्तं जङ्गुनाभणितं भी नागराज कुरुप्रसादं उपसंहर क्रीध सभ्रं चामस्त्रादपराधमेकं नह्य स्त्राभिर्भवता सुपद्रवनिमित्तं एतत्कृतं कि तु अष्टापदचैत्यरचार्य मेधा परिखा कृता न पुनरेवं करिष्याव तत उपशान्तकीर्पोज्वलन प्रभः स्वस्थानं गतः जङ्गुकुमारेण भ्रातृणां पुर एवं भणितं एषा परिखादुर्लभ्यापि जल विरहितानसीभते तत इमां नीरेणपूरयामः दण्डरत्नेन गङ्गां भित्वा जङ्गुनाजलमानीतं भृता परिखातज्जलं नागभवनेषु प्राप्तं जल प्रवाह सन्तस्तं नागनागिनी प्रकरं इतस्ततः प्रणश्यन्तं प्रेक्ष्य प्रदत्तावधि ज्ञानीपयोगः कीपानलज्वालामाला कुलीज्वलन प्रभ एव मचिन्त यत् अही एतेषां जङ्गु कुमारादीनां महापापानां मया एकवारमपराध चान्तः पुनरधिकतरं उपद्रव कृतः ततो दर्शयाम्येवामविनय फलं इति ध्यात्वाज्वलन प्रभेण तद्वधार्थं नयन विषा महा फणिनः प्रेषिता स्तैः परिखाजलान्तनिर्गत्यनयनैस्ते कुमाराः प्रलीकितता भस्मराशीभूताः सर्वेऽपि सागरसुताः तथा भूतां स्वान् वीच्यसैन्ये हाहारवीजातः मंत्रिणाउक्त एतेषु तीर्थरत्नां कुर्वतीऽवश्य भावितया इमा मवस्थां प्राप्ताः सहताविव

भविष्यन्तीति किं शीघ्रं ते अतस्त्वरितमित प्रयाण कियते गम्यते महाराज चकि समीप सर्वसैन्ये न मन्त्रि यचनमङ्गीकृत ततस्त्वरितप्रयाण करणेन क्रमात् प्राक्त स्व पुरसमीपे तत सामन्तामायादिभिरेव विचारित समस्त पुत्र बन्धोदन्त कथ चक्रीणो वक्तुं, पार्यते ते सर्वेदग्धा वय चाद्यता गा समायाता एतदपि प्रकामन्त्रपाकर तत सर्वपि वय प्रविशामीऽग्नौ एव विचारयता तं पा पुर समायात एकीहिज ते नेदनुक्त भो वीरा किमेवमा कुलीभूता मुच्यतचिपाद यत ससारेण किञ्चिच्छुख दुःख फल्यन्तमद्गतमस्ति भणितश्च कालमि अणार्द्धे जीवाण विविहककथयसगाथ त नत्थि सवि हाण जसमारेन सम्भवद् १ अह सगरचक्रीण पुत्रवधव्यति कार कययिथ्यामि सामन्तादिभिस्तद्वच प्रति पत्र तत स हिजीमृत बालक करे कृत्वा दटोस्मीति यदनु सगर चकि गृहद्वारेगत च किंणतस्य विलापयद्द युत चक्रीणसहिज आकारित केन दृष्टीसीति चकिणाष्ट स प्राह देव एक एवमेसत सप णदटोमृत एतद्द खेनाह विलपामीति करुणासागरत्वामेव जीवय अस्मिन्नवसरे तत्र मन्त्रि सामन्ता प्राप्ता चक्रीण प्रणय्य उपविष्टा तदानो चक्रीणा राजवैद्यमाकायमुक्त एन निर्विय कुरु वैद्ये न तु चकि सुतमारण युतवतालक्त राजन् यस्मिन् कुले कीपिनमृत तत कुलाग्रभययानयसि तदैवमह जीवयामि द्विजेन गृहे २ प्रय्य पूर्वक भस्त्रमार्गित गृह मनुया स्वमाटपि टम्भाटदुहिहट प्रमुख कुटम्बमारणान्याचख्य दिनयकि समीपे समागत्य उवाच नास्ति वैद्योपदिष्टतादृश भस्मीपलब्धि सर्व गृहे कुटन्मनुथमरण सद्भावात यद्यैव तत कि स्व पुत्र शोचसि सर्वं साधारणमिद मरण उक्त च कि अत्यिकोद्द भवणे जस्स जायाद्देव पायाद्द नियकस्स परिणर्द्धेण जन्मण मरणाद्द ससारे १ ततो ब्राह्मण मारुद्द शोक सुह धाम्महित काय चिन्तय यावत्चनपि एव गृह्यसिहेन न कवली कियसे विप्रेण भणित देवाह मपि जानाम्येव पर पुत्रमन्तरेणसां प्रतिमे कुनचय तेनाह मंतोयदु खित त्व तु दु खिताऽनाथबलभोऽप्रतिहृत प्रतापयासि ततो मे देहि पुत्र जीवितदानेन मनुथभिष्सां च किणाभणित भद्र

इदं मशक्य प्रतीकारं उक्तं च सीयन्ति सव्व सत्ताइं एत्यनकम्मन्तिमन्ति तं । ताइं अदिठ्ठपहरगम्भीविहिमकिं पौर सहुण्ड १ ततः परिल्यज्यथीकं कुरु परलीकहितं मूर्खएवहृते नष्टे मृते करोति शोकं विशेषेण भणितं महाराज सत्यमेतत् न कार्योऽत्र जनकेनथीकः ततस्त्व मपि मा कुर्याः शोकमस भावनीयं भवतः शोक कारणं जातं संभ्रतिन चक्रीणा पृष्टं भी विप्र कीदृशं मम शोक कारणं जातं विप्रेण भणितं देव तव षष्टि सहस्रः पुत्राः काल इताः इदं श्रुत्वाः चक्रीवज्व प्रहाराहतइवनष्ट चेतनः सिंहासनाच्च पतितो मूर्च्छित सेवकै रुपचरितच मूर्खावशानिव शीकातुरमनामुकलकण्डे नरुरीद एवं विलापान् चकार हा पुत्रा हा हृदयदयिता हा बन्धुवत्सभाः हा शुभस्वभावाः हा विनीताः हा सकलगुणनिधयः कथंमामनायं सुक्तायंगताः युष्मत् विरहार्त्तस्य ममदर्चानंददतः हानिर्दयपापविधे एकपदेचैव सर्वान् बालकान् संहरतस्त्व किं पूर्णं जातं, हा निष्टुरहृदयत्वं असह्य ! सुतमरणदुःख, सन्तप्तं किं न शतखण्डं भवसि एवं विलपामद्यकी तेन विप्रेण भणितः महाराजत्वं मम सांप्रत्यिवं उपदिष्टवान् स्वयंष कथं शीकं गच्छसीति उक्तञ्च परवसणं मिसुहेणं संसारा, सायरं कहइलीओणिय बन्धु, जणविणासी सव्वस्सविच लइधीरत्तं १ एक पुत्रस्यापि मरणं दु सहं किं पुनः षष्टिसहस्र पुत्राणां तथापि सत्पुरुषाव्यसनं सहन्ति पृथिव्ये वञ्चनिपातं सहति नापरइति अचलंश्च सुधीरत्वं अलमत्र विलपितेन यत् उक्तं सीयं ताणंपिनीताणं कम्मवन्धीउ केवली तो पखिया नसीयन्ति जाणन्ता भवरुवयं १ एवमादि वचनविग्यासैर्विप्रेण स्वस्थीकृती राजा भणितान्तैनेव सामन्तमन्त्रिणः वदसु यथावृत्तं षष्टिसहस्र पुत्र मरणव्यतिकरं तैरुक्तः सकलोपितह्रततिकर प्रधानपुरूपैः सर्वैरपि राजाधीरतानीतः उचितं कृतवान् अतान्तरैऽष्टापदासम्भवासिनीजना प्रणत शिरस्त्राद्यक्रीण गवं कथयन्ति यथा देवयो युमदीयसुतरैऽष्टापदरचणार्थं गङ्गागवाह आनीतः स आसन्न यामनगराण्युपद्रवान् प्रसरतीतितं भवान् निवारयतुदेवः अन्यस्य कस्यापि तत्रिवारणशक्तिर्नास्तीति चक्रीणा स्व पौत्रो भगीरथोर्भणितः वत्स नागराज मनुश्राप्य दण्डरत्नेन गङ्गाप्रवाहं नय

समुद्र ततो भगीरथि रथापद समोपगत अष्टमभोजेन नागराजा आराधित समागतौ भणति किते सम्पादयामि प्रथामपूर्व भगीरथिनाम
 णित तव प्रसादेनामु गङ्गाप्रवाह उदधि नयामि अष्टापदासत्र लोकाना महानुपद्रवोस्तीति नागराजेन भणित विगतभयस्व कुरुस्व समीहित
 नित्यारथिषाम्यह भरतनिवासितौ गगान् इति भणित्वा नागराज स्वस्थानङ्गत भगीरथिनापि कृतानागाना बलि कुशुमादिभि पूजातत प्रभृति
 लोकानागवलिकरोति भगीरथिदृष्टेन गङ्गाप्रवाहमाकर्षन् भजथ बह्वृत्स्व ग्लैलप्रवाहान् प्राप्त पूर्वसमुद्रन्त्वाव तारिता गङ्गा तलनागाना
 चनि पूजाविहिता यत्र गङ्गासागरे प्रवाहिता तत्र गङ्गासागरतोय जात गङ्गा जङ्गुनानीतेति जाङ्गवी भगीरथितीति भागी रथी भगीरथिस्तदा
 सिनितैनामै पूजितोगतोऽयीथा पूजितचक्रिणानुष्टेन स्थापित स्वराज्ये सगर षड्वर्तिना श्रीअजितनाथ समीपे दीक्षा गृहीता कृमिण
 कमवय कल्या सगर सिद्ध ग्रन्थदा भगीरथिना राज्ञा कश्चिदतिशयज्ञानी घृष्ट भगवन कि कारण तत् जङ्गुप्रमुखा षष्टिसहस्रा आतर सम
 काल मरण प्राप्ता ज्ञानिनाभणित महाराज एकदा महान् सवैत्ययदनाथ समेत पर्वते प्रस्थित अरथ्यमुसृष्य चन्तिम ग्राम प्राप्त तन्निवासिना सुवैण
 चनार्यजनैः श्रत्यन्त सुपहृती दुवचनेन वस्तात्र धनहरणादिना च तत् प्रत्यय तद्ग्रामवासिनीकैः शुभ कम बद्ध तदानीमेकेन प्रकृति भद्रकेण हुम्भकारे
 शीत मा उपद्रयत् इम तीर्थयात्रागत जन इतरस्यापि निरपराधस्य परिक्लेशेन महापापस्य हेतुर्भवति कि पुनरेतस्य धार्मिकजनस्य ततोयद्येतस्य सद्यस्य
 स्वागत प्रतिपत्ति कतु न गङ्गास्तदा उपद्रवन्तु रचत इति भणित्वा कुम्भकारेण निवारित सग्रामजन सधस्तत्रगत अन्यदा तद्ग्राम निवासिना एकेन
 नरेण रामत्रिवेभे चीय कृत ततो राजनियुक्तै पुरुषे सयामो द्वारपिधान पूर्वक ज्वालित तदा स कुम्भकार साधु प्रसिद्धा ततो निष्कासितोऽन्यस्मिन्
 ग्रामगत तत्र षष्टि सहस्र जनादथा उत्पन्नाविराट विपयेतिमग्रामिकोद्रविलेनता की द्रव्यएकत्र पुञ्जीभूता स्थिता सन्ति तत्रैक करी समायात

तत्परिणतः सर्वोऽपि मर्दिताः ततोऽनुतास्तेनानाविधासुख दुःख प्रपराशयोनिषु सुचिरं परिभ्रम्य अनन्तर भवे क्वचित् शुभकर्म उपार्ज्यं सगर चक्रि
सुतत्वे नीत्यत्रा पट्टि सहस्र प्रमाणा अपि ते तत्कर्म श्रेयवशेन तादृशं मरणं व्यसनं प्राप्ताः सोऽपि कुशकारस्तदा स्नायुः चयेस्तुत्वा एकस्मिन् सन्निवेशेन
समृज्जी वणिग्जात तत्र क्षतसु क्षत सञ्जातोऽस्तुला नर पतिस्तान् शुभानु वन्देन शुभकर्मोद्देन प्रतिपन्नो मुनि धर्मं शुभं च परिपाल्य ततोऽस्तुला
सुरलोकां गत ततश्चुत्तस्त्वं जह्नु सुतीजातः इदं भागीरथः श्रुत्वा सम्येगसुपागतस्त्वं प्रतिशयज्ञानिनं नत्वागतः स्वभजनं इदं च भगीरथि पृच्छासस्मिधा
नयं प्रसन्नत उक्तं इति सगर दृष्टान्तः २ ॥३५ च इत्ता भारुं वाराक्षकवटोसहट्टिए पव्वज्जमभुवगप्री मघपं नाम महायसो ३६ पुनर्मघवानामा तृतीय
चक्रु बर्त्तो प्रव्रज्यां दीक्षां प्रभ्युपगतः चारितं प्राप्तः कोदृयो मघवामहर्षिकः चतुर्दश रत्न नवनिधान धारको वै क्वियर्षिधारीवा पुनः कोदृयो महायशाः
विस्तीर्णकोर्त्तिः अत मज्जवाल्य चक्विण्ण दृष्टांतः इहैव भरतचेते यापस्त्वां नगर्यां समुद्रविजयस्य राज्ञो भद्रादेव्याः कुचो चतुर्दश महारूपं सुस्ति
मघवानामाराशुत्तनः स च दौवतन स्त्रीजन केन वितोर्खं राज्यं कर्मण प्रसाधितभरतचेत स्तृतीयस्य क्वर्त्तजातः सुचिरं राज्य मनुभवतस्तस्य अन्यदा
भव विरक्तताजाता स एवं भावयि तुं प्रसन्न येजत प्रतिपन्थ हे तवीरजणीयाः पदार्थास्ते स्थिराः उक्तं च हिय प्रत्यया उदारा सुपाविणी यामणोरमा
भोगा विजला लच्छेदिही निरामन्त्री दीहजीवितं १ भव पट्टि बन्धनि मित्तं एगा प्रवत्यु नवरसव्यं पि काद्रवय दिणावसाणे सुमिणी भोगुब्बनहि किस्सि १
ततीहं धर्मकर्मणि उद्यमं करोमि धर्म एव भवान्तरानुगागो एवगादिकं परिभाव्य पुत निहितराज्यो मघवा चक्रो परिव्रजतः कास कर्मण विविध
तपशरणीन कास छाया सनत् कुमारो कल्येगतः इति मघ वा दृष्टांत ३६ सण सुसारीमणुस्सिन्धो चक्रघटी रुर्हाट्टिए पुत्तं रज्जेठविजणं सोयिरायातदं
चरे ३७ अत्र सनत् कुमार दृष्टांतः अस्त्वा भरतचेते कुरुजङ्ग लजनपटे हस्तिनाग पुरं नाग नगरं तलागसेनोनाम राजा तस्य भार्या सहदेवी नाम्नी

त्यापिती गाढमास्त्रिङ्गितश्च हावपि प्रमुदितमनस्कोविद्याधरदत्तासने उपविष्टो विद्याधर लोकाय तयो. पाश्वे उपविष्टः प्रधानं दजल पूरितनयने न सनत् कुमारिण भणितं मित्र कथमेकाक्ये वलं अस्यामटव्यामागतः कथं चावस्थितोहं लया ज्ञातः किञ्च करोति महिरहे ममपितामाता च कथितः सर्वो वृत्तान्तो महेंद्रसिंहेन ततो महेंद्रसिंही यरविलासिनीभिर्मल्लितः स्नापितय भोजनं द्वाभ्यां समभेय कृतं भोजनावसाने च महेंद्रसिंहेन सनत् कुमारः घृष्टः कुमारतदालं तुरङ्गभेणापहतः क्रगतः कस्थितय कुतएतादृग्यो ऋदिस्त्वया प्राप्ता सनत्कुमारिण चिन्तितं न युक्तं निजचरित्र कथनं निज सुखे नेति संचिन्ता स्वयं परिणीता खेचरेन्द्र पुत्रीविपुलमतीनाम्नी स्व प्रिया साकुमार वृत्तान्तं स्व विद्यावलेन कथयितुं प्रहसा तदानीं कुमारी भवदादिषु पश्यत्कु, मारसु रङ्गभेणापहती महाटव्यां प्रविष्टः द्वितीयदिनेऽपि तथैव धावतीत्यस्य मध्याह्न समयोजातः शुधापि पासाकुलितेन शान्ते न अश्वेन निक्रासिताजिह्वा कु, मारस्तत उत्तीर्णः सौख्यस्वदानो भेय कृतः कु, मारस्ततः पादाभ्यामिव चलितः तृपाकृतय सर्वत्र जलं गवेषयन्नपि न प्राप ततो दीर्घाध्वश्रमेण सुकु, मारत्वेन चाल्यन्तमाकु, ली भूती दूरदेशस्थितं सप्तच्छदं वृक्षं पश्यन् तदभि सुखं धावन् कियत् कालानन्तरं तत्र प्राप्तः श्यायायासुप विष्टः पतितश्च लोचने भ्रामयित्वा कु, मारः प्रत्रावसरं कु, मार पुण्यानुभावेन वन वासिनाय जेणजलमानीत शिथिरगीतलजलेन सर्वाङ्गं सिक्तः प्राप्त्वा सितश्च लब्धचेतनेन च कु, मारिण जलं पीतं घृष्टश्च कम्बलं कु, तो वा नीतं जल मिदं तेन भणितं अह्नी यज्ञोत्तनिवासी सलिलं वेदं मानसरोवरादानीतं कु, मारिणीतं यदि मान्तद्दर्शयसि तदा तत् मानसरोवरं प्रचालयामि तदामहपुम्नापोपनयति तच्छु, ल्वायज्ञेण करतल संपुटे गृहीत्वानीतोमानसरोवरं तत् व्यसनापतितीयमिति क्षत्वा क्रु, दे न वैताव्य वासिनासितयज्ञेण समं कु, मारस्य युष्मं जातं तथाहि यद्ये ण प्रथमं सोटितकः प्रवण्डः पवनीमुक्तः तेन नभस्तलश्वहु लधु, यान्य कारितं ततो विमुगाटटहासाज्वलनज्वानापिङ्गलकिगापिगाचामृता. कु, मारस्मैर्मनाक् न भीति गत. ततो नयनज्वाला

स्फुलिङ्गवयभिनागपाणौ कुमारयोश्चैण वड जोर्णरञ्जुवन्धनानिचतान् त्रीटयतिस्म कुमार तत करारुक्माना पूर्वं मुष्टिसुदयस्य यच्च समायात
 तावतामुष्टिप्रहारेण कुमारस्त खण्डोक्तवान पुनयच्च स्वस्थो भूत्वा गुरुमत्सरेण कुमार घन प्रहारेणहतवान् तत् प्रहारात् कुमारश्चिन्न मूलदुग्म
 इव भूमौ निपतित ततो यच्चैणदूरसुत् विष्यगिरवर कुमारस्थो परिचित तेन दृढपोडिता गोनियतनोजात अथ कि यत्कालानन्तर लब्ध स द्र
 कुमारस्तेन सम चाहुपुढ चकारं कुमारैण करमुद्राराहतो यच्च प्रषण्डयाताहत चूत इव तथा भूमौ निपतित यथा मृत इव दृश्यते पर देवत्वात्कन
 मृत आराटि कुवाण स यच्चस्तथा नष्टा यथा पुनर्नष्ट कौतुकाद्भत्यागतविद्याधरै पुष्य दृष्टिर्मक्ता उक्त च जितोयच्च कुमारैणिति ततोमानस
 सरसि यथेष्ट छात्वा उत्तोर्यं कुमारो यायत् स्तीका भूमिभाग गत तावत्त वनमध्य गता श्रद्धी विद्याधर, पुत्रीर्दृष्टवान् तापिरप्यसो स्निग्धदृष्ट्या
 विनोक्ति कुमारेण चितित एता कुत समायाता सति पृच्छाम्यासा स्वरूपमिति पृष्ट कुमारेण तासा समीपे गत्वा मधुरवास्या कुतीभवन्त्य आगता
 किमर्थं मेतत् सून्यमरुण मलङ्कृत ताभिर्भणित महाभाग इतोनाति दूरे प्रियसद्गमाभिधानाम्नाक पुरी अस्ति त्वमपि तत्रैवागच्छेति भणिति किङ्करी
 दग्धितमार्गस्तासा नगरी प्राप्त किञ्चकिपुक्यै राजभुवनत्रीत दृष्ट्य तन्नगरस्वामिनाभावुगिरात्रा अभ्युत्थानादिनासत् कृतय उक्त राज्ञा महाभाग त्व
 एतासा ममाटकन्याना वरीभय पूव हि आत्राया तेन अर्धिमालिनाग्रा मुनिनाएव मादिष्ट योसिताच्च यच्च जेष्यति स एतासा भर्ताभविष्यति ततस्त्व
 मेता परिणयेति नृपेणोक्ते कुमारेण तथेति प्रतिपन्न राज्ञा महामह पूर्वक विवाह क्षत कङ्कण कुमारकरेवड सुमयताभि साडे रतिभुयनी कुमार
 पत्न्यङ्गोपरि निद्रावगमेवालान भूमौपश्यति किमेतदिति चितितवाच करवड कङ्कण पश्यति तत खिन्नमना कुमारस्ततो गतु प्रहत्त अरुणमर्थे च
 गिरिवरगिखरे मंस्तम्भ प्रतिष्ठित दिव्यभुवन दृष्ट कुमारेण चितित इदमप्यालप्याल प्रायम्भविष्यतीति तदासन्नेयावद्गन्तु प्रहत्त कुमार स्तावत्

शतान्त पुरोशां नामानि गृह्णाति अनप्रदाताभिः कार्मणादियोगिन विष्णुश्रीव्यापादिता ततो राजा तस्या मरणान्त्यन्तं श्रीकात्तोऽश्रुत जलभृन्नयनो
नागदत्तएवीश्वत्तोभूतो विष्णुश्रीकलेवरं वक्षि सात्वात् न ददाति ततो मन्त्रिभिर्दृपः कथमपि वक्षयित्वाऽरखे तत्कलेवरं त्यक्तं राजा च तत् कलेवर
मपश्यन् परिहृतात्रपान भोजन स्थितः मन्त्रिभिर्निचारितं एष तत्कलेवर दर्शन मंतरेण मरिच्यतीति अरखे नील्वारात्र स्वत्कलेवरं दर्शितं राज्ञा
तदानो तत्कलेवर गलत्पूतिनिवहं निर्यत्कमिजाल वायस कर्षित नयनयुगल चण्ड खगतुण्डखण्डितं दुरभिगन्धं प्रेक्ष्य एवमात्मानं निम्बितुमारब्धं
रेजीवयस्य कते लया कुलसीलजाति यशो लज्जाः परित्यक्ताः तस्ये दृशो श्रवस्थाजाता ततो वैराग्यभागं प्राप्नो राजाराज्यं राष्ट्रं पुरं स्वजनवर्गं च परिहृत्य
सुन्नताचार्यं समीपे निष्क्रान्तः ततश्चतुर्थं षष्ठाष्टमादि विचिन्तयः कर्मभिरात्मानं भावयन् प्रान्ते संलेखनां कृत्वा सनत् कुमारदेव लोकेगतः ततश्चतुती
रत्नपुरे श्रेष्ठि सुतोजिन धर्मीजातः स च जिनवचन भावितमनः सम्यक्तमूलं हादयविधं आवक धर्मं पालयन् जिनेन्द्र पूजारतः कालं गमयति इत्य
सनागदत्तः प्रिया विरह दुखितो भ्रान्त चित्त शार्त्तध्यान परिचिन्तय गरीरो भूत्वा बहुतिर्यग्योनियु भ्रूत्वा ततः सिंहपुरेनगरेऽग्नि यर्मनामाद्विजो
जातः कालेनत्रिदण्डि व्रतं गृह्णीत्वा द्विमासत्रपणरती रत्न पुरमागतः तत्र हरिवाहनी नाम राजा तापस भक्तस्तेन तपस्वी प्रागतः युतः पारणकदिने
राज्ञानि मन्वितः स गृहमागतः अत्रान्तरे सजिन धर्मनामा आवकस्तलागतः तं दृष्ट्वा पूर्वभयजात वैरानुभावेनरीपारुण लोचने न मुनिनाएव मुक्तरात्रः
यदा त्वं मां भोजयसि तदास्य श्रेष्ठिन पृष्टीस्थालं विन्यस्य मां भोजय अन्यथा नाहं भोक्ष्ये राज्ञा उक्त मसौ श्रेष्ठोमहान् वर्त्तते ततोऽपरस्य पुरुषस्य
पृष्टी त्वं भोजनं कुरु स प्राह एतस्य पृष्टा वैव भोजनं करिष्ये ना परस्येति राज्ञा तापसानुरागेण तत् प्रतिपन्नं राज्ञी वचनात् श्रेष्ठिना पृष्टौ स्थालमारी
पितं तापसेन तत् पृष्टी दाह पूर्वकभोजन कृतं श्रेष्ठिना पूर्वभव दुष्कर्म फलं ममीपस्थिति मिति मन्यमानेन तत्सम्यक् सोढ मिति स्थालीदाधेन तत्

दृष्टीचत जात तत सतापसस्तथा भुक्त्वा स्व स्थानिगत श्रेष्ठमपि स्व गृहे गत्वा स्व कुटुम्बवर्गं प्रतिबोध्जैनदीक्षा जग्राह ततो नगराद्विर्गतीगिरि
शिखरिगत्वा न शनमुधचार पूर्वदिग्भि सुख मासाब्दं यावत्कार्योत्सर्गस्थित एव शेषास्वपि दिक्षु तत दृष्टिचते फाक शिवादिभिर्भचित सम्यग्
तत्प्रीडा सहमानी मृत्वासी धम्म कले इ द्वीजात सतापसेपि तस्यैव वाहन ऐरावणेजात ततद्युगतीऽथ ऐरावणो नरतिर्यक्षु भ्रान्त्वाऽसिताची जात
शक्रीपि ततद्युत्वाहस्तिनाग पुरे सनत् कुमारो च क्रीजात एव असिताक्षयश्च भवता सह वैकारणमिति मुनि नोक्ते मयातवान्तरया स निमित्त
भानुवेग विसजयित्वा प्रियसद्मम पुरीनिवेश पूर्वं तव भानुवेगेन कन्यापरिषायिता सुक्ती मयैव कारणेनत्व तद्वन्दने एव करिष्याम इति विचार्य तदा
विद्याधरास्तृप्तवन्त ततो विप्रपयाभि देवमन्य स्व मेकन्यायतपाणि ग्रहण ता अपि तत्र भवन्मुख कमल पश्यति एव भवत्विति कुमारयोक्ते स
चन्द्रवेग कुमारेण सम स्व नगरेगत तत्र कुमारेण कन्या शत परिणीत पुनरत्नागतय दयीत्तरेण कन्याशतन सह भोगात् भुक्ते कुमार अथ पुनरेव
मुक्त कुमारेण यथाय गन्तव्य यत्वास्माभिर्यचीजित साम्प्रतमत्वायातस्व कुमारस्य पुर प्रेक्षण कुर्वता अस्माक कुमार पत्नीना भवद्दर्शन जातमिति
अचातररति गृहग्रयया उल्लित कुमार महेंद्रसिंहेन सम विद्याधरपरिवृत्तो वै ताव्य गत अक्सर लब्धा महेंद्रसिंहेन विद्वत्स कुमारतव जननी जनकी
त्वद्विरहात्ती दु खेन काल गमयत ततस्साद्दर्शन प्रसाद क्रियता इति महेंद्रसिंह वचनानन्तरमेव महतागमनस्थित विद्याधर विमानहयगजादि
याहनारूढ विद्याधर इन्दस मर्देन हस्तिनागपुरे समाप्त कुमार आनन्दिताय जननी जनक नागरजना ततो महत्यावि भूत्याश्च सेन राज्ञा सनत्
कुमार स्व राज्ये अभिपिल महेंद्र सिंहस्यसेनापति कृत जननी जनकाभ्या स्वविराणामन्तिके प्रव्रज्यां गृहीत्वा स्वकार्यमनुष्ठित सनत् कुमारेपि
प्रवर्द्धमानकीय बलसारी राज्य अनुपानयति उत्पन्नानि चतुर्दशरत्नानि नवनिध यत्र कृता च तेषा पूजा तदनन्तर चक्र रत्नदर्शित मार्गोमाग्धवरदा

मप्रभाससिन्धु खण्डि प्रतापादि क्रमेण भरतक्षेत्रं साधितवान् कुमारः हस्तिनागपुरे चक्रवर्त्तिं पदवीं पालयन् यथेष्टं सुखानि भुङ्क्ते शक्रेणार्वाध ज्ञान प्रयोगात्तं पूर्वभवे स्वपदाधि रूढं ज्ञात्वा महताहर्षेण वै अमणोऽऽबुञ्जतः सनत् कुमारस्य राजाभित्तिं कुरु इमं च हारं दनमालां ह्वनं रक्षुटं चामरयुगलं कुण्डलयुगं दूय युगं सिंहासनञ्च पादपीठञ्च प्राप्तुं कुरुशक्रेण तव वृत्तान्तः पृष्टोस्तीति द्रुप्याः वै अमणोपि शक्र दत्तं गृहीत्वा राजपुरनगरे समागत्य तत् प्राप्तुं चक्रिणः पुरीमुक्तवान् शक्र वचनं चोक्तवानिति पुन शक्रेण तिलीतमारुचे देवांगनि तत तदभित्तिं करणाय प्रेषिते चक्रिणीगुञ्जागृहोत्वा विक्रुर्वितयोजन प्रमाण मणिपीठो परिरचितमणिमण्डपान्त स्यापि ते र्माण सिंहासने कुमारं निवेश्यकनक कलशाहृतचौरीरोदजल धाराभिर्द्वलगतानि गायन्ती देवोदेवाश्चक्रिन् रम्भाति लीतमादेव्यो तदानीं नृत्यं कुरुत महामहोत्सवेन कुमारमभित्तिं वै अमणदयः स लीकं जग्मुः चक्रपि भोगान् भुञ्जन् कालं गमयति अन्यदा रुधर्म सभायां सौधर्मेन्द्रः सिंहसने अनेक देव देवीसिवितः स्थितोस्ति अतां तरे एकं शान कृत्य देव सौधर्मेन्द्र पार्श्वे आगतः तस्य देह प्रभया सभास्थित देव देह प्रभाभर सर्वतीनष्टः गार्दित्थोदये चन्द्र गृहादय इवनिः प्रभा सर्वे सुराजाता तस्मिन् पुनः स्वस्थानि गते देवैः सौधर्मेन्द्रः पृष्टः स्वामिन् कीन कारणेन अस्य देवस्ये दृशीप्रभाजातास्ति शक्रः प्राहः वनेन पूर्वभवं आचाम्न् वरुमानतपीखण्डं कृतं तत् प्रभावादस्य देहे प्रभा ईदृशी जातास्ति देवैः पुनरिन्द्रः पृष्ट अत्रोपि काचिद्दीदृशी दीप्तिमानस्ति नवा इद्रेण भणितं यथा हस्ति नागपुरे कुरुवशेस्ति सनत् कुमारनागा चक्री तस्य रूपं सर्वदेवेष्वधीयधिकमस्ति इदं शक्र वचो गृध्रानो विजय वै जयन्ती देवी द्राम्हेण रूपो आगती प्रतीहारेण युक्त वारी गृहान्तः प्रविष्टी राजसमीपं गती दृष्टयतैलाश्रयं कुर्वन् राजातीवविस्मिती देवी शक्रवर्षिणं तरुपाधिक रूपन्ती पृष्टन्ती राज्ञा पृष्टी किमर्थं भवन्ती अत्रायती तौ भणतः देव भवद्रूपं लिभुवने वर्ष्यते तदर्गनार्थं कीतुनेन आवा प्रमायातौ ततोति रूपगर्वितेन राज्ञा तौ उक्त्वा भी भी

विप्रीयुवां किं मद्रूप दृष्ट स्तोक कान प्रतीचेद्या यावदहमास्थान समासुपविशामि एवमस्त्विति प्रीत्यनिर्गतो द्विजौ चक्रापि शीघ्र मञ्जन कृत्वा सर्वा
 गोपात्रं य गार दधत् सभाया सिंहासने उपविष्ट अकारितौ द्विजौ ताभ्या तदा चक्रि रूप दृष्टा विधस्ताभ्या भणित अहो मदुष्याणा रूप लावण्य
 यौवनानिघण दृष्ट नटानि तयोहि जयोरेतद्वच युत्वा चक्रिणा भणित भोकिमेव नवन्तौ विपन्नो मम शरीर निन्दत ताभ्या भणित महाराज देवाना
 रूप यौवन तेजासि प्रथमवयादारभ्यपस्मासंगेपायु समय यावदवस्थिताणि भवन्ति यावज्जीव नड्वीयन्ति भवता शरीरे तु आथर्यं दृश्यते यत्तद्रूपलाव
 ण्यादिक साम्प्रतमेव दृष्ट नट राज्ञाभणित कथमेव भवद्गया ज्ञात ताभ्या शकृण्यसादिक सर्वेषुपि वृत्तान्त कथित चक्रिणा तु कियूरादि विभूषित
 बाहुयुगल पश्यताहारादि विभूषित मपि स्व वच स्वरा विवर्णसुपलक्ष्य चिन्तित अहो अनित्यता ससारस्य असारताशरीरस्य एतावन्मात्रे षापि
 कालेन मच्छरीरस्य योयन तेजासि नटानि अयुक्ते रस्मिन् भवे प्रतिबन्ध शरीरमोहोऽज्ञान रूप यौवनाभिमानी मूर्खत्व भोगासेवन उन्माद परिग्रहो
 ग्रह इव तत एतल्लव व्युत्सृज्य परलीकहित समग गृह्णामीति विचाय चक्रिणा पुत्र स्वराच्ये भिषित स्वय समयग्रहणाय उच्यते जात तदानी
 देवदेवीभ्या भणित अणु हरिय धीर तु मे चरिय निय यस्त पुत्र पुरिसस्त भरह महानरवदूषो तिहु त्रणविक्वायकित्तिस्त १ इत्याद्युक्त्वा देवी गतौ
 च अपि तदानी मेव सर्वं परियह परिलज्य विरता चार्यसमीपे प्रव्रजित तत स्त्रीरत प्रसुखाणि सर्वरत्नानि शेषाश्रमस्य सर्वेषुपि नरेन्द्रा सर्वसैन्य
 नीकानवर्तिपथय पश्यामान् यावत्सन्नागागुनगा तेन स यमिनासिहादलीकनन्यायेन दृष्टापि न विलीकित्ता । पष्ट भक्तेन भिचानिभित्त गोचर
 प्रविष्टस्य प्रथम मेय त्रजातकृतस्य गृहस्थेण दत्त तद्गत द्वितीय दिवसे च पष्ट एव कृत पारणके प्रान्तनीर साहारकरणात्तस्येते रोगा प्रादुर्भूता
 काण्ड १ ज्वर १ कास २ ४ सरभङ्ग ५ अचिदुख ६ उदरग्रथा ७ एता सप्त व्यापय सप्तशत वर्षाणि यावदध्यासिता उग्रतप कुर्वतस्तस्य

आमर्षीषधी १ खिलीषधी १ विष्पीषधी ३ जल्लीषधी ४ सर्वीषधी ५ प्रष्टतयी लब्धयः सम्पन्नाः तथाप्यसौ स्व शरीर प्रतीकारं न करोति पुनः शक्रैकदा एवं प्रशंसितः अही पश्यन्तु देवाः सनत्कुमारस्य धीरत्वं व्याधिकदर्थितीष्ययं न स्वपुः प्रतीकारं कारयति एतदिन्द्रवचनमत्रद्धानौ तावेवदेवौ वैद्यरूपेण तस्य मुनेः समायातौ भणितवन्तौ च भगवन् तव वपुयावां प्रतीकारं कुर्वः सनत्कुमार स्तदानीं तूष्णीं कएवस्थितः पुनस्ताभ्यां भणितं तथैव मुनिर्मौनभाक् जातः पुनः पुनस्तथैव तौ भणतः तदा मुनिना भणितं भवन्तौ किं शरीर व्याधिस्फोटकी किम्वा कर्मव्याधिस्फोटकी ताभ्यां भणितं आवां शरीर व्याधिस्फोटकी तदानीं सनत्कुमारमुनिना स्वमुखयूक्ततेन घर्षिता स्वाङ्गुली कनकवर्णादर्शिता भणितञ्च अहं स्वयमेव शरीरव्याधिं फेटयामि यदिमे सहनशक्तिं स्यात्तदेति युवां यदि संसार व्याधिस्फोटनसमर्थो तदातंस्फोटयथः तौ देवौ विस्मित मनस्वीप्रकटितस्वरूपौ एव मूचतु भगवन् त्वमेव संसारव्याधिस्फोटन समर्थोसि आवाभ्यांतु शक्रवचनमत्रद्धानाभ्यामिहागत्यत्वं परोक्षतौ यादृशः शक्रेण वर्षे तस्मादृश एवत्वमसीत्युक्त्वा प्रणम्य च स्वस्थानं गतौ भगवान् सनत्कुमारस्य पञ्चागद्वर्षं पञ्चागद्वर्षं वर्षलक्षं ग्रामस्थे च वर्षलक्ष्य मेकं परिपाल्य संभेत शैलशिखिरङ्गतः तत्र शिलातले आलीचना विधानपूर्वं मासिकेन भक्तौ न कालं कृत्वा सनत्कुमार कल्पे देवत्वेनीत्यत्रः ततश्चतुर्तो महाविदेहे वासे सेत्स्यति इति सनत्कुमार दृष्टान्तः ३७ चइत्ता भारहंवासं चक्रवर्ती महद्दृष्टो सन्ती करेलीए पत्तीगद्द मणुत्तरं ३८ पुनः शान्तिः शान्तिनाथः प्रस्त्रावात्पञ्चमथकी अनुत्तरां गतिं प्राप्तं मोक्षप्राप्तः शान्तिः लोके शान्तिकारः शान्तिं करोतीति शान्तिकारः इति विशेषणेन तवं चरे ॥३७॥ चइत्ता भारहंवासं चक्रवर्ती महद्दृष्टो संतीसंति करेलीए पत्ती गद्द मणुत्तर ॥ ३८ ॥ इक्खागरायवस

करोलीके शांतिनामाचक्रवर्त्तिशांतिनी करणहार प्राप्तः गतिं अनुत्तरां अनुत्तर प्रधान मुक्ति गतिं तीर्षां प्राप्तदुवी ३८ इक्खाकुवंसने

भिन्न कुलपैलो नूड अन्नजन्म निश्चिन्न शुद्धासुही कम्प परिणामी १ अपरेण मन्त्रिणाभणितं पीतनाधिपतेर्वधोनिन समादिष्टो न पुनः
ततः सप्तमदिवसान् यावदपरः कोपि पीतनाधिपतिर्विधीयते सर्वैरप्युक्तमयमुपायः साधुमयोक्तं मञ्जीवित रचासुतेऽपरजीववध कथं कियते उच्यते च
तर्हि यत्र प्रतिभायाराज्याभियेकः कियते एवं मन्त्र यित्वा सर्वेपि यत्र प्रतिभापीतन पुरेराज्येऽभिपिक्ता सप्तदिवसान् यावत् मया पौषधागारेगत्वा
पौषधा एव कृता सप्तमदिवसमध्याह्न सशये गगन मार्गेऽकम्मान् भिन्न ससुत्यन्नः स्फुरिताविद्युलता इतस्ततः परिरुस्य यत्र प्रतिभाविनाशिता अष्टमे
दिवसेचाह पौषध आलातीनिर्गल्येषेण स्व भुवने स मायात तं नैमित्तिकं कनकरत्नादिभि पूजितवान् पुनरहं नागरिकैः पीतनराज्ये अभिविक्तः
तदिदमस्मिन्नगरे विविध महीसव कारणमिति श्रीविजयेनीक्तेऽमित तेज प्राह अविस्मयादनिमित्तं सीभनीरक्षणी पाय इत्युक्तामित तेजराजा स्वस्थानं
गतवान् अत्रादा श्रीविजयराजा सुतारया समं वनेरन्तुं गतः सुतारया तत्र वनक शृंगी दृष्टः श्रीविजयस्थीक्तं स्वामिन्ममैतं शृंगं प्रानीयदिहि मम
क्रीडार्थं भविष्यति ततः श्रीविजयराजा तद्गृहणार्थं स्वयमेव प्रधावितो नष्टो शृंगस्तत् पृष्टिं राजानत्यजति कियन्ती भुवं गत्वा उत्पतितो नृगः तावता
सुतारा कुर्कुट सर्पेण दृष्टा पूञ्चकार अहं कुर्कुटसर्पेण दृष्टाहाप्रियमांलायस्मेति श्रुत्वा श्रीविजयस्वरितं पश्चादायात तादतासुतारापर लमुपागता
राजा च शीकपरवशस्त्राया सप्त चितायां प्रविष्टः उद्दीप्तीज्वलनः तावतास्त्रीक विलायां समागतो ह्यौ विद्याधरो तत्र एकेन सलिलमभिमन्त्रा चितासिक्ता
वैतालिनी विद्यानष्टा स्वस्थवान् राजाजात बभूव च किमिदमिति विद्याधराभ्यां भणितं गावां ममिततेजस्य स्वकीयी जिन वन्दननिमित्तं आकाश
मार्गेभ्रमन्ती अशनिघोष विद्याधरेण पहयमाणायाः सुतारायाः गान्ध्वं श्रुतवन्ती तन्मोचनार्थं गावाभ्या युज्मारब्धं ततः सुतारया च प्रोक्तं
अलं युद्धे नयथा महाराज श्रीविजयी वैतालिनी विद्यामीहिती जीवितं परित्यजति तथा तदुद्यानि गत्वा गीघ कुरुतत आवा इहा याती दृष्टस्वं वेता

विद्या मम विदारुप अभिमन्त्रानेन मिश्रचित्ता नटामादुष्टवैतानिनी स्वस्यायस्यस्त्वसुत्यत इति अपहृतां सुतारांश्चात्वाविपण श्रीविजयोराजा भगितयताभ्यां गन्तुं गेद माकुरु स पाप क्रयाप्यसि इत्यादि वचने श्रीविजय राजानमान्नास्यती विद्या धरी अमित तेज समोप गतौ ततोऽमित तेजस्रे पित विद्याधर रचित विमाने स श्रीविजयोपि अमित तेज समीप गत अमित तेज श्रीविजयाभ्यां स सैन्याभ्यां गत्वा तन्नगरं वेष्टित अग्नि पोषातिरे द्रुत प्रेषित तयो रागमन युत्वाग्नि घोषो नट उत्पन्नैवस्य अचलस्य समीपे गत अमित तेज श्रीविजयावपि तत् पृष्ठी तवा यातौ मयपि गतन मराधम नृगन्ति एकेन अमित तेज विद्याधरेण सुतारापितरानोता लब्धा वसरेणाग्नि घोषेप भङ्गित न मया दुष्टभावन सुताराऽपहृता किं तु विद्या माधयित्वा गच्छता मया इय दृष्टा पूर्वेषु हेन इमां लल्ल, न गत्तोमीति वैतालिन्या विद्याया श्रीविजय मोहिलासुतारा गृहीत्वा स्व नगरे गत नाभ्या गोनभद्रमकाप तथापि मनात्वार्ये योपराध सद्य तव्य इत्याकार्य अमित तेजेन भणित भगवन किं पुन कारण एतस्य अस्या स्त्रे हो भू ततोऽप्यन केशनो कथयति मगधदेशेऽचनयाभि धरथी जटो नाम विप्रस्तस्य कपिनानाम चेटी तस्या पुत्र कपिली नाम तेन कर्णं यवण, माले ण विद्यागिनिता गतय देगान्तरत्र पुरं नाम नगर तत्र कस्य चिदुपाध्यायस्य मठे गत उपाध्यायिन पृष्ट कस्व कुत आगत कपिले नोक्त अचलयाभि धरपण्डितप्रभृत कपिन नामाह विद्यार्थी अत्रावातस्तवसमीपमिति उपाध्यायेन स बहुमान स्व गृहे रचित विद्यामध्याय स्वपुत्रीतस्य दत्तासल्यभामा नाम्नी प्रत्यदा यथा कामे न कपिनो रात्रौ स्वपदाणिकघाया कृत्वा वर्षद्विव भेषे स्व गृहद्वारे समायात सल्यभामा च अयस्तिमित वस्त्रो भविष्यतीति पिक्तयत्तो अपरराणि वन्ताणि गृहीत्वा गृहद्वारं मम समायाता कपिनेन तस्या उल्ल अस्ति मम प्रभावी येन वस्त्राणि नस्तिम्यन्ति तावताऽपि वस्त्रात् तथा मनग्नौ दृष्ट्वा प्रात पाय न न एय मनायातो वस्त्राणि कघायां च निहित वा नित्यवय मय हीन कुल इति सा कपिले मन्दस्त्रे इति कश्चिन्पुत्रात्

धरणि जडोविप्रसूत्रकपिल समीपे समायात सत्यभामा च पित्र पुत्रयोर्विरुद्धमाचारं दृष्ट्वा परमार्थं पृष्टीधरणि जड विप्र. तेन यथार्थं क. श्रीविष्णुस्य यभाण च
द्विगनासत्यभामाकामभोगीश्वोनिवेशिणा प्रब्रज्याश्रहणनिमित्तं पृष्टः कपिलः नसुं चत्थिष. कपिलः तदा इयं गतातन्निवासि श्रीषिणराज्ञः समीपे गते सुकेशस्य
भौराजन् मां कपिल समीपान्नीचय येनाहं दीक्षां गृह्णामि राज्ञा कपिलस्योक्तं कपिलो न मनत्रे राज्ञा पुनस्तस्या उक्तं तावत्वं मम गृहेतिष्टयावत्
कपिलं बोधयामीति अनग्रदा स राजा स्व पुत्री गणिकानिमित्तं युध्यमानौ दृष्ट्वा वैराग्येण विषं भक्षितवान् ततः सिद्धनिन्दिताऽभि निन्दितानाम्क्री
श्रीषेण दृपस्य भार्ये कपिलस्य भार्या सत्यभामा च विष प्रयोगेण कालङ्गताः चत्वारोप्यमीजीवादेव कुरुयु युगलत्वेनीत्यत्राः ततः सौधर्मं कल्पे गताः
ततश्च गत्वा श्रीषेण जीवोऽमित तेजी जात. अभिनिन्दिता जीवः श्रीविजयी जात सत्यभामा जीवः सुताराजाता स कपिल जीवस्त्रियर्ग भवेषु चिरकालं
भ्रान्त्वा क्वचित्तथा विधमनुष्ठानं कृत्वाऽशनि घोषः ससुत्यत्र सुतारश्च सत्यभामा ब्राह्मणी जीवं दृष्ट्वा पूर्वस्त्रे हेनापहृत्यगतः पुनरथमित तेजेन-पृष्टं
भगवन्नहं किं भविको न वा अचल केवलनाकथितं त्वं भविक इतश्च नवमे भवेतीर्थं करो भविथसि एपीपि श्रीविजयस्त्व गण धरो भविथति तत
एवमाकर्ण्यमित तेज श्रीविजय दृषी अचलकेवलिनं वन्दित्वागतौ स्व स्वस्थानं अन्यथामित तेज श्रीविजयाभ्यां उद्यानगताभ्यां चारण श्रमणाभ्यां
अवधिज्ञानिन ज्ञात्वा उक्तं यथा षड्विंशति दिनानि भवतोर्द्वीरप्यायुः ततस्ताभ्यां मेरीगत्वा कृती अष्टाहि कामहीत्सवः स्व स्वराज्ये च गत्वा स्व स्व
पुत्री अभिषिच्य अभिनिन्दिताजगन्नन्दन सुनि समीपे पादपीपगमनं अनशनं विहितं विधिनाकालं कृत्वा प्राणते कल्पे विंशति सागरीपमायुर्देवत्वे
नीत्यन्तौ ततश्चतौ इहैव जम्बूद्वीपे पूर्वं विदेहेरमणौ विजये शीतायामहा नद्यादक्षिण कूलसुभगायां नगर्यां प्रेमसागरस्य राज्ञी वसुन्धरा अनङ्ग
सुन्दर्योर्महागर्भे क्रमेण कुमारचेनीत्यन्तौ अभि र तेज जीवोऽपरराजितनामाश्रीविजयजीवोऽनन्त वीर्यनामाजातः तत्रापि प्रतिशतुदमितारं व्यापाद्य

राज्ञादृष्टं पृष्टाच्च शैवकाः अकालयात्रया कायं लोकी गच्छति ततो नमुचिमं त्रिणाभणितं देव अत्र उद्यानि अमणा समागता तेषां यो भक्तो लोकाः स तद्वन्दनार्थं गच्छति राज्ञाभणितं वयमपि यास्याम नमुचिना उक्तं तर्हित्वया तत्र मध्येन भाव्यं यथाहं वादं कृत्वातात्रि रत्तरी करोमि राजा नमुचि सहितस्तत्रगत नमुचिनाभणितं भो अमणायदि यूयं धर्मं तत्वं जानीथतर्हित्वदथ सर्वेपि सुनय चुद्रीयमिति कृत्वा मौने न स्थिताः ततो नमुचिर्भृशं रुष्टः स्फुरिं प्रतिभणति एष वयङ्कः किं जानाति ततः स्फुरिभिर्भणितं भणाम. किमपि यदि ते सुखं खर्जति इदं वच. कृत्वा अनिकशास्त्र विचक्षणो न चुल्लकशिये ण भणितं भगवन् अह मेवैनं निराकरिथामि इत्युक्त्वा चुल्लकेन सवादेनिरत्तरीकृत. साधूनासुपरिद्वेषं गत रात्रौ च चरहृत्वा एकाक्येव मुनि वधार्थमागतो देवतयास्त्रभिः प्रभाते तदाश्चर्यं दृष्ट्वा राज्ञालोकेन च श्च्यन्तिरस्कृतौ विलज्जो भूतो गतो हस्तिनागपुरं महापद्म युव राजस्य मन्वीजातः इतच्च पर्वतवासी सिंहबलीनाम राजा स च कीदृधाधिपति रिति महापद्म देशं विनाश्यकीदृ प्रविसति ततोरुष्टेन महापद्मेन नमुचि मंतौ पृष्टः सिंहबलराजग्रहणे किञ्चिदुपायं जानामि नमुचिनोक्तं सुष्टुजानामि ततो महापद्म प्रेरित सैन्यदुतोगतोनिपुणोपायेन दुर्गं भङ्गा सिंहबली बद्ध आनीतच्च महापद्मान्तिके महापद्मे नोक्तं नमुचयत्तवेष्टं तन्मार्गय नमुचिनोक्तं सांप्रतं वरः कोशेऽस्तु अवसरेमार्गयिथामि एव यौवराज्यं पालयतो महापद्मस्य कियान् कालीगत अन्यदा महापद्ममात्रा जाला देव्याजिनरथः कारितो अपरसात्रा च मिथ्यात्ववासितयाजिन धर्मप्रत्यनीकयालक्ष्मीनाम्ना ब्रह्मरथ कारितोभणितच्च पद्मोत्तरी नाम राजा यथा एष ब्रह्मरथः प्रथम नगर मध्ये परिभ्रमतु जिनरथः पथात्परिभ्रमतु इदं च श्रुत्वा जाला देव्या प्रतिज्ञा कृता यदि जिनरथः प्रथमं न अभियथति तदा परजन्मनि ममाहारः ततो राज्ञा द्वावपि रथौ निरुद्धौ महापद्मे न खजनननाः परमाम धृतिं दृष्ट्वानगरान्निर्गतः केनापि न ज्ञातः परदेशे गच्छन् महाटव्यां प्रविष्टः तत्र च परिभ्रमन् तापसालयेगत तापसैर्दत्त सन्मानस्ततिष्ठति इतच्च

पाया नगया तनमेचयो राचा परिकसति स च कालनरेन्द्रेण प्रति रुड ततो महान् सयामो वभूवजनमेजकी नष्ट तस्थान्त पुरमपीतस्ततो
नष्ट तनमेचकथ्य राज्ञी नागवती नाम भाया सामदनायनो पुत्राग सम नष्टा आगताततापमा यम समाख्यासिता कुलपतिना तत्रैवस्मिता कुमार
मदनावल्थो परपरमनुरागोजात कुलपतिनातन्माता च तयो परस्पर मनुरागोज्ञात कुलपतिनागवत्यामात्रा च भण्डिता मदनावली यथा पुत्रित्व
कि नम्बरसिनैमित्तिकवचन यथा चक्षवर्त्तिनस्व प्रथमपत्नो भवियति तत कथ यत्र तत्रानुराग करोपि कुलपति नापि कुमारस्य विसर्जनार्थं युक्त
कुमारत्वमितोगच्छे तदानो त्वरितमेव ततोनिर्गत कुमार एव मनोरथं चकार यथाह मेतस्या सङ्गमेन भरताधिपो भूत्वा ग्रामाकरनगरादिपु
सयत्रजिनभयनानिकारयिष्यामीति भ्रमन् कुमारीस्य प्राप्त सिधुनदन नाम नगर तचीयानि कामहोक्तवेनगराद्विर्गतानरानार्यंय विविध क्रीडाभि
क्रीडन्ति अभिन्नवसरै रात्र पट हस्ती आलानम्सभ उन्नमूल्य गृह हृष्टभित्तिभङ्ग कुर्वन् नगरादहृदियुवती जनमर्थे समायात ताद्यत तथा विध हृष्टा
दूरत प्रधायितु असमया तत्रैपस्थिता यावदसीतासामुपरिशुष्णपात करोति तावतादूरदेशस्थितेन महापद्मेन करुणा पूर्णहृदयेनहृक्कितो सौ करो
सोपि वेगेन चलित कुमाराभि सुख तदानो ता सवा अपिभणति हाहाऽऽस्म द्रक्ष्यार्थं प्रहृत्तीय करिणाहस्यते एव तासु प्रलपन्तीपु पश्यन्तीपु चतयो
करिकुमारयो घोर सयामो जभूय सर्वोपि नागरजनस्तत्रा यात सामन्त श्लथसहितो महसेनराजापि तत्रायात भणित च नरेन्द्रेण कुमार अनेनसम
सयाम माकुश कृतान्त इव श्लेषो सीतवविनासकरिथतीति महापद्म उवाच राजन् पिम्बस्तीभव पश्यममकलामित्युक्त्वाद्यणिन त मत्तकरिण स्वकलयावथी
कृतयान् आरुढय त मत्तगत्र महापद्म स्वस्थानीनीतवान् साधुकारिण त लोका पूजितवान् यथा एष कोपि महापुरुष प्रधान कुलसमुद्भवोस्ति अन्यथा
कथमोदग रुर किञ्चान चास्य भवति ततो राज्ञा स्वगृहे नीत्वा कुमारस्य विविधोपचारकरण पूर्वक कन्यायत दत्त तेन सम विषयसुख मनुभवतस्तस्य

महापद्म कुमारस्य दिवसास्तत्र सुखेन यान्ति तथापि तां मदनावलि हृदयान्नविस्मारयति अन्यदारजान्यां श्रयाती सौ 'वेगवत्याविद्याधर्या'स्पहतः निद्रा
लयेसतिन दृष्टा मुष्टिं दर्शयित्वा साकुमाररेणभणित्वा किं लभेवं मामपहरसि तथा भणितं कुमार ऋणु वैताब्ध्ये सूर्योदयनामनगरमस्ति तत्रेन्द्रधनुर्नाम
विद्याधराधिपतिरस्ति तस्य भार्या श्रीकान्तावर्तते तस्या पुत्रीजयचन्द्रानाम्नी वर्तते सा च पुरुषहे पिणीनिच्छति कथमपि वरं ततो नरपत्यान्नयामयासर्वत्र
वरनरेन्द्रान् विलोम्यर पट्टिकायां लिखिताः सर्वेपि तस्यादर्शितानकीपिरूचितः अनप्रदामयातस्यस्वरूपं दर्शितं तद्दर्शनानन्तरमेवसाकामावस्थयागृहीता
भणितं च तथा यद्येष भर्तान् भविष्यति तदा वश्यं मयामर्त्तव्यं अन्य पुरुषस्य मम यावज्जीवं निवृत्तिरेव एष तस्या व्यति करोमया तन्माहपितृो ज्ञोपितः
ताभ्यां लदानयनायग्रह प्रयुक्ता अविश्वसत्यास्वस्वाविश्वासाथं मया इयंप्रतिज्ञा क्ता यद्यहंतं त्वरितं नानयाभि तदा ज्वाला कुलेज्वलने प्रविशामि तत
कुमारयदितव प्रसादेन मम मरणं न सम्भवति यथा च मे प्रतिज्ञानिर्वाही भवति तथा प्रसादं कुरु ततस्तदा त्रया तथा महापद्मः सूर्योदये तत्र नीतः
पतिर्मिलितः तेन च सुसुहृत्ते तस्या पाणिग्रहणं कारितः पूजिता च वेगवती इतश्च जयचन्द्रायामातुल भ्रातरौ गङ्गाधरमहीधरनामानौ विद्याधरौ
खेचराधिपतिप्रचण्डी इमं व्यतिकरं ज्ञात्वा अनेक भट सहितौ महापद्मे नसमं सग्रामार्थमागती महा पद्मीपि तयोरागमनंशुत्वा सूर्योदयपुराद्विद्विद्याधर
भट परिब्रूतीनिर्गतः संलग्नस्तयो सग्राम तदानीं महापद्मेन सान्दनाः कुञ्जरा अश्वा सुभटाः परबल सक्ताः सर्वेपि बाणैर्विधाः भग्नं स्वस्त्रलं दृष्ट्वा
गङ्गाधरमही धरौ स्वयसुयित्ती महापद्मे न उभा वपि हतौ ततो लब्ध जयः समहापद्मः उत्पन्न स्ती वर्ज सर्वरत्नं प्राप्तनवनिधिर्हाति शस्त्रह अमण्डले
श्वरसेवितपादपद्म परिणीत एकी न चतुः पष्टि सहस्रान्तः पुरो हयगजरथपदातिकोश सम्पन्नो नवम चक्रवर्त्ती जातस्तदापि षट् षण्डभरतराज्यं
समदनावल्यारहित नोरसं मन्यते अनप्रदातस्मिन्ना अमपदे गतस्य तस्य महापद्म चक्रिणः तापसैर्महान् सत्कारः कृतः जनमेजयेनापि राज्ञामदनावली

तस्य दत्तानेन परिणोताशोरत्र बभूव ततो महापद्म चक्रवर्त्ति ऋद्धि समेतीहस्ति नागपुर प्राप्त प्रणनाम जननीजनकपदान् ताभ्यामधिकस्त्रे हिन मे चित
 पथांतरेतवेय ममयद्यतो युनि सुत्रतध्वामिगियो नागसूरो ततोनिर्गत स परिवार पद्मोत्तरराजातवन्दित्वा पुरोनिपण्य गुरुणा च तत् पुरो
 भय निर्वेदान्तो देवनाशता तां युत्वा वैराग्यमापन्नो राजा गुरु प्रत्येवमुवाच भगवद्वह राज्य स्वस्य कृत्वा भयदन्तिके प्रव्रजियामि गुरुणाभणित
 माशिनस्य कुर्वन्ति गुरु प्रणस्य नगरे प्रविटोरजा आकारितामन्दिण प्रधानपरिजनाविष्णु, कुमारव सर्वेषा मपि राश्या एवमुक्त भी भी युयतां
 भवद्भि मसारामारताहमेतावत्काल यद्वित यच्छामस्य नातुष्टितवान तत साप्रत विष्णु, कुमार निजराज्ये भिषिथ प्रव्रज्या गृह्णामि ततो विष्णु कुमा
 रेण विप्रत तात नमापि कि पाकोपमैभागै सुत तवमार्गमेवानुसरिथामि ततो विष्णु कुमारस्य दीक्षानियय ज्ञात्वा पद्मोत्तरराज्ञा महापद्म आकारितो
 भनितय पुत्र मभेदं राज्य प्रतिपद्यस्वविष्णु, कुमारीह च प्रमयां प्रतिपद्याय अथ विनीतेन महापद्मेन च भणित तात निजराज्याभियेक विष्णु, कुमारस्त्वैव
 युग पृष्ठ पुनरेतप्येवाप्रा प्रतीच्छको भयिव्यामि राज्ञाभणित यत्नमयोक्तोप्यय राज्य न प्रतिपद्यते अथय्य मय मया सम प्रव्रजियते तत गोभनदिवसे
 महापद्मस्य कृतो राज्याभियेक विष्णुकुनारग्रहित पद्मोत्तरराजा सुव्रतसूरिसमीपे प्रव्रजित ततो महापद्मोविष्यात ग्रासनयकूर्मोजात स्वमाद्य अपर
 मायकारितो ती हापपिरयो तथैवस्त महापद्मचक्रिणा सुव्रतसूरिसमीपे प्रव्रजित ततो महापद्मोविष्यात ग्रासनयकूर्मोजात स्वमाद्य अपर
 धर्मोयममतिचिन गामन प्रतिपद्य तेन महापद्मचक्रिणा सर्वस्मिन्नपि भरतध्वे ग्रामाकर नगरोद्यानादियु कारितानि जिनायतनानेक कोटिलक्ष
 प्रमाणानि पद्मोत्तरमनिरपि पानित नि कलङ्क यामस्य शुभाथवसायेन कर्मनाल चपयित्वा समुत्पन्न केवलज्ञान सप्राप्त सिद्धिमिति विष्णुकुमारयुनि
 रपि उग्रतपोविहारनिरतस्य वड मान ज्ञानदर्शनचरित्र परिणामस्य आकाशगमनादि वैकियलभ्यय उत्पन्ना स कदाचिन्मै एवस गदेशो गगने व्रजति

कदाचिन्नदनवत् इति रूपवान् भवति एवं नानाविधलब्धिपातः संजात इतद्यते सुव्रताचार्याः बहुश्रित्यपरिव्रता वर्षी रात्रस्थित्यर्थं हस्तिनागपुराद्यानि समायाताः ज्ञाताद्य तेन विरुद्धेन न सुचिना अत्रसरं ज्ञात्वा राज्ञा विज्ञप्तं यथा पूर्वप्रतिपन्नं मम वरदेहि चक्रिणा उक्तं यद्येष्टं मार्गय नमुचिना भणितं राजन्नहवेद भणितेन विधिनायज्ञं कर्तुं मिच्छामि अतो राज्यं मेदेहि चक्रिणानमुचिः स्वराज्ये भिषिक्तं स्वयमंतपुरे प्रवेश्य स्थितः ममुचिर्यज्ञपाटकमा गम्य यागनिमित्तं दीक्षितो बभूव राज्ये भिषिक्तस्य तस्य वर्षीपनार्थं जैनयतीन् वर्जयित्वा सर्व्वेपि लिङ्गिनीलोकाय समायाताः नमुचिना सर्व्वलोक समञ्चं उक्तं सर्व्वेपिलीका मम वर्षीपनार्थं समायाता एवंच्छलं प्रकाश्य सुव्रताचार्या आकारिताः आगताः नमुचिनाभणिताः भो जैनाचार्यायी यदा ब्राह्मणोवा क्षत्रियोवा राज्यं प्राप्नोति स तदा पाषण्डकैरागल्य दृष्टव्यः इयंलोकस्थितिः यतो राजरचितानि तपोधनानि भवंति यूयं पुन स्वध्याः सर्व्वे पाषण्ड द्रूषकाः निर्मर्यादामां निन्दथः अतो मदीयं राज्यं सुक्ताऽनन्त्र यथासुखं व्रजतयैयुष्माकं मध्ये कोपिनगरे स्ममन् द्रष्टव्ये समेबन्धो भविष्यति सुव्रताचार्यैरुक्तं राजन्नस्माकं राजवर्षीपनाचारो नास्ति तेन वयं लवहर्षीपनं कृते नायाता नचवयं किञ्चिन्निन्दामः किंतु समभावा स्थिष्टामः ततः नरुष्टामः प्रतिभणति यदि अमणं सप्तदिनीपरि ग्रहं द्रक्षिथे तमहमवश्यं मारयिथामि नाल सन्देहः एतन्नमुचिवाक्यं शुल्बाचार्याः स्वस्थानमायाताः सर्व्वेपि साधवः दृष्टाः किमत्र कर्त्तव्यं तत एकेन साधुना भणितं यथा सदासिषित तपोयिज्ञेषो विश्णुकुमारनामा महासुनिः सांप्रतं मेरु पर्व्वतचूलास्थो वर्त्तते स च महापद्मचक्रिणो भ्रातास्ति ततस्त्रहचनादय सुप्रशमियति आचार्यैरुक्तं तदाकारणार्थं यो विद्यालब्धि संपन्नः स तत्रव्रजतु तत एकेन साधुना उक्तं अहं मेरुचूलां यावद्गगनगन्तुं शक्नोस्मि पुनः प्रत्यागन्तुं न शक्नोस्मि गुरुणा भणितं विश्णुकुमार एवलाभिहानेथ्यति तथेति प्रतिपथ्य स मुनिराकाशे उत्पतितः क्षणमात्रेण मेरुचूलायां प्राप्तः तमायातं दृष्ट्वा विश्णुकुमारेण चिन्तितं किञ्चिद्गुरुकं संघकार्यं समुत्पन्नं यदयं सुनिर्व्वर्षीकाल

मन्त्रे वायात् तत समुनिदिशु कुमार प्रणम्य प्रागमन प्रयाजन कथितवान् विष्णुकुमारस्त मुनि गृहीत्वास्तीकवेसया आकाशमार्गेण गङ्गपुरे प्राप्त
 वदितान्तेन गुरव गुर्वान्नया साधसहिता विष्णुकुमार मुनिर्नमुचि पर्यदिगत सर्वे सामन्तादिभिवदित नमुचिसु तथैव सिंहासने तस्मिन्वान् नमनाक
 विनय चकार विष्णुना धर्मकथन पूव नमुचिरेव भणित वर्षाकान् यावन्ननयोव तितृप्ति नमुचिना भणित किमत्र पुन पुनर्वचन प्रयासेन पञ्चदशसाम्
 यापन्मुनयोव तितृप्ति विष्णुना भणित तव उद्याने सुनय स्निष्टन्तु तत सजातामर्पेण नमुचिनारेव भणित सर्वपापच्छाधर्मैर्भवद्विर्नमद्राल्ये स्थेयं मद्राल्य
 त्वरितत्वचत यदि जीवितेन काय तत समुत्पवकोपानलेन विष्णुनाभणित तथापि प्रयाणा पदान स्थान देहि ततो भणित नमुचिनादत्तं त्रिपदीस्थान
 परयन्ति पद्या बहिर्द्रव्यामि तस्य गिरच्छेद करिष्यामि तत स विष्णुकुमार कृत नानाविधरूपो हृदि गच्छन् क्रमेण योजनसूच प्रमाणरूपीजात
 क्रमाभ्यां दर्शर कुर्वन् ग्रामाकरनगर सागराकीणा भूमि अकम्पयन् शिखरिणां शिखरशिखापातयतिस्त्रिभुवने घोरं कुर्वन् स सुमि गच्छेत्प्रात तस्य
 कोपीपयान्तये नके ण गायनदेव्यं मे पिता तथैव गायन्तिस्मसपरसन्तावथो धम्मवणदावथोदुग्गमणहेल कोवीताथोपसमकरेसु भयवति एवमादीनि
 मोतानितायारथार यावयन्तिस्म समुनि नमुचिसिंहासनात्पातितवान् दत्तवान् पूवापर समुद्रपाद सवजन भापयतिस्म प्रातहत्तान्तो महापद्मचक्रो तथा
 यात तन सन्नस्तमयेन सुरासुरैश्च गान्तिनिमित्त विधिधोपचारै रुपगामित तत्प्रभृति विष्णुकुमारस्त्रिविक्रम इतिस्थात उपगान्तकोप समुनिरानोषित
 प्रतिष्ठात् ३३ यतउत्तं यार्गरेण गच्छमि कुलगणसद्वे अचेद्व अयिणामे श्रालोयपडिक्कन्तो सुवज्जत्रिज्जराविउला १ निक्कनइ यामन्यमनुपाल्य समुत्पन्नकेवल
 स विष्णुकुमार मित्र गत महापद्म चक्रवर्त्यं पि क्रमेण दीवा गृहीत्वा सुगतिभागभूत् इति महापद्म दृष्टात् एगच्छत्त पसाहिता महि माणनिस्तरणो
 हरिणेणो मन्मथिन्नु पत्नीगरमगुत्तर ४० पुनर्त्तं मुने हरिणेणो मनुवेन्द्री हरिणेणाना नयमयकी प्रनुत्तरां गति सिद्धिगति प्राप्त कि क्त्वा मशीष्टकी

एककृतां प्रसाध्य प्रपात्य कोट्यो हरिपिणो माणनिस्तरणः अहङ्कारि शत्रुमानदलनः ४२ अत्र हरिषिण दृष्टान्तः काभिल्यनगरे महाहरि राज्ञी मेरा
देव्या. कुक्षी चतुर्दश स्वप्न सूचिती हरिषिणनामा चक्रवर्ती समुत्पन्नः क्रमेण यौवनं प्राप्तः पित्रारज्ये स्थापितः उत्पन्नानि चतुर्दशरत्नानि प्रसाधितञ्च
भरतं कृत पट्टाभिषेको हरिषिण उदारान् भोगान् भुञ्जन्कालं गमयति अन्यदा लघुकर्म तथा भववासादिरक्तः एवं चिन्तितुं प्रवृत्तः पूर्वकृत सुकृत
कर्मवशेनमयात्रे दृशोरिद्धिः प्राप्ताः पुनरपि परलोक हितं करोमि उक्तञ्च मासैरष्टभिरङ्गावा पूर्वेण वयसा यथा तल्लर्तव्यं मनुष्येण यथान्ते सुखमेधते १
एवमादि परिभाष्य पुत्रं राज्ये निवेश्य निष्क्रान्त उत्पन्नकेवलञ्च सिद्धिङ्गत. पञ्चदशधनुषि उच्चलं दशवर्षसहश्रायुञ्च संजातमिति हरिषिण
चक्री दृष्टान्तः अत्रिणो राय सहस्रे हिंसुपरिच्चाईदमञ्चरे जयनामी जिणक्कायं पत्तोगइ मणुत्तरं ४३ जयनामा एकादशशक्री जिनाख्यातं
जिनीक्तं धर्मं चरित्वा च अनुत्तराङ्गतिं प्राप्तः कौट्यो जयनामा राज सहस्रैरन्वितः नृपसहस्रेण परिद्वतो जैनीदीक्षां अचरत् पुनः कौट्यो जयनामप्रसु
परित्यागी सम्यक् परित्यागी ४३ अत्र जयनामचक्रवर्त्तिदृष्टान्तः राजगृहे नगरेवप्रगायाराज्याः कुक्षी चतुर्दश स्वप्नसूचिता जयनामा पुलोजातः
कृन्नेण संसाधित भरतश्चक्रीजातः राज्यश्रिय मनुभवन् भोगिभ्यो विरतीजातः एवं चिन्तितवान् सुचिरमपि उषित्वास्यात् प्रियैर्विप्रयोगः सुचिरमपि चरित्वा

एगच्छतं पसाहंतामहिमाणानिसूरिणो हरिसिणो मणुस्त्रिदोपतोगइमणुत्तरं ४२॥ अत्रिणोरायसहस्रेहिंसुपरिच्चाईदमं

पृथ्वी भोगिभ्यो महिं अरिमानदलनः पृथ्वीनि विखिबिरीनीमानतेहनी दलणहार हरिषिणी मनुष्येद्रः हरिषिण मनुष्यमांहि इन्द्रप्राप्तः गतिं अनुत्तरां
उत्तमां उल्लङ्घोपोहतापधानगतमांहिं ४२ अन्वित राजसहस्रैर्युतः हजारराजवियां साथे सुदुपरंत्यागी दानशीलं संयमंचकार राजच्छोडीनेदिचालीधी

वत्स्या. पतिर्द्वारे समायातः तथा उक्तं तलारक्षस्य शीघ्रसुत्तिष्ठ प्रविशास्मिन् तिलगृह्णीदरे परंदूरे नगन्तश्च' कोणे सर्पस्त्रिष्ठति लया तत्र प्रदेशेन
 गन्तव्यं प्रविष्टस्तलारक्षसिल गृह्णीदरे पतिस्तलायात. चौर्यीपात्रं दृष्ट्वा तेन पृष्टं किमेतत् तथा उक्तं बुभुचितास्त्रीति जेमामि स उवाच त्वं तिष्ठ अहं
 पय आन्तवाहिशेषतो बुभुचिती स्त्रीति प्रथमं जेमामि तथा उक्तं अद्याष्टमीवर्त्तते कथमस्त्रातो जेमसि ते नोक्तं त्वं स्त्रानासीति तवस्त्रानि न मम स्त्रान
 जातमिति प्रीच्य स भीक्तमुपविष्टः इत्यथतलारक्षक नट पूत्कार श्वणे सर्पोयति पृत्करोतीति भीतस्तलारघतिलोदरान्निर्गतो नष्टरूतौयमिवावसर
 इति क्लवा स्त्री वैष धरोनरोपि नष्टः पत्वापृष्टासास्त्री किमेतत् तथा उक्तं मयात्वं साम्प्रतमेव वारितः यद्यष्टम्यामयत्वमस्त्रातोमाभोजनं कुरुत्वया वाजा
 नेनायभोजनं कर्तुं मारव्यं अतस्वयातद्गृहे सदावसन्ती इमौ पार्वती महेश्वरी नंद्वागतौ मदहर उवाच ह्यदुष्ट कृतं मया तं पथासापं कुर्वन् पुनस्तां
 उवाच कोप्यस्तु पायः यदेतौ पुनरायात. सा उवाच यदित्यायेनवित्तं उपार्ज्यं पूजां कुर्यात्स्त पुनरेतौ तव गृहे समायास्यतः ततो गतोमदोद्दरोदेशान्तरे
 दशार्णदेशे इक्षुवाटक कर्मणि लग्न दशगद्यानक सुवर्णं लब्धं तथाप्यल्पमिति क्लवा न तुष्टिं प्राप इतस्ततो भ्रमन् एकदाटव्यां प्रविष्टः पिप्लततरुसूत्रे
 विश्रामं गृह्णाति अत्रांतरे अखापहृती दशार्णभद्रस्तालायातस्तं दृष्ट्वा राजापृष्टं कस्त्वं किमर्थमत्रायातः स उवाच यथा स्थितं वृत्तान्तं राज्ञाचिंतितं
 अस्त्रीस्त्रियाविप्रतारितः परदेशे भ्रमन्नस्त्रि ततस्तस्य स्त्री चरितं उक्त्वास्तगृहेनीत्वा भोजनादिविहितं राज्ञाचिंतितं अहो असत्यदेवपीश्वरादौ कीदृशी
 भक्तिवर्त्तते मया सत्यदेवपि श्रीमहावीरं विद्यमानेपि तादृशं भक्तिप्रपन्नं न विहितमिति राजायावच्चिंतयति तावदेक प्रतिहार पुरुषेण राज्ञोपि एव
 सुक्तं भगवान् श्रीमहावीरः समायातः राजापतिगृह्णन्त्ययति यदित्यामैष मदहर पुत्रो विशिष्टविवेकरहितोपि निजदेव पूजा सम्यादनार्थमेव परिक्रि
 स्यते ततोस्माभिरीदृश्यैः सारासारविवेचन विचक्षणैः समग्रसामग्र्याचिभुवनचिन्तामणि कल्पस्य श्रीमहावीरस्य विशेषेण पूजाकार्येति ततः कल्पेह

सवदा तथा योमहावीर यन्दिष्ये यथा केनाथिव न यन्दित पूर्वं ततोद्वितीय दिवसे क्षत प्रभात क्षत्य स्नान विलिप्तालङ्कृत देह स्काररूप
 योवन नायल्पनेपण्ययुक्त सर्वाङ्गोपांगालङ्कृतयाचतुरङ्गख्यसेनया सहितो बहुभिर्मन्त्रि सामन्तै श्रेष्ठिसार्धवाहैश्च परिहृत भभादि वादित्र
 श्रेणिवधिरिति दिग्गन्तरान्त्रो गन्त्यर्थे गीयमानगुणो नृत्यतीभिविलासिनोभि योपित नेत्ररसो गजिन्द्रारूढो दशार्णभद्र भूपतिर्भगवतो वन्द्य नार्थ
 मायात विशुद्धभाषेन भगवान् यन्दित रात्ता मदहृत्पुत्रश्च हर्षितवान् अचान्तरे शक्रेण चिन्तित मत्क्षतया महाविभूत्यासौ दशार्णभद्र प्रति
 योऽ याप्यमति शक्र इन्द्रगो विभूति विकुञ्चितवान् तथाहि ऐरावण हस्तिनोष्टी दन्ता विकुञ्चिता दन्ते २ अष्टौ पुष्करिण्यो विकुञ्चिता पुष्क
 रिण्या २ अत्रो २ पद्मानि पद्मे २ ट्ट २ पद्मानि पद्मे २ हातिपद्मनाथ्यानि अनया विभूत्या ऐरावणारूढेन शक्रेण प्रदक्षिणो क्षत्य भगवान् यन्दित
 त तादृग दद्या दशार्ण भद्रेण चिन्तित अहो खलु तुच्छोह यस्तुच्छ्या विभूयागव क्षतवान् यत उक्त अदिष्ट महाधीवेशविडुन्ति उत्सणाणीयाणश्चर
 उत्तानकरोडु मूमगोयाहिसामञ्ज १ अनेन शक्रेण प्रागभवे शुद्धो धर्म क्षत तत इन्द्रशीलब्धिलब्ध्या ततोहमपितमेव धम करोमि कि समाच विषादेन
 उच्यते समसत्या ययव मन् पुरुष पुरुष किमना मध्येति पुण्यै रधिकतर चैवमुसोपि करोतु तान्येव १ इत्यादि संवेगभायनया प्रतिबुद्ध चयोपशम
 प्रातषारितमोहनोयोभगवन्त प्रत्येव दशार्ण भद्रोऽवादीत् भगवन् भयचारकादह निर्विषोस्मि ततथारित्वा प्रदानेनानुग्रह मम कुरुभगवता तदानीमिव
 मदहरेण मम स दशार्ण भद्रोदीक्षित शक्रेण तदायदित उक्त च यममार्गग्रहणेनत्वयैवजित येने दृशो ऋषि सहसापरित्यक्ता पूर्व त्वयाभिमान
 यस्मैन द्रव्य यन्दन क्षतमिति त्वमेव धनगोनाहमिति दशार्ण भद्रमुने प्रशसा क्षत्याशक्त स्वस्थान गत वा निति दशार्ण भद्र दृष्टांत [नमीनमेव अप्याण
 सक्त सङ्केण चोदप्रो चद्रजगेश्च यद्देहो सामन्त्रे पञ्चशङ्कशो ४५ पुनर्दे मुनेविदेऽपि भवो वैदेहो विदेहदेशस्वामीनमिनामातृपोगीह गृहवासत्यज्ञाथामण्य

साधु धर्मं पर्युपस्थितः चारित्रयोयानुष्ठानं प्रत्युद्युतो भूदित्यर्थः पुनः समुनिः साक्षात् ब्राह्मण रूपेण शक्रेण प्रेरितः सन् ज्ञानचर्यायां परिचितः सन् आत्मानं नमो इति नयेस्थापयति क्रीडादिकपायरहितो भवतीत्यर्थः ४५ अथ हाभ्यां गाथाभ्यां चतुर्णां प्रत्येकबुजानां एकसमये सिद्धानां नामानग्राह करकण्डूकलिंगेसु पञ्चालेसु यदुमुहो नमीरायाविदेहेसु गन्धारेसुयनिगर्द्धे ४५ एवं नरिन्दवसहा निक्खन्ताजिणसासणे पुत्ते रज्जे ठवेजणं सामन्नेपज्जु

सक्रेण चोद्दञ्चो ४४॥ नमीनमेद्दं अप्पाणं सक्कं सक्कं गा चोद्दञ्चो । चद्दज्जागगे हंवद्द देहीसामन्ने पज्जुवट्ठिञ्चो ४५ ॥ कर कांडुकलिंगेसु पंचालेसु यदुम्सहे । नमीराया विदेहेसुगंधारेसु यनगर्द्धे ४६॥ एवं नरिंद वसहा निक्खन्ताजिणसासणे पुत्तं रज्जे ठविजणं सामन्ने पज्जुवट्ठिया ॥ ४७ ॥ सोवीर राय वसहो चद्दज्जणं सुगीचरे । उदायगी पव्वद्दञ्चो

राजर्षि आत्मान नयति नमिराजाइं आपणो आत्माने नमो साक्षात् शक्रेण प्रेरितः प्रत्यचद्दं दे प्रेम्यो त्यक्त्वा गृहवैदेहो घरच्छांडीनि विदेहदेश्य क्काञ्चो आमख्ये पर्युपस्थितः चारित्रने विखे जळ्यो ४५ करकण्डू कलिंगेषु करकण्डू राजारं कलिंगदेश्य क्काञ्चो पंचालेषु पंचालदेश्ये दुसुखी बभूव पंचालदेश्ये निखे दुम्सहञ्चोनमीराजा विदेहेषु विदेहदेश्ये नमीराजाइं विदेहदेश्ये गंधारेषु नगतिः गंधारदेश्य नगर्द्धे राजाराज्य क्कीञ्चो ४६ एवं नरेद्द ह्यभाः एतलाए राजा ह्यभ समानधोरो निष्कृताः जिनयासने जिनयागनने विखे दीचालीधी पुत्तं राज्ये स्थापयित्वा पुत्तने राज्ये देहेने आमख्ये पर्युपस्थिताः चारित्रलेद्द सावधानं धर्मने विखे उद्यत हुआ ४७ सोवीरराज राजा ह्यभः सोवीरदेश्येनो राजा ह्यभसमान त्यक्त्वा सुनि चरेत् त्यज्जीनि सुनीखर हुआ उदायनराजा राज्यं त्यक्त्वाः प्रव्रजित उदाइं राजाइं राज्ये क्कीञ्चोने दीचालीधी प्राप्तीगतिं अनुत्तरां प्राप्त हुओ उत्तमगति ४८ तथैव

यद्विद्या ४६ हे मुने करकण्ठरात्राकल्पिपु देगेप अमदिल्याथाहार च पुन पाचालियु देशेषु द्विसुखोष्टपोभूत् विदेहेषु देशेषु नमीराजाभूत् च पुनर्गन्वा
 रेप गन्धारनाम सुदेशेषु निर्गतानामाराजाभूत् एते चलार करकण्ठ १ द्विसुख २ नमिश् निर्गतानामानोनरेन्द्र इपभा राजमुन्या पुत्रान राज्ये स्थाप
 यित्वा पयात् जिनयासने जिनाज्ञाया आसन्ते इत्याथाहार सिद्धि प्राप्ता इति भाव एतेषा चतुर्णां प्रलोक बुडानां कथा प्रसङ्गत पूर्व नमेरथयनतोत्रिया सोवीरराजवसभो च
 भ्रमणात् विरता आसन इत्याथाहार सिद्धि प्राप्ता इति भाव एतेषा चतुर्णां प्रलोक बुडानां कथा प्रसङ्गत पूर्व नमेरथयनतोत्रिया सोवीरराजवसभो च
 इत्ताण सुगीचरे उदायणो पञ्चदशो पत्तोगद्र मणत्तर ४८ सोवीर राजइपभ सोवीराणा देशाना राजा सोवीरराज सचासीइपभय सोवीरराज इय
 भीराज्यभार धरण समर्थ सोवीरदेश भूपमुख्य एतादृश उदाय न नामाराजा वीतभयपत्तनाधीशो मोन सुनिधम आचरत् कि क्वाला राज्य परिहृत्य
 सच उदायन प्रवृजित सन् अगुत्तरा प्रधाना गति प्राप्त अदीदायन भूपहटान्त भरतचेते सोवीरदेशेरीतभयनाम नगर उदायनी नाम राजा
 तस्य प्रभावतो राजो तयोर्पठपुत्रीअभीचिनामाऽभवत् तस्य भागिनिय क्रिशीनामाभूत् स उदायनराजा सिन्धुसोवीर प्रसुख पोडशजनपदानावीत भय
 प्रमुख विगत त्रिपष्टि तगराणा महायेन प्रमुखाणा दशराज्ञा वडमुकुटाना क्वाणा चामराणा च ऐख्य पालयन्नक्ति इतश्चपाया नगर्या कुमारनन्दी
 नाम सुवर्णकारीस्ति स च स्त्रोनपटो यत्र ३ सरूपा दारिका यथति जानाति वा तत्र पश्यत सुवर्णानि दत्वा ता परिणयति एवञ्चतेन पश्यतकन्या
 परिणीता एकस्तम्भ प्रासाद कारयित्वा ताभिस्सम स्त्रीदति तस्य च मिव नागिलीनाम आवकीस्ति अथदा पश्यतेलदीप वास्तव्यहासामहासाय्य तयोस्त
 तयोर्भर्ता विद्युन्मालो नाम देवोस्ति सोन्यदायुत् ताभिचिन्तित कापि व्युद्ग्राहयाम सोऽस्काक भर्ता भवति स्वयोर्यसुरूप गवेपणाय इतस्तनो
 वृज तीभ्या ताम्भ्य चम्यानगया कुमारनन्दो सुवर्णकार पश्यत स्त्री परिहृतो दृष्ट ताभ्या चिन्तित एष स्त्रीसम्पट सुखेन व्युद्ग्राहयिष्यते

पुनर्गन्वा राजमुन्या पुत्रान राज्ये स्थापयित्वा पयात् जिनयासने जिनाज्ञाया आसन्ते इत्याथाहार सिद्धि प्राप्ता इति भाव एतेषा चतुर्णां प्रलोक बुडानां कथा प्रसङ्गत पूर्व नमेरथयनतोत्रिया सोवीरराजवसभो च पुनर्गन्वा

नमः प्रत्युक्ते मंजूषानीदृघाटिता तत केचिद्भणन्ति प्रब्र देवाधिदेवथतुर्गुरो ब्रह्मास्ति प्रत्ये केचिद्ददन्ति पत चतुर्मुखोविष्णु, रेवास्ति केचिद्भणन्ति
 प्रच महेश्वरो देवाधिदेवोस्ति पस्मिन्नवसरे तनीदायन राजपट्टराज्ञी चेरकराजा पुत्री प्रभावती नाम्नी अमणीपासिका तत्रायाता तथा तस्या मंजूषायाः
 पजां द्वात्वा एवं भणति गयराग दीसमीही सब्बन् प्रहृपाडहरिसंजुत्तो देवाहिदेव गुरुषो अद्ररामे दंसणंदिउं १ एवं उता तथा मंजूषायां हस्तिन परण
 प्रहारीदत उदृघाटिता सामंजूषा तस्यां दृष्टाऽतीव सुन्दरा स्नान पुष्कमालालंकता शीवईमानस्वामि प्रतिमाजात जिनशासनीव्रतिः अतीवानन्दिता
 प्रभावती एवंवभाण सब्बन्, सब्बदंसण अपुण भवभविय जिणमणणंजय चिन्तामणियय गुरजय २ जिणवीर अकलपी १ तत् प्रभावत्या प्रन्त पुर
 मथे चैत्थगृहंकारितं तत्तुंयं प्रतिमास्थापिता तां चत्तिकालं सा पविता पूजयति अन्यदा प्रभावतीराज्ञी तण्णतिमायाः पुरोत्थति राजा च वीणां
 वादयति तदानीं स राजा तस्यां मस्तकं न पश्यति राज्ञीऽष्टतिर्जाता हस्तादीणा पतिता राजा शुष्टं किं मयादुष्टं नप्तिंतं राजा मीनमालंब्यस्तिंतः
 राज्ञा प्रति निर्बधे उक्तवान् यत्तव मस्तकमपश्यन्नहं व्याकुलीभूती हस्तादीणां पातितवान् सा भणति मया सुचिरं आवकधर्मः न काचिन्मम सरणा
 ज्ञोतिरस्ति अन्यदा तत् प्रतिमा पूजनार्थं साता सा राज्ञी स्वचेटीं प्रतिवस्त्रास्थानयेलुवाच तथा च रत्नानि वस्त्रास्थानी तानि राज्ञी कुञ्जाप्राह जिनगृहे
 प्रविशंत्या मम रत्नानि वस्त्राणि ददासीलुजा चेटीं पादर्थेण हतवती मर्मणि तण्हार लग्गाव् सा मृता प्रभावत्या चिन्तितं हामया निरपराधतस
 जीव नधकारणाद्गतं भग्नं प्रतःपरं किमि जीवतव्ये न ततस्तया राज्ञारारा उक्तं अहं भक्तं प्रत्याख्यामि राज्ञानैवेति प्रतिपादितं तथा पुनस्तधैवोच्यते
 तदा राजा उक्तं यदिल्वं देवी भूत्वा मां प्रतिबोधयसि तदा ल्वं भक्तं प्रत्याख्याहि राज्ञा तद्वचोगी कृतं भक्तं प्रत्याख्याय समाधिना मृता देपलोकांगता
 देवीभूत् तांच प्रतिमा कुजा देवदत्तादासी त्रिकालं पूजयति प्रभावती देवसु उदायनं राजानं प्रतिबोधयति न च सतं बुध्यते राजा तु तापसभक्तोतः

पश्यामि पश्चाद्यथा रच्यतेन सहायास्थामि दूतेन गत्वा तस्या वचनं चण्डपूद्योतस्थीक्तं सोपि अनिलगिरि हस्तिनमधि रह्यरात्रौ तत्रायातः, पृष्टस्वया रुचितश्च सा भणति यदीमां प्रतिमां साधुं नयसि तदाह मायामि नानग्रथेति ततस्तेन तत्स्थान स्थापनयोग्यानाया प्रतिमा तदानीं नास्तीति, तस्यां रात्रौ तत्र उषित्वा स्व नगरे पश्चाद्गत तत्र तादृशीं जिन प्रतिमां कारयित्वा पुन रत्रायात स्वां प्रतिमां तत्रस्थापयित्वा मूलं प्रतिमां दासीं च गृहीत्वा उज्जयिनीगतः ततानलगिरिणा मूत्र पुरीषे कृते तद्दन्धेन वीत भयपत्तन सत्त्वा हस्तिनी निर्मदाजाता उदायनराज्ञा तत्कारणं गर्वपितं अनल गिरि हस्तिन. पदं दृष्टं उदायने न चिन्तितं स किमर्थं मत्प्रायात गृहमागुधैरुक्तं सुवर्णगुलिकान दृश्यते राजा उक्तं चेटी चण्डप्रद्योतेन गृहीता प्रतिमां विलोकयततैरुक्तं प्रतिमादृश्यते परं पुष्याणि स्नानि दृश्यन्ते राज्ञा गत्वा स्वयं प्रतिमाविलीकित्वा पुष्कस्नान दर्शनेन, राज्ञा ज्ञातं नयं सा प्रतिमा किं लनेति विषन्नेन राज्ञा दूतश्चण्ड पूद्योतांतिके प्रेषितः सम दास्या नास्त्रिकार्यं प्रतिमां लरितं प्रेषयेति दूतेन चण्डप्रद्योतस्थीक्तं चण्डपूद्योतः प्रतिमां नार्पयति तदा सैन्येन समं ज्येष्ठमास एवीदयनश्चलितः यावन्मरुदेशे तलै नप्रमायातं तावज्जला प्राप्त्या तत्सैन्यं लपाक्रान्तं व्याकुलीः बभूव तदानीं राज्ञा प्रभावती देवश्चिन्तितं तेन समागत्यतीणि पुष्कराणि कृतानितेषु जललाभात् सर्वं सैन्यं सुखं जातं क्रमेण उदायन राजा उज्जयिनीगतः कथितवाञ्छ भी चण्डपूद्योत तव ममचसाक्षात् युधे भवतु लीकेन मारितेन अश्वसेन वा लया मया च युधमंगी कुरुचण्ड पूद्योतेनीक्तं रथस्थे नैव लया मया चयोद्धव्यं प्रभाते चण्डपूद्योतः कपटं कृतवान् स्वय अनलगिरि हस्तिन मारुह्य संग्रामांगणे समायातः उदायनस्तु ऋप्रतिज्ञानि वाहो रथारूढः संग्रामांगणे समायातः तदानी मुदायनेन चण्डपूद्योतस्य उक्तं त्वमसत्य प्रतिज्ञीजातः कपटं च कृतवानसि तथापि तव मत्तो मीची नास्तीति भणता उदायनेन रथी मण्डलां चित्तः चण्ड पूद्योतेन तत् पृष्टी अनलगिरि हस्तीविगेन चित्तः स च हस्तीयंयपाद

मुत्सिपति तत उदायन शरैर्विधत्ते यावत् हस्तोभूमौनिपतित तत् स्तन्यादुत्तरन् प्रयातोऽब तस्य ललाटे मम दासीपतिरित्युक्तराणि लिखितानि तत उदायनरात्राचण्ड प्रद्योतदेश्चाधिकारिण स्थापिता स्वय तु चण्ड प्रद्योत काष्ट पञ्चरेचिद्या सार्धं च नीत्वा स्वदेश प्रति वलित साप्रतिमा तु ततो न उन्निष्टतोति तत्रैव सामुक्ता अवच्छिद्य प्रयाणै यलितस्य अन्तरावर्षा काल समायातस्तेन रडोदयभिराजभिर्दूली प्राकारं कृत्वा मध्ये सरचित सुमेन तत्र तिष्ठति यत्स्वयमुक्ते तत् चण्डप्रद्योतम्यापि भोजयति एकदापर्युपणादि नमायाततदा उदायनेन उपवास कृत सूपकारै चण्डप्रद्योत पृथग् भोजनाथ पृथग् से तैश्च मद्यपय पणादिने उदायनराजा उपोषितो स्तोति यद्भवतो रोचते तत्पथते चण्डप्रद्योते नोक्त ममाथयोपवासोस्ति न ज्ञात मया द्यपर्युपणादिन सूपकारैचण्ड प्रद्योतस्य उक्त उदायनरात्र तेनापि चिन्तित जानाम्यह यथाय धूर्त्तसाधर्भिकीस्ति तथाप्यस्मिन् बडे मम पर्युपणान् श्रद्धति चण्ड प्रद्योतीमुक्त क्षामितय तदृशराच्छादननिमित्त रत्र पदस्य मूढिबड स्व विपययतस्यदत्त तत प्रथति पदवडा राजानोजाती मुकुटवडाय पूर्वमयासन् वर्षा रात्रे व्यतिक्रान्ते उदायनराजातत प्रस्थित व्यापाराय योवर्णिन् वर्गस्तृतायात सततैवस्थित दशमीराजभिर्वासितत्वा द्यपुर नाम नगरं प्रसिद्ध जात अन्यदा स उदायनराजा पौषधशानाया पौषधिक पौषधं प्रतिपालयन् विहरति पूवरात् समये च तस्यैतादृशोभि प्राय समुत्पद्य धन्यानि तानि यामाकरनगराणि यत् यमण भगवान् श्रीमहावीरो विहरति धन्यास्तिराजेश्वर प्रभृत योये यमणाभगयत श्रीमहावीर ध्यातिके केपल प्रप्त धर्म श्रुत्वन्ति पश्चाण व्रतिक सप्तगिषा व्रतिक हादशविध श्रावकधर्मश्च प्रति पद्यन्ति तथा मुण्डोभूत्वा आगारात् अनगारितो व्रजन्ति ततो यदि यमण भगवान् श्रीमहावीर पूर्वानुपूर्थाचरन् यदीहागच्छेत् ततोह मपि भगवतोन्तिके प्रव्रजामि उदायनस्यायमथ्यवसायो भगवताप्रात प्रातपम्यात प्रतिनिक्रम्यवीत भय पत्तनस्य नृगवनोद्यानि भगवान् समवस्यत तत् पर्यन्मिलिता उदायनीपि वृत्तायाती भगवदन्तिके

अहं प्रव्रजिथाभिपरं राज्यं कस्मै चिद्ददामीत्युक्ता भगवन्तं वन्दित्वा स्व गृहाभि सुखं चलितः भगवतापि प्रतिबंधमाकार्पीरित्युक्तं ततो हस्ति
रत्नमारुह्य उदायन राजा स्वगृहे समायात तत उदायनस्यैतादृशीध्ववसायः समुत्पन्न यद्यहं स्व पुत्रं अभीचिकुमारं राज्ये स्थापयित्वा प्रव्रजामि तदायं
राज्ये जनपदे मानुषकेषु कामभोगेषु मूर्च्छितोऽनाद्यन्तं संसारकालारं अभिषिष्यति ततः श्रेयः खलुममनिजकं केसिकुमारं राज्ये स्थापयितुं एवं सम्प्लुच्य
श्रीभनेतिथि करणमुहूर्त्तं कौटुम्बिक पुरुपानकार्यं एव भवादीत् चिप्रमेवकेशिकुमारस्य राज्याभिषेक सामग्रीं उपस्थापयत तैः कृतायां सर्वसामग्र्यक्रिये
कुमारी राज्ये भिषिक्तः ततस्तत्रकेशिकुमारी राजाजात उदायन राजा च केशिकुमार राजानं पृष्ट्वा तत् कृतनिष्कृमणाभिषेक श्रीमहावीरान्तिके
प्रव्रजित बहूनिषष्टाष्टमदशमहादशममासाह मासचपणादीनि तपः कर्माणि कुर्व्वाणोविहरति अन्यदातस्य उदायनराजैः अन्तप्रान्ताहारकारणेन
महान् व्याधिरुत्पन्नः वैद्यैरुक्तं दध्यौषधं कुरु स च उदायनराजर्षिर्भगवदाज्ञया एकाक्येव विहरति अन्यदाविहरन् वीतभयेगतः तत्र तस्य भागनेयः
केशिकुमारराजामाल्यैर्भणित स्वाभिनेप उदायन राजर्षिः परीषद्वादि पराभूत प्रव्रज्यामीक्तकाम एकाक्येव इहायात तव राज्यं मार्गयिष्यति स
प्राहदास्यामि तैरुक्तनैप राजार्थैः पुनः स प्राह तर्हि किंकरिष्यति ते प्राहुर्विषमियमस्य दीयते राज्ञोक्तं तत्सुरैकस्याः षशुपाल्या गृहे विषमिश्रित दधि
कारितं तेषां शिथयातया तस्य तद्वत् उदायन भक्त याचदेवतयाऽपहृतं उक्तं च तस्य देवतया महर्षितवविषं दत्तं दध्यं तस्त्वेन दध्यौषधं परिहरः
तद्वाक्यादधि परिहृतं रोगीवर्षितुं मारुष्य पुनस्त्वेन दध्यौषधं कर्तुं मारुष्यं पुनरपि तदन्तर्विषं देवतयाऽपहृतं एवं वारचयं जातं अन्यदादेवता प्रमत्ता
जाता तैश्च विषं दत्तं तत उदायनराजर्षिं बहूनि वर्षाणि आमश्या पर्यायं पालयित्वा मासक्यासंलेखनया केवलज्ञानमुत्पाद्यसिद्धस्य शय्यातरः कुम्भ
कारस्वदानीं कृचिह्नप्रामान्तरैकार्यार्थं गतो भूत् कुपितया च देवतया वीतभयस्योपरिप्रांशं वृष्टिमुक्त्वा सकलमपि पुरमाच्छादितं अद्यापि तद्यैवास्ति

गगतर कुशकारणु गनिपथा मुक्त उदाय तराजपुत्रस्य अभीषिक्तुमारस्य तदा अय हत्तान्तो जात यदानीं उदायन केशि कुमार राज्ये भिषिच्य
प्रत्रचित ततोस्थायमव्य वसाय सपुत्रा अह मुदायनस्य चैष्ट पुत्र प्रभावत्यात्मजस्तादृशमपि मासुक्ताकेशि कुमार राज्ये भिषिच्य उदायन प्रव्रजित
इत्यन्तानमिहेन दु त्रेः पराभूतोऽतोऽभयपत्तन मुक्ता चम्पाया कीर्णिकराजान उपसम्पद्यविपुलभोग समन्वितो भूत् सच अभीचिक्तुमार अमथीपासका
भिगतजोऽपि उदायनरात्रि सननुगवेरोभूत् अभीचिक्तुमारी बहुणि वर्षाणि अमथीपासकपर्याय प्रतिपाल्य अर्द्धमासिख्यासलेखनया उदायनवैरम्यान
मनानीथकाल ह्यचाऽसुरकुमारत्वैनोत्पन्न एकपत्न्योपमस्थितिरस्यासीत् महाबिदेहे चैत्रे चान्तिधैर्यस्यतीति उदायन कथा तहैवकासीराया सेजसच्च
परकृती कामभोए परिचञ्ज पहणेकप्रमहावण ४८ हे मुने तथैव ते नेव प्रकारेण पूर्वोक्त नृपवत् काशिदेगपतिर्नन्दनमाराजा सप्तमवलदेव कर्म
रूप महायन प्राहणत् उक्तू लया मासेत्यर्थं किं ज्ञत्वा भोगान् परिलज्य कीदृशीनन्दन श्रेय सत्यपराक्रम श्रेय कथाण कारक यत्कृत्य सयम श्रेय
मय तत्र पराक्रमो यस्य स श्रेय सत्यपराक्रम मीचदारकचारित्र धमे विहित वीर्यं इत्यर्थं ४८ अत्र काशिराज दृष्टात वाराणस्यां नगरीं अग्नि
शिष्टोराजा तस्य जयत्यभिधादेयीतस्या कुञ्चि समुद्रूत् सप्तमवलदेवो नन्दनीनामतस्यानुजोभ्राताशेषवतीराज्ञीसुतीदत्ताम्ब्यो वासुदेव स च पिता
प्रदत्तराज्य साधिभरताङ्गानन्दनानुगतो राज्य श्रिय स्मीता अनुबभूव कालेनपट पञ्चाशद्वर्षसहस्राख्याशुरति बाह्य सुत्वादत्त पञ्चमनरक पृथिव्यामुत्पन्न
नन्दनोऽपि च गृहीत ग्रामस्य समुत्पादितकैव न ज्ञान पञ्चपट्टि वर्षं सहस्राणि जीवितमनुपाल्यमीचगत पट विप्रति धनू पिचानयोर्देह प्रमाण

पतागद्वसत्तर । ४८ । तहैव कासी राया सेउ सच्च परक्रमो । कामभागे परिचञ्ज पहणे कस्म महावण ॥४८

काशिराजा प्रगसनाय यस्यस्य पराक्रम प्रगतनोकहेजिह्वनो पराक्रम कामभागान परिलज्यकामभोगाने कीडोने कर्ममहावनप्रादृतिस्मकर्म रूपजे महा

मासोदिति काशिराज दृष्टांत. तदेव विजयोराया अण्ठाकिति पव्वएरज्जं तु गुण समिद्धं पयहिच्चु महायसी ५० हे सुने तथैव विजयो नामा द्वितीयो बलदेवोराजा प्रव्रजितोदीबां प्रपन्नः किं क्वा राज्यां तु पयहिच्चु इति परिहृत्य कोट्टयं राज्यं गुण समृद्धं गुणैः सप्तद्वैः पूर्णं स्वामी? अमाल्यर सहवृत्तं कोश ४ राट्ट ५ दुर्गा ६ बलानि ७ च राज्यां गानि अथ वा - गुणै इन्द्रियव्यामगुणैः पूर्णं कीदृशीविजयः अण्ठा अनार्त्तः आर्त्तं ध्यानरहितः पुनः कीदृशः कीर्त्तिः कीर्त्त्या उपलब्धितः अथ वा अण्ठाकित्ती इति अनष्टाकीर्त्तिः असमन्तात् नष्टा अकीर्त्तिर्व्यस्य स अनष्टाकीर्त्तिं अयशीरहितः ५० अत्र विजयराज कथा द्वारावत्यां व्रह्मराजस्य पुत्रः सुमद्राकुचि सम्भूतो विजयो नाम द्वितीयो बलदेवोस्त्रि स च स्व लघु भ्रातृद्विसप्ततिवर्षयत सहस्रा युद्धिं घृष्ट वासुदेवमरणानन्तरं शामख्यमङ्गीकृत्य उत्पादितकेवल ज्ञानः पञ्चसप्तति वर्षं सतसहस्राणि सर्व्यायुरति वाल्म सुक्तिं गतः सप्तति धनू पियचानयो देहमानमिति विजयराजकथा तदेव वुगन्तवं किञ्चा अब्बक्त्तेणचे असा महब्बलो रायरिसी आदायसिरसासिरिं ५१ तथैव महाबलनामाराजर्षिं सुतोये भवेप्पोच्चं जगामेतिशेषः किं क्वा अय्याच्चिसेन चेतसास्थिरेण चित्तेन उग्रं प्रधानं तपः क्वा पुनः किं क्वा सिरसामसूकेन श्रियं चारित लब्धो आदाय गृहोत्वा अत्र महाबलराज कथा अत्रैवभरतचेत्वे हस्तिनागपुरं नगरमस्त्रि तत्र बलनाम राजा तस्य प्रभावती नाम्नी राज्ञी अन्वदा साराज्ञी प्रवरशयनी योपगतईपन्निद्रां गच्छन्ती शयाङ्गशरं धवलं सिंहं खप्पे दृष्ट्वा प्रतिवृत्ता ततः सातुथा यत्र बलस्य राज्ञः शयनीयं तत्रोपागच्छति

तदेव विजयो राया अण्ठा किति पव्वए । रज्जं तु गुण समिद्धं पयहिच्चु महायसी । ५० । तद्वुगं तवं किञ्चा

वन तेहनेणुणत्तुं हुम्मा अटकम् दूरिकथा ४८ तथैव विजयोनामराजा तिमजविजयनामे राजा सर्वथापिगत कुकोप्तिः प्रव्रजितः सर्वथा करीने गर्इके भूडो कीर्त्तिं जेहनी एहवे राजा इदिचालोधी राज्यं गुणसमृद्धं गुणे करीने भग्गी राज्यं त्यक्त्वा महायगा महायश्वर ५० तथैव

त चप्र वनस्यराप्र कथयति तत स यनीराजात स्वप्न युत्वा द्रुट तुट एव मवादीत् हे देवित्यया कल्याण कृत् स्वप्नो द्रुट अर्थ लाभो भोगलाभो राज्य
 लाभय भविष्यति एव तुनु तव नवसुमासिषु माई सप्तदिनान्यधिकेयुगतेषु कुलप्रदीप कुलतिलक सर्वलक्षण सम्युषोदारको भविष्यतीति तत साप्रभा
 पती एतदर्थं युत्वा द्रुटाटुटावलस्य रामान्नाहचन स्वीकरोति राजानुप्रया च स्वयनीये समागच्छति तत् प्रभृति च सासुखिनगर्भमुद्दहति प्रयस्तदोद्ददा
 सापूर्णेषु सुकुमान्पाणि पाद सर्वलक्षणोपेत देवकुमारीपमन्दारक प्रसूतवती तत प्रभावत्या देव्या प्रतिचारिकावल राजान विजयजयाभ्यां पुत्र
 वभनायईयन्ति ततो बलराना एतमर्थं युत्वा द्रुटतुटोधारारुतकदस्य पुष्यमिव समुत्स्वसितरोमकूपस्ता सामङ्ग प्रतिचारिकाणां मुकुटवर्जं सर्वं स्व
 यरोरान्दार ददौमषकषपनादिक प्रीतिदान च यथेच्छ विक्रीर्णयान् तत सबलो राजाकोटुस्विक पुरुषानाकारयति आगतायतान् एवमवादीत्
 भोदेयानुप्रिया विप्रमेवहस्तिनागपुरेन गर्भारकयोधन मानोन्मान प्रवईनश्चक्रुत वहापन चघोपयत एव राजाप्रयति तथैव कृतवत प्राप्ते च हादशे
 दियमे तस्य दारकस्य महाबल इति नाम चक्र तु ततो महाबल पञ्चधात्री परिहृतीयहृषे गृहीतकलाकलापय यौवन मनुप्राप्त असदृश रूपलावण्यगुणो
 पयितानां अटानां रापरकन्यानां एकस्मिन्नेयदिवसेपाणि ग्रहणमकरोत् ततस्तस्य महाबल कुमारस्य मातापितरावतिययेन महददृष्ट प्रसादीपयोभि
 ताम भयन कारयत एतादृश प्रीतिदान ददतु अष्टौसुकुटानि अष्टौ कुण्डलयुगलानि अष्टौहारा अष्टौगोसाहस्रिक अष्टौग्रामा

अत्रविलसत्तैण चैत्रसा । महव्वलो रायरिसी आदाय सिरसा सिरि ॥ ५१ ॥ कह धीरे अहेजहि उम्भतुव्व महि

उपतप क्वा तोमा उयतपकरोने अश्याचितेन चेतसा सावधान चित्तकरोने महाबलो राजर्षि महाबलराजन्तविगृहत्वा मस्तके समयमत्रिय मस्तकने
 धियेनेहने मजमसिरो ५१ अयपतिय पुनरपि उद्देगमाह कथधोर पडित अहेतुभि क्रियाभि किमधीरपडितमु ङी क्रिया करीने उम्भसदृग्यथिलइव

अष्टीदासा अष्टीमदस्त्रिन अष्टौ सोवर्णं स्थालानि एवमन्यदपि सार स्वापतेयं मातृषिद्ध्यां तस्य प्रदत्तं ततः समहाबलः प्रासादवरगतः उदारभोगान्
 भुञ्जानी विचरति तस्मिंश्चकालेविसलस्त्रामिनः प्रपौत्रापमं घोषो नाम अणगारः पञ्चभिरनगरशतैः परिहृतो आगानुग्राम विहरन् हस्तिनागपुरमागतः
 तस्यान्तिके नागरिकपरिषत्समागता महावलीपि धर्मः शीतुं तत्रायातः शुला च धर्मं वैराग्यमापन्नो महाबल कुमारोऽहृष्टुष्टः त्रिवारं नत्वा एवमवा
 दीत् हे भगवन् अद्दधाभिनियन्त्यं प्रवचनं यथा भवद्भिरुक्तं सत्यमेवेति संयममार्गं महस्रद्धीकरियामि नवरं मातापितरौ आपृच्छामि गुरवः प्रीतुः
 प्रतिबन्धं माकार्षौ ततः समहाबलो धर्मं घोषमनगार वन्दित्वाहृष्टुष्टोरथमारुह्य हस्तिनागपुरमध्ये यत्र स्वगृहं तत्रोपगत रथात् प्रत्यवतरति
 यतमातापितरौ तत्रोपागत्य एवमवादीत् अहो मातापितरौ अया धर्मघोषस्य अनगारस्य अन्तिकेधर्मः श्रुतः स च धर्मोभिर्भरुचितः ततो महाबल
 कुमारं मातापितरौ एव अवदतां पुत्रत्वं धन्यः कृतार्थश्च ततः समहाबल एवमवादीत् अहोमातापितरौ इच्छाम्यहं भवदाज्ञया प्रव्रजितुं संसार भया
 दहशुद्धिन्नीस्यौति ततः साप्रभवती अनिष्टामकागाम श्रुतपूर्वामिमां पुत्रवाचां शुत्वारीमकूपगलत्स्विदाकीर्णं गालाशोकभरावतपिताङ्गानि स्तेजस्का
 दीनवदनाकरतलमर्दितकमलमालेवन्तानाविकीर्णकेशहस्तातुं टिलाधरणी पीठेनिपतिता मूर्च्छिताच परिचारिकाभिः काञ्चनकलशात् चित्रधाराभि
 रभिषिचमानासमाखासिता सतीरुद्यमाना एवमवादीत् त्वमस्माकं एक एव पुत्रोऽस्ति इष्टः कान्तारज भूतो निधि भूतो जीवितभूत उम्बर पुष्पवद्
 लभोस्ततो नैवं वयमिच्छामस्त्वच्छणमात मपि विप्रयोगं तत पुत्रत्वं तावद्दृहेतिष्टः यावद्वय जीवामः अस्मासुकालगतेषु परिवर्द्धित कुलसन्तानस्त्व
 पथात्परिव्रजेः तत समहाबल एव मवादीत् हेमातर्यत्वं वदसितत्सर्वं मोहविलसितं परं मनुष्यभवेजाति जरामरण शोकाभिभूतोऽध्रुवे सन्ध्याम्बरा
 गसदृशेस्वप्रदर्शनीपसे विध्वंसन स्वभावे सम पीतिर्नास्ति कोजानाति हे मातः कः पूर्वः कः पद्याहागमिष्येति अतीहं शीघ्रमेव प्रव्रजिष्यामि ततः

सामभावती एव मवादीत् पुत्र इदन्ते शरीर विशिष्टरूपलक्षणोपपेत विज्ञान विचक्षण रोगरहित सुखीचित प्रथम यौवनस्य वर्त्तते अतस्त्वमे
 तादृश्य शरीर योवन गुणाः अनुभव पद्याद्भिजे तत समहावल एवमवादीत् हेमात इद मयुथीशरीर दु खान्तन विवधव्याधि ग्रस्त अस्थि
 सम्यह स्वसाजालसम्बद्ध अग्नी च त्रिधान अवास्थिताकार जनीपवीतश्च भपिप्यतीति दृच्छाम्यह त्वरितु प्रव्रजितु तत सामभावती एवमवादीत्
 पुत्र इमास्त्वसर्वकलाकीमल स्वभावामार्दवाज्वलचमाविनयगुणयुक्ताहावभावविचक्षणा सुविशुद्धशीलकुलशालिन्य प्रगल्भवस्वामनीनुकूलभावानुरक्ता
 अष्टोत्तवभार्यामन्ति ताभिरन भोगाः म ह्यपद्याहय परिषाकिपरिव्रजे तत समहावल एव मवादीत् इमेखलु मानुथका कामभोगा उचार
 प्रयत्न स्ने मवातपितायया शुनयोश्चित समुद्रवा अल्पक्रीडिता बहूपसर्गा कटुकविपाका दु खानुबधिन सिद्धि विधातकारिणास्सन्तीति सद्यएवाह
 प्रव्रजियानि पुननाता पितरो एव मूचतु पुत्र परपर पर्यायात् बहु हिरण्य सुवर्ण विपुलधनधान्यानि स्वयमास्वादतोऽन्ये पा दानाच्चानुगृहाण ननुष्य
 लोक सत्कार सख्यानान्यनुगृहाण पथात्परिद्वेषे तत समहावल एव मवादीत् इद सर्व हिरण्यादिक वस्तु अग्निग्राह्य राजग्राह्य दयादग्राह्य मृत्यु
 ग्राह्य अधय विद्युच्चञ्चल गस्य भोग केनापि गृहीतु शक्य इति शीघ्रमवाह प्रव्रजियाभि ततो मातापितरो विषय प्रवर्त्तक वाक्यै र्गृहे एन रचित
 न गृह्णत त्रय सवनीहे तजरेर्वाक्यै रेव मूचतु पुत्र अयनियम्यमार्गो दुरनुचरोस्ति अत्र लोहमयायवाचर्षणीयास्सन्ति गङ्गा प्रतिशेतासि गन्तव्य
 मन्ति समुद्रे भगभ्याः रपोवीन्ति दीप्ताग्निशिखाया प्रवेष्टव्यमस्ति त्वद्धारया सच्चरणीयमस्ति पुत्र नियत्याना आधाकर्निक बीजादि भोजनश्च
 न कर्त्तव्यमन्ति पुत्रल तु सुकुमालोसि सुखीचित स्वाभिनत च्चधा त्था योतोष्यादि परोपहोपसर्गान सीटु न समर्थोसि पुन भूमिशयन केशलीचन
 अशान ब्रह्मचर्यं भिक्षाचर्याश्च विधातु न शक्नोसि तत पुत्रल तावद्गृहेतिष्ठ यावद्वय जीवाम तत समहावलएव मवादीत् अय नियम्य मार्गं

लोवानां कातराणाञ्च द्रहलोक प्रतिवदानां परलोक पराड्-सुखानां दुरनुचरोस्ति न पुनर्वीरस्य निश्चितमतेः पुरुषस्य किमप्यत्र दुःकरमस्तीति मां श्रु-
 जानोत प्रत्रज्या ग्रहणार्थं अथ माहपितृभ्यां तं गृहेरजयितुम गक्ताभ्यां आवाङ्मयेव प्रत्रज्यानुमतिर्दत्ता ततो बलिराजा कौटुम्बिक पुरुषे- हस्तिनाग-
 पुरं बाह्याभ्यन्तरे समार्जितोप्रलिप्तं कारयति महाबलं कुमारं मातापितरौ सिंहासने समारोपयत- सौवर्णिक कलसानामष्टशतेन यावद्भीमे याना-
 मष्टशतेन सर्वद्वेषामहान् निष्कृमणाभिपिकोस्य कृतः पितावभाण पुत्रभणतव किं ददामि कस्य वसुनः सांप्रतं तवार्थः ततः स महाबल उवाच द्रष्ट्या
 भितात कुत्रिकापणात् एकेन लक्षेनपतद्गृहं एकेन लक्षेण रजोहरण एकेन लक्षेण काश्यपाकारणमिति ततोवलराजा कौटुम्बिक पुरुषे स्त्रीष्वपि
 वस्तूनि प्रत्येकं एकैकलक्षेण आनायितवान् ततः स काश्यपोवसुभूतिनामा बलेन राज्ञाभ्यशुक्रतोऽष्टगुणोपीतिकेन पित्रे सुखचतुरंगुल वर्ज्जकेशान् महा-
 बल मस्तकेचकर्त्तुं प्रभावतीतान् केशान् हंसलक्षण पटगाटके प्रतिच्छिपति तच्चस्त्र स्वीर्पकस्थाने नश्यति ततः स महाबलीगोशीर्षं चन्दनातुलिप्तः सर्वो
 लङ्कार विभूषितः पुरुष सहश्रवाह्यां श्रिविकामारूढ एकयावतररुथाधृता तपतीहाभ्यां वरतरुणीभ्यां चान्यमान वरचामरो माहपितृभ्यां श्रनिक भद्र-
 कोटि परिश्रुतः प्रत्रज्या ग्रहणार्थं चलित तदानीन्तं नगरलोका एवं प्रशसन्ति धन्योयं कृतार्थोयं सुलभ्यं जन्मायं महाबलकुमारीयः ससारभयोद्दिम्ब-
 सर्वं सांसारिकविलासमपहाय प्रथमवयः स्थएव परिव्रजति एवं लौकैः प्रगंस्यमाण प्रलोक्यमानो गुलीभिर्दृश्यमानः पुष्पफलेषु विकीर्यमाणेषु याचके-
 भ्यश्च स्वयं दानं ददत् हस्तिनागपुर मध्यं मध्यं निर्गच्छन् धर्मधीषा नगरांतिके समायात- श्रिविकातः प्रत्यवतीर्णः ततो महाबलं कुमार पुरतः कृत्वा
 मातापितरौ धर्मधीषम नगरं वदित्वा एव भवदतां भगनैपमहाबल कुमारः ससारभयोद्दिम्ब- कामभोगविरक्तो भवदन्तिके प्रव्रजितु मिच्छति तत-
 इमां शिथ भिन्नां वय दत्तः स्त्रीकुर्वन्तु भवन्त- धर्मधीषा नगरएव सुवाच यथा सुखं देवानुप्रिया माप्रतिबन्धं कुरुत तत- स महाबलः श्रुष्ट तुष्टो धर्म-

पोषणनगर यद्विवा उत्तरवदिगतरानेऽपक्रम्य अलकार्यं सुत्तारयति अशूणि सुखन्ती प्रभावती देवी उत्तरीयवजे तमलकारवर्गं प्रचिपति महावन कुमार प्रलय नशदत् पुत्र अवाये विरेयाद्विटव्य यतितव्य अत्रार्थेन प्रमाय तत स महाबल पञ्चमौष्टिक लोच करोति धर्मघोषा नगरा न्तिके समागत्य एव मयदोत् भगवन्मय लोक अदोत प्रदोतौ जराभरणयस्तथास्तीति स्वयमेवमां प्रवाजयत तत स धर्मवीर्य छरिस्त स्वयमेव प्रवाज्य समाचारोम गिघयत् ततो महावनी नगरात् पञ्चसमिति त्रिगुप्तियुक्त क्रमेण चतुर्दयपूर्धरयाभूत् बहुभियर्तुयं पटाष्टमादिभिर्धिवै स्तप कर्म भिरात्मान भायन् द्वादशवर्षाणि ग्रामज्ज पर्याय मनुपालयन् अन्तो मासिक्वास लेखनया आलोचित प्रतिक्रान्त समाधिमास कालमासे काल कृत्वा यत्रकम्पे दशसागरीपमस्थितिकी देवी वभूव ततयुतय त्रेष्टि कुलेयाणिज ग्रामे पुत्रत्वं नोत्पन्न इति छातनामोत्सुक्त वासभाय यमण भग पत योमहावीरम्यान्तिके प्रयजित क्रमेण सिद्धेति महाबलकथा कहधीरे अहंजहि उन्मत्तुब्ब मच्चिचरे एए विसे समादाय सूरादट परकमा ५२ हे महामुने एते भरतादय सूरा धैयवन्त पुनदटपराक्रमाय सयमे स्थिर्वीर्यभाजो बभूवुरतिश्रेय कि कृत्वा यियेप मिथ्या दर्शित्योजिनमतस्य विशेप गृहीता मनस्याथाय तस्मात् हे महामुने धीर साधु अहेतुभि क्रिया १ अक्रिया २ विनय ३ अज्ञान प्रमुद्धे कुकितहेतुभिर्विपरीतभाषणैरुत्सस एव मयपानी यमज्ञा प्रथिया कयचरेत् अपितु स्नेच्छया यथा तथा प्रलयनपरायण सन् न चरेत् तस्मात् त्वयापिधीरेण सता तत्रैव निश्चित विधेय चरे । एए विसिस मादाय सूरा दट परकमा ॥ ५२ ॥ अच्चत नियाण खमा सच्चामे भासिया वद्धे । अतरिसु तरि

एतो इ गच्छेत् उन्मत्तनो परि दुर्वो इविचरे एते भरताद्या विधेयमादाग भरतादिकराजवीनी विधेयलेईने गूरा दट पराक्रमा छरवीर दट तु परा क्रमकरे ५२ प्रलय निदान क्रम मनगोधनधमा अल तनियाणाकर्मतेह रूपजेमन्ते द्रिकीधाकेनियाणारहितछे मल्य मया भापितावाच अही

इतिहासं ५३ अथं तनियाण खमा स्यामिभासियावर्द्धं पतारं सुतरंतेगि तरिस्सन्ति अणागया ५३ हे सुने भेमया सत्यावर्द्ध इति सत्यावाक् भाषिता प्राकृततातृतीयायां पट्टो जिनशासनं एव आश्रयणीय इत्येवं रूपावाणी मयोक्ता अनया वाण्या अङ्गीकृतया बह्वीजना अतरन् संसारसमुद्रं तरन्ति स्म एके अनयावाण्या इदानीं पपितरन्ति अनागता अपि अग्रे भाविना भव्या अपि अनयावाण्या भवो दधितरिष्यन्ति कीदृशास्त्रे भूत्वभविष्यत् वर्त्तमान जनाः अत्यन्तनिदान चया प्रत्यन्तं निदानं कर्ममलशोधनं तत्र चमाः कर्ममल प्रचालन सावधानाः नितरां दीयते शीघ्रते पवित्री क्रियते आत्मानि नेति निदानदैपु शोधने इत्यस्यरूपं ५३ कहंधीरे अहेजहिं अत्ताणं परिआवसे सब्वसंगविणिसुक्के सिद्धेह वड्ढनीरेएत्तिविमि ५४ धीरः साधुः अहेतुभिः क्रियावाद्यादि क्षमतिनां पाचीयुक्त्य सत्परूपणा लक्षणैर्मिथ्यात्वस्यकारणै आत्मानं स्वकीयमात्मानं कायंपर्यां वासयेत् कुलितहेतूनां आवासं आत्मानं कायं कुर्यात् अपितु न कुर्यात् इत्यर्थं किमिच्छं इत्यर्थं इत्यस्य फलस्यादित्याह सर्वसंगैर्द्रव्य भावभेदेन संयोगैः संयोगीथीवा विशेषेण निरुक्तं सर्वसंग विनिर्मुक्तः तत्र द्रव्यसंगीधनधान्यादिरूप-भावसंग क्रियावादि मिथ्यापरूपणरूपः ताभ्यां उभाभ्यां संगभ्यां विनिर्मुक्तः सर्वसंग विनिर्मुक्तः सन्साधुः सिद्धो भवति कर्ममलापहरिण नीरजा निर्मलः स्यात् उज्वली भवेत् इत्यादि उपदेशं दत्वा क्षत्रिय सुनिर्महीतले विजहार संयतमुनिरपि चारितं प्रपात्यमोक्षं प्राप

तेगि तरिस्सन्ति अणागया ॥ ५३ ॥ कहंधीरे अहेजहिं अत्ताणं परियावसे । सब्वसंग विणिसुक्के सिद्धे हवड्ढ नीरेए

संयतो एमे भाषावाणो साचोकहोहे इगां आराधतौर्णा एकतरंति इदानीं एहवाणेने आराधोकेकजीवतखाच्छे तरिष्यंति अनागत काले संसार समुद्र एकतीह्वणंतरेके आगतकालेतरस्ये ५३ कायं धीर अहे तुभिः परिकल्पित हेतुभि किमचतुर आत्मानं पर्यं वासयेत् वासं कुर्यात् कल्पित वाते करीने कल्पितधर्मं करी आपणा आत्मानि वासेनहीं सर्वसंग विनिर्मुक्तः सन् सर्वसंग रहितहीर्दने सिद्धोभवति नीरजः इति ब्रवीमिसिद्धोर्दं मुक्ते

सृगानाम्नी अग्र महिषी अभूत् महिषी पट्टराज्ञी अथा प्रधाना स चासौ महिषी च अग्र महिषी १ तसिं पुत्तेवलसिरी मिया पुत्तेत्ति विस्स ए अस्मापि जणदइए जुवरायादमीसरे २ तसिं पुत्ते इति तयोर्बल भद्र सृगाराज्ञी पुत्री बल श्रीतिमातापि त्वभ्यां कृत नामा सबल श्रीलोक विशुती लोक . प्रसिद्धी सृगा पुत्र इत्यभूत् सृगाया महाराज्ञाः पुत्रीसृगा पुत्रः लोकास्त्रं सृगापुत्र मित्यचुरित्यर्थः कीदृशी सृगा पुत्रः अस्मापि जण इति मातापित्रोर्द्वयती वल्लभः पुनः कीदृशः युवराज युवाचा सौराजा च युवराज . कुमार पदधारकः पितरि जीवति सति राज्य योस्यः कुमारो युवराज उच्यते पुन कीदृशः दमोविद्यते येषां तेदमिनस्तेषां इश्वरोदमीश्वरः उपसप्तमतां साधूनां ऐश्वर्यधारी अत्र कुमारवस्थायां एव दमीश्वर इति विशेषण उक्तं तत्तुभाविनि भूतोपचारात् अथवाऽन द्रव्यनिक्षेपो ज्ञेयः द्रव्यजिनाजिनजीवा इति वचनात् १ नन्दनेसो उपासाए कीलए सह इत्यि हि देवीदो गुन्दगीचिव निचं गुइयमाणसो २ मणि रयण कुट्टिमतले पासाएलीयणद्धित्री आलीए इनगरस्स च उक्कति य चच्चरे ४ उभाभ्यां गाथाभ्यां संबंधः स सृगापुतः कुमारी नन्दने विशिष्ट वासु शास्तोक्त सम्यग् लक्षणेपिते प्रासादिराजमन्दरे स्त्रीभिः सह क्रीडते कद्रवदोगुन्दुकदेव इव त्रयस्त्रिंशक सुरद्रव इन्द्रस्य पूज्यस्थानीया देवा स्नायस्त्रिंशकादोगुन्दुकाऽप्युच्यन्ते पुनः कीदृशः स . नित्यं सुदितमानसः निरन्तर कष्टचित्तः एतादृशीसृगा पुत्र . प्रासादा लोकेनेस्थितः सन् नगरस्य चतुःकविक चच्चरान् आलीकते प्रासादस्य आलीकते प्रासादस्थितः स नगरस्य चतुष्कादिस्थितानि कीतूहलानि पश्यति

नदणे सोउपासाए कीलए सहइत्थिहि । देवादोगुं दुगोचिव निचंमुइय माणसो । ३॥ मणिरयण कुट्टिमतले पासाया

राजाखे इंद्रीजिणे जीतीखे दमो कहिये योगी तेहनी स्वामीखे २ ससृगापुत्र वासे आनदोत्यादके भवने क्रीडते ते सृगापुत्रने हर्षने उपजावणहारी महल क्रीडते सहस्त्रीभिः स्त्री सहितते महलमांहि क्रीडाकरेखे देवादोगुं दकइव दोगंदक देवतानीपूरि नित्यं सुदितमानस . नित्यं सदा हर्षित थकी

कीदने प्रासादातीकनीमणिरयण कुट्टिमतले मणयय रत्नानि च तै कुट्टित जटित तल यस्य तत् मणिरत्न कुट्टिमतल तस्मिन् ४ अहृत्य अद्रच्छ
त पामर्द समणसञ्जय तय नियमसञ्चमधर सीलट्ट गुण आगर ५ अद्यातर समुगा पुत्र कुमारस्तत् तस्मिन् चतुष्कत्रिक पञ्चरादौ अद्रच्छन्त अति
क्रामन्त विचरन्त यमण पश्यति कीदृश यमण सयत जीवयतन कुर्वन्त सयत इति विशेषेण नवीतराग देवमार्गानुसारिण ननु शाक्यादि मुनि
पुन कीदृश तपोनियम समयधर तपो बाह्याभ्यन्तरेभेदेन द्वादशविध नियमोद्भव्यचेतकाल भावेन अभिग्रह ग्रहण समय सप्तदशविध तपयनियमस्य
समय तपोनियमसयमास्तान् धरतीति तपोनियम समयधरस्त पुन कीदृश शीलाख्य शीलै अष्टादश सहस्र ब्रह्मचर्यं भेदै आख्य पूर्ण पुन कीदृश

लायणेठिथो । अलिाद्रए नगरस्म चउक्ष तियचच्चरे ।४॥ अहतत्य अद्रच्छ त पासद्र समण सजय । तवनियम सजम •
धरसीलट्ट गुण आगर ।५॥ त देहर्द्धमिया पुत्ते दिट्ठीए अणमिसाद्रए । कहिमन्नेरि सरूवदिट्ट पुव्व मएपुरा ।६॥ साहु

भाग भोगवेड्ढे मृगापुत्र ३ स मृगापुत्र मणिसङ्गपोठे मणीरत्ने करीजडोतद्धे आगणी जेहनो प्रासादायलोकने गवाचि स्थित प्रासादनीगो खडोभरोखे
वेठाहे आलोकयतो नगरस्य नगरने देखेहे चउक्षत्रिक चयराणि चउक्षत्रिक चावरहाट प्रमुत्त ४ अथ तत्रत्रिकादिपु आगच्छ पच्चिवेते मृगापुत्र चउक
हाटने विन्ने आयतो पश्यति यमण सयत देवे एकपतीने तपो समय धरयतीकियाहे तपनियम स यम तेहना धरणहार शीलयुक्त गुणाना आगार
गीने करोग यण गुणनी आगरहे ५ त चयि मृगापुत्र पश्यतिहेहने मृगापुत्र देखेहे दृष्यामिपोन्नेपरचितया मेपोन्ने प रहित दृष्टि करीने कथ एव मन्ये
इदं रूप किहाइ एहवी स्वरप दृष्ट पूव प्रागजकनि दीठहत्त पाख्लिने भवे ६ साधो दर्शने तस्य मृगापुत्रस्य साधूने दर्शने करीतेमृगापुत्रने ग्रीभने

प्राचीन ताति स्मरण अभूदिति शेष सच्चिदोर्गर्भं तपश्चिद्विद्यया ज्ञान सच्चिदान तस्मिन् सच्चिदाने ८ जाद्र सरणि समुपपत्ते निया पुत्ते महत्पिण सरद्र
पोराणिय जा २ सामयत्र पुराक्य ८ शृगापुत्रो माडिको राच्य लक्ष्मी युक्त पोराणिकी प्राचीना जाति स्मरति कि स्मरति मया यामन्य चारित्र
पुराणत पूर्ण पालितमभू कस्यति जातिस्मरणे शानिसुत्वचे सति सञ्जाते सति ८ इत्यत्र पाठांतरमस्ति गाथाया पुनरुचिवात् विसण्णु अरज्जन्ती
र २तीमचस मिय अस्मापि उर उवागश्च इम वण्ण मज्जवी १० शृगापुत्र अस्मापि उर मातापितर उपागयसमीपमागत्व इद वचन अत्रवीत् कि कुर्वन्
विपयेषु अरचन् विपयेभ्यो विरतो भवन् च पुन चारित्रे मयमीरान् साधमां गे प्रीति कुर्वन् इत्यर्थ ८ सुयाणि मे पश्चमह्वयानि नरणसु दुक्लक्षितिरिक्त
त्रोयिभुनिव्ययकामी मत्रयाथो अणुचाणहपल्लइस्सामि अन्तो १० ३ पितरो मे मया पय महाव्रतानि प्राग जन्मनि श्रुतानि नरकेषु पुनस्त्विद्यं ग
योनिषु दुःखे भवन्तु ततोच्च निर्विक्रकामो ग्नि विहृत्तविषयाभिलाषो ग्नि अह महाणवात् सत्तार समुद्रात् प्रव्रजिष्यामि निस्तरिष्यामि यूय अतोभा
अनुगानोत आणा दत्त १ अश्रुतायन एभोगा भक्ताविसफलोवमा पच्छाकडयविवागा अणु वस्य दुःखावहा ११ हे पितरो मया पूर्वं भोगाभुता

च पुराक्य ८ ॥ निमएहिचरज्जतोरज्जतोसजसमियश्चमापियरउपागग्मइमवययमव्यवी १० ॥ सुयाणिमेपचमहव्वयाणि

स्मरति पोराणिकी ताति पाहिली ताति जन्म साभगोसामन्य चारित्र पून पूर्वज मरुत वली पाहिली भवे जे चारीत्र पायु इतु ते साभगु ८ म
कुमार विपयेपगगंडकुवन् ते कुमार विपयने निम्ने पराडमुख थको विपययो मनउतग्यो रज्वमान सयमे सयमने विखिरा चतुयकी मातापितो समीपे
पागल्य मातापितानि समीपे आगेनि इद वचनमत्रवोत् एहवी वचन कल्पानागी १० स्मृतानि मयापचमहाव्रतानि पचमहाव्रत मुभने साभगा नर

प्रथया दुःखे तत्राये क्लेशरोगान्तेया भागा १३ असासए सरीरमिरइनेवलभामिह पच्छापुराचव इव्वे फेणबुव्वयसन्निभे १४ हे पितरी अह
यगान्तगरीरेरिति नलभामि अह स्वास्या न प्राप्तामि पुन कोहमे सरीरे पयाज्ञीग भोगानन्तर पुरा पूर्वं भोगभीगात् अर्वाक एवत्यक्खये पुन
कोहमे गरीर फेन पुद्वदसन्निभे पानी प्रम्फोटक सदमे १४ माणु सत्ते असारमि वाहीरोगाण आलए जरामरणघत्थमि खण पिनरमामिह १५
हे पितरो अमारमनुयत्वे अह चणमपि नरमामि न हर्षं भजामि कोहमे मनुयत्वे व्याधिरोगाणां आलये व्याधय कुट ग्रूलादयो रोगावातपित्त
त्रे मच्चरादन्तेषां गृहे पुन कोहमे मनुयत्वे जरामरणाभ्यायस्ते १५ जम्मदुक्ख जरादुक्ख रोगाय मरणाणिय अही दुक्खीइ ससारी जत्यकी सन्ति

वासमिण दुपत्तकेसाणभायण १३॥ असासएसरीरमिरइ नोवलभामिह । पच्छापुराचवइयव्वो फेणबुव्वुय सन्निभे १४॥ •
माणुसत्ते असारमिवापी रोगाण आलए जरामरणघत्थमि खणपि नरमामिह १५॥ जम्मदुक्खजरादुक्ख रोगाय मर

गुरुगोपित सममति यतो किय अपवित्ते युक्कयोगित तु उपपूक्के असासतावास जीवस्य एजीवतव्यनी अग्रास्य तुवासक्के दुक्खकेयाणु भाजन दुक्खअने
क्केम तेहनु भाचन घरके १२ असासन्ते गरीरे एयरीर असासत्तूक्के चित्तसस्य न प्राप्नोति चोत्तने विखे सासतो सताप नपासु कु पयात् भुक्कभीगी
तयात्तनीय पइहेलापये एगतेरने अयस्य कोडस्य फेनवद्वुदसन्निभ एजीवतव्य पाणीनापरपोटा सरीखूक्के १४ माणुसत्ते असार एममुथ पण असा
रइ व्याधिरोगानां गृहे एगरीरव्याधि रोगानु वरुक्के जरामरणयस्त जरानी मरणतिणे करोयस्तक्के अह चणमात्रमपिनरमिमुख न लभेह चणमात्रपणि
गुणनयो पामत्त १५ चमदुञ्ज जराणुदुक्ख जम जराणु दुक्ख रोगाणिय रोगानी दुक्ख मरणनुदुक्ख अही इति विक्कयीदु खहेतु ससारा एससार

जन्तुणो १६ हे पितृदौहृ इति निश्चयेन ससारी दुःखं दुःखं हेतुवर्त्तते प्रहो इति आश्चर्ये यत्र संसारजीवाः क्लिश्यन्ति क्लेशं प्राप्नुवन्ति संसारे किं किं दुःखं तदाह जन्मदुःखं जरादुःखं पुनः संसारे रोगास्तापशोतशिरोर्तिं प्रमुखाः पुनर्मरणानि च एतानि सर्वाणि दुःखानि यत्र सन्ति तस्मात् त्रयं संसारी दुःखं हेतुरेव यत्र भवन्ति क्लेशान्ति क्लेशार्ता भवन्ति १६ खितं वत्युं हिरण्यं पुत्रं दारं च बन्धवा च इत्तान् इमं देहं गन्तव्यमवसस्समे १६ हे पितरौ मे मम त्रयस्य परवशस्य सतीः परभवे गन्तव्यं किं ज्ञत्वा चेत्तं ग्रामवाटिकादिकान्यत्ना पुनर्वासु गृहं हिरण्यं रूष्यं स्वर्णं युतदारं पुत्रवलतं च पुनर्बन्धवान् स्वजातीन् भ्रातृपि लब्धान् इमान् सर्वान् त्यक्त्वा इमं देहं सरीरं प्रपित्यत्ता १७ जहा किं पाकफलाणं परिणामो न सुन्दरो एवं भुत्ताणभोगाणं परिणामो न सुन्दरो १७ हे पितरौ यथा किं पाकफलानां विषद्यच्चफलानां परिणामो भक्षणानन्तर परिणति समयः सुन्दरो न भवति एव शुत्तानां भोगाना अपि परिणाम सुन्दरो नास्ति यादृश विषफलानां भक्षणं तादृशभोगानांभोग किं पाकफलानिहि दृश्यं

णाणिय । अहो दुःखोहं संसारो जल्यक्वीसति जंतुणो १६ ॥ खितं वत्युं हिरन्नं च पुत्रदारं च बंधवा । चद्रताणं इमं देहं गंतव्यं भवसस्समे १७ ॥ जहा किं प्रागफलानं परिणामो न सुंदरो एवं भुत्ताण भोगाणं परिणामो न सुंदरो १८ ॥

सर्वदुःखहेतुके यत्र संसारे क्लिश्यति जीवाः एह संसारने विखे जीव क्लेशपामे के १६ चेत्तं वसुगृहादि सुवर्णं खितुष रसीनुं पुत्रान् स्त्रियः भ्रातादयः पुत्र स्त्रीभाई तत्ताइदेहं एदेहोक्कीडोनि गंतव्यं अवस्यसेव अवस्य परलीकमे जाय १७ यथा किपाकफलानां जिमकिंपाकफलनी विपाकी नस्यात् सुंदरः जोमकोपाकफलनुं विपाक परिणमेते भला नहीं एवं शुत्तानां भोगाणांइसभोग भोगव्यानी विपाकी नस्यात् सुंदरः परिणाम सुंदर भलीनहुं इ १८

पुरुषः सुखी भवति, कीदृशः स, अल्पकर्मा अल्पानि कर्माणि यस्य स अल्प कर्मांलषु कर्मा पुनः कीदृशः स अवेदनः न विद्यते वेदना यस्य स अवेदनः अल्पवेदनी वेदनारहिती वा अल्प याप कर्मा अल्पासातवेदन इत्यर्थः २१ जहागिहेपलित्तंमि तस्मिन्नेहसाजोपहस्रारभण्डाणिनीण्ड असारं उव उक्कई २२ हे पितरौ यथा गृहे अग्निना प्रदीप्ते प्रज्वलिते सति तस्य गृहस्य यः प्रभुः स्वामी तदासारभण्डानि सारपदार्थान् आजीविका हेतून् गृह्णात् नीण्ड नि कासयति असारं भाण्डं अपीकृति अपीहित्यजतीत्यर्थः २३ एवं लीए पलित्तंमि जराए मरणेणय अप्पाणन्तार इस्सामि तुभं हिं अणु मन्निञ्ची २४ एवं अनेन दृष्टतिन लोके जरयामरणेन च प्रदीप्ते प्रज्वलिते सति अहं आत्मानं तारयिथामि कीदृशीहं युष्माभिरनुमतः भवद्भिः दत्ताज्ज स्तस्मात् मह्यं आज्ञादातव्या अहं भवदाज्या आत्मन उद्धारं करिथामीति भावः २४ तं विन्तस्मापि यरो सामन्नं पुत्त दुच्चरं गुणाणं तु सहस्साइं

सिसुही होइ छुहातब्हाए वज्जिञ्ची २१॥ एवं धम्मं पिकाज्जणं जोगच्छइ परंभवं । गच्छंतीसे सुहीहोइ अप्पकम्मं अवे यणा २२ जहागिहे पलित्तंमि तस्मिन्नेहस्र जोपहस्रारभण्डां नीण्ड । असारं अवउज्जमई २३। एवंलीए पलित्तंमि

जाय गच्छन् स सुखी भवति जाइती सुखीहीइ चुधातीपा विवर्जितः भूखतीषाइं करीरहित २१ एवंधम्ममपिक्कवाइमधम्मकरीने योगच्छति परभवे जीजाइं परलोकने विखे गच्छन् सुखी भवति जाताथको जीवसुखीहुवे अल्पकर्मा अल्पवेदना धोडा कर्म थोडीवेदना २२ यथा गृहे प्रज्वलिते जिम कीईने घरे अग्निलागीहुवे तस्य गृहस्य स्वामी तेहना घरनी स्वामी सारभण्डानि निष्कासयति सारप्रधानं भांडावसुकाटितिम असारं सर्वत्यजति असार सर्ववसुकाडे २३ एवं लोके प्रदीप्ते इमलीकने विखे अग्निलागीछे जरायामरणानि च जराअमे मरणरूप आगिलागीछे आत्मानं भांडतुल्यं तारयिथामी

धारेयव्या इ भिक्वणी २५ अथ मातापितरो त मृगा पुत्र प्रतिव्रूत हे पुत्र यामण्य दुष्कर साधुधर्मो दुष्करोस्मि हे पुत्रचारित्र्य उपकारकारकाणां गुणाना सहस्राणि भिच्चीधारितव्यानि मूल गुणाधीतर गुणाय भिच्चुणाधारणीया २५ समया सव्वभूएसु सत्तुमित्ते सुवाजगे पाणाद वाइ विरई जापजीवाइ दुक्कर २६ पुनहे पुत्र सर्वभूतेषु समता कर्त्तव्या अथ वाजगे इति जगति शत्रुमित्तेषु समता कर्त्तव्या पुनर्या ज्जीव प्राणति पातविरति दुक्कर इति दुक्करा २६ निचकालपमत्ते ण मुसावायविवज्जण भासि यव्व हिय सव्व निचाउत्ते ण दुक्करं २७ पुनर्नित्यकाल सर्वदा अप्रमादित्वेन

जराए सरणेणय । अप्पाण तारइस्सामि तुम्भेहि अणुमनिच्ची २४। त वि तस्मापियरो सामन्न पुत्तदुच्चर गुणाणतु सहस्राइ धारियव्वाइ भिक्वुणो ॥ २५ ॥ समया सव्वभूएसु सत्तुमित्ते सुवाजगे पायायवाय विरई जावज्जीवाए दुक्कर २६॥ निचकालपमत्ते ण मुसावायविवज्जण भासियव्व हियसव्व निच्चाउत्ते ण दुक्कर २७ ॥ दतसोहणमाइस्स

आपणाधामाने भाडनो परितारे युषाम्याअनुज्जात तुम्हारीआदेसलेइने तुम्हे तुमारो आदेशयो २४त नृगापुत्र प्रतिव्रूतामातापितरो ह्वेमातापिता मृगा पुत्रप्रतिदमकहे चारित्र हेपुत्तु दुक्कर हेपुत्तु चारित्तुदीहिलोहे हे पुत्रचारित्र उपकारकाणा गुणानातु सहस्राण्यिगुणना हजार मूलगुणाधीतर गुणाइ भिच्चु धारयितव्यानिसाधो साधुने धरणहे २५ तुल्यता सर्वभूतेषु सर्वजीव ऊपरे समताभाव राखे शत्रुमीत्रेषु रागद्वेषाकरणत शत्रुमीत्र ऊपरे सरिखा भाव रागे समता भाव आणे ततो लोके प्राणातिपात विरतितिणे कारणे प्राणातिपातनी विरती करे यावज्जीव तु दु कर जावज्जीवताइ दीहीलित २६ निय काल अप्रमत्ते न सदाइ अप्रमात्पण मृगा वाद विवर्जन मृगावाद वर्ज्जिंवो भापितथ्य हित सव्वं सर्वजीवने हितबोले नित्य सावधानेन

सुषा वादस्यविवर्जनं सुषा वाद विवर्जन कर्तव्यं पुनर्हित हितकारकं सत्यं वक्तव्यं पुनर्नित्या युक्तेनस्थातव्यं तदपि दुष्करमस्ति आयुक्तः क्रियासु सावधानत्वं नित्यं अयुक्तो नित्यायुक्ताख्येन स्थातव्यं अत्र भाव प्रधान निर्देशीमन्तव्यः नित्यं अयुक्त्वेन स्थातव्यं तदपि दुष्करमित्यर्थः २७ दन्तसीहण माइस अदत्तस्य विवर्जनं अणवज्जी सण्णज्जस गेह्णा अविदुकरं २८ हे पुत्र पुनः साधुधर्मं दन्तशीघन प्रसुखस्यापि अदत्तस्य वसु नोपि विवर्जनं शिलाकामात्र मपि वसु अदत्तं न गृहीतव्यं अनवद्यं च तत् एषणीयं च अनवद्यं पणीयस्य पिरडाट्टेग्रहणं अपि दुष्करं अनवद्यं निर्दूषणं अचित्तं प्रासुकं एषणीय द्विचत्वारिंशद्दीष रहितं पिरडं गृहीतव्यं तदपि दुष्करमित्यर्थः २८ विरई अवभचेरस्स काम भोगरसनुणा उगं महव्वयं बभं धारियव्वं सुदुकरं २९ हे पुत्र अवन्न चर्यस्यमैथुनस्य विरतिः कर्त्तव्या सापि दुष्करा हे पुत्र काम भोग रसजेन पुरषेण उगं घोरं बभं ब्रह्मचर्यं महाव्रतं धर्त्तव्यं तदपि दुष्करं लव्य भोगसुखा स्वादस्य भोगेभ्योनिवृत्तित्यं तं दुष्करा इत्यर्थः २९ धण धन्नपेसवगे सु परिगह विवज्जणं

अदत्तस्य विवर्जनं अणवज्जी सण्णज्जस गिग्हणा अविदुकरं २८ ॥ विरई अवभचे रस्स कामभोग रसनुणा । उगं महव्वयं बभं धारियव्वं सुदुकरं २९ ॥ धणधन्नपेसवगे सु परिगह विवज्जणा । सव्वारंभ परिच्चाओ निम्ममत्तं सुदु

अति दुष्करं २७ दन्तसीधनादे लणादेः दन्तशीघन श्लीप्रसुख अदत्तस्य विवर्जनं अदत्तादानपणि बर्ज्जलीद्वनही अनवद्यस्य एषणीयस्य निरवद्य सुभ्रतो ग्रहणमपि अतिदुःकरं आहारपाणी लेणी दीहिला २८ विरतिः ब्रह्मचर्यस्य शीलव्रतनीं विरतीकरे कामभोगस्य रसजेन कामभोगनाजाण उग्रं महाव्रतं ब्रह्मचर्यं उग्रमहाकाठिनशीलवृत्त जाज्जीव शीलपालतां दीहिलो धारवो २९ धन्वधान्य प्रेथयर्गयु धनद्रव्य धान्यपशुनासमूह परिग्रहविवर्जनं परिग्रह

मथारभ परिगाथो नियमस्तसु दुष्कर ३० धन धान्य प्रेष वर्गेषु परिग्रह विवजन कर्त्तव्य धन गणिमादि प्रेष धनोदासदास्या
 दिग्ग धन च धान्य च प्रेष वर्गय धनधान्य प्रेषवर्गस्त्रेषु मोह बहे विशेषेण वर्जन एतदपि दुष्कर पुन सर्वारभ परित्याग कर्त्तव्य स चापि
 दुष्कर पुननिर्ममत्वचित्तन दुष्कर नमेकयिदन्ति ग्रह मपि कस्यापि नाम्नोति चिन्तन दुष्कर ३० चड्वि हेपि चाहारैराई भोयणवल्जणामत्रिहो
 मवषो चैव वज्जे रज्जोर्गुदुष्कर ३१ हे पुत्र पुन साधुधम चतुर्विधे आहारैराति भोजनस्य वर्जनाकार्या असन पानखादिमस्वादमाना चतुर्णा
 माहाराणां अपि रात्रि भोजनत्याग एव कर्त्तव्य च पुन सन्निधि हृत गुहादे उचितकालाति क्रमेण स्थापन तत सन्निधि यासो सञ्चयय
 सन्निधि सञ्चय एव निगयेन वर्नितव्य सोपि सुतरा दुष्कर ३१ कुहातणहायसो लणह दसमसगवेयया अक्को सा दुखस्मिज्जाय तथाप्पा
 मापप्रमेवय ३२ पुनह पुत्रपुथा सहनीयाइत्यथाहार लणालपा च सीठव्या सीतीण सहनीय दसमसगकानां वेदना सहनीया पुनराक्कोशा दुर्वचना
 नितममनमपि दुष्कर पुनहुं कउगथाप्रति ग्रथा उपाययस्य दुक्ख ग्रथादुक्ख तदपि सहनीयं सस्तारके लणसर्गं दुक्ख पुनर्बल्ल मल परीपहोपि सीठव्य
 साधना ३२ ताडणातञ्जणचिव बहवन्थ परीसहा दुक्ख भिक्खारिया जायणाय अलाभया ३३ पुनस्ताडनाचयेटा टकरादिनाहनन पुनस्तर्जन अह्ण,

क्कर ३० चड्विहेवि आहारैराईभोयण वज्जणा । सनिहीस चओचे ववज्जेयव्वो सुदुष्करं ३१ ॥ कुहातगहायसीउन्ह

यणयो सर्वारभ परित्याग सयधारभनु छांडय निर्ममल अतिदु कर निर्ममल पण दोहिल ३० चतुर्विधे अपि आहारि च्यारेआहारि रात्रीभोजन
 विरञ्जन रात्रिने धियेणाय यज्ज मनिधि स चयो हृतादिसापन रात्रिने विखे हृतप्रमुखराखणो नहीं बर्जितव्य सुदुष्कर एवर्ज्ज बुदोहिल्ल ३१ सुधाभूख

ल्यादिनानिर्भक्तन् भयोत्पादनं पुनर्वधवन्त्रपरोपहाः सहनीयाः तत्र वधोयद्यादिभिर्हिननं वन्धनं रज्ज्वादिनादसनं वधश्च वन्धश्च वधवन्धौ तयोः परीपहाः सीढव्याः पुनर्भिन्नाचर्यायाः दुक्खं गृहस्थगृहेयाचनाकर्त्तव्या तत्कारणेपि दुक्खमस्ति तत्रापि याचनायां कृतायां अपि अलाभता अप्राप्तिर्भवेत् तदापि दुक्खं न कर्तव्यं एतदपि दुःखारं ३३ कावीयाजा इमावित्ती केसलोत्थीयदारुणां दुक्खं वन्धव्यं घोरं धारिडं शमहपणा ३४ हे पुत्र साधु धर्मे पुनः कापीतीया वृत्तिर्वर्त्तते इति शेषः कपीतानां पक्षिणां या इय वृत्तिः साकापीताया यथा हि पक्षिणोनित्यं शक्तिः सन्तः स्वभक्ष ग्रहणे प्रवर्त्तन्ते भस्त्रं कृत्वा च पुनः सार्थं किमपि न गृह्णन्ति कुचि सखला भवन्ति तथा साधवीपि दीपेभ्य ग्रहमानाः आहार ग्रहणे प्रवर्त्तन्ते आहारं

दंसमसग वियणा । अक्कोसा दुक्खसिज्जाय तणफासा जल्लमेवय ३२ ॥ तालणा तज्जणा च ववहवंध परीसहा । दुक्खं भिक्खवारिया जायणाय अलाभया ३३ । कावीया जाइमावित्ती केसलोउ अदारुणो । दुक्खं वं भव्वयं घोरं धारिडं

तथा तीस सीत ताड उण गोरमी दंशमगक्वादि वेदना हांसमच्छर आवोलगे तेहनी वेदना आक्कीयः कीदृ गालिदिइं दुक्खगिया उपासरा दुक्खदाइ भूंडा तणस्पर्य शरीरमलः एवं दुक्खं सीढव्यं तणनीस्पर्यः मलगुं राखुं एदुक्खसहवुं ३२ ताडना कराभ्या हाथस्युं मरिअंगुत्थादिनातज्जनअंगुलीइकरो तज्जे ववस्ताडनं वधमारवुं वधोरज्ज्वादिना वांध वं गाडूया साथे दुक्खं भिजाचर्या भीचामांगवी तेहे जदुल्लभ साधुने याचनां अलाभता इत्यादि सुदुक्करं अलाभपरिसहदीहिलो ३३ कपीतानां पक्षिणां इयवृत्तिः कपीतपक्खीनी परिसुभतु आहारलीइं वृत्तिआजीविका करे केशलोचो दारुणो रौद्रः साथे लोचकरवो महादीहिलो दुक्कर वल्लवतं घोरं दीहिलो पालवी रौद्र वल्लचर्य धारयतः पुनः महात्माने साधुने दीहिली ३४ सुखीचितः सुखयोग्यःत्वं

कृत्वा च किनपि सार्धं सञ्चय न कुर्वन्ति पुन साधूनां कैय लोचीपि दारुणी भयदोस्त्रि पुनमहात्मना साधुना ब्रह्मव्रत धत्तु, दुःख इति दुष्कर यद्ब्रह्म
व्रत महात्मना महापुरुषेण धियते तद्ब्रह्म व्रत धत्तु, दुष्करमिति भाव कोट्य ब्रह्मव्रत घोर अन्ये पा अल्प सत्वानां भयदायक ३४ सुहोद्रीश्री तुम्पुत्ता
सुकुमाली सुमञ्जित्री नहुसीपभू तुम पुत्ता सामन्नमणपालिया ३५ हे पुत्रत्व सुखी चित्तोसि हे पुत्र पुनस्त्व सुकुमालीसि अथ चारित्र प्रहणाय
समुद्यतोसि पर त्व आमस्य साधु धम अनुपालयितु प्रभु समर्थो न भवति ३५ जावज्जीव मविस्वामी गुणाण तुमहभरो गुरुश्री लोह भारव्व
जोपुत्ताहोद दुव्वदो ३५ हे पुत्रयो गुणाना चारित्रस्य मूलोत्तर गुणाना गहाभार सलोहभार इव गुरुर्गिरिदोर्द्वहो भवति कोट्यो गुणानां महाभार
यावज्जीव अविशामोविशामरहित अन्योपि गुरुभारो यदा वोढु नमस्कते तदा कवित्पुद्देशेविमुच्यविशामो रच्छते एव चारित्र गुणभार कदापि नमी

अमहप्पणा ३४ ॥ सुहोद्रीश्री तुमपुत्ता सुकुमालीय सुमञ्जित्री । नहुसी पद्दतुमपुत्ता सामन्न मणपालिया ३५ ॥ जाव
ज्जीव मविस्वामी गुणाण तु महभरो । गुरुश्री लोहभारव्व जोपुत्ताहोद दुव्वहो ३६ ॥ आगासि ग गसोउव्व पडिस्सो।

हे पुत्र तु सुखने योग्यके सुखोचियके सुकुमालच सुमार्जित सुकुमालके स्नाने करीने समान्तीहे न भवित्यसिस्त्व समर्थं रे पुत्र रे वेटा तु समर्थं नहीं
हुने यावत्त्व चारित्र पालयितु न समर्थ इत्थं चारित्र तुभ्यक्तो नहीं पले ३५ जावज्जीव अविशाम जावज्जीवताद् बीसामीलीकी नहीं गुणानां
पुन समूहो महाभार चारित्रनी जेगुणतेहनो महाभार चलावणो गुरुक महाभारीलोहभारकहनो परे लोहभारनीपरे जिम लोहनीभार जपाडता
दीहिली तिम चारित्र, दीहिलु हे पत भवति दुर्वह पालता दीहिलीके ३६ आकाशे गगाप्रवाहेव आकाशनी गगा तेहनी प्रभाव प्रतियोतेवदुस्तर

चनीयः यावज्जीवधारणीयः ३६ आगसि गङ्गसीउब्ब पडिसो लब्बदुत्तरो बाहाहिंसागरोचेव तरियव्वी गुणो दही ३७ हे पुत्र आकाशे गङ्गाया श्रोती वत् दुस्तरं इति योज्यम् यथा हि माचलात् पतङ्गानां प्रवाहस्तथा संयमीधारितु मशक्यः प्रतीपजल प्रवाह इव दुस्तरौ वाहुभ्यां सागर स्फुरितव्यस्तथा गुणोदधिगुणानां ज्ञानादोनां उदधिगुणोदधिः अथवा गुणान्नादानादय एव उदधिः गुणोदधिधारितु समुद्रस्तरणीय ३७ बालुया कवले चैन निरस्माए उसञ्जमे असिधारगमणं चैव दुक्करं चरिठं तवो ३८ हे पुत्र बालुकाकवली यथा निस्वादस्तथा संयमः असिधारा गमनं असिधारायां गमनं खप्रधारायां चलनं यथा दुक्करं तथा तप्यरितुं दुक्करं वर्त्तते ३८ अहीवेगन्तदिद्वीए चरित्ते पुत्तदुच्चरे जवालीहमया

उब्बदुत्तरो । बाहाहिंसागरोचे वतरियव्वी गुणोदही ३७ ॥ बालुया कवलेचेव निरस्माए उसंजमे । असिधारगमणं चैव दुक्करं चरिउंतवो ३८ ॥ अहीवेगं तदिद्वीए चरित्ते पुत्तदुच्चरे । जवालीहमयाचेव चावियव्वा सुदुक्करं ३८ ॥ जहा

साहसुं तरवुं दोहिल्लुं भुजाभ्या सागर जिम वाहिं करो समुद्रतरवी मुसकिल तरितथ्यो गुणोदधिः दुस्तरौ वर्त्तते तिमए गुण समुद्र चारित्तु हे पुत्त तरता दोहिल्लोच्छे ३७ यथा बालुकायाः कवला. जीम वेलूनाकी लीया निरास्वाद एवं संजमी निरास्वाद निस्वाद हुवे तिमएचारित्तु निस्वादके खप्रधाराया गमणप्रियः खानोधारा जपरिचालवुं दुःकर चरित्तु तव दुक्करवर्त्ततेति चारित्तु अनितपकरणी दुक्कर छे ३८ अहीरिव सर्पवत् एकादश्या एकाग्रचित्त सर्पनीं परि एकाग्रचित्तथकी चारित्तुं हे पुत्र दुःकरं चारित्तुने बिखे चालणं दुःकर यथा लोहमयाः जिम लोहमयश्च चर्चित्तव्या अति दुक्करं चावता दोहिल्लोच्छे पानतां ३८ यथा दिमाग्नि

चेव चावैयव्यास दुष्कर ३८ हे पुत्र साधु अहिरिव एकान्त दृष्टि एकीन्तीनिययो यथा सा एकान्ता एकान्त एकान्त दृष्टि यथा सर्प
 एकाग्रदृष्ट्याचलते इतस्ततो नविलोक्यसि तथा साधुमार्गे साधुचरते मोचमार्गे दृष्टि विधाय चरेत् कीदृशे चारित्रे दुर्धारे चरितु मगल्वे यथा
 लोह मया यवायर्वितव्या दुष्करास्तवा चारित्र मपि चरितु दुष्कर ३८ जहा अग्निमिहादिता पाउ होइस दुष्कर तहदुष्कर करिउ जे तारुणे
 समणत्तण ७० हे पुत्र यथा अग्नि शिखादीप्तासती ज्वलन्ती पातुपान कर्त्तुं सतरा दुकरा तथा तारुण्ये योवने अमणल्य चारित्र कर्त्तुं दुकर
 योवनावस्थाय हि इन्द्रियाणि दुर्दमानि इत्यर्थं ४० जहा दुक्व भरेउ जे होइ वायस्सकुल्यलो तहा दुक्व करेउ जेकीविण समणत्तण ४१ हे पुत्र
 यथा वायोरिति वायनाभरित पूरित कुल्यलो वस्तमय भाजन दुकर तथा क्लीवेन हीन सत्वेन आमण्य कर्त्तुं दुष्कर ४१ जहा तुलाएतोलेशो

अग्निमिहादिता पाउ होइ सुदुष्कर । तहदुष्कर करेउ' जेतारुणे समणत्तण ४० ॥ जहादुक्वभरेउ जेहोइवायस
 कुल्यलो तहादुक्व करेउ जेकीविण समणत्तण ४१ ॥ जहा तुलाएतोलिउ दुष्कर मदिरोगिरी । तहानिहुय निस्रक

शिखा जिम अग्निनो शिखा जाल्वल्यमानहोइ पान भवति सुदुष्कर ते जाल्वल्यमान अग्निपीता दुष्कर तथा दुष्कर कर्त्तुं जे पादपूरणेतिससयम पालवो
 दोहिलु तारुण्ये अमणल्य योवनावस्थाने विखे साधुपण ४० यथा दुक्वेन पूरयितु शक्यते जीम दुक्वे करीने भरोइ भवति शक्यते वातेन वस्तमय
 कुल्यलज्ज जिम वायरे करोने वस्तनोकीयलोभराइ नहो तथा दुष्कर कर्त्तुं क्लीवेननि सत्वेन अमणल्य तिमकायरनेचारितु पालता दोहिलुछे कायर क्लीव
 परपने चारित दोहिलुछे ४१ यथा तुलायतोलयितु जीमताकडोइ करितोलवु दुष्कर मेरुपर्वत मेरुपर्वतदोहिलो तथा निभृत नियल नि गेक

दुःकरं मन्दिरोगिरी, तहानि हुयं निस्सङ्गं दुःकरं समणत्तणं ४२ हे पुत्र यथा मन्दिरोगिरिरेकपर्व्वं तसु लयातीलितं दुःकरः तयानि भूतं निदान
निःशङ्कं शङ्कारहितं यथा स्यात्तथा गरीरापेचारहितं यमणत्वं साधुत्वं गरीरेण धर्तुं दुःकरं ४२ जहा भुयाहिं तरिडं दुःकरं रयगायरो तथा
अणु वसन्ते णं दुःकरं दमसागरो ४३ हे पुत्र यथा रत्नाकरः समुद्रो भुजाभ्यां तरितुं दुःकरस्तथा अनुपगान्तिन मनुष्येण दमसागरस्तरितुं दुःकरः उप
शान्तोजितकपायं नउपशान्ती अनुपशान्तस्ते न सकपायेण पुरुषेण दमः इन्द्रियदमोर्ध्याय चारितं दमएव दुस्तरत्वात् सागर एव दमसागरस्तरितुं
दुःशक्यः इत्यर्थः ४२ भुञ्जमाणस्सएभोए पञ्चलक्काए तुमं भुत्तभोगीतश्रीजाया पच्छा धम्मं चरिस्ससि ४४ हे पुन मानुपकान् मनुयस्स इमे
मानुथे कास्तान् मानुथिकान् मनुय सम्बन्धिनः पञ्च लचणान् पञ्चविधान् भोगान् त्वं भुस्स त्वं प्रनुभव हे जात हे पुत्र ततः पचात् भुल्लभोगी

दुःकरं समणत्तणं ४२ ॥ जहाभुयाहि तरिडं दुःकरं रयगायरो । तथा अणुवसन्तेणं दुःकरं दमसायरो ४३ ॥ भुंजमा
णुस्सएभोए पंचलक्खणएतुमं । भुत्तभोगी तश्रीजायापच्छाधम्मं चरिस्ससि ४४ ॥ सोवितम्मापियरोएवमेयंजहाफुडं । इह

गरीरादि निगपिच्चं नीरापिखी दुःकर यमणत्वं तिमनिरोच्च पणी नियलपणे निःशकपणे चारितपालता देहिल्लोके ४२ यथा भुजाभ्यां तरितुं जीम
वांहि करीने तरतां दीहोली दुःकरं रत्नाकरः समुद्रः रत्नाकरस्वयंभु रमणनासे समुद्र तथाऽनुप गांतचिन्ते न जेशुं चित्तपियय यकी रहीत नधी ययुं
चित्तठाभिनथो दुःकरं यामखं तेह्नी चारित् दीहिल्लोके ४३ भुंक्षमाणकान् भोगान् भोगवि मनुयना भोग पंचलक्षणान् गल्पादीन् पंचलक्षण गब्ध
रूप रसगंधस्पर्श भूतभोगी सन् हे पुत्रः भोग भोगवीने हे पतः पयाउग्गं चरियसि भोग भोगवीने पक्के धर्म प्रादर जे ४४ अथ पुत्र हेतुतः समूत हे

जन्मानि च पुनर्मरणानि सीढानि प्रभुभूतानि चत्वारो देवमनुष्यस्त्वर्यक् नरकरुपाः भवा प्रन्ताप्रपगवा यस्य स चतुरन्तः चतुरन्त ए चतुरन्त इति व्युत्पत्ति त्रयासंसारस्तस्मिन् चतुरन्ते संसारे कीदृशे चतुरन्ते जरामरणकन्तारे जरामरणाभ्यां प्रति गहन तथा कान्तारं वनं जरामरण कान्तार वनं जरामरणकान्तारं तस्मिन् जरामरणकन्तारे ४७ जहा इह प्रगणी उष्ही इत्ती प्रणन्त गुणो तद्धि नरएसुवियणाउगहा मसायाविइयासए ४८ हे पितरौ येपु नरकेष्वहं उत्पन्नस्तेपु नरकेपु मया उष्णाप्रपशनेन्द्रिय दु खदा पसाता वेदनाविदिताभुक्ता कीदृशा उष्णा यथा इह मनुष्य लोके शग्निः उष्णेवर्त्तते इतीग्नेः स्पर्शात् तत्र नरकेपु अनन्तगुणोग्नि स्पर्शः तत च पादराग्नेरभावात् पृथिव्या एव तथा पिधः स्पर्शइति गम्यते ४८ जहा इह इम सीयं इत्तीणन्त गुणो तद्धि नरएसु वियणासीया मसायावि इयामए ४८ यथा इह मनुष्य लोके इदं प्रलचं सीतं वर्त्तते इतः सीतात् तत्र नरकेपु

भयाणिय ४६ ॥ जरामरणकन्तारे चाउरंते भयागरे । सएसीढाणि भीमाणि जम्माणि मरणाणिय ४७ ॥ जहाइहं
अगणीउगहा इत्तीणंत गुणोतहिं । नरएसुवियणाउगहा अस्माया विइयामए४८॥ जहाइहं इमंसीयं इत्तीणंतगुणोतहिं

वीहामणा महारीद्र दुक्लअने भयसहाछे ४६ जरामरण कान्तारे जरामरणरूप अटवीने विपे चतुर्गतिरूपे भयाकरे चारगतिरूप संसारने विपे मया सीढाणि भीमाणिमेंसहां रीद्रवीहाअणां जवानि मरणाणि च जम्मरणनामि दुक्लसहां ४७ यथा इह मनुष्यलोके अग्निः उष्णी दृश्यते जीममनुष्य लोकांने विपे अग्निउष्णछे अस्मात् अनंतगुणस्तएअग्निअको अनंतगुणी तीहां नरकेपु वेदना उष्णा नरकांनेविपे वेदना उष्णछे अग्नातरूपा वेदिता मया अग्नातरूपसेवेई ४८ यथा इदं अत्र शीतं जिम मनुष्यलोकांने विपे प्रस्मात् प्रनंतगुणस्तएअयको अनंतगुणं छे तीहां नरकेपु वेदना सीतला नरकांने

मया मिता असातावेदना अनन्त गुणधिकाभक्ता अनुभूता ४८ कन्दतीक्ष्ण उडुपात्रो अहोसिरो हुयासणे जलन्तमि पक्षुष्वो अणन्तसो ५०
हे पितरो अह कन्दकुम्भीय पातभाजन वियेपासुलोह मयोपु हुतायने देवमाया कृतेवक्रो अनन्तशोवदन् वारान् पक्षपूर्वं पूर्व पक्ष इति पक्षपूर्वं
कीदृशीह जर्षपाद जर्षचरण च पुनरथ गिराअधोमस्तका अह कि कुर्वन् क्रान्दन् पूत् कृति कुर्वन् कीदृशे हुतायने ज्वलति देदीप्यमाने ५८
महादग्नि सद्भासे मरु मिवइरवालए कलस्य वालुया एय ददृ पुब्बो अणन्तसो ५० हे पितरो कलबवालुकायानद्या मरु मिवालुकानिव देशेकते
अनन्तगीवार २ अह दग्ध पूर्वं कलबवालका नरकनदीतस्या पुलिन धूल्या भ्रष्ट पूर्वं ययात्र चणकादिधान्यानि भ्राष्ट्रे भ्रज्यन्ते तथाह मपि बहुशी
दग्ध कय भूतेमरी महादवाग्नि सद्भासियामहादवानल सद्दशे दाहक शक्ति युक्ते पुन कीदृशे मरो वज्रवालुके वज्रवालुकायस्य स वज्र वालुकस्तस्मिन्

नरएसुवेयणासीया अस्माया वेदयामए ४८ ॥ कदतीक्ष्णदुकुभीसु उडुपात्रो अहोसिरो । हुयासणे जलन्तमि पक्ष
पुब्बोअणन्तसो ५० ॥ महादवग्निगसकासे मरुस्मिबद्र खालुए । कलव वालुयाएय ददृपुब्बो अणन्तसो ५१ ॥ रसतीक्ष्ण

विषे शोतलवेदना अयातारूप वेदनामया अयातारूप वेदनामिसहि ४८ आक्र द कुर्वन् कटाहेपु आक्र दकरतुयको कु भीभाजनविषे जर्ष पादो अधो
मिरे पगठ पागिर नीचाकोधाहे हुतायने अग्नेो प्रज्वलितमति अग्नि नीचिवलेहे सहतीक्ष्णो पक्ष पूर्वं पच्यो अनतवार अनतीवार कडाहमाहि
पचागोहे ५० महादवाग्निसद्दशे महादवनी आगिसरीपो मरुदेशवत् वज्रवालुका नदीतीरे मरुदेशने विषे रेतहीडितिम वज्रवालुका नदीरेत माहि
कदव वाजुकाया च तिम कदव वानूनदीनातीरमाहि दग्ध पूर्वा अनतस अनतीवारवाल्बो ५१ पूत्कुर्वन् लीहकटाहेपु पुकारकरठ आरडतुलीहना

वज्रवाणुके ५० रसतीकदुकुम्भोसु उष्ट्रबद्धो अबन्धवो कारवत्तकरवयाई हिं छिन्न पुल्वो अणन्तसो ५१ हे पितरौ पुनरह कन्दुकं भीषु लीहमयपाचन भाण्डविशेषेषु, ऊई हृच्चशाखादौ बध. सन् परमाधार्मिकदेवैरिति बुद्ध्या मायं अबद्धः कृतचित् नष्टायास्थिति तस्मादधो देशेकुम्भौवर्त्तते उपरि हृच्च शाखायां अहं बद्धे. करपत्नैः क्लृप्तचैश्च अनन्तशी बहुवारं छिन्नपूर्वोद्दिधाकृत. यथा काष्ठं बध्वाकरपत्नैः क्लृप्तचैः स्थिते तथाहं छिन्नः लघुनिकाष्टविदारणी पकरथानिक्रमचानि हृहन्ति च तानि करपत्रकान्युच्यन्ते कीदृशीहं रसन् विलपन् पूलृत्ति कुर्वन् पुनः कीदृशीहं अबान्धवः न विद्यते बान्धवो हितकारी यस्य स अबान्धव. ५१ अद्रतिकखकंटकाइने तुङ्गेसिं बलिपायवे खिवियं पासबद्धेण कट्टो कट्टाड दुकरं ५३ हे पितरौ अतितीक्ष्णकंटकाकीर्णे तुङ्गे उच्चेश्चल पादपे कटाकट्टौ कर्षापकर्षणे. परमाधार्मिक क्लृप्तैः क्षेपितं पूर्वीपार्जितं कर्म अनुभूतं मयायानि कर्माण्युपार्जितानि तानि भुक्तानीति

दुकुंभीसु उष्ट्रवद्धो अबंधवो । कारवत्तकरवयाईहिं छिन्नपुव्वो अणंतसो ५२ ॥ अद्रतिकख कंटकाइने तुंगेसिं बल पायये । खिवियं पासबद्धेणं कट्टोकट्टाहिं दुकरं ५३ ॥ महाजंतिसु उच्छुवा आरसंती सुभरवं । पीलिओमि सकम्मे हिं

कटाहमाहिं ऊई बध. अबंधवो उचोबांधीयको अबधवभाई रहितकर पत्र लघुकर पत्नादिभि. वली वडीलहृडीकरवते करीने छिन्नपूर्व. अनंतयः अनतोवारक्षेयोछे ५२ अतितीक्ष्ण कंटकाकीर्णे अतितीखा कांटातिणेकरी सङ्घित उच्चै शास्त्रलीहृच्च घणी उचो सास्त्रलीहृच्च सहनामे हृच्चक्षिपितं पाशबद्धीहं पासबांधीने शुभने टेखी इतस्तत आकर्षेण दुक्करं उरहं परहुं पंचाणुदीहिलीथयो ५३ महायंत्रेषु इच्छुवत् महायत्रविषि सेलडीनीपर प्ल्वारं कुर्वन् भैरवं महावीहामणी आरडतुथकी पीडितोस्ति स्वकर्मभि. आपणे कर्म करीपीडांछे पापकर्म अनंतय पापकर्महं अनंतीवार ५४ पूत

ग्रेय कोट्टेगेन मया पायवडे रत्ना सञ्जितेन इदमपि दु कर कटभुक्तमितिशेष ५३ महाजन्ते सु लच्छूव आरसन्तोसुभेख पीलिओमिसकम्भे हि पायजम्भो अणल्लसो ५३ हे पितरौ पुनरह पापकर्मा पाप कर्म यस्य स पापकर्मा पाप अणनायो बहुवार स्वकर्मभिर्महायन्त्रेषु पीडितोऽस्य इय इचुरिव यथा इच्छुर्महायन्त्रेषु पीडिते अह कि कुर्वन् सुभैरव सुतरा अल्लन्त भैरव भयानक गब्ध आरसन् आक्रन्द कुर्वन् ५३ कुवन्तो कोलसुणएहि सामेहि सबलेहि यपाडिओ फालिओ छिन्नो विण्फुरन्तो अणगसो ५५ हे पितरौ अनिकयोऽनेकवार श्यामै श्यामाभिधानै च पुन गबलै गबलाभिधानै परमाधार्मिकदेने भूमो पृथिव्या अह पातित परमाधार्मिकाहि पचदगविधा अबे १ प्र तिबध्नति च अन्वरिस्वीचेव १ कारीयेपसृति २ सामेय ३ गातनां पातनां च कुयन्ति ३ सबलत्तिय ४ अत्तादिनि काशयन्ति ४ रुदो ५ कु तादौ प्रीतयति ५ अवरह ६ अगोपांगानि मोटयन्ति ६ कालिय ७ तैलादीतलयन्ति महाकाले तहायरे ८ स्वमां सानिखादयन्ति ८ ११ असि पत्ते ८ असि पत्तवन्वि कुर्वन्ति ८ धणू १० धनुर्वाने धन्ति १० कुम्भे ११ कुम्भोपाके पचन्ति ११ बालुया १२ भाद्रे पचन्ति १२ वियसत्तिय १३ वैतरण्या अवतारयन्ति १३ खरस्सरे १४ शाल्मल्यामारीप्य खरस्सरान् प्रकुर्वन्ति १४ महाघोषे १५ नग्यतो नारका मीलयन्ति महागब्धेन भापयन्ति १५ इति परमाधार्मिका कीट्यै श्यामै गबलैय कीलयन्तैर्बेराह कुर्कुं ररूपधारिभिर्देवै पुनरह स्फाटित पुरातन वस्तवत् विदारित पुनरह तैर्बेराह कुर्कुं दे स्फाटितोदन्तैर् दे इमिभ्य हृषवत् छिन्नय पुन कीटगोह

पावकन्तो अण तसेा ५४ ॥ कृवतीकालमुणएहिसामेहि सबलेहिय । पाडिओ फालिओच्छिन्नो विण्फुरतो अणे कुर्वन् गब्दायमान पुकारकर्तीयको शूकरै श्वानेयसुहरे कूतरे श्यामै सबलै परमाधार्मिके श्याम अने स बलइसेनामि परमाधामीक देवताछे ते भुविपा तित जोणं अचवत् छिन्न पाटित ते देवताइ सुम्भने धरतीइ नाग्योपके फाडोछेयो शूकराकृतरापासेखवाओ विल्ल एन् इतस्सतयलन् उरहो परहो

पुनरह रोक्तीवाइति गवयव इवपातित यष्टिमुध्यादिनाह्लापातित वा शब्द पादपूर्णे यथा शब्द इवार्थे ५७ इयासणे जल त मिचियासुमाहि
 सोविददृष्टीपक्षीय अरवसी पावकम्मे हि पावियो ५८ हे पितरो पापकर्मभिरह प्राहती वेदित सन ज्वलति हुताग्ने जाज्वल्यमानेऽग्नीदग्ध भस्मसा
 कृत पुनरह पक्ष इन्तादिवत् भटिलीकृत कीदृशीह अरव्य परवश अह कइव अग्नादग्ध पक्षयचित्ताउ अग्निसुमह्रिप इव यथात्र पापा पटक
 बध्वा अग्ने प्रज्वालयन्ति भटितो कुर्वन्ति तथा तत्राह परमाधार्मिकदेवेर्विक्रियारचित्ताग्नीदग्ध पक्षय ५८ बलासण्डा स तुच्छे हि लोह तुच्छे हि
 पक्षी हि विलुत्ती विलवन्तीह तद्गगिडे हिणन्तसी ५९ हे पितरो अह अणन्तसी बहुयार टङ्गट्टे टङ्गपचिभिर्गट्टप्रपचिभिर्बलात् विलुत्तयु म्यित
 विग्नेपेण लसोविलप नामानि तान्बकानि यादिप चुष्टित इत्यर्थ कथ भूतैर्दकैर्गट्टै सन्द गतुच्छे सन्द शाकार तुच्छ येपा ते सन्द गतुच्छाम्ने
 सदशाकारमुद्धै पुन कीदृशे लोह तुच्छे लोहवल्कठीर मुद्धै कि कुर्वन विलपन् विलाप कुर्वन् ५८ तणहाकिलन्तो धावन्तो पत्तोवियरणि नइ जन्म

महिसीविव दद्वोपेकायअरवसीपावकम्मे हि पाविश्री ५८ ॥ बलासंडास तु डेरि लोहतु डेहि पक्खिहि विलुत्ता विल
 वतोहटकगिडेहिणयतसी ५९ ॥ तणहा किलतो धावतो पत्तोवियरणिन्द्र । जलपाहिति चिततो खुरधाराहि पिवा

परवस दग्भायीपचायी परवसयथवी पापकर्मभो नरकगति प्रापित पापकर्मनरकि माहि धाल्यो ५८ बलाकारेण स डासक समान चचुपुटे ऋडासी
 समान अहनी चाचके लोहतु डे पचिभि लोहसरीखी अहनी चाचके इसे पखीए विलुत्ती विदारित विनयत विदाखी विलपकारतु टक
 गट्टे पचिभि अनैतण टकगट्टपखीए अनतोवार ५९ तयाकिनन वावन तप्राइ पीडोथकी दीडतुथकी प्रातोवितरणी नदी वरणी तदीइ गयो

पाह तिचिन्त' तो सुरधाराहिं विवाइत्रो ५८ हे पितरौ पुनरहं लषाक्लान्तस्रुषाभिः व्याप्तौ धावन् वेतरणीं प्राप्तः सन् जलं पिबामोतिचिन्तयन् चुरधा राभिर्थापादित कोर्यं यावदहं लषा क्लान्तीमनसिपानीयपिबामीति चिन्तयामि तावद्वेतरणी नद्याः जर्मिभिः कल्मीलैर्हती दु खीकृतोवैरणी नद्याः जलं हि चुरधारा प्राय गलकेदकमस्तीति भावः ५८ उण्हाभि तत्तो सम्पत्तो असिपत्तं महावणं असिपत्तेहिं पण्डतेहिं किन्न पुब्बो त्रणं तेये ६० हे पितरौ पुनरह उष्णाभितप्तः आतपपीडितः क्षायार्थी असि पत्तं महावनं प्राप्तः असिवत् खड्गवत् पत्तं येषां ते असि पत्ता खड्गपत्र ह्यस्त्रिषां महावाः असि पत्त महावनं गतः सन् असिपत्तैः पत्तन्निरनन्तशोऽनैकवारं किन्न पूर्वोद्धिधाकृतः ६० सुगरेहिं सुसंढीहिं सुसलेहियगयासम्भगगत्तेहिं पत्तं दुक्खमणन्तसी ६१ हे पितरौ अहं सुहरै लोहमयैशु रजैः च पुनर्म संढीभि शल्ल विशेवैलेपेटाभिधानैश्लैर्वा तथा शूलै स्तिशूलैश्च पुनमु श्लैः

इत्रो ६० ॥ उन्हाभिततो संपत्तो असिपत्तं महावणं । असिपत्ते हिं पडंतेहिं किन्नपुब्बो अणंतसो ६१ ॥ सुगरेहिं सुसंढीहिं सूलेहिं सुसलेहिय । गया संभगगत्तेहिं पत्तं दुक्खं अणंतसो ६२ ॥ खुरेहिं तिक्वधारिहिं कुरियाहिं

जलपास्यामि इति चितयन् पाणीपोसुं इत्यु चितवतु गयोचुरधाराभिः जलोर्मिभिः विपादितः कुरी सरीखीइ पाणीरीधारे पाब्बो ६० उष्णाभितप्तः संप्राप्तः तावडे करोनि पीडयिक्तो आब्बो असिसमान शट्टयैः पत्तैः खड्गसरिखां जेहना पांनके इत्ये वनवडं आब्बो खड्गसट्टयैः पत्तैः पत्तन्निः जपरि खड्ग सरिखा पांनपडवालागा किन्न पूर्व अणंतशःके यो भेयो अणंतशःके ६१ सुहरप्रहारै तथा सुं सुट्टैः शल्लविशेषैः मीगरना प्रहार तथा सुं संढीहथीयार विशेष तेहना प्रहार त्रिशूलैः सुश्लैः त्रिशूल मुशलः गदाभिः भग्नगात्रै गदाइ करीनि अंगोपांग भागाइ प्राप्तः दुक्खं अहं अणंतशः अणंतीवारसे दुक्ख

हे पितरो पुनरह कुठारे पय्याके काष्ठ सस्करणसाधन प्रहरणै वीक्षिकिभि काष्ठतडभिद्रुम इव कुट्टित स्फाटित छिन्नय यथा काष्ठवन्निर्ह्वच कुठारै पय्याभिः प्रहरणे कुच्यते स्फाच्यते तद्याह परमाधार्मिकैर्वा २ पीडित ६६ च वेड सुट्टिमाद्र हि कुमारि हि अयपिव ताडिओ कुट्टिओ भिन्नो बुग्निओय अणत्तसो ६७ हे पितरो पुनरह परमाधार्मिकैर्देव्य पेटाभिर्हस्तलै पुनमुंघ्यादिभिर्बडहस्तै आदि शब्दाक्षत्ताजातुक्कुर्यरा प्रहारैस्ताडित कुट्टित भिन्न भेद प्रापित चूर्णित कै कमिव कुमारै लोहकारै अय इव लोह इव यथा लोहकारेण लोह कुच्यते भेद्यते चूर्ण्यते शष्पीक्रियते ६७ तत्ताडित बलीहाद्रै तओयाद्र सीसगाणिय पाईओ कलकलन्ताई आरसन्तो सुभैरव ६८ हे पितरो पुनरह परमाधार्मिकै स्तप्तानिगालि तानि ताम्नलोहादीनि वैक्रियाणित्वपुकानिकसौरकानि च अह पायित कीटयानि ताम्नादीनि कलकलन्तानि कलकलयब्द कुर्वन्ति अत्यन्त उक्कलन्तानि अब्यक्त शब्द कुर्वन्ति कीटयोह सुभैरव अतिभीषण शब्द रसन् विलपन् ६८ तुह पियाद्र मसाद्र खण्डाद्र सीसगाणिय खाविओमिसम्भ

कुमारिहि अयपिव । ताडिओ कुट्टिओभिन्नेचुग्निओयअणतसो ६८ ॥ तत्ताडित बलीहाद्र तडयाद्र सीसगाणिय ।

पाविओ कलकलताद्र आरसतोसुभैरव ६९ ॥ तुह पियाद्र मसाद्र खण्डाद्र सीसगाणिय । खाविओमि समसाद्र

मारि तथा ताडित कुट्टितोभिन्नतिम ताडो फुच्योभेद्यो चर्षितय अनतय चूर्णकोयो अनतीवार ६८ तप्तानि अग्निवर्णोक्तानि ताम्नलोहादि अग्नि सरोपाजोधाहे ताम्न अनिलोटात्रपुकानोकथोरसोसकानि सीसो पान कारित कलकलितानि कलकलात करला पायां आक्रदन् अह भैरव आक्रद करताने महावीर्यामणो ६९ तवापि प्रियानि मासानि तुम्हने मांसप्रियहृत् खड्डीकृतानि शूलाकृतानि नाहा नाहाशुकरत् शूलाकरीखात् भच

वैयणा ७५ हे पितः मया वेदना सर्वं भवेत्, स्थावरत्नसंभवेषु असातविदिता सीतीणचुत्विपासादिका अनुभूता हे पितः निमेषां तरसात्रं अपियत् सातावेदनासुखानुभवनं नास्ति तदादीक्षायां किं दुःखं कथं अहं भवन्ति सुखीचित इत्युक्तं मया तु सर्वत्र भवे दुःख एव अनुभूतं ७५ तं विं तस्मापि यरीच्छन्देण पुत्तपव्वया नवरं पुणसामन्ने दुक्ख निष्पडि कम्मणा ७६ अथ पितरौ मृगा पुत्रं ब्रूतः हे पुत्र छन्दसी स्वकीयेच्छया प्रव्रजदीक्षां गृह्णाण कस्त्वां निषेधयति नवरं शब्देन अयं विशेषीस्ति पुन आसखे चारित्ते एतत् दुक्खं वर्त्तते यन्निप्रतिकर्मतास्ति रोगीत्यत्तौ प्रतीकारो न विधेयः निर्गताप्रतिकर्मतानिः प्रतिकर्मताचिकित्सानकर्त्तव्या न चिन्तनीयापि सावयवैयकं नकारयितव्यं ७६ सीवन्तस्मापि यरं एव मेयं जहाफुडं पडि

गुणियाणरएसु दुक्खवैयणा ७४॥ सव्वभवेसु अस्सायावैयणा वेइयामए । नमिसंतरमित्तंपि जंसाया नत्थिवैयणा ७५॥
तंवितास्मापियरीच्छंदेशं पुत्तपव्वया । नवरं पुणसामन्ने दुक्खं निष्पडिकम्मया ७६ ॥ सीवितस्मापियरो एवमेयं जहा •

दृश्यते वेदनाः हे तात वेदनादीसेच्छेइत अनंतगुणिताः सति एहं हुंती अनंतगुणी नरकेषु दुःखवेदनाः नरकनेविखे दुक्खनीवेदनाहे ७४ सर्वभवेसु अथाता सर्वभवनेविखे अथाता दुक्खरूपा वेदना मयामि वेईसेषीण्णियं यावत्सेषीण्णियं पतांइं आताएखं नास्स साता एखन्ही ईदन्नाइं २ विं वेरन्नाइं अनु भावे करीने ७५ तं मृगापुत्रं प्रतिब्रूतः मातापितरौहवे मातापिता मृगापुत्रने कहेछे छंदेन स्वाभिप्रायेण हे पुत्र दीक्षांगृहाण हे पुत्र आपणीइच्छाइ दीक्षालित्री केवलं पुनः चारित्तियु दुःख हेवेटादिचामांहिं चिकित्साकारावणो नही एवातदीहिलीछे निःप्रतिकर्मताचिकित्साकरणं नास्ति हेपुत्र थारे दु ख उपजसेजदेणुणसहायकारसे ७६ कुमारं ब्रूते मातापितरौ कुमारमातापीतानिकहेछे एवं एतत् यथास्सुटं सत्थं एवाततुम्हे कहीतंसांची चिकित्सां क कारि

काम की कुण्ड अरुणमियपवित्रण ७०) ततोऽनन्तर मातापितरो प्रति सन्तुगापुत्र कुमारी प्रूते हे पितरी एतत् भवद्गता उक्त एव यथा स्फुट अश्वितय भन्दुक्त सत्यमित्यर्थ हे पितरी अरुण मृगणा पचिणश्च क प्रति कर्मणा कुरुते यदा हि मृगाभ्याधि पीडितायने भवन्ति पचिणो वा वनेरोगपीडिता भवन्ति तदा की वैद्य आगलरोगचिकित्सा कुरुते न कीपि कुरुते इत्यर्थ ७० (एगभूओ अरुणै वाजहाइचरइमिओ एव धम्म चरिस्सामि सञ्जमिण तवे णय ७८) हे पितरो यथा मृगो अरुणै अटव्या वा इति पद पूर्णे एकाकीभूत एकाकीसन् चरति खिच्चया भ्रमति एव भनेन प्रकारेण मृगस्य दृष्टा न्नेन अह समयमेन सप्तदश विधेन तपसा द्वादशविधेन धम्म शीवीतरागात्त चरियामि अङ्गीकारियामि ७८ (जयामि यस्स आयद्धे महारुण मिजायइ अरुण त रउ मूल मि कोणन्ताहेचिगिच्छइ ७९) यदा महारुणै महाटव्या मृगस्य आन्तकोरोगीजायते तदात मृग सुच्चमूले सन्तिट त को वैद्यचिकि

फुड । परिकम्म कोकुण्डं अरुणे मियपवित्रण ७० ॥ एगभूओ अरुणैवा जहाओ चरइमिगो । एवधम्म चरिस्सामि सजमेण तवेणय ७८ ॥ जयामिगम्म आयकोमहारुन्न मिजायइ । अरुणै रुक्खमूलमिकीणताहे तिगिच्छइ ७९ ॥

यति चिकित्सा क्षोण करुणै अरुणै मृगपचिणा लजाडि साहि मृगलापखी यानी चिकित्सा ७० एकभूत एकाव प्राप्ता अरुणै एकली होइ अरुणै यिणे पडोरहे यथा चरति मृग पछे मृगरुडाहोइ रोगथकी सूकाइ पछे चरपार्णी पीइ एव धम्म चरियामि इमह धम्म करीसी समयमेन तपसा सनमपालोस तपकरीस ७८ यथा मृगस्य आतकरीग आयाति जिम मृगलाने रोगअवे महारुणै उत्पद्यते महा अटवीने विखे रोग उपजि मृग तिट त उपमूले पछे हचने पांमे जाइ उभारहे बेमे क ततदा चिकित्सति तीहा मृगलानिकोण चिकित्सा करे ७९ ततक मृगस्य शीपध ददातिकीण

लते परिचर्यां कुरुते सेवा कुरुतेणं इति वाक्यालकारे ७६ (कीवासे श्रीसहन्दे इ कीवासे पुच्छईसुहं कीवासे भक्तपाणञ्च आहारितापणामए ८०) हे पितरौ तस्य रोगग्रस्तस्य मृगस्यक शीषधन्ददाति वा अथवा तस्य मृगस्य कथागत्य सुखं पृच्छति भी मुगतव समाधिर्वर्तते इति कः पृच्छति वाऽथवा तस्य मृगस्य भक्तपान आहारपानीयं आहृत्य आनायददाति ८० (जयायसेसुहो हीइ तया गच्छइगीयरं भक्तपाणस्स अट्टाए वल्लराणि सराणिय ८१) हे पितरौ यदा च समृगः सुखी भवति स्वभावेनरोगमुक्ती भवति तदा गोचरं गच्छति भस्य स्थाने व्रजति तत च भक्तपानस्यार्थं वल्लराणि हरित खलानि च पुन सरांसि जलस्थानानिविलोकयतीत्यध्याहारः ८१ (खाइत्ता पाणियं पाउं वल्लरेहिं सरेहिं वा मिगचारियं चरित्ताणं गच्छईमि गचारिय ८२) हे पितरौ सन्नोरोगी मृगी मृग चर्यया मृग भोजन पानविधिना चरित्वा वल्लरेभ्योहरित प्रदेशेभ्यः खादित्त्वानि जमस्यं भुक्त्वा तथा सरेभ्य

कीवासे ओसहंदेइकीवासिपुच्छइ सुहं । कीसिभत्तंचपाणंवाआहारित्तु पणामए ८० ॥ जयायसे सुहीहोइ तयागच्छइ गीयरं । भत्तपाणस्स अट्टाए वल्लराणि सराणिय ८१ ॥ खाइत्तापाणियंपाउं वल्लरेहिं सरेहिंवा । मिगचारियं चरि

तीहां मृगलानि शीषधदीइ' कः मृगस्य पृच्छति सुखं कीणते मृगलानि साता पूछे क' वातस्य मृगस्य भक्तपानंवाकीणते मृगलाने खवाने भातपाणी दीइ' आहृत्य आनीय प्रणामयेत् अर्पयेत् कीणते मृगलानि टणपाणीं आणीदेइ'के ८० यदा च स मृग सुखी भवति जीवारे मृगनीरोगजाइ' सुखीहोइ' तदा गच्छति गोचरणं भ्रमणं तिवारते मृगजाइ चरवा भणी भक्तपानस्य अर्थे वल्लराणि चारिभुवः नीलां टणां खाइ' सरीवरे पाणीपीवे ८१ भत्तयित्वा पानीयं पीत्वा टणाखाइ पाणीपीने वल्लरेः सरोजलैर्वाविलि खाइ पाणीपीने अथ मृगचर्यासेव्यः मृगचर्या चरीने गच्छति

स्नाटाक्रेभ्य पानोय पोत्वा मृगो मृगचया गच्छति इतस्तत् उत् प्रवनात्मिका गति प्राप्तीतीत्यर्थं ८२ (एव समुद्विष्टो भिक्वू एवमेव अणेगञ्चो
 मिगचारिय चरित्ताण उट्ट पक्कमइदिस ८३) एव अमुना प्रकारेण मृगवत् समुत्थित सयमक्रियातुष्टान प्रति उद्यती भिक्षुर्मुगचर्या चरित्वागीकृत्य
 उदादिय प्रति प्रक्रयति प्रव्रजति तथा विधरोगीत्यत्तौ अपि चिकित्सायाभि सुखो न भवति पुन कीदृश साधु एव एक अनेनैव प्रकारेणैव मृगवत्
 अनेकग अनेकस्थानिस्सित अनियतस्थान विहारो यथा मृगोवनखण्डे नवीने २ स्थाने विहरति तथा नाना स्थान विहारीत्यर्थं तथाह मृग चर्याया
 आतकस्य अभावे भक्त पानादिगवेषण तथा इतस्ततो भ्रमणेन भक्त पान गृहीत्वा सयमालान धृत्वा पयात् जर्द्धा दिश सुक्ति रूपां दिश प्रतिप्रकामि
 प्यामि सर्वो परित्थोभविष्यामोति भाव ८३ (जहामिए एगअणेगचारी अणेगवासेधुवगीयेय एव सुणेगीयारियप्पविट्टेनोहीलएनोवियखिस एज्जा ८४)

ताण गच्छई मिगचारिय ८२ ॥ एव समुद्विष्टो भिक्वू एवमेव अणेगञ्चो । मिगचारिय चरित्ताण उट्टपक्कमइदिस ८३॥

जहामिए एगअणेगचारी अणेगवासे धुवगीयेयेय । एव सुणेगीयारियपविट्टोणोहीलए नोविय खिसएज्जा ८४ ॥

मृगाथय पछे जनमाहिदच्छाह फिरे ८२ एव मृगवत् समुत्थितो भिक्षु इम मृगनी परि साधु एवमेव मृगवत् एकलोथको सुख दुक्खसच्चतु थको अनित्य
 वास मृगचर्या चरित्वा अनियतवास मृगचारी चरीने कीदृहाइ स्थिति वास नही जहुंदिंस सुक्ति गच्छति उर्द्धदिसेइमथको इमकरतु सुक्ति जाई ८२ यथा
 मृग एको अपि अनेकस्थानवासी जीम मृगएकथको घणेठामि रहे अनेकस्थानवासी नियितभोजन सामग्रीक घणो स्थानके वास करे धणे ठामे आहार
 निर एव मुनि गोचरे प्रविष्ट सन् इम साधुगोचरो गयोथको नहीनयति नखिसयति कोनेहोनानकरे निदा न करे ८४ मृगचर्या चरियामिइ

यथामृगः एकीऽसहायीसन् अनिकचारी भवति अनिकन भक्त पानाचरणशीली नानाविधभक्तपानग्रहणतत्पर स्यात् पुनर्यथा मृगोऽनिकवासः स्यात् पुनर्यथा मृगोऽधुवगोचरो भवेत् ध्रुवः सदा गोचरोयस्य स ध्रुवगोचरः निश्चयेन भ्रमणादेव लब्धाहारः स्यात् एवं असुना प्रकारेण मृग दृष्टान्तेन मुनिः साधुगोचर्याभिचाटनं प्रविष्टः सन् नीहीलयेत् अनिष्टबीरसं लब्धा इदं कुक्षितं विरस इत्यादि वाक्यैर्ननिन्दयेत् तथा अपि निश्चयेन पुनर्नोखि सयेत् आहारिपानीयेवा अलब्धे सति कमपि गृहस्थं ग्रामं नगरं आत्मानं वाननिन्देत् ८४ (भिगचारियं चरिस्वामि एव पुत्तो जहासुहं अस्मापि जहिं प्रणुत्वाञ्चो जहाति उवह्मितञ्चो ८५) यदा मृगा पुत्रेण पितरौ प्रति इत्युक्तं हे पितरौ अहं मृगचर्यां चरिष्यामि यथा भवदग्रे मृगचर्यां लक्तातां त्रयीकारिष्यामि साधुमार्गं गृह्णीष्यामि यदा मृगामृत्वेण एवं उक्तं तदासातापितरौ द्यूतः हे पुत्रयद्येवं तदा यथा सुखं यथा तव सुखं स्यात् यथा भवति अभिरुचितं सुखं इति यथा सुखं तथा कर्तव्यं अस्माकं आज्ञास्ति ततो मातापिढभ्यां अनुज्ञातो मृगा पुत्रः कुमारः उपधि परिगृहं सचित्ताचित्त रूपं परित्यजति ८५ (भिगचारियं चरिस्वामि सव्वदुखविमोक्खणिं तुभेहिं समणुत्ताञ्चो गच्छपुत्तजहासुहं ८६) सर्वपरिगहन्त्याका पुनर्मृगा पुत्रो वदति हे पितरौ अहं भवद्भ्यां अनुज्ञातः सन् मृगचर्यां अङ्गीकरिष्यामि कीदृशीं मृगचर्यां सर्वदुःख विमोचणीं सर्वं विपत्ति विमोचितां तदा मृगा पुत्रं प्रतिपितरौवदतः हे पुत्र यथा सुखं गच्छदीक्षां गृहाण ८६ (एवंसो अस्मापियरी अणमाणित्ताणवद्विहं समत्तं छिन्दएताहे महानागोव्व

भिगचारियं चरिस्वामि एवंपुत्ता जहासुहं । अस्मापिद्विहिं अणुत्ताञ्चो जहाद्र उवह्मितञ्चो ८५ ॥ भिगचारियं चरि

मृगचर्याइ चरोस्सिविचरोस मातापितरौ जल्पित. हे पुत्र यथासुख तथाजुष मातापीता वीला पुत्र जीम सुराहीवे तीमकरो माळपिटभ्या अनुज्ञात. मातापिताइ आज्ञादीधांधकां त्यजति उपधिं परियहं परियह्हीडे ८५ तत अनंतरं मृगचर्यां चरिष्यामि तिवारपक्खी मृगचरो चरोसो सव्वदुःख

मिउज्जुञ्जी ८८) तदा मृगा पुत्रः कीदृशीजातः पञ्चमहा व्रतयुक्तोजातः पुनः पञ्चसमिति सहितः ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपणीञ्चार प्रश्रवणखिलजलस सङ्घाण पारिष्टापनिकासमिति युक्तः पुनस्त्रि गुप्तिसुप्तः मनीवाकाय गुप्ति सहितः पुनः साभ्यन्तर बाह्यतपकर्मणि उद्यतः पायच्छिक्तं विणञ्जी वेया वच्चं तहेवसि ज्माञ्जी ज्माणं उस्सग्गोविय अञ्चिन्तरञ्जीतवीहीइ १ अणसणमूणीयरिया वित्तीसङ्खेवणं रसञ्चाञ्जी कायकिलेसीसलीणयाय बज्जीतवीहीइ २ द्वादश विधतप कर्मणि सावधानीजातः ८८ (निमग्गीनिरहंकारो निस्सङ्गी चत्तगारवो समीय सब्भूएसु तसेसुथा वरेसुय ९०) पुनः कीदृशी मृगा पुतः निश्चमः वस्स पात्तादिपु ममत्वभावरहितः पुन कीदृशी निरहङ्कारः अहङ्काररहितः पुन कीदृशोनिस्सङ्गीबाह्याभ्यन्तर संयोगरहितः पुन. कीदृशस्य ज्ञागारवः गारवत्रय रहितः ऋद्धिगारवरसगारवसा तागारव इत्यादि गर्वत्वयरहित पुनः कीदृश. सर्वभूतेषु समः रागद्वेष परिहारात् समस्त प्राणिषुत्व

निग्गञ्जी ८८ । पंचमहव्वयजुत्तो पंचसमिञ्जी तिगुत्तिगुत्तोय । सभिन्तर बाहिरएतवोकस्संमि उज्जुञ्जी ८८ । निस्समी •
निरहंकारो निस्संगी चत्तगारवो । समीय सब्भूएसु तसेसु थावरिसुय ९० । लाभालाभि सुहेदुक्खं जीविए मरणेतहा

मृगापुत्रे राज्यऋद्धि छीडोने दीचालीधो ८८ मृगापुत्री पंचमहाव्रतयुक्तः मृगापुत्र पंचसमिहित सहित पंचसमिति समितः त्रिगुप्त गुप्तः पांचे समीते समतीचिह्नं गुप्ते गुप्ते अम्यंतरे प्रायश्चित्ता दो अभिन्तरए प्रायश्चित्त लोजी तपः कर्मणि उद्यमपरी जात. अभ्यंतर तप वाह्य तप तेहने विषे रतहञ्जी ८८ स मृगापुत्रः ममत्तररहितः नीरहंकार रहीत गृहस्थ संग रहतः त्यक्तः गारव गृहस्थने सगे रहित गौरवच्छीडीच्छे रिद्धी गारवरसगारव सातागारव समीजातः सर्वभूतेषु समताभाव इञ्जी तसेषु स्थावरषुचत्तसजीवने विषे थावरजीवने विषे ९०. लाभालाभि

निदानरहितः पुनः कथञ्चूतः अन्वयन रागहेप बन्धनरहित ८१ (अणिस्त्रिओ इह लोए परलोए अणिसिओ वासीचन्दणकपोय असणे अणसणे तथा ८३) पुनः कौदृशः अनाशित निशरहितः कस्यापि साहाय्यं नवाञ्चति तथा पुनरिह लोके राज्यादि भोगे तथा परलोके देवलीकादि सुखे अनाशित निशान्नवाञ्चते पुन समृगा पुत्रीवासो चन्दनकल्प यदा कश्चित् वास्यापर्शुनाशरीरं छिनत्ति कश्चिच्चन्दनेन शरीरं अर्चयति तदा तयोरपरि समानकल्पः सदृशाचार तथा पुनः अशने आहारकरणे तथा अशने आहार अकरणे सदृशः ८३ (अप्य सत्येहिं दारिहिं सक्वओपिहियासवे अज्जप्य ज्जाणजोगेहिं पसत्यदमसासणे ८४) पुनर्मृगा पुत्रीप्रशस्त्रिओ द्वारेभ्यः कर्मापार्जती पायेभ्योहिंसादिभ्यो निवृत्त इति शेषः पुनः कीदृशी अप्रशस्त द्वारेभ्योनिवर्त्तनादेवसर्वतः पिहितायवः पिहितनिरुद्धा आयवाः पापागमनद्वाराणि येन स पिहितायवः पुन कीदृशः } अध्यात्मध्यानयोगैः प्रशस्तदम

अबंघणो ८२ । अणिसिओ इहलोए परलोए अणिसिओ । वासीचंदण कपोय असणे अणसणे तथा ८३ । अप्यस
त्ये हिं दारिहिं सक्वओ पिहियासवो । अज्जप्यज्जाणजोगेहिं पसत्य दमसासणे ८४ । एवं नाणेणचरणेण दंसणेण

वाङ्मानथो वासीचदनौ वसीलकच्छेदने चंदनलेपी सदृशः कीद्व वसीलासुंछेदे अथवा कीद्व चदनसुं विलेपन करेतेवे सरिषा अशने भोजने अनशने उपवसे तथा सदृशः जिसेतोसरिपु उपवासकरतुं सरिषू ८३ अप्रशस्त्रैः हिंसादिभिर्द्वारैः अप्रशस्त्रैर्जिमाठां द्वारतेणे करीरिहतेच्छे सर्वतः पिहिता यवः निरुद्धाकर्मागमः सर्वआयवणंध्यांके अध्यात्मध्यानयोगेन अध्यात्ममनठाभिराखवुं शुभध्यानराखवुं प्रशस्तदमयुक्तः सर्वत्र जिनशासने निदलप्रशस्त भलो उपशमचमातिणेकरीने सहित जिनशासनने विपे निदलच्छे ८४ एवं अनेन प्रकारेण ज्ञाने चारित्ति दर्शनेन तपसा च इण्णिजप्रकारे ज्ञानने विधि

तथा तस्य मृगापुत्रस्य भाषित मातापितृभ्यां सस्वारस्य अनित्यो पदेशदान नियम्य हृदिधृत्वा कीदृश मृगापुत्रस्य धारित तव्यहाण टप प्रधान पुन
कीदृश मृगा पुत्रस्य चरित गइपहाण गत्वा प्रधान गतिर्मीचलचणा तथा प्रधान श्रेष्ठ मीचगमनाई पुन कीदृश मृगा पुत्रस्य चरित त्रिलोकवियुत
त्रिलोक प्रसिद्ध कीदृशस्य मृगापुत्रस्य महाप्रभासस्य रोगादोना अभावेन दु कर प्रतिज्ञा प्रतिमारूपाभि ग्रहाणां पालने न महामहिमान्वितस्य पुन
कीदृशस्य मृगा पुत्रस्य महायगस महत् यगीयस्य समहायशास्तस्य महायगस सर्वदिग व्यापिकीर्त्ते इति अइ मृगापुत्रस्य चरित तवाग्रे बवीमि
इति सुधमा स्वामोजमूखानिन प्रवाह ८८ इति मृगापुत्रीय एकीनविशति तम अध्ययन १८ इति श्रीमद्भुत्तराध्ययन सूत्राधदीपिकाया उपाध्याय
श्रीलक्ष्मीकोर्त्तिगणि शिष्य लक्ष्मीवल्लभगणि विरचिताया एकीनविशतितम मृगापुत्रीय अध्ययन अर्थत सपूर्ण ॥ अथ विशतितम प्रारभ्यते ॥

वियाणिया दुख विवट्टण धणमत्त वधच महाभयावह । सुहावह धम्मधुर अणुत्तर धारिह निव्याणुणावह महत्ति
वे मि ८६॥ मियापुत्तज्जभयण सत्तत्त ॥१८॥ सिद्धाण नमीकिच्चास जयाणच भावधो । अत्यधम्मगइत्तच्च अणुसट्ठि सुणे

ज्ञात्वा दुस्तत्रिवडन विगपकरोजाणीनि धनके ते दुक्खनु वधारणहारके समत्व ध समतानीव धके पुन महाभयावह बली महाभयनु देणहारके
सुत्तावहा धम्मपुरा सर्वोत्तमा धर्म्मनोधूरा सवमाडि सुखनीदेशारी उत्तमके धारयत अनतज्ञानदर्शनवीयाकात्रवीमि प्रस्थोधर्म अहो भव्यजीव तुम्हे
अगोकारकरो किस्स्येहि धर्म्म मुत्तिनासुख तेहनीदेणारके ॥ ८८ ॥ इति श्रीउगणीशमु अध्ययनटवी सपूर्ण समत्त ॥ १८ ॥ सिद्धेभ्य नमस्कार कृत्वा
सिद्धानिकानि नमस्कार करोते मयतेभ्य आचरियोपाध्याय सर्वसाधुभ्य आचाय उपाध्याय सर्व माध तेहने नमस्कार करोते अथधम्मगत तल अर्थधम्मगत

पूर्वस्मिन् अच्ययने साधूनां निःप्रति कर्मता उक्ता रोगादौ उत्पन्नेसति चिकित्सान कर्तव्या न कारयितव्या नातु मन्तव्या इत्युक्तं अथ विंशति अध्यायने
 सानि प्रतिकर्मता महानिग्रम्यस्य हिता अतीऽनायत्वपरिभावनया इत्युच्यते (सिद्धाणं नमो किञ्चा सञ्जयाणं च भावश्री अत्य धम्म गद्गं तच्चं अणु सट्ठिं
 सुण्हमे १) भी शिथाः मे मम अनुशिष्टिं शिचां यूयं शृणुत किं क्त्वासिदान् पञ्चदश प्रकारान् नमस्कृत्य च पुनर्भावतो भक्तिः सयतान् साधून्
 आचार्योपाध्यायादि सर्वसाधून् नमस्कृत्य कोट्यशोभेऽनुशिष्टं अर्थ धर्मगतां अर्थते प्राप्यते धर्मात्मभिः पुरैरिति अर्थः स चासौ धर्मश्च अर्थधर्मस्तस्वगत
 ज्ञानं यस्यांसा अर्थधर्मगतिस्तां द्रव्यवत् यो दुःप्राथो धर्मस्तस्य धर्मस्य प्राप्तिकारिकां यया मम शिचया दुर्लभं धर्मस्य प्राप्तिः स्यादिति भावः पुनः
 कोट्यशोभेऽनुशिष्टिं तथां सत्यां अथ वा तत्वं तत्वं रूपां वा १ (पभूगरयणोराया सेणिश्रीमगहाहिवो विहारजत्तं णिज्जाभो मण्डि कुच्चंसिचि इए २)
 श्रेणिकीनाम राजा एकदामण्डित कुच्चिनाम्नि चैले उद्याने विहारयात्रया उद्यान क्रीडयानिर्यातं नगरात् क्रीडार्थमण्डित कुच्चिवने गत इत्यर्थः कीट्यः
 श्रेणिकीराजामगधाधिपः मगधानां देशानां अधिपोमगधाधिपः पुनः कीट्यः प्रभूतरत्न प्रचरप्रधानगजाः मणि प्रमुखपदार्थधारी २ (नाणादुसलयो

हमे १ ॥ पभूय रयणोराया सेणिश्री मगहाहिवो । विहारजत्त निज्जाश्री मंडिकुच्छि सिचि इए २ ॥ नाणादुसलयो

तवरूपके जितव अणुच्छिट शृणुनगिया कथयतः ममगिय तुहे सांभलोडु कडुकुं १ प्रभूतरत्न राजा घणाद्रं रत्नके जेहने इस्यो राजा श्रेणिकी
 मगधाधिपः श्रेणिक मगधदेशनी धणोके यावाया क्रीडार्थं नीर्गतः ते श्रेणिक राजा क्रीडानि अर्थे नीकस्यो मंडि कुच्छिनाम्नि चैलेवनने मंडि कुच्छि
 इसेनामे वनखडनेविपि २ नानादुसलताकोर्यं वनखडकिस्युंके भांति २ नाणंख अनैवेलितिणिं करीसहितके नाना प्रकारेण पच्चि निवेधितं
 भांति भांतिना जे पंखो तिणे करो वनखड सेञ्चीके भांत भांतनां जे फूल तिणे करीने वनखड छायांके उद्यानं नंदनीपमं वलीति वनखड

इत्त नाणापक्खिनेवेविय नाणाकुसुमसद्वत्त उज्जाण नदणोवम ३) अथ महितकुचिनाम उद्यान कीदृश वर्त्तते तदाह कीदृश तद्वन नानाद्रुमलता
कीर्णं विविध हृच्चयत्नोभिर्य्यास पुन कीदृश नाना पच्चिनिपीवित विविधविहङ्गैरतिशयेन आयित पुन कीदृश नाना कुसुमसम्बन्ध बह्ववर्ण
पुष्पैर्य्यास पुन कीदृश तत् उद्यान नागरिकजनाना क्रीडास्थान नगर सनीपस्थ वन उद्यान उच्यते पुन कीदृश नन्दनीपम नन्दन देववन तदुपम ३
(तत्पत्नीपासईसाडु सञ्चय सुसमाहिय निसद्वरुक्खमूलमि सुकुमाल सुद्धी इय ४) तत्र वनेस श्रेणिकी राजासाधु पश्यति कीदृश साधु सयत सम्यक्
प्रकारेण यत यत्त कुर्वन्त पुन कीदृश सुसमाधित सुतरा अतिशयेन समाधि युक्त पुन कीदृश हृच्चमूले निपिण स्थित पुन कीदृश सुकुमाल पुन
कीदृश सुखीचित सुन्दरीय ४ (तस्स रुव तुपासित्ता रादणोत्त मिसञ्चए अचन्तपरमो आसो अउल्लोरुवविहङ्गो ५) रात्र श्रेणिकस्य तस्मिन् सयते

इत्त नाणापक्खि निसैविय । नाणाकुसुम सद्धन्त उज्जाण नदणोवम ३ ॥ तत्पत्नी पासईसाहु सजय सुसमाहिय ।
निसन्त रुक्खमूलमिसुकुमाल सुहोद्वय ४ ॥ तस्सरुवतुपासित्ता रादणोत्त मिसजए । अचत्त परमोआसो अउल्लो रुव

किस्युद्धे नदन वन सरीपीद्धे ३ तस्मिन् वने श्रेणिक साधु पश्यति ते वनखडने विपे श्रेणिक राजाद्वयतीदेख्यो सयत मन समाधान
वत किम्प्योद्धे तेयतो सयतीद्धे मन समाधिमहि वत्तेद्धे निसिन्न स्थित हृच्चमूले सयती हृच्चने नीचे वैठद्धे सुकुमाल सुखो चिंतायतो
सुकुमाल सुखने योगद्धे ४ तस्य साधो रूप द्दद्वा श्रेणिक राजाद्वय तीतो रूप देखीने अयत अतिशय सजती राजा प्रधान आसीत्
अत्यत विस्मय जपनी सजती राजाने विस्मय जपनी अन्यन सद्वयरूप विपये आर्य्य इत्यीरूपकीहाइ दीठो नही ५ अद्धी इति आर्य्ये वर्ये गोर

साधो अत्यल्पपरमोऽधिकीकृष्टोऽतुली निरूपमोरूपविन्मयो रूपार्यमासीत् किं कृत्वा तस्य साधोरूपं दृष्ट्वा तु गच्छीलद्वारे ५ (अहो, वन्मो अहीरूपं अहीरूपं अज्ञाससीमया अहीखन्ती अहीमुत्ती अहीभोग असङ्गया ६) तदारजा मनसि चिंतयति अही इत्याद्यर्थे आर्यकारी यस्य गरीरस्य वर्णोऽगौरत्वादि अही आर्यजन् अस्थासाधो रूपं लावण्य सहितं अही आर्यकारीणो अस्य आर्यस्य सौम्यताचन्द्रवत् नैल प्रियता आर्यकारीणो अस्य चान्ति चान्ता अही आर्यकारीणो चास्य मुक्तिर्निर्लोभता अही आर्यकारीणो अस्य भोगे असङ्गताभोग असङ्गताप्रियये निसुहृता ६ (तस्मपाए उवन्दित्ता काङ्क्षयप्राहिणं नाद्र द्रमणा सन्ने पञ्चली पडिपुच्छई ७) तस्य साधोः पादौ वन्दित्वापुनः प्रदक्षिणां कृत्वा राजानाति दूरं नात्यासन्नः न शक्तिदूरवर्तो न शान्तिकटवर्त्तिसन् प्राञ्जलि पुटी वडाञ्जलिः पृच्छति प्रणय करोति ७ (तरुणोसि अञ्जोपव्वइंश्री भोग कालमिसङ्गया उवदुञ्जोसि सामन्ने

विभृश्री ५ ॥ अहीवन्मो अहीरूपं अहीअज्ञाससीमया । अहीखन्ती अहीमुत्ती अहीभोगे असंगया ६ ॥ तस्मपाए •
उवंदिता काजणय पयाहिणं नाद्रद्रमणासन्ने पंजली परिपुच्छई ७ ॥ तरुणोसि अञ्जोपव्वइंश्री लागकालंमिसंजया

वाङ्मरुणं कोणदेहो नो वर्णं दे गौरकोणरूपं दे अही आर्ये आर्यस्य साधोः सोमता एहनी प्रधानसौम्ये सरलपणी अही आर्ये चांति चमासुति निर्लोभता एहनी चमादेखी एहनी निर्लोभतादेखी अही भोगेषु निम्बंगता संगमुत्तादेखी भोगनीसंगङ्गे किमच्छी ६ तस्य पादौ वंदित्वा राजा इति हयती नापगवांया कृत्वा च प्रदक्षिणां चिप्रदक्षणादेइने नाति दूरनाति आसन्ने घणी अलगनीनघणीठकडोवसीने अंजलीकृत्वा पृच्छति हायजीडोने पृच्छे ७ हे आर्य त्व तरुण प्रव्रजतीसि हे साधु ते तरुणपणे दीचालीधीके भोगकाले अही संयत एभोग संयोगनीकाल दीचानोकालनवी उपस्थिती

एव उक्तं सन् विक्रयनीत आयय प्रापित कीदृशी नरेद्र सुसभ्रान्त अत्यन्त व्याकुलता प्राप्त पुन कीदृश सुविक्रित पूर्वमेव तद्दर्शनात् सञ्जाता यथ पुनरपि तद्वचन यवणात् क्षयवान् जात यतीहि तद्वचन अत्रुत पूर्व त्रैणिकाय अनाथोसित्वमिति वचन पूर्व केनापिनो यावित १३ (अस्माहृत्योमणुक्तानि पुर अन्ते उरश्च मेषुञ्जामि माणुसे भोए आणा इस्सरियचमे १४) (एरिये सम्मयगमि सव्वकामसमपिणए कह अणाहीहवइ माहुभन्ते सुमम्पए १५) हाभ्या गायाम्या त्रैणिकोरान्जावदति हे भदन्त पूज्यहुइति निद्ययेन मृपामाबृहि असत्य मावद एतादृशे सम्पदयेण सति सम्मय प्रकपे सति अह कय अनाथोभवामि कीदृशोइ सव्वकाम समर्पित सव्वे च ते कामाय सव्वकामा तेभ्य सव्वकामेभ्य समर्पित शुभकर्म्मणाढीकित

साहुणा विम्हयनिञ्चो १३ ॥ अस्माहृत्यी मणुखामि पुरअतेउरचमे । भु जामि माणुसेभोए आणाइस्सरियचमे ॥ १४ एरि •
सेसपयगग मि सव्वकाम समपिणए । कह अणाहा भवइमाहुभते मुसवए १५ ॥ नतुम जाणे अणाहसुअत्य पोत्यच

श्रेणिक राजा अत्याकुल सन् विक्रयो जात आकुलइञ्चो विक्रय जपनी वचन अत्रुत पूर्व आजताइ एवचननही साभत्य छे साधुना विक्रय प्राप्ति यतीइ विक्रय जपजायोछे १३ राजाह अखा हस्तिन मनुथ मम हाथी घोडा मनुथ सर्वप्राहरहे नगर अत पुर मम नगर अतेरत्तारहे भूजामि मनुथा भोगान् मनुथ सबधि या भोगभोगव छु आजेस्यं मम आत्रा ऐख्यंपण माहरहे १४ राजावदती इदृशे सपक्केसति एहवी माहरे सपदाइे सव्वकामि सर्वाभिलापि समर्पिता सव्वकाम सुखतेहनी देणहारहे कथ अनाथोभवामि किम अनाथए केम हे भदत भगवन् मागुया यादीभव हे पुज्य मृपायाद वीलोमती १५ सुनिराह नत्ववेत्ति अनाथस्यार्थं यतीकहेछे अही राजा तू अनाथयब्दनी अर्थ नयी जाणती अर्थ कारण

अथ राजा स्वसंमत् प्रकर्षं वर्णयति अग्नाघोटकाः वहवो मम सन्ति पुनर्हस्तिनोपि प्रचुराः सन्ति तथा पुनः मनुष्याः सुभटाः सेवका वहवो विद्यन्ते तथा मम पुरं नगरमयस्ति च पुनर्मै मम अन्तःपुरं राज्ञीष्टन्दं वर्त्तते पुनरह मानुषान् भोगान् मनुष्यसम्बन्धिनी विषयान् भुनक्ति च पुन आञ्जैखर्यं वर्त्तते आञ्जा अप्रतिहत शासन स्वरूपं प्रभुत्वं वर्त्तन्ते यती मम राज्ये कोपि मदीयां आञ्जां कोपि न खण्डयति इत्यर्थः १५ तदा मुनिराह (नतुमञ्जाणे अणाहम् अत्यं पीत्यं चपत्यिवाजहा अणाही ह्वई सणाहोवानराहि वा १६) हे पार्थिव हे राजन् त्वं अणाहस्य अनाथस्य अर्थं अभिधियं च शब्दः पुनरर्थे च पुनः अनाथस्य प्रीत्यां न प्रजानासि प्रकर्षेण उत्थानं मूलोत्पत्ति प्रीत्यातांप्रीत्यांकिनाभिप्राये णायं अनाथ शब्दः प्रीक्तः इत्येवं रूपां न जानासि हे राजन् यथा अनाथो भवसि तथा न जानासि कथं अनाथो भवति कथं स नाथो भवति १६ (सुणेहमे महाराय अब्वखिचीण चियसा जहा अणाही ह्वई जहा मेय पवत्तियं १७) हे महाराजमे मम कथयतः सत. त्वं अब्वा

स्रल

पत्थिवा । जहा अणाही ह्वई सणाहोवानराहिवा १६ ॥ सुणेहमे महारायं अब्वखिचीण चं यसा । जहा अणाहो भवई जहामिय पवत्तियं १७ ॥ कोसंवीनामनयरी पुराण पुरमेयगी तत्थ आसीपियामज्झं पमूयधणसंचओ १८ ॥

भाषा

भो पार्थिव प्रीत्यं प्रकटोल्यानरूपं राजा अनाथ शब्दोत्थानरूप नहीं जाणेछे यथा अनाथोभवति जिम अनाथहुवे स नाथो वाहे नराधिपः जिम सनाथहुवे हे राजन् १६ मम कपयती शृणु हे महाराजन् हे महाराजा गुम्हने कहताने तुम्हे सांभलो अब्वाचिमेन चेतसा एकापचित्ते करीने यथा अनाथोभवति जिम अनाथहुवे यथा मे मया तवाग्रे कथितं जिम तुम्ह आगे कहंछुं १७ कोयं बीनामपुरीएहभरतछेले कोयं बीनांमे नगरीके

गाढं अवगाहयेत् एवं मे ममऽस्थि वेदनाऽभूत् २० (तियमे अन्तरिच्छं च उत्तमङ्गं च पीडई इन्द्रासणिं समाधोरा वियणा परमदारुणा २१) हे राजन् सा परमदारुणा वेदनामे मम मन्त्रिकं कटिष्टुटविभागच्च पुन अन्तरियां अन्तर्मध्ये इच्छं अन्तरिच्छतां अन्तरिच्छतां भीजनपा नश्यणाभिलापरुषां च पुनरुत्तमङ्गं मस्तकं पीडयति कोटयो वेदना इन्द्रस्य अग्निवज्रं तत्समा अतिदाहोत्पादकत्वात् पुत्राधोरा भवदा २१ (उवट्टिशामे आयरिया विज्जामन्तरिच्छगा अधोया सत्य कुसलामन्त मूलविसारया २२) हे राजन्तदेत्वध्याहारः पाचार्या वेदानां गन्ताथ्यासकारजाः मे उपस्थिताश्चिकित्सां कर्तुं लग्ना कोटया आचार्यावियामन्त चिकिच्छकाः विद्यया मन्त्रेण च चिकित्सन्ति चिकित्सां कुर्वन्तीति विद्यामन्त चिकि त्साकाः प्रतिक्रियाकर्तारः पुनः कोटया आचार्याः सम्यक् पठिताः अधोया इति पाठे न विद्यते अन्योद्वितीयो वेद्यस्त्वै यद्वितीयाः असाधारणाः पुनः कोटयास्ते शास्त्र कुशला शास्त्रेषु विचक्षणाः पुन कोटयास्ते प्रन्त मूल विद्यारदाः मन्त्राणि देवाधिष्ठितानि मूर्त्तानिजटिकारूपाणि तत्र

सरीर विवरंतरे आवीलिज्ज अरीकुटो एवंमे अत्यवियणा २० ॥ तियमे अंतरिच्छंचउत्तमंगंचपीडई । इन्द्रासणिसजा
धोरा वियणा परमदारुणा २१ ॥ उवट्टियामे आयरिया विज्जामंत तिगिच्छगा । अधीया सत्यशुसला मंतमूल विसा

गाढा जीरसु'वेरीकोथी शकी मारे एवं मम चक्षुवेदना अभूत् इसी वेदना माहरी प्राप्तिमांहि हुई २० विकंकटिभागं मम अंतरिच्छं हृदगंच अपरं उत्तमंगं पीडयते कटि हृद्यो माथी गावड दुखी ग्री इन्द्राग्नि वज्रवत् इन्द्रना वज्रसरोखी महाधोर वेदना परम दारुण जाता सुभने वेदना उपनीतीत्र २१ उपस्थिताः मम आचार्या माहरे निमत्ते वेद्यतीया विद्या मंत्राभ्यां त्याधि चिकित्सां विद्या मन्त्र तेहनेजांण

विचक्षणा मन्त्र मूलिकानां गुणज्ञा २२ (तेमेतिगिच्छ कुञ्चति चाउष्पाय जहाहिय नय दुक्त्वाविमोयन्ति एसामञ्ज अणाहया २३) ते तेद्याचाया मम
चिकित्सा रोगप्रति क्रियां यथा हित भवेत्तया कुर्वन्ति कीदृश चैकिस्य चातु पाद चत्वार पदा प्रकारायस्य तत् चतु पद तस्य भाव चातुपाद
चातुर्विध्यमिदं वैद्य १ शीपथर रोगि २ प्रतिचारक ४ रूप अथवा वमन १ विरेचन ३ खेदन ४ रूप अथवा अञ्जन १ वन्धन २ नेपन ३ मर्दन ४
रूपं शास्त्रोक्तं गुरुपार पर्यागत च क्रूरितिस्थाने प्राकृतत्वात् कुञ्चतीत्यक्तं ते वैद्यामां दुःखात् न विमोचय तिस्र प्राकृतत्वात् भूतार्थे वर्त्तमानार्थं
प्रत्यय एषा मम अनाद्यतावर्त्तते २३ (पियामे सव्य सारपि दिक्त्वाहि मम कारणा नय दुक्त्वाविमोयन्ति एसामञ्ज अणाहया २४) हे राजन् मम
पिता मम कारणे सर्वमपि सारगृहे यत् सारसारवशु तत्सर्वमपि वेद्येभ्योऽदात् तथापि वैद्यामादु त्वात् नविमो चयन्ति मम एषा मम अनाद्य

रया २२ । तेमेतिगिच्छ कुञ्चति चाउष्पाय जहारिय । नयदुक्त्वा विमोयति एसामञ्ज अणाहया २३ ॥ पियामे
सव्यसारपि देज्जाहि समकारणा । नयदुक्त्वा विमोयति एसामञ्ज अणाहया २४ ॥ सायामे महाराय पुत्त

प्रथोता गाम्भुजमन्त्रा नानायास्त्रिपु पठिता नानाप्रकारनां शास्त्रतंहना ज्ञाण मत्तमूलविगारदा मत्तमूल जडीवूटी तेहने विखेडाहाके २२ तेवैया
ममभेषा प्रतिचारिका चिकित्सा कुयति तेवैद्य सुभने चिकित्सा करे शीपथ दिद पेटमाहि चतु प्रकार आतुर १ वैद्य २ भेषय ३ प्रतिकार ४ चारिद्व
चिकित्सा करे भाति २ नां शीपथदिदन्ते वैद्या दुःखाविमोचयति ते वैद्य सुभने दुःखकी मूकायो सके नही एषा मम अनाद्यता एषुभने अनाद्य
पण २३ पिता मम सव्यसारवस्वपि प्रहीराजा पितामाहरो सवमारवशु दद्यात् मम कार्यायन्तरे निमित्ते देद वैद्य भणो मत्तवादीयानि नच दुःखाहिमो

ताज्ञे याइति शेष. २४ (मायाविमिमहाराय पुत्तसी यहुहट्टिया नयदुक्खाविमीयन्ति एसामज्झ अणाहया २५) हे महाराजमे मम मातापि दुखान्तां न विमीचयत्तिस्स कथं भूतामाता पुत्रयीक दुक्खस्थिता पुत्रस्य यः शोकः षोडाप्रादुर्भावः साता अभानः स एव दुःखं तत्र स्थिता पुत्रशीकदुक्ख स्थिता एषा मम अनाथताज्ञेया २५ (भायरासे महाराय सगाजिठ कणिठ्ठगानयदुक्खाविमीयन्ति एसामज्झ अणाहया २६) हे महाराज मे मम भातरोपि स्वका आत्मीयाज्येष्ठकनिष्ठका वृजा लववत्तमां न च दुखादिमीचयन्तिस्स एषा मम अनाथताज्ञेया २६ (भयणीश्री मे महाराय सगाजिठ कणिठ्ठगा नयदुक्खाविमीयन्ति एसामज्झ अणाहया २७) हे महाराजमे मम भगिन्योपि स्वकाएकमात्रजाज्येष्ठाकनिष्ठाया मां दुखावविमीचयं तिस्स एषा मम

सोग दुहट्टिया । नयदुक्खा विमीयंति एसामज्झ अणाहया २५ ॥ भायरासे महारायं सगाजिठ कणिठ्ठगा । नय दुक्खा विमीयंति एसामज्झ अणाहया २६ । भद्रणीश्रीसे महारायं सगाजिठ कणिठ्ठगा । नयदुक्खाविमीयंति एस •

चयंति परंदुःखहुंती मूंकाइ सके नही एषा मम अनाथताएसुभने अनाथपणुं २४ माता मे मम महाराजा पुत्रशीक दुःखस्थिता पुत्रना जे शोक षोडा प्रादुर्भाव शाताभाव त्तिहट्टुःखमे रहीथकीअर्थीवसुभे दुखीयेदेखीवोलापकरे तथापी दुःखं नउभीलंतिः तोपीण दूखजाइं नहीएषा मम अनाथताएहमा हरी अनाथपणु के २५ भातरः मे मम महाराजा भाई माहारा हे महाराजा स्वकाः ज्येष्ठा. वृष्ठा कनिष्ठा लघूः सगावडा लहुडाछे न च दुखादिमी चयति परंते दुखथकी मूंकावी सके नही एषा मम अनाथताएमाहरे अनाथपणुं के २६ भगनी मम महाराजन् वहिं निम्हारी हे महाराज स्वका ज्येष्ठा वृष्ठा कलिठालघव सगीवडीली हुडीछे न च दुखादिमीचयति परंते दुखथकी मूंकावी सके नही एषा मम अनाथताएसुभने अनाथ

अनायता २७ (भारियामि महाराय अणुरत्ता अणुव्वया असु पुणेहि नयणे हि उर मे परिसिद्धई २८) (अन्नपाण चन्हाणश्च गन्धमस्र विलेषण मएनाय मनाय वा सा वालानोवमुद्धई २८) (खण पिमे महाराय पासाओ नविफिट्ट नयदुक्खाविमोयन्ति एसामज्ज अणाहया ३०) तिष्ठभिर्गाथाभि कुलक हे महाराजमे मम भार्या कामन्यपि दुःखात् मां नमी च यत्तिस्म कथ भूताभार्या अणुरत्ता अणुरागवती पुन कथ भूता अनुव्रता पतिव्रता पति अनुनन्तो कथ व्रत यस्या सा अनुव्रता एतादृशो भार्या मे मम उरोहृदय अणुपूर्णाभ्या स्त्रीचनान्या सिद्धतिस्म २७ पुन सावालासत्कामिनी अन्न अयन मोदकादिक भक्ष्य पान र्करोदकादिक पुन स्नान कुमकुमादिपानोयैरभि तैल चोवकमेदजबाधि प्रमुखैर्गात्रार्चन मया ज्ञात वा अज्ञात स्वभावे

मज्ज अणाहया २७ । भारियामि महाराय अणुरत्त मणुव्वया । असुपुनेहि नयणेहि उरमे परिसिद्धई २८ । अन्न •
पाणचणहाणच ग धमस्र विलिबण । मएनाय मनायवा सावालानो वमु जई २८ ॥ खणपिमे महाराय पासाओ विन
फिट्टई । नयदुक्खाविमोयति एसामज्ज अणाहया ३० । तत्रोह एवमाहसु दुक्खमाहुपुणो २ । वैयाणा अणुभविउ जे

पणु छे २७ भायामम हे महाराजन स्त्रीमाहरो हे महाराज अणुरत्तामयि खे हाथिता पतिव्रता महासती मुक्त उपरिर्नेह घणोसती अणुपूर्णाभ्या नय नाभ्या आस्रणकरो पूर्णनिते करीने उदर वचस्रल ममयिचति हिउ माहर सिधे २८ अन्न अन्नपानीय पाणी स्नान च अधोलवु गधमाल्य विलिपन कर्पूर चूआचदन थवोर फूलमाला मया ज्ञात अज्ञातवा सुभने जाणता अजाणता इतरा वानानहीकरेहे सावालानोपभु क्ते न सेवते खाइ नहीके छाने जइने २८ चणमपि मम हे महाराज चणमाचपणि हे महाराज सा बालापाशावृ न गच्छति माहरापासायी ते बालिका उठेनही न च

नैव एतत्सर्वं भोगाङ्गान् उपभुङ्क्ते न अतु भवति मम दुखात्सर्वाणि अपि भोगाङ्गानित्यक्तानि २८ पुन हेमराज सावाला मम पार्श्वीत् नैजयात्
 नचिफिटति न अप्रयाति इत्यर्थं परं दुःखात् मांनमीचयति ण्णा मम अनाथताज्ञेया ३० (तत्रोहं एवनाहिंसु दुक्लमाहु पुण्यो पुण्यो वियथा
 प्रणु भवे उजे संसारंमि अणत्तए ३१) ततोऽनन्तरं प्रतीकारेषु विफलेषु जातेषु अहं एवं प्रवादिए एव मिति किं एइति निचयेनया वेदना
 अनुभवितुं दु चमाः भीक्तु मसमर्थास्त्वावेदना संसारे पुन पुनः भुक्तितिशेष वेद्यते दुःखं अनयेतिवेदना दु खेनचम्यते ससृते इति दुःख्यगाहुः सद्यां
 कीदृशे संसारे प्रनन्तकी अपारे ३१ (स इ चजइ मुच्चिज्जा वियथा विउलाउमे खन्तीदन्ती निरारभो पव्वइए पणगारियं ३१) गहं किं प्रवादिए तदाह
 यदि सक्कदपि एकवारं अपि अहं वेदनाया विसुच्यते तदाहं चंता भूला पुनर्दांती जितेन्द्रियो भूला निरारथं सन् पनगारत्वं साधुत्वं प्रज्जामि दीक्षां
 गृह्णामोतिभाव कथय्ताया वेदनाया. विपुलायाः विस्तीर्णाया ३२ (एवस चिन्तइताणं पसुत्तीमि नराहिवा परियत्तंति राइए वियणमि खयं
 गया ३२) एवं पूर्वोक्तं चिन्तनं चिन्तयित्वा हे नराधिप यावदहं सुप्तीस्मि तावत्तस्यां एवरात्तो प्रवर्त्तमानाया प्रतिक्कामत्थामि मम वेदनाउचयता वेदना
 संसारमि अणंतए ३१ ॥ सइ च जइमुच्चेज्जा वियणा विउलाइओ । खंतीदंती निरारभो पव्वइए अणगारियं ३२ ।

दुखात् विमोचयति परं दुक्लथो सुंकावी सकेनही एया मम प्रनाथता एमारो अनथपणुं जाणवु ३० ततो अहं अनंतरं वल्लभाणं उक्कवान् तिवार
 पक्कीहं एहवुं कहवालागो दुक्लं पुनः कथयत् एदुःखनी वंटावणहार संसारमाहिं कीइदीसतुं नथी वेदना प्रगुभूता वेदितामया एकलीहुं वेदनाभोगवुं
 संसारे अंतरहिते संसारमाहिं फिरते भि वेदनाभोगवी ३१ सक्कदपि यदिमुच्यते एकवार जी मूकावी वेदनात् विपुलात् इत एवेदनाहुंतीतीहुं
 चसवान् दमितेन्द्रिय आरंभरहितः चमाकरो सहित इंद्रीदमीने प्रारंभरहीतथकी प्रपद्यते प्रनगारता तीपडिवजुं आदरुं अणगार ते साशयणी ३२

यानि वा तमेगचित्तोनिहु श्रीसुणे हि नियन्त धम्म लहियाणवी जहा सीयन्ति एगेबहुकायरानरा ३८) हे तृप हे राजन् हुइति नियये इय अनायता अन्यापि अनायता वर्त्तते ता अनायतां एकचित्त पुनर्निभृत अन्यकार्येभ्यो निर्हत्त सन् अर्यात् सन् गृण यथा नियम्य धर्मं सत्थापि एके क्वचित् जनानहुकातरा बहु यथा स्यात्तथाहीनसत्वा पुरुषा सीदन्ति साध्वारोगियिला भवन्ति ३८ [जोपव्व इत्ताए महब्बयाइ सम्मच्चनोफासयइ पमाया अण्णिग्गह्प्यायरसे सुगिइने मूलञ्चो छिन्दइ वन्थणे से ३८.] हे राजन् योमनुथ प्रब्रण्यदीचा गृहीत्वा महाव्रतानि प्रमादात् सम्यक् विधिनान स्पर्गति न सेवते से इति स प्रमादवशवर्त्ती वन्थन कर्म वन्थन रागहेपलच्चण ससारकारण मूलतोमूलात् न छिनत्ति मूलतोमूलात्वाटयति सर्वथा रागइपौ न निवारयतोत्वर्थ ३८ [आउत्तया जस्सयन्तिकाइ इरिया एभासा एतहे सथाए आयाणनिकेव दुग्ग्खणाए नबीरजाय अयुजाइमग ४०.]

निवा तमेक चित्तोनिहुञ्चो सुणेहि । नियद्वधम्म लभियाण वीजहा सीदतिएगे बहुकायरानरा ३८ । जोपव्वइत्ताण महब्बयाइ सम्म नोफासईपमाया । अण्णिग्गह्प्याय रसेसुगिइ नमूलञ्चो छिदइ वधणसे ३८ । आउत्तयाजस्सयन्तिक

शुणेमे मम कययत तू एकापचित्त करोने सावधान हुइ सांभनिहु कह यतिधर्म लत्थापि यथा यथा जतीनो धर्मपालीने दीघालेइने सीदति प्रमादवत एके बहुकातरा नरा पाछे सीदावे सर्ववशुने वाछे कातरकायरमनुथ ३८ य प्रव्रथा गृहीत्वा पचमहाव्रतानि पालयति जे कोइ दीघानेइने पचमहा व्रत फरसे सम्यग न स्सगति प्रमादात् खडोपरिफरसे नही प्रमादने जिणे नियह्यो सवखो आत्मानयो एहवी मधुरादिरसने विखे गृधलालची एहवी मूलयो यथेण छेदेनहोते अनाय पणु ३८ आयुक्ता सावधानताग्ग्य साधी नाप्ति कयित् सावधान पणो पणिते साधुमांहिक्कीइनेधी इयीयाइ

हे राजन् स साधुधोरया त मार्गं न अनुयाति धीरैर्महा पुरुषैस्तीर्थकरैर्गणधरैश्च यातं प्राप्तं अर्थानीक्षं मार्गं न प्राप्नोति सक. यस्य साधोः ईर्ष्यायां गमनागमनसम्पत्तिं तथा एषणायां ग्राहणं ग्रहणं समिती पुनरादाननिक्षेपणं समिती वस्तूनां गहणमीचनविधौ तथा दुग्बल्याए इति उच्चारप्रत्यवणं शी भ जलसिद्धाणादीनां परिष्ठापनसमिती आयुक्तताकाचिन्नास्ति ४० [चिरंपि सेसुखरुई भविता अधिरब्ब एतवनियमिहिं भुं चिरपि अप्याण किलिसइत्ता नपारपहीइहु सम्पराए ४१] स पूर्वीत्त पञ्चसमिति रहितीसुन्याभासधिरं सुखरुचिर्भूत्वा आत्मानं अपि चिरंलेशेपातयित्वा हुइति निश्चयेन सम्पराए ससारिपारगी न भवति कीदृश स अस्थिरव्रतः अस्थिराणि व्रतानि यस्य स अस्थिरव्रतं पुन कीदृशं सतपीनियम भट्टं

काई इरियाए भासाए तहिसणाए । आयाण निक्खेव दुगंक्खणाए नवीरजायं अणुजाईमगं ४० । चिरंपिसिमुं डरुई भविता अधिरब्बए तव नियमिहिं भइ । चिरंपि अप्याणकिलि सद्वत्ता नपारए होइ हुसंपराए ४१ ॥ पोखिवसुद्धी जहसे ०

यांसमतिने विखे भाषायां भाषा समतिने विखे तथाएषणायां एषणा समतिने विखेः आदान निक्षेपयोः जुगुषायाय चादानवस्तुं लेवुं निक्षेपवस्तुं सुं'कवुं एहने परिष्ठापना सुमिती पारिठावनीया सुमतिने विखे सावधान नही स साधुं वीरजाति धीर पुरुषैः सेवित अर्गिनअनुगच्छति न प्राप्नोति एहवीयतीधीर पुरुषनीसिय्यो जे मार्गतेहने पांभी सके नही सुक्ते नजाइं ४० चिरकालमपि स साधु सुं'डरुचिर्भूत्वा चिरकालताइं सुं'डपणानी जचि हुई दीचापाली अस्थिरवृत तपीनियमाभ्यांभट्टः अस्थिरवृत तपनियमथी भट्टइओ चिरकालं यावत् आत्मानं किले सयित्वा घराकालतांइं आपणा आत्मानि ल्हेय उपजावोने पारगामो न भवति निश्चतं ससारस्य संसारनी पारगामो नहीइ सुत्ति नजाइं ४१ सुन्यासुष्टि यथा अक्षरारापीलीनं ठि

य कदापि तपोनकरोति तथा पुननियमऽभिग्रहादिकब्रूयतीति केवल द्रव्यमुखोभवति स ससारस्वरूपरतेनप्राप्तीतोत्यर्थ ४१ [पोल्लिघमुष्टीजहमे असारी
 अयन्ति ए कूडकहायणे वा राठामणी वैरुनियप्यगसे अमहर्घे एहोद्रु जाणएसु ४२] स पूर्वोक्त सुखरुचि असारी भवति अन्त करणे धर्माभावात्
 रिणोऽकिञ्चित्कारी भवति सक इव पोलीमुष्टिरिव यथा रिक्तीमुष्टिरसारी मध्ये सुपिर एव तथा समुखरुचि कूटकार्पापण इव असत्यनाणकमिव अयन्ति
 भवति नयन्ति अयन्ति अनादरणीय निर्गुणत्वात् उपेक्षणीय स्यादित्यर्थ उक्तमर्थं मर्था तरत्याधेन द्रढयति हुयमात्कारणात् राठामणि
 काचमणि जाणएसु इति श्रावकेषु मणिपरोचकनरेश वैडूर्यप्रकाशी अमघको भवति बहुमूल्यो न भवति वैडूर्यमणिवत् प्रकाशीयस्य स वैडूर्यमणि
 प्रकार्य वैडूर्यमणि सदृश तेजा महतो अर्थायस्य समहर्ष महार्घ एव महार्घक नमहार्घकोऽमहार्घक अबहु मूल्य इत्यर्थं यथा मणि त्रेषु वैडूर्यमणि
 वैडूर्यमण्य स्यात्तथा काचमणिर्वहुमौल्येन स्यात् एव धर्महीनो मुनि साधुगुणज्ञेषु यथा सदर्माचारयुक्त साधुवन्दनीय स्यात्तथा समुख रुचिर्वन्दनीयो
 न स्यादिति भाव ४२ [कुसीललिङ्ग इह धारइत्ता इसिक्कय जीविय व्हइत्ता असच्चए सत्तयलपमणे विणिवायमागच्छइसे चिरपि ४३] से इति स
 साधाचाररहित इह ससारेचिर चिरकान यावत् विनिघात आगच्छति पीडा प्राप्तिरिति किं कृत्वा कुशीललिङ्ग पार्श्वस्यादेना चिह्न धारयित्वा पुन
 जीविकायै आजोविकार्यं ऋषिध्वज रजोहरणमुखपीतिकादिकं च हवित्वा वृद्धि प्रापयित्वा विशेषेण निघात विनिघात विविधपीडा स किं कुवाण

असारे अयति ए कूडकहावणवारठा मणी वैरुलियप्यगसे । अमहर्घेण होद्र हुजाणएसु ४२ ॥ कुसीललिङ्ग इह

जिम असारइवे अयत्तित केनापिअ सगृहोत कूटकार्पापण कूड नाण जिम असारहवे कीइलेनही काचमणि वैडूर्यं सदृश काचनीमणि करि कहे
 एकारे वैडूर्यरत्रे अमहर्घ असारी भवतिहि निधित वा पतिपु जाणजवहरीने लेई देखाद्योतिवारतेकाच कहा पणि मणिनकह्यो ४२ कुशील

स्रोपुरुष गरीरचिद्गुभाशुभसूचक प्रयुक्ते गृहस्थानां पुरुतीवृत्ति पुनर्य साध सुविषय स्वप्नानो भवति स्वप्नानां फलाफल वृत्ति पुनर्य साधुनिमित्तकौतूहल सम्पुगाढो भवति निमित्त च कौतूहल च निमित्तकौतूहले तयो सम्पुगाढ प्रत्यस्ताग्रक्त स्यात् तत्र निमित्त भूकम्प्योक्ता पातकैतूद्गदिकौतूहल कौतूक पुत्रादि प्राप्त्यर्थं साना भैषज्योपधादि प्रकाशन उभयत्रसरत्तो भवति पुनर्य साधु कुहेटविद्याग्रयवहारजीवी भवति कुहेटकाविद्या कुहेटकविद्या अनीकार्यविधाय मन्त्र तन्त्र यन्त्र ज्ञानात्मिका स्याएव आश्रयवहाराणि तैर्जीवितु भाजीविकाकर्तुं शील यस्य स कुहेटकविद्या श्रवहारजीवी यथादृश्यो यो भवति हे राजन पर तस्मिन् काले लक्षण स्वप्ननिमित्तकौतूहलकुहेटकविद्या श्रवहारोपाजित पातकफलोप भोगकाले स साधु सरण नगच्छति न प्राप्नोति त साधुकोपि दुःखात् नरकतिर्यक योन्यादीनत्रायते इत्यर्थं ४५ (त मन्त्रभेषेवसे असीले सया

पउ जमाणे निमित्तका जहल सपगाटे । कुहेडविज्जा सवदारजीवी नगच्छेई सरण तमिकाले ४५ ॥ तमतभेषेवउसे
असीले सयादुही विष्परिया समुवेद । सधावई नरयतिरिक्खजेणी मोगविराहित्त, असाहुखे ४६ ॥ उद्वेसिय

कादि स्वप्नग्रन्थ प्रयुज्यमान जे साधू गरीरना लक्षणकहे स्वप्नु विचार कहेके निमित्त कौतूहले सपगाढ भूकपादि निमित्त कुतूहल लोकनेदेखाडे पुत्रप्राप्तभणोरनागादिकहे आग्रहोइ कुहेतक विद्यादृष्टिव धादिरूपा एव विधायते जीवति दृष्टिव धादि आश्रयवहारसेवीने जीवे न प्राप्नोति ग्ररण तस्मिन् कथागमेकधित् ग्ररण न भवतीत्यर्थं जिवारे उदयकर्मधावेतिवारे ग्ररणराखवावालो कोइ नही ४५ अतिमिथ्यात्व युक्ते न स द्रव्ययति मिथ्या त्वनेने द्रव्यराखे भूडे आचारे चारित्रने छोडिनेचाले सदादुःखी सन विषयाम प्राप्नोति सदा दुःखीदुःखे विपर्यासपामि विपरोतिपणु दुःखे सतत गच्छति

पुरुषस्य तु किञ्चित् फल स्यादेव पर तु मिथ्यात्वनिर्गतत्वश्चेरर्थ्याद्विव्य लिङ्गिनः प्रथं लोकीनाम्नि लीचादिनसत्त्वादिकष्टसेवनात् इह लौक सुखमपि नास्ति पुनस्तस्य द्रव्यलिङ्गिनः समयमविराधनात् परलोकः परलोक सुखमपि नास्ति कुगति गमनात् दुःखं स्यात् तत्र उभय लोकाभावेति स धर्म सप्तोद्धिधापिरेहिकपारलौकिक सुखाभावेन उभय लोक सुखयुक्तान् नरान् प्रबलोक्य उभयलोक भूटमाधिक इति चिन्तयाभिक्कुरे इति चोयतं जीर्णोभवति मनसि द्रूयते इत्यर्थः ४६ (एमेव हा छन्द कुसील रूवे मगं विराहित् जिगुत्तमाणं कुररी इव भोगरसाणु निजनिरुसीयापरि तावमेव ५०) एवं एव असुना प्रकारेण महाव्रतविराधनादि प्रकारेणैव यथाच्छन्दः कुगील रूप स्वकीय रुचिताचारः कुलितसीलत्र भावः साधुर्जिनो त्तमानां तोर्थं कारणां मार्गं विराध्यपरिताप पयात्तापं एति प्राप्नोति का इव भोगरसानुगुजुररी इव पत्तिणीय भोगानां जिहाम्नाददायकानां मांसानांरसेऽनुगुडालीलपाभोगरसानु गृजा पुनः कोट्टया कुररीनिरुद सीयानिरर्थं गोकीयन्याः सानिरर्थगीका यथा हिमां सरस गृजापत्तिणीपन्वेभ्यो महावलेभ्यः पत्तिभ्यो विपत्तिं प्राप्यपत्तिणी गोचते तद्विपत्तेः प्रतीकारं पनवलीकयन्ती पयात्तापं प्राप्नोति तथा संयमविराधको विपयाभिलारी इन्द्रिय सुखार्थो साधुर्लोकद्वयानर्थं प्राप्नोति ततोस्य स्वपरित्वाणा समर्थत्वेन प्रनायत्वं इति भावः ५० अथयत् कुलं तदाह (सुखाणमेहाविसुभासियं इमं अणु सासणं नाणगुणोववेगं मगं कुसीलाणजहाय सब्बं महानियं ठाणवएपत्तेणं ५१) हे मेधापिन् हे पण्डित हे राजन् इदं सुभापित सुटुभापितं

छंदकुसीलरूवे मगं विराहित् जिगुत्तमाणं कुररी विवाभोग रसाणुगिजा निरुदसीयापरि तावमेव ५० ॥ सोच्चाण

वर्त्ती इमजगद्दं कुगोलिओ होणाचारवत्तं मार्गं विरोधजिनीत्तमानां तोर्थकृता मार्गतोर्थं करनो भायो तंहनं विराधोने भांजीने टोटीडी कुररीने पत्तिणीइव भोगरसानुगुधः सन् पत्तिणीने परिभोग रमने विग्रे गृवु इओ निरर्थक गोकं पयात्तापं प्राप्नोति निरर्थक गोकसंताप पामे ५० यत्वा

समापित अनुशासन उपदेश वचन शुभा सव कुशोनाना माग जहाय इति त्यक्ता महानियत्याना महा साधूना पथिमागिषरित् ब्रजेत् कीदृश अनु
 गासन नानागुणोपपेत ज्ञानस्य गुणा ज्ञानगुणा तैरुपपेत ज्ञान गुणोपपेत ५१ (चरित्तमायारगुणत्रि एतथो अनुत्तर सञ्चमपालियाण निरासवे
 सऽ विगणकम् उवेइठाण उवेइठाण विउलुत्तम ध्रुव ५१) ततस्तस्मात्कारणात् महानियत्यमार्गमात् निरासवो मुनिर्महाव्रतपानक साधुर्विपुस अनन्तसिथानां
 प्रवथ्यानान् असद्वीर्ण उत्तम सवोक्कृट पुन ध्रुव नियल शाखत एतादृग मीचस्थान उपेति प्राप्तीति कीदृश साधु चारिवाचारगुणान्वित चरित्तस्य
 आचारधारिवाचारधारित्त मेवन गुणा ज्ञानयोनादय चरिवाचारगुणाद्य चरिवाचार गुणास्तैरन्वित्थारिवाचारगुणान्वित थतमकार प्राकृतत्वात्

मेराविसुभासिय इम अणुसासण नाणगुणो वविय । मग्ग कुसीलाण जहायसव्व महानिय ठाण वएपहेण ५१ ॥ ०
 चरित्तमाथार गुणणिएतथो अनुत्तर सजमपालियाण । निरासवेसम्बन्धियाणकम्म उवेइठाण विउलुत्तम ध्रुव ५२ ॥

हे मेधाविन् मद्रुक् सुप्रभापित इम हे पडितएम्हारी सुभापित कल्लो सामल्लिने अनुशासन यिचण ज्ञानगुणोपपितएसीखु किमीके ज्ञानदर्शचचारित्र तेहना
 जेगुण तेण सन्तिके मार्गं कुगोन्नाणात्तिक्का सर्वं मार्गं कुगील्लनी हीनाचारीयारी कीडीने माहा नियथाना वृजेत् मार्गे मीठा साधुने मार्गेजिइ
 साधूनी मार्गमेवे ५१ चारिवाचारगुणान्वितो महानियथ चारित्तनी आचार तेहना गुण तिणे करी सत्तिके अणुसर सर्वोत्तम सयम पालयित्वा
 तियाग्पके सवाल्लट चरित्तपालोने निरासवे हिसादिरहित्थ चपयित्वाट्ठकर्मप्रकार ह्मि पागहित्थ आठकर्म खपाधि प्राप्तीति स्यात् मुक्तिरूप विपुलोत्तम
 गाथा पामे मुक्तिरूप शास्यतुयानकमत्ति किमीके ध्र वनियल्ले ५२ एव उक्तप्रकारेण उय दातीदमितेद्विय इम उक्तप्रकारे उयतपकरे इ द्वीजिणे

किं कृत्वा साधुर्मोक्षं प्राप्नोति अगुत्तर प्रधानं भगवदाज्ञाशुद्ध संयमसप्तदशविध पालयित्वा पुनः किं कृत्वा कर्माणि अष्टावपि सच्चिपथत्रय नीत्वा एतावता चारित्राचारज्ञानादि गुणयुक्तः अतएव निरुद्धा श्रवः प्रधानसयमं प्रपाल्य सर्वकर्माणि संज्ञय नीत्वा मोक्षं प्राप्नोतीत्यर्थः ५१ यथोप संहारस्माह (एवंगदन्ते विमहातवीहणे महामुणी महापद्मे महायसे महानियं ठिज्जमिणं महामुण्यसिं कहे ५३] एव अमुना प्रकारेण अणि केन राज्ञा पृष्टः सन् समहा सुनिर्महासाधु महता विस्तरेण ब्रह्मतायाख्यानि न महानियन्वीयं महा श्रुतं अकथयत् महान्तघते निग्रत्याच महानियत्यास्तेभ्योहितं महानियन्वीयं महामुनोनाहितं इत्यर्थः कीदृशः स उग्रः कर्मगत, हनने बलिष्ठः पुनः कीदृशः सदान्तो जितन्द्रियः पुनः कीदृशो महातपोधनः महत् तत् तपश्च महातपः महातपोधनः यस्य समहातपोधनः पुनः कीदृशो महाप्रतिज्ञः व्रते दृढ प्रतिज्ञाधारकः पुनः कीदृशो महायगाः महाकौर्त्तिः ५३ [तुडोयसेणिञ्जीराया इणमुदाहुकयंजली अणाहत्तं जहाभूयं सुट्टुमे उवदंसियं ५४] अणिको राजा तुष्टो इद्वति निययेन इदं उदाह इदं अवादीत्

एवुगदंतेविमहातवीहणे महामुणी महापद्मो महायसे । महानियंठिज्जमिणं महामुण्यसिं कहे एमह्यावित्थरेणं ५३ ॥
 तुडोयसेणिञ्जीराया इणमुदाहु कयंजली । अणाहत्तं जहाभूयं सुट्टुमे उवदंसियं ५४ ॥ तुज्जं सुलद्धं खुभगुण्णजस्सं

दस्यच्छि तपज जेहने धनच्छे महामुनि मीटीजती महाप्राज्ञ माहापडित्तः महायगाः मोटा यगनो धणी महानियथोयमिदं माहाश्रुत माहानियंघो एच्छे महाश्रुतच्छे स साधु कथयति महती विस्तरेण ते अनायो साधुये णिक राजा प्रागेइ सविस्तरणे कहे ५३ एवं श्रुत्वा तुष्टो णिको राजा एधर्षनी मार्गं सांभलीनें राजा खुसीथयो इदं कथयामास अंजलिज्जला ज्ञायजीडीने इम कहेवालागा अनायत्व यथाभूत् सुट्टमम उपदगितं त्वना कथितं इत्थं

त्वमाभि मया पूर्वं यस्त्वापराधः कृत सच तव्य इत्यर्थः अथ भवतीऽनुशाशयितुं त्वत्तः शिचयितुं आत्मानं इच्छामि मदीय प्राक्यातवाज्ञावर्त्ती भवतु इति इच्छामीत्यर्थः ५६ (पुच्छि जणमएतुज्जं जम्हाणविग्घायजीकप्पी निमन्ति यीय भोगि हि तं सब्वं मरिसिहमे ५७) हे महर्षे मया तुज्जं पुद्दा प्रशं काला यस्त्वध्यान विघ्न कृतः च पुन भोगिः काला निमन्वितो भो स्वामिन् भोगान् भुञ्ज इत्यादि तव प्रार्थनाकृता तं सर्वं मे ममाऽपराधं चं तु अर्हसि सर्वं ममापराधं जमस्वेत्यर्थः ५७ (एवम्युणित्ताणसरायसीहो अणगारसीहं परमाइ मत्तीए स ओरोही स परिचणो सवन्थवी धम्माणुरत्तो विजलेण चेतसा धम्मोऽनुरत्तोऽभूत् इति शेष. कोट्टयः अणिक सावरोधः अन्तः पुरेणसत्तितः पुनः कोट्टयः स परिजन महपरिजनैर्वर्त्तते इति स निर्म्मलेन चेतसा धम्मोऽनुरत्तोऽभूत् इति शेष. कोट्टयः अणिक सावरोधः अन्तः पुरेणसत्तितः पुनः कोट्टयः स परिजन महपरिजनैर्वर्त्तते इति स परिजनीऽभ्यादिवर्गसत्तितः पुनः कोट्टयः सवान्थवः सहवान्थवैर्भाट प्रमुत्तैवर्त्तते इति सजान्थवः पुरापिवनवाटिकायां सर्वान्तः पुरपरिजनवान्थव शुब्बव सहित एव क्कोडां कत्तुं आगात् ततो सुनिर्वाक्य श्रवणात् सर्वपरिकरयुक्ती धर्मानुरत्ती भूदित्यर्थः ५८ (उस्सस्सियरोमक्खवो काज्जणय पयाहिणं अभिवन्दि

तियाय भोएहिं तंसव्वं मरिसिहमे ५७ ॥ एवं युणित्ताण सरायसीहो अणगारसीहं परमाइमत्तिए । सउरोही सप

सोखथो धर्म भेलीकरो ५६ पुच्छांच काला मया तवमइतु मने पूछीने ध्यानस्य विघ्नोयुक्त ध्याननीज विघ्नकोर्धोः निमन्त्रिताय भोगैः काला अने भोगनो निमन्त्रणा कोधो तत्सर्वं मे ममजमस्वते सधली माहरो अपराधखमो ५७ एवं स्तुत्वा सः राजसिधः अणिकः इमं स्तुतिकरीने अणिक राजवोर्माहिसीहः अनगार सिंघ सुनीयेष्ठं परमया भक्ता माधुर्माहिसिंघसमान सुनिवरने परमभक्तिकरी वादी स्तुतिकरीने सांतःपुर सपरिजनः सवा

जणसिरसा अइया उनराहिवा ५८) नराधिप श्रेणिकोऽतियातो गृहइत कि क्लासिरसामस्तकेन अभिवन्य मुनि नमस्कृत्य पुन कि क्लावा प्रदिचणा क्वा प्रदक्षिण दत्वा कयभूतोनराधिप कस्यसियरोमकूप उतम्बसितरोमकूप साधोर्दग्नाद्वाक्य श्रवणादुल्लसितरोमकूप ५८ (इयरो विगुणसमिद्धीति गुतगुतातिदण्ड विरग्योय विहङ्ग इव विष्णुमुक्तो विहङ्गइवसुहृ विगयमीहोत्तिवेभि ६०] अथ इतरोपि श्रेणिकापेचया अपरोपि मुनि रपि वसुभ्रा ष्ठिबो विहरति विहार करोति कोदय मन् विमोह सन मोहरहित सन अथात् केवलोसन कोदयो मुनिगुंणं समृद्ध सप्तविशति साधुगुणसहित पुन कोदय त्रिगुति गुप्त युमित्तय सहित पुन कोदय त्रिदण्डविरत त्रिदण्डेभ्यो मनो वाकायाना असुभव्यापारंभ्यो विरत पुन कीदयो विहङ्ग इव विप्रमुक्त पचोवक्त्रचिदपि प्रतिबन्धरहितोनि परिग्रह इत्यर्थ इति सुधर्मास्वामी जवूस्वामिन प्रति वदति अह इति त्रवीमि ६० इति महा

रियणो सव धवो धम्माणुरत्तो विमलिय चयसा ५८॥ उम्बसिय रोमकूवो काजणय पयाहिण । अभिवदि जणसिरसा •
अइयाओ नराहिओ ५८ ॥ इयरोवि गुणसमिद्धीतिगुत्तिगुत्तोतिदण्डविरओय विहङ्गइव विष्णुमुक्तो विहङ्गइव सुर

धय अत पुरमहित परिवारसहित भाइसहित धर्मानुरक्त विमलेन शुद्धेन चेतसा धर्मने विखे रणहुओ निर्मल सुहचित्त हुओ ५८ उल्लित रोमकूप उल्लितदश्राछे रोमकूप जेहना रोमराय उदर्यं थयाछे क्लाव प्रदक्षणात्तय यलोतीन प्रदक्षणादेशने अभिवयनमसुख्य सिरसा मस्तक नमायेने नम स्कार करोने गृहगतो नराधिप श्रेणिक राजा आपणे धरेगयो ५८ इतरो मुनि अनाथी ऋषिपियण गुण समृद्ध साधुना गुण तिणे सहित त्रिगुं स गुप्त मनोवाक्काय पापनिहत त्रिङ्गुमैगुमीछे मनवचनकाया भलो राख्याछे विहङ्गइव विप्रमुक्त ममत्वभावरहित पखीनीपरि ममताभाव रहित

कृपन् पिड्डनाम नगर आगत चपानगरोत्त प्रवहणमारुह्य व्यापारार्थं पिड्डडनगर समायात् इतिभाव २ (पिड्डुले व्यवहरन्तस्स वाणिज्योदेद्र धूरत्तस सत्त पइ िक्क सयदेसमत्थिए ३] अथ तत्र पिड्डडनगरे कथिद्वणिकपालित गुणरजित सन् तस्य पालितस्यगुणै सन्नुट सन् पालिताय धूर इति पुत्रो ददाति स च पालितस्त्वां परिणीयकतिचिद्दिनानि तत्रस्थित्वा ता वणिकपुत्री स सत्वां स गर्भां प्रतिगृह्य स्वकादेय प्रति प्रस्थित पिड्डुडात् चम्पा प्रतिचलित ३ [अह पालियस्य घरणी समुद्दिमियपसवद् अहदारए तद्दिजाए समुद्दपालोत्तिनामए ४] अथ अनन्तर पालितस्य गृहणीणी समुद्रे दारक प्रसूतेस्स अथ तस्मिन्दारके पुत्रे जात सति समुद्रपालइति नामत्त सबाल आमोदितिशेष ४ [खिमेण आयाएचम्य सावए याणिए घर सवट्टइ घरेतस्स दारएयेसुहोइए ५] तस्मिन् पालितेनाम्नि वणिजि चम्पायां नगर्यां खिमेण सुखेन गृह आगत सति समुद्रपालो बालक सवर्द्धते कीदृश्य

व्यवहरतस्स वाणिज्यो देद्रधूर । त ससत्त पद्दगिज्जसुदेस अहपत्थिए ३ । अहपालियस्य घरणी समुद्दिमियपसवद् ।
अहदारए तद्दिजाए समुद्दपालोत्तिनामए ४ । खिमेण आगए च पसावए वाणिए घर । सवट्टइ घरेतस्स दारएसे सुहो

नगरे व्यवहार कुर्यत स्सस्य पिड्डडनगरने विपे व्यापारकरेके कथित् वणिक पुत्री ददाति ते पालितने नगरनीवासी कीद्व वाणीयो वेटीपरणवे ता समत्वां सगर्भां प्रतिगृह्यतेपालित याउक्क गभसद्धित आपणो स्तो लेइने स्वदेयाप्रति अथ चलित आपणादेयभणीचात्थो ३ अथ पालितस्य गृहिणीद्वि पालितनो स्तो समुद्रे प्रसुता समुद्रनेविपे प्रसवड्डुओ अथ तत्र समये दारकीजातहवे ते समयने विपे पूव्हओ तस्य समुद्रपालेति नामत्तत्त समुद्रपालते पालकत्त नाम कोधि ४ खिमेण आगत चपा कुयलखेने चपानगरोआत्थो सा पालिक यावकी आगती गृह ते यावकघरेआत्थो सवर्द्धते तस्य गृहे

सबालका सुखोचितः सुखयोग्यः ५ [बावत्तरी कलाश्रीय सिक्खिए नीइकीविए जीव्णेशय संपत्ते सुखे पियदसणे ६] च पुनः स समुद्रपालो द्वारा
प्रतिकला शिञ्चितः सन् नीतिकोविदोभूत् लोकनीति चतुरोभूत् च पुनर्यौवनन सम्पन्नः सञ्जात इति गम्यं कथम्भूतः स प्रियदर्शनः पुनः कथम्भूतः
समुद्रपालः सुरूपः सुन्दररूपः ६ [तस्स रूवईभज्जं पिया अप्पिएरूविणीं पासाए कीलए रम्मे देवीदोगुं दुगी जहा ७] अथ तस्य समुद्रपालस्य पिता
पालको रूपवतीं भार्यां रूपिणीतिनाम्नी आनयति परिणायतिक्वा ततो रम्ये रमणीके प्रासादे क्रीडां करोति की यथा दीगुंदुकीदेवी यथा इन्द्राणां
पूज्यस्थानीयोदेवः सुखानिभुंक्ते तथा सुखंभुंक्ते इत्यर्थं ७ [अह अन्नया कयाई पासाया लीयणीट्टिओ वज्जमंडणसीभागं वज्जंपस्सइ वज्जगं ८] अथान
तरं समुद्रपालोऽन्यदा कदाचित् प्रसादस्य धवल गृहस्य आलीकने प्रासादावलीकने मन्दिरगवाच्चेस्थितो बन्धं चौरं पश्यति बधाय अर्हो बध्धस्तं

इए ५॥ बावत्तरी कलाश्रीय सिक्खिए नीइकीविए । जीव्णेशयसंपग्गे सुखे पियदंसणे ६। तस्सरूववइं मज्जंपिथा
आणेइ रूविणीं । पासाए कीलए रम्मोदेवा दुगुंदगी जहा ७ ॥ अह अन्नया कयाई पासाया लीयणेट्टिओ । वज्ज

तेहसेठनेघरे ते दारकस्यः सुखोचित ते बालक सुखोचितछे ५ हासप्ततीकलाशियथतः बालकने बहुत्तरिकलासीखी शिखितः नीतिशास्त्रकोविदः नियुण
नीतिशास्त्रे नीतिशास्त्रनीजाण चतुरः यौवनन संप्राप्तः अनुक्रमे यौवनपांम्यो सुरूप प्रियदर्शनः माहारूपवंत प्रियकारी दर्शनछे जेहनुं ६ तस्य पुत्रस्य
निमित्त रूपवती भार्यां ते पुत्रने निमित्ते रूपवती स्त्री पिता आनयति रूपिणी इति नाम्ना पिता अपि रूपणी इसे नामे प्रसादे क्रीडति रम्ये मनी
हरे रमणीक घरने विखे क्रीडाकरेछे यथा दीगुंदको देवः जिम दीगंदक देवता रमेतिमरमेछे ७ अथ अन्यदा कदाचित् एकदा प्रस्तापने विले

क्रीद्वय बन्धु बन्धु मण्डनशोभाक बन्धुस्य चौरस्य यानि मण्डनानिरक्त चन्दन निम्बपत्र कणवीर पुष्प स्रगादीनिबन्धु मण्डनानितै शोभायस्यासौ बन्धु मण्डनगीभाकस्त पुन क्रीद्वय वाद्यग बहिर्भूव बाह्य बहिर्भूमण्डल तद्गच्छति प्राप्नोतीति वाद्यगस्त राजपुरवैर्बहिनि सारगन्त अथया बन्धुग इह बन्धु शदेन उपचारात् बन्धु भूमि कथ्यते तत्र बन्धु भूमौ गच्छन्त ८ [त पासि जणसवेग समुद्रपालो इणमव्ववी अही असुहाण कग्माण निज्जाण पायग इम ८] समुद्रपाल सवेग प्राप्त सन् इद अत्रवीत् कि क्त्वा त चौर बन्धु दृष्टा इद इति कि अही इत्याद्ये अशुभाना कम्भणा इद पापक नियोग अशुभ प्रान्त दृश्यते ८ [सबुद्धी सीतहि भयव परमस वेगमागओ आपुच्छम्मापियर पव्व इए अणगारिअ १०] स समुद्रपालो भगवान् महात्तर

मण्डनशोभाक वज्रक पासद्र वज्रकग ८ । त पासिजण सवेग समुद्रपालोद्रण मव्ववी । अही असुहाणकग्माणनिज्जाण •
पायग इम ८ । सबुद्धीसी तहि भगव परमसवेगमागओ आपुच्छम्मापियरे पव्वइए अणगारिय १० ॥ जहिचु सग थ

प्रामादस्य दालोके गवाचेस्थिता प्रासादने ऋतोखे वैठा नगरनी सीमादेखेके बन्धुमहन निवपत्तादि तत्पुचित शोभायुक्त कोइक पुरुष नीबना पत्नी मातापहरा योखे मारवनि सबसोभाकीधीछे बन्धुबन्धु योग्य पश्यति बन्धुभूमीनि विखे बन्धुयोग्य पुरुषनि देखे ८ त दृष्टा सवेगजात ते देखी समुद्रपालने सवेग जपनी समुद्रपाल इद अत्रवीत् समुद्रपालइम कहवालागी अही इति आर्थये अशुभकमनी विपाकफल परिणामपाप कर्माणा अथ एपाप कर्मनी परिपाक ८ स भगवान् तत्रमवुड ते भगवत तिहां प्रतिबुद्धी परम सवेगी आगत परमसवेग जपनी आयुष्य मातापितरौ मातापितानि पूछीनि प्रव्रजित अनगरता साधुभाव दिव्यालीधी साधुइओ १० ल्यक्ता स्वजन प्रतिसवधि च महाक्लेश कारक स्वजनसवधीनी प्रतिबन्धुओयो के मनी कारण

[कालिणकालं विहरिञ्जरुद्वे वलावलं जाणिय अप्पणोज सी होव्व सद्देण न सत्तसिज्जावय योगसुञ्चान असभमाह १४] पुनः सः साधुः कालिन प्रस्ताविन प्रथमपीरुथादि समयेन कालं अवसर योग्यं कार्यं ध्यानानुष्ठानतपस्यादिकं कुर्वन् विचरेत् किं कृत्वा आत्मनः वलावलं ज्ञात्वा परीपहादि सह न सामर्थ्यं विचार्य यथा २ संयमयोगहानिर्नस्यात्तथेति भावः पुनः स साधुर्वाग्योगं श्रुत्वा दुक्खीत्यादकं वचनं श्रुत्वा खलानां असत्यं वचनं कर्णे विधाय असभ्यवचनं न आह न ब्रूयात् आर्पत्वात् आहुरिति १४ [उवेहमाणो उपरिव्व इज्जापि इमप्पिय सब्वत्तिक्वइज्जाग सब्वसब्बत्थिभरो यइज्जा नयाविपूयं गरहच्च सञ्जए १५] तु पुन स साधु उपेक्षमाण असभ्य वचनं अवगणयन् परिव्रजेत् मनसिवचसि दुर्वचनं अधारयन् प्राज्ञानुग्रामिषु अतिथयेन विचरेत् प्रियं च पुनः अप्रियं सर्वन्तित्तिचेत् लोकानां सम्यग् वचनं दुष्टं वचनं सहेत् पुनः स समुद्र पालित साधुः सर्वं वसु सर्वत्र नरो

कालिण कालं विहरिञ्जरुद्वे वलावलं जाणिय अप्पणोय । सीहोव्व सद्देण नसंतसेज्जा वइजोग सीञ्चाण असभ्भ
माहु १४ ॥ उवेहमाणोउपरिव्वएज्जा पियमप्पियं सब्व तित्तिक्खएज्जा । न सब्व सब्वत्थिभरोयइज्जा नयाविपूयंग

प्रसुखकरे राष्ट्रदेये वलावलं ज्ञात्वा आत्मनः आपणोवल अवलपणोजाणोनि सिंहे इव शब्देन भयकारकेन न संत्रसेत् जिस सीहनाशब्द भुं डायब्द सांभलोने चमकेनही तिमसाहसीक पुरुपभयकारीशब्द सांभलोने वीहेनही वायोगं कठिनवचनादिश्रुत्वा न असत्यं कठोरवचनं जल्पतियती कठोरवचन सांभलोने गालिप्रसुथ कोईने निदेनही १४ दुर्वचनादि अवगणयन् कोई दुर्वचनवीले ती मनमाहिं आणिनहीखमे प्रियमप्रियं च सर्वं क्षमेत् भलुं गुं डं, सर्वखमेनैव सर्ववसु सर्वतन अभिरोचयेत् सर्वत सघलीवस्तु जपपरि रुचिनकरे जेहे तेहे वसु उपपरि मन नघाले नचापि पूजागर्ह विगणयेत् सयतः वतीनी

अने शालनेन अभिसपयेत् च पुन स स यत स साधु पूजा अपि निचयेनगर्हा निन्दा अपि नरोचयेत् यतो हि स समुद्रपालित साधु स दृष्टा दृष्ट पदयेप अभिलाप कोमाभूत् पूजासुति रूपां याणी कि भिचोरप्यन्यथा भाव स्याज्जेनेत्यमित्य श्यामनोऽनुयासनमसौ चक्रे इत्याह १५ [अणे गच्छदादह माणनेहि जेभावश्रो सपगरेद्रभिक्षू भयभेखातत्वठवितिभीमादिब्वामणुक्ता अदुवातिरिच्छा १६] इष्टास्मिन् जगति मानयेषु मनुष्येषु अनेकानि च दसि उदय अभिप्रायायसते यान् अनेकान् अभिप्रायान् भावतस्तत्त्व हृत्वाभिचरपि सम्पकरोति अतो तत्र दीक्षायां भयभैरवा प्रचर भवोत्पादका भीमारोद्रा दिव्या देवसम्पन्निनीऽयवा मनुष्या मनुष्य सम्बन्धिनस्तिर्यं चातिर्यग योनि सम्बन्धिन उत्पद्यन्ते [परीसहा दुब्धिसहा अणेनेमोयन्ति जयान्त्रुकायतनरा सेतल्यपत्तेन वहिज्जभिक्षू सङ्गामसोमे इव नागराया १७] दुर्विपहा दु खेनसीदु शक्या परीपहा अनेकीउत्पद्यन्ते

रहच सजए १५॥ अणेगच्छदा द्रहमाणवेहि जेभावउसपकरे द्र भिक्षू । भयभैरवा तत्यउवेति भीमा दिव्वा मणुक्ता
अदुवातिरिच्छा १६ ॥ परीसहा दुब्धिसहा अणेनेसीयतिजत्या बहुकायतनरा । सेतल्यपत्तेन वहिज्ज भिक्षू सगाम

कोर पूजा करे निदा करे एवे जपरि सरिखो भावराडे १५ अनेकच्छदा अभिप्रायाइहजगति सभवति इहससारमाहि मनुष्यतानवा २ अभिप्रायके नविश्चिक्के याए कदाए भायतो अगीकरोति स भिच साधु यतो भगवतनी धर्म अगीकार करे भावसपले भलेभावे वर्ते भयभैरवा भयकारका तत्र पागच्छति भीमा रीद्रा तीर्हायतोने भयनाकरणहार महारीद्र आयप्राप्तइवे उपसर्ग देवसबधिन मानुष्या तिर्यग सबधिन देवता सबधी तियच स वधि १६ परिपहा दुसहा अनेक भवत परिसहसहतां दीहलाइस्था अनेक प्राप्तश्चा अनेक प्रावीलागा सीदतीषस्यतियेभ्य बहुकातरा मनुष्या जेपरिस

इति सम्बन्धः यत्र्येषु उपसर्गेषु उत्यन्नेषु बहुकातरानरा अनिकेकातराः सोदन्ति संयमात् शयो भवन्ति स साधुस्तत्र परीपहे प्राप्ते उदय आगतमिचुर्न व्योतनस वाचलेत् का इय नागराज इव गजराज इव यया गजराजः संग्रामसोर्षेन विपरोतमुखी भवति १७ [सीओसिगादं समसायफासा मातं का.पि.मिहाफुसन्ति देहं अजुजुओतय हियासएळा रया इ'खेविज्ज पुरेकाडाइ' १८] गीतोणदंगमसकटण सार्श एतियरीषहा साधोदेहविविधा यान्तकारो गपरोपहाः सुश्रन्ति तदा स साधुः अजुजुइति कुक्ति' कूजतिः सन् आक्रन्दतीति कुज्जो न कुज्जो अकुज्जः आकन्द' पजुयन् ततान् परीपहान् अधिसहेतसाधुः पुराकृतानिरर्जासिपापानिचपयेत् चयं नयेत् १८ [पहायरागच तहेवदीस'मोहञ्च भिक्खू सततं वियत्तणोमिरुक्कपाण्य अकम्ममाओ

सीसिद्धव नागराया १७ । सीओसिगाा दंसमसाय फासा आतंका विविहा पुसर्तति देहं । अजुकुओ तत्यहिया सए
ज्जारयाइ' खेविज्जपुरे काडाइ' १८ ॥ पहाय राग'चतहेव दीसं मोहं च भिक्खु सतयं वियक्खणो । भेक्खवाएण अकंप

हयो पणाकायर मनुयानावे कडाभाजे सः यतितेषु उत्यन्नेषु न चलेत् भिचुः पंडितः परिसहपायहप्रायका जिक्कीचले नहिती साधु कहीये यया संश्राज सस्तने नाग राजहस्तो जिम संग्रामनेविखे हाथीने तीरलागे तरवारलागे वरखीगोलीलागे पिणनासे नही तिम साधुपणिओदीवनासे नही १९ शीतीअ देयमयकाअ सार्श सोत उण्ण डांसमसागा सार्शइवे आतका रीगाः नानाप्रकारासृशंति देहं रोगभांति २ ना आवी देहने फरसे अच्चित्तकुजितेन ततहा देव इत्यादि अन्दरहिता अध्याथोतरोग आब्याथकाहा देवहामाय इस्था वचन कहे नही मन दडकरे रजांसि कर्ममलानि चपयेत् पुराधाराणि रजकरममल पुराकृत तेहने खयवे १८ तिताराराग तथाइपं रागइ पक्कीडोनि सीहं च भिन्नः सततं निरंतरं विद्वान् पंडित साधु सदा मोहने छाडे सेव

परोमहे आयुते सहेज्जा १८] साधु परोपहान् सहेत कि हत्वा राग तथाद्वेष च पुनमाह प्रहायत्वक्का कोद्वय साध सतत विचलणी निरन्तर तत्वविचारत कइवनेरुव वा तैरकम्पमान पुन कोद्वय साधु आमगुप्त क्लृप्तइव गुप्त गरोर १८ [अणव एनावण एमहेसी नयाविपूय गरह च मञ्जए मे उन्न भाव पडिवज्ज सञ्जया निब्बाणमग विरए उवेइ २०] महर्षि प्जासुति च पुनर्गहाविन्दा अपिन सद्भयेत् सप्त न कुथात् सुति निन्दो प्रसप्त न कुयात् सुति युत्वाहर्ष न कुर्यात् निन्दा युत्वा दु ख न कुथादिति भाव कोद्वयो महर्षि अनुव्रत न उन्नत अनुव्रत अभिमान रहित पुन कोद्वयो नावन्त न अवनतीदीनभाविन रहित स एताद्वय समुद्रपानित सयत ऋजुभाव सरलत्व प्रतिपद्य विरत पापात् निहस्य सन् निवाणमार्ग मीचमार्ग उपेति प्राप्ति २ [अरइरइ सहेपहीणसन्धवे विरए आयरिएपहाणव परमद्वपएहिचिइइ छिन्नसीए इममे अकिञ्चणे १] पुन स साधुरति सह अरतिय सहेते इति अरतिरति सह पुन कोद्वय प्रहीण सस्तव प्रकयेण हीनीगत सस्तवो गृहस्थ्यै सहपरिचयो यस्सस

सागोपरीसरे आय गुत्तिसहेज्जा । १८ ॥ अणुसए गावणए महसीनयाविपूयगरहच सजए । सेउज्जुभाव पडिवज्ज मजए निब्बाणमग विरएउवेइ ॥ २० ॥ अरइरइ सहेपहीणसधवे विरए आयहिए पहाणव

रिववायुना अकपन जिम मेरुपवत वायरे करोचाले नइोतिम साधुपणि कोइ उपसग चलेनही परिपहान सबानुगत सन् सहेत सधनापरिसह आपणी था भागुपकरोने सहे १८ अत्यच्च नातिनीच महर्षि न अतिउ चोनअतिनीचा साधुनचापि पूजावाकृतिपूजावाक्छिनहीगरहाच दुष्टवचनानिनिदागर्हाइमंस ऋजुभावस प्रतिपण सयत सरलभाव अगीकार करीनेसाधु सिद्धानामारगविरत सन् गच्छति मीच लभते विरत्तथको मीचजाइ कर्मथी रहितहुवे २०

कुलपुत्रीयोषकालेमध्याह्न समये प्रयोजनवशेनगतोऽरण्य तत्रैक पथपरिभ्रष्ट दृष्टवधापरित्रयनातिरिक्त निमीलित लीचन भूमितलगतं गत
 कृगगरोर एक सुनिवर ददर्शत च दृष्ट्वा स कुलपुत्र एव चिन्तितवान् अहो एष महातपस्वीर्दृश्योविपमावस्थामापन्न ततस्त जलेन शिक्तवान्
 चेनावनेन योद्धितवाङ्मुनि स्वास्थ्यमापन्न नोत स्वयाम प्रतिजागरितश्च श्रीपथथाहारादिभि सुनि नापि दत्त उपदेश्य यथा इच्छ दु ख प्रचुरे
 समारे परलोकाहित श्रवस्य जनेन कत्तव्य ततो भवद्भिरपि परमासमयाखेटकादिनियम कुरुत यदि पालयितुं शक्तास्तदा बहुदोषान्येतानि यदुक्तं
 पञ्चक्रियवहु भूय ममन्दगन्धमसु इवीभच्छ रक्तपरितुलियभक्खगमामेजण्य कुगद मूल १ तथा गुरमोहकलहनिदा परिहर एवहासरोग भय हेतु
 मञ्ज दोगद मूल हिरिसिरिमद्र धग्गनासकर २ अपि च मज्जे सुहमिम सग्गि उपपज्जति असखा तव्वणातल्यजन्तुणी २ तथा सत्तीवघायजयणा इहेवत
 हनयरति रियगद मूल दुइमारणस्सय हेतु पारडा वैरवुट्टिकरा ४ इदं च शुला सविग्गाम्भा ताभ्या भणित भगवन् देहि अग्गाक गृहत्यावस्थोच्चित
 धम्म यति नातु मम्यक्त मूलदादश वतरूपी धर्मस्तयोर्दत्त उक्तं च सोधम्मोजत्थदया दसद्व दोसानजत्थसीदयो सोइगुरुजोणाणी आरम्भ परिगहा
 विरथो १ श्रावकधर्म प्रपद्यतो दम्पती तुष्टौ यतिनातयो पुन रेव शिवा प्रदत्ता यथा तल्यवसेज्जामट्टोजेद्दिं हिंसहजत्थहीद्व सयोगी तल्ययवेइय भवण
 अत्रेविजत्थसाहम्मो १ देव गुरुणतिस ज्ज करेजतइपरमवन्दण विहिण्णा तह पुण्ण वल्यमाइ हि पूयण सव्वकालम्मि २ अन्यच्च अपुल्लनाण गइण
 पच्चववाण सुधम्म भवणच्च कुज्जासइजइसत्ति तव सज्जाया इजोगवा १ अन्यच्च भोअणसमए सवणे षवोहेणपसवणेपएसवणे पञ्चनमीकार उल्लु समरेज्जा
 मज्जकम्मै सु १ एव च तयो गिग्घा दत्त्वा साधरन्त्यत्र विजहार तीदम्पती स्वग्घे गती साधूपदिष्ठ धर्मानुष्ठान कुरुत कालक्रमिणताभ्या यतिधम्म
 प्रतिपन्न काल क्ल्वाधन सोधर्मे देवलीके देवत्वे नोत्पन्न सास्यो तुतस्यैव मित्तत्वे नोत्पन्ना तत्र सुरसुख मनुभूयधनदेवजीवी वेताद्ये सूरतेजरात्र पुलधिच

गतविद्याधरराज् जात. धनवत्यपिकस्य चिद्रात्र कन्याजाता परिणीताचित गतिनैव तत्र मुनि धर्मं कृत्वामाश्रिन्दे धरणी सामाण्ड इयरायनग्नित्तो जात्री तत्तीचुजणधरणी श्रवरजित्री नामरायाजात्री साविर्दिमई तस्सपत्नीकाज समणधम्मं गयाद् द्वावपीती भारण्य कल्पे मित्त देवीजाती ततचुगती धनदेवजोवः शंखराजाजातः धनवती जीवस्तस्यैवकान्ताजाता तत्र शंखराजा प्रतिपन्न मुनिधर्मोधिंयति स्थानजैर्निवडतीर्थं करनाम गोतः कालं कृत्वाऽपराजितविमाने समुत्पन्नः तत्कान्तापि धर्मं प्रभावेण तत्तैवीत्यत्रा धनजीवस्ततचुगता सौर्यपुरेनगरं दशदशाराणां मध्येऽष्ट समुद्रविजयस्य राज्ञीभार्यायाः शिवादेव्याः कुञ्जीचतुर्दशमहास्रम. सूचित कार्तिक कृष्णद्वादश्यां पुत्रत्वे नोत्पन्नः उचितसमये श्रावण शुद्धपक्षस्यां प्रसूताश्रियादेवो जातो दारकः दिगकुमारिकाविहित जातकर्मानन्तरं सुरासुरैर्मैरुमस्तके जन्माभिके कृते सति राज्ञापि वर्षापनं कारितं अस्मिंश्चगर्भगतिकदाचित् स्वप्ने शिवादेव्या श्ररष्टरत्न मयोनेमिर्दष्ट अतीरिष्टनेमिरिति अस्य नाम कृतं अथ कुमारोष्टवार्पिकीजात. अत्रान्तरे कृष्णेनकं सेनिपातिते जीवयश्यावृचने नयादेवानासुपरि कुषीजरासिन्धुराजा तस्य कया सर्वेपि यादवाः पञ्चिम समुद्रं श्रावहताः तत्र केयवाराधित वै अमणे न कृता सर्वकासनमयी द्वादय योजनायामानवयीजनविस्ताराद्धारिकानाञ्चो नगरी तत्र सुखेनयादवास्तिष्ठन्ति क्रमेण निहितजरासन्धौ रामकेसवी भरतार्धस्वामिनौ जाती अरिष्टने निर्भगवान् योवन मगुप्राप्त विषयसुख पराङ्मुखीपि मित्रैः प्रेर्यमाणो नानाधिष्ठीकं करोति अन्यदा समान वयस्कै र्नेकराज कुमारैः सहक्रीडन् गती नारायणस्यायुजशाला तत्र दृष्टान्वनेकानि देवाधिष्टितानि श्रायुधानि तत्र द्रव्य कालावर्त्त धनुः कौतुकेन गृह्यन् नेभिरायुधपालेन भणितः कुमार क्रितनेनाश त्वा तुष्टानेन न हि नारायण मन्तरेणान्य कोपिनर इदं धगुरारोपयितुं शक्तः ततइषसिलानेमिना तद्वदुलीतयेवारोपितं आस्फा खिताजीवास्तथा शन्दे न मेदिनोकम्बिता विक्षितास्वर्धेप्यायुधयालिकानरास्ततसदनुर्मुक्त्तानिमिनाश्री गृहीतः पूरितस्तच्छन्दे न सर्वं जगद्धारित

बहुदोपालयानां लुच्छ सुखनिबन्धनानां अस्थिर सप्तमाना रमणीनां सप्तमेन न भवति नरत्वं सफलं अपिच एकान्त श्रुत्या निष्कलनायाः निरुपम सुखायाः शास्त्रत सप्तमायाः सिद्धिबद्धाएव सप्तमेन नरत्वं सफलं भवति यतः माणसत्ताद् सामग्यो तुच्छभोगाणकारण रयण्य कीडिप्राइच्चहारिं तिप्र बुद्धाजणा १ अह सिद्धि बधू निमित्तमेवयतिथे निसेय मभिप्रायस्ताभिः क्षणाय निवेदितः क्षणेनचर्नमैः स्वयं भणितः सप्तमादय स्तीर्थं कारा दारसग्रहं कृत्वा सन्तान परम्परा वर्धयित्वा खेटलोक मनोरथान् पूरयित्वा पश्चिमवयसि निष्क्रान्ताः शिवं प्राप्तय त्वमपि तत्तु न मन्त्रैव मोज्ञियास्य सीति दशरचक्र सन्तोषाय किं न पाण्ड्यहृणं करीषीति क्षणः प्रकामं विवाहाग्रहहृणतवानिति निसिन् मीनमालम्ब्यस्थितः क्षणे न चिन्तितं पनि पिड मनुसतमिति न्यायादङ्गीकृतएव निम्नना विवाह इति दशरचक्राय उक्तवान् सञ्जातहर्षेण दशरचक्रेण भणितः क्षणः त्वमेव नैत्यनुरूपां कन्यां गवधय ततः क्षणे न गवधयता उग्रसेन पुत्री राजीमती कन्या नैमित्तुत्थरूपा सा पुनर्धनवती जीवोपराजित विमानात् च, त्वातलीत्यनासीति इयमेव नैत्यनुरूपेति तदर्थं क्षणे न उग्रसेनः प्रार्थितः तेनापि मनोरथातीती जीव मनुग्रह इति भणित्वा कन्यादत्ता ततः कारितं कुलहृयेपि वर्जपनं श्च्यौत विवाह लग्नं कारितं समस्त जातिवर्गस्य भोजनाच्छादनादिसत्कारः प्राप्ते च लग्नदिवसे दिव्य रमणीभिः स्नापितोऽनघृतो जिम्षिती मत्त वारण मारूढः समन्ताम्बलितः दशरचक्र बलदेव वासुदेवादि यादव परिकारितः पृष्टौ वादितानिक कीटिप्रमाण वादिव गिरीश्रुतात पत्न्यामरेर्वीज्यमानः पृष्टौ गीयमान मङ्गलः सर्वतो मागधैः कृत जय जयारवः सर नर सत् न सर्वतो वीच्यमाणः सुरीभिर्नारीभिः प्रार्थमानो नैमिजुमारः प्राप्सो महता विस्तरेण उग्रसेन नृप द्वारपुरीरचित विवाहमण्डपासन्नदेशं राजीमत्यपि सर्वालङ्कार विभूता गवात्स्थानिमिं दृष्ट्वा आनन्दपरावगा जाता एतदपि तदानीं नवेति काहं किमत्रास्ति कीयं कालः कीदृशी चेष्टेति प्रदान्तरे करुणारवंश्रुत्वा जानता नैमिना पृष्टः मारथिः कीयं मरभोरूपां प्राणिनां एयः

मानोपि नैवत मर्द्धसप्रीचकार अस्मिन्नवसरे लीकास्तिका स्तत्रागल्यएव मूचिरे भगवान् सर्वे जगज्जीवहृतं तत्तीर्थं प्रवर्तयेति भणित्वा जननी जनका दीनामल्लिके गत्वा एव मूचतुः भवत् कुलोत्पन्नः श्रीनिमिः प्रव्रजि शूरस्तीतिकोभवतां विषादं नेमिरपि मात्र पिषीपुरः कृताञ्जलिरेव मुवाच इच्छामि युष्मदनुज्ञातो प्रव्रजितुं इदञ्च शुला शोकसषट् निरुद्धदया धरणीतने निपतिता शुण्ठिभुजवनयागिषादेवो मिलितं दगारचक्रं जलाभिषेकादिना लब्ध संज्ञा भणितुमारव्या पुत्रकथयमस्माकं मनोरथं मूलादुच्छिदंसि कथंयात्वं सत्पुरुषोपि प्रार्थना भंगं करोपि दगारचक्रमपि मनः सन्ताप किं करोपि कथञ्चिवयमुग्रसेन राज्ञी सुखं दर्शयिष्यामः कथञ्च लदेकचित्ता सावराकीराजीमती भविष्यति ततोऽसदुपरोधेन तस्याः पाणिप्रहणं कुरु ततः पयात् प्रव्रज्यां गृह्णीया भणित भगवतामातर्मनः सन्तापं माकुरु सर्वभावानामनित्यत्वं भावयन्निषञ्चानां विपाकदाकणत्वं षट्सि जनकत्वं च षस्तिदीवन धनादीनां चञ्चलत्वं सन्ध्यासमयाश्च तुल्यतां विलासानामवेष्टि प्रकण्ड प्रहारत्वं मूलोर्जग्मजरामरण रोगादि द्रुत प्रचुरत्वं संसारस्या लोचय तज्जो मातर्मीमनुजानोहि भव प्रदीपात्रिर्गच्छन्तं अन्तरे दगारचक्रेषुनेभिर्भणितः कुमार सांप्रतिलया परिलक्ष्य यादवलोकास्य न कथित्वाणमिति ततः किञ्चिक्काल प्रतोष्यत् तदुपरोधयोतलया वाल्या भगवता सवसरमेकं यावत् स्थितिरहीकृता दत्तञ्च तस्मिन्नेव सस्रसरिकं दानं प्रतिपूर्णे च सम्यक्करे माह पोतादीनामा पृच्छयावण शुद्धपद्या स देव मनुष्यपर्यदा परिहृती नगर्यानिर्गत्यसहस्रासवसे उद्यानेऽपि वर्षयताति गृहस्थायासेसित्वा पष्टभक्तेन पुरुष सहस्रेण समं निष्कृन्तः तपस्संयमरतोविहरति इतय भगवतो आतारयनेमिः प्रीति पर एकात् राजीमति मेवमाह सुभुमा कुरुविषादं सौभाग्यनिधि कः कीन प्रार्थयति भगवान् पुनर्नेमिनायो वीतरागत्वाञ्जकरोति विषयाशुबन्धं ततः प्रतिपद्य लसां सर्वकान महं त्वदाज्ञाकारी भविष्यामि तथा भणितं यथाहं नेमिनाथेन परिल्लता तथापि अहं तं न परिल्लामि यतोहं भगवत एव शिष्यो भविष्यामि ततस्त्वमेनं पार्श्वनाशुभस्याज ततः सकतिचिदिना

नियाम् मीनेनस्थित अन्धस्मिन् दिने पुनरपि तेन प्रार्थिता ततस्तथा तत् प्रतिबोधार्थं तत् प्रत्यक्षमेव चीर पीत्वा मदन फलपातेनवां त्वा तत् सौवर्षिक कक्षीलक्रे चिथा समुपनीत रथनेभैर्भणित इदं पिवतेनीक कथं वा तं पिबामि तथा भणितं त्वं किमेतज्जानासि स आह बालोप्ये तज्जानासि सा आल्यत् तर्हिनेमिनाथं वा ता मां कथं त्वं पातुमिच्छसि इदं राजीमत्या वचं श्रुत्वा स उपरतो राजीमत्यपि दीक्षाभि सुखी तपोभिधाने शरीरं शोषयन्ती तिष्ठति अत्रांतरे च तु पञ्चाशद्दिनं पर्यन्ते भगवत शीर्नेमि नाथस्य रैवतगिरि सहस्राम्बवने केवलं ज्ञानं मुत्पन्नं देवैः कृतं समयसरेण तत्र समायातासु ह्यदशपर्यस्तु देयना कृता तां च श्रुत्वा बहवः प्राणिनः प्रव्रजिता केचिद्गण धराजाता स्थापितं भगवतातीर्थं राजीमत्यपि विविधकन्याभिः सहप्रव्रजिता रथनेमिरपि सविम्बस्त्रादानौ मेयं प्रव्रजितं राजीमती तदानीं मेव मचिन्त्यत् योमया तदानीं दिव्यं पुरुषस्वप्नो दृष्टः सोऽयसफलौ जातः अत्रादाराजीमती साध्वीभिः समं भगवती वन्दनार्थं रैवतगिरिगच्छन्ती अकस्मान्ने च दृष्ट्वाऽभ्याहता सर्वापि साध्योऽनग्रहसि निलीना राजीमत्यपि एकस्या गुहाया प्रविष्टा तत्र च पूर्वं रथनेमिसाधो प्रविष्टोऽस्ति परं अन्यकारं प्रदेशेऽस्थितो न दृष्टः तथा चीवराणि विस्तारयितुं लम्बा सानि रायरेणा च जाता तस्या शरीरयोभा दृष्ट्वा इन्द्रियाणां दुर्दान्ततयाऽजादि भवाभ्यस्तया च विषयाभिः प्रायेण परवयोजातं तादृशो रथनेमिस्तया दृष्टः ततो भयं भ्राता सा सद्यः आत्मानं प्राहृत्य बाहुभ्यां सङ्गोप्यं च स्थिता तेन भणिता सुतनुतवानुरागवशेनाह मिदं शरीरं अरतिं परिगतं घर्त्तुं न शक्नोमि ततः क्लवानुग्रहं प्रतिपद्य स्वमया समं विषयसेवनं पयात्सञ्जातमनः समाधौ श्रवा निर्मलं तपः सयमं चरित्याव तयापि साहसमवलं न्यप्रगल्भवचनेर्भणितं महाकुलं प्रसूतस्य तव किमिदं युक्तं स्वयं प्रतिपद्यस्व ततस्य भञ्जनं जीवितं मपि सत्यं रुपास्यजन्ति न पुनः व्रतलोपं कुर्वन्ति ततो महाभागमनः समाधिं कृत्वा चिन्तय विषयं विपाकदारुणत्वं शीलखण्डनस्य नरकादिकश्च फलं न च विषयं सेवनेन मनः

समाधिः किं तु भूरितराडरतिर्भविष्यति विषयसेवन लब्ध प्रसरस्य मनसः प्रकाममिच्छावहं ते उक्तं च पुत्राट्टिव्याभोगा सुरैस्तन्तहनमण एसुं नय नञ्जा यातित्तो अतितत्तरं कस्मविजि अस्स १ इत्यादि वाक्यं स्तयानुयासितः स सञ्जुतः सम्यगहं प्रतिबोधितस्तयेति भणन् आत्मानं निन्दयित्वा राजोन्नतीं च श्रुयं सुत्वागतः साधु सभामध्ये सा च साध्वी सभामध्ये गतिंति अरिष्टनेभिर्भगवान् मरकत समनर्णः दग्धनुरुक्तितेहः गतलाञ्छनः चतुः पञ्चाग दिनसप्तशतवर्षाणि केवल पर्यायेण विहृत्य अनेकभव्यान् प्रतिबोध्य च वर्षं सहस्रायुः परिपाल्यरेवतगिरी प्रापाड शताष्टभ्यां सिञ्चितः क्रमेण रयनेमि राजीमत्यावपि सिद्धिं जग्मतु इत्यरिष्टनेमिचरितं सूत्रं अथेलिख्यतं [सौरिय पुरं भिनयरे आसिराया महद्दिण वस देवत्तिनाभेगं रायलजग सञ्जुए१] सौर्यपुरेनास्मि नगरेवस देव इति नाम्ना राजा आसीत् यद्यपि सौर्यपुरे सञ्जुट विजय प्रमुखादग्दगार्त्ताः दग्भ्नातरौविद्यन्ते तेषु दग्सुलधुर्भतावस देवीस्ति तथापि वासुदेव पुत्री विष्णु रभूत् तेन वासुदेवस्यैववर्णनं कृतं कीदृगी यसुदेवी महर्षिकः कृत चामरादिक्रिभूतयुक्तः पुनः कीदृगी राजलङ्घन संयुतः हस्तपादयोस्तलेषु राज्ञी लक्षणानि चक्र सस्त्रिकां कुशवज्रभ्रज ह्येन चामरादिभि सहितः अथ वा श्रीदार्गर्भेयगाभीर्गोष्टि सहितः १ [तस्मभज्जा दुवे आसिरोहिणी देवई तद्वा तासिंदोणहंपि दीपुत्ता इडारामकेसवा] २ तस्य वासुदेवस्य हे भार्ये भ्राम्तां रोहिणी तया देवकी यद्यपि वासुदेवस्य

सौरियपुरंमि नयरे आसिराया महद्दिण । वासुदेवत्तिनाभेगं रायलजगण संजुए १ ॥ तस्माभज्जा दुवेआसि रोहिणी

सीरीपुर नामा नगरे सीरीपुर नगरनेविखे आसीत् राजा महर्षिकः महाहृदिनीधर्गां रागाश्री वासुदेविते नाम्नाः वासुदेवःसेनांमि राजाहृषी राजा लक्षणसयुतः राजाराजलक्षणतिकरीसहितदे १ तस्यराज्ञे हे भार्ये अभूतां तेराजाने वेभार्ग ईदं रोहिणी देवकीतिनाम्नाः एक रोहिणीयोजी देवकी तयो

हा सप्तति सहस्र द्वारा प्राप्त तथाप्यत्र सभ्यैरेव कार्यत् रोहिणी देवकीरेव ग्रहण कृत तयो रोहिणी देवकीर्हयो द्वौ पुत्री अभूता तौ पुत्री को रामकेशवो कोट्ट्यौ तौ अतीष्टौ मातापितृरधि कवल्लभौ २ (सौरिय पुराणनयरे आसिरायामहद्विए समुद्रविजए नाम रायलकक्षण सञ्जए ३] सौर्यपुरे नगरे समुद्रविजयो राचा महर्षिक आसीत् कोट्टय समुद्रविजयो राजा राज लक्षण सयुत अत्र पुा सौर्यपुराभिधान समुद्र विजयवसु देवयो रेकत्रावस्थिति दर्शनार्थं ३ [तस्म भञ्जासिवानाम तीर्षे पुत्ते महायसे भयव अरिदुर्नेमिति लोगनाहेदमीसरे ४] तस्य समुद्रविजयस्य राज्ञ शिवानाञ्चा भाया आसीत् तस्या शिवा देव्या पुत्री भगवान् ऐश्वर्यधारी अरिदुर्नेमिरासोत् चतुर्दश स्वप्रदर्शनानन्तर एक अरिदुरल मय रय चक्र ददर्श तेन अरिदुर्नेमिरिति नाम प्रदत्त कथम्भूतोऽरिदुर्नेमिमहायया महाकीर्त्तिं पुन कोट्टयोऽरिदुर्नेमि लोकनाथ चतुर्दश रज्जुप्रमाणलोक प्रभ पुन

देवईतहा । तासिदुर्हिहपिदोपुत्ता इठाराम केसवा २ ॥ सौरियपुराभिनयरे आसिराया महिद्विए । समुद्रविजएनाम रायलकक्षणसजुए ३ ॥ तस्मभञ्जा सिवानामतीसे पुत्ते महायसे । भगव अरिदुर्नेमिति लोगनाहे दमीसरे ४ ॥ सौरि

ह्योपि द्वौ पुत्री तेल्लोवे इने वेटाहश्चा इष्टौ वल्लभौ राम केशवौ वल्लभ कृष्णो रोहिणीनो वेटा वल्लभश्च देवकीर्हो कृष्ण इवो २ सौरीपुरनामा नगरे सौरीपुरनामा नगरने विपे आसीत् राजा महर्षिक समुद्र विजयनामा राजा समुद्रविजय राजलक्षणसयुक्त ३ तस्य भाया शिवानाञ्चा तेहनी भाया शिवादेवी एहवेनामे तस्या पुत्री महायश तेहनी पुत्र माहायशनीधणी भगवान् अरिदुर्नेमि भगवत अरिदुर्नेमि लोक नाथ दमिनामध्ये इत्थ अष्टलीकनोनाथहेदमीसाहि अष्टके ४ स च अरिदुर्नेमिनामे ते अरिदुर्नेमिनामे लक्षणैः स्वरेण च सयुत वतीस

कोट्योऽरिष्टनेमिर्दमोखरः कुमारलेपिवेन कन्दर्पोजितः तस्मात् दमिनां जितेन्द्रियाणां ईश्वरो दमोखरः ४ (सोरिडु नेमिनामोज लक्खणस्स रसंजुञ्जी अट्टसहस्रलक्खणधरो गोयमी कालगच्छवी ५) अथारिष्टनेमेर्वर्णनमाह । स अरिष्टनेमिनामा भगवान् अट्टसहस्र लक्षणे धरो वर्त्तते अष्टभिरधिकं सहस्रं अट्टसहस्रं लक्षणानां अट्टसहस्रं लक्षणसहस्रं तद्वतीति लक्षणसहस्रधरः अट्टसहस्रं लक्षणानिधरतीति वा अष्ट सहस्र लक्षणधरः पुनः कीदृशः लक्षणस्वरसंयुत लक्षणे सहितः स्वरोलक्षणस्वरः स्तेन संयुतः स्वरोलक्षणानि माधुर्यलावण्याऽव्याहृत गांभीर्यादीनिः संयुत तीर्थकरस्थिहि अष्टाधिकसहस्रलक्षणानि शरीरे भवन्ति स्वस्तिक इपभसिंह त्रीवच्छ ग्रंथपत्र गजाख छत्तादि प्रमुखाणि लक्षणानि हस्तपादादी भवन्ति पुनः कीदृशो रिष्टनेमिः गौतमी गौतमगोत्रीयः पुनः कीदृशः कालकच्छविः श्यामकान्तिः ५ [वञ्जरि सह सद्यणी समचोरं सोञ्जसीयरी तस्स रायमई कस्सं भञ्ज्जायइ केसवी ६] पुन कीदृशो वञ्जं कीलिका ऋषभः पट्टीनाराचः उभय पार्श्वयोर्मर्कटवन्धः एभिः संहननं शरीररचना यस्य स वञ्जर्षभनाराच संहनन पुनः कीदृशो सम चतुरस्रः प्रथम संस्थानवान् यः पद्मासनेस्थितः सन् चतुर्षु पार्श्वेषु शड्य शरीर प्रमाणोभवति स सम चतुरस्र संस्थानवान् उच्यते तीर्थं करोहि समचतुरस्र संस्थानधारीस्यात् पुनः कीदृशो भयोदरः भयस्य मत्स्यस्य उदरमिव उदरं यस्य स भयोदरः अथ तस्या

दुनेमिनामोड लक्खणस्सरसंजुञ्जी अट्टसहस्रलक्खणधरो गोयमी कालगच्छवी ५ ॥ वञ्जरिसहस्रंघयणी समचतुरसो

लक्षण अनेखर तिणे सयुक्तः अष्टोत्तरसहस्र लक्षणधरः एकहजार आठलक्षणनी धरणहारः गौतमगोचः स्वामकांतिः गौतमगीतनीधणी श्याम शरीर कांतिः ५ वञ्जऋषभ संघयन वञ्जऋषभनाराच संघयणनीधणी सम चतुरं स संस्थानः सम चोरं स संस्थान भयोदर मत्स्योदर मच्छसरीषुं पेटक्के

रिष्ठ नेमिकुमारस्य केसव कृष्णा राजीमतो कन्या भार्याये याचते कृष्ण देवीराजमत्या जनकपार्श्वे राजीमतो कन्यां नेमिनाथस्य भायार्थं याचते इति भाव ६ [अह सा रायवरकन्या सुसीला चारुपेहिणी सव्वलक्षणसम्पन्ना विज्जसी यामणिप्पभा ७] अथानन्तर सा राज वरकन्या राजमती कीट्टयी वर्त्तते तद्वर्णनमाह राजसुवरो राजवर पोडगसहस्र मुकुटवह भूपेपु अष्ट उपसेनो राजा तस्य कन्या पुत्ती राज वरकन्या सा कीट्टयी सुशीला योभना चारी पुन कीट्टयो चारुपेहिणी चारुपेहिणी सुन्दरावलीकना सुन्दरनयनावा पुन कीट्टया सर्वलक्षण सम्पूर्णा चतु पटि कामिनी कलाकोविदा पुन कीट्टया विद्युत्कोदामिनीप्रभा विशिषेण योतते इति विद्युत् सा चासी सौदामिनी च विद्युत्कोदामिनी तद्वत्प्रभा यस्या सा विद्युत्कोदामिनी प्रभास्फुरविद्युत्कान्ति ७ [अहाहजणञ्चीतीसे वासुदेव महद्द्विय इहागच्छउ कुमारो जासे कन्नदलामहम् ८] अथ कृष्णे न नेमि

ज्जसीदरो । तस्मारायमर्दकस्य मज्जजायद्द केसवो ६ ॥ अहसाराय वरकन्या सुसीला चारुपेहिणी । सव्वलक्षण सपन्ना विज्जसीया मणिप्पभा ७ ॥ अहाहजणञ्ची तीसे वासुदेव महद्द्विय । इहा गच्छउ कुमारो जासेकस्य दला

तस्य राजमतीनाम्ना कन्या तेनेमि नाथने राजमती कन्या भार्यानिमित्ते याचते केशव कृष्णनेमौ कुमारनी भार्या करिवनिका जे मारी ६ अथ सा राज वरकन्या राजीमतीहवे राजानीविटी राजमति सुसीला योभनाचारा चारुपेहिणी मनीहरलोचना भली आचार भला नेत्रके सर्वलक्षणे सपूर्णा सव्वलक्षणेसहितके दीप्यमान सौदामिनी विद्युत्प्रभा कातिर्यस्या सा देदीप्यमान जे बीजली ते सरोयीकातिहे जेहनी ७ अथ अहाह जनक पिता तस्या राजिमत्या अयसेन नामा राजमतिनी पिता उपसेन कहेके वासुदेव महद्द्विक वासुदेवप्रति इहा गच्छति अरिष्ट नेमिकुमार नेमिकुमारकारे

आरूढोधिक गोभते कइव मिरसि मस्तके चूडामणिवि यथा मस्तके सुकुट गोभते तथा नेमि सवेधा यादवाना मध्ये चूडामणि सहशो विराजत १०
[अह चस्मिण्ण छत्ते ण चामराच्चिय सोहिञ्चो दसारचक्रे ण यसो सब्बञ्चो परिवारिञ्चो ११] [चाउरगिणीए सेणाए रइयाए जहकम तुडियाण सन्निना
एण च्चिण गयण फसा १२] [एयारिसीए इट्ठीए जुइए उत्तिमाइत्त नियगाञ्चो भवणाञ्चो णिज्जाञ्चो विरिहपु गवो १३] तिस्रभि कुलुक अथानन्तर
इण्णिपु गवो नेमिकुमारो निजकात् भवनात् स्वकीय गृहात् एताइथा समीपतरवत्ति न्याक्खदा पुनरुत्तमया प्रधानयायुव्यादोभगापाणि गृहणाय
निगत उययेन गृह प्रतिस्वमन्दिरात् निरुत्त इवथ कौटथा ऋडगा ता ऋषिपत्तिमाह स नेमिकुमार उच्चितेन उच्चै ऋतेन क्वे ण मेघालम्पर
छत्ते ण च पुनचामराभ्या उभयपार्वयो वीज्वमान शोभित पुन स नेमिकुमारो दशार्ह चक्रेण यादव समूहेन सर्वत परिहृत ११ पुन कौटग चतु
रङ्गिण्यभिनेया परिहृत पुन कौटग स्फुटिताना तृर्याणा भेरि मृदङ्ग पटह करानानतालादोना दिव्येन देवयोग्ये न सत निनादेन मस्यकगब्देन सहित
कौटयेन तूराणा निनादेन गगनमृग्या गगन स्पृशतीति गगनसुक तेन आकाशव्यापिता १२ [अह सोतत्थनिज्जन्ते दिस्सपाणि भगइए वाडेहि पिञ्चुरहि

हिञ्चो । दसारचक्रेण यसीसब्बञ्चो परिवारिञ्चो ११ । चउरगिणीए सेणाए रइयाए जहकम । तुरियाण सन्निनाएण

शोभित वेपासे चामर वीजइके दसारचक्रेण समुद्रविजयादि नृपसमूहेन समुद्रविजय प्रमुख राजाइ सहित सर्वतो परिवारत वेदित चारिपासे
वीथीके ११ चतुरगिनासिनया चतुरगीणी सेना साथेके रचितया यथाक्रम हाथो घोडा रथ पायक यथा अनुक्रमे रथाके तुरगा वाजिवाणा
निनादे याचिवनां गइर तिणे करीमहित प्रधानेन गगनमृगेत प्रधानमृगइत जह्मके ज्ञाइ आकाशगङ्गके १२ पताइथा ऋडगा इसी मृदि दारी

च स निरुहे सुदुस्त्रिण १३] [जीवियन्तन्तु स पत्ते मसडा भक्वियव्वए पासित्तसि सहापन्ने सारहि इणमव्ववो १४] युग्मं अथ अनन्तर स नमिदुमार सारथि इद अत्रोत् कि क्वात्वा स्तत्र विवाह मण्डपासन्नेनिर्यन् अधिगच्छन् भयदुतान् भयव्याकुलान् प्राणान् जीवान् स्थलचरान् च्चगशरकाङ्करतिरार लावकादीन् मासार्थं भवितव्यान् पासित्ताइति विचार्य दृष्ट्वा कथंभूतान् प्राणान् वाटकैर्भिन्तिभि कण्टकवाटिकाभिर्वा निरुद्धान् अतिशयेन यन्तितान् पुनः पञ्जरैर्लोह वंशशलाकादिर्विनिर्मितै पचिनियन्त्रण स्थानै सन्निरुद्धान् अतएवस दुःखितान् पुन कीदृशान् जीवितान् तं संप्राप्तान् ते प्राणिन

दिव्वेणं गगणंजुसे १२॥ एयारिसीए इट्टीए जुत्तीए उत्तिसाइय । नियगाओ भवणाओ निज्जाओ वग्गिहयुं गवो १३ ॥
अहसीतत्थ निज्जांतो दिस्सपाणे भयदुए । वाडिहिं पंजरेहिंच संनिरुद्धे सुदुक्खिए १४ ॥ जीवियं तंतुसंपत्ते संसडा
भक्वियव्वए । पासित्तसि सहापणे सारहिं इणमव्ववो १५ ॥ काख्खडाइमपाणाएएसव्वे सुहेसिणो । वाडिहिं पंज

द्युत्याकांत्वा उत्तमया कांति आभरणेति सहित निजकात् भवनात् आपणा घरथको निर्गतो ह्येषिपुत्रवः प्रधानो नेमि नेमिनाथ वाहिरिनीसखी यादवने पूज्यनीक जादवकुल १३ अथ स स्वामी तत्र निर्गच्छन् अथ स्वामी जाइछे नेमिनाथचाल्या दृष्ट्वाः प्राणान् जीवान् भयभीतान् आगे जाता जीवदोठा एकठा बांध्याछे भयभ्रांतछे वाटकेषु पंजरिषु चवाडनिविपे पंजरानि विपे संनिरुद्धान् वद्वान् दुःखितान् रुंध्याबाध्या दुःखी १४ च पुनः जीवि तांतं संप्राप्तान् जीव अंत प्राप्त ह्अच्छि आपणाजीव अंत्यप्रांतहस्ये इमकहंछे पसु मासार्थं विनाश्रभजितव्यान् मांसने अर्थे मारीखासि दृष्ट्वासः महाप्राज्ञः नेमनाथ स्वामीएप्रकार देखीनं सारथिं प्रतिइति अबवीत् सारथीप्रते इमकहंछे १५ कस्यार्थइमे प्राणिनः केहने अर्थेणजीवडा एते जीवा सुखिचिणः

कीदृशः सः महाप्राज्ञ महाबुद्धिमान् पुनः कीदृशः सजोविहितः जीवविपयेच्छित्तपुसः पुनः कीदृशः सातुक्कीशः सह अनुक्कीशिन वर्तते इति सानुक्कीशः सद्य अथवा जीवेहि निश्चयेन सानुक्कीशः सकरण तु शब्दः पदपूरी कीदृशं सारथैर्वचनं बहु प्राणि विनाशनं बहु जीवानां विघ्नतकारकं १८ [जइमज्जकारणाए गहम्मन्ति सुबह जियानसिएयं तु निस्सेयं परिलीए भविस्सइ १८] तदानीमि कुमार किंचित्तयतीत्याह यदि मस विवाहादिकारणेन एतेसु बहव प्रचराः जीवाः हनियन्ते मारयियन्ति तदा एतत् हिंसाख्यं कर्मपरलोकं पर भवेनि अत्र मत्त्याणकारि न भविष्यन्ति परलोकभीकृत्वस्य अत्यन्तं अथस्ततया एवं अभिधान अन्यथा भगवतश्चरमदेहलात् अतिशयद्रत्वात् कुत एव विधाचिन्ता इति भावः १८ [सो कुण्डलाणञ्जुयलं सुतगञ्ज महायसी आभरणाणिय सब्वाणि सारहि सपणामए २०] मनेमि कुमारी महायगा नेमिनायस्याभिप्रायान् सर्वेषु जीवेषु बन्धनीभ्योसुतेषु सत्सु

मज्झ कारणाएण हम्मिसितिसु बहुजीयानमं ए यंतु निस्सेमं परलीगे भविस्सइ १८ । सोकुंडलाण जुयलं सुत्तयंच ०
महायसी । आभरणाणिय सब्वाणि सारहिस्सपणामए २० ॥ मण परिणामिय कएदेवाय जहोइयं ससोइसा । सव्वि

विणाशनुं चितयति स महाप्राज्ञः नेमकुमार माहापंडित चिंतववालागा स्वकलकणी जीतेन्द्रियः जीवियुहितः करुणासहित सर्वजीवनेहितचित्तविके १८ यदि मम कारणात् एतलाजीवम्हरिकाजे हनिष्यंतेसु बहुजीवमारस्येए घणाजीव नच मम एतत् निश्चेयसं कान्याणं एमुभने विवाह कल्याणकारी नहीं परलीके हितायन भविष्यति परलीकने विपे हितकारी नहीहीई १८ स नेमि कुंडलानां युगलते नेमकुमार कानना कुंडलयगुल कटि मत्रं च महायशा कडनीकण्ठोरी आभरणानि सर्वाणि समस्तानि सर्व आभरणः सारथे प्रणामयेत् दटाति जतारीने सारथीने दिइ २० टीकार्थं मनी परि

चित्ताहिं २३] तत्र रेवतावले उद्याने सहस्रास्त्रान्निवने सप्राग. पुनरुत्तमायाः प्रधानायाः शिविकाया उत्तीर्णः सहस्रेण परिवृतः प्रधान पुरुष सहस्रेण सश्रुत सन् अथ चितायां चित्तानक्षत्रे निःक्लामति दीक्षां गृह्णाति पञ्च महाव्रतीच्चारणं करोति २३ [अह सीसुगन्धगन्धि ए तुरियं मउय कु चिए सय मेव लु चई केसे पञ्चसुद्वीहिं समाहिए २४] अथ पञ्चमहाव्रतीच्चारणानतर सनेमिनाथ स्वय एव ग्राहना एवलरित केशान् पञ्च सुध्या क्षलाशुषते कीदृशः सन् समाहित ज्ञानदर्शन चारित्र रूपसमाधि युक्तः सन् कीदृशान् केशान् सुगन्धगन्धिवान् स्वभापत. सुरभिगन्धान् पुन कीदृशान् मृदुक कुञ्चिताव् गृहवधते कुञ्चिताञ्च मृदुक कुञ्चितास्नान् सकुमालान् कुटिलान् २४ [वासुदेवोयण' भण्ड लुत्तके सञ्चि इन्द्रियं इत्यियमणोरहे तुरियं

चित्ताहिं २३॥ अहसे सुगंधगंधिए तुरियं मउय कुं चिए । सयमेव लुं चई केसे पंचमुद्धिं समाहिञ्चो २४ ॥ वासु देवोयण भण्ड लुत्तकेसजइन्द्र'दियं इत्यिय मणोरहेतुरियं । पाविसूतं दमिसूरा २५ ॥ नाणेणं दंसणेणं च चरितेण ०

ते हथी नीचा जतखाद्यपसहस्रेणःपरिवृतनेमिः हजार राजवोसंधानेप्रथानतर चारित्र प्रपद्यते चित्तानक्षत्रे चारित्रलीधीहजारजगसाधे २२ अथा नंतरं स भगवान् केशान् लुं चति कीदृशान् केशान् सुगन्धगन्धान् माथानाबालनीलोचकोधूं शोभं मृदु सुकुमालान् वक्रान् उतावला सुकुमाल वक्र धीटलीया वालकेसः स्वयमेव लुं चति केशान् आपणे हाथे लीचकरे पचमष्टिभि समाहित' पचमुष्टीं करी समाधीमांहिं २४ वासुदेवः मसुद्रविजयः नेमि प्रति भणति वासुदेव मसुद्रविजय नेमनाथने कहेछे लु चिति केगं जितेन्द्रिय लीचकीधीछे जितेन्द्रोयछे द्रुषितं मनोरथ सुक्तिरुप शोभं तुक्केजिकी मनोरथ कीधीछे सुक्तिनोतावलो प्राप्न, हि दांससरपामि हे दमीसर जितेन्द्रिय २५ लं ज्ञानेन दर्शनेनच ल ज्ञान करीदर्शन करी चारित्रेण चारित्रे

पात्रेभ्यः दमोसरा २५ । तदा वासुदेवः कृष्णश्चकारात् समुद्रविजयादि नैमिनाथ चित्तेन्द्रिय पुनर्गुप्तकैः कृतलोच इति वचन भणति
 इयायोऽपि दशाथ वृत्ति भोदमोखरदमिना जिर्दिश्याणा इश्वरीदमोखरस्तत्त्वबोधन हे दमोखरयतो वरदं पि सत वाञ्छित मनोरथ त्वरित प्राप्नुहि १५
 [नागेण दसण्ण चरित्ते ण तद्देययुवन्तो एमुत्तोए वट्टमाणो भवाहिय २६] पुनरायोर्वचन माह पुनर्द्वैत्वाभिन त्व आनेन दर्शनेन तथैव चारिणेण च
 पुन धात्वाचनया च पनर्नत्तानि लभित्वे न वडमानो भव २६ [एव ते रामकिसा दसाराय बहजणा अरिठ्ठनेमि वन्दित्ता अइगया वारागाउरि २७]
 एव अपुना प्रकारेण रामकिसवो च पनर्दयापि दयाहा च पुनवहवो अन्ये जनाद्यत्वारोवणा अरिठ्ठनेमि स्वामिन वन्दित्वात्तुवा नत्वाच नारिकापुरी
 अतिगता प्रविष्टा २७ [सोज्जण रायकत्ता पव्वज्ज माजिणस्सठ नोहासायनिराणन्द्या सोगण्य समुलया २८] साराजवरकन्या उद्यमेन नृपपत्नी

तहेन्य । खुतीए मुत्तीए वट्टमाणो भवाहिय २६ । एवते रामकिसवा दसाराय वट्टजणा । अरिठ्ठनेमि वदित्ता अइ
 गया वाराणापुरि २७ ॥ सोज्जण रायकत्ता पव्वज्जसा जिणस्सओ । निहासाय निराणदा सोगण्ड समुलया २८ ॥

करो तथैव तपसातिमतपकरी क्षमया क्षमाकरीते निर्लिभ निर्लिभतापणु वदमानोभवइतरवानकरीनेतू वदमानहोहिवधि २६ एवती उक्तवती
 रामकिसवो नलभद्र कृणो दयाहदिये दयाहं बहजना वोजा घणालोक अरिठ्ठनेमि वदीत्वा नैमिनाथने इमकहे वांदीने अति गता हारिकापुरी
 हारिकानगरी पाछायावा २७ युत्वा राजवरकन्या राजिमती राजिमती कनयाइ साभल्यो प्रवर्ज्या नैमजनस्य नैमिनाथे दीक्ष्यालीधो निहासा
 आनदरुधिता इपभागी इ श्रामननोरहि आनदरहितहइ गोकैन पुन ममुच्छिक्ता यकाकरी मृच्छाआवो २८ राजमती विसैएव चितयति राज

राजमतीशोकेन समुत्थाय समवस्तृता अवष्टब्धाव्याप्ता भूय इत्यर्थं किं कृत्वा जिनस्य नेमिनाथस्य प्रव्रज्यां दीक्षां श्रुत्वा कथंभूतासा नोहासा निगती
 हास्याः सानिर्हासा हास्यरहिता पुनः कौटुशासानिरानन्द्या आनन्दरहिता २८ (राईमई विचिन्तेई धिरत्यु मम जीविय जाहन्ते णं परिचत्ता सेयं
 पव्व इउ मम २९) साराजीमती मनसि विचिन्तयति मम जीवितं धिगसु या अहं तेन नेमिनाथिन परिब्रज्या अतो मम प्रव्रजितुं दीक्षां गृहीतुं
 श्रेय न तु गृहेस्थातुं श्रेय इतिभाव २९ (अहसा भमरसन्निभे कुंचफणग पसाहिए सयमेव लुं चईकीसे धिइमंता ववस्सिया ३०) अथ अनन्तरं सारा
 जीमतीस्वयमेव केगान् लुञ्चति कथंभूता साधृतिमतीवैर्ययुक्ता पुन कथंभूताथ्यवसितानियला धर्मं कर्तुं स्थिरा कौटुशान् केगान् लुञ्चफणगपसाहिए
 कुंचफनक प्रसाधितान् कुंचोर्गूड केशोक्शोषको वंशशिलाकारचितः केगसंस्कार करणोपकरणविशेषः फनको गजदन्तकाष्ठमयः ककतकः कुंचश्च फनकाश्च
 कुंचफनको ताभ्यां प्रसाधितां सस्युताः कुंचफनकप्रसाधितास्तान् पुनः कौटुशान् भमरसनिभान् भ्रंगवत्श्यामान् ३० (वासुदेवोयण भगव इ लुत्तकेसंजि

रायमई विचिन्तेई धिरत्यु ममजीवियं । जाहंतेणं परिचत्ता सेयंपव्वइउंमम २९ ॥ अहसा भमरसन्निभेजुं च फणग
 पसाहिए । सयमेव लुं चईकीसे धिइमंता ववस्सिया ३० ॥ वासुदेवोयणं भगव इ लुत्तकेसंजि इन्द्रियं । संसार सागरं

मति चित्तमाहिं इज चितवे धिक् मम जीवितं धिक्कार पडुम्हारी जीवतव्यने या अहं नेमनाथेन परित्यक्त्वा तिणे नेमिनाथे सुभनेच्छाडो श्रेय. प्रव
 जितुं मम श्रेय हुओ दीक्षानि २९ राजमती केगान् भमरसदृशान् क्षणान् कुचेर्विगमय तेन प्रसाधितान् उपाडितान् स्वयमेव लु चति केगान् आफरतो
 माशे लोचकरे धृतिमती व्यवस्थिता धृतिवतउद्यमवतंहरइ ३० वासुदेवः इट्टं भणितः वासुदेव इमकहे लुसफेणां जितेन्द्रियां केगलोच्याके इ द्रोवसि

द्वाभ्या भुजाभ्या सङ्गोफ परस्परवाहु सङ्गुम्फन स्तनोपरिमर्कटवन्ध कृत्वा ३५ [अहसीविराय पुत्ती समुहविलय गथी भीय पवेइय ददु, इम वक्क
 सुदाहरै ३६] अथानन्तर सोपि राजपुत्री समुद्रविलयाङ्गजी रथनेमिर्भोता प्रवेपिता कम्पमानां राजीमती साध्वी दृष्टा इद वाक्य सुदाहरैत् ३६
 (रहनेमी अह भदे सरुवेचारुमासणि मम भया हि सुतणू न तेपीलाभविस्सइ ३७) कि वाक्य उवाचेत्याह हे भद्र हे काथ्याणि अह रथनेमिरस्मि मां
 अन्य कमपि माजानोहि हे सरुपे सुन्दराकारे चारुभापिणि हे मधुरवचने हे सुतनुयोभन शरोरे कीमलगचित्रल मां भजस्वभर्तृत्वे न अङ्गीकुरुते तव
 पीडादुक्ख न भविष्यति मया सह वियय सुख भुंक्ष ३७ (एहिता भञ्जिमी भोए माणुक्खइ, सुदुल्लह भत्तभोएतथी पक्खा जिणमगच्चरिस्सामी ३८)
 हे राजीमति एहि मम समीपे आगच्छ तावत् आवा विपय भञ्जीवहि हे पिये खु इति निययेन मानुष मनुष्य जन्मदुर्लभ वर्त्तते ततोऽनतर आवा

रहनेमी अहभदे सरुवे चारुभासिणी । मम भयाहि सुतणूतेपीला भञ्जिस्सइ ३७ । एहिता भु जिमीभोए माणुक्खवु
 सुदुल्लह । भुत्तभोगी तथोपक्खा जिणमग चरिस्सामी ३८ ॥ ददुण रहनेमित भगजोय पराद्वय । राडुमई अस्समता

राजिमतोने धूजतो कापतो देखोने इद वाक्य उक्तवान् इत्यु वचन कहवालागु २६ रथनेमि अह भद्रे त्वा माजानाहि हे भद्रेह रथनेमिणु हे
 सरुपे हे चारुभापिणी हे सरुपे हे मोठावोलीहेमम भजस्व सुटुतगु सुभने भजि सेविन्हारु पणि शरीरभलू के सुभयको भयमतमाने न तव पीडा
 भविष्यति तुम्हनेकाइ पोडा नही होइ ३७ आगच्छ पूर्व आवा भु जावहे भोगान आत्रित्पेहेला आपणभोग भोगयोने मानुष निययेन दुर्लभ वर्त्तते
 निययस्य मनुष्ये भद्रोहोलीके भुत्तभोग्य पुन पद्यात् भोगभोगवीनेपछे वार्दिकेजनमार्गं चरिथामि दृढावस्थाइ जिनमार्ग आदरस्यु ३८ दृष्टा च रथ

भुक्तभीगीभूत्वापश्चाज्जिनमार्गं जिनोक्त धर्मं चारिल धर्मं मोक्षमार्गं चरिथावः पूर्वं भुञ्जते ततोदीक्षा गृह्यते तदा भुक्ता भोगत्वेन पुन भोगसुखेषु मनीनस्थाव तस्मात् पूर्वं अधुनायथेच्छं भोगसुखं भोक्तव्यं इति भावः ३८ (ददृशुरहर्निमिं तं भगजीय पराइयं राइ मई असम्भन्ता अप्पाण सम्बरेतहिं ३९) तदा राजीमती असंभ्रांतासतीनिर्भयासती तथा ज्ञात अहं बलाकारेणापि शीलं भक्ष्यामि इति निश्चित्य अस्तस्तासती आत्मानं ग्ररीर वस्त्रै संश्रयोति आच्छादयति गुफामध्यं एवस्थितासती इति शेषः किं क्लारयनेमिं भग्नयोगं दृष्ट्वा भग्नो नष्टो योगः संयमीत्साहो यस्य स भग्नयोगस्तं स्त्री परीषहेण पराभृतं रथनेमिं ज्ञात्वा ३९ (अह सारायवरकन्ना सुट्टियानियमव्वए जाई कुलञ्च सीलञ्च रक्खमाणीउ तयंवर ४०) अथानंतरं भग्नयोगस्य रथनेमेदर्शनादनन्तरं साराजवरकन्या राजीमती साध्वी तदा वदति कीदृशीसानियमव्रते सुस्थितानियमे शीच सन्तीषस्वाध्यायतपो लक्षणेस्थिरा तथा व्रते पञ्चमहा व्रतलक्षणेस्थिरा पुनः सा किं कुर्वीणाजाति कुले प्रतिसंरचमाणा च पुनः शीलं प्रति संरचमाणा तत्र मातुर्वंशोजाति पितुर्वंशः कुलमुच्यते तयोरुभयोरपि नैर्मल्यं विदधती इत्यर्थः ४० (जइसि रूवणवेसमणो लल्लिएणं नलक्खवरो तहावितेन इच्छामि जइसि सक्खं पुर

अप्पाणं संबरेतहिं २९ । अहसाराय वरकन्ना सुट्टिया नियमव्वए । जाईकुलंच सीलंच रक्खमाणी तायवए ४० ॥

नेमि राजिमतो रथनेमिने भग्नयोगः सयमे उत्साहरहितं स्त्रीपरिषहेजितं सयमनेविखे उत्साहरहित राजिमती असम्भ्रांता राजिमती असंभ्रांतायकी आत्मानंचीवरै आच्छादयति आपणु सर्वशरीर लूङ्गासुडाकीने ३९ अथ स राजीमती प्रधान राजकन्याहिवे राजमती प्रधान कन्याः सुस्थिता सति नियमे व्रते आपणाव्रतने विखे दृढेके जातिकुलं च शीलं च जाति कुल शील रत्नमाणातं जल्पतिराखीतीयकी तेहने कहेके ४० यद्यसि त्वं रूपेण

न्दरो ४१) भोरथनेमेयदिल रूपिण वै यमणो धनदोसि यदि पुनर्लक्षितेन मनीहरलाषण विलासेन नलक्वरेदेवविशेषीस पुनयदि हे रथनेमेल साचात् प्रयच्च पुरन्दरोसि इन्द्रावतारोसि तथापि अह त्वा न इच्छामि भोगार्थं नाभिलषामि ४१ (पखदेजलिय जोद्र धूमकेतुदुरासय नैच्छन्ति वन्तगभोत्त कुलेजाया अगन्धने ४२) हे रथनेमे अगन्धने कुलेजाता उत्पन्ना अर्थात् अगन्धन कुलीयन्ना सप्पावान्त विप भोत्तु पुन पद्याद्दृहीत न इच्छन्ति न याच्छति ज्वलत् धूमकेतोरन्नेभ्योज्योतिर्ज्वालां प्रस्कन्देत् इति प्रस्कन्देयु प्राकृतित्वात् बहुयचने एकवचन अगन्धनजातीया सर्पाअग्नि ज्वालां प्रविशेयु नतु उद्गीर्णं विप पद्याद्दृग्दहन्ति कीदृश धूमकेतोर्ज्योति दुरासद दुसह इत्यर्थं ४२ (धिरत्यतेजसोकामीजीतजीवियकारणा यत्त इच्छसि आविउ सेयन्तेमरण भवे ४३) हे अयश कामिन् हे अकीर्त्तं वाष्कक अथवा हे अयश हे कामिन् त्वाधिग अन्ततानीयि

जद्रसिखेण विसमणो ललिएण नलकुवरो । तहावि तेनद्रच्छामि जद्रसिसक्व पुरदरो ४१ ॥ पखदे जलियजोद्र धूमकेतु दुरासय । नैच्छतिवतयसुत्त कुलेजाया अगधर्णे ४२ । धिरत्युते जसोकामीजीतजीविय कारणा । वत

धनदोसि यद्यपि तु रूपे करो धनदसरिखीके लनेन विलासेन नल कुवरो देवविशेषीसिजी तु विलासे करो नल कुवरे सरिखीछे तथापि त्वा न वाक्कामितोपिण्डु तुम्हने वांशु नही यदि त्व साचात् पुरदर जी तु साचात् इद्रतो पिण तुम्हने न वांशु ४१ प्रस्क दति ज्वलत योति अग्नि यलतो आगमाहिप इसे धूमकेतु दुरासद धूआडोचिद्रुहे दुसहके एहवो अग्निसेहे पर वाल्त भोत्तु न इच्छति पणिवम्यु मिरीलेवानहीहे अगधन बुसे समुत्पन्ना सपा अगधन कुले उपनासर्प ४२ धिगसु पुरुपत्व तवहे अयश कामिधिकारताहरा पुरुपाकारने यदि त्व जीवित कारणात् जी तु जीवित

विडोब्वहडो अडि अण्पाभविस्ससि ४५] हे सुने यदित्वं भव भोगभिलाप करिथसि यां यां नारीद्रक्षसि अथात् या यां सुरूपं नारीहृद्वा भोगभिलाप करिथसि तदा त्व अस्त्रिरात्मा अस्त्रिरचित्तो भविथसि कइव ताविडोहठ इव हठोयनस्यति विद्वेष शेवाल यथा पानीयो परिशेवालो यातेन प्रेरितो ऽस्थिरोभवति तथाचमपि अतिरूपयती कामिनी हृद्वा कामाभिलाषीसन् अस्त्रिरचित्तो भविथसि ४५ (गोवालो भण्डवालो वा जह्वातहव्वनिस्सरो एव अण्णरोत पिसामन्नभविस्ससि ४६) हे सुने तथात्वं अपि यामण्यस्य साधुधम्मस्य अनौग्वरो भविथसि भोगभिलाप करणे न स यमफलस्य अभीजा भविथसि क इव गोपाल इव वा अथवा भण्डपाल इव गा पालयतीतिगोपालीगोरक्षक इदर पूरणार्थं परकीयगोचारक पुनर्भाण्डानि परकीय क्र्वाणकयस्सूनिभाटकादिना पालयतीति भाण्डपालक गोपालोगवां स्वामीन भवति तद्रक्षणात् इदर वृत्तिंमात्रं पल भाक स्यात् नतुगवां स्वामित्वं

धर ४४ ॥ जद्रतकाहिसिभाव जाजादिस्ससि नारीञ्चो । वायाविडोब्वहडो अडिअण्पा भविस्ससि ४५ । गोवालो भड
वालोवा जहा तद्वच्चणिसुरो । एव अणिसुरोतपि सामन्नस्य भविस्ससि ४६ । कोहमाण निगिण्हिता माय लोभेच

समनसाधरोस यायाद्रघसि नारो जे जे रूपवत स्त्रोनि देखेनि तदावात विडोहठैव हृच्चैव जिम वायरे करोनि सेवालच्छरुपरह फीरे जोहवीना अस्थि
रात्मा भविथसि ते हृच्चनोपरित् पिए अस्त्रिरात्मा होयिस ४५ यथा गोपाल जिम गोवालिया अने क्रियाणानो पालकर खवालो यथा
द्रव्यस्य अनौखरोभवति जिम ते द्रव्यनो धणो न होइ केवल रखवालोहोइ वीलसधानो रखवालीनहीथाइ एव अनिद्धरस्वमपि इम अनौखर अठाकुरतु
पणि यामन्नस्य चारित्तस्य भविथसि तिम चारित्त अठाकुर चारित्त रहितथासी ४६ क्रोध मान च जित्वा क्रोधमान वसिकरो जीता माया नृपावाद

फलभाक् तथा पुनर्भाण्डपालः क्रयाणकाधिपेन क्रयाणकरचार्यं रक्षितः पुरुषः क्रयाणकानां ईश्वरत्वफलभाक् न भवति उदरपूर्तिमात्रं फल भागेव भवति ईश्वर फलभाक् तु अपर एव तथात्व मपि आमख्यविषयारकत्वेन द्रव्य धर्मपालकत्वात् उदर पूर्तिफलभाग् वर्त्तते नतु भाव धर्मफलस्य मोक्षस्य ईश्वरोभविष्यसि इति भावः ४६ [कीहं माणं निगिण्हत्ता मायं लोभं च सव्वसो इन्द्रियाइं वसेकाउं अप्पाणं उवसंहरे ४७] [तीसिसीवयणं सुच्चा सञ्जयाएसु भासियं अणुसेण जहानागो धम्मं सम्यख्खिवाइंओ ४८] युग्मं सरथनिमिः इन्द्रियाणि वशीकृत्य आत्मानं उपसंहरति स्थिर करोति विषयेभ्योनिवारयति किं क्लला क्रोधं मानं मायां च पुन सर्वथालोभं निगृह्य अत्यन्तं जित्वा एवं रथनिमिः आत्मानं धर्मे दृढश्चकार एतदेवोक्तं दृष्टान्तिन दृढयति तस्याः राजीभत्याः सञ्जत्याः साध्याः सुभाषितेन सरथनिमिः पूर्वं धर्माङ्गुष्टो धर्मे सम्प्रति पातितः धर्ममार्गैस्थापितः केनकइव अङ्कुशेन नागइव यथा अङ्कुशेन नागोइस्त्रीमार्गाङ्गुष्टो मार्गैस्थाप्यते तथारथनिमि रपि ४८ (मणगुत्तो वय गुत्तो काय गुत्तो जिइदिओ सामन्नं

सव्वसो । इंदियाइं वसेकाज अप्पाणं उवसंहरे ॥ ४७ ॥ तीसिसा वयणं सीच्चा सजयाए सुभासियं । अङ्कुसेण जहा नागो धम्मं संपडिवाइओ ४८ ॥ मणगुत्तो वड्ढगुत्तो कायगुत्तो जियंदिओ । सामन्नं निच्चलं फासो जावज्जीवं

सर्वथाः माया लोभं च सर्वतः इंद्रीयाणी वशीकृत्वा पांचद्री वसिकरीने आत्मानं उपसंहरत् संचरत् आपणो आत्माने भोगथी संवरो ४७ तस्या राज्य मत्वा वचनं रथनिमि श्रुत्वा ते राजमति तु वचन सांभलीने संयत्वा सुभाषितं संयती साध्वीनां वचन सांभलीने अंकुशेन यथा नागीहस्ति जिम अंकुशे करी हाथो पाळीफेरे धर्मेण प्रतिपादितः तिम राजिमतीइं रथनिमिने पाळी धर्मेने विश्वे आण्थो ४८ अथ रथनिमि मनोशुभं वचनगुप्तः मग

निश्चलफासे जावज्जीव दृढत्वए ४८] यदा साधुमार्गे स्थिरोभूत्तदा कीदृशोभूदित्याह मनसागुप्ती मनगुप्त गुप्तमना तथावच सागुप्ती वचोगुप्त गुप्तवाक तथापुन कायेनगुप्त कायगुप्ती गुप्तकाय इति गुप्तित्वयसहित पुन कीदृशो जितेन्द्रिय वगीकृतन्द्रिय एतादृशो रथनेमियावज्जीव दृढव्रत सन् आमण्ड चारित्र धम निश्चल यथा स्वात्तथाम्ययति सम्यक् क्रियानुष्ठानेन पालयति ४८[उग तवचरित्ताण जायादुवियिकेवली सव्य कर्म खवित्ताण सिद्धि'पत्ता अगुत्तर ५०] अनुकर्मण तेरे द्वौ अपि राजीमती रथनेमी केवलिनो जातो कि क्त्वा उग्र अन्वै कर्तुमशक्य तपयदित्वा तप' क्त्वा अतुकर्मणच सर्वाणि कर्माणि चपयित्वा पुनस्तौ अनुत्तरां सर्वोल्कृष्टा सिद्धि मोचगति प्राप्नो ५० [एव करति सबुद्धा पडियापवियक्त्वा विणियदृति भोगेसु जहासे पुरि

दृढत्वचो ४८ ॥ उग तव चरित्ताण जाया दोन्निवि केवली । सव्य कर्म खवित्ताण सिद्धि पत्ता अगुत्तर ५० ॥ एव
करतिसबुद्धापडियापडियक्त्वा । विणयदृति भोगेसु जहासिपुरिसोत्तमोत्तिवेमि ५१ ॥ रहनेमिक्त्वाअयणसमत्त ॥ २२ ॥

वचन काया गुप्त काया गुप्तयान् जितेन्द्रिय कायागुप्त जोत्याद्धे इन्द्रिय चारित्र निश्चल सेवितधान् चारित्र सूडपालयालागी जावज्जीव दृढव्रत गन् जावज्जीव दृढव्रत पालोनोयल मनकरो ४८ उग्रतपो अनग्रनादि क्त्वा उग्रतप करोने जातीहावपि केवलिनो दीद्र राजिमती रहनेमी केवलीयया सर्वे कर्म चपयित्वा सर्वे कर्मणको योम सुक्त कर्म खपावोने सिद्ध प्राप्नो सर्व उत्तमां सुक्तिपोद्धता सिद्ध ऋषा प्रधान ५० एव शूर्यति नात तत्वा तत्वना जाण साधु इम कहेशे पडिता प्रविचचणा पडित शास्त्रना जाण विचचण विनिवर्त्तति भोगेसु भोग थकी निवर्त्त उसरे यथा सरह नेमि पुरपीचम इति यवीमि जिम रहनेमी भोगीयी निवल्थी तीमनीवर्त्तीद्र ५१ इति हाविद्यतीतम रहनेमीवत्त्व्यता अध्ययन सपूर्ण ॥ २२ ॥

इतथ समहोरगनायक पञ्चम पृथिवीत उद्वृत्तिकथ त ससारभ्रान्त्वातस्येवत्वसनगिरि समीपे भीमाट्यां जातोवनेचरद्यण्डाल तेनाखिटकनिमित्त
निर्गच्छतादृष्ट प्रथम स साध तत पूर्वभव वैरवयतीऽपश्यकुनेयमिति कृत्वा वाणेन विड तेन विधुरीकृतपेदनो विधिनान्मृत्वावध्वनाभीमनिर्मध्यम
पैदेयके लनिताङ्गोनाम देयीजात सीपि चाण्डालवनेचरस्त विपन्न महामुनि दृष्ट्वाऽहोह मया धनुर्इन्द्रति मयमानोनिक्काचित क्रूरकर्माफालेन
मृत्वा सप्तमे नरकेनारकत्वेन समुत्पन्न वज्रनाभदेवस्ततयगत इहैवजम्बूद्वीपे पूर्वविदेहे पुराणपुरेकुलिगवाडुरात्र सुदर्यनादेव्या कानक प्रभोनाम
पुत्रीजात स चक्रमेण चक्रयत्तीजात अन्यदा प्रासादो परिसस्थितेन आकाशे निर्गच्छन् देवसङ्घातो दृष्ट तद्दर्शनादेव विज्ञात जगन्नाथतीर्थकरागम
स्य निर्गतस्तद्वन्दनार्थं वन्दित्वा च तत्रोपविष्टस्य तस्य पुरतो भगवतादेशनाकृता ता च श्रुत्वाहृष्टस्रकयत्तीवन्दित्वा स्व नगया प्रविष्ट अस्यदाकनक
प्रभनामा चक्रवर्तीतां तीर्थं करदेयनो भावयन् जातजातिस्मरण पूर्वभवान् दृष्ट्वा भव विरक्तचित्त प्रव्रजित इतथ स क्रमिण विहरन्न सीचीरवनाट्यां
क्षीरपवते सूर्याभिमुखकायोत्संगस्थित इतथ स चाण्डालवन चरन्ततो नरका दुदृत्यस्तस्यामिषाट्यां क्षीरपर्वतगुहायां सिद्धीजात स च भ्रमन्
कथमपि सप्राप्त मुनिसमीपे तत समुच्छन्तित पूत्र वैरण तेन विनायित समुनि समाधिनाकाल कृत्वा निवदतीर्थं करनाम कर्मा प्राणतकल्पे
महाप्रभोविमाने उत्पत्तीविव्रति सागरीपनायुदेव सीपि सिद्धी बहुल ससार भ्राल्वाकमवयाद्वाद्गणोजात तत्रापि पापीदयवयेनजातमात्रस्य पिष्ट
माट् स्वाट् प्रमुणु सकलोपि स्वजनयग चय गत स च दयापरेण लोकेन जोवित सप्राप्त योवनोपि कुरूपो दुर्भंगोदु खेन इत्ति कुर्वन् वैराग्य
मुपगतीवने कन्दमूल फलाहारस्तापसीजात करोति बहु प्रकार अन्नान तपोविशेष इतथ स कनक प्रभ चक्रवर्त्तिदेव प्राणतकल्पात् चैत्र कृष्ण
चतुर्था ण त्वा इहैवजम्बूद्वीपे भारती शैवेकायोदियेवाराणस्था नगर्यां भ्रखसेनस्य राज्ञो वामादेव्या कुचीमध्यरात्रि ममयेविद्याखानचक्रे तयोयिथति

तमतोर्थं करत्वेन समुत्पन्न तस्यासिव रात्रौ सावामादेवो चतुर्दश स्वप्नान् ददर्शनविद्ययासास च राज्ञः तेनापि राज्ञा अतीवानदमुद्वहताभङ्गितं प्रिये सर्वलक्षणं सम्पूर्णं सरः सर्वकलाङ्गलस्तव पुली भविष्यति तद्वच युत्वा सृष्टं परितुष्टामा प्रभति च राज्ञा स्वप्नपाठकाना ह्यतान् यथाया नाचख्यौ तेषु पूर्णं स्वप्नाध्याय सविस्तरमाख्याय चतुर्दश स्वप्नानां फलसिवाहः तीर्थकरमाता चक्रयत्तिमाता वा एतावत्तुदशस्वप्नान् पश्यति ततोऽस्याः कुञ्जीतीर्थं करश्चक्री वासमुत्पन्नीः ततोऽपि स्वप्नासुरासुरेण पूर्णेषु मासेषु गृभवेनायां भगवान् जातः षट् पञ्चागदिक् जुमारोभिर्ज्जनामहोत्सवः पूर्वं ज्ञातः ततः स्वासनकम्पादिज्ञात भगवत्पञ्चाभिषिक्त गक्रैर्मेरुमिसि जन्माभिषिक्त ज्ञातः प्रभति चान्गरीनीपिनगरान्तर्द्गाहिज्जोलयं ज्ञातवान् अस्मिन् गर्भस्थिते भगवति जनन्या पार्श्वे गच्छन् सर्पारात्रौ दृष्ट स्ततोत्य पागं इति नाम ज्ञातं ततः कल्पतरुवज्जनानन्दक स भगवान् इति प्राप अष्टवर्षिकश्च भगवान् सर्वकलाङ्गुयन्त्री वभूव अथ भगवान् सर्पगनीहर यौवनं प्रापपिचा च तदानीं प्रभावतीं कन्या परिणायितः भगवान् तथा सम विषयसुखं बभूजे अन्यदा भगवता प्रासादो परिगवाञ्जालखेन दिगावलीकनं युर्वता दृष्टोनगर नीकः प्रवर कुगमहस्तो बह्निर्गच्छन् एष्टं च भगवता कौस्य चिस्वार्खवर्त्तिन भो किमदाकनित्ययोत्सवोस्मिन्नेपजनः पुष्पहस्तो बह्निर्गच्छन्स्ति तेन पुरुषेणोक्तं प्रथमोपि पर्वोत्सवोनास्ति कि तु कमठीनाम महातपस्वी पुरीवह्निः समागतीस्ति तद्वदनार्थं प्रस्थितोयञ्जनः ततस्माद्यचनमाकर्ण्य जातकीतुक विजयी भगवान् तत्र गतः पञ्चाग्निपः कुर्वाणः कमठं पृष्टवान् विज्ञानवताभगवताज्ञात एकस्मिन्नग्नि कुण्डे प्रचिन्नातोपसङ्गन् काटमध्ये प्रज्वलन् सप्यः उत्पन्न परमकर्णेन भगवताभङ्गितं अहो अकष्टमज्ञान यदो दृशेपि तपसि क्रियमाणेद्या न ज्ञायते तत कमठेन भङ्गितं राजपुत्राः जुञ्जर तुरात्रम मेव जानन्ति धर्मन्तु मुनयएव विदन्तीति ततो भगवता एकस्य स्वपुरुषस्य एवमादिष्टम् अरे इदमग्निमञ्चे प्रचिन्न काटं कुठारेण दिधाङ्गुर्तेन पुरुषेण

तत्काट दिधाकृत तत्र दृष्टो दृष्टमान सप्य तस्य भगवता स्व वर्देन पयपरमेष्टि नमस्कारा प्रदापिता नागीपि तत्रभावात्प्रवृत्त्वा
 समुत्पद्यो नागलीके धरणीन्द्रोनाम नागराजा लोकैश्च अहो भगवतो ज्ञानयत्किरिति भण्डिमं हान सत्कार कृत ततोविलची भूत कमठ
 परिव्राजको गाढमन्त्रान तप कृत्वा मेघकुमार निकायमध्ये समुत्पद्यो मेघमालो नाम भुवनवासी देव अन्यदा सुखेन तिष्ठन्तो भगवतो
 यस्तस्यसमय समागत तद्प्रापनार्थम उद्यानपालेन सहकार मञ्जरी भगवत समर्पिता भगवता भणित भोकिमेतत् स आह भगवन् बहुविध क्रीडा,
 निवासो वसन्तसमय प्राप्त ततो मित्तप्रेरित श्रीपार्श्वकुमारी वसन्तक्रीडा निमित्त बहुजन परिवार समन्वितो यानारूढो गतो नन्दन वन तत्र याना
 त्समुत्तोर्यनिपथो नन्दनवन प्रासाद मध्यस्थित कनकमयसिंहासने अतिरमणीय नन्दनवन सर्वत पश्यन भित्तिस्थ परम रम्य चित्र दृष्ट्वा अहो किमत
 त्स्त्रिष्वित प्राणमिति सम्यग निरूपयता भगवता दृष्टम् अरिष्ट नेमि चरित ततश्चिन्तितु प्रवृत्त धन्य सोऽरिष्ट नेमिर्यो विरसावसान विषयसुखस्युक
 स्य निर्भरादुरागा निरुपमरूपलायणो जनकवितोर्णा राजकन्याश्च त्यक्त्वा भग्ममदनमण्डल प्रचार कुमारएव निष्कांत ततोहर्मपि करोमि सर्वं सद्ग
 परित्यागम् अत्रात्तरे लोकान्तिकादेया स्त्रागात्य भगवत्त प्रतिवीधयन्तिस्म ततो मार्गणगणस्य यथोत्पत्त सास्वत्तरिक दान दत्त्वा भगवान माह्यपित्वा
 यदुश्रया महामह पूर्वम आयम पद्योयानेऽगो कपादपम्याध पौपशुद्धैकादशीदिने पूर्वार्द्धसमये पञ्चमीष्टिक लोच कृत्वा अपानकेन अष्टम भक्तेन एक
 देव दूष्यमादाय त्रिभि पुरुषयतै सम निन्द्यात अथ श्रीपार्श्वो भगवान् विहरन्नेकदावटपादपाध कायोत्कर्षेणस्थित इत्यथ सकमठजीवो मेघमालो
 असुरोवधिना ज्ञात्वा आत्मनो व्यतिकर स्मृत्वा च पूर्वभव वैरकारण समुत्पन्न तीव्रामर्षं समागत स्तत्र प्रारब्धा स्तेनानेक सिंहादिरूपैरनेके लपसर्गा
 तथापि भगवान् श्रीपार्श्वोऽस्यो धर्मध्यानान्नचलित तादृश त ज्ञात्वा कमठए वक्षितयामास अह मेन जलेन प्रावयित्वा भारयामीति ध्यात्वा भगवदु

परिष्ठास्यहामिष वृष्टिचकार जलेन भगवदङ्गं नासिक्ता यावद्व्याप्तम् पदान्तरे कल्पितासनेन परमिन्द्रेण अथधिनाशात् भगवदातिक्रमसमागल्य स्वामि
 शोषीपरि फणि फणाटोपं कृत्वा फणि शरीरिण भगवच्छरीर मादुल जलीपसर्गेन निवार्य भगवत्परी विस्र वोणा गीत निनादैः प्रवर प्रेक्षणं कर्तुं भारथ
 वान् कमठा सुरस्ताड्यम् गवीथ्यं भगवन्तं धरणेन्द्रप्रत महिमानेन दद्या सगुपगात्त दर्पी भगवत्परी प्रणव्यगतो निजस्वाने धरणेन्द्रोपि भगवन्तो
 निरुपसर्गं ज्ञाला सुला च मखानं गतवान् पार्ग्वीनामिनो निजमण्डिरमागतुर्योति तमेन्द्रिये चेत ज्ञादास्यन् अष्टमशक्तेन पूर्वात्ममयेज्योक्त
 तरोरपः शिलापट्टे सुख निपणस्य प्रभयानेन चीणघाति कर्म्ये चतुःस्य सकर्गोका जभासि ज्ञानं समुत्पद्यं चन्दितामनैः शक्रे स्तयागल्य केवल
 ज्ञानीत्सवी महान् कृत पाग्वीर्हन् सप्तफणा नाब्धनी वामदक्षिणपाग्वीयोक्ता धरिन्द्राभ्या एयं पश्चिमान प्रियत्रयं देवी नन्दरुद्र शरीरो भव्यमलान्
 प्रतिबोधयन् चतुस्त्रिगदतिग्रयसमेत पुत्रियोमगङ्गेने विदरति पार्गं भगवतो दृग्गणागणधरा एभयन् प्रायेन्द्रिय प्रमुखा पोडगसल्म साधयोऽभयन्
 पुष्कचूला प्रमुखा अटति गत्सहरार्यिकाऽभवन् सुनन्दप्रमुखाः एवगङ्गं चतुःपट्टिमङ्गाय एभयन् सुनन्दाप्रमुखाः यमनोपासिका नक्षत्रय
 सप्तविंशतिसहस्राद्याऽभवन् सार्त्रेचीणि गतानि चतुर्दशपूर्वाणाम् एभयन् अत्रभिज्ञानिनां चतुर्दशगतानि केवलि ज्ञानिनां दृग्गतानि वैक्रियलभिमतां
 एकादशगतानि विपुलमतीनां सार्त्रे लीणितानि वादिनां पट्टगतानि यस्तेवासिनां दृग्गतानि मिति गतानि पार्थिकाला विगतिगतानि सिद्धानि
 अत्रुत्तरीपपातिकानां द्वादशगतानि एभयन् त्रीपार्गं नाद्यस्य एतापरिवार सम्पदा एभयन् ततः पार्गी भगवान् देवोर्नानि सप्ततिर्धर्षणि केचन पर्यायेण
 विह्वल एकं वर्षगतं सर्वायुः परिपाल्यसमेत यिसुरे अर्तुगितएवायः कृतपाणि निषाणमगमत् तत्कनेपरं संस्तारोत्तयः यकादिभि सुतै व यिहित इति
 पार्गनाय चरित्रम् ॥ अथ सूत्रं [त्रिणि पासित्तिनामिण अरुहानोगण्डण संपापायसञ्चनू धम्मत्तिगवरेजिणि १] पार्गं इति नामार्हेन एभत् तीर्थं

करोभूत् कोदय स जिन परोपहोपसर्गजेता रागदेधजितावा पुन कोदय स पार्खं जिनीलोक पूजित लोकेन त्रिजगता अर्चित पुन कथम्भूत स सम्यस्या सबुहात्मा तत्वाव बोधयुक्तात्मा पुन कोदय स पार्खं सर्वज्ञ पुन कोदय पार्खं धम्मतीर्थकर धम्मएव भवां बुधितरणहेतुवात्तीर्थं धम्मं तीर्थं करोतेति धम्मतीर्थ कर पुन कोदय जयतिस्स सर्वकर्माणीति जिन द्वितीय जिन विशेषणे श्रीपार्खस्य मुक्ति गमन सूचित तदाहि श्रीमहा बोर प्रयच तीर्थकरो विहरति श्रीपार्खं नाथसु मुक्ति जगामितिभाव १ [तस्मलीगप्पइवस्स आसिसीसे महायसे केसीकुमार समणे विज्जाचरण पारगे २] तस्य लोक प्रदोपस्य श्रीपार्खं नाथ तीर्थकरस्य केयीकुमार श्रिय्य आसीत् कुमारोहि अपरिणीत तथा कुमारत्वे न एव अमण सगृहीत चारिन् कुमार यमण केसिकुमार अमण कथम्भूत स महायया महाकीर्त्तिं पुन कीदृशी विद्याचरणपारग ज्ञानचारिन्चयो पारगामी २ [ओचि

जिणे पासिसि नामेण अरहालोग पूइए । सबुदप्पाय सव्वसू धम्मतिल्ययेरेजिणे १ ॥ तस्स लीगप्पइवस्स आसिसीसे महायसे । केसीकुमार समणेविज्जाचरणपारगे २ ॥ ओहिणाण सुएवुइे सिस्ससध समाउले । गामानुगाम रीयते ।

जिन परोसह उपसर्गानो जोपणहार पार्खं एहवे नामे अरिहत कम्मरूप वयरीयानो हरणहार भव्यलोकै पूजणहार तत्तनोजाणणहारके आत्मानवल्लोसर्वज्ञ धम्मतीर्थनी करणहार जिण वीतराग केवली १ तस्य लोकप्रदोपस्य तेह पार्खं नाथ लोकप्रदोपनेआसीत् श्रिय्यो महायया एकशिय्यके महाययनीधरणहार केयीकुमारयमण केयीकुमार यमणके ज्ञान चारित पारगामी २ अर्वाधिज्ञानश्रुताभ्यां ज्ञात ह्योपादिय अर्वाधि ज्ञानश्रुत पांन करो सर्वजाणेहे मोथसध समाकुल घणाश्रिय्येहे जेहने यामानुशाम विहरन यामानुशामि विहार करता यावस्सा

नाणसुए बुधे सोचसहसमाजले गामाणुगामं रीयते सावत्थिं नगरिमागए ३] स केशीकुमार अमण आवत्थां नगर्थ्याम् आगतः कि कुर्वन् यामागुगामं रोयन्ते इति ग्रामानुगामं विचरन् कीदृशः श्रीहिनाणसुए बुधे इति अवधिज्ञान शुताभ्यां बुद्धीऽवगत तत्वः सति शुतावधिज्ञानसहित पुन कीदृशः शिष्य सवसमाकुलः शिष्यपुर्गसहित. ३ (तिंदुयं नाम उज्जाण तस्मीनयरमण्डले फासुए सिज्जसंथारे तत्त्ववास सुवागए ४) स केशीकुमार अमणसूत्र आवत्थां नगर्थ्यां तस्याः आवत्था. नगरमण्डलेपुर परिसरे तिंदुकं नाम उद्यानं वर्त्तते तन्नोद्यानि प्रासुकं प्रदेशे जीवरहिते शय्यासंस्तारे वास उपागतः शय्यावसति स्थास्यां संस्तार सथ्यासंस्तारस्त्वस्मिन् समवष्टत इत्यर्थ ४ [अहतेणिव कालेण धम्मतित्ययरेजिणे भगवं वडमाणीत्ति सब्वलीगम्मविस्सुए ५] अथ शब्दो वक्तव्यांतरोपन्यासे तस्मिन् एवकाले धर्म तीर्थकरोजिनो भगवान् श्रीवर्द्धमान इति सर्वलोकं विन्द्यतीभूत् ५ (तस्स लीगपईवस्स आसिसीसे महायसे भयवं

सावत्थिं नगरिमागए ३ ॥ तिंदुयं नाम उज्जाणं तस्मीनयर मंडले । फासुएसिज्जसंथारे तत्त्ववास सुवागए ४ ॥
 अह तेणवकालेणं धम्मतित्ययरेजिणे । भगवं वडमाणीत्ति सब्वलीगम्मि विस्सुए ५ ॥ तस्स लीगपईवस्स आसिसिसिस्से

नगर्यां समागताः सावत्थीनगरीनि विखे आत्था ३ तिंदुकं नाम उद्यानं ते नगरीनि विखे तिंदुकनामे वनछे तत्र आयत्थां नगर परिसरे सावत्थीनगरीने पासे प्रासुकेशिज्यासंस्तारे फासुसथ्या संथारोलेईने तत्र वासं उपागते वनसांहिरहा धम्मध्यानमाहिं वर्त्तंछे ४ अथ तस्मिन् काले हवे एहवा अवसरने विखे धम्म तीर्थं करो जिनो वर्त्तते धम्मतीर्थं कर जिनछे भगवान् वर्द्धमानेतिनामा श्रीवर्द्धमान स्वामी सर्वलोकं विख्यातः सर्वलोकने विखे विख्यात वंत ५ तस्य लोके प्रदीपस्य ते लोक प्रदीपनी महावीरनी आणीत् शिष्यो महायथाः ह्यश्री महायशनी धणी शिष्य भगवान् गीतमनाम्ना भगवंत गीतम

गीयमेनाम विज्जाचरणपारगे ६) तस्य श्रीवर्द्धमानस्वामिनो लोकप्रदीपस्य तीर्थकरस्य गीतमनामा शिथीभूतकथभूतो गीतमीमहायथा महाकीर्त्तं पुन कोट्टयो गीतम विद्याचरणपारग ज्ञानचारित्रधारी पुन कीटयो गीतमी भगवान् चतुर्भ्रान्तीमति श्रत्यवधि मन पर्याय ज्ञानयुक्त ६ (वारस ग विज्जुद्धे सीसस घ समाजले गामाणुगाम रोद्धनेसीविसावत्यिमागए ७) स गीतमीपि ग्रामानुग्राम विहरन् श्रावस्थां नगर्यां आगत कोट्टयो गीतमी द्वादयागवित् एकादयागानि दृष्टिवादसहितानि येन गीतमेन सपूर्णानि ज्ञातानीत्यर्थं पुन कोट्टयो गीतमी बुद्धी ज्ञाततत्व पुन कोट्टय शिथ्यसघ समाजुल ७ [कोट्टगनाम उज्जाण तम्भीनगरमडले फासुए सिज्जसधारे तत्यवास सुवागए ८] तस्या श्रावस्था नगर्यां मण्डले परिसरे क्रोष्टुक नाम उद्यान वर्त्तते तत्र प्रासुकियिज्जासन्धारे वास अस्थान उपागत प्राप्त ८ [कियोकुमारसमणे गीयमीय महायसे उभन्नीवितत्यविहरिसु अन्नीयासु

महायसे भगवगीयमेनाम विज्जाचरण पारगे ६॥ वारसगविज्जुद्धे सिखसघस माडले । गामाणुगाम रीयतेसिविसा वत्यिमागए ७ ॥ कोट्टग नामउज्जाण तम्भीनगर मडले । फासुएसिज्जसधारे तत्यवास सुवागए ८ ॥ कियोकुमार

इसेनामि विद्या चारित्ते पु पारगामो विद्यान्ने चारित्र तद्धनो पारगामो ६ द्वादशांगयोत् चतुर्भ्रान्तीव्यार अगनीज्जांख धोनाणी शिथ्यरुघ समाकुला घणा शिथ्यने परिवारे परोवखी ग्रामानुग्राम विहरन ग्रामानुग्रामने विखे विहार करता सीपि गीतम श्रावस्थां समागत ते गीतम स्वामोपणिसावलीनगरी आख्या ७ कोट्टक नाम उद्यान कोट्टकइसेनामे उद्यानके तस्य नगरस्य परिसरे ते नगरने समीपे प्रासुकियिज्जासन्धारेक फासुसिज्जा सधारोलिङ्गने तत्र तीहा वाम उपत्थात ते उद्यानमाहि जतथा ८ कियोकुमार यमण कियोकुमार साधू गीतमीपि महायथा गीतम महाजयनीपणो उभावपि तत्र

समाह्वया ८) केशीकुमार अमणश्च पुनर्गौतम एतौ उभौ अपि व्यवहार्यं आगतां कीदृशी तौ उभौ महाययसौ पुनः कीदृशी अलीनोमनीवाकाय
गुप्तिस्वाश्रितौ पुनः कीदृशी सुसमाहितौ सम्यक् समाधि युक्तौ ८ (उभश्चौ सीससप्राणं सञ्जयाणं तवस्त्रिणं तवस्त्रिणं तवस्त्रिणं तवस्त्रिणं तादृशं १०)
तत्र तस्यां आवस्थ्यां उभयोः केशिगौतमयोः शिथ सद्धानां संयतानां तपस्विनां साधूनां गुणवतां ज्ञानदर्शनं चारित्र्यं वतांवायिणां घडजीवरचाकारिणां
परसरावलीकनात् चिन्तासमुत्पन्ना विचारः समुत्पन्नः १० (केरिसोवाइमी धम्मो इमी धम्मोवनेरिसो आयारधम्मपणिहो इमावासावकेरिसो ११) अयं
अस्मत्सम्बन्धीधर्मः कीदृशः वा इति विकल्पेव श्रवशीपिवार्यं वा अथवा अयं धर्मो दृश्यमाणगणभृत् शिथ सम्बन्धी कीदृशः पुनरयं आचारधर्मं प्रणधिः
अस्माकं कीदृशः पुनरतेषां वा आचारधर्मं प्रणधि कीदृशः प्राकृतत्वात् लिङ्गव्यत्ययः आचारो वेपधारणादिको वाग क्रियाकलाप स एव धर्मस्तस्य

समणे गोयमेय महायसे । उभश्चोवितत्यविहरिसु अस्त्रीणासुसमाह्वया ८ ॥ उभश्चौ सिम्मासंधाणं संजयाग तव
स्मिणं । तत्यचिता समुत्पन्ना गुणवंताणतादृशां १० ॥ केरिसोवाइमी धम्मो इमीधम्मो वकेरिसो । आयार धम्म

आवस्थ्यां विहरंती केशी गौतमवे जणां विचरन्ति मनोवाकाय गुप्ताः सुष्ट, समाधिवंता मनवचन काया गुप्तच्छे समाधीवतच्छे ८ इयोः शिथहृदानां सयं
तानां वैजयाना शिथने संयतानां सजतीच्छे तपस्विनां तपस्वीच्छे तत्र जावस्थ्यां चितासमुत्पन्नात् सावलीनिरिपिने यतीने चिंता जपनी गुणवंता चारित्र्ये
गुणे सहित चायिणां सर्वजीवना राखणहारने १० कीदृक् स्वरूपः अयं धर्मं केशी, शिथसंबन्धीएकह्रवा धर्मच्छे एषः कीदृक् रारुपी धर्मं गौतमगण
भृच्छिथ्याणां अने गौतमस्वामीना शिथनी एसीउ धर्मं आचार धर्मवेपधारणादि तस्य आचार धर्ममांहीमांही आंतरीदीसेके इमा स्वस्थ्या मा

प्रणधिर्व्यवस्थापन आचारधर्म प्रणिधि पृथक् २ कथ सर्वज्ञीकृतस्य धम्मस्तासाधनानां च भेदेषु ज्ञातु इच्छाम इति भाव ११ (चाउज्जामीयजीधम्मो जोइमोपच्च सिक्खिओ देसिओवडमाणेण पसेणय महासुणी १२) (अचेलगीयजो धम्मो जोइमो सत्तरुत्तरो एककज्जपवव्वाण विसेसो किन्तु कारण १३) युग्म यथाय चातुर्यामीधम्म पापेन महासुनिनतीर्यकरणदर्शित चत्वारय यमाय चतुर्यामास्तयथातुर्याम चातुव्रतिको अहिंसा १ सत्य २ चौर्य त्याग ३ परिग्रहत्याग ४ लचणोधर्म्यं प्रकाशित यस पुनरय धर्मो वर्द्धमानेन पच्चशिक्षिक पच्चशिक्षितो वा पच्चभिर्महाव्रतै शिक्षित पच्चशिक्षित प्रकाशित पच्चसुशिक्षासुभव पच्चशिक्षिक पच्चमहाव्रतात्म अहिंसा १ सत्य २ चौर्यत्याग ३ मैथुनपरिहार ४ परिग्रहत्यागलचणोधर्म्यं प्रकाशित १३

पणिही इमावासावकेरिसी ११ ॥ चाउज्जामीयजो धम्मो जोइमो पचसक्खिओ । देसिओ वडमाणे ण पासिणय महा ० सुणी १२ ॥ अचेलगीय जो धम्मो जो इमो सतरुत्तरो । एग कज्ज पवव्वाण विसेसि कितु कारण १३ ॥ अहते तल्य

च अथस्या कोट्टगो विसवादिनो एमांडोमाहिक्केरदोसिक्के ११ चातुर्णामी चतुर्महाव्रत धर्मीय देशित चारि महाव्रतरूप धर्मं य पचमहाव्रतरूप देशित सिञ्चित अने पचमहाव्रत रूप धम्म कट्ठी देशित सिञ्चित श्रीवर्द्धमानस्वामी पचमहाव्रतरूप धर्मदेखाणो श्रीपार्व्वनादिन श्रीपार्व्व नाथे चारि महाव्रतरूपधर्म देखाओ १२ अचेलको मानीपित वस्तयो धर्मवोरण उक्त मानीपित वस्त श्रीमहावीर कक्षा य असतरो बहुमून्व प्रधान वस्त श्रीपार्व्वणीत्त बहुमून्वपयपोना वस्तलेवा श्रीपार्व्वनाथे कक्षा एककार्येनेविखे प्रवर्त्त्यकिं विग्रिय उक्तरूप तद्व कि कारण एकपच महाव्रतवीथी चार महाव्रत एवे वचनफेरलेसु कारण १३ अथ तच्च शिथानाहवे गीतम केथीकुमार आपथा शिथनी अभिप्रायजाणीने ज्ञाला

पुनर्वदमानेन अचेलकीधर्मः प्रकासितः अचेलमानीपेत धवल जीर्णप्राय अल्पमूल्यं वस्त्रं धारणीयं इति वर्षमानस्वामिना प्रोक्तं असत इव चेलं यत् स अचेलः अचेल एव अचेलक यत् वस्त्रं सदपि असत् इव तत्कार्यमित्यर्थः पुनर्योधर्मः पार्श्वेन स्वामिनासान्तरीत्तरः सह अन्तरेण उत्तरेण प्रधान बहुमूलेन नानावर्णं न प्रलम्बेन वस्त्रेण च वर्त्ततेयः स सान्तरीत्तरः स चेलकी धर्मः प्रकाशित एककार्ये सुक्ति रूपेकार्ये ग्रहत्तयोः श्रीवीरपार्श्वयोर्विशेषे किल्लु कारणं कीर्तितः कारणभेदेहि कार्यभेदसम्भवः कार्यं तु उभयोरिकमेवकारणञ्च दृश्यक् २ कथमिति भावः किं मिति प्रश्ने तु इति वितर्के १३ (ग्रहते तत्प्रतीसाणं विन्नाय पवियक्कियं समागमे कयमई उभयोकेसि गीयमा १४) अथानंतरं तयोः उभयोस्तु त्रयावस्था आगमनानंतरं केशिगीतमौ तौ उभौ समागमे कृतमतौ अभूतां किं कृत्वा शियाणा चक्षुलकानां प्रवितर्कितं विन्नाय विकल्पं ज्ञात्वा १४ (गीयमी पडिरुवन्नूसिस्त सप्तसमाजले जिष्टं कुलमविवलन्ती तितुय वणमागञ्चौ १५) गौतमस्त्रिन्दुकं वनं आगतः केशिकुमाराधिष्टितं वने आगतः कीदृशी गौतम प्रतिरूपज्ञः प्रतिरूपीयधीचित विनयस्त्वं जानातोति प्रतिरूपज्ञ पुनः कीदृश शिय सप्तसमाकुलः शिय इन्दुसहितः गौतमः किं कुर्वाणः ज्येष्ठं कुलं अपेक्ष्यमाणः

सिखाणं विन्नाय पविय कियं । समागमे कय मई उभञ्चो केसि गीयमा १४ ॥ गोयमी पडिरुवसू सिस्स संघ समा

प्रथम प्रकृत विकल्पीतं जाएसमननुं चिन्तव्यं जे एहने विकल्प जपनीभेद उपनी समागमे मिलने कृत मती मिलवानीं मतिकीधी उभयोः केशि गौतमयोः वेजणे केगीइं अने गौतमे १४ गौतमः प्रतिरूपज्ञः प्रतिरूपवेत्ता गौतमके अवसरनी जाणके शियसघ समाकुलः सर्वशिय पोतानासाथे लेईने ज्येष्ठ कुलं पार्श्वसंतानां अपेक्षमाणोगणयन् बहुकुल श्रीपार्श्वनायनुं जाणिके तितुं कवने आगतः श्रीगौतम केशिकुमार पासे तितुं कवने विखे

ज्येष्ठ षड् प्रथम भवनात्यार्धनाथस्य कुलसन्तान विचारयत इत्यर्थं १५ [केसोकुमारसमणे गीयमन्दिस्समागय पडि रूव पडिवसि सस्यश्च पडि वज्जई १६] केयोकुमार अमणी गीतम आगम आगत दृष्ट्वा सम्यक प्रतिक्रिया आगताना योग्या प्रतिपत्ति सेवा सम्पत्तिपद्यते सम्यक करोतीत्यर्थं १६ [पलालम्फासुय तस्य पञ्चम कुसतणाणिय गीयमस्सनिस्सिज्जाए खिप्प सम्पणामण १७] तत्र तित्त् कुोद्यानि एव केयीकुमार श्रमणी गीतमस्य निययायै गीतमस्य उपवेगनाथ प्रासुक निर्वोज चतुर्विध पलाल पञ्चमानि कुशटणानि चकारात् अन्यान्यपि साधुयोग्यानि तृणानि सम्पणामण समर्पयति पञ्चमल हि कुशटणाना पलालभेदेन चतुर्विध पलाल यथा तथपणग पञ्चत्त जिणेहि कम्मट्टगण्ड महणेहि साली १ वीही २ कीइव ३ रालग ४ रनेतणा ५ पच्चइति वचनात् चत्वारिपलालानि साधु प्रस्तरणयोग्यानि पञ्चम हि दर्भादि प्रासुक तृण वर्त्तते तत् केयिकुमारयमणेन गीतमस्य प्रसारणार्थं प्रदत्तमितिभाव १७ [केसोकुमारसमणे गीयमेय महयसे उभयो निसत्तासीहन्ति चन्दसरसम्पभा १८] तदा केयीकुमार अमणश्च

उत्ती । जेठ कुलूमविवलतो तिटुय वण मागञ्चो १५ ॥ केसीकुमार समणे गीयम दिस्स मागय । पडिरूव पडिउत्ति
सम्मा सपडिवज्जई १६ ॥ पलाल फासुय तत्थ पचम कुस तणाणिय । गीयमस्य निसिज्जाए खिप्पं स पणामण १७ ॥

आख्या १५ केयीकुमारयमण केयीकुमार साधु गीतम दृष्ट्वा आगत समीपे गीतमस्वामी दृष्टिगोचररूपा श्रायताविठा प्रतिक्रिया उचित भक्तिह तीते कीधी करवायोग्य सम्यक प्रतिपद्यते सम्यक प्रकारेण सम्यक प्रकारिकरी १६ पलाल प्राशुक निर्ज्जीव तत्र फासुपराल सूक्ष्मसुतीहा पचमानि पलाल भेदेन कुशटणानि पांचपलालसालि १ वरटी २ कीद्रव ३ कांगणी ४ डाम ५ एपाचपलाल गीतमस्य निययायै गीतमने वेत्थयानीमसे श्रोत्र उपवेगनाथं

पुनर्गौतमी महायथा. एतौ उभौ तत्र तित्नु कीद्यानिनिषण्ठी उपविष्टौ शोभते विराजते कथञ्चतौ तौ चन्द्रादित्य सम प्रभौ १८ [समागया बहू तस्य पासण्डाकोडगामिया गिहिल्याणं अणोगात्रो साहस्यीश्रीसमागया १६.] तत्र तस्मिन् तित्नु कीद्यानिबहव. पापण्डा अन्यदर्शिनः परित्वाजकादयः समागता कोट्टगास्त्रेपाषण्डा कौतुकात् सृगाः आद्यर्याव् सृगा इव अथानिनः तु पुनः अनैकलोकाना सहस्रं समागतं यनेका प्रचुरालोकानां सहस्रीति आर्पित्वात् समागता तत्र संग्रामा १६ [देवदानव गन्धव्याजवरकल स किन्नरा अदिस्त्राणश्च भूयाणं आसीतस्य समागमो २०.] ते तत्र तन्निग्नं प्रदेष्टे देवदानव

केसीकुमार समणे गीयमेय महायसे । उभञ्चो निसन्ना सोहंति चंद्र सूर समप्यभा ॥ १८ ॥ सभागया बहू तस्य
पासंडा कोडगा मिया । गिहिल्याण अणोगात्रो साहस्यीश्री समागया ॥ १६ ॥ देव दानव गंधव्या जक्व जक्व रक्वस
किन्नरा । अदिस्त्राणश्च भूयाणं आसी तस्य समागमो २० ॥ पुच्छामि ते महाभाग केसी गीयम मव्ववी । तन्नो किसि ०

अर्पयतो शोभं शोभपणे देई केसीकुमार १७ केसीकुमारयमणः केसीकुमार साधु गीतमः महायथा. गीतमस्सामी महाययनो धणी उभावपि तत्र आवस्थानिषण्ठीस्थितौ शोभतः तदंगणधरतीहां वेठासीमेछे चन्द्रसूर्य समप्रभौ चंद्रमा अने सूर्यसरिणीकातिछे जिविहुनी १८ समागता. मिलिता बहव. षणातीर्हां मील्याछे पाषंडा कौतुकायिता पाषंडी घणाए तीहां कौतुकदेखवा मील्याछे गृहस्थानां अनैकानि अनैक गृहस्थाना हजारआची नील्याछे सहस्राणि मिलिताः आगता सहस्रवड आथाछे १६ देवदानवगधर्वाः देयता दांणव गंधर्वा जज राक्षसा किन्नराः यज राक्षस किन्नर अदृशरूपाणां भूतानं अदृश्यरूपधरता भूतब्यं तर आगतं तत्र समागता. मिलिताः आकायने पिछे यदृशपणे कौतुक देखवाभणीआवी जभारहाछे २० पुच्छामिलो

गन्धर्वा यक्षराक्षस किन्नरा समागता इति श्रेय च पुनस्तत्र अदृश्यानाभूतानां केलीकिलबन्तराणां समागम सङ्गम आसीत् २० (पुच्छामि ते महाभाग
केसोगीयममव्ववो तत्रो केसि बुवन्तन्तु गीयमी इणमव्ववी २१) तयोर्जल्पमाह तदा केसोगीतम अत्रवीत् कि अत्रवीदित्वाह हे महाभागते त्वां अह
पृच्छामि यदा केसिकुमारिण इत्यक्त तदा केसिकुमार ग्रमण भुवन्त गीतम इद अत्रवीत् २१ [पुच्छभन्ते जहिच्छन्ते केसि गीयममव्ववोतत्रो केसो
अणुत्राप गीयमइणमव्ववो २२] गीतमी वदति हे भदन्त हे पूज्यते तव यथेच्छ यत् तव सेतसि अवभासते तत् त्व पृच्छ मम प्रग्र कुरुइति केसिकुमार
प्रति गीतमोद्भवोत् गीतम इति प्राकृतत्वात् प्रथमास्थाने द्वितीया ततो गीतमवाक्यादनन्तर केसिकुमारी गीतमिन अनुज्ञात सन् गीतमिन दत्ताञ्च
सन् गीतम प्रति इद वक्ष्यमाण वचन अत्रवीत् १ [चाउज्जामोयनी धम्मो जोइमो पच्चसिक्खिओ देसिओ वडमाणेषु, पासेण महासुणी २३] [एककज्ज

बुवततु गीयमो इण मव्ववी २१ ॥ पुच्छ भते जहिच्छते केसो गायम मव्ववी । तत्रो केसो अणुत्राप गीयमी इण
मव्ववी २२ ॥ चाउ ज्जामोय जो धम्मो जो इमो पच्चसिक्खिओ । देसिओ वडमाणेण पासेणय महामुणी ॥ २३ ॥

महाभाग तुभूने अही महाभाग पूछू कू केसो गीतम अत्रवीत् केसिकुमार गीतमने कहिके तत केसोब्रूवत पुन केसो इम कहाथी गीतमोद्भवोदिद
वक्ष्यमाण वचन हवे गीतमने पूछिके वक्ष्यमाण वचन कहिके २१ पृच्छ हे भगवन् यथा रुचिपणे केसिकुमार गीतम इति ब्रवीत् केसोप्रति गीतम कहे
तत केसोब्रूवत सन् केसिकुमारने गीतमे आत्रादीधायका गीतम अत्रवीदिद वक्ष्यमाण वचन हिवे केसिकुमार गीतमने पूछिके २२ चतुर्याम
अहिसादियोऽय धम्म चार व्रतरूप एधर्म य एप पच्चशिक्षितो मैथनवे रमणादि पच महाव्रतरूप दर्शित वडमानिन वडमानस्वामीइ पचमहावृत

पवन्नाणं' विसिसेकिं' तु कारणं धर्मो दुर्विहेमिहावीकाह विणञ्च प्रीनते २४] हे गीतमपार्श्वं न मुनिना तोर्थकरेण यथातुर्थामचातुर्वर्ति कोय अस्माकं धर्मो' उद्दिष्ट पुनर्यथैव धर्मो वर्तमानिन यच्चगिच्चिकः पञ्चतात्मकोद्दिष्टः कथित १३ एककार्यमोक्षसाधन रूपेकार्ये प्रपन्नयोः श्रीपार्श्व महावीरयोर्वि श्रेयभेदे किं कारणं हे मेधाविन् द्विविधे धर्मे तव कथ विप्रत्ययी न भवति यतौ ही प्रपितोर्थं करोहावपि मोक्षकार्यं साधने प्रष्टुतौ कथमनयोर्भेदइति हेतोस्त्वमनसि वाद्यं विप्रत्ययी न भवति सदे ही न भवति २४ (तत्रोक्तिसिं बुवन्तन्तु गीयमोक्षणमन्ववी पणासमिक्खए धम्मं' तत्तं तत्तविणिच्छय २५) ततोऽनन्तरं कैशिल्लुमार शसणं शुवन्तं कथय तं गीतम इदं' प्रव्रवीत् हे केगिक्कुमार शसणं प्रज्ञानुद्धिर्धर्मं तत्वं धर्मस्य परमार्थं पश्यति धर्मं तत्वं बुद्ध्या एव विलीखते शूणं धर्मं' सुधीवेत्ति इति वचनात् कीदृशं धर्मतत्वं तत्वं विनिययं तत्वानां जीवादीनां विगिणेण निययो यस्मिन् तत् तत्वविनि

एगकज्ज पवन्नाणं विसिसि किंतुकारणं । धम्मं दुर्विहेमिहावीकहविप्पच्चत्रोयाते २४ ॥ तत्रोक्तिसिं बुवंतंतु गीयमोडण -
मन्ववी । पन्नासमिक्खए धम्मं' तत्तत्त विगिच्छयं २५ । पुरिमा उज्जुजगुओ वक्खजगुय पच्छिमा । मज्झिमा उज्जु

उपदेश्या पार्श्वं न पार्श्वं नाथेन महासुनिना श्रीपार्श्वं नाथे चार महाव्रतरूपधर्मकहो २२ एक कार्यं प्रपन्नानं एकज कार्यं कारयाभणी उच्यत इत्प्राच्छे पृथक् विशेषे कि पुनः कारणं जूजुश्राविय जूजूवा आचार किम कीधा साधी धर्मादिभेद हे मेधाविन् साधुनी धर्मवेदेहीसे ते किम कथं नस्यात् विप्रय संदेह स्तव अही गीतमस्वामी ताहरा मनमाली किम संदेह श्रावतुं नथो २४ ततः केगि द्रवत केगी इम कणाथका पुनः गीतमः इदं वचनं अत्रवीत् गीतम इम कहेके प्रज्ञाबुद्धिः समोच्यते धर्मं' बुद्धिधर्मने देसे पिछाणि तत्त्वं परमार्थं जीपतत्त्वं' निमित्तं जीपादि तत्त्वानो निचय बुद्धिं' करीजाणि २५

कर्तृमशक्ताः तु पुनर्मध्यमगानां द्वाविंशति तीर्थकृत्साधूनां अजितनाथादारस्य पार्ष्वनाथपर्यन्त तीर्थं करमुनीनां कल्प साध्वाचारः सुविशोध्यः सुपाल
 कथ साध्वाचारसुखेन निर्मलीकर्त्तव्यः पुनः सुखेनपाल्य द्वाविंशति तीर्थकृत्साधवो हि ऋजु प्राज्ञास्त्रिकेनीलेन बहुज्ञा तस्माच्चतुर्व्रतिको धर्ममंडद्विष्टः
 मैथुनं हि परिग्रहे एवगण्यते आदोःखरस्य साधूनां यदि पञ्चमहावृतानि प्राणति पातविरति मृधावादविरति मैथुनविरति परिग्रहविरति रूपाणि
 पृथक् २ कथ्यते तदा ते ऋजुजडा पञ्च महावृतानि पालयन्ति नीचेत् वृतमङ्गं कुर्वन्ति ते तुयावन्मात्रं आचार शृण्वन्ति तावन्मात्रं एव कुर्वन्ति
 अधिकं स्व बुद्धा किं मपि न विदन्ति महावीरस्य साधवोपि चैत्यं च महावृतानि शृण्वन्ति तदैव पालयन्ति तेषु वक्राजडाश्चैव चत्वारिवृतानि
 शृण्वन्ति तदा च त्वार्यैवपालयन्ति नतु पञ्चम पालयन्ति वक्र जडादिवादाग्रहग्रस्ताः अतीवहृठधारिण द्वाविंशति तीर्थकृत्साधवः ऋजवः प्राज्ञाश्चत्वारि
 श्रुत्वा सुबुद्धित्वात् पञ्चापि वृतानि पालयन्ति तस्माच्चत्वारि वृतानि प्रोक्तानि तस्माद्दूर्गो द्विविधास्ततः चातुर्व्रतिक पञ्चवृत्तात्मकस्य स्व स्ववारक
 पुरुषाणां अभिप्रायं विज्ञायतीर्थकरैर्धर्मं उपदिष्टइति भावः २७ (सा ३ गोयमपन्नति छिन्नोसिसं सञ्चो इमी अन्नेविस सञ्चो मज्जां तं मेकहसुगोयमा २८)
 इति श्रुत्वा केशिकुमारः अमणोवदति हे गौतम ते तव साधुप्रज्ञास्ति सम्यक् बुद्धिरस्ति मे मम अयं संगयस्वयाच्छिनीदूरीकृतः अन्योपि मम सशयोस्ति त
 मिति तस्योत्तरं हे गौतमत्वं कथय स्व इदं वचनं हि शिथ्यपिज्ञं ननु तस्य केशिकुनेर्ज्ञानत्वयवतः एवं विधः शसय सग्भवः २८ (अचेलगीयजीघम्भो

सुजम्भो सुपालञ्चो २७ ॥ साहुगोयमपन्नति छिन्नो मे संसञ्चो इमी । अन्नोविसंसञ्चो मज्जां तं मे कहसु गोयमा २८ ॥

सुखेनपाल्यः सीहिला समभ्ति सीहिलापाले २७ गोभना हे गौतम तव प्रज्ञाबुद्धिः अहो गौतम भलीतान्दरी बुद्धि छिन् । मम सशयः अयं एम्हारी
 संगय केटाणी अन्यो अपि संसयो समास्ति अने रोपणि संगय सुभनेच्छे तद्विषय ममार्थः हे गौतमं कथयते पणि संगयम्हारी भांजिकहे २८ वर्द्धमानेन

तार्थकरैर्षिज्ञानिन् विशिष्टज्ञानिन केवलज्ञानिन समागम्य यत् यत् यस्य उचितं तत्तथैव ज्ञात्वा धर्मीपसाधन धर्मीपकरण वर्षाकल्पादि इद ऋजु प्राञ्च यीग्यं इदं वक्र जडयोय्य' इति ईप्सितं अनुमत इष्टं कथितमिति यावत् यतोहि शिष्याणां रक्तवर्णादि वस्त्रानुज्ञानि वक्रजडत्वेन रञ्जनादिषु प्रवृत्ति दुर्निवारा एव स्यात् पार्श्वनाथ शिष्यासु ऋजुप्राञ्चत्वेन शरीराच्छादन मात्रेण प्रयोजनं जानन्ति न च ते किञ्चिक्लादागहं कुर्वन्ति ३१ [पञ्चयत्यच्च लीगस्य नाणाविहविगम्यणं जत्तल्यं गहणस्य च लीगिलिङ्गपञ्चोयणं ३१] हे केशिसुने नानाविधिं विकल्पनं नाना प्रकारोपकरण परिकल्पनं अनेकप्रकारोपकरण चतुर्दशीपकरणधारणं वर्षा कल्पादिकच्च यत् पुनर्लोकै लिङ्गस्य प्रयोजनं साधुविषयस्य प्रवर्तनं यत्तौथैकरैरुक्तं तत् लोकस्य प्रत्ययार्थं लीकस्य गृहस्थस्य प्रत्ययाय यतोहि साधुविषं लुचनयाचारं च दृष्ट्वा ऋमीव्रतिन इति प्रतीतिरुत्पद्यते अन्यथा विडम्बकाः पाषण्डिनोपि पूजाद्यर्थं वय व्रतिन इति ब्रवीरन् ततश्च वृत्तिषु अप्रतीतिः स्यात् अतो नानाविधविकल्पन लिङ्गप्रयोजन च पुनर्यात्रार्थं संयमनिर्वाहार्थं यतोहि वर्षाकल्पादिकं विनादृष्ट्यादिना संयमनिर्वाहोनस्यात् तेन वर्षा कल्पादिकं वर्षर्तुयोग्य आचारोपकरण धारणश्च दर्शितं पुनर्ग्रहणं ग्रहणं ज्ञानं तदर्थं इति ग्रहणार्थं ज्ञानायइत्यर्थः यदि कदाचित् चित्तविभ्रवोत्पत्ति स्यात् परीषहोत्पत्तौ समयम अरतिरुत्पद्यते तदा साधुविषधारी मनसि एतादृशं ज्ञानं कुर्यात्

शेषेण समागमस्य धम्म साहण मिच्छियं ३१ ॥ पञ्चयत्यं च लीयस्य नाणाविह विगम्यणं । जत्तल्यं गहणत्थं च लीगे लिंग

हवे गौतम इम कहंछे विज्ञानिन केवलेन समागम्य यद्यसोचितति केवलज्ञानकरो जाणैने धर्मीपकरणं इष्टं लोकानं अनुमित धर्मीपकरण साधुने योग्य हितकारो तेहना आञ्जादोघोलेचारी ३१ प्रत्ययार्थं लोकस्य लोकने प्रतोतिभणो नानाप्रकारेणोपकरणं परिकल्पितं कथित नानाप्रकारे घणाभिदुषपकरणकक्षां संयम निर्वाहार्थं ज्ञानग्रहणने अर्थे लीके विषधारण प्रवर्तनं लोकनेविसे विषप्रवर्त्या ३२ पाख

यतोहसाधोवधारी अस्मि यतो धम्म रक्खइवेसा इयुक्त्वात् इत्यादि हेतीलिङ्गधारणं ज्ञेयं ३२] अहं भवेयद्भ्रात्रो मोक्खसभूयसाहणे नाण च दसण
 चैव चरित्तं चैव निच्छए ३३] पुनर्गोतमीवदत्ति हे केमिक्कुमार अमण्णियेनयेनयेभीच्चसत्तसाधनानि ज्ञानदर्शनचारित्र्याणि सत्यानि साधनानि
 निययनयेत्तन्ने अथ प्रतिज्ञाभवेत् श्रीपार्श्वनाथ महावीरयो इय एकाएव प्रतिज्ञाभवेत् श्रीपार्श्वनाथस्यापि मोक्षस्य साधनानि ज्ञानदर्शनचारित्र्या
 ख्येव श्रीवीरस्यापि मोक्षस्य साधनानि ज्ञानदर्शनचारित्र्याख्येव श्रीपार्श्ववीरयोरेषा प्रतिज्ञाभिन्नानास्ति इत्यर्थं चेपस्य अन्तरं ऋजुजुडवक्रजडाद्यर्थं
 मोक्षस्य साधनेवैपीव्यवहारनयेन्नेयं न तु निषयेन ये वेष निषये तु ज्ञानदर्शनचारित्र्याख्येव तत् ज्ञानमति ज्ञानादिकं दर्शनं तत्त्वरुचि चारित्तं
 सर्वसाधयविरिति रूपं तस्मात् निषय व्यवहारनयौ ज्ञातव्योइत्यर्थं ३३ [साहुगीयमपन्नातेच्छिन्नीमेस सन्धीइमी अन्नीविससन्धीमेज्ज त मेकह

पपत्रोयण ३२ ॥ अहं भवे पद्भ्रात्रो मोक्खस भूय साहणो । नाणच दसण चैव चरित्तं चैव निच्छए ३३ ॥ साहु
 गीयम पन्नाते छिन्ना मे ससन्धी इमी । अन्नीवि ससन्धी मेज्ज त मे कहसु गीयमा ३४ ॥ अणेगण सहसाणा

वीरयो प्रतिज्ञामोक्षस्य कारणे साधने श्रीपार्श्वनाथ श्रीमहावीरे एप्रतिज्ञा मोक्षना साधकं कक्षा जिनाञ्चा अवबोधनं तत्त्वरुचि तीर्थं करनी आणा
 पालवी तत्त्व उपरिरुचि ज्ञानं च दर्शनं चैव चरित्तं सर्वसाधयत्यागरूपं चरित्तं सावयत्यागरूपं चैव जीवनीरचा लिंगमात्र एव्यवहार मारगे ३५
 ते प्रज्ञाशोभना हे गोतम तुम्हारी बुडो भलो छिन्नं मम सगय अय एहारी सदेह दूरिकीञ्ची अन्नीपियसयो ममस्ति वीजीयणि सुभने सदेहके
 तद्विषय ममर्थं हे गोतम कययते पणिकहे सुभने सदेहभाजि ३४ अनेकाना वड्डना सहसाणा अनेकवैरीना हजार वडमाहि मध्ये त्वं तिष्ठसि

सुगीयमा ३४] अस्याः अर्थसु पूर्ववत् न वरं प्रसङ्गतः शिष्याणां व्युत्पत्यर्थं जानन्नपि अपरमपि वस्तु तत्र गीतमस्य सति द्वारेण पृच्छन्नन्योपि शस्यो
त्याद्याह ३४ [अनेगणं सहस्राणं मज्जे चिद्धसि गीयमातेयते अभिगच्छन्ति कहन्तेनिज्जियातुमे ३५] केशीवदति हे गीतम अनिकेषां शत्रुसम्बन्धिनां
सहस्राणां मध्ये त्वं तिष्ठसि तेच अनेक सहस्र सख्याः शत्रवस्तेइति त्वां अभिलक्षीकृत्य गच्छन्ति सम्मुखं पावति तेशत्रवस्त्वया कथं निर्जिता ३५
अथ गीतमउत्तरं वदति [एगेजिए जियापच्च पञ्चेजियेजियादसं दसहाउजिणित्ताणं सब्वसत्तूजिणामिहं ३६] हे केशिमुने एकस्मिन् शत्रौजिते पञ्चशत्रु
वोजिताः पञ्चसु जितेषु दशशत्रुवोजिताः श्रेयवैरिणोवशीकृताः दशप्रकारान् शत्रून् जित्वा सर्वशत्रून् जयात यद्यपि चतुर्णां कषायाणां अवान्तरभेदेन
षोडशसख्याभवति नोकषायानां नवानां भीलनात् पञ्चविंशति भेदाभवन्ति तथापि सहस्र संख्यानभवन्ति परन्तु तेषां दुर्जयत्वात् सहस्र सख्या प्रोक्ता ३६

मज्जे चिद्धसि गीयमा । तेय ते अभि गच्छन्ति कहन्ते निज्जिया तुमे ३५ ॥ एगे जिए जिया पंच पंचे जिए जिया
दस । दसहाओ जिणित्ताणं सब्व सत्तू जिणामिहं ३६ ॥ सत्तूय द्वाद्व की वुत्ते केसी गीयम सब्ववी । तओ केसिं

हे गीतमः माहिं तुं रडेहे हे गीतम त्वां शत्रवः अभिगच्छति धावति वैरी हे गीतम तुम्हने जीवतानि साहसोपाविद्धे कथं निर्जिताः त्वया ते शत्रवः
किमत वैरी तुम्हे जीत्या ३५ एकस्मीन् सत्रीजितेजिताः पंच एक वैरी जीत्या पंचसु जितेषु दशप्रकाराः शत्रुवजिताः पांचजीत्यां दसजीत्या दशधा
दशप्रकारान् शत्रून् जित्वा दशवैरी जीतीने तदा सर्वानपि शत्रून् जयास्यहं सर्वं वैरीने जीतुंहे ३६ शत्रव इति केषुक्ताः अहो गीतम वैरीकोण
कथा केशी गीतमं शत्रुवीत् केशी गीतमने कहहे तदा केशि श्रुवत केशीकुमारनुं वचन सांभलीने गीतमः इदं वल्लमाणं वचनं श्रुववीत् गीतमसाम्मी

अथ केगोष्टच्छति [मत्तू इदं केवुत्ते केसीगोयममव्ववी ३७] हे गीतम श्रव्य केउक्ता केथिकुमारोसुनि गीतम इदं श्रव्योत् ततोन्तरं केगिसुनि एव तुवन्त गीतमइदं श्रव्योत् ३७ [एगप्पा अजिएसत्तू कसायाइन्द्रियाणियतेजिणुत्त, जहानाय विहरामि पइं सुणो ३८] हे सुती एकआत्माचित्तं तस्य अभिदोपचारात् आत्मनसोरेकीभावे मनस प्रहृत्तिं स्यात् तस्मात् एकआत्मा अजितं श्रुत्तु, दुर्जयोस्सिपु श्रुतेकदुःखं हेतुत्वात् एव संबध्यते उत्तरोत्तरभेदात् एकस्मिन् आमनिजिते चत्वार कपायास्तेषां मोलनात् पञ्चपञ्चसु आत्मकपायेषु जितेषु इन्द्रियाणि पञ्चजितानि तदादयगम्योजिता आत्मा १ कपायायत्वार एव पञ्च पुन पञ्चेन्द्रियाणि एव दशैव आत्मकपायानो कपाया इन्द्रियाणि एते सर्वेश्वरवो जिता सन्तितान् सर्वान् श्रुत्तु यथाम्याय योतरागीणं वचसाजित्वा अहं विहरामि तेषां मध्ये तिष्ठन्नपि अप्रति बहुविहारेण विहरामि अत्र पूर्वं द्वि प्रशकाने अनेकेषां सदस्साणां श्रुतीनां मध्ये तिष्ठति इत्युक्तं उत्तरसमये तु कपायाणां श्रवान्तरभेदेन पीडयसव्याभवन्ति नोकपाणा नयानां मीननाथ पञ्चविशति भेदा भवन्ति तथा आत्मेन्द्रियाणामपि सहस्रं सत्या न भवति परं तु एतेषां दुजयत्वात् सप्तश्रु सख्या उक्तेति भाव ३८ [साइगोयमपथाते छिन्वीमेस मधो इमो अवीविस सओमज्ज त मेकहसु गीयमा ३८] अस्यार्थं सु पूर्ववत् ३८ (दोसन्ति बहुवेलोए पासवडा सरोरिणो

तुवततु गीयमोइणमव्ववी ३७ ॥ एगप्पा अजिए सत्तु कसाया इन्द्रियाणिय । तेजिणुत्तुजहानाय विहरामि अहं

कइहे ३७ एक आत्माजितं यत्तु, अहो केयो एगमाथापणो वैरी जीणे जीवो तस्मिन् जिता क्रोधाद्या कपाया इन्द्रियाणि एवात्माजीवो चार कपाय पांचेइ द्रोडोल्या तान् यत्तुन विनिर्जीत्य योऽहं नीत्याते वैरीने जीतीने तित्तुं विहरामी सुखेविचरु सुखेइत्तु ३८ हे गीतमतवप्रज्ञा शोभना

मुक्कपासोलङ्कृषी कहतं विहरसोमुणो ४०] पुनः केयो वदति हे गीतममुनि लोके ससारे ब्रह्मवः शरीरिणः पाशबद्धाः दृश्यन्ते त्वं मुक्तपाशः सन् लघू भूतः
सन् कथविचरसिहेमुनी ४०) (तेपासे ४१) तान् पाशान् सर्वान् छित्वा पुनः उपयिन बुद्ध्यानि हृत्य मुक्तपाशो लघुभूतो हं विहरामि ४१ [पासा इ० ४२] इति गीत
मना त्यादनन्तरं केयि शमणे गीतमं अत्र वीत् हे गीतमपाशाः के उक्ता बन्धनानि कानि उक्तानि तत इति पृच्छन्तं के सीकुमारमुनिं गीतमइदं उत्तर अत्र वीत् ४२
[रागदीसादश्रोतिव्वानेहपासाभयङ्गरातिच्छिदित्तुजहानायं विहरामि जहक्कमं ४३] हे केयिमुनि जीवानां रागद्वेषादयस्त्रीषाः कठोराः छेत्तुं अशक्याः

मुणी ३८ ॥ साहुगीयमपन्नति छिन्नेभि संसञ्चो इमे । अन्नावि संसञ्चो मज्झं तमेकहसुगीयमा ३८ ॥ दीसंति
बहवेलिए पास बद्धा शरीरिणा । मुक्कपासा लहुम्भुञ्चो कहंतं विहरसी मुणी ४० ॥ तेपासे सव्वसा छित्ता निहंतूण
उवायञ्चो । मुक्कपासा लहुम्भुञ्चो विहरामि अहंमुणी ४१ ॥ पासाय इइकेवुत्ते केसीगीयम मव्ववी । तञ्चोकेसिं बुवं

हे गीतमताहरो प्रजा बुद्धि भली छिन्नः मम ग्रंथयः अयं एम्हारी संदेहभाज्यो अन्योपि संशयो ममास्ति वीजीपणि संदेहमाहरच्छे तद्विषयं ममार्थः हे
गीतम कथयतेम्हारी संदेहभाजिते प्रर्थकहा ३८ दृश्यन्ते बहवेलीके लोकने विखे घणादीसेच्छे पाशबद्धाः शरीरिण पासबध्णिकरी वांध्याच्छे प्राणीया
मुक्तपाशो लउभूत सन् ते पास तीडोकरो हलुञ्चो ह्यथोथको कथ त्वं विहरसि मुनी किम तू विचरेच्छे अहो मूनीखर ४० तान् पाशान् सर्वान् छित्वा ते
सबला पाशनेच्छेदीने पुनः उपयिन बुद्ध्यानि हृत्य उपयिकरो छेदीने मुक्तपाशो लघुभूतः पासाथी मूकाणी हलुञ्चो ह्यथो विचरामि हे मुनेहु विचरं छुं
अहो मुनीखरसाधू ४१ पाशाः इति केउक्ता . पाशबंधनके हांकहा केशी गीतमं अत्र वीत् केशी गीतमने काहेच्छे ततः केशिं एवं सुवतं केशीये इम कहा

स्त्रे हयाया साहयाया उक्ता कोट्यास्त्रे हपाया भयङ्गरा भय जुञ्चन्तीति भयङ्गरा रागहेषो आदी येषां ते रागहेषादय रागहेष मोहएव जीवाना भयदा तान् त्रे हपायान् यथा यथा वीतरागीतीपदेमेन क्खित्वा यथा क्रम साध्याचारानुक्रमेण अह विहरामिसाधुमार्गे विचरामि ४३ [साहुगीयमपन्नति शिश्रामि तस्यो द्रमो अत्राविससभोमज्ज तमेक हसुगीयमा ४४] अस्मार्थसु पूर्ववत् ४४ [अन्तीहि यय सभ्या लया चिद्वद्रगोयमा फलेद्र विसभखीण साउ उडरियाकह ४४] हे गीतमसालतासावज्ञी त्वया कथ केन प्रकारेण उडरुता उत्पाटिता साकायालता अन्तहृदयसभूतासतीतिष्ठति अन्तहृदय

ततु गीयमो द्रुणमञ्चवी ४२ । रागद्वंसादथो तिव्वानिहपासा भयकरा । तेच्छिदित्तु जहानाय विहरामि जहक्कम ४३ ।

साहु गीयमपन्नति छिन्नोमे ससञ्चाद्रमो । अन्नोवि ससञ्चा मज्ज तमेकहसुगीयमा ४४ । अतोहियय समूया लया
चिद्वद्र गीयमा । फलेद्र विसभखीण साथो उडरिया कह ४५ । तलय सव्वसेच्छित्ताउडरित्ता समूलिय । विहरामि

यको गीतम इद वल्लमाण अर्चुवीत् गीतम कहके ४२ रागहेषा दय तीष्ठा रागहेषएवे महातीव्र पुत्र कलत्रादि स्त्रे हपाया भयकरा पुत्र स्त्री भाद्रे वधुरूप स्त्रे हपामतान्च्छित्वा यथा ज्ञात ते पासमे छेदीने विचरामि यति माग यथाक्रम विहरु तु विहारकरु कु यतीने मार्गे ४३ शोभन हे गीतम तव मन्नावुदि हे गीतम ताहरी बुदि भली छिन्न सम ससय अय एमाहरी स देह तूहे टाळी अन्योपि म शय ममास्ति वीजीपणि स सयम्हारिहे तद्विषय ममार्थ हे गीतम कथय तेहनो पणि अयं सुभने कहो ४४ अत हृदयमध्ये सभूताहियामाहि जपनी लतातिष्ठति हे गीतम एव विलडी रहके अहो गीतम फलति फलानि कोट्यानि विप सदृशानि ते वेलिने विख मरीलाफल लागेके सा लयाउष्टता कथ तंवेनि तुम्हे किम जपानीपाखी ४५

मन उच्यते एतावदामनसि उन्नता पुनर्यावन्नो विषमभ्याणि फलानिफलति विषमभ्याणि विषमभ्याणि विपफलानि उत्पादयति पर्यन्तदारुणतयाविषो
पमानि फलानि यस्यालतायाभवन्ति ४५ [तं लयं सब्वसोच्छ्रिता उद्धरित्तासमूलियं विहरामि जहानायं मुक्तीमिविसभक्वणा ४६] गीतमीवदति
हे मुने तां लतां सर्वतः सर्वप्रारिणच्छित्वा खण्डीकृत्य पुन समूलिकां मूलसहितां उद्धृत्य उत्पाद्ययथान्यायं साधुमार्गविहरामि ततीहं विषमभ्रणात्
विषोपमफलाहारात् सुक्तीस्ति ४६ [लयाय इद्र कावुत्ता केसीगीयममब्बवी तन्नोकेसिं बुवन्तं तु गीयमीद्रण मब्बवी ४७] हे गीतमलताइति काउक्ता
इति ष्टे सति इति ब्रुवन्त केशिमुनि गीतमइदं अत्रवीत् ४७ [भवतण्हालया वृत्ता भीमाभीमफलीदया तमुद्धित्तु जहानायं विहरामि महामुणी ४८]

जहानायं मुक्तामि विसभक्वणं ४६ । लयाय इद्रकावुत्ता केसीगीयम मब्बवी । तन्नोकेसिं बुवंतं तु गीयमीद्रण
मब्बवी ४७ । भवतण्हालया वुत्ता भीमाभीम फलीदया । तमुद्धित्तु जहानायं विहरामि महामुणी ४८ । साहुगीय -

तां लतां सर्वत छित्वा गीतम कहैछे तैवलिमे मूलथी छेदीनांखी उद्धृत्वा उत्पाद्य समूलिकांखणीने मूलथी काठी विचरामि यथा ज्ञातं जाणीने
विचरं कुं सुक्तीस्ति विषमभ्रणात् विरूप जे फल ते फलवाथी रही सूकाणीं ४६ लता इति का उक्ता अही गीतम तैवलि किसी कही केशी गीतम
मब्रवीत् केशी गीतमने कहैछे ततः केशिं एवं बुवंत केसीद्रं इम कल्यायका गीतमः इदं वच्यमाणं अब्रवीत् गीतम इम कहैछे ४७ हे मुनि भवदृष्ट्या
कर्माणां विपाकी लता उक्ता एदृष्ट्या वेलिकही रीद्रा रीद्र फलयुक्ता ते भवदृष्ट्या रीद्रछे फलपरिण तेहना रीद्रछे तां उच्छित्त्वा यथा ज्ञातं यथोक्त विधि
करीने तैवलि छेदीने विहरामि महामुने हे महामुने ह्वेहं सुखे समाधि विचरं कुं ४८ श्रीभन हे गीतम तव प्रज्ञाबुद्धिः अही गीतम भलीताहरी

सन्तीमां नैव दृष्टन्ति कथञ्चतं तत् वारिजलुत्तमं जलेषु उत्तम सर्वेषु जलेषु मेघीदकस्यैव उत्तमत्वात् ५१ (अगीइ इकेवुत्ते केसीगीयम मव्ववो तओी केसिबुवन्तं तु गीयमो इण मव्ववी ५२) तदा केशि यमणी गीतमं इदं अब्रवीत् हे गीतमते अग्नयइति केउक्ताः इति उक्तावन्तं केशिकुमारमुनिं गीतम इदं अब्रवीत् ५२ (कसाया अग्निणीवुत्ता सुयसीलतवीजलं सुयधाराभिहयासन्ताभिन्नाहुनडहन्तिमे ५३) हे केशिमुने कषायाः अग्नय उक्ताः अतुतं शील तपश्चजलं वर्त्तते तत्र शुतञ्च अतमध्येपदेश महाभिवस्तीर्थं करः महाश्रोतश्चागमः अतस्य आगमवाक्यस्य उपलक्षणत्वात् शीलतपसोपि धाराइव धारास्ताभिरभिहितविध्यापिता अतुधाराभिहता सन्तोभिन्नाः विध्यापिताहु निश्चयेनमे इति मां न दहन्ति मां न ज्वज्जग्रत्ति ५३ (साहुगीयप्रपन्नाते छिन्नोमिस सञ्चो इमो अन्नोविसं सञ्चोमज्जं तं मेकहसि गीयमा ५४) अर्थस्तु पूर्ववत् ५४ (अइसाहसिसिओभीमो

सित्तानिावडहंतिमे ५१ ॥ अगीय इइकेवुत्ते केसीगोप्रम मञ्चवी । तओीकेसि बुञ्जंतु गीयमो इणमव्ववी ५२ ॥
कसाया अग्निणीवुत्तासुयसील तवीजलं । सुयधाराभिहयासंताभिन्नाहु नडहंतिमे ५३ । साहुगीयमन्नाने छिन्नोमे

इति के उक्ता ते अग्नि कीणकही केसी गीतमं अब्रवीत् केशी मुनि गीतमने कहंके केशि एवं व्रवंतं केशी इमपूछ्यांयका गीतम इदं वल्लमाणं अब्रवीत् गीतम इम कहंके ५२ कषाया अग्नयः उक्ताः चार कषाय अग्नि कहो शुतशील तपीजलं शुत अने शीलरूपिआ पाणी शुतधाराभिहताः साडिता संतः शुतधाराइ सीचीथकी तदभिवातेन न दहंति मम तेहपाणीसुं सोचीथकी अग्निनयी वालतुं ५३ सोभना हे गीतम तव प्रज्ञावुषि हे गीतम भलोताहरो बुषिंके छिन्नः मम ससयः अय एहारी सदेह तुहे छेवी अन्धीपि संशयी ममास्ति वीजीपण्हारि संदेहके तद्विषयं समार्थं हे

दुःखोपरिधावद् जसिगीयममारूढी कह तेणनहोरसो ५५) हे गीतम अतिसाहसिकीदुष्टाश्च परिधावति यस्मिन् दुष्टाश्च हे गीतमत्व आरूढीसि तेन दुष्टाश्चैन कथ न क्रियसे कथ उन्माग न नीयसे सहसा अविचाथ्य प्रवर्त्ततइति साहसिक अविचारिताध्वगामी पुन कोदृशी दुष्टाश्वोभीमीभया नक ५५ (पहावत्त निगिगहामि सुयरस्त्री समाहियानसे गच्छद् उमग मगश्च पडियज्जद् ५६) अथ गीतमो वदति हे केशिसुने तन्दुष्टाश्च प्रधावन्त्य उन्मार्गं व्रजन्त अह निगृणहामि वगोकरोमि कोदृश तदुष्टाश्च युतरस्मि समाहित सिद्धान्तवलायावद् तत समेमम दुष्टाश्च उन्मार्गं न गच्छति

समश्चो द्रमो । अन्नोत्रि ससश्चो मज्जम तमेकहसुगीयमा ५४ ॥ अथ साहसिश्चोभीमा दुष्टस्त्रो परिधावद् । जसिगीयम आरूढो कह तेण नहीरसो ५५ ॥ पहावत निगिगहामि सुयरस्त्री समाहिय । नमे गच्छद् उमग मग च पडि वज्जद् ५६ ॥ अस्मै य द्दुक्केवुत्त केसीगीयम मव्वी ॥ तच्चेकिसि बुवततु गीयमेद्दण मव्वी ५७ ॥ मणोसाहसिश्चो

गीतम कथय तेहनी पणि अर्थ सुभने कहो ५४ अथ साहसोक्कोरोद् एमहा साहसोक रोद् दमता दोहिलो दुष्टाश्चपरिधावति दुष्ट घोडी उमार्गने विखे दोडे छे यस्मिन् हे गीतम समारूढ ते घोडा जपरि चथायका कथतेनीमार्गं न नीयसे ते घोडा छपरे ते घोडी तुहने उन्मार्गं किमनधी लेद्दजातु ५५ प्रधावतउन्मागाभिमुखयात ते घोडीजिवारे उन्मागने दोडेछे अखनि गृह्णामियुत रस्मिना समाधिवान् तिवारि ज्ञानरूपिणी रासतिणिस्यु भाल्यु, छे अह न गच्छेत् उन्मार्गं तेह भणी सुभने उन्मागे नही लेद्दजादछे मार्गं च प्रतिपद्यते भला मार्गने विखे प्रवर्त्तछे ५६ अथ इति क उक्त अही गीतम ते घोडीकोणकझीं केयो गीतम अत्रवीत् केशी गीतमने कहछे तत केयि त्रवततु पुन केयोद् पृष्ठाथका गीतम इद्द वल्लमाण अत्रवीत् गीतमखामी

स दुष्टास्त्रीमार्गेषु प्रतिपद्यते अङ्गीकरोति ५६ (अस्मैय इदं क्विबुत्ते केसीगोयममव्ववी तत्रोकेसि बुवन्तं तु गीयमीइणमव्ववी ५७) केसीपृच्छति हे गौतम
 अखड्गति क उक्तः ततइति बुवन्तं केथिमुनि गौतम इदं अन्नवीत् ५७ (मणीसाहसिअओ भीमो दुइस्सीपरिधावई तं सन्मं निगिण्हामि धम्मसिक्खाय
 कान्यगं ५८) हे केथिमुने मनोदुष्टाश्चः साहसिकः परिधावतिः इतस्सुतः परिभ्रमति तं मनोदुष्टाश्चं धम्मशिन्नायैधर्माभ्यासनिमित्तं कथकमिवजाल्याश्च
 मिव निगट्हामि वथोकोमि यथा जाल्यास्त्रोवथोक्रियते तंमनोदुष्टाश्चं वथोकोमि ५८ (साहुगी ० ५८) अर्थसु पूर्ववत् (कुप्यहाववोलीएजहिंनसन्ति
 जन्तवो अङ्गणिकहवट्ठन्तो तं न नासिसिगीयमा ६०) हे गौतमलीकिवहवः कुपथाः कुमार्गा सन्ति ये कुमार्गैर्जन्तवो नश्यति दुर्गतवने ब्रजन्तोविली

भीमो दुइस्सी परिधावई । तं सन्मं निगिण्हामि धम्मसिक्खाए कंथगं ५८ ॥ साहुगीयमपन्नतिच्छिन्नोमे संसओ इमे ।
 अन्नोवि संसओ मज्झं तंमे कहसुगीयमा ५९ ॥ कुप्यहा बहवेलीए जहिनासंति जंतवो । अङ्गणे कहवट्ठतो तं न ना

इम कहेछे ५७ मनः साहसिको रौद्रः एमनसाहसीक रौद्रे आपणे वस किओछे दुष्टाश्चपरिधावति एदुष्टवीडो उरहोपरहो दोडिछे तं अश्वं सम्यक्
 गट्हामि ते घोडी भलेप्रकारे भाल्योछे वसिकयोछे धम्मशिन्नायै धर्माभ्यासभि निमित्तं धर्मनि शिख्यादेईने धर्मनो अभ्यासकराव्यो भली घोडोछे
 कथं घोडानीपरि ५८ शोभना हे गौतम तव प्रज्ञाताहरी भलीबुद्धिछे छिन्नी मम संशय अयं एमाहरी सदेहभंज्यो अन्वोपि संसयः समास्ति वीजो
 पणि एकन्हारे सदेहछे तद्विषयं ममार्थं हे गौतम कथय हे गौतम ते पणि अर्थं मुभने कही ५९ असन्मार्गाः संति बहवोलीके कुपथ भूंडामारगलीक
 माहिं घणाछे ये कुपथी सन्मार्गं नश्यंतिजंतवः तेह कूपथे करीने जीवडा भलामारगसाह सुंनजीवे घणा जतुनी नासकरे सन्मार्गे कथं वर्तमानवर्त्तसे

सर्वमार्गेषु उत्तमः सर्वमार्गभ्यः प्रधानोदयाविनयमूलत्वात् इत्यर्थः ६३ (साङ्ख्यगोयमप० ६४) अर्थस्य पूर्ववत् ६४ (महाउदगवेगीणं बुद्धमाणाण्यपाणिणं सरणं गङ्गैपयङ्गाय दीवं क मन्त्रसोमुणी ६५) केशीगौतमं प्रतिपृच्छति हे गौतमसुने महाउदकवेगीन महाजलप्रवाहेण वक्ष्यमानानां स्रवतां प्राणिनां त्व होपह्नं मन्यसेइति प्रश्न कोदृश हीपं ग्ररणं रञ्जणचमं पुन कोदृशं गतिं आधारभूमि पुनः कोदृशं प्रतिष्ठास्थिरावस्थान हेतुं हीपं निवासस्थानो जलमध्यवर्ति ६५ [अत्रि एगो महादीवो वारिमज्जे महालञ्जी महाउदगवेगस्स गङ्गे तय न विज्झई ६६] हे केशिसुने वारिमध्यपानीयान्तरालयो

सस्मरणं तु जिणक्वायं एममग्गोहि उत्तमे ६३ ॥ साह्ण गोयम पन्नति छिन्नेमि संसञ्चोइमो । अन्नोवि संसञ्चो मज्झं तंमेकहसु गोयसा ६४ ॥ महाउदगवेगीणं बुद्धमाणाण्यपाणिणं । सरणंगङ्गे पङ्कटाय दीवंकम्मन्नसी मुणी ६५ ॥ अत्रि एगो महादीवो वारिमज्जे महालञ्जी । सहाउदग वेगस्स गङ्गेतय न विज्झई ६६ ॥ दीविय इइफेबुत्ते केसीगीयम

मार्गप्रस्थिता . ते सवलाए उन्नमार्गपथाच्छे सगमार्गं तु पुनः स्यात् जिनीत्तं भलो मार्गं उत्तममार्गं तोर्थं करनी भायो एष मार्गः यस्मात् उत्तमः एमार्गं उत्तममार्गं उत्तम मुक्तिनीदाता ६३ श्रीशब्दा हे गौतम तव प्रज्ञाबुद्धि . हे गौतम ताहरि बुद्धि भलोच्छे छिन्न मम सययं . अय एम्हारोसंदेहकेवो अन्योपि सययो ममास्ति वीजोपणि सदेहके शुभने तद्विषयं ममार्यं हे गौतम कथय तेहनी अर्थं तुभनिकहा ६४ . महीदक वेगीन महापाणीने वेगी करीने बुद्धन् मानानां प्राणिनां बुद्धताजीवडाने तन्निवारणं प्रस्थित्य अवस्थान हेतु आधारं तेहने कोणसरणं दोणगति होपक मन्यसे हे सुने दृढधानकएहवो होपतुं कुण्यमानिच्छे हे गौतम ६५ अरि एकोयहाद्वीपच्छे एकमीटीदीप समुद्रमध्ये प्रोढोदकस्य पाणोमाहि महाविस्तीर्णं छे वातै सुभितस्य गतिः

विस्तोष एकोद्दोषास्तिद्विगता आपो यस्मिन् स द्वोप तत्र तस्मिन् द्वोपे महाउदकनेगस्य गतिर्विद्यते पातालकालग्रवात् क्षुभितस्य जलवेगस्य गमन नास्ति अपरत्र द्वोपप्रलयज्ञाने समुद्रजलस्य गतिरस्ति पर द्वोपिसति तत्र नास्ति ६६ [दीपियद् इकेवुत्ते कीसीगीयममब्बवो तथोकेसि बुवन्त तु गीयमीरणमब्बवो ६७] केगीगीतपृच्छति हे गीतमद्वोप इति किं सुक्त इत्युक्तवन्त केमि अमण प्रतिगीतम इदं अत्रवीत् ६८ [जरामरणवेगेण बड्डमाणायपाणिण धम्मोदीवोप इडाय ७६] हे केमिनुने जरामरण जलप्रवाहेण बड्डता च वहता प्राणिना ससारसमुद्रे श्रुत धर्मचारित्र धमरूप द्वोप वतते तुक्तं सुक्तं हे उड्डास्सोति नार कोट्टय सधर्मं प्रतिट्टानियल खान पुन कोट्टयो धम्मं गतिविवेकिना आश्रयणीय स धम्मं

मब्बवो । तथोकेसि जुवत्तु गीयमीड्डण मब्बवो ६७ ॥ जरामरण वेगेण बुड्डमाणाय पाणिण । धम्मोदीवो पर्इड्ढाय •
गर्इसरण सुत्तम ६८ ॥ साहुगीयमपत्तुतेच्छिन्नामे ससञ्चो इमा । अन्नायि ससञ्चो मज्झ तमेकहसु गोयमा ६९ ॥ अन्न

पापोनी वेगपाणीनी जायवो तत्र द्वोपिन विद्यते तेह द्वोपनी विखे पाणी जानानी ६६ द्वोप इति क उक्त द्वोप क्षुणकद्धो केसो गीतम अत्रवीत् केसो गीतमने कहेके तत केमि नुवत तु केसोड्ड पूच्छायका गीतम इद वचमाण अन्वीत गीतमकहेके ६७ जरामरणएव वेग प्रवाह उदक जरामरण रूपीयापाणीनेविखे नुडुन मानाना प्राणिना बूड्डता जीयाने प्राणेने श्रुत धम्मोद्वोपो मुक्तिहेतुत्वात् गति धम्मरूपीञ्चो द्वोप आधारके अवस्थान च ग्ररण एउत्तम ग्ररणके ६८ श्रीभना हे गीतम तवप्रज्ञाबुद्धो अहो गीतम ताहरी बुद्धी भनी छिन्न मम प्रसय अय एम्हारी सदेहहवे दूरिकोधी अन्योपि स्सग्घो ममाप्ति वीजो एकम्हारे स देहके तद्वियय ममार्य हे गीतम कयय तेहनी अर्थपणितु कही ६९ समुद्रे महोधि वृहज्जलप्रवाहे मोटा समुद्रेने विखे

विक नोखेटक उच्यते ससारीर्णव समुद्र उक्त य ससार समुद्र महर्षयस्तरन्ति एतावता महर्षय स्रजीवन्तपोनुष्ठान क्रियावन्त नोवाइक नाविक कृत्वा चतुर्गति भ्रमणरूपे भवार्णवे स्वशरीर धर्माधारकत्वेन नाव कृत्वापार प्राप्रवन्ति मोक्ष वजन्तीति भाव ७३ [साहुगोयम० ७४] अर्थशु प्राग्वत् ७४ [अन्धकारेतभिघोरं चिद्वन्तिपाणिगोबहु कोकारिस्रइउज्ज्वीय सख्यनीग मिपाणिण ७६] अथ पुन केगियमणो गौतम पृच्छति हे गौतम अन्धकारेतमसि प्रकायाभाविवहव प्राणिनस्तिष्ठन्ति अन्धकारतम शब्ददीर्ययार्थेक एव पर्यस्तघायन अन्धकार शब्दस्तमसोविशेषणत्वेन प्रतिपादित

केसि बुवततु गीयमी इणमस्र्ववी ७२ ॥ सरीरमाहुनाविति जीवो बुच्चइ नाविञ्चो । तसारी अन्नवीवुत्तो जतरति महे सिणो ७३ । साहुगोयमपन्नाते छिन्नोमि ससञ्चो सञ्च तमेकरसुगोयमा ७४ ॥ अधयारे तमे •
घोरे चिष्ठति पाणिणो वह । को कारिस्रइ उज्जोय सख्यनीग मि पाणिण ७५ ॥ उगञ्चो विमत्तोभाणू सख्यनीग पभ

बुवत केगोइ पूष्याघका गौतम इद वक्ष्यमाण अब्रवीत् हवे गौतम पूष्यानी उत्तरदीइछे ७२ शरीरमातु नो द्रूवति एगरीर नाव कही जीव उच्यते नाविक एजीवनावुञ्चो कहोइ ससार अर्णव समुद्र उक्त ससारसमुद्र कञ्चो य ससाराच्चितरति महर्षय ते ससारसमुद्र नोटा ऋषीश्वरतरं ७३ योभागा हे गौतम तव प्रज्ञावडि हे गौतम ताहरी पदि भलीछे छिन्न मम समय अथ एगहारी समयकेद्यो अन्धोपि सथा समान्ति वीजोपिण्हारे सदेहके तदिपय मगध हे गौतम कत्रय तदनी अर्थ गौतमकही ७४ अथकार करणशीले तीरीद्र अथकार कानो महारीद्र तन तिष्ठति प्राणिनो वहव तीहा प्राणी जीव घषा रहेके क करियति उच्यते तीरने उद्योत अजत्रालु कोणकरस्थे सर्वलोकै प्राणिना सर्वलोके दिखे जीवने ७५ उद्गत

जनत् परिपालनम् जनन्यस्तोर्धकारैः कथिताः ता अष्टप्रवचनमातरः काः समितयः कतिगुप्तयश्च कतितयो. समिति गुप्थी संख्या वदति पञ्चैव एतन्नित्येन पदपुरे पञ्चसमितयस्त्रिंशो गुप्तयः उभयोर्मौलने अष्टप्रवचनमातर उक्ताः १ (इत्याभासे सणादाणे उच्चारिसमिर्द्द्रय मण गुप्तीवयगुप्ती काय गुतोय अडमा २) एताः पंचसमितयः प्रथमं इर्यासमितिः इरणं इर्यां स मिति शब्दस्य प्रत्येकं णि रूपन्य इर्यायां गमनागमने संसम्बन्धक प्रकारेण इति. आत्मवेष्टा इर्या समितिः साद्वहस्त्रययावलोकनं चतुर्हस्तावलोकनं वाचलुपा क्त्वा यतो नचंक्रमणं इर्यासमितिः द्वितीया भाषा समितिः विचार्यभाषणं भाषासमितिः तृतीया एषणासमिति शुद्धस्य आहारस्य ग्रहणं एषणारमिति चतुर्थी आदान निमित्तः वस्त्र पात्र प्रमुखीप करणानां आदानं ग्रहणं सुचनं आदाननिचेपसमितिः पञ्चमी उच्चार प्रश्नवर्णपरिष्ठापनसमिति. एता एव समितय तिल्लोगुप्तयोगेपन गुप्तिर्मनसो ऽशुभव्यापारान्निवर्तनं मनोगुप्ति. प्रथमा अथद्वितीया वचनस्य अशुभव्यापारात् गोपनं दहनं गुप्तिः तृतीया काय गुप्ति का यस्य अशुभकर्मणीगोपनं निवर्तनं कायगुप्तिः एवं पञ्चसमितीनां तिष्ठणां गुप्तीनां च मौलनात् अष्टौ प्रवचनमातरौ ज्ञेयाः २ [एया प्रो ऋराजिर्द्द्रश्चो समासेण विद्याहिद्या दृषालसङ्गजिणकषायं मायं जल्य पवयणं ३] एतासु समासेन संचेपेण अष्टौ समितयो व्याख्याताः विस्तरत्वेनचे इत्येते तर्हि पञ्च समितय उच्यन्ते

दाणे उच्चारि समिर्द्द्रश्च । मण गुप्ती वय गुप्ती कायगुप्तीय अडमा २ ॥ एयाश्चो अड समिर्द्द्रश्चो समासेण विद्या

अख्याता तीन गुप्ती कही १ इर्यासुमति १ भाषासुमति २ एषणासुमति ३ आदान निचेपथा समितो ४ उच्चारसमिति ५ तत्रसमिति शब्दः प्रत्येकं योज्यः मनोगुप्ति १ वचनगुप्ति २ कायगुप्ति ३ एता. अष्टौ प्रवचनमातरः ए आठ प्रवचनमातरः एताः अष्टौसमितयः एचाठसमिति संचेपेण व्याख्याता

तिशेगुप्रपथ उच्यन्ते समासेन स क्षेपेण चेदुच्यते तर्हि अष्टौ अपि समितय उच्यन्ते तस्मात् अष्टानां अपि समिति स प्रावच्यन्ते यस्तु पूर्व
पञ्चानां समिति स प्राति यथा गुप्तिस ज्ञा तत्कथञ्चिद्देख्यापनार्थं यत्रयासु अष्टासु माद्यु द्वादशाद् गिनाभ्यात प्रपचन श्रुत चारित्र धाम्नाय
इति मात सम्भूषंतिन स स्थित यतोहि सर्वा एता अष्टौ अपि चारित्र रूपा चारित्र हि ज्ञान दर्शन विनात भयति ज्ञानदर्शन चारित्रेभ्योऽति
रिक्त द्वादशाद् न भवन्ति तस्मात् द्वादशाद्गो अष्टासुमाद्यु स्थिता तिन एतासाम्प्रवचन जननी स ज्ञा ३ प्रथम र्यां समिति लरूप माह
(भालभ्यनेण १ कालेण २ मनेण ३ जयणा ४ चउकारणपरिसुह सञ्जएइरियरिए ४] स यत साधुरभिस्यतुभिं कारणे परिशुशयानिर्दोषया र्या
निर्दोषयागल्यारीयेतगच्छेत् प्राकतत्वात् दतीयास्थाने प्रथमा तानि चत्वारिकारणानिकानि भालभ्यते निस्यल क्रियते मनोयेन इत्यालभ्यन तेन
भालभ्यनेन १ पुनहितोय कारण काळ इर्याया समय स्तेन कालेन पुनस्ततोय कारण मार्गं पन्थास्ते नयिद्वारयोग्य मार्गेण पुनयतुर्थं कारणे

द्विया । दुवालसग जिणपत्राय माय जल्यधो पवयथ ३ ॥ भालवणेण कालेण मन्गेण जयणाइय । चउ कारण
परिसुब सजए इरिय रिए ४ ॥ तत्या लवण नाण दसण चरण तथा । कालिय दिवसे वुत्ते नग्गे उप्पह वज्जिए ५ ॥

स क्षेपे करोने कदो द्वादया गिजनभ्यात धार अगतोयकरनाभ्याथा यदाष्टप्रवचमाश्रु सव प्रवचन अतर्भूत सर्वसोशत एअष्टप्रवचन माता माहि
अतर्भूतमधी ३ भालभ्यनेन भालवने करोने कालेन कालकरोने मार्गेण मार्गे करोने यतनयाजयणाइ करोने चतु कारण परिशुश एणार कारणे
करोने सुइ स यत इयागति गच्छेत् यतोइर्या सुमतिने सोधे ४ तत्र भालन ज्ञान तोषां भालभन ज्ञानतु करे दर्शन दर्शनधारित तथा तिम

यत्ना यतन यत्ना जीवदया यतनया एवञ्चतुर्भिःकारणैः शुद्धयागत्यासाधुनागन्तव्यमिति भावः ४ पूर्व चतुर्णां कारणानां नाभान्युक्ताविस्तरैण वर्णयति
[तस्य आलम्बणं नाणं दसणञ्चरणं तद्वा कालियदिवसिबुत्तेमगे उपह्ववज्जिए ५] तत्र चतुर्षु कारणेषु आलम्बनं यत् आलं व्यगमनं अनुज्ञायते तत्
आलम्बनं यतोहि आलम्बनं विनानिरर्थकं गुरुभिर्गमनं अनुज्ञातं नास्ति तत् आलम्बनं सूत्रं अर्थं तदुभयं सूत्रार्थज्ञानं सिध्दाल् पठन पाठनं
ततोदर्शनं सम्यक् तत्ररुचिरूपं तस्य ग्रहणं ग्राहणं वा तदपि कारणं पश्चाच्चरणं चारितं अत्र चारितं शब्देन सामादिकादिकं सामादयं सम इयं
सम्भावयो समासमस्त्विवी शृण्वज्जं च परिणामपञ्चवशायेय ते अष्ट इत्याद्यपि कारणं यतोहि ज्ञानार्थं दर्शनार्थं चारित्रार्थं एवं हयोरर्थं एव पृथक् २
एवं तयाणामप्यर्थं एवं अष्टादशोदशवन्ति च पुन कालः ईर्यायाः समयोदिवस एव उक्तो न तु रातिः ईर्यायाः समयोस्ति रात्री हि विहारं
कुर्वत. साधोरीर्याशुद्धिर्न स्यादित्यथः मार्गसु उत्पद्यवर्जनं उन्मार्गस्थत्यागः उन्मार्गो चलमानस्य आत्मनः संयमस्य विराधनास्थात् ५ [द्व्वञ्चोखितञ्चो
चिव कालञ्चो भावञ्चो तद्वा जयणा च उब्बिहाबुत्ता तं मेकित्तयञ्चोसुण ६] तीर्थं करैरणधरैश्चतुर्विधायला उक्तातां चतुर्विधा
यत्नां मे मम कथयतस्व अणु भीष्ण्य तदेव चातुर्विधत्वमाह द्रव्यतो यत्ना च पुनः क्षेत्रतोयत्ना कालतोयत्ना तथा भावतोयत्ना ६ अथ द्रव्यतः कथं

द्व्वञ्चो खितञ्चो चिव कालञ्चो भावञ्चो तद्वा । जयणा चउब्बिहा बुत्ता तं मे कित्तयञ्चो सुण ६ ॥ द्व्वञ्चो चक्वुत्ता

चारित्र कालदिवसःउक्त.कालदिवस कहीइं मार्ग उत्पद्यवज्जितः मार्ग ज्वट वज्जीखाडप्रमुख ५ द्रव्यतः द्रव्यथकिवसु पूंजीलेवी क्षेत्रतःक्षेत्रथकी कालतः
कालथकी भावतस्त्रथा भावथको तिम यतना चतुर्विधा उक्ता जयणाचिहुंप्रकारे कही तां ममकीतयतः अणुतेभुम्भने कस्रतां थकांतुमे सांभली ६

सद्य

भाषा

यदातामाह [द्रव्यश्री चक्रसापेहे जगमित्त च स्थितश्री कालश्रीजावरोपज्ञा उवउत्तिय भावश्री ७] द्रव्यतोद्रव्यमाश्रित्य एव यतना यदा चक्षुषा जीवादिक
द्रव्य विलोकयेत् क्षेत्रत क्षेत्रमाश्रित्य युगमात्र घटुहंसप्रमाण क्षेत्र मार्ग प्रेक्षितविलोकयेत् इय क्षेत्रीयला कालत कालमाश्रित्य इय यला
यावकाल यावतकाल प्रमाणेनरोयेते गमन विधीयते सा च कालतीयताय साध लपयुक्तभूत इर्याया सावधानत्वात् स्यात् साभावतो यला श्रेया ७
अथ उपयुक्तमिव धिस्त एचेनवर्णयति [द्रव्यस्य विवक्षिता सम्भ्राय क्षेत्र पञ्चहा तन्मृत्तीतप्युत्कारि उवउत्तिय रिये ८] साधुरूप युक्त सन इयाया
साध गीम्यगतौरोयेत् ब्रजेत् कि क्वला पञ्चिन्द्रियार्थान् पञ्चाना इन्द्रियाणा अर्थान् विषयान् विषयं च पुन स्वाध्याय कुर्यात् पुन साधु कौट्य
सन इर्यायारोयेत् तन्मृत्तिं सन् तस्या इर्या समितोन्मृत्तिं शरीर यस्य सतन्मृत्तिं न तु यतस्तत शरीर धूनयन गच्छेत् कायचापत्य रहित इति

पेहे जुगमित्तच स्थितश्री । कालश्री जाव रीपज्ञा उवउत्तिय भावश्री ७ ॥ इन्द्रियस्य विवक्षिता सम्भ्राय क्षेत्र पञ्चहा ।
तन्मृत्ती तत्पुरकारे उवउत्ते रिय रिए ८ ॥ कोहे माण्ये मायाय लोभये उवउत्तया । हासे भय मोहरिए विगतरासु

द्रव्यतो जीवादिक चक्षुषा प्रेक्षित द्रव्ये तु जीवश्रा श्रीमार्गश्रीषि आश्रिकरीति युगप्रमाण क्षेत्रत धूसरा प्रमाण क्षेत्र दृष्टिद्रिद्र कालत यावत कालरीयेत्
गच्छेत् कालिञ्जितले कालि विचरे तत्र उपयुक्त सावधान भावैकरी सावधानपण्चाले ७ इन्द्रियाधान शब्दादीन् विवर्जयेत् इन्द्रियनाधिपय शब्दादिक
ध्वजं स्वाध्याय पचप्रकार सम्भ्राय पाचप्रकारे तिष्ठेज चेटाद्र ते प्रधान श्रग जाषी श्रीकारकरतो उपयुक्त इर्यारीयेत् सावधानपणे इर्यासमितिसीधे ८
क्रोधे क्रोधमाने च मानवली मायाया माया लोभे उपयुक्ततया सावधानतया लोभने विखे सावधानयको हास्ये भय मुखरिति हास्यने विखे भयनेविखे

भाव पुनः कोट्यश्च साधुः तत्पुत्रस्कार तां एव पुत्रस्कारेति इति तत्पुत्रस्कारः तादृश्यां समति प्राधान्येन अङ्गीकुरुते इत्यर्थः अनीनकायमनसोस्त्यत्रता
उक्ता एव उपयुक्तः सावधानो विचरित् इत्यर्थः ८ [कोटिप्राण्येयमायाय लीभेय उवउत्तयाहासे भयभीहरिए दिग्गहासुतहेवय ८] [एयाद् अठ्ठथाणाद्
परिवञ्जित् सञ्जए असावज्जंभिभ्रंकाले भासभासिञ्जपन्नवं १०] अथ द्वाभ्यां गाथाभ्या थापास्रतिरिति याद पन्नप इति प्रज्ञावान् सयतः काले प्रस्तावे
भाषायाः समये असावयानिपापां तथामितानं स्वत्यां भाषां भाषेत किं क्वत्वा एतानि अष्टौ स्थानानि उपयुक्तं तथा एकाग्रत्वेन परिव्यव्यलक्ष्णा एतानि
अष्टस्थानानिकानि क्रोधीमानो मायालोभय ४ हास्यं भय मौखरिकविट् चेट्टा असम्बद्धवत्तभापण वा दिक्कया च एतान्यष्टौ असत्यवाक्य स्थानानि
तस्मात् प्रत्येकं क्रोधीमानिमायायां लीभे च हास्ये भयेमौखरिकयां तद्वैव विक्रया सुच उपदिश्य तन्मदान् दीप यरित्तल असावद्या निर्दोषां परिमितानां
प्रस्तावेभाषां वदेत् इत्यर्थः १० अथैषणासमिति माह [गविसणाए गहणिय परिभोगे सन्नायना गान्गरेनहि सिञ्जाए एएतन्निविस्तीहिए ११] गवेष
णायां एषणागवेषणैपणागौरिव एषणागवेषणाविशुद्धाहारदर्शनविवारणा प्रथमा एषणा १ द्वितीया गहणैषणा त्रिगुणाहारस्य ग्रहणं ग्रहणैषणा २
द्वतोयापरिभोगैषणापरिसमन्तात् भुञ्जन्ते आहारार्थिकं अस्मिन् इति परिभोगो मण्डली भोजनरत्नवस्तुवैषादिचरणा परिभोगैषणा एतास्तिस्त्रीपि

तहेवय ८ । एयाद् अठ्ठ थाणाद् परिवञ्जितु संजए । असावज्जं भियं काले भास भासिञ्ज पन्नवं १० । गविसणाए १

वाचालपणानि विखे विकथासु तथैवच वली विकथावर्जे चालतीयको ८ एतानि अष्टस्थानानि एथाठस्थानक परिवर्जित् सयतः भन्नेप्रकारे वर्जं सयती
पापरहितभासा असावद्यं भितं कार्याय प्रस्तावे असावद्यानिः पाप धोडी वीली भाषां भाषते प्रज्ञावान् भाषाद् वीले बुद्धिवत साधु १० गवेषणा स्त्रीकरणे

एषणा आहारोपधि यथासुधियोधयेत् केवल आहारे एष एता एषणानभवय कि तु आहारे उपधीवका पात्रादौ यथा उपानय सस्कारकादिस्तव सर्वतैपथाधियोधयेत् ११ [उगमउपयायण पठने विदएसोहिज्ज एसण परिभोग च उत्य च विसोहिज्जजय जयी १२] जय इति यद्वयान् जयीति यतोसाधु प्रथम इति प्रथमायाभवेपथाया उरुमोत्यादनात् दीपान् वियोधयेत् वियोधेण विचारयेत् पुन साधुर्हितीयाया ग्रहीपथाया शङ्कित्वादि दीपान् विचारयेत् पुनस्तृतीयायां परिभोगेपथायां चतुक्त्वेण चतुष्टय वियोधयेत् १२ इति गाथार्थ अत्र प्रथमायां गधैपथै पथायां हाति यत् दीयाभवात्स तद्यथा प्रथम पीडयउरुमदीपा उरुमयदेन आर्हकर्मकादि पीडयदीपा तथा प्रथमैपथायां एष उत्पादनादि दीपा भवन्ति उत्पाद्य तेषापुनये ते उत्पादना साधो सकायादेवपीडय दीपा उत्पद्यन्ते ते च धात्री प्रसुखा एष हाति शष्टीपाहितीयायां एषणायां यद्वचै पथाया शङ्कित्वादि दशदीपा

गष्टयेय २ परिभोगे सणाय ३ जा । आहारो वहि सिज्जाए एए तिननि विसोहिए ११ । उगमनु पायण पठने विदए सोहिज्ज एसणं परिभोग मि चउक विसोहिज्ज जय जई १२ । उहिा वहिा वगाहिय भडगा टुविह मुणी । गिणहती

प्रायेवनतद्विपया एषणा अगोकारकोजि संघोर ते गधेपणा परि गधेपणाया परिभोग एषणा आहारोपधिशब्दा आहार उपधिशब्दाएषणा एतैस्त्रीभि द्वापे वियाधयेत् एतेन एषणा साधयाने सोधे ११ उरुमोत्यादना दीपान् प्रथमा गधेपणा सोलह उरुमदीप सोलह उत्पादनादीपटाले एपेहंसीएषणा द्वितीया यद्वचैपणां वियोधयेत् पीजी यद्वचैपणा १० दीपटाने परिभोग पिड १ यथा २ वक्ता ३ पात्राकक ४ टीजीपरभोग एषणा पिड १ शिथ्या २ यथा ३ पात्र ४ वियोधयेत् यतनयायति जयणाकरे शङ्कते इते परिभोगकरे १२ श्रीवोपधि चतुर्दशविध दृढ उपग्रहिक उपधि उपनरए धिधा मुनि ४८

आहारि राधामानि साधुनिमित्तमपि तस्मिन्नाहारे अधिक हृदिकाया पूर्यते तदा अथ्वपूरेदीप पीडय १६ एते पीडय उहमदीषा दायकात् दीषा
 उत्पद्यन्ते अथ अनागारात् पीडयदीषा उत्पद्यन्ते ते उत्पादनदीषा अमी प्रथमी धात्रीदीषि यदा साधुर्गृहस्य बालकान्चि पिटिकादिभि क्रीडयित्वा
 पाषोवत् प्रमीद उत्पाद्य आहार गृह्णाति तदा प्रथमी धात्रीदीषि १ यदा गृहस्य गृहगुप्त प्रकट समाचारान् सजनादीनां कथयित्वा आहार गृह्णाति
 तदा दूतकर्माख्या द्वितीयोदीष २ यदा लाभालाभजोवित मृत्यु सुखदुःखादि निमित्त त्रिकालस्य गृहस्यार्थे उक्ता आहार गृह्णाति तदा निमित्तार्थे
 स्तुतीय ३ यदा गृहस्य स्याति कुलञ्चाला आक्षीयमपि साधुस्त्वनेष ज्ञाति तदेवकुल स्वकीय प्रकाश आहार गृह्णाति तदा आजीविकादीपयसुर्थ ४
 यदा स्वकीय दीनत्व दयालुत्व गृहस्यार्थे प्रकटीकृत्य आहारादिक गृह्णाति तदा वपनीकोदीप पथम ५ यदा वैद्यवत् नाटिकां दृष्ट्वा वमनयिरचना
 जीर्णान्तरादीना भेषज्य सुपदिश्य वैद्यक कला आहारादिक गृह्णाति तदा चिकित्सीदीप ६ यदा गृहस्य भापयित्वा प्रापदत्ता आहार गृह्णाति तदा
 शोधपिड सममोदीष ७ यदा साधुना समक्षपथ कत्वा तदाहलब्धिमान् यदा भवतां सरस आहार अनुकण्टहादानोय ददाभि इत्युक्ता गृहस्य
 विड व्य गृह्णाति तदा अष्टमोमान पिडदीप ८ यदा माया कत्वा लोभात् वैष पराहृत्य आहार गृह्णाति तदा माया पिडो नथमदीप ९ यदा लोभेन
 सरसाहारलील्येन भाल्वा २ आहार गृह्णाति तदा लोभपिडो दशमोदीप १० यदा पूव पथाहागृहस्य सृति विधत्ते आहारष गृह्णाति तदा सख
 दीप एकादश ११ यदा विद्यायासर साधयित्वा भोजन साधयति तदा विद्यापिडो द्वादशोदीप अथवा विद्या पाठयित्वा यथ अथाप्य भोजनादिक
 गृहस्वात् गृह्णाति तदा विद्यापिडो द्वादशोदीप १२ यदा कान्ठं मोहन यत्र मत्त साधयित्वा कत्वा दत्वा आहारादिक गृह्णाति तदा मधदीप स्रयो
 दश १३ यदा अदर्शोकरणाद्य जनमोहन चूर्णयोगेन आहार गृह्णाति तदा चतुर्दशचूर्णयोगोदीप १४ यदा सुगन्धसौकान् सौभाग्यादिविज्ञेयन राज

वशोकरणादि तिलकीन जलस्थलमार्गोत्पन्न सुभगदुर्भगविधि उपदिश्य आहार गृह्णाति तदा योगपिडदीपः पञ्चदशः १५ यदा शुलादिजगम दूषण
निवारणार्थं मषा ज्येष्ठा श्लेष्मा मूलादिनक्षत्र शाल्यार्थं मूले. रत्नानं उपदिश्य आहारोदिकां गृह्णाति तदा पीडश्री मूलकर्मदीपः १६ एवं उद्गमोत्थादनादि
दीषा. सर्वेपि गवैषणायां द्वालिंशदीषा भवन्ति ३१ अथ द्वितीयायां गृह्णैषणायां दशदीषा कथ्यन्ते यदा दायकः शंकां कुर्वन् ददाति साधुरपि
जानाति असौदायक शंकां करोति एवसति आहारं गृह्णाति तदा प्रथमः शंकीतोदीषः १ द्वितीयोऽसच्चितोदीषः सच्चिविधः सच्चितेन खरंटितः
आहारः अचित्तेन खरंटितथाहारी भवति तदा अक्षितदीप उक्त उच्यते २ यदा शुषिव्यां जले अग्नी वनस्थलिमध्ये त्रसजीवानां मध्ये निचिसं
आहारं ददाति तदा निचिसासृतीयोदीषः ३ यदा अचित्तं आहारं अपि सचितेन आच्छादितं स्यात्तदा पिहितदीपसतुर्थः ४ पिहितदीपस्य चतुर्भंगी
सचित्त आहार सच्चितेन पिहितं अचित्तं सचित्तं आहारं अचित्तेन पिहितं एवं चतुर्भंग्यां अचित्ताहारं अचित्तेन पिहितं अतकी
पिनदीष. यदा बृहज्जाजनीस्थितं आहारं तलस्य भाजनेन दातुम् अशक्यत्वेन तन्नाजने परतोत्तार्यं प्रथवा तस्मान्नाजनात् अपरस्मिन् भाजने उत्तार्यं
आहारं ददाति स संहतदीषः पञ्चमः ५ यदा असमर्थाः पण्डक भ्रियुः स्वविरः अन्य उन्मात्तो भक्तो ज्वरपीडित कम्पमानशरीरो निगड बहो वृडे चिसो
गलितहस्त क्रिन्नपादः एतादृशोवादाता ददाति तदा दायक दीपः पुनर्यदा कश्चिद्वायिका दायिको वा प्रथिन प्राज्वालयन् अररदृकं भ्रामयन् वरदृके
चान्नपोषणं कुर्वन् सुसत्तेन खण्डन् सिलायां कीटके वर्तयन् चरथां कार्पासादिकं लोडयन् रूतं वापि जयन् सर्पकेण धान्यमाक्रीटयन् फलादिकं
विदारयन् प्रमार्जनेन रज प्रमार्जयन् इत्याद्यारम्भं कुर्वन् तथा भोजनं कुर्वन् स्त्रीचयासम्पूर्णं गर्भस्थित भयति पुनर्याच स्त्रीनालं प्रतिस्नान्यं पाययन्ती
पुनस्तं बाल रुदन्तं मुक्ता आहार दानाय उत्तिष्ठति पुनर्याः पट्काय सभार्दनं सगहनं वा कुर्वन् साधुं दद्यात् कश्चिकोपरिस्थम् अग्रपिण्डम् उत्तारयति

रजोहरण पीतिकादिकम् अत्र उपधिप्रत्यस्य प्रत्येक प्रयोग एव भाण्डम् उपकरणं द्विविधं भवति रजोहरण दण्डकादिक द्विप्रकारकं वर्त्तते मुनिस्तं द्विविधम् अपि भाण्डं गृह्यन् च पुनर्निक्षिपन् मुञ्चन् इमं विधि प्रयुञ्जीत १३ त विधि प्राह ॥ चक्रुसा पडिलेहिता पमिज्जिज्ज जय जयी आदए निक्ख विज्जावा दुहओवी समिओ सया १४] यत्नवान् यतीयत्नया चक्षुषा प्रतिलेख्य प्रमाजयित्वा समितः सन् आदान निक्षेपणा समिति युक्तः सन् अथवा द्रव्य भावभेदेन समित समितियुक्तः सन् द्विविधम् अपि उपधिम् औपधिम् अथ औपग्राहिकं गृह्णीत आददीतवा अथवा मुंचित् निक्षिपित् १४ (उच्चारं पास वणं खिलं सिषाण जल्लिय आहारं उवहिं देहिं अन्नंवावि तहाविहं १५) (अणावाय मसलीए अणावाए चैव होइ संलीए आवाय मसंलीए आवाए

निक्खवंतोयपडंजिज्ज इमंविहिं १३ । चक्रुसापडिलेहितापमज्जिज्ज जयंजई । आदएनिक्खव्वेज्जावादुहओवीसमिए
सया १४ ॥ उच्चारं पासवणं खिलं सिषाण जल्लियं । आहारं उवहिंदेहं अन्नंवावि तहाविहं १५ ॥ अणावाय मसंलीए

उपधिवो जो उपग्रहिक उपधि दांडा प्रमुख उपग्रहिकमाहिंके गृह्यन् मुंचन् लेताथकां मुंचतांथका उपगारणलेतीथको मूकतीथको कुर्वीत प्रयुंजीत इण विधे प्रजुंजे १३ चक्षुषा प्रतिलेख दृष्टिकरी पडिलेहे रजोहरणादिना प्रमाज्यं यतनयाओघासुं यतनयापूंजे आदत्ते निक्षिपयेत् वा साधु वसुने लिइं मुंचे अथवा द्विधा द्रव्यतो भावतः समितः सदा इम चिहुं प्रकारे समिति सदाहोइ १४ पुरीष प्रभवन् मूलं वडोनीतिल्लुणीतं श्लेष्माणंनसासल देहंमलं श्लेष्मा नासिकानोमल देहोमल आहारं उपधिं देहिं भातपणी उपधि पूंजीलेवा अन्यदपि तथाविधं अनिरादं तथाविधउपगारण १५ स्वपर आगमन

सर्व

भाषा

चित्रसलाए १६) (आवावाय मसलोए परप्रणु वधाएए समे अश्रुसिरियावि अचिरकाल कयमिय १७) [विच्छिन्ने दूरमोगाटे नासने विल वज्जिए तस पाण बोध रहिए चत्ताराएणि बोसिरे १८] वसदमि कुलकम अथ पञ्चमी समिति प्राइ सायु उच्चारादीनि एतादये स्थिखले धुयुजेत् परि टापयेत् इति चठुर्वीगायथा सम्बन्ध तानि कानि उच्चारादीनि उच्चार पुरीप प्रयथय मूल खिल कफ सिहाण सैस जप्पक शरीरमलस आहारम

आणावाए चेवहेइइ सलोए । आवाय मसलोए आवाए चेवसलोए १६ ॥ आणावाय मसलोए परस्सणु वधाएए ।

समे अश्रुसिरियावि अचिर कालकयमिय १७ ॥ विच्छिन्ने दूरमोगाटे नासने विलवज्जिए । तसपाणवीय रहिए

रहित असलोको अर्थान आयभाग १ स्वपच्च परपच्चनु आवु नथो अने वेमलायो केहने देखव नथो एपेहलोभांगो १ आगमन नास्ति परलोको दुर्गन स्वात् आवे कोहनहो पण्डिदेखु होइके एवोचो भांगो २ आपातमसलोक जिहा स्वपच्च परपच्चनु आवु के परदेखु नथो एत्तीजोभांगो आग मनमयस्ति यत्र सलोकोप्यस्ति जिहा स्वमच्च परपच्चनु आवु के तथा देखु के भांगो ४ १६ अनाप्यते स्वपच्च परपच्चाया गमनरहिते असलोको तदर्थानवज्जिते जिहा कोरनु आवु देखु नथो १ परंथ आत्माने सयसस्व उपधातो नास्तिपरथकी आ आलानो स यमनो उपधात नथो धातो २ उच्चनोच भूमिर्नास्ति क चीनोचो भूमिका नहोके समो धरतीके भागा ३ अथपिरे टणपलादि अनाकीर्णभेद ४ अग्निप्रमुखे योडाकालनो अचिन्न कोधो यडिलहे अचित्तपू मोहेभेद ५ १७ विसोणं दूरमवगाटे विसोणंके लावो चोहो दूरमवगाटे पोइलोइयाथ ६ प्रमाण योहोती आगल हिठिल अचिन्न ७ दुरवसिने ८ मूपकादिदंधे रहितो ट कड नथो दूरके उ दराप्रमुखनाविल नथो ९ वसप्राण बीजरहितो वसजीव कोरं नथो बीजधरी पण

अनादिक षपथिं जीर्णस्त्रादिकं अन्यत् तथाविधपरिष्ठापनायीथं भेषजाद्यर्थं आनीतं गोमुत्रादिकं एतत्प्रासुकेस्थखिले परिष्ठाप्येत पूर्वस्थखिलस्य चतुर्भङ्गीमाह अनापाते असंलीके न विद्यते आपातः स्वपक्षीय परपक्षीयाणां आपाती गमनागमनं यत्र तत् अनापातं पुनर्यत् असंलीकं भवति न विद्यते लोकानां संलीको दूरात् दृष्टिप्रचारी यत्र तत् असंलीकं कीर्षः यत्रस्थखिले प्रायो गृहस्थः कोपिनायाति तत्रचस्थखिले प्रायो दूरात् गृहस्थानां दृष्टिप्रचारीनस्यात् तत्रस्थखिले इत्यर्थः इति प्रथमोभङ्गः पुनर्यत् खंडलं अनापातं भवति परं संलीकं भवति लोकाना उपगमनरहितं भवति परं लोकानां दूरात् संलीकसहितं दृष्टप्रचारसहितं भवति इति द्वितीयोभङ्गः पुनर्यत् खंडिलं लोकानां आपातसहितं उपगमनसहितं भवति अथच दूरात् लोकानां संलीकरहितं दृग्प्रचाररहित भवति अथ तृतीयोभङ्गः पुनर्यत्स्थखिलं आपात लोकानां उपगमनसहितं अथ संलीक दूरात् लोकानां संलीकं दृष्टिप्रचारसहितं भवति अथ चतुर्थोभङ्गः १६ अथावायेति तत्र चतुर्थोभेदेषु अनापाते, असंलीके स्थखिले उच्चारदीनिव्युक्तो जेत् कथं नूते स्थखिले दशविध विशेषणविशेषितानि दश विशेषणान्याह कथंभूते स्थखिले परस्य अनुपधातके यत्र अन्यस्य उपधातीनस्यात् समयस्य आत्मनः प्रवचनस्य बाधारहिते हीलारहिते १ पुनः कीदृशे अङ्गुसिरे अपि अङ्गुसिरे इति घासहृत्तपत्र काष्ठादिभिः अथ्याते तत्रहि परिष्ठापिते जन्तुनाउत्पत्तिः स्यात् पुनः कीदृशे अचिर कालकृते अगनादिनास्त्रोकेन कालेन अचिन्तीकृते १७ पुनः कीदृशे विकृते विस्तीर्णे पुनः कीदृशे दूरं उगाढे अधस्तात् दूरंसचिते उपरिष्ठात् अद्गुलपंचक यावत् अचिन्ते पुनः कीदृशेन आसने अनासने ग्रामाद्दूरवर्तिनि पुनः कीदृशे विसवर्द्धिते मूसक सपुं कीटिकादि रध्ववर्द्धिते पुनः कीदृशेन सपाणे न्द्रियादिभी रहिते पुनः कथं भूते वीर्षेः शालि गोधूमादि सचित्त धान्यै रहिते एतादृशे दशविध विशेषणविशेषिते स्थखिले पूर्वोक्तान् उच्चारदीन् व्युत्पद्यते जेत्यजितेतिभावः (एयायो पंचसमिद्धेशी समासेणविद्याहिद्या धत्तोयतओगुत्तीश्री वृच्छामि) अणुपुब्बसो १८)

एता पचसमितय समासेन सक्षेपेण व्याख्याता इत अनन्तर तिस्रोशुक्तिमनो शुक्तिवाक्यसिकायशुक्ति आनुपूर्वीतीव्रक्रमतीवच्यामि १८ [सञ्जातहेव
मोसाय सञ्जातोसातहेवय चउत्थो असञ्जमोसाश्रोमणशुक्तोचउत्थिविहा २] मनोशुक्तिचतुर्विधा प्रथमामत्या मनोशुक्ति तथा द्वितीया असत्यामनोशुक्ति
तथैव तृतीया सत्याम्यपा मनोशुक्ति तथा चतुर्थी असत्या म्यपामनोशुक्ति यत्सत्य वस्तु मनसि चित्तते जगति जीवतत्त्व विद्यते इत्यादि चिन्तनस्य योग
स्तदूपाशुक्ति सत्यामनोशुक्ति प्रथमा १ यत् असत्य वस्तुमनसि चित्तते जीवोनास्ति इत्यादि चिन्तनस्य योगस्तदूपाशुक्ति असत्या मनोशुक्ति द्वितीया २
बह्वर्ता नानाजातियागा आस्तादि वृथाणा वन दृष्टा आस्ताणा एव वन एतत् वर्तते स तत्सत्य पुनर्मुपाशुक्त एव इत्यादि चिन्तन योगस्तदूपाशुक्ति
सत्या म्यपामनोशुक्ति तृतीया यतोत्र काचित् सत्या चिन्तनाकाचित् म्यपचित्तना केचित् तत्र वर्ते आस्ता सतितेन सत्या केचित् तत्र वर्ते भव खदिद

उच्चारार्द्विषेसिरे १८ । एयाश्चो पचसमिर्द्व्यो समासेणविद्याहिद्या । इतोत्र तत्रोशुक्तीश्चो वोक्कामि अणुपुव्वसो १९
सञ्जातहेवमोसाय सञ्जातोसा तहेवय । चउत्थीअसञ्जमोसामणशुक्ती चउत्थिविहा २० । सरस समासो आरभेय तहे

नयो १ द्यगुणशुक्त स्वदिने उच्चारदिन् परिष्ठापयेत् द्यगुणे सहितरस्यास्वदिने थिखे उच्चारदि वीसिरार्ये १८ एता पच समितय एपाचसमितति
सक्षेपेन व्याख्याता सक्षेपे करोने कही इत्योततरातिणि गुप्तय एतलानतरतीनशुक्ति वक्ष्ये अनुक्रमेण अनुक्रमे कइ ह्य १८ सत्या मनोशुक्ति तथैव म्यपा
एकसत्या मनोशुक्ति असत्या मनोशुक्ति सत्या म्यपा मनोशुक्ति स्वयैवच चोर्जा सत्यम्यपा मनोशुक्ति चतुर्थी असत्या म्यपा तथाचउत्थी असत्या म्यपा मनोशुक्ति
मनोशुक्ति चतुर्विधा मनोशुक्ति चिद्ध प्रकारे कही २ सकस्य अह व्याख्यामि एकाग्र करीस असो मरिष्यति एवविष सकस्य आरभते विखे मन

पलाश्रादयो ह्यल्पा अपिसन्ति तंन मध्याप्यस्ति चतुर्थी असत्या मध्याया चिन्तना सत्यापि नास्ति यत् आदेश्य निर्देशादिवचनं मनसि चिन्त्यते हे देवदत्त
 षट्म् आनय अमुकं वसुमह्यम् आनीयदीयताम् इत्यादि चिन्तना व्यवहाररूपा तद्रूपागुप्तिः असत्या मध्या मनीगुप्तिश्चतुर्थी यत एषा चिन्तना सत्यापि
 नास्ति मध्यापि नास्ति व्यवहार चिन्तना इत्यर्थः ४ । २० [संभं समारंभे आरंभेय तद्विवय मणं पवत्तमागन्तु नियत्तिज्ज जयं जई २१] यती साधु
 यैववान् सन् संरथ समारथे तथैवच आरथे प्रवर्त्तमानं मनीनिवर्त्तयेत् सरथश्च समारथश्च अनयोः समाहारः संरथ समारथं तस्मिन् संरथ
 समारथे संरथः सङ्ख्य अह तथा ध्यानं कारिथाभि करोमि वा यथा असौ क्षियते मरिष्यति इत्यादि सङ्ख्यः संरथः तत्र सङ्ख्ये प्रवर्त्तमानं
 मनी निवर्त्तयेत् तथा समारथः परपोडाकरीच्चाटन कीलनादिनिवचनं ध्यानं तत्रापि प्रवर्त्तमानं मनी निवारयेत् तथैव च पुनः आरथः
 परप्राणापहारचमोऽशुभ परिणामस्त्वस्मिन् परिणामे प्रवर्त्तमानं मनी निवर्त्तयेत् २१ ऋष्य वचन योगं वदति सङ्ख्योसंरथो परितापकुरी
 भवे समारथोय आरथो सुखवयाईण सखिसिं २२ सर्वेषां अशुद्ध वचसां एते भेदा भवन्ति कीदृशास्त्रिभेदाः परितापकराः केते भेदाः संरथः
 सङ्ख्यः इत्याद्यर्थः पूर्ववदेव [सञ्जातहेवमीसाय सञ्जामीसातहेवय च उखी असञ्जमीसाउ वयगुत्ती च उखिहा २२] वचन गुप्तिश्चतुर्विधा भवति सत्या
 सत्यवाक् तस्यायोगः सत्यवाग् तद्रूपागुप्तिः सत्यावाग्गुप्तिः १ एवं असत्यासत्यवाक् तस्यायोगः असत्यवाक् योगस्तरूपागुप्तिः असत्यवाग् गुप्तिः २
 तद्विवय । मणं पवत्तमागन्तु नियत्तेज्ज जयंजई २१। सञ्जातहेव मीसाय सञ्जामीसा तद्विवय । चउखी असञ्जमीसा वइ
 प्रवर्त्तये मनः प्रवर्त्तमानं मनजातुं धकुं निवर्त्तयेत् यतनयायतिः यतनाइं करीने पाक्कीवाले २१ सत्यावाग् गुप्तिः तथैव तद्विपरीता असत्यावाक्
 साची वचन असत्यवचन सत्या मध्या ततोया तथैवसत्या अने मध्या मिथ एतौजो गुप्तिश्चतुर्थी असत्यामध्याचीथी असत्यामध्या वचनगुप्ति एवं वाग्गुप्तिः चतु

श्रव
भाषा

तथा या सत्यायाग सतोश्चसत्यायावाचा सह मिलति सा सत्यास्यथा वागुक्ति स्तुतोया ३ तु पुनश्चतुर्थो असत्यास्यथा वा गुक्ति या सत्यापि नास्ति
 शब्दपिनास्ति अर्थात् व्यवहारयाना साचतुर्थीत्यर्थं ४ २२ (स रश्च समारम्भे आरभेय तर्हेवय वय पवत्तमाणात् नित्यत्तिज्जलय जट्ट २३) यति साधुर्जय
 इति यत्तवान् सन् यचन सरम्भे समारम्भे तथैव च आरम्भे प्रवर्त्तमान वचोवचन नित्यत्तयेत् सरम्भ परजीवस्य चिनाशनसमर्थं दृष्टविद्याना
 गुणन समारम्भ परेषा परितापकारकमन्यादीना सुहृत्सुं द्वा परावर्त्तन तथैव च आरम्भ परेषां केशोषाटनभारथादि मन्य जापकरथ तत्रापि प्रवर्त्त
 मान नियारयेत् २३ [इत्यने न वागुक्ति रिवोक्ता अथ काय गुक्ति माह [ठाणेनिसीयणे चैव तर्हेवयतुयट्टणे उल्लङ्घण पल्लङ्घण इन्द्रियाणयजुष्मणा २४]
 [सरम्भसमारम्भे आरम्भ मितर्हेवय काय पवत्तमाणा तु नित्यत्तिज्जलय जट्ट २५] शुभम स्थाने ऊर्ध्वस्थितौ च पुनरिय नित्ययेन निपीदने उपविशने
 तथैव तु यद्वेण्येत्वा यर्त्तने अथात् शयने तथा उल्लङ्घन प्रलङ्घने उल्लङ्घन तथा विधनिमित्तात् गर्त्तदिरुक्कमण तव पुन प्रलङ्घन सामान्ये न गमन तैव

गुत्ती चउव्विहा २२ । सरम्भ समारम्भे आरभेय तर्हेवय । वय पवत्तमाणात् नित्यत्तिज्ज जयजट्ट २३ ॥ ठाणे निसीयणे
 चैवतर्हेवय तुयट्टणे । उल्ल घणा पल्ल घणा इन्द्रियाणयजु जणे २४ । सरम्भ समारम्भे आरभेय तर्हेवय । काय पवत्तमाणात्

विधा उक्ता एधानगुक्ति चिदु प्रकारे कही २२ सकल्प अह ध्यास्यामि अर्त्तमस्तिरथति तथैवचवचन आरम्भव प्रवर्त्तमान वचननेराखियतीनियत्तयेत्
 यतनयायति वचननेनिबन्ताये यती २३ यति स्थाने निपीदने उपविशनेयती स्थानकनेविचिरेसे तथैवचत्वम् वत्तनेशयने तिम वलीस्ये गत्या व्यति क्रमेण
 पल्लघणे उ चैनेचे जाडिकरोने कूरथो रद्रियाणियगट्टादिपियये योजनेप्रवत्तं इन्द्रियनाप्रपु जय प्रवत्ताये २४ साधु । सरम्भ सुध्यादिताडनसे तथा समारम्भ

व पुनरिन्द्रियाणं प्रयुञ्जते श्रोत्रनेत्ररसनानासाल्लगादीनां इन्द्रियाणां प्ररूपपरसगन्ध स्पर्शाद्विषयेषु व्यापारणे तथा सरभ्येसुष्यादिना ताडने तथा समारभ्ये परितापकारिणि लताद्यभिधाते तथैव पुनः प्राणवधकाकरेयध्यादि प्रयोगे कायं प्रवर्तमानं यातिसाधुर्यलवान् सन् कायं निवर्त्तयेत् सर्वत्र शरीरगुप्तिर्विधेयाइत्यर्थ २५ [एयाओ पञ्चसमिर्द्धओ चरणस्य पवत्तणे गुतीनिअत्तणुत्ता अरुभस्येसु सव्वसी २६] एता पञ्चसमितय चरणस्य चारिलस्य प्रवर्त्तने उक्ता सर्वशः सर्वप्रकारेण असुभार्थेभ्यो व्यापारेभ्योनिवर्त्तनेतिस्त्रो गुप्तयः उक्ता २६ [एयापवयणमायाजे सभ्भं आयरेसुणी सीखिण्णं सव्वसंसाराविण्णसुच्चइ पण्डिण्णत्तिवेमि २७] यो मुनि एताः प्रवचनमाहः सभ्यक्, जिनाजया आचरेत् ससुनिः जिप्रंशीघ्रं सर्वसंसारात् चतुर्गतिं भ्रमणात् विशेषेण प्रमुच्यते प्रकर्षेण सुत्तोभवति कीदृशोमुनिः पण्डितः तल्लज्जः यस्सल्लज्जः स एवाह प्रवचनमाह प्रपालकः स्यादितिभावः इति सुधर्मा नियतेज्ज जयजर्द्ध २५ । एयाओ पंचसमिर्द्धओ चरणस्य पवत्तणे । गुतीनियतणेवुत्ता असु भत्येसु सव्वसी २६। एया पवयणमायाजेसभ्भं आयरे सुणी सीखिण्णं सव्वसंसारा विण्णसुच्चइ पंडिण्णत्तिवेमि २७। समिर्द्धेज्जयणं ससत्तं । २४ ॥

परकुं पीडाकारी लताद्यभिधातसे तथा शारंभ परकुं प्राण वधकारी यध्यादि प्रयोगसे इनतीनीमेप्रवर्त्तमानकायकुं निवर्त्तये २५ एताः प्रवचन मातर. एप्रवचनमाता चारिलस्य प्रवर्त्तने चारित्रस्य सहित प्रवर्त्तके गुप्तिनिवर्त्तने उक्ताः गुप्तिपणि निवर्त्तनकही मार्गने विसे जिबहुवे ते मर्माने निवर्त्ते अशुभादिभ्यो मनोयोगादिभ्य सर्वतः २६ एताः प्रवचन मातरः एआठप्रवचननीमाता यःसभ्यक् कुर्यात् सुनीः साधुभले प्रकारे आचरे ससीघ्रं सर्व संसारात् ते साधु कृतावला संसारयो विप्रमुच्यते पंडित इतिववीमि मूंकाइ पंडीत इमकहेके २७ इति यीसमितयः अथयनं संपूर्णम् ॥२४॥

स्वामी जन्मभ्यामिन प्राह हि जन्मश्रद्ध तीर्थं करवचसा तवापि ब्रवीमि इति प्रवचनमाटक सन्मिलध्वन चतुर्विंशतितम सर्पुर्ष ॥ २४ ॥
 इति श्रीमदुत्तराध्वन सुमार्थटीपिकाया उपाध्याय श्रीलक्ष्मीकीर्त्तिं गणि शिष्य लक्ष्मीवक्षभ गणि विरचितताया सन्मिलध्वन चतुर्विंशतितम सम्पूर्ण ॥
 अथ पञ्चविंशतितम प्रारभ्यते ॥ पूर्वस्मिन् अध्यायने प्रवचनमातर उक्तास्तासु ब्रह्मण गुणयुगस्य स्यात् तया ब्रह्म गुणज्ञानाय यज्ञोप्यायन कथ्यते [माह्वण
 कुलसम्भूषो आसिथिषो महाजसो जयाइ जन्मजन्मि जयवोसो चिनामथो १] वाराणस्या द्विजोयमलौभ्नातरो जयधोपविजयधोषी अभूता तयोस्कि
 जयधोपनामायाज्ञाया सातुइत कुररसर्षमण्डूकायास इहा प्रवजित तदार्त्तमाह माह्वण कुलमिति ब्राह्मणकुलसम्भूत विप्रकुले समुत्पन्नजयधोप
 इति नामतोविप्र आसोत् अथहि यत् ब्राह्मण कुलसम्भूत विप्रआसीत् इत्युक्त तत् ब्रह्मणजनकादुत्पद्योपि जननीजातिहीनत्वे ब्राह्मण स्यात् अतुो
 विप्ररलुक्त कोट्टयो जयधोप यमजन्म मियम यज्ञेयायाजीयायजीत्वेशशीत्वोयायाजीयमा अहिंसासत्याऽस्त्रिय ब्रह्मनिर्लोभा पश्चत् एव यज्ञोयमयज्ञस्त
 श्विन् यमयज्ञे अतिशयेनयज्ञकरणशील अर्थात्पञ्च महाव्रतरूपे यज्ञेयाश्चिकोजात यतिर्जातइत्यर्थ १ [इन्द्रियगामानिगाहोमगागामीमहासुषी गामाण
 गामसरोयन्तो पत्तोवाणारसिसुरि २] स महासुनिरैकाकीसाधुर्धर्माश्रयाम रीयन्तोइति विचरन् वाराणसी सुरी प्राप्त कोट्टय समहासुनि इन्द्रिय

माह्वण कुल सम्भूषो आसि विप्रो महायसो । जायार्द्रे जन्म जन्मि जयवोसिति नामश्चो ॥ १ ॥ इन्द्रियगाम

ब्राह्मणकुलसम्भूत ब्राह्मणनेकुली आपनो आसोत् विप्रो महायया इषो ब्राह्मण महाययानो धर्णी याजीवज्ञाकारीयमयै ब्राह्मण किंस्थोके यज्ञकर्त्त पञ्च
 महाव्रतपानेके यमनीम करेके जयधोप इति नाया जयधोप इसे नासे ब्राह्मणके १ इन्द्रियजयो मुक्तिपथगामी इन्द्रियनीजीपण्डारके मुक्तिमार्गे

ग्रामनिग्राही इन्द्रियाणां ग्राम समूहं इन्द्रियपञ्चकं निरुह्याति मनोजयेनवशीकरोतीति इन्द्रियग्रामनिग्राही पुनः कीदृशः सभार्गगामीभार्गं मोक्षं गच्छति स्वयं अन्यान् गमयतीति भार्गगामी २ [वाणारसीए वहिया उज्जाणंमि मणोरसे फासुएसिज्जसथ्यारे तलवा ससुवागए ३] स साधुर्वाणारस्यां बाह्ये मणोरसे मनीहरे उद्याने प्रासुकेजीवरहिते शिथ्यासंस्कारकेदर्भट्टणादि रक्षिते प्रयत्नीपविश्रानस्थितौ तलवासं इति वसन्ति कर्तुं उपागताः ३ (अहत्थेव कालेणं पुरीएतलभाहणे विजयघोसे तिनामेणं जणुज्जयदवेयवी ४] अथ अनंतरं तस्मिन्नेवकालेयस्मिन् काले साधुर्वने समानातस्तस्मिन्नेव काले तस्यां वाराणस्यां पुर्यां विजयघोषइति नामा ब्राह्मणोयज्ञं यजतियज्ञं करोति कीदृशी विजय घोषः वेदवित् वेदज्ञः ४ [अहसे तल्य अणगारे

निगगाही मगगाामी महासुणी । गामाणुगामं रीयंतो पत्तो वाणारसिं पुरिं २ ॥ वाणारसीए वहिया उज्जाणंमि मणोरसे । फासुए सिज्ज संथारे तल्य वास सुवागए ३ ॥ अहत्थेव कालेणं पुरीए तल्य माहणे । विजयघोसेति । नामेणं जन्नं जयइ वेयवी ४ ॥ अहसे तल्य अणगारे मासखुमण पारणे । विजयघोसस्स जन्नंमि भिक्खस्सइहा उव

चालेके भार्गं चलति महासुनि. भलेभार्गं चालेके महाहृषीश्वर ग्रामानुग्रामं विहरन् ग्रामानुग्रामे विहारकरतुं शकी प्राप्तः वाणारस्यां पुर्यां वाणारसी नगरी पीडोतु २ वाणारस्यां वहिर्भार्गं वाणारसीने काहिरले पसे उद्याने मनोरसे मनोरमइस्येनामे उद्यानके निर्जीवप्रथ्या संस्कारके प्राशुकप्रिया संथारक लेईने तल वासं उपागतः ते वनमाहि रथा वासकीघो ३ अथ तेनैव तस्मिन् काले हवे तिणेज कालिं पूर्यां तत्र ब्राह्मणः तेहज वणारसी नगरीनेविसे ब्राह्मण विजयघोषइति नाम्ना विजयघोषइसिनामे ब्राह्मणके यागं यजति करोति वेदवित् यज्ञकरके वेदनीजाणके ४ अथ स तत्र अनगारः

आत्मानं तारयितुं समर्थाः परं अपितारयितुं समर्थास्तिषां प्रदेयमस्ति इति भाव ७ पुनः केषां प्रदेशं अन्नं वर्त्तते ये विभ्राः वेदविदीवेदज्ञास्तिषां पुनर्येयज्ञार्थाः यथा एव अर्थः प्रयोजनं येषां ते यज्ञार्थास्तिषां पुनर्येयजितन्द्रियाः इन्द्रियाणां जितारस्तिषां पुनर्येय्योतिषांश्चिदः ज्योतिः शास्त्रस्याङ्गत्वं सारः यद्यपि ज्योतिषास्त्वं वेदस्याङ्गमेवास्ति वेदविद इत्युक्ते जागतं तथापि अत ज्योतिः शास्त्रस्य मुख्यगुणान्नं प्राधान्यख्यापनार्थं समाप्त एतद् गुणविशिष्टयज्ञाज्ञास्तीपादेयमस्ति पुनर्येयं धर्मशास्त्राणां पारगास्तिषां देयं आत्मां वर्त्तते इत्यर्थः ८ (सीतल्य एवं पण्डिसिद्धो जायतेण महासुणी नविरुद्धो नवितुद्धो उत्तमद्वयवेसथो ८] समहामुनिर्जायधीषः तत यश्चै एवं अमुनाप्रकारेण विजयधीषेण याजकेन यज्ञकारकेण प्रतिषिद्धः सन् निवारितः

मेवय । तिसिं अन्न मिसं देयं भो भिक्खु सञ्ज्वाकामियं ८ ॥ सी तल्य एव पण्डिसिद्धो जायतेण महासुणी । नवि रुद्धो नवि तुद्धो उत्तमद्वय गविसथो ८ ॥ न न्नद्वं पाया हिउंवा नवि निव्वाहयायवा । तिसिं वि भोक्खण द्वाए इमं वयण

ये समर्थाः समुपत्तुं जे समर्थके संसारधी आपणा आत्मानं उत्तर यामथी तारयामथी परं आत्मानमपि परनेपणि आत्मानेपणि संसारसमुद्रयो तार यामथी समर्थके तेषां अन्नं इदं देयं तेहने अर्थे एअन्ननीपजीके भो भिक्खु सर्वकामिकं पट्टरसीपेतं अहो भिक्खु एसर्वकामित पट्टरससहित भोजनके ते विप्र जिमस्ये ८ सः जयधीषः यश्चे अमुनाप्रकारेण निवारितः ते साधु इंणे प्रकारे निवारयोषधी यश्चकर्त्ता विजयधीषेण महासुनिः यश्चनो करणहार विजयधीष द्वास्त्रणने न विरुष्टः नापि तुष्टः इम कस्यांधका साधु न रुद्धो न तुद्धो भोक्षार्थं गवेवयः वांछकः भोक्षता सुखने वांछे भोक्षने मार्गेचालेके ८ स मुनिः न अन्नार्थं न पानार्थं ते मुनि अन्नपानिने अर्थेनही भोजन वस्तादि निर्वाहणायनापि भोजन वस्तादिक तेरने निर्वाह भथी पणिनही तेषां

सन् नापि र्टोनापि तुट समभावयुक्तोभूत् कोटश समहामुनिरुत्तमार्थं यथैपकीमोक्षाभिलाषी ८ [न नट पाण हैड वा नविनिव्याहणाय वा तैसि विभीषणश्राए इम वयणमब्धी १०] समहामुनि तेषा विजयधीपादि ब्राह्मणाना विमोक्षणार्थं कश्चन्यन्तात् मुक्तिकरणार्थं इद वचन श्रवणीत् पर श्रवणानलाभार्थं न श्रवणीत् एव ज्ञाला न श्रवणीत् येन श्रइ एभ्य उपदेश ददासि एतेप्रसन्नामहा सस्यग श्रवणान ददति इति बुद्धान श्रवणीत् कि तु तेषा ससारनिश्कारार्थं श्रवदत् वा श्रववा निर्वाहणाय अपिनयस्त पात्रादिकाना निर्वाहएभ्यो मम भविष्यति तेन हेतुनान श्रवणीदिति भाव १० [षिविजाणसिर्वेयमुह नविजवाणजमुह नकवत्ताणमुहजख जखपम्भाणवामुह ११] कि श्रवणीदित्याह भी ब्राह्मणविजयधीपत्व वेदमुख नविजानासि पुनर्यत् यज्ञाना मुख वर्त्तते तदपिल मजानासि पुनर्यत् नखवाणा मुख तदपिल न जानासि च पुनयधर्माणा मुख वर्त्तते तदपि त न

मब्धी १० ॥ नवि जाणसि वेय मुह नवि जन्नाण ज मुह । नक्खत्ताण मुह ज च ज च धम्माण वा मुह ११ ॥ जे
समत्ता समुद्धतु पर अप्पाण मेवय । न ते तुम वियाणासि अइ जाणासि तो भण १२ ॥ तस्सक्खेव पमीक्खव अच

विमोक्षार्थं तेहने ससारथी मूकावयानेकाज इद वखमाण श्रवणीत् इसो वचन सायु ब्राह्मणने कहेके १० नैव तजानासि वेदमुख श्रुही ब्राह्मणतु वेदतु मुख नही जाण्हे नापी यज्ञाना यत् मुख यज्ञनी मुखपणि तु नही जाण्हे नखत्ताण यम्मुख नखत्ततु पणि मुख रू नधी जाण्हे यत् पुन धम्माणा वा मुख धम्मतु मुख पणि तु नधी जाण्हे ११ ये समया समुद्धर्त्तुं जिकेशमर्थं जखरवा भणी पर आत्मान अपि च परने पणितारे आत्माने पणितारे न त्व जानासि विजयधीप हे विजयधाप तु नधी जाण्ती अथ जानासि तत कथय जो तु जाण्हे ती कही १२ तस्स मुने आक्षेप प्रमुख

सय
भापा

जानासि ११ पुनः स साधुर्विजयपीथं ब्राह्मणं प्रति पृच्छति । जि समत्यासमुत्तुं परं श्रपाणमेवय णते तुषं विद्याणसि अरजाणसितीभण १२]
हे विजयपीथ ये परं च पुन. आत्मानं एवं समाहत्तुं संसारात् निस्कारयितुं समर्थास्तान् स्वपरनिस्कारकान् त्वं न जानासि अथ चैतत्वं जानासि
तदाभण कथय १२ (तस्मत्कथेवपमीवत्स्य श्रवयन्ती तद्विद्विषी स परिसी पंजलिउडी पुच्छद्दे तंमहाभुषिं १३) तद्विं प्रति तत्रयज्ञे द्विजी विजयपीथ.
प्राञ्चलिपुटी ब्रह्मज्ञानिः सन् तं महाभुनिं पृच्छति कीदृशी द्विजः सपरिपतृबहुभिर्मनुष्यैः सद्दितः पुनः स द्विजः कीदृशः सन् तस्य साधीराक्षेप प्रप्य
स्वस्य प्रमीक्षं प्रतिवचनं उत्तरं श्रवयन्ती प्रति दातुं असक्तुवन् प्रश्नस्तीतरं दातुं असमर्थः सन् दातुं प्रत्याप्यारः १३ (वैयाणञ्च मुहंबूहि बूहिजत्राण
जंमुहं नश्यत्ताण मुहंबूहि बूहिधभाण वा सुहं १४) हे मरामुने त्वमेवैदानां मुयंबूहि पुनर्यत् यज्ञानां मुखं तन्मे बूहि पुनर्नक्षत्राणां मुखंबूहि

स्य

यसौ तद्विं द्विषी । स परिसी पंजलीउडी पुच्छद्दे तं महाभुषिं १३ ॥ वैयाणंच मुहंबूहि बूहि जत्राण जं मुहं ।
नक्वत्ताण मुहंबूहि बूहिधभाणावामुहं १४ ॥ जि समत्या समद्यत्तुं परंश्रपाण मेवय । एयंमे संसयंसव्वं सारुहकहय

भाषा

प्रश्नोत्तरो तद्विं यतीनेपूजानो उत्तरदेवामणी असमर्थं ब्राह्मण इषी दातुं महा श्रक्तुवन्तं तस्मिन् यज्ञे द्विजः उत्तरदेवामणी असमर्थं सपर्यत्
समान्वितः प्राञ्चलिपुटः सर्वं ब्राह्मण सहित दाय जोडिने पृच्छति तं महाभुनिं ते महाभुनिने पूछेछे १३ वेदानां पुनः मुखं बूहि वेदनी मुंहडोकही
बूहियज्ञानां यन्मुखं यशनी मुंहडो कही नक्षत्राणां मुखं बूही नक्षत्रनी मुंहडो कही बूहि धर्माणां वा मुखं धर्मदुं मुख कही १४ ये समर्थाः ससु
हत्तं जि समर्थं तारवाभणी परं आत्मानं एव परने प्रापणा आत्माने एतत् मम संशयं सर्वं एसर्वमाहरो संदेह हे साधी त्वं कथय मया पृच्छते अही

पुनर्येवभाषा यन्मुख तन्मैवूहि १४ [जिसमत्या समदत्तु पर अप्याषमिवय एयमे ससयसव्य साहकहय पुच्छिधो १५] पुनर्ये पुत्रपा परख
 पुनराकाम अपि ससारत् उवर्तुं समर्थी सन्ति एतन्मै मम सययविपय वेदमुखादिक अस्ति हि साधोत्व मया षट् सन् सर्व कथयस्व
 इत्युक्ते पुनराह १५ [अग्निहोत्रमुहावेया जवद्वी वेयसामुह नकृत्साण मुह चन्द्री धम्भाण कासवीमुह १६] हि विजयधीपवेदा अग्नि होत्र मुखा
 अग्निहोत्र मुख येपा ते अग्निहोत्र मुख वेदानां मुख अग्निहोत्र हि अग्निकारिका साचद्रय कर्मधन समाभित्य दृढासद्भावनाहुति
 धम्भाथानानिनाकार्यादीचिंतनानि कारिका १ इत्यादि यत्र विधि विधायिकाकारिकाश्च ह्यते वेदानां यज्ञाना एपा एवकारिकामुख प्रधान अस्या
 कारिकाया अर्थ क्रमार्थि रभ्यनानि क्त्वा उत्तमाभावना षाहुतिविंशेयाधर्मैथानानी दीचिंतन इय अग्निकारिकायिधेया पुनर्हि ब्राह्मणविजयधीप
 यज्ञार्थीपुरषोवेदसां यज्ञानां मुख वर्त्तते यज्ञोद्देशप्रकारधर्म सत्य १ तपय २ सन्तोष ३ क्षमा ४ चारित्र ५ मार्जव ६ श्रद्धा ७ धृति ८ रहिसाध ९
 सन्नय तथा पर १० इति दशप्रकार सधात्रप्रस्ताप्रापयज्ञस्त यत्र अर्थयति अभिलषतीति यज्ञार्थी स एष यज्ञानां मुख वर्त्तते नक्षत्रार्था
 षट्प्राथम्यतीनां मुख चन्द्रोवर्त्तते धर्माणां श्रुतधर्माणां शारित्रधर्माणां काव्यप आदीश्वरीमुख वर्त्तते धर्मा सर्वेपि ते नैव प्रकाशिताइत्यर्थ १६

पुच्छिधो १५ ॥ अग्निहोत्र मुहावेया जन्नष्टीवेयसामुह नक्त्वताण मुहचद्री धम्भाण कासवीमुह १६ ॥ जहाच्चद गरा

साधु तु कहेण्डु प्रकृष्ट १५ मुनिरवाच अग्निहोत्र मुखा वेदा अग्निहोत्र अभ्यतर साधुकहि धर्मैथानरूप अग्निकारी कर्मरूपद्र धण्डोमीद्र ते अग्निहोत्र
 वेदनामुख यथाप्यभिवाच यज्ञ वेदसां यागानां मुख भाव संहित यज्ञानी अर्थि साधु ते यज्ञां मुख नक्षत्राण मुखधद्र नक्षत्रानु मुखचद्रमा धर्माणां मुख

[जहावन्द गार्हाप्याचिद्वन्ते पञ्चलीउडावन्दमाणा नमसन्ति उत्तम मण्डारिणी १७] यथा गृहादिका अष्टासीति गृहा नक्षत्राणि अष्टाविंशति प्रमितानि एव सर्वैज्योतिष्कादेवाध्वन्दः प्राञ्जलिपुटाः ब्रह्मजलयस्त्रिष्टिति सेवन्ते एवं श्रीरिपभदेवं उत्तमं प्रधानं यथा स्यात्तंथामनोहारिणस्त्रिभुवनवर्तिनी भव्या वन्दमाना स्तवनां कुर्वन्ती नमस्कृष्वन्ति विनयेप्रवर्तनेदति भाव (अजाणगाजन्वाद् विज्जामाहणसम्भयामूढासज्जायतवसा भासकन्नाइव निणी १८] हे विजयधीषविद्याब्राह्मणसम्पदां अजानानाः पुनर्यज्ञवादिन स्तैत्वयापातत्वेन मन्वन्ते विद्याभारखक ब्रह्माण्डपुराणालिकास्ता एव ब्राह्मणसम्पदीविद्याब्राह्मणसम्पदभ्यासां अज्ञाः सन्तीयज्ञवादिनोवर्तन्ते चेत् गृहदारखकायुक्तं यज्ञं एतेजानन्ते तदा कथ एतादृश यज्ञं कुर्युः तस्मात्

इया चिद्वंती पञ्जलीउडा । वंदमाणा नमसंता उत्तमं मण्डारिणी १७ ॥ अजाणगा जन्वाद् विज्जामाहण संपथा ।
मूढा सज्जाय तवसा भास कन्नाइव निणी १८ ॥ जोलाए वंभणी तुतो अग्नीवा महिओ जहा । सयाकुसल संदिद्धं

काश्यप ऋषभदेव धर्मगु सुखश्रीआदिनाथ १६ यथा चद्रग्रहादिका जिम चद्र आर्गो ग्रह नक्षत्र तारार सन्मुखं तिष्ठति प्राञ्जलिपुटाः हाथजोडनि साहभा जभारहे वदमानाः स्तवतः नमस्यतः वांदताथका स्तवतांयका नमस्कार करताथका चंद्रमानि सेवेके उत्तमं प्रधानं मनोहारिणः उत्तम प्रधान मननतो हरणहार तिम श्रीआदिनाथने इन्द्रादिक इम हाथ जोडोने सेवेके १७ अतत्वज्ञा यज्ञवादिनः एते ब्राह्मणाः एवा हाण जाणेनही अने कहे अग्ने जज्ञकर कुं विद्यानां ब्राह्मणसपदांच अग्निविद्या अने ब्राह्मणनीं संपदा जाणेनही मूर्खाः स्वाध्याय तपसाः सज्जाय तपने विखे मूर्ख वेदाध्याय गोपवासदिना भसच्छत्रो अग्निरिव राखसुं टाको अग्नि जीम दहे तिम ते ब्राह्मणके १८ ये लोके ब्राह्मणः उक्ताः के लोकने विखे ब्राह्मणकहा पंडिते यथा अग्निर्मथीती निर्भल जिम अग्नि पृथ्वीयर्को धीषास्त्राथका उज्वलनिर्मलहीइ तिम ते ब्राह्मण हीइ सदा कुयले

इयैवपय याप्रिकाएत्यभिमान कुर्वन्ति पुन कथम्भूता स्वाध्यायतपसावेदाध्यायनोपवासादिना भूटा वहि सधृतिमन्त आच्छादित तलज्ञाना एते
 केरय भक्ताद्या अग्नय इय रथाच्छादितावह्वयइव इत्यने न बाह्योतलवे प्राणा पर कथायाग्निनामभ्ये सन्तप्ता एवेतिभाय १८ पुन साधुर्वदति
 [जोर्तोएवभयोबुता, अगोवामहीषोजहा सया कुसलसन्दिह त यय धूममाहण १८] हे विजयधीपयय त वृभण धूम त क येसुनिभिर्षुाषण छह
 यदा कैथित् अत्रै अवाह्योपि वृभणोयमित्यु क्कस्त वृभण न धूमइति भाव कथम्भूत स लोकेमहित पूजित सन् दीप्यते कइय अग्निरिय यथाग्नि
 पूजितोहतादि सिस्रोदोप्यते कोटश त वृभण सदा कुशलसन्दिह कुगर्नैस्त्राभिर्षु सन्दिह कथित १८ अथ कुशलसन्दिहस्वरूपमाह [जोनसज्जइ
 अगान्तु पञ्चयन्तो नसोयइ रमइ अज्जवयणमि तवय धूममाहण २०] हे विजयधीप त वय वृभण धूम त इतिक य अगान्तु इति बहुभ्योदिनेभ्य
 प्राग स्वजनादिक यज्ञभञ्जनवस्त्रजातिनास्त्रिति अथवा अगान्तुइति स्वजनादिस्थान आगालस्वजनादिक न स्वजाति न अभिषङ्ग करोति पुनर्य
 प्रयजन् स्थानात् अन्त्यस्थान स्थानान्तर गच्छन् अर्थात् यिळुटन् नगोषते नगोक कुरुते पुनर्य आर्ययषनेतीर्थंकरवाक्ये रमते त यय वृभण यदास २०

तवय धूममाहण १८ ॥ जोन सज्जइ अगान्तु पञ्चयतो न सोयई । रमई अज्जवयणमितवय धूममाहण २० ॥ जाय

सदिह त वृभणकुगर्नो चतुरे तीर्थं करे कथा शत यय वृभण धूम तेहनेह वृभणकह णु १८ य नसज्यते आगाल पुन यइ सग न करोति दीघा
 सेइने यलो अयोने स सारोनी स ग न करे प्रयजन् स्थानातर गच्छन् न गीषते दोषालेइने दसदिग्राने विधि जाइतीषकी गीचेनही रति कुरुते तीर्थं
 कइचने नू तोपकर तीर्थं करना यचन ऊपरि त यय वृभण धूम तेहनेह वृभणकह णु २० यथा ज्ञातरूप सुपर्णं प्रसृष्ट जिम जाल्य सुवर्णं श्री

[जायरूवं जहामहं निवृत्तं मलपावणं रागदीसभयातीतं तं वय ब्रूममाहणं २१] हे विजयधीष वयंत ब्राम्हणं ब्रूमः कीदृशं जातरूपं स्वर्णं इव आम्हटं तेजोवृद्धयेमनः प्रियादिनापराम्हटं द्वातवर्णिकावर्द्धनं अनेन बाह्यगुणउक्त यथा शब्द इवार्थे पुनः कीदृशं तं निवृत्तमलपावणं नितरां अतिशयेनधातं मलं किदन्तद्रूपं पातकं यस्य तत् तपस्वितमलपापकं अनेन च अन्तरीयगुणउक्तः पुनः कथंभूती रागदीष भयातीतं रागः प्रेमरूपः द्वेषोऽप्रीति रूपस्ताभ्यां अतीतोद्दरीभूतस्तं विप्रवदाभः २१ [तवस्त्रियं किसन्दन्तं श्रवचियमसोशियं सुव्ययं पत्तनिव्याणं तं वय ब्रूममाहणं २२] हे विजयधीष वयन्तं ब्राम्हणं ब्रूमः तं कं तपस्त्रिनं अतएव कथं दुर्बलं पुनः कीदृशं दान्तं जितेन्द्रियं पुनः कीदृशं अपचितमांसशोशियं शोषितमांसशोधिरं पुन कीदृशं सुवृत्तं सम्यक् वृत्तानां धर्तारं पुनः कीदृशं प्राप्तनिर्वाणं प्राप्तं कथायानि शमनेन निर्वाणं शीतीभावं येन स प्राप्तनिर्वाणस्तं २२ (तसपाणे वियाणित्ता रूवं जहामहं निवृत्तं मलपावणं । रागदीसभयाद्दयं तंवयं व्रूममाहणं २१ । तवस्त्रियं किसंदंतं श्रवचिय मंस सीशियं । सुव्ययं पत्तनिव्याणं तंवयं व्रूममाहणं २२ ॥ तसेपाणे वियाणित्ता संगहेणयथावर । जोन हिंसद्रतिविहेणं

य पशुं निष्पात मलरूप मलरहितं धर्म्योषको मलदुरिहेइ तिम साधु पापमलधी रहित रागहे प भयातीतं रहितं रागहे प्रभय तिणे करीरहितके जे साधु त वयं ब्राम्हणं वदाभः तेहनेहं ब्राम्हणकरं कुं २१ तपस्त्रिनं कथं दांतं तपस्त्री कथदांतके अपचितं शोषितं मांस शोषितं मांसलोहिसोषांके सुदतं कथायानि शमनेन प्राप्तं स तलं चारे कथायउपशमायाके तलप्राप्तिरुद्देके तंवयंब्राम्हणं वदाभ तेहनेश्रमहे ब्राम्हणकरं २२ य . तसान्प्राणान्बिभ्रायलस प्राणीनेजाणीने संगहेणं थावरान् थावर जीवने जाणे यो न विनाशयति त्विविधेन मनोवाकायैः चसादिजीवने मनवचन कायाइ करीनेभारि नही तं वयं

शान् भेषुनं मनसावायेन वचसाकृतान्नेवेति वयं तं वृक्षणं वदामः २६ [जहापोमज्जले जायं नीव लिप्यद्रवारिणा एवं अलितं कामेहिं तं वयं वृक्ष
 माहणं २७] हिं वृक्षणं पुनस्त वयं वृक्षणं वदामः तं कोट्यं एवं अमुनाप्रकारेण अनेन दृष्टान्तेन कामैः अलितं भोगैः असंलभं येन दृष्टान्तेन
 यथा पशं जलेजातं पर तत् पशं वारिणान उपलिप्यते जलान्यसोपरित्यजति तथा भोगैकत्वस्योपि भोगैरलितगीयस्त्रिष्टति स वृक्षणोच्चीयः २७ [अलीबुयं
 भृक्षजोवि अणगारं अकिञ्चणं असंसत्तं गिरह्ये सु तं यय वृक्षमाहणं २८] मूलगुणमुखा उत्तरगुणमाह पुनर्वयं तं वृक्षणं वृक्षः कीट्यं तं वृक्षणं
 अलीबुयं आहारदिपु लाभ्यथरहितं पुनः कीट्यं मृधाजीविनं अज्ञातगृह्येपु आहारदि गृह्येत्वा प्राजीविकां कुर्वाणं संयमजीवितव्यधारकं
 इत्यर्थः पुनः कीट्यं गृह्यथेपु असंसत्तां गृह्यथे प्रतिबन्धरहितं २८ [जहिता पुष्यसज्जीगं नायसङ्घेय बन्धवे जीनसज्जद्र एएसुतं वयं वृक्षमाहणं २९]

नेहृणं । मणासा कायवक्षेणं तं वयं वृक्षमाहणं २६ ॥ जहापोमं जलेजायं नीवल्लिप्यद्र वारिणा । एवं अलितं कामेहिं
 तं वयं वृक्षमाहणं २७ ॥ अलीबुयं मुहाजीवी अणगारं अकिञ्चणं । असंसत्तं गिरह्ये सु तं वयं वृक्षमाहणं २८ ॥

वदामः वृक्षणं तेहने अने वृक्षणं काहं कुं २६ यथा पशं जलेजातं जिम कामलपांणीमाहिं जगे नीवल्लिप्यते जलेन परं पांणीसं लेपाडं नक्षीं एव
 प्रालीमः पश्वत् कामे इम जे कामलनीपिपं कामभोगयो लेपाडनक्षीं तं वयं वदामः वृक्षणं तेहने अने वृक्षणं काहं कुं २७ यः आहारेषु अस्व पदं मृधा
 अयाता जीविन जे आहारने विखे लंपट न ह्यवे सुधा जीव धर्मानिमित्त जाणीनेदीद्र तेहनुं लिद्र ते मृधाजीवकहीद्रं अनगारं अकिञ्चन परिग्रहरहितं
 धररहित परिग्रहरहित असंवदे गृह्यथे . सदसंसर्गरहितं असंवध गृह्यथस्युं परिचय न करे त वयं वृक्षणं वदाम . तेहने अने वृक्षणं काहं कुं २८ त्याजा

अतःकारणात् एतस्मात् प्राक्तणः पातभूतोस्ति किं तु अनन्तरीक्ष गुणवान् एव धाक्तणः इति भाव ३० । नविमुच्छिद्यण समणो नभोकारिण
वभणो न मुणोरन्नवासिणं कुसचीरेणनतावसो ३१] हि विजयधीप मुच्छितेन अभणोनिग्रन्थी न स्यात् श्रीक्षारेण श्रीभूर्भुवः सस्तीत्यादिना प्राक्तणेनभ्यात्
तथा अरथवासेन मुनिनीच्यते कुश्रीदर्भस्तम्भयं चीरं उपलक्ष्यत्वात् वक्तव्यं कुशचीरं तेन कुशचीरेण कुश्रीपलक्षितवक्तव्यं वस्तिणतापसो न भवेत् ३१
[समयाए समणोहीद वभचरेणवभणो नाणेषयमुणीहीदतवेण हीद तावसो ३२] समयासमयत्वेन प्रतुम्नितयोरुपरिसमानभावेन अभणो भवति
वृत्तचर्येण प्राक्तणोभवति वृत्तपूर्वोक्तं अहिंसा सत्यर्चाध्यानामैषुननिर्त्तिभरूप तस्य प्राक्तणपरणं अङ्गीकरणं वृत्तचर्येतेन धाक्तण उच्यते वृत्तव
युक्तो प्राक्तणइत्यर्थः ज्ञानेन मुनिर्भवति मन्यते जानाति हेयोपादेयविवोदति मुनिः स च ज्ञानेनैव स्यात् तथा तपसाहादशचिधेनतापसोभवति ३२

रन्नवासिणं कुस चीरेण न तावसो ३१ ॥ समयाए समणो हीद वंभचरेण वंभणो । नाणोणाय मुणी हीद तवेणं हीद
तावसो ३२ ॥ कम्म, णा वंभणो हीद कम्म, णा हीद खत्तिओ । वदसो कम्म, णा हीद मुदो हवद कम्म, णा ३३ ॥

प्राक्तण न दुर्द न मुनिः अरथवासेन रथभादि वसतां मुनीनकरोज दर्भमय वक्तव्यरूप वस्तिण नतापस दर्भनोचे पाथरीयात्तिपेहइरीती तापस
नहीद ३१ रागदिपादि समभावेन अभणोभवति समताभावरारखे रागदिपनकारे ते अभण कहीजे वृत्तचर्येण इन्द्रिय गुणरूपेण प्राक्तण स्यात् शीलवृत्त
पाल्यां प्राक्तण कहीद ज्ञानेन मुनिर्भवति ज्ञानभयां मुनीकहीदं तपसाभवति तपसः तपकरे ते तापस कहीजे ३२ कर्मणा प्राक्तणोभवति कर्म करीने
प्राक्तण हीद कर्मणाभवति खत्तियः कर्म करीने खत्तीहीद वैश्रज्जातिः कर्मणाभवति किराड वैश्रज्जाति कर्म करीहीद ३३ एतान् प्राशुक्तान् प्रकट

[कर्म, पाठभयो होइ काम्युपा होइस्वस्तिश्रो ययसोकर्म्युपाहाइ सुदीहवद्रकर्म्युपा ३३] कर्म्याणाम्क्रिययाद्यान्मन्थाभवति चामादानन्मोक्षान् सत्व
 र्थाय धृतिवृत्तानांविधानास्तिस्रश्चेति तत् वान्मन्थलक्षण भनयाक्रिययात्वक्षणाभूतयाद्यान्मन्थ स्यात् स्वधिय शरणागतवाणलक्षणक्रिययास्वधिय उच्यते
 तत् ५५५ स्वधियकुलेजातिसमुत्पन्नेसति यत्न वनानचेनैवध्विद्य उच्यते एव वैश्वीयि कर्मिणांक्रियया एव स्यात् कर्मिणसुपात्वादि क्रियया वैश्य
 उच्यते कर्मिणा एव योगीभवति योगिनादि हितु प्रेषणभारोदहनजलावाहरणधरणमर्दानादिक्रिययाऽऽद् उच्यते अत आहणलक्षणध्वसरे अन्येया
 यथावयाया लक्षणपधान व्याप्ति दर्शनार्थ ३३ [एपाठकरवुद्धे जिहि होइस्विशादशो सत्वकर्मविणिमुक्त त वय वूममाहण ३४] बुद्धीज्ञातत्व
 शीमहाधोर एता अहिंसाव्यापी प्रादुरकार्यैर्गौ कला सर्वकर्मविनिर्मुक्तोभूत्वासातको भवति केवली भवति प्रकृतत्वात्
 प्रथमास्यानदितोया त एतादृशगुणयुक्त खातक वा वय द्वाह्यवदाम ३४ [एध गुणसमाजसाजोभवन्तिद्विजसमात्समाख्याश्रो उदस्तु पर अथाणभियय ३५]

एपाठ करे बुद्धे जिहि होइ स्विशादशो । सत्व काम विणिमुक्त त वय वूम माहण ३४ ॥ एव गुण समाजता जो
 भवति द्विजसमा । ते समाख्याओउद्धे तु पर अथाण भियय ३५ ॥ एव तु ससए छिन्ने विजयवोसिय माहणे । समा

सकापाल एपधंपूठे कजा बुद्धे तोष करे ये अर्थ सेधिते खातक केवलीभवति एअर्थने सेवे ते केवली होइ सर्वकर्मरहित सर्वकर्मविनिर्मुक्त त वय
 दूमन्थस तेहने अहे वान्मन्थकहा ३४ एव गुण समागुणा र्णिप्रकार सर्वगुणसहित ये भवन्ति द्विजोत्समा ते उत्सम आहणवुद्धे ते समाधी समुक्त
 ते समाधीहवे जयव्याभणी परस्पर यथावा आत्मानय परने तार आपना आत्मान पीणतार ३५ एव अमुना प्रकारण स योगिच्छिद्रे इण प्रकारे सन्दिषकेया

एवं शुणसमाश्रुताः ये द्विर्जातमात्राभ्युत्थिताभवन्ति ते ब्राह्मणीतमा परं आत्मानं अपि उच्यते^१ समर्थाभवन्ति ३५ (एवं तु संसृष्टिर्न विजयधीसीय
माहृणो समादयतश्रितं तु जयधोसं महासुनिं ३६) ततस्तदनंतरं विजयधीषीब्राह्मणः जयधीषं महासुनिं उवाच इदं वचनं उदाहकथयति इति
सम्यक्त्यः किं कृत्वा तं सुनिं जयधीषं समादाय सम्यक् उपलब्धज्ञात्वा कसति एवं पूर्वोक्त प्रकारेण विजयधीषस्य सप्रयोक्तिर्न सति ३६ (तुष्टीयविजय
धीसे इण मुदाहुकथञ्जलीमाहृणत्तं जहाभूय सुदुमेजवदंसियं ३७) विजयधीषस्तु इदं वचनं जयधीषमुनये आह कीदृशीं विजयधीष कृताञ्जलिः
हे मुने भव ब्राह्मणत्वं यथा भूतं यथा स्वरूपं सुष्टुसम्यक् उपदर्शितं ३७ (तुभ्ये जइयाजन्नायं तुभ्ये वियविक्रविक्र जीयसङ्गविक्रं तुभ्ये तुभ्ये धम्माणा
पारणा ३८) किं वचनं आह हे महासुनि तुभ्ये इति यूय यज्ञानां यष्टारीयूयं वेदविविद वेदविक्रुविदीज्ञातारीवेदविदं वराः यूयं एव पुनर्यूयं

दाय तश्चीतं तु जयधोसं महासुणिं ३६ ॥ तुष्टीय विजयधीसे इण मुदाहु कथञ्जली । माहृणत्तं जहाभूयं सुदु मे उव
दंसियं ३७ ॥ तुभ्ये जइया जन्नायं तुभ्ये विय विक्रविक्र । जोइसंग विक्रतुभ्ये तुभ्ये धम्माणा पारणा ३८ ॥ तुभ्ये

यकां विजयधीषस्य ब्राह्मण विजयधीष ब्राह्मणे समुदाय सम्यग्बधार्थं तदा साधूनां वचनं हि यामाहि धारिने जयधीष महासुनि ते जयधीष महा
सुनिने ३६ तुष्टी विजयधीष ब्राह्मण विजयधीष ब्राह्मण समुष्टइथी इदं उदाहृतवान् कृताञ्जलिः सन् हायजोडीने इमकहेके ब्राह्मणत्वं यथाभूतं
ब्राह्मणपणं जिमहृत्वं तिम तुम्हे भजुं कही शीभनं मम उपदर्शितं भजुं कस्यते ३७ यूयं यज्ञानं कर्तारः तुम्हे यज्ञनाकरणकारको यूयं वेदविदी विद्वांसः
तुम्हे वेदना जाणणहारको ज्योतिषांगविदीयूयं तुम्हे ज्योतिषसास्त्रजोजाणको यूयं धर्माणांपारणाः तुम्हे धर्मानापारणाभीको ३८ यूयं समर्था भवात् उच्यते

एवज्योतिषाद् विद् यूय एव धर्माणां पारगा धर्माचारपारगा ३८ (तुभ्यं समत्या समुहत्तु परश्रपाथमंदय तस्युमाहकरंश्वत् भिक्वेण भिक्वु उत्तमा ३८) पुन ईमहात्मने यूय पर पुन श्रावान समदत्तुं, ससारात् निस्सारयितुं समर्था त इति तस्मात्कारणात् भोभिच्छूत्तमा साधुश्रेष्ठा भिषयाभिजापयश्चैनं श्रमाक शत्रुग्रह यय कुरुय ३८ (णकज्ज मज्झिमिक्वेण खिप्प निववमसूदियामाभिमिहसि भयावत्ते घोरेससारसागरे ४०) तदा जयघोषमुनिराह इं हिज भम भिषयाकार्यं नास्ति त्वं चिप गीष चमस्वदीर्घां गृहाण इं हिजघोरेभीपणेससारसागरे भमस्मिष्यात्तेनत्व ससारसमद्रे भमिष्यसि तस्मात्त्रिष्यात्वज्जेनी दीर्घां गृहाणेति भाव कथभूते ससारसमुद्रे भयावत्ते सप्तभयजलभ्रमगुक्ते ४० (उवसेवोहोर भोगेस धर्मयोगोबल्लिष्वर भोगीभन्नर ससारि श्रमोगोविषयमश्वर ४१) इं विजयघोष भोगेप भुज्यमानेय सत्सु उपसेप कर्मोपपद्य रूपोबन्ध स्यात् श्रमोगी

समत्या समुहत्तु पर श्रपाया मेवय । त मणुग्राह करेश्वत् भिक्वेण भिक्वु उत्तमा ३८ ॥ न कज्ज मज्झ भिक्वेण खिप्प निक्खमसूदिया । माभमिहसि भया वत्ते घोरे ससार सागरे ४० ॥ उपसेवा होद्र भोगेसु श्रमोगी नीव

तुम्हे ससारसमुद्र तारिवाभणो समर्थो पर आत्माननेवचपरनेतारोको आपथा आत्माने पणि तारोको तस्मात् त्वं श्रमाक शत्रुग्रह उपकार कुरु तिणे कारणि श्वहो स्वामो कृपाकरो भिषायश्चणेन इं भिच्छूत्तम भौक्षानिनेव करोने भिष्यात्तेवो श्वर्त्नेतारि ३८ न कार्यं मम भिषाया यतीयोत्थी माहरे भिषास्य, कोरकुमनहीके प्रोष प्रवृज इं हिज श्वहो वृक्कण जातावली तु दीर्घालिह माभ्रमण कुर्या भयावत्तं भयोत्पादके परिभ्रमणतु मकारि रौद्रे ससारसमुद्रे एरीदयोहामणो ससारसमुद्रेतहमहि ४ उपसेप कर्मभ्रूतिरूपो भवति भोगेसु सिदन्तागे आत्मानेसाहोवे भोगेकरोने श्रमोपमानेपु

भोगानां श्रीभोक्ताकर्मणान उपलिप्यते पुनर्भोगीभोगाना भोक्तासंसारश्चमति अभोगीभोगाना अभोक्ताकर्मणोपाहमुच्यते ४१ (उक्तोसुक्रीयदोषूढागोलया मट्टियामयादोविर्भावडियाकुण्डेजो उल्लोसीतल्यलणार्द ४१) कर्मलिपेदृष्टातमाह उल्लभाद्रय पुन शुष्कः एती ही मृत्तिकासयीगोलको कुब्धो भिन्ती उच्युटी आलिसी तत आपतितोभिन्ती आस्फालितोसन्ती अतदयोमृत्तिकाभयगोलकयोर्मध्ये यउल्लः आद्री मृदगोलकः स कुब्धोत्तगति ४२ (एवं लग्नितुम्भोहा जिनराकाभलालसाविरत्ताउनलग्नंति जहासुक्रे उगीलए ४३) एवं श्रमुनाप्रकारेण आर्द्र मृत्तिकागोलकदृष्टान्तेनदुर्भेधसीदृष्टदुष्योवेनरा कामलालसाः भोगयुलं पटा लग्नित संसारिआसताः भवन्ति तु पुनर्विरक्ताः कामभोगीभ्योविमृखनराः नलग्निति संसारसत्तानभवन्ति यथा शुष्की मृदगोलकीभिन्ती लिप्यर्द भोगी भमद्र संसारं श्रभोगी विप्यमुच्यर्द ४१ । उल्लो सुक्रोय द्वा धूढा गोलया नट्टियामया । द्वावि आव डिया कुण्डे जोउल्लो सीतल्य लगार्द ४२ । एवं लग्नंति दुम्भोहा जे नरा कामलालसा । विरत्ताओ नलग्नंति

भोगेण कर्मणानोविलिप्यते जे को भोग भोगवे भोगी भमति संसार भोगीह्वे ते संसारमाहि फिरे श्रभोगी संसारोत्सुच्यते श्रभोगीह्वे ते संसारथी सुकार ४१ शुष्कः आर्द्रः ही चिन्ती एकसुकी एकनोलो वेदनेनाख्यो गोलको मृत्तिकाभयो गोलामाटीना द्वावपि आपतितो भिन्तीदोद्रगोलाभीतिजार् लागानांख्याथका यः आर्द्रं स अल भिन्ती लग्निति जे आलोहत्वे ते भोति लागीरह्यो सुकोखिरीपखो ४२ एवकर्मणार्द्रांलग्निति दुर्भेधसः भून्ही मतिना धयो पापकरीने दश संसारमाहि लागीरह्ये जे नराः काम लपटाः जे मनुष्य कामभोगने विखे लपटार्द रयाके विरत्ता कामभोग रहिताः न लग्निति जेकामभोगथी रहितह्यथाके ते लागिनही यथा सः शुष्कः गोलकः सुकागोलानीपरं न लागी ४२ एव स विजयर्षाप द्युषि परि विजयर्षोष द्वाक्य जय

नसगति ४३ (एव सा विजयघोषाजयघोषस्य अस्ति ए अणगारस्य निवृत्तौ धम्म सुधा अणुत्तर ४४) एव अनुनामकारण स विजयघोषो ग्राह्यो जयघोषस्य
 यणगारस्य अस्तिके समोपेति कान्तो दीनप्रभा कि क्वला अनुत्तर धम भुला ४४ [खयितामुल्लकभाद्र सङ्गमेषु तवेणय जयघोष विजयघोषास्ति
 पसापणुत्तरस्तिवेमि ४५) जयघोष विजयघोषो उभायपि अनुत्तरा प्रधाना गति सिद्धि प्राप्ति कि क्वला स यन्तं च पुनस्तपसापूर्वकर्मणि स्वपयित्वा
 रति अह यूयोमिसुधमा क्वागोज वृक्षामिग प्राह ४५ इति यज्ञोयाह्य पञ्चविशतितम अथयन स पूर्ण इति योमदुत्तराथयन रणार्थदेशोपिकायां
 उपाध्यायश्रीसक्रीकोर्षि गिरिग्य लक्ष्मीयत्नगण्डिधिरचितायां पञ्चविशतितम अथयन सम्पूर्ण ४२५ ॥ अथ षट्पदियशतितम अथयन प्रारभ्यते
 पूयङ्गिन् अथयने दम्बगुणाऽ १ दम्बगुणगुणसाधुर्यथात् साधुनाथ अथय साभाचारो विधेया इति द्विती साभाचारी साधुजनकत्वात्तारणा
 अत्राथयने कथयामि (सामाचारिपथकत्वामि सच्चद्रुपञ्चविमुक्त्वपि जखरित्ताणनिनायातिव्रासकारसागर १) अह ता साभाचारी साधुकरणीया द्वितीया

जहा सुक्रेय गोलए ४३ ॥ एव सा विजयघोसो जयघोसस्य अस्ति ए । अणगारस्य निवृत्तौ धम्म सोच्चा अणुत्तर ४४ ॥

खयिता पुव्यकम्भाद्र सजमेणतवेणय । जयघोस विजयघोसा सिद्धि पत्ता अणुत्तर ४५ । जन्नद्रुप्य जन्मयणसम्पत्ता ॥ २५ ॥

घोपय समोपे जयघोष सादुने समोपे अणगारस्य निवृत्तौ दीशालोधी धम्म गुला सर्वोत्तम सर्वोत्तम प्रधानधर्म साधुत्तौ ४४ चपयित्वा पूर्ण
 कथायो पाङ्कित्वा सर्वकर्मगुणयोने सयमेण तपसा च सत्तरसेदे सयमकारभदे तप तेषे करोति जयघोष विजयघोषपणाम साधुपुण्यगत पुरुष सिद्धि
 प्राप्तो नर्पु, उत्तमा रति यूयोमि मुक्ति पोहता सिद्ध पुरुष इत्या अन्ता सुखने विधे प्राप्तइत्या ४५ इति योपञ्चयित्तितम अथयन सम्पूर्ण ॥ २५ ॥

प्रवचामि तां' इति कां यां समाचारी चरित्वा श्रुतीकृत्यनिग्रन्था संसारसागरं' तीर्णां. ससारसमुद्रस्य पारं प्राप्ताः कीदृशी सामाचारी सर्वदुक्ख विमोचणीं सर्वदुक्खेभ्यो विशिषेणमीचिकां १ (पट्टमाभावसिंघानामं विदयायानिसीहिया श्रापुच्छयायतद्रया चउत्थी पडिपुच्छणा २) प्रथमासामाचारी श्रावश्यकी नाम्नीयतः उपाश्रयात् निर्गच्छन् साधु रावश्यकीति वदति उपाश्रयात् वहिर्निःसरणं श्रावश्यकीं विनानस्यात् तेन श्रावश्यकीति प्रथमा सामाचारी नैषेधिकीतिद्वितीया उपाश्रयात् वहिर्निःसरणानन्तरं यस्मिन् स्थाने प्रवेशनेन स्थिति करणीयास्यात् तत्र अपरेषां निषेधात् नैषेधिकीकरणीयानिषेधवानैषेधिकी तृतीयासमाचारी श्रापुच्छना यतोहि सासीखासादिकल्यज्ञा अपरं सर्वं कार्यं गुरोः पुच्छां विना कार्यं न करणीय तस्मादेषा श्रापुच्छना चतुर्थीसामाचारी प्रतिपुच्छनानाम्नी भवति करणीयकार्यस्य गुरोः पुच्छाया अनन्तरं पुनरपि तस्य

सामाचारिं प्रवक्ष्यामि सञ्च दुक्ख विमोक्खणिं । जं चरिताण निगगं या तिन्नासंसारसागरं ॥१॥ पट्टमा श्रावसिंघ
या नामं विदयाय निसीहिया श्रापुच्छणाय तद्रया चउत्थी पडिपुच्छणा । २ ॥ पंचमा कट्टणानामं इच्छाकारोय

सामाचारी अहं कथयिष्यामि सामाचारीहं कइंहुं' सुधमासामो जवूखामानि कहिंहे सर्वदुक्ख विमोचणिं सर्वदुक्खनाम्' कावणहारहे या श्रासेव्यसाधवः जं समाचारीने अंगीकार करोने रहै ते साधुमागिं कहीर तीर्णा संसारसागरं' तया संसारसमुद्रयकी मुक्तिपुंइता १ श्रावश्यकी नामा प्रथमा उपाश्रयायी नीकलता श्रावश्यहीकहीए एपहलीसमाचारी जाणवि १ धीतीयाच नैषेधिकीसामाचारीउपाश्रयनांहिरेसतानिस्सिहीकीजं वीकीसमाचारी कहीरे श्रापुच्छा तृतीया पुक्खानीतीजी समाचारी ३ चतुर्था प्रतिपुच्छना चौथी समाचारी प्रतिपुच्छना ४ २ पचमीच्छंदना इति नाम्ना पचमी कंटा रसे

कायस्य करण प्रकाशगुरो यच्चनप्रतिपद्यन्नामेया २ (पञ्चमीच्छन्त्याणामा इच्छाकारोयच्छशो सप्तमीमिच्छाकारोच तदकारोयश्चतुमी ३) पञ्चमी
छन्दानाम्योसामाचारो अनादिक आनीय उदर एव भरणीय नास्ति कि तु यतीना सर्वेषां निमन्त्रणारूपाछन्दना उच्यते तस्या एवच्छन्दनार्था
इच्छाकारशब्द कर्त्तव्य इच्छाकारशब्दस्यकोष इच्छयास्याभिप्रायेण करण इच्छाकार इति व्युत्पत्ति यदि भवता इच्छाभवेत् तदा मम निमन्त्रणा
सकलाकर्त्तव्याइति कथन इव पट्टी समाचारो मिषाकारइति सप्तमीमिषाकारशब्दस्याथ वदति यदा कुत्रचित्स्वत्तनास्यात् तदा तत्र साधुनामिषा
दु क्तु मे इति वक्तव्य मिषाकरण मिषाकार मिषादु क्तदानमित्यर्थ इव सप्तमी अष्टमीसामाचारो तथाकार तथाकरण तथाकार गुरुपदेश
प्रायतश्चित् तयास्तु तित कथन इव अष्टमीइत्यर्थ ३ [अभ्युद्गाण नयस दसमाउवसम्पया एसादसङ्गासाङ्गण सामायारीपवैरया ४] अभ्युत्थान अभि
इति अभिगुर्व्येन उत्थान उत्थमन उत्थमकरण अभ्युत्थान अभ्युत्थानेतिशुक्ति कता निमन्त्रणाया एव उक्तत्वात् गृहीते अन्नादीछन्दना अगृहीते तु
निमन्त्रणारचनयोभेद तत् अभ्युत्थान इति गुरुपूजाया गुरुपूजा च गौरवादीना आचार्यैरजानादीनां यद्योचित आहारपानोयादि सम्पादन अथ अभ्यु
त्थान निमन्त्रणारूपमेव प्राधा गुयादेशस्य तथास्तु इति अङ्गीकरणादनन्तर सर्वकार्ये उत्थमस्य करण अभ्युत्थान उत्थमन इव नवमीषेया उपसम्पद

एतथा । सप्तमी मिच्छकारोय तदकारोयश्चतुमी ३॥ अभ्युद्गाणनयस दसमाउवसपया । एसादसगासाङ्गण सामायारी

नामि ५ इच्छाकार पट्टी सामाचारो इच्छाकारच्छी-सेनामि समाचारो ८ सप्तमा मिषाकारश्च जातमी मिच्छामिदुक्छ एसामाचारो ७ तथाकार अष्टम
तदितिगुरुनां वचनैतदलकरण ३ अभ्युत्थान च नवम गुरु प्राव्या कथां कठी उभाधार एतवमी ८ दशमा उपसपत् उत्थमकरी अन्यगच्छथकी ज्ञान प्राणवु

दशमी सामाचारो असाकार्यः साधुस्यभवान् भूत्वा आचार्यान्तरात् अधिकाजानादि शुशादि सम्पत्तिनिमित्त आचार्यादीनां पार्श्वे अवस्थानं उपसम्भत्
 इति दशमोद्देशो या एषा सामाचारो ग्रीतीर्थकारैः प्रकर्षेण विदिताप्रविदिता अधिक ज्ञाताप्रकाशिताइत्यर्थः कथंभूतासामाचारो दशाप्रादश अङ्गानि
 यस्यासादश्यादादश्याकाराश्रिते भाव अथकाकासमाचारोशुल्लङ्घितकर्तव्यातदाह [गमणे प्रावशिस्रं कुञ्जा ठाणेकुञ्जानिसिदियं आणुच्छणा सयंकरणे
 परकारणेपरिगुच्छणा ५] गमनेस्वस्थानादत्यन्तगमने अप्रगमत्तत्वेन भवश्यकर्तव्यव्यापारेभवा आवशिस्रकीतां आवशिस्रकीं कुर्यात् यतीहि साधीर्गमन
 निःप्रयोजनं नास्ति यदि अत्रत्यं किञ्चित्कार्यं सशुल्लङ्घनं कर्त्तंती तदैव साधुः स्वस्थानादुत्थितोस्ति इति भावः तथा स्थानिस्त्राश्रयि पवेप्रसमये प्रमादात्
 आत्मानोनिषेधस्तत भवानैषेधिको उपाश्रये प्रविशता साधुनानैषेधिको कर्त्तव्या यतीहि स्वाश्रये आगमनादनन्तरतत्समययोग्य कार्यीणां एव करणं
 तेष्वेवकार्येषु प्रमादनिषेधः कर्त्तव्यइति भावः स्वयं आत्मनाकार्याणां कारणीशुरीः आणुच्छनाकर्त्तव्या न च शुरी सतिस्त्र बुधैष शुरं अनानुच्छकार्यं
 कर्त्तव्यिति श्रापः परस्वकार्यकारणीशुरीः आदेशं प्राप्यदाकार्यं कर्तुं उद्यतीभवति तदा शनः एच्छनाप्रतिपच्छनाउच्यते ५ [छन्दनादब्जजाएणं

पवेदश्या ४॥ गमणे आवशिस्रियं कुञ्जा द्वाणकुञ्जानिसिदियं । आणुच्छणा सयंकरणे परकारणे पडिगुच्छणा ५ ॥ कंठश्या

ए उपश्रय दशमी १० एषादश्यागः दशप्रकार साधूनां साधूने दशप्रकारे ए सामाचारो जिनैः प्रविदिता सामाचारो भगवते कही ४ गमने उपा
 श्रयानिर्गमि आवस्यकीं कुर्यात् उपाश्रय एको नीकलता आवसाही कही ४ स्थानि उपाश्रये प्रविशन् नैषेधीकीं कुर्यात् उपाश्रयेन स्वकार्यं करणे आणुच्छना
 शुरीः पार्श्वेकारणात् आणुच्छेणं अर्थे शुरने प्रुक्ते परकार्यं करणे शुरीः निर्युक्ताः पुनः एच्छना प्रतिपच्छना परने प्रुक्ते तं पडोत पुरणा ५ यीदश्या तिनच्छन्द

टीका
२६
७६३

इच्छाकारणसामिच्छाकारिणान्दिए तद्वकारोपहितस्य ६] अथप्रागेयत्वरूपद्रव्यैर्वा अन्योयातनिमन्नाते तदाहन्तना उच्यते साधना आहार पानीय
दर्यायित्वा यदि भवता ननसि विचार आवाति तदा एतत् आहारोदिक भवन्निर्युह्यता यथाह निस्तरामि इति वाक्य कथन हन्तनाउच्यते सारणे
इच्छाकार उच्यते सारणे स्वस्वपरस्य या कार्य प्रतिरोधत्वेन प्रवर्तते इच्छायास्वामिप्रायेण तत्कार्यकरण इच्छाकार तत्र आकनीययेच्छाकारिण
शुष्काक वाञ्छित कार्य अह करोमि तथासारेण मन पात्रनेपनादि इच्छाकारिणयुक्ते कुरुते इति वक्तव्यमिति भाव मिथ्याकार आत्मनिन्द्याया मया
अभव्य कृत एतादृश आत्मोनिन्द्यायाक्य मिथ्यादु कृतान मिथ्याकारकथन उच्यते गुरो पात्रैर्वाक्य श्रुत्यागुरु प्रतिरुद् कथन यद्वन्निरुक्त तत्तथैव
तयानुदितकरण तयाकार प्रतिगुरुते गुरुवाक्याज्ञोकारे तयाकारस्वयासु करण इति भाव ६ [अभङ्गात् गुरुपूया अत्यन्ते उवसम्भया एव दुपस्वसङ्गता
सामायारोपवदया ७] गुरुणा आचार्यादीना पूजाया भय विनैव अतिशयेन आहारपानीयाद्यानोयवैयाहस्ययिनयसम्पादनत्तदभ्य त्याग उच्यते अत्यन्ते इति
इति अर्जुनेशानाथश्च परस्य आचार्यस्य पात्रं अथस्यायज्ञानादि गुणान्न उपसम्पदुच्यते तस्याचार्यस्य समीपे अथस्यानायस्वामिन् इत्ये त काल भयतां

द्वयञ्जाएथ इच्छाकारोय सारणे । मिच्छाकारोय निदाए तद्वकारो पडिसुए ६ ॥ अथभङ्गात् गुरुपूया अत्यन्ते उवस

यति निमन्नातिकाद् वस्तुविहरीश्रायो यतीने निमन्तण करीतेहदृशा कहीश्च सारणा आत्मना परणवा कार्यकरण प्रतिगुरुच्छा इच्छाकारकोद् कार्य
करोव तिवारे इम कहे इच्छकार एकाम करो जो निदाया मिथ्याकार पाप साते मोक्षामी दुकहदीश्च इद मया कर्तव्यमेव इति प्रतिश्रयणे तथा
श्रीगीकारकरणे तक्ष्ति करणगुरु जे कार्य कहेतेतरति करोने सामन्ती वा स्वामीतहत्त ६ अथत्याग गुरुणा पूजा गुरुने आर्ष्या कठी जभारहे अत्यन्ते

समीपे मया स्थातव्यं गच्छात्तरं आचार्यात्तरं ज्ञानाद्यभ्यसनरूपा उपसम्पत्त्यामाचारोति भावः एव श्रमुना प्रकारेण हि गुणा
 पञ्च अर्थाश्च शक्तौ भेदसहिततासांमाचार्यं प्रकर्षेण वेदित्वाः प्रवेदित्वाः तीर्थं करणणपरैः कथित्वा ७ [पुच्छिं द्विमि च उभयो आदृच्चं मिसमुद्रिए भस्वयं
 पडिलेहि तावद्वि तावत श्रीगुरु ८] [पुच्छिं जापञ्जलि उडो कि कायव्योमएइइ रच्छ निश्रीइतं भन्ते वैया वचो वसिष्ठाए ८] गुणम अथ पूर्वं श्रीधिक
 सामाचारोमाह पूर्वस्मिन् चतुर्थभागे यदा दिनस्य चत्वारंभागाः भवन्ति प्रत्तरप्रगिताभवन्ति तदा प्रथमभागः प्रथमप्रहरात्मकस्तदा प्रथम प्रहरस्य चतुर्थ
 भागे षटिकाहवरूपे अष्टषटिकात्मकाः प्रहरस्तस्य चतुर्थंभागां षटिकाहयात्मकान्मिन् आदित्येन गुणिते सति षटिकाहयस्यस्यै सति अथवा पूर्वस्मिन्
 पथा । एवं दृषं च सजुता सामायारी पवेइया ७ ॥ पुच्छिं मि च उभयो आदृच्चं मिस समुद्रिए । भंडयं पडिलेहिंता
 वदित्वाय तश्रीगुरुं ८ ॥ पुच्छिं ज्ञा पंजली उडो कि कायव्यं मएइइ । इत्वं निउडउं भन्ते वैयावचो व सिसिष्ठाए ८ ॥

तिज्ञाने आचार्यात्तरादि पापं उग्रतकाल स्यातव्यमिति भयवर्णे काञ्चि जितराः कश्चिन् नो ज्ञायतेति पापे जारने भर्ते तै उपसंपदा कर्तव्ये एवं
 द्विपचर्यसंख्या युक्तः इत द्वायोनसुं युक्त सामाचारो प्रदपिताजिनैः एदयसामाचारो तोयंकरे कथो ७ पूर्वस्मिन् किचिदूननभः अतूर्भागे सर्वना
 उदेशो पडने पोडोर चार भागकोन आदिद्ये समुच्यं प्राप्ते पादो न पोठपा निगरे पठणपदो निरुण कोने भादकपतत् यथादि उपकरं प्रमि
 लेख पात्रा पडिलेहोने वदित्वा ततो गुरुन् तिवारकं डे गुरुने पांठोने ८ पुच्छिं प्राञ्जलिपुटः पुच्छे रायजोर्दोने कि कर्तव्यं मया अस्मिन् समये ए सम
 यने द्विसिं सुं कामकरवुं अह पच्छामी रं भदत उदयप्रागः पु तुजारां गात्रावाडुं सुं इ भगवत वैयायने न राध्यायेन चायुष्माभियोजयितुं वैयावचने

प्रथमे लघु इति भागोक्तं पूर्वदिक् सस्यन्थिनि आकाशस्य चतुर्थे भागे यदा आकाशस्य दिनमध्ये चतुरोभागा ब्रह्माकल्पन्ते तन्मध्ये प्रथमं आकाशस्य भागिष्वय आगतसति अथात् प्रथमं पदरे यदा आकाशेन्द्रपरमितस्य समारूढ स्यात्तदेति भाव अत्र किं चिद्भूतं चतुर्भागे किञ्चिद्भूते पदरेपि पादो न पीरथाऽयमर्थो भूह्वते यदादयारहितोपि पट पटएवोच्यते तथात्रपादो न पीरयो अपि पीरयो एव भूह्वते तस्मात्पादो न पीरथां भाण्डक पात्राद्यपकरणं प्रति तैलस्य चतुर्भागे रोस्य प्रमाज्यं ततो नन्तरं गुरुं यन्मिल्याश्रियं प्राञ्जलिगुटं पृच्छेत् हे गुरोर्ब्रह्मास्मिन् समये मया किं कर्तव्यं इं भस्ते इं पुन्यं अथ वैद्या हृत्पेवा अथवा स्वाध्यायेनियोजितं युष्माभिर्मे रयितुं स्यात्कान् द्रव्यानि वाञ्छामि ८ [विद्यावधेनिउत्तेषु कायव्यमगिला यथासिक्काएवा निउत्तेषु सव्यदुस्त्रविमोक्तये १] गुरुणा वैद्या हृत्पे नित्युक्ते न मेरितेन श्रियेषु अन्तान्या एव ग्रसं विना एव वैद्याहृत्य कर्तव्यं वा अथ गत्वायाये गाल्य पठने नित्युक्ते न श्रियेषु सन्नदुस्त्रविमोक्तये स्वाध्यायोऽन्तान्या एव कर्तव्य इति भाव १० अथौसर्गिकदिक् सस्य कर्तव्यमाह [विशमं चउरोभागे कुञ्जाभित्तुविद्यक्य गोलश्रीउत्तरगुणे कुञ्जादिक् भागे सुचउसवि ११] विचक्षणं क्रियासु कुशलोभित्तुदिक् सस्य चतुरोभागान्

विद्यावधे निउत्तेषु कायव्यमगिलायथो । सन्नदुस्त्र विमोक्तये १० ॥ दिक् सस्य चउरोभागे

विद्ये सन्कायने विद्ये सुभने लंगावो ८ वैद्याहृते नित्युक्ते न जी गुरुकहे वच्छं तु विद्यावधं करो द्रम जी वैद्या वचनो आदेशदिदं गुरु कर्तव्यं ग्लानवैद्या तत्रे गीतं क इ ल नम पा नु हित स्याद्व्ययेन नित्युक्ते गुरुद सन्कायना १ भेदने विद्ये आदेशीयेयके सन्कायकरे सर्वदुक्त्रविमोक्तये सर्वदुक्त्रसु कायवानेकाजे सिक्काय को १० दिक् सस्य चतुरोभागान् दिक् सना चारभागं करोने कुर्याद्विचक्षणं करे साधु विचक्षणं चतुरं ततो बुद्धिं चतुर्भागे करणाथा नुत्तर

वर्द्धन् १४] युगम अथ आनाय सूरोऽनुष्ठापि गुरुकुलनासत्प्रेय दक्षग कण सूर्यसम्बुध विधायाजानुमध्ये तजन्मङ्गुलीच्छाया ऊर्ध्वी भूयपादे
 गणयेत् चारान्ते आयायां पूरिमाया द्विपद्याच्छायपीरुपोस्यात् यदा जानुच्छायाहाभ्या पादाभ्या प्रमिततास्यात्तदा प्रहर प्रमाण दिन त्रैयमिति भाव
 एव पौषोपूषि माया चतु पद्यापोरुपोस्यात् चतुर्भिर्पदै प्रहर दिन स्यात् चेनोपूष्णिमायां अन्नन्या पूष्णिमाया द्विपद्यापीरुपोस्यात् त्रिभि पारै
 पहरदिन त्रैयमिति भाव त्रैयमासादिनेषु पौरुष्या नयनविधि माह समरात्रेण समाहोरात्रेण साद्रेण अङ्गुल एव पक्षेणहरङ्गुल दक्षणाथनेफर्कसिद्ध
 कन्यागुन गयिकथने सन्नाति पटत्रेयद्वैतै एव सकगादिपटकेउत्तरायणे साद्रे समाहोरात्रेण अङ्गुल पक्षेणहरङ्गुलहीयते मासेन चतुरङ्गुल एव
 दक्षगायनेपर्वते उत्तरायणेहीयते त्रायणादिमास पटकेवर्द्धते माघादिमासपट केहीयते गुनयदाकेगुचिभ्यासेषु चतुर्दशदिनै पञ्च स्यात् तदा समरात्रे णापि
 अङ्गुलदक्षान्यानकयिदपि दीप १४ अथ चतुर्दशदिनै पञ्चसम्भवमाह (आसाठ वटुलपक्वेभद्वयकशिपययोसेषु फलाण्यवरसाहेसय गायज्यापीरुपरी

सोऽसु मासेषु तिपया हवद् पोरिसी १३ । अगुल सत्तरत्तिण पक्त्वेणय दुरगुल । वट्टए हायए वावि मासेणय चउ

मासे अलितामासे वैदसहिने आसोज महोने तोने पर पोरसो होदिनिभि पादैर्भवति पौरुषो १३ अगुल समरात्रेण सातदिन गया एकआगुल
 पक्षेणहरगुल पनरेदिवसे पादद्वया त्रायणेमासे चतुरङ्गुलाधिका पौरुषो भाद्रवेमासेऽष्टागुलाधिका पौरुषो कार्त्तिकमासे चतुरङ्गुलाधिका पादत्रयमाना
 पौरुषो मागऽष्टागुलाधिका पादत्रयमाना प्रोक्षपि २ आगुल वयत हीयते चापि सातदिने वधि सातदिने षडे मासेन चतुरङ्गुल यर्द्धते हीयते एकमासमाहि
 चार अन्न लवधे चारअन्न लघटे १४ आपाठ कण्यपक्षे आसाठने अथारे पक्षे भाद्रपदे कार्त्तिक भाद्रवे कालीर पीये पोसमहीने फागुण वैशाखयोय

भाषा

सूत्र

सूत्र
भाषा

श्री १५] एतेषु मासेषु आत्सरातयोः त्रिधा. आषाढे बहुलपक्षे ज्येष्ठपक्षे बहुलपक्षप्रवृत्त्य भाद्र पदादिपुंसस्य कर्तव्यः भाद्रपदेकार्तिके पौषे फाल्गुने वैशाखे
 एष्यपक्षे अथमरातयोश्चलिता यथागाः जनाएकेन अक्षीरानि षष्ठीनाप्रति अथमरातय. रात्रि पदिन अक्षीरानि प्रहणं कर्तव्यं एवं एतेषु मासेषु
 दिन चतुर्दशकाः एष्यपक्षाः स्यादिति भावः १५ अथ पादो न पौरयोपरिज्ञानोपायमाह (जिहामूले आसाढे सावणे ऋहिं अङ्गुलिहिं पडिलेया अङ्गुलि
 शिथलियणोत्तरं अङ्गुलिं च उच्ये १६] ज्वेष्टामूलेति ज्वेष्टानचतं अथ च मूलनचतं ज्वेष्टमासस्य पूर्णिमायां स्यात्तेन ज्वेष्टामूलो ज्वेष्टमासि

रंगुलं १४ ॥ आसाढे बहुलपक्षे अथ ए कान्तिएय पोसेय । प्रणुण वद्वसाहिसुय नायव्याओमरताओ १५ ॥ जिह्वा
 मूले आसाढे सावणे ऋहिं अंगुलिहिं पडिलेया । अङ्गुलिं विद्वयतीयसि तदए दसअङ्गुलिं चउच्ये १६ । रत्तिं पि चउरो

मूले आसाढे सावणे ऋहिं अंगुलिहिं पडिलेया । अङ्गुलिं विद्वयतीयसि तदए दसअङ्गुलिं चउच्ये १६ । रत्तिं पि चउरो
 एतेषु मासेषु आत्सरातयोः त्रिधा. आषाढे बहुलपक्षे ज्येष्ठपक्षे बहुलपक्षप्रवृत्त्य भाद्र पदादिपुंसस्य कर्तव्यः भाद्रपदेकार्तिके पौषे फाल्गुने वैशाखे
 एष्यपक्षे अथमरातयोश्चलिता यथागाः जनाएकेन अक्षीरानि षष्ठीनाप्रति अथमरातय. रात्रि पदिन अक्षीरानि प्रहणं कर्तव्यं एवं एतेषु मासेषु
 दिन चतुर्दशकाः एष्यपक्षाः स्यादिति भावः १५ अथ पादो न पौरयोपरिज्ञानोपायमाह (जिहामूले आसाढे सावणे ऋहिं अंगुलिहिं पडिलेया अङ्गुलि
 शिथलियणोत्तरं अङ्गुलिं च उच्ये १६] ज्वेष्टामूलेति ज्वेष्टानचतं अथ च मूलनचतं ज्वेष्टमासस्य पूर्णिमायां स्यात्तेन ज्वेष्टामूलो ज्वेष्टमासि

तथा धापादे ऋतुष च भासे प्रत्यह प्रागुक्तोद्योमनिरुद्धसैरधिकै प्रतिशेषापादो न पौरुषोप्रतिलेखनाकाल स्यात् ज्येष्ठादरभ्य प्रथमभासत्रिके एषत्रेय द्वितीयैकैभद्रपद स्यात् न कासि कलचणैमासत्रिके पूर्वार्द्धपोरुषोमाने अष्टभिरद्भ्रूलैरधिकै प्रक्षिप्तौ पादो न पौरुषोकासोत्रेय तथाऽतृतीयत्रिके दशभिरशुलै मागंशोर्षोपमासत्रिके तथा चतुर्थत्रिके फालगुनत्रैव वेद्यापलचणै प्रागुक्तपौरुषोमाने अष्टभिरद्भ्रूलैरधिकै प्रक्षिप्तौ पादो न पौरुषोकासो भवेत् द्विनक्त न उक्तास्ति कथमाह (रत्त पिवउरोभाएभिस्रु कुजावियस्रु शीतश्रोउत्तरगुणैकुजाराई भागिसुचउचि १७] (पटमेपोरिसिसिञ्जाय विण्ज्जाण ङ्गियायद् तदयाए निदमोक्य तु चउत्थीमञ्जोविसिञ्जाय १८] शुभम रावैरपि चतुरीभागान् विचचषो भिषु क्रियावाक्पुनि कुर्यात् ततयतुभागकरणादनन्तर चतुर्नपि रात्रिभागेष उत्तरगुणान् कुर्या १७ प्रथमपौरुष्या स्वाध्याय कुर्यात् द्वितीयाया अधीतस्य सूत्रार्थकरण मनमुा विस्लान कुर्यात् ततोयाया पौरुष्या निद्रायामोचो विधेय प्रथमपौरुष्या द्वितीयपौरुष्या च निद्रायामोचोनिद्रामोचक निद्रामोच स्याप कुर्यात्

भाए भिवस्रुकुजा विवकस्रुणो । ततो उत्तरगुणे कुजा राद्भ्र भागेषु चउसुवि १७ ॥ पटम पोरिसि सञ्जाय विद्रय
ज्जाणञ्जियायई । तदयाए निदमोक्यतु चउत्थी भुञ्जोविसिञ्जाय १८ ॥ जनेद्भ्र जयारसि नकस्रत तमिनद्भ्र चउभाए ।

धारभागत करे भिषु कुर्याद्विचचषण चतुर साधकर ततो अनन्तर उत्तरगुणान् कुर्यात् पट्टे उत्तर गुणसोधि रात्रिभागेषु चतुर्ष्वपि रात्रिनाचीद्भ्र सुहृद साहि १७ प्रथम पोत्रिया सायात् करसि पेट्टे ल पोरसि सञ्जायकरे द्वितीयाया ध्यान ध्यावति बीजोपोरसि ध्यानध्यायद् तृतीयप्रहरे निद्रां करोति त्रयोप्रहरे निद्राकरे चतुर्ष्वपुनरपि सञ्जाय चउथो पोरसोद्भ्र सञ्जायकरे १८ य नक्षत्र यदा यस्मिन् रात्रि पूर्णा करोति त्रि नक्षत्रे रात्र पूर्णयाद्

यद्यपि मुनिः सर्वथा प्रमादत्यागएवउत्थीस्ति स्वाध्यायं निद्रायाः समयउक्ताः अत्रकेचित् निद्रायानीष जगारणं निद्रानिषेधं कुर्यादित्यपि यदस्ति तत् चित्त्यं निषेधस्य प्राप्तिं पूर्वकालात् पूर्वं निद्राया करणसमयसु नीलाः प्रथमगृहरे स्वाध्यायः द्वितीयगृहरेथान पूर्वमपि निद्रायानिषेध एव उक्ताः तृतीयगृहरे अन्त्यस्य कस्यापि कार्यस्य अकथनत्वात् तस्मात् तृतीयपीरथाश्रयनसमय एवलयते चतुर्थी पीरथां भूयः स्वाध्याय कुर्यात् १८ अथ रात्रिः चतुर्भागानस्योपायमाह [जनिद्रजयारत्तिं नक्वत्तन्मिनह चउभाए सम्भत्तेविरमिञ्जा सञ्जायपञ्चोसकालंमि १९] [तन्मिवयनक्वत्ते गयण च उभागसावसेसमियेरत्तियपि कालं पडिलिहितामुणीकुञ्जा २०] यन्नक्षत्रं रत्तिं समाप्तिं नयति यदा अस्तसमये यन्नक्षत्रं उदेति तस्मिन्नेवनक्षत्रे रात्रि सम्भासोभवति तस्मिन्नेवनक्षत्रे आकाशस्य चतुर्भासोप्राप्ते विरमेत् स्वाध्यायादिरमेत् प्रदीपकाले रजनीमुखे तदा प्रदीपकास्तग्रहणं कृत्वा पश्चात्पी

सपत्ते विरमेज्जां । सञ्जायं पञ्चोस कालंमि १९ ॥ तन्मिवय नक्वत्ते गयण चउभाय सावसेसंमि । वैरत्तियपि कालं पडिलिहिता मुणीकुञ्जा २० ॥ पुञ्जिह्मि चउभागे पडिलिहिताण भंडगं । शुभं वंदितु सञ्जायं कुञ्जा

यस्मिन् नक्षत्रे नभः आकाशः चतुर्भागे ते नक्षत्र आकाशने चतुर्थभागे जिवादि आवेतिवारे सप्राप्ते विरमेत् स्वाध्यायात् तिवारे सञ्जाययीविरमे तत्र प्रदीपकाले प्रारब्धे प्रदीपसमे पडिकामणीन करे १९ तस्मिन्नेव नयथे तेरुज नक्षत्रने षिखे गगन चतुर्भागेन प्राप्ते सावशेषे आकाशने चोथे भागे साव प्रथयथा वैरत्तिकं प्रदीपिक कालं चोथेभागे वैरतीकालकहीद्रं प्रतिलेखयित्वा मुनिः कुर्यात् पडिलेहीने मुनि सञ्जायकरे २० पूर्वस्मिन् चतुर्थभागे प्रथम पीरथी समये दिवसने चोथेभागे पडली पीरसि प्रतिलेख्य पडिलेहीने भांडान् उपधि वस्त्रादीन् शुभवंदित्वा स्वाध्यायं शुभने वादीने सञ्जाय कुर्यात्

रथा प्रथमाया सूत्रसाध्याय कृष्यात् तस्मिन् वनवर्ते गगने आकाशस्य चतुर्थेभागे सावयेषिसति वैराचिक नाम काल गृहीतासाध्याय कर्त्तव्य एवमन्येष्वपिपद्ये २ सामान्ये नदिनरात्रि ह्यल्पमुद्राविशेषतोदिनकल्पमाह [युज्जिन्न मिथ एभानो पडिलेहिस्ताणभण्डग गुरु वन्दिस्तुसम्भार्य कुञ्जादुक्ख विमोक्खण २१] स्वर्गदयात् दिवसस्य चतुर्थभागे स्वर्गदयात् प्रथमेप्रहरचतुर्थेभागे एतावताप्रथमपौरुष्यां प्रथमधटिकाद्वयमभ्येभाण्डक कस्यावुपधि यस्य शयोपकरणादिक प्रतिसेख्य गुरु वन्दिस्तासाध्याय कृष्यात् कायभूत साध्याय दु खविमोचण पापनिर्मूलक २१ [पौरिसीए एउभागे वन्दिस्ताण तपोगुरु अपडिक्कनिताकालस्य भायण पडिलेइए २२] पौरियायचतुर्थेभागे अवशेषिसति पादो न पौरुष्यां जातायां सत्यां ततो गुरुन् वन्दिताभाजान पाथ प्रतिसेखयेत् कि कलाकालस्य इति काल अप्रतिकस्य प्राभातिककालप्रतिकमथाय कायोर्धर्मशुद्धत्वा चतुर्थां पौरुष्या गुन साध्याय करिष्यते कान्प्रतिकमणानन्तर साध्यायकरण अशुद्ध तस्मात्काल अप्रतिकस्ये लुक्क २२ अथ प्रतिसेखनाविधिमहाह [सुधपत्ति पडिलेहिस्ताणपडिलेहिक्कगोच्छ्वग गोच्छ्वगसायगुलिए यथाइपडिलेइए २३] सुखपोतिका प्रतिगाच्छकभोलिकोपरि सत्क एषमयपस्य तत् प्रतिसेखयेत् ततो ऽणुलितागशुद्धक सन् अह ष्यास्ता गृह्यते गोच्छकयेनस अह ष्यालितागोच्छकसादय सन् वस्याणि प्रतिसेखयेत् भोलिकोपरिरेषणीय पटसकरूपाणि वस्याणि प्रतिसेख

दुक्ख विमोक्खण २१ ॥ पौरिसीए चउभागे वदिस्ताण तथीगुरु । अपडिक्कमिता कालस्य भायण पडिलेइए २२ ॥

दुखविमाद्य ५ पदे सम्भार्यकर दुक्खनो मू कावणहार २१ पौरुष्या चतुर्भागे विशिष्यमाणे पादो नपौरुष्यां पोहन्ते चोधिभागे पोणपोरसी आवेयके यदित्वा तता गुरुन्गुरुने द्यादिने कालान् प्रभातकालात् अप्रतिकस्य प्रभातकाल पडिल्लमीने भट्टक प्रतिसेखयेत् पात्रा पडिलेइ अथ विधि माह २२ सुखवस्त्रिका

यव

भाषा

प्रस्नेटन विदध्यादिति भाव पनरभोसलिमिति नविद्यते मोसलीयत् तत् अमोसलितर्षाधिस्त्रियक कुख्यादि परामर्शसहित यथा नस्यात्पाथावस्त्र
प्रस्नेटयेत् प्रतिलेखयेत् इत्यथ पुनरिमा पूर्वं एव क्रियमाणा षट् प्रस्नेटनात्कका प्रतिलेखनाक्रियामेदा कर्त्तव्या प्रथम धारद्वय वस्त्रस्य परा
वर्त्तनात् प्रस्नेटनात्रयेण २ च षट् भवन्ति पथावयवखोडाहस्तीपिरिप्रस्नेटनात्कका खोटानन्विककारणात् नवसम्भवन्ति पुन पाथीपाणि यियोधन
हस्तेहन्नाविशोधन प्रस्नेटन विदध्यात् हस्त नावाकार विधाय आच्छेदनत्रिकत्रिकोत्तरकाल एव नय पूर्वात्ता नवपुनश्च प्रस्नेटनविद्येया एव अष्टादश
भेदा सम पूवाका एव २५ पञ्चविशति विधा प्रतिलेखनाभवन्ति २५ [आरभडासम्पाद्यज्येयव्यायसोसलीतरयापफोडणा च छत्तीविखितायेरया

वेव । छप्पुरिमानवखोडा पाणीपाणि विसिहण २५ ॥ आरभडा सम्पादा वज्जियव्याय मोसली । तद्वयापफोडणा
चउर्था विक्रिवता विदयाछट्टा २६ ॥ पसिस्टिल पल व लाला एगा मोसा अणे गरुव धुणा । कुण्ड्र पमाणि पमाय

च कायाने वस्त्रे नधानेनद्धी वस्त्रभोटनदिरहित वस्त्रमाहे नहा अम सनोत्यादि अस्वयं अत्योच्य असत्तन भोतिनलगाहे सत्तनयोकर दृष्टिप्रति
लेखनानतर पट्टस पदं वस्त्रप्रतिरेखणा दृष्टिरहित इण धीभापके तीन्धार दहीलेईनयपपोडाकही जे पाणी हस्ते प्राणी प्रमार्जन हाथने विखे जे
जोव नर ते सोधे दूरिकर २५ दीप महायिपरोतकरथोपधि उपरिनिपीदनरुपा विपरोतकरे उपधि उपरिधेसे वस्त्रमेदे तिर्यगादिपु वस्त्रसवहनामी
सर्पीपौच्यातिरक्षा वस्त्रमाहोमादि माहे ते मोसली कही जे एलोको दहीलेइण जाणयो प्रस्नेटना चतुर्थी ज्ञातव्या भाटके वस्त्र एचोयो पहीलेइण
प्रतिलेखित वस्त्रस्य अप्रतिरेखते पहीलेखा वस्त्रस्य पहीलेही धरतीर मूके २६ त्रियिल जे नयदस्त्रसदृश विपमयदृश भूमी वस्त्रलोसन त्रियिलपणे

कृशा २६] [पसिद्धिलपलकलीला एगामीसाअणिरुवधुणा कुणरुपमाणपमायं सद्धिएगणणीवयं कुजा २७] अथ प्रतिलेखनादीषत्यागमाह आरभटा विधेर्विपरीतकरणं १ त्वरित २ पृथक् ३ नवीन वस्त्र ग्रहणं एषा प्रथमाप्रमादप्रतिलेखना १ संभर्दी वस्त्रांतकीणानां परस्परभेलनं अथ वा उपधेरपरि निषीदनं एषाद्वितीयाप्रमादप्रतिलेखना २ च पुनस्तृतीयामीसली अपिबर्जयितव्या उपर्यधीभागतिर्यग्, प्रदेशसङ्घटनाद्वतीया प्रतिलेखना सप्रमाद दीषत्याज्या चतुर्थीप्रसोदनारजसाखरयितस्य वस्त्रस्याकोटनासापि वर्जनीया पञ्चमीविचिसा प्रतिलेखितस्य वस्त्रस्य अप्रतिलेखितवस्त्रीपरिभोवनं अथवाचतुर्दिसु च विलोकनं इयमपि सप्रमादाप्रतिलेखनात्याज्यापष्टी प्रतिलेखनावेदिकानाम्नी सापि स प्रमादात्याज्यावेदिकायाः पञ्चभेदाः ऊर्ध्ववेदिका १ अर्धवेदिका २ तिर्यग्, वेदिका ३ उभयवेदिका ४ एकवेदिका ५ ऊर्ध्ववेदिकासायस्यां उभयोर्जान्वोरपरिहस्तयोरक्षणं १ अर्धवेदिका साजान्वोरथः प्रचुरं हस्तयोरक्षणं २ तिर्यक्वेदिकासायस्यातिर्यग्, हस्तौ क्वा प्रतिलेखनं ३ उभयवेदिकासायस्यां उभाम्बां जानुभ्यां बाथे उभयोर्हस्तयोरक्षणं ४ एकवेदिका सा यस्यां एकं जानुहस्तमध्ये अपरं जानुबाहोरस्थते ५ एतेष्वपि वेदिका दीषाः प्रतिलेखनावसरत्याज्याः स्त्रीलिङ्गत्व अत रुढिवग्नात् ज्ञेय अथ वस्त्र ग्रहणे दीष माह पसिद्धिलेति पसिद्धिलं दृढं अगृहीतं वस्त्रं १ प्रलम्बं यद्विषमत्वग्रहणेन वस्त्रकीणकस्य ग्रहणेन अपरकीणानां लम्बनं २ लीलायत भूमौ वस्त्रस्यरजन स्यात् ३ एतेतयोपि दीषाख्याज्याः इति योज्यं एकामर्शाएकस्मिन् काले उभयोः पार्श्वयोर्द्वस्त्याकर्षणं ४ स्त्रीलि रुढिवग्नात् अनेकरूपधुना अनेकरूपासंख्यावयात् अधिकानाकम्पनायस्यां सा अनेकरूपधुना तथा यत् प्रमाणे प्रसोटादि संख्यायां प्रमादं कुरुते तथा सद्धिते सङ्घातयोर्मुखेन तथा अङ्गुलिरिखास्यर्शनादिगणनस्योपयोगं गणनोपयोगं कुर्यात् तदपि दूषणं त्याज्यं एतत् प्रतिलेखनादूषणं ज्ञेयं २७ पुनरेतां एवमप्रधारेण स दीषां निर्दोषं चाह [अणूणादरित्तपडिलेहा अविक्वासातहेवय पठमं पयं पसत्यं

सेसाण्डप्रथमसत्याणि २८] अन्यूनाजनानकसत्या १ अतिरिक्ताअधिकानकसंख्या २ अविबध्यासा ३ विविधोबध्यासोयस्यां साविबध्यासा नविबध्यासा अविबध्यासाविषयसद्विहताविषयोत्तलेन रूढिताइत्यर्थ ३ एतेषां अथाणां भेदाना अष्टौ भद्राहस्यस्यन्ते तेषु भद्रेषु प्रथमं पदं प्रथस्तं प्रथमोभगसमीचीन अन्यूना १ अनतिरिक्ता २ अविषयांसा ३ इत्येव रूपं प्रथमभद्ररूपं पदं प्रथस्तं निर्देयत्वात् शुद्धमित्यर्थं शेषाणि सप्तभद्रानि अप्रथस्तानि २८ पुनर्दूषोत्सत्तिकारणमाह [पडिलेहणकुणन्तो भिन्नी कहकुणइ जणवय कहवा देर पच्चखणण वाएइसयं पडिच्छइरवा २९] प्रतिलेखना कुर्वन्

सकिए गणशोवय कुज्जा २७ ॥ अणूणाइ रित्त पडिलेहा अविबध्यासा तहिवय । पठम पय पसत्थ सिसाण्ड अप्प
सत्याणि २८ ॥ पडिलेहण कुणतो भिन्नी कहं कुणइ जणवय कहवा । देइ पच्चखणण वाएइ सय पडिच्छइरवा २९ ॥ •

यस्यभाले त्रिपदपथेभाले धरतो वस्यलोले एकाशुली यइण अधिक प्रलेखना करण एक आशुलीसु भाले पडिलेहण अधिकीकरे प्रभाणे प्रभाद करोति प्रभाषणे विले प्रभादकरे पूरी पडिलेहणकरेनही शकित प्रतिलेखना पूर्णाकृतावान कृतावा शका उपजे पडिलेहणे पूरीकीधे नही तिवारे आशुलीइ गणवानो जोग करे २७ न्यून रूढिता अधिक रूढिता अन्यूनाधिकाओखीपणि न करे अधिकी पणि न करे पडिलेहणाना प्पार भेदहे अवितासा अविषयां सा चतुर्णामपि भगाभाचिहु भागाभाचि तव प्रथम पद अन्यूनातिरक्ता प्रथस्त चोयो भांगोसखरीओखीनकरे अधिकी न करे पूरीकरे एभांगो भलो शेषाणि पदानि अप्रथस्तानि वीजातीनि भांगासु डा २८ प्रतिलेखनां कुर्वन् पडिलेहण करणुयको परस्पर कथा कथयति करोति माहोभाचि कथाकहोइ जनपददेश कथा करोति देसनी कथाकहे ददाति प्रत्याख्यान पच्चखणण करवि वाशयति स्वय आलापादिक प्रतीच्छति

भाषा

प्रथ

साधुर्मिथ परस्पर कथां वात्तं चित्करोति अथवा जनपदकथा देशकथा करोति पुन. प्रतिलेखना कुर्वन् कस्यैचित्प्रत्याख्यानं चिह्नदति पुन. प्रति
लेखनां कुर्वन् अपरं साधुं वाचयति वाचनां ददाति वा अथवा प्रतिलेखना कुर्वन् चित् स्वय आलापादि गतीच्छति गृह्णाति २८ [पुठवी आउक्काएत
जवाजवणसदतसाणं पडिनेहणापमत्तीकएहंपि विराहश्रीहोइ ३०] एतानि पूर्वोक्तानि कार्याणि कुर्वन् प्रतिलेखनायां प्रमत्तः प्रभादकर्तासाधुः
षणामपिकायानां विराधकी भवति ते षट्कायानां नामायाह पुठ्वीकाय १ अप्काय २ स्तेजसायः वायुकायः वनस्यतिकायस्त्रसकायश्चै तेषां सम्भर्दकः
स्यात् कथं विराधकी भवति कुम्भकारादिशालायां स्थितस्त्र प्रभादवशात् प्रतिलेखनायां जलकम्भादि पातनात् तेन पानीयेन नृत्तिकाभिन्, वायुकन्यु
कादिकास्तसा स्थावराथग्रास्यन्ते तदाषणामपि विराधनास्यात् यदाहारं जल जल तलवणं जलवणं तल्य सासकी अगीर्तजवाऊसहिया एय
कएहपि सहजश्चो १ दति वचनात् ३० [पुठवी आउक्काएतजवाऊ यणसदतसाणं पडिलेहण आउत्ती कएहंपि आराहश्चो होइ ३१] प्रतिलेखनप्रिया

पुठवी आऊ क्राए तेज वाज वणसद तसाणं । पडिलेहणा पमत्ती कएहंपि विराहश्चो होइ ३० ॥ पुठवी आऊ क्राए
तेज वाज वणसद तसाणं । पडिलेहणा आउत्ती कएहंपि आराहश्चो होइ ३१ ॥ तइयाए पोरिसिए भत्तपाणं गवे

आपवाचि अथवा यागलापासे सांभले २८ पुठ्वीकाय १ अप्काय २ तेजकाय ३ वायुकाय ४ त्रसकाय ५ वनस्यतिकाय ६ प्रतिलेखनामे प्रभादवत
साधुहहे जिवनीकायनी विराधकाहोय ३० पुठ्वीकाय १ अप्काय २ तेजकाय ३ वायुकाय ४ त्रसकाय ५ वनस्यतिकाय ६ प्रतिलेखनायां आयुक्तः
सावधान थकी पडिलेहण करे पणामपिजिवनि कायाना रत्नकी भवति कएजीवनिकायनी रत्नकह्वे ३१ त्वतीयाया पीरथांयतिः चीजीपीरसिने विखे

प्राशुभ सायधानीप्रभादोसायु पृथिव्यादीनां पृष्ठा अपि कायानां आराधको भवति ३१ इत्यनेन प्रथमपीरुथा कर्त्तव्यत्वात् द्वितीयपीरुथा कर्त्तव्यत्वात् साध्यादिकं पूजं उक्तमेवाम्भूत् अथ दत्ततीयपीरुथा कृत्यामाह (तद्व्याप्तं पीरुसीए भक्त पाण गयेसए छन्दमवय रागभिः कारणं मिः समुद्रिए ३२) दत्तिया पीरुथा भक्तपान गयेपयेत् अथ उक्तार्त्तकोनय स्वयिरकलिकानां चि यथाकालं भक्तपान गयेपण उक्तं क्व सतिपृष्ठां कारणार्त्तां मध्ये अन्वतरकिन् एकस्मिन्कारणं समुच्चितं सति आहारप्रद्वणस्य पटकारणानि सति तैः कारुणैराहारं कर्त्तव्यं ३२ तानि पटकारणान्याह ॥ (यथयथियावचे इरिय द्रापय समयमहात् तद्व्यापयवत्तियाए क्व पुणयवचित्ताए ३३) वेदनायै सुत्थिपासादि रोगादि वेदनाया उपशमनाय वेदनापतु न शक्यते प्राकृतत्वात् विभक्तिर्लोप प्रथम कारण १ तथा वैयाहत्याय वैयाहत्वार्थं यतीहि सुत्थिपासया पीडितो वैयाहत्व कक्षायु आचार्यादीनां वैयाहत्व कर्त्तुं न शक्नोति एतद्वितीय कारण २ तथा इरियद्व्याए इयाथाय इया समित्यय द्युधाह्यार्त्तस्य निर्जरायिर्नोपि साधोयदुरिन्द्रिय बलहीनस्य लघु जीवादि कश्चि श्रम इयाया पालनं नस्यात् तदथ आहारकरणं दत्तिय कारण ३ तथा पुन समयमार्थाय चारिदस्व क्रियाशुष्ठानां तापनायश्चकाराधनार्थं यथा यकटांगं दृत्तानिनां संसृजत एव चानति अन्यथा न चानति एतच्चतुर्थकारणं ४ तथा पुन प्राणप्रत्ययाय प्राणानां प्रत्ययो जीवितार्थविधे धारणं प्राणं

सए । एषह मन्त्रयरागभिः कारणभिः समुद्रिए ३२ ॥ वेयण वेयावचे इरियद्व्याएय सजमद्व्याए । तह प्राण वत्तियाए

यतो ध्यानं मुक्ता भक्तपान गयेपयेत् थिलोकयेत् भातपाथीनो गयेपणा करे पञ्चामपि कारणानां मध्ये अन्यस्मिन् कारणे उपस्थितं ककारणं हि गोचरीनां क्व साहिच्यो कोरकारणं कपनी ३२ वेदनाशुभूषा वेदनायां वैयाहत्ते आचार्यादीनां शुखलागीं गुरुतेकाजि आहारपृष्ठां जायोजय एदयासमिति पालनार्थं ३ सजम निर्वाहार्थं ४ इर्यासमिति पालनार्थो समयं निर्वाहं निमित्तं तथा प्राणहत्वार्थं अर्थायना प्राणनाया अर्थायना प्राणं रश्चि नक्षी

प्रायस्सस्मात् प्राणपुत्र्याया प्राणधारणार्थं जीवितत्वधी संपूर्णं जाति सद्यैव प्राणमीरुन कर्त्तव्यं अन्यथा आत्महत्यादीषः स्यात् तस्मात् जीवितव्य धारणार्थं इदं पञ्चमंकारणं ५ षष्ठं पुनरिदं यदुत्तममंचिन्तायै धर्मस्थानं श्रुताभ्यासरूपायै भक्षणानं गवेषयेत् स्रुतत्वधा पीडितस्य आत्मस्थानशुक्र धर्मस्थानं श्रुताभ्यासी नस्यात् आगतमपि श्रुत विस्मरति षष्ठ कारणं ६ (निगंधी धिद्वमन्ती निगन्धी विनकरिज्जह्विचिव ठाणेहिंतुद्रमेहिं अणद्रकमणाय सेहीद्र ३४) निग्रह्यः साधुं धृतिमान् धैर्यवान् तथा निग्रन्धी विद्वति साध्वी अपि षड्भिर्वच्यमाणैः कारणैर्भक्षणं गवेषणा न कुर्यात् यत् एभिः स्थानैः से इति तस्य साधीः साध्यावा आहार अकुर्वत् अनतिक्रमणं भवति समययोगानां उक्षणं न भवति अन्यथा आहारन्यजतः साधीः संयमयोगस्य अतिक्रमणं उक्षणं न स्यात् इति भावः ३४ तानि षट्कारणानि दर्शयति [आयमे उवसगे तितितस्यथा वध्मचिरशुत्तीसु पाणिदया तवहेज सरीरवुच्छेयणदृष्टाए ३५]

छडं पुण धम्म चिंताए ३३॥ निगंधी धिद्वमन्ती निगंधी विनकरिज्ज ह्विचिव । ठाणेहिंतु द्रमेहिं अणद्रकमणाय से
हीद्र ३४ ॥ आयंके उवसगे तितितस्यथा वंमचिरशुत्तीसु । पाणिदया तवहेजं सरीर वाक्खे यण दृष्टाए ३५ ॥ अवसेसं

तेह पांणे आहारलीदं षट् पुनः धर्मं चिन्तायै ६ छडो कारण धर्मानी चिन्ता भणीं आहार लीदं ३२ निग्रंधी धृतिमान् निग्रंध संतोष नी धर्णी साधुकाहीद्रं निग्रंधी अपि साध्वीरपि भक्षणानं विलोकयेत् षड्भिरतः एष्य कारण साध्वीपणि आहारपाणीनी गवेषणाकरे स्थानिषु पुन एभि षड्भिः षड्भिकारणै तदा आजाति करीनभवति एष्य कारण कीधायकी आजाती लोपनरीद्र ३४ आतंके अरादिरोगे उपसर्गे उत्पन्नरीग ज्वरादि उपसर्गं तितित्वा स्रुतसरुन समर्थत्वेन भूरातिपाने निमित्ते वल्लार्थं गुणियु ४ जीवरवा तपोनिमित्तं शरीर विच्छेदनार्थं ६ एषु भक्षणान

भालकेन्दुरादिरोग १ उपसगदेवादि क्तस्योपसर्गस्थानने २ तथा द्रष्टव्यं गुणितितित्तया हेतु भूतया यदि आहार क्रियेत तदा रश्मियाणि बलवन्ति
स्यदादा यन्मगुति रचापि दुक्तरा तस्मात् द्रष्टव्यगुणितित्तया आहारनिषेध ३ एतत् तृतीय कारण तथा प्राणित्तया हेतुर्वर्षादीनिपतत् अपकायादि
जोषदथाय रदुस्त्रिकादिरथाये ४ तपसोद्वितीयतुर्धपटादिवर्गतापोधनतपसो कारणहेतीर्थापञ्चम कारण ५ गुन शरीरव्ययच्छेदार्थाय त्रिषितकास्ते
संशुना अनशन क्लत्वायोरत्वागाय आहार साधुर्नगधयेत् इति सम्बन्ध इति पट कारण ३५ अथ तद्भयेपण्यायी विधिद्वैवाधिशि च आह [अथसेस
भण्डगणिक्त चरुभाषणिलेहए परमद्वजोयथाभो विहार विहरएमुणी ३६] साधुरवशेप समस्त भाण्डक उपकरण गृहीत्वा चक्षुषा प्रतिलेखयेत् तत
साध पर उत्कट अन्नयोजनात् अन्नयोजना अग्निव्यसुनिविहार विहरत् अधिक द्रव्यतोहि साधो क्षेत्वातीत आहारदोष स्यात् तस्मात् योजनाद्
विहार विद्वत् आहारमानोय उपशये गुरोरे अलोच्चविधि प्रवक्त आहार क्लत्वा यत्कत्तथ तदाह ३६ [चउत्थीए पीरसीए निखिविचाणभायण

भङ्ग गिज्झा चकवसा पडिलेहए । परमद्व जोषणाओ विहार विहरए मुणी ३६ ॥ चउत्थीए पीरसीए निखिवि
त्ताण भायए । सज्झाव तथा कुज्जा सव्वभावविभावण ३७ ॥ पीरसीए चउभाए वदिताण तथा शुण । पडिक्क

गर्भपण कुर्यात् एतकारण अथ भालपाणीनी गयेपण न करे ३५ अथसेस समस्त भङ्ग सर्वभिघोपगरण गृहीत्वा सपत्नाह उपगणलेहने नैवेण प्रतिलेख
येत् सम्यागिदे करो पडिलेह पर उत्कट अन्नयोजना क्रोगद्वय यापत् वेकोसताइ भिन्ध विचरयेत् मुनि भिघाने जाइ मुनी ३६ चतुष्पा पीरथा
आहारपाणानतर चायो पीरिसिने विचेआहारपाणिकीधापक्के भाजननिचिप्य प्रतिलेखपादा पडिलेहीने पक्केलेखाध्याय तत कुर्यात् पक्के सज्झायकरे

सञ्जायन्तश्चोक्त्या सव्यभावविभावण ३७] ततश्चतुर्थां पौरुषां भाजनं निचिष्यभ्रीलिकादीवध्या तत स्वाध्याय कृत्यात् कीदृशं स्वाध्याय सर्वभावविभा-
वनं सर्वपदार्थं प्रकाशयं ३७ [पोरिसोए चउत्थाए वन्दित्ताणतश्रीगुरुं पडिकमिताकालस सिस्रं तुपडिलेहए ३८] मुनि. पौरुषाः अर्थाच्चतुर्थाः
पौरुषाद्यतुर्भांशेषे गुरुं वन्दित्वा तत स्वाध्यायादनन्तरं कालस्य कालं प्रतिक्रम्य तु पुन श्रयां वसतिं प्रति लेखयेत् ३८ [पासवणुच्चारभूमिं च
पडिलेहिज्ज जयंजयो काउसण तश्रीकुञ्जा सव्यदुखविमोखणं ३९] ततः पथात् यतिः साधुर्यतवान् सन् यतया प्रश्रवणीच्चारभूमिं प्रलेकं द्वादश
स्थित्वाकालकां च शश्यात्वालभूमिं च स्थित्वाकालिकां प्रति लेखयेत् लघुनीतिस्थाने द्वादशमखलानिहहकीतिस्थाने च द्वादशमखलानि कालग्रहण
मखलानित्रीणि एव समाविशति मखलानि कुर्यात् दिनकाल्यमुक्ता उत्तरार्द्धे न राति कालमारभ्यते ततो भूमिं प्रति लेखनात्तरं कायोत्सर्गं कुर्यात्
कीदृशं कायोत्सर्गं सर्वदुखविमोचणं कायोत्सर्गेण महतीकर्मनिर्ज्वरा यदुक्तं काउसणोजहसुद्वियसस भजन्ति शङ्कुव गादं इहभजन्ति सु विहिया
श्रद्धविहं कश्मसङ्गायं कायोत्सर्गस्य ऐहिक आमुषिक फलं स्यात् ऐहिकं यशोदेवाकर्षणादिक आमुषिकं स्वर्गोपवर्गादिकसुख प्राप्तिरूपं अत्र सुदर्शनं

मित्ता कालस्य सिस्रं तु पडिलेहए ३८ ॥ पासवणुच्चार भूमिं च पडिलेहिज्ज जयं जर्द । काउसणं तश्री कुञ्जा सव्य

सर्वभावानां विभावनं प्रकटनं समर्थं सञ्जाययकी सर्वभावनी सर्वपदार्थानी खवरपडि ३७ पौरुषां चतुर्भांशे पौरुषीने दीधिभाणि वंदित्वा ततो गुरु
गुरनेवंदना करीने कालात् प्रति क्रम्य सिस्रं तु प्रति लेखयेत् उपाश्रय पाटि प्रमुख पडिलेह ३८ प्रश्रवणमूलं उच्चारं ह्यह स्थित्वां मातानी भूमिधं
डिलनीं भूमि सांभे प्रति लेखयेत् यत्ने नयति. यत्ने करीदं देखीने देखे पडिलेहे ततो देवानभिवंद्य कायोत्सर्गं कुर्यात् देव वांदिक्काउसण करे

समाहितेहए ४३) पश्चात्कारितकार्योत्कर्षेणमन्त्रारपूर्वं लीगस्सज्जीयगरे इत्यनेन पारयित्वा ततोऽनन्तरं हादशावर्त्तवन्दनेन गुरुं वन्दित्वा इच्छामोऽस्य
साथिद्य इयथास्थित्वापश्चात् स्तितिभङ्गलक्ष स्तितिलयात्मकं वर्द्धमानाच्चरस्तितित्रयपाठ रूप मङ्गलं क्त्वाकालं प्रत्युपैच्छति प्रतिजागर्त्सि तदवसरसत्कङ्कालं
कालाहण साधुष्टं ह्यतीयर्थं. ततोऽनन्तरं यत्करणीयं तदाह ४३ (पठम पौरसि सज्जाय विद्वएज्जाणं जिहयायर्द्धं तर्द्धयाए निहमीकवं तु सज्जायं तु
चउत्थोए ४४) प्रथमायां पौरथा स्वाध्याय कुर्यादिति शेष द्वितीयायां ध्यानपिच्छस्वादि कां धर्मध्यानानादि कां कधीतसूत्रार्थं ध्यायेत्सितयेत् तृतीयाया
निद्रायामोत्तीनिद्रामुक्कलताविधिया चतुर्थीं पुनरपि स्वाध्याय कुर्यात् द्वितीयवारकथनात् शिष्याय गुरुभिर्पदेशोदात्तव्यः नतु पाठने प्रयाश्रित्तनीयं
इति श्लोकं ४४ (पौरिसोए चउत्थोए कालं तु पडित्तेहएसज्जाय तु तयोक्कजा श्रवीहती श्रसंज्जाए ४५) चतुर्थीं पौरथा पुनः कालं प्रतिलेख्य प्रत्युपैश्य

गुरुं । काउत्स्रणां तथो कुज्जा सच्च दुक्ख विमोक्खयां ४२ ॥ पारिय काउत्स्रणो वदित्ताण तथो गुरुं । शुद्ध मंगलं च
काउं कालं संपडित्तेहए ४३ ॥ पठमं पौरसि सज्जायं विद्वयंज्जाणं जिहयायर्द्धं । तर्द्धयाए निहमीकवंतु सज्जा

लीगस चितानरूप कुर्यात् पहिला २ पथे एक एण लीगस्सज्जीयका उस्सण करे सर्वदुःख विमोचणं सर्वदुःखनुं मूं कावणहार ४२ पारितकार्योत्कर्षः काउ
स्सणप, रीने वंदित्वा ततो गुरुं गुरुवांसेनि सिद्ध स्तवकरूपं क्त्वा स्तिति स्तवनकरे मंगलरूप कालं सप्रतिलेख्य भट्ट्वाति पथेकासिं पडित्तेहए करे शुद्ध
पति चोलगटो पडित्तेहए ४३ प्रथम पौरथां स्वाध्यायं पहलो पौरसि सज्जायकरे द्वितीयायां ध्यानं ध्यायति वीजी पौरसिं ध्यानकरे तृतीयायां निद्रा
सेवयेत् लीगो पौरसिं निद्राकरे स्वाध्यायं पुन कुर्यात् चतुर्थीं चोथी पौरसिं सज्जायकरे ४४ पौरथा चतुर्थीं चोथी पौरसिने विखे कालं प्रति जाग

प्रतिज्ञानायप्रामदहोला तत स्वाध्याय कृयात पर कि कुर्वन् स्वाध्याय कृयात असयतीन् गृहस्थान् अवाधयन् अजागरयन् यनै २ पठन् इत्यर्थं
 चयै पठन श्रवणात् गृहस्था सात्रययापार कव्वन्ति तदा साधुरपि आरभक्रियाभाकस्यादिति भाव ४५ (पोरिसीए चउभाए वन्दिजणतप्पोशुर
 पडिकमिन्नाकालस्र काल तु पडिनेहए ४६) चतुथा पोरथायचतुर्थभागे श्रवयेपेसति घटिकाहयेरजन्त्या श्रवयिष्टे सति तदाहि कालस्रभयावकालस्र
 यइण तक्कात् ततोशुर वन्दिवाहाइशायनंदन्दन दत्ता कालस्र इति तत्समययोग्य काल प्रतिक्रम्यतत्स्रभ्यिनी क्रियां कृत्वा तु पुन काल प्राभातिक
 काल प्रतिनेखयेत् प्राभातिककालप्रहण गृह्णीयात् इत्यनेन श्रावय्यकवेसां ज्ञात्वा श्रावय्यकानि कुर्यात् ४६ (श्राणएकायबुस्रगो सव्यदुक्खविमोक्खणे
 काउसगलत्प्रोक्का सव्वदुस्रविमोक्खण ४७) राधि प्रतिक्रमणस्यापनानन्तर कायव्युत्सर्गे श्रागतेसतिकायोतसर्गेवलायां पूमायां कायोक्खर्गेसमये
 पूमादा न विधेय कयन्त साये सव्वदुस्रविमोक्खणे तत कायोक्खन कर्यात् कोटय कायोक्खर्गे सर्वदुक्खविमोक्खण श्रव पुन सर्वदुक्ख विमोक्खणमिति

यतु चउत्थीए ४४ ॥ पोरिसीए चउत्थीए काल तु पडिलेहिया । सज्जायतु तन्नोक्खुज्जा अवोहती असजए ४५ ॥
 पोरिसीए चउगभाए वदिजण तश्चाशुर । पडिकमिन्ना कालस्र काल तु पडिलेहए ४६ ॥ श्राणए कायवुस्रगो सव्व

रतिकाने पडिनेहे स्वाध्याय तत कृयात् पक्के सज्जायकरे श्रवोधयत् अजागरयत् असयतान् चीर कपो बलादीन् न जायति असयतीने जाणावे
 नहो ४५ पोरथा चतुभागे श्रेपेसति पोरसिने चोधिभागे वदित्वा ततो शुर वदना करे शुरने कालात् प्रतिक्रम्यनिहल्य पडिक्रमणोकरे कालतु प्रति
 लेखयेत् काले पडिनेहणकरे वेला ४६ श्राणात् चारित्रादि विशुश्राय कायव्युत्सर्गे काउसगलकरे सर्वदुक्खविमोक्खण सर्वादुक्खणी रहितदुवे कायोक्खर्गे

विशेषणान् कायोत्सर्गस्य अत्यन्तकर्मानिर्जासहितुल्य प्रतिपादित तथा इह कायोत्सर्गपर्यणान् चारितदर्शनज्ञानशुद्धयर्थं कायोत्सर्गत्रय याश्च तत्र
 लतौयिकायोत्सर्गोरातिकोऽतीचारश्चिन्तनीयः ४७ एतदेवार्थे तनगाथाया आह [राईय अईयारं चिन्तित्वा अणुपुञ्जसो नाणमिदसणमीचरित्तंमितय
 मिय ४८] रात्रो भव रात्रिकं च पदपूर्णे अतीचार चिन्तयेत् आनुपूर्व्या आनुक्रमेण ज्ञानं दर्शनेचारित्र्ये तपसि च शब्दादीर्ये शेषकायोत्सर्गे चतु
 र्विंशतिस्त्वचिन्त्यतयायतीतः साधारण्येति नीकः ततश्च ४८ [पारियकाउसगो वन्दित्वाणतश्री गुरुं राईय रु अईयार आलोएज्जजहकम ४८)
 (पडिकम्मिच्च निसत्तोवदिच्चत्ताणतश्रीगुरुं काउसगगतश्रीकज्जासच्चदुक्खविमोक्खणं ५०) इत्यस ततः पारितकार्योत्सर्गं सन् साधयुरु पन्दित्वा हादशा
 दुक्ख विमोक्खणे । काउसगगं तश्रीकुज्जा सच्चदुक्खविमोक्खणं ४७ ॥ राईयंच अईयारं चिंतेज्ज अणुपुञ्जसो । नायां
 मि दंसगामी चरित्तंमि तवंगिय ४८ ॥ पारिय काउसगगो वंदित्वाण तश्रीगुरुं । राइयंतु अईयारं आलोएज्ज जह
 कसं ४९ । पडिकम्मिच्च निसत्तो वंदित्वाण तश्रीगुरुं । काउसगगं तश्रीकुज्जा सच्चदुक्ख विमोक्खणं ५० ॥ किंतवं

ततं कुर्यात् पक्षे काउसगकरं सर्वदुःख विमोचणं सर्वदुःखयो रहितसत्त्वे ४७ रात्रिकं अतीचारयतिभिः रात्रिसंवाधिया अतीचार चिंत्सते अनुक्रमेण
 अनुक्रमेण चिंतये ज्ञानेन दर्शनेन पुनः ज्ञानानंददर्शननां चारित्र्ये तपसा च चारित्तनां तपसो ४८ पारित्तं कायोत्सर्गं काउसगगपारं वदित्वा ततो गुरुं
 वादृणां देहने गुरुने रात्रकं रात्रिसवधी अतीचारं अतीचार आलोचयेत् यथाक्रमं यथा अनुक्रमे ४८ प्रतिप्रश्नानिःशब्दायतिः निःशब्दायको पडिक्खमे
 वदित्वा ततो गुरुं गुरुने वादृणादेहने कायोत्सर्गं ततः कुर्यात् तियारं कंठे काउसगगकरं सर्वदुक्खं विमोचणं सर्वदुक्खतुं सुं कावयणहार ५० किं तपः

दिक अङ्गीकृत्य सिद्धान्तानां संस्तप देवसिक प्रतिफलणवत् प्रांलि यर्षमानसु तिनयस्वरूप पाठ कुर्यात् तदनुचैत्य सन्नावं तद्वदनं कार्यं प्रकृस्त्वधपाठेन पश्चात् सर्वान्धिया यथायीयं कर्त्तव्या ५२ अथ आध्ययनीपसंहारमाह [एसा सामाथारी सभासेण विद्याहिया जंचरिना बह्वजीवातिणा संसारसागर त्तिवेमि ५३] एषा भगवदुता दणविधसाधु सामाचारी सभासेन सत्पेण विदाहिया व्याख्यातायाः सामाचारीसरिला अगीकृत्य बह्वजीवा. संसारसागर तीयाः इत्यह वजोमि इति सुधर्मायामो जम्बूत्वाप्तिनं प्रत्याह ५३ इति श्रीमदुत्तराध्ययनसूतार्थदीपिकायां उपाध्याय श्रीलक्ष्मीकीर्तिगण्डिष्य लक्ष्मी वल्लभगण्डिविरचिततायांसामाचार्याख्यं पङ्क्तिप्रमथयन संपूर्णं ॥ २६ ॥ अथ सप्तविंशं अधयनं प्रारभते ॥ सामाचारी कथतेन पाठतेन षटस्य विषय भूताया अण्डताया कथनेन अण्डत्व ज्ञापनार्थं खलुकाख्यं अधयन कथ्यते [धिरेणसुहरे गमोमुणी आसि विसारए आइने गण्डिभावंमि ससाहिंपण्डि संधए १] गार्थोनाग गणधरीमुनिः स्वविरः आसीत् गणस्य गच्छस्य धारकत्वात् स्वविरः गर्भार्थोत्पत्त्यात् गार्थो मनुते सर्वसावयवि रमणस्य गतिज्ञां कुरते इति मुनि. कीदृशो गार्थोविगारदः सर्वगाल्लनिपुणः पुन. कीदृश स आकीर्णः आचार्यगुरैर्ब्राह्मिः पुन. कीदृशः

वह्वजीवा तिन्नासंसारसागरत्तिवेमि ५३ ॥ सामाथारीकथयथां सप्ततं २६ ॥ धिरे गणहरे गर्भो मुणी आसि विसारए ।

सत्र
भाषा

सविये करोने कहो थां आचरित्वापह्वजीवाः जे सभाचारी अगीकार करोने घणा जीव तिर्थां ससारसागर इति सभाशो बवीमि ससारसागर तया पारपाथां ५२ इति. योसासाचारी नाम उत्तराध्यायनस्य पङ्क्तीप्रतितमाध्ययनं संपूर्णं ॥ २६ ॥ स्वविरः गणधरः गर्भनामा स्ववीर गणधर गर्भ नामाः मुनिरासीत् मुनिह्वया पठितविगारद भाषकः पूज्य. आचार्यादि भावगुण आचार्यने कृतीसगुणे करी सहितके सभाधिं सयमरूपं करोति

स गण्यभाव आचाय वेस्वित पुन स गार्था गणधर समाधिधत्ते कुशियै स्थातित ज्ञान दर्शनचारिखाणां समाधि प्रतिषधयतीत्यर्थ १ [वहणे
वहमाणस कतार अइयत्तर जोएय वहमाणस स सारे अइवत्तर २] यथा यथा वहने प्रकटादौ विनीत तुरग ह्यपमादीन् वहमाणस इति छद्ममा
णस सारथादि कतार अरस्य अतिवर्त्तते स पूर्ण भवति तथा योगी स यमव्यापारसु शिष्यान् वाहयत आचार्यस्य स सार अतिवर्त्तते शिष्याणा
विनीतत्वदृष्टा स्वय समाधिमान जायते शिष्यासु विनीतत्वे न स्वय स सारसुषधयन्ते एव एय ८ भयोर्धिनीत शिष्य सदाचार्योर्दोष रूढ्य स सार
व्हे करदति भाव २ (खल केजोउजोएइ विहकाराणिकिससइ असमाहि च वेएइतोत्तथोयसेभज्जइ ३) यत्तु सारथिखलु कान गलिहप्रभान् योजयति
रथेस्यापयति स सारथिर्द्विहकाराणोइति विद्वेषिणतान् खल काग धन प्राजनेन ताडयन् सक्तिशते सत्तेश प्राप्नोति अतएव असमाधि असाता वेदयते

याङ्गो गणिभावमि समाहि पडिसधए १ ॥ वहणेवहमासु कतार अइवत्तई । जोएय वहमाणस ससार अइवत्तई २ ॥
खलु को जोउ जोएइ विहमाणो किलिसइ ३ । अममाहिच वेईए तीत्तउय सिभज्जइ ३ ॥ एग डसइ पुच्छमि एग

समाधिकपस यम करे १ सम्यक् प्रकटादीणाहमानव्य भला बलर गाडे जोआथको अटवी अतिवर्त्तते अटवोन लाघे पार पामे यथार्योण्य सयमव्या
पारय सिष्यान् वाहयेत् इम शुश्रियन्ने स जमजोगने विखे चलावतायका स सारी अतिवर्त्तते स सार उक्खे पारपामे २ खलु कान गलितहप्रभान
या वाहयति गनिये बलरने जे गाडे जोडे सयहमान ताडयन के प्र प्राप्नोति ते बलरने चलावतु थको ताडतुथको ते प्रपामे असमाधिच वेदयति
असमाधि पण पामे पुरालिकासे तस्य भज्जने बलो तेहने उपराणोपणि भांजे ३ एकडसति पुच्छे क्ठो सारथी ह्यपमनी दाते करी पुच्छकरडे एका

प्राप्नोति च पुनस्तस्य खलु ऋषभभयाजयतुः पुरुषस्यतीवक प्राजनकीभञ्चते खलु काना अतिशुद्धनात् प्राजनकीभञ्चतेइति भावः ३ [एगच्छसद् पुच्छ मि
 एगं विधद्भ्रमिः कर्णं एगभञ्जद्भ्रमिभल एगो उप्यहपट्टिश्चो ४] युनः खलुं कद्वपभन्वामीरथारीहकोरुष्टः सन् त खलुकां पुच्छे दत्तैर्दशति एकः स एव एक
 गलिउपभं अभोज्या वार २ विञ्चति प्राजनस्य आरयाव्यथति एकीगलि ह्यपभः समिलां युगकीलिकां भनक्ति एकः पुनर्गोलिहर्षभ उत्यथमार्गं प्रस्थिती
 भवति ४ [एगोपडद्पासिणं निविसद्निवज्जद् उक्कद्भ्रउपफिउद् सट्टिवालगावीवए ५] एकीगालिस्ताडित सन् पार्हेन वामदस्यभार्गे न पतति अन्यः
 कश्चिद्भ्रुमिनिसनेनोक्षे नश्रति एकः कश्चिन्निपयते स्वपिति प्रनस्वोभूलाशेते एकउत्कूर्धति उच्छलतिदुर्दुरवत् चतुःफालीभवति अन्यः शठीभवति
 धूर्त्तलं आचरति अन्य कश्चित् गलिर्वलोद्दोर्वालगवी लघिष्टां धेनुं दद्याता अनुव्रजन्ति ५ [साईसुडेणपटद् बहुवेगच्छद्भ्रपट्टिहं मः सक्सेणश्चिद्भ्रवेगेणय

विधद् अभिक्वणां । एगो भजद्दं समिलं एगो उप्यह पट्टिश्चो ४ ॥ एगो पडद् पासिणां निविसद् निवज्जद् । उक्कद्भ्र
 कोपिफुडद् सट्टि वालगावीवए ५ ॥ माई सुडेणा पडद् बहुवे गच्छद् पट्टिपहं । मयलक्खेण चिट्टद् वेगेण य पहावईद् ।

अभिक्वणां निरतर विध्यते एक ह्यपभने वारवार आरद्दं वीधे एको ह्यपभः समिलं भनक्ति एक बलद् समिलानि भाजे एक उक्कागोर्द्रास्ततः एक बसद्
 उक्कागोर्ने दोडे एक पतति पार्वेन एकपसवाडे पडे ४ उपविशतिवद्भ्रसोजाद्दं स्वपतिसद्दं जाद्द चलि नही उत्कूर्धति कूटि कटुकवत् उत्यति द्ढिनीपरि
 ऊ चो ऊडे शठी दुष्टाक्कावलीवर्दः धेनु प्रति धावति दुष्टबलद्गयने देखीने धावद्दं द्रीडे ५ मायावान् मूहपितति एक ह्यपभमायावीमाथाद्दं करि
 भीद्दं पडे क्कः सन् विपरीत गच्छति कोपपास्योथको पाक्कोवले मत्कम्मियेण तिष्ठति मूधानु मिस करीने पडे वेगेन प्रधावतिवेगे करीने दोडे ६

पहावर ६) एकीभारभायायान् भवानमस्तक भूमौ निक्षिप्यपतति एव कश्चित् क्रुद्ध सन् प्रतिपद्य प्रतिवृत्त पन्था प्रतिपद्यस्त प्रतिपद्य धम्रे तनमार्गं
न्यक्त्वापयामार्गं गच्छति एक कश्चित् कतलक्ष्मिणतिष्ठति अतस्य लक्ष्मण कृत्वातिष्ठति निश्चिभूत्वापततीत्यर्थं यदा च पुन कथञ्चित् सज्जीकृत्य उत्थापि
तस्तदावेतिन प्रथावति धनयारीयाथावति यथा पथात्त्वाभौष्टहीतु न याक्नोति ६ (द्विनालेश्चिन्दईसकिदुदन्ते भस्मईजुग सेषियसुसुयारता उत्तहिता
पलायद् ७) एकाः न्यवालोदुष्टजातीय कश्चित्सन्न इति रक्ति बन्धा रज्जु, द्विनति वलाद्योडयति अन्वीदुर्दालीदमित्तुभयकीयुग जूसर भनक्ति सेषि इति
स च दुटोवलोषर्द सुतरां अतिययेन पूरुक्त्वा अत्यन्त पूष्कार कृत्वा उत् पावत्ये नजुहिताइति स्था स्तामिन शकट उत्थायैत्वात्वाकुवचिद्विपसप्रदिशेभक्ता
स्य पसायत ७ [खल काजारिसाजोक्तादुस्रोमाविहृतारिसा जोइयाधम्मजाणमि भजन्तीधिरदुब्बला ८] गार्हनामा आचार्य एष यदस्ति भोसुनयो
यदालोकेखल का अत्र उत्त लक्ष्मण गलिहपभा योज्या रथस्थाये धुरियोत्कृता सन्तीयाइयाभयान्ति रथारोहकस्य असमाधि लेशकराभवन्ति धुरति

द्विनालेश्चिन्दई मिस्त्रि दुदते भजएजुग । सेषिय सुसुयारता उत्तहिता पलायई ७ ॥ खलु का जारिसाजोक्ता
दुस्रीसाविहृतारिसा । जोइया धम्मजाणमि भजति धिइ दुब्बला ८ ॥ इीगारविए एगे एगेत्य रसगारवे । साया

दुइजानिच्छिनति एक श्रिक्किरफि दुइपलदरायिने तोडे एको दुईंति युग भनक्ति एक दुईंतिवलद सुरभाजि शकिल शकट त्यक्त्वा शमिसाने गाढाने
कीडोने उत्तहितेयान पलायतिनासौजार ७ उत्तरूपा गावोयाइया युज्यमानास्य तिस्था एवलद कथा भूटा एष दु श्रियापि ताइया भूटा श्रियापि
रणी रोति ज्ञाणवां योजिता धर्मयाने भज्य ते भजना भवति धम्मरूपगाढोने विखे जोयायका भाजि सतीपरहिताधिति दुर्बला सतीधि करीने रहित ८

नियमेन षाचार्थस्यापि दु श्रिया दृष्टाःश्रियाः विनयरक्तताः कुश्रियास्तादृशाभवन्ति धर्मयानिशुक्ति नगरपापकलेनसद्यमरथे योजिताः व्यापारिताः
 भव्यत्वे सद्यमक्रियानुष्ठानात् सत्त्वान्ते सत्त्वान् न प्रवर्त्तन्ते इत्यर्थः कीदृशास्ते दृष्टिदुर्दलाः निर्दलचित्ताः धर्मैर्दुश्रियराइत्यर्थः ८ [इति गारवण्ये एगोत्थर
 गारवणे सायागारविएएणे एगोसुचिरकोहणे ८] [भिवत्वालासिएएणे एगोश्रीराण्णभीरएथद्विएगण्ण जणसासन्धो हेजहिं कारणेहिथ १०] युवसां एक
 कश्चित् ऋत्विगौरविना ऋश्रागौरवं प्रस्थास्तीति ऋत्विगौरविको मम थापः आत्माः मम थाथा वथा मम उपकरणं वल्ल पातादिसमीचीन इत्यादि
 आत्मान बहुमानरूप मनुते स ऋत्विगौरविक उच्यते एतादृशोयुर्वादेशेनप्रवर्त्तते एकःकश्चित् पुनरत्र स गौरविकः आहारारदिष् रसोलीलुपः एतादृशोहि
 रत्नानाद्याहारदानतपसोनप्रवर्त्तते एकाकश्चित् कुश्रियः सातागौरविकोभवति सातायागौरवैभव सातागौरविकः एतादृशोहि विवहार कर्तुंनशक्नोति एकः
 कश्चित् शुश्रिय सुचिर गोधनः चिर क्रोधकारणशोलाः एतादृशोहितपः क्रियानुष्ठानकरणे योथो न भवति ८ (भिवत्वा० १०) एकः कश्चित् भिवत्वालासिकः
 भिवत्वायां गालस्युक्त तादृशाहि गोच रोपरोषहसदनयोथो न भवति एकःकश्चित्पमानभीरुर्भवति अपमानात्भोरः अपमानशील एतादृशोहि तस्य ऋत्वेन

गारविए एणे एगोसुचिर कोहणे ८ ॥ भिवत्वालासिए एणे एणे उमाण्णभीरएथद्वे । एणं च अणुसासंभी हेजहिं कारणे

ऋश्रागारवितो मानरूपः एकतुमानरूप ऋत्वि तिणे करो गर्वितके एकोस्त्रि रसगर्वितः स्वादलंपटः एकश्रिय रसगर्वितके शातागर्वितः एकश्रियः
 एकशातागर्हिं पञ्चो श्रिय एक सुचिर क्रोधो दीर्घरोपो एक दीर्घरोसी ८ भिवत्वालासः पकाः एकाभिका मानवे जालसी एकोमानभीरुः यस्य तस्य ऋत्वे
 न याति एकमानो जेतने धरे न जाइ एकस्त्वधः अनुशासने एकाश्रियादीथायकां स्त्वध्जोइ रहं हेतुभिः कारणैः पचावयव अणुमानवाक्यैः अनन्यथास्मीइ

प्रथयति एक कथित् स्वार्थोद्धारोभवति एतादृशोनिजकुप्रहात् धिनय कर्तुं न शक्नोति च पुन एक कुशिल्य प्रतिश्रियादनि आचार्य एव विधारयति
 हेतुभि कार्थै अह एन युगिष्य अनुशासिक कथ इति श्रुत्याहार कथश्रियायिष्यामि आचार्यइति चिन्तापरीभवति इति भाव १० [सीवि अन्तरभासि
 क्तो दोसनेवपकुल्द आयरियाण तवयथ पडिकूलनेद अभिक्त्वथ ११] सीपि कुशिल्य आचार्यश्रियात सन् अन्तरभाषायान पुनदोपनेव अपराधनेव
 प्रकटति आचार्यस्य सिजाया दीप नेव प्रकाशयति अपगुणयाहीभवतीत्यथ पुन स कुशिल्य आचार्याणा यद्वचन तद्वचन वार वार प्रतिफलवति
 सम्प्रथ ज्ञयति यदा आचार्या किञ्चित् श्रियापचन वदन्ति तदा अभीष्ट सुदुरव यदति कि मां यूय वदत यूयमेव कि न शकत इत्यर्थ ११ [न सामम
 विजाणार नविसामज्जराहिरनिमायाहीहितीमदे साह अथोत्थवचथी १२] तदा आचार्य किञ्चित् युशिल्य प्रतिवदति भी शिल्यअमुकस्य गृहस्थस्य

हिय १० ॥ सीविअतर भासिहो दासनेव पकुल्द । आयरियाणं तवयथा पडिकूलद्व अभिक्त्वथा ११ ॥ नसामम
 विद्याणाद् नविसा मज्जराहिरं । निगयाहोहिरंमने सारह अन्नेत्य नच्चओ १२ । विसियापलिडवति ते पलियति

नियत पूर्ववर्तिभि १० सापिउग्रियमान अतरादभाषा श्रियादेताथका विचे बोले दीपप्रकरोति रोसवहे आचार्याना यद्वचन तत्रतीहर्जि गुरुव
 वषन प्रतिफल अमोक्ष वार २ गुरुना वचन भूटा माने कुशिल्य भूटाश्रिया ११ गुरुणाकार्ये प्रेरितोवृत्ति मानविजानातिते मुक्तेन जानि नक्षीके श्राविका
 नच सामह्य दास्यते ते मुक्तेन नक्षी दिद निरंता भविष्यती मन्थे ह ते श्राविका धरथीनी सरौहस्येइ इम जाण तु अन्य साधु अथ कार्ये गच्छतु
 एकायनेवाभते वोशी कोर साधु भेजो १२ कचिक्काय प्रेपिता कचिक्का का एकाहरेहिरा ते युश्रियाकाय मोकल्याकार्यं करेनहीं आहारारिकथी

गृह्यात् मर्त्यं आहारायानीयदेहि तदा स इप्रियोवदति सा आधीमम इति इति मान्विजानासि मा न उपलक्षयति सा आधीमर्त्यं आहारादिक न
 दास्यति अथवास गुरुं प्रत्येवं वदति हि गुरो अह एव मन्वेसात्नीनिर्गताभविष्यति लश्टहादर्परल इदानी गता भविष्यति अथवा अन्य साधुः अस्मिन्
 कार्ये व्रजतु अह न व्रजामि इत्यर्थ १२ [प्रेषियापलि उंवाति तेषलिनित समतथी रायवेदुिचमन्नं ताकरितभिउडिं मुहे १३] पुनस्ते कुप्रियाः
 आचार्येण कुप्रिवित् गृहस्थगृहे आहाराथर्थं गृहस्थस्य आकारणायवाप्रेधित. सन्तः पलिओविंति अपङ्ग वन्ति अपरलपन्त वयं भवद्भिः कुलमुक्ता अस्माकं
 न स्मरसि अथवामिष्टाहारादिकं गोपयन्ति अथवा उक्तं कार्यं न निष्यादयन्ति अनुत्यादितमपि उत्सादितमिति वदन्ति. उत्सादितं च अनुत्यादितं
 वदन्ति अथवा यत् भवद्भिर्वयं प्रेषिता स गृहीनकसित् दृष्ट इति पृष्टासन्त अपरलपन्ति पुनस्ते इप्रियाः समं तत. सर्वास्दिक्षुपरियन्ति पर्यटन्ति
 गुरुपार्थैकदाचिन्न आद्यान्ति न उपविशन्ति कदाचिद्वय गुरुणां पार्थस्यासामस्तदास्माकं क्विक्त्कार्यं कथयिष्यन्ति इति मत्वा अन्यत्र भ्रमन्ति इति
 भावः कदाचिक्त्स्मिन्कार्ये गुरुभिः प्रेषितास्तदारालवेडिं इव मन्वमानास्तकार्यं इवन्ति दृश्यवेष्टिः पटि ताडति जानतीमुखे भृकुटीं भूभङ्गरवर्नीं
 कुर्वन्ति अन्यामपि ईर्ष्याभूचिकां चिष्टां कुर्वन्तीति भाव १३ [वाइयासङ्गुहिया चिव भक्तपणेणपोसिया जायपक्खाजहाहंसा पक्कमन्तिदिसोदिसिं १४]

समंतथो । रायवेदुिच मन्नता करेति भिउडिसुहे १३ । वाइया संगदियाचैव भक्तपाणेण पोसिया । जाय पक्खा

लवे कहे मिम्यो नहीं इम कहे ते इप्रिया समंततः इप्रियाः पलायनेचिहुं पासे कुप्रिय नासी जाइ राजवेष्टिमिष मन्वमाना राजानी वेठनीपरि
 माने कुर्वन्ति भृकुटीमुखे मोहीडे भमह उंचीचटावे १३ सन्नं वा चितताः तदर्थं च गाहिताः मंशहीता शिखादानेन सत्र भूषाव्या अर्थदीधी सिख्या

पुनस्त्रिकुशिया शुरुभिर्वाचिता सूत्र प्राहिता शास्त्राभ्यास कारयित्वापस्विडताकता पुन सगृहीता सम्यक् स्वनिययाया रथिता पुनभक्तपाने पोषिता
 प्रष्टि नीता चकारात् दीक्षिता स्वयमेव उपस्थापिता पशान्तेकार्येष्टतेदिसोदिसि प्रकमन्ति यथेष्ट विहरन्ति ते कुशिया के यथाजातपक्षा वृसा
 यथाजाता पक्षास्तन्तुवृक्षाणि वेदां तैजातपक्षा हसादव यथा उत्पन्नपक्षाहसा स्वजननी जनक च त्यक्त्वा दयसुदिसु व्रजन्ति तथा ते कुशिया अपि
 रति भाव [प्रहसारहीविचिन्ते र खल केहि समगभी किमञ्जदुदसीसेहि अप्यामि अयसीयद १५] अद्यानन्तर सारथिर्गर्वाघायो धर्मयानस्य प्रैरकथे त
 सिञ्चितयति खल केर्गल्लिहपभसदृशे कुशिये समङ्गत सहित किञ्चित्तयति यन्निर्दुष्टियथे प्रेरितै सहि किमञ्जरति कि ऐहि कासुप्रिकफल वा
 भम प्रयोजन सिद्धति दृष्टियथै प्रेरितै केवल मे मम आका एव अयसीदति तेषा प्रेरणात् स्वकालवहानिरेव भविष्यति नान्यत्किमपि फल तत एतेषां
 कुशियाणान्यागेन भया उद्यतविहारात्त्रिणा एवभाष्यमिति चिन्तयति १५ [जरिसा मम सीसाथो तारिसागलिगद्वहागस्त्रिगदहे च रत्ताण दृढ परिणुदहे
 तथ १६] पुन स आचायचिन्तयति यादया मम शिया सन्ति तादृशगलिगद्वेभाभवन्ति अयगस्त्रिगद्वेभ दृष्टान्तेन शियाणा अत्यन्तनिन्द्यासुचिता

जहाहसा पक्षमति दिसोदिस १४ ॥ अह सारही विचि तेद खलु केहि समागथो । किमञ्जद दुदसीसेहि अप्यामि

दीधी भक्तपानाभ्याच पोषिता भातपथीकरो पोषाहे जातपक्षा यथा वसा जिभ हसना बालकने वसपीथिवधारे मोटाकरे पाखआवे जीवारे खडी
 जाये वसेव स्त्रेष्ठाचारीणो व्रजति दियोदिसे ते शिय पणि भयानगणायका पळे जठीजाद १४ अथ सारथि विचिन्तयतिहवे सारथीचिन्तवे खलु के
 दृष्टियथै समागतं शुरुचिन्तवे दृष्टियथ आभीमोच्या कि मम दृष्टियथै एदृष्टियथे सुभनेस्य मम आका अयसीदति किञ्च्यतित्वारो आका दुख

सूत्र
 भाषा

ततः गर्गाचार्यो नलिगर्दभ सदृशान् कुप्रिथान् लक्षा दृढं यथा स्यात्तथा तपोबाह्य आश्वत्तरश्च प्रयत्नहाति प्रकर्षणांगी करोति तु प्रष्टः पदपूर्णे
यदा एतान् कुप्रिथान् अह नलस्यामि तदामदीयः कालः क्लेशे एव प्रयास्यतीति आचार्यो विचारयति १७ [मिउमहवसपत्ने गभीरेसु समाहित
विहरद् महिं महृपासील भूएण अप्पणोत्तिवेमि १७ स गार्थं आचार्यस्वदा ईदृशः सन् मही पृथिवीं ग्रामानुग्राम विहरति कीदृशः स चटुर्वहिवर्द्धत्वा
विनयवान् पुन कीदृशो भार्दवसंपन्नः अन्त करणेपि कीमलतायुक्तः पुनः कीदृशः गभीरः अलक्ष्यमध्यः कीदृशः सुसमाहितः सुतरां अतिप्रयेन
समाधिसहित पुनः कीदृशः शीलभूतेन आत्मना षपलचितः शील चारितं भूताः प्राप्तीयं स शीलभूत तेन शीलभूतेन शीलयुक्ते नात्मना सहितः
यतीहि खलुं काल कुप्रिथल्वं तत्तु अविनीतल्वं तच्च खस्य गुरोसदीष हितुरस्ति अतो अविनीतल्वं लक्षा विनीत लमङ्गी कर्त्त व्यमितभाष १७ इतिप्रहं
ववीमि इति श्रीसुधर्मास्वामिजम्बूस्वामिन प्राह ॥ इति श्रीमदुत्तराख्यान सूत्रार्थदीपिकायां षपाध्याय श्रीलक्ष्मीकीर्त्तिगण्डिप्रिथ लक्ष्मीवल्लभाण्यि विरचित्

अविनीतयर्द् १५ । जारिसा ममसीसाओ तारिसा गलिगदहा । गलिगदहे चद्रताणं दटुंपगिगहए तवं १६ । मिउ
महवसंपण्णे गंभीरेसुसमाहिते । विहरद् महिं महृपा सीलभूएण अप्पणोत्तिवेमि १७ ॥ खलुकिज्जंभयणं समत्तं २७

पामेके १५ जादृशा. ममः प्रिथाः जीसामाहरे प्रिथके तादृशाः गलिगर्दभाः दुष्टवधभा जेहवागालीया वधमः गलिगर्दभान् लक्षा गलित वधमसरिषा
प्रिथकोडीनि दृढं तपः परिदृक्कालि दृढतपकरे १६ चटुस्सया भार्दवः सन् चटुमार्हवण्णे करीसहित कीमलचित्तगंभीर. तथा सुसमाधितः कीमलचित्त
थको समाधिसंयुक्त विचरति पृथिव्यां महात्मा पृथिवीने विखे विचरे आत्मा शीतभूतः शीतः सन् आत्मना इति वृवीमि सीतलहृश्रीथको विचरे १७

ताया खलु कोयाव्य सप्तविशतितम अथयन सम्पूर्णं ॥ २७ ॥ अथाष्टाविशतितम प्रारभ्यते पूर्वस्मिन् अथयने अष्टस्य मोक्षमार्गप्राप्ति स्यात् अतो मोक्षप्राप्ति विधायक अथयन अष्टाविश प्रारभ्यते [मोक्षमार्गगद् तच्च सुषेहजिणभासिय च उकारणसख्युत्त नाणदसणलक्षण ५] श्रीसुधर्मा स्वामी जम्बूस्वाम्यादीन् शिष्यान् वदति भोमुनयो मोक्षमार्गगत यूय शृणु तमोचोटकर्मणा नाशस्वस्य मार्गज्ञानादि मोक्षमार्गस्तेनगति सिद्धिमन्नरुपाभोक्ष मार्गगतियूय शृणुत कौट्यी मोक्षमार्गगति जिनभाषिता जिनीका पुन कौट्यी तच्च इति तथा अकितया सत्या तत्ररुपा पुन कौट्यी चतुर्भि कारणै सयुक्ता चतु कारणसयुक्ता पुन कौट्यी ज्ञानदर्शनलक्षण ज्ञान च दर्शन च लक्षण स्वरूप यस्या साज्ञानदर्शनलक्षणात् १ अथतानि चतु कारणानि आह [नाण चदसण चैव चरिसच्च तवोतहा एसमगोत्तिपवत्तो जिण्हियरदसिद्धि २] एव चतु कारणरूपोमोक्षमार्गजिनै केवलभिस्कीर्ष करैय प्रसक्त कथित कोट्यैर्जिनैर्वदश्रिभि धर अथभिचारिलेनवस्तु स्वरूप द्रष्ट गोल येषा ते वरदर्शिनस्कीर्षदर्श्रिभि सम्यग् ज्ञानदर्शनधर्म्मिद्वि लयं अथ चतुषाङ्कारणानां नामानि प्रथम कारण ज्ञान यथा स्वरूपस्थाना वस्तुनां विशेषेण अवबोधोज्ञान ज्ञायते अनेनेतिज्ञान तदिह सम्यक ज्ञानमुच्यते च पुनर्द्वितीय कारण दर्शन वस्तूना यथा स्वरूपस्थाना सामान्यप्रकारेण अवबोधोदर्शन दृश्यत अनेनेति दर्शन तदप्यत्र सम्यग् दर्शनमुच्यते

मोक्षमार्गगद् तच्च सुषेह जिणभासिय चउकारण सजुत्त नाण दसण लक्खण १ ॥ नाणच दसणचैव चरिस च

इति श्रीसुशुक्ति अथयन सप्तविशतमोडवार्ध सपूर्णं ॥ २७ ॥ मोक्षमार्गगत सत्य हवे मोक्षमार्गनीगति सत्यरूप शृणुत जिनभाषित अहो भय्यजीव तुह्मे साभलोयोत्तरागनुभाषित चतु कारण सयुक्त चिह्नकारणे करीसहित ज्ञानदर्शन लक्षणस्वरूप ज्ञानदर्शनलक्षण करीने सहीत ५ ज्ञानस्य स्वरूप

चेव शब्दः पदपूर्णे विशेषावबोधायकं ज्ञान सामान्यावबोधायकं दर्शनं इति ज्ञानदर्शनयोर्भेदः च पुनस्तृतीयं कारणं चारितं चर्यते प्राप्यते मोक्षोऽने
 निति चरित्रं सयमरूपं तदिह सभ्यम् चारित्रं एवज्ञेयं तथा चतुर्थं तपः कारणं तद्यते कर्मवर्थाऽनेनेति तपः देनकर्मवर्गः प्रज्वलति तत्तपोद्वादशविध
 श्रवतपस्यचारित्रात् पृथगुपादानं कर्मचयेतपसोऽसाधारणत्वस्थापनार्थं २ एतदनुवादद्वारेण फलमाह [नाथं चदं सणं चैव चरितं च तवीतहा एयमभा
 मणुप्यत्ताजीवागच्छन्ति सगद् ३] जीवाः भव्यजीवाः इमं मार्गं अनुप्राप्ताः सन्तः सद्गतिं मोक्षगतिं गच्छन्ति इमं मार्गकं ज्ञानं च पुनदर्शनं च
 पुनधारित्रं तथातपीजिनाज्ञाशुद्धं द्वादशविध इत्यनेन ज्ञानदर्शनं चारिततपांसि मोक्षमार्गः ये पुरुषाश्च सावधानास्ते मोक्षगमिनीज्ञेयाः इति भावः ३
 [तथ पञ्च विहंणाणं सय आभिणिवोहिय ओहिनाणञ्चतइयं मणणाणञ्च केवलं ४] तल ज्ञानादिषु मध्ये पञ्च विधं पञ्चप्रकारं ज्ञानं कथितं तान् पञ्च

तवीतहा । एस मग्गोत्ति पन्नतो जिणेहिं वरदंसिहिं २ ॥ नाणं च दंसणं चैव चरितं च तवीतहा । एयमग्ग मणुपंतो जीवा
 गच्छन्ति सगद् ३ ॥ तथ पंचविहंणाणं सुयं आभिणिवोहियं । ओहिनाणं तइयं मणणाणं च केवलं ४ ॥ एयं पञ्चविहंणाणं

दर्शनं स्वरूपं पुन ज्ञानदर्शनं चारितं बाह्याभ्यंतरभेदस्तपः चारितवारभेदे तप एषः मुक्तिमार्गः प्रज्ञासः उक्तः जिनैः एमुक्तिनो मार्गतीर्थं करे कच्छी
 प्रशस्य सभ्यज्ञाधरैः विशिष्ट सभ्यज्ञाना धरणाहार २ ज्ञानस्वरूपं दर्शनस्वरूपं ज्ञानदर्शनं पुनः चारितं बाह्याभ्यंतरभेद स्तपस्तथा चारील तप एवं मुक्ति
 मार्गं मनुप्राप्ताः एमार्गं ने विखे प्राप्त हुआथका जीवाः गच्छन्ति सद्गतिं जीव भलीगतिं जाई निसंदिह ३ तल पंचविधं ज्ञानं तीहां ज्ञानना पांचभेद
 श्रुतज्ञान १ मतिज्ञान २ ततीयं अवधिज्ञानं ३ मनःपर्यावज्ञानं पनपर्यायज्ञान ४ केवलज्ञानं केवलवज्ञान ५ एतत् पञ्चविधं ज्ञानं एपांचे प्रकारे ज्ञान

भाषा

सूत्र

गुणानां रूपरसस्पर्शादीनां आशयः स्थानं द्रव्यं यत्र गुणा उत्पद्यन्तेवतिष्ठन्ते विधीयन्ते तत् द्रव्यं इत्यनेन रूपादिवसु द्रव्यात् सर्वथा अतिरिक्तं अपि नास्ति द्रव्ये एव रूपादिगुणालभ्यन्ते इत्यर्थः गुणाहि एकद्रव्याश्रिताः एकस्मिन् द्रव्ये आधारभूतं आधेयत्वेनाश्रिता एकाद्रव्याश्रितास्ते गुणा उत्पद्यन्ते इत्यनेन ये केचित् द्रव्य एव द्रव्येति तद्वदतिरिक्तान् रूपादीन् द्रव्येति तेषां मत निराकृतं तस्माद्गुणादीनां गुणानां द्रव्येभ्योभिदोष्यस्ति तु पुनः पर्यायाणां नव पुरातनादि रूपाणां भावानां एतन्नक्षत्रं स्रियं एतत् लक्षणं किं पर्यायाहि उभयाश्रिताभयेयुः उभयोर्द्रव्यं गुणयोराश्रिता उभयाश्रिताः द्रव्येषु त्वीन पर्यायाः नात्रा आकाश्या च भवन्ति गुणेष्वपि नवपुराणादिपर्यायाः प्रत्यक्षं दृश्यन्ते एव ६ पूर्वं द्रव्यभेदानाह [धर्मो १ अधर्मो २ आगासं ३ कालो ४ पुगल ५ जलत्वो ६ एसलो गुणपन्नतो जिणेहिं वरदंसिहिं ७] धर्मो इति धर्मोस्ति काय १ अधर्मो इति अधर्मोस्ति काय २ आकास इति आकाशास्ति कायः ३ कालः समयोदिरूपः ४ पुगल इति पुगलास्ति कायः ५ जलत्व इति जीवाः ६ एतानि षट् द्रव्याणि ज्ञेयानीति अन्वयः एषा इति सामान्यप्रकारेण इत्येवं रूप उक्तः षट् द्रव्यात्मकी लोको जिनैः प्रज्ञातः कथितः कीदृशैर्जिनैर्वरदर्शिभिः सम्यक् यथास्थित वसुरूपज्ञैः ७ [धर्मो १

लक्षणां पञ्चवाचं तु उभयो अस्त्रिया भवे ६॥ धर्मो अहर्मो आगासं कालो पुगल जंतवो । एसलोगोति पसातो जिणे

द्रव्याश्रिता भवति रूपादिक गुण एक द्रव्येन आश्रये होइ पर्यायानात् इदं लक्षणं पर्यायत्वं लक्षणं सहेभाविनी गुणाकम भावितः पर्यायाः लक्षणपर्याययोः उभयोः द्रव्याश्रिता गुणाश्रिताय भवति द्रव्येन गुणेन आश्रित इवे ६ धर्मोस्ति काय १ अधर्मोस्ति काय २ आकाशास्ति काय ३ कालः समयोदि ४ पुगल ५ जंतवो जीवो ६ एषः लोक इति प्रज्ञातः कथित एहलोक कथो जिनैः वर केवलजानीइ कथो ७ धर्मोस्ति काय अधर्मोस्ति काय एतानि

अहम्भा आगासद्वय द्रक्क्रिकमाहिय अणत्ताणिय दव्याणिकालीपुग्गलजन्तयो ८] धर्मादिभेदानाह धर्म १ अधम्म २ आकास ३ द्रव्य इति प्रत्येक योज्य धर्मं द्रव्य अधर्माद्रव्य आकाशद्रव्य इत्यथ एतत् द्रव्य तय एकेक इति एकत्व युक्त एवतीर्थकरे आख्यात अग्नेतनानितीणि द्रव्याणि अनन्तानि स्वकीयस्वकीयानन्तभेदशुक्लानिअधन्ति तानितीणिद्रव्याणिकानिकाल समयदिदरन्त अतीतानागताद्यपेक्षयापुद्गलाअपिअनन्ता जन्तवीजीवा अध्यनन्ता एव ८ अय पट द्रव्याणा लक्षणमाह [गदलकवणो उधम्मो अहम्मोटाणलकवणोभायण सब्बदव्याण नह ओगाहलकवणो ८] धर्माधर्मास्तिकायोगति लक्षणोश्चैय लक्ष्यते प्रायतेनेनेतिलक्षण एकमाहेयात् जीवपुद्गलयोदयान्तर प्रतिगमन गतिगतिरेवलक्षण यस्य सगतिलक्षण अधर्मा अधर्मास्तिकाय स्थितिलक्षणोश्चैय स्थिति स्थान गति निश्चिन्ति सैवलक्षण अस्ति स्थानलक्षणोऽधर्मास्तिका योश्चैय स्थिति परिणताना जीवपुद्गलाना स्थिति लक्षणकायप्रायते स अधर्मास्तिकाय यत्पुन सर्वद्रव्याणा जीवादीना भाजन आधाररूप नभ आकाश उच्यते तत् च नभ अध्यगाहलक्षण

हिवर दसिहि ७ ॥ धम्मो अहम्मो आगास द्वय द्रक्क्रिकमाहिय । अणत्ताणिय दव्याणि कालो पुग्गल जतयो ८ ॥
गद लकवणोउ धम्मो अहम्मो टाण लकवणो । भायण सब्बदव्याण नह ओगाह लकवण ८ ॥ वत्तणा लकवणो

एकैक द्रव्यरूपाणि तीने एक द्रव्यरूपके अनतानत भेदकी आगला तीन द्रव्यजाणवातेके हा कालपुद्गलजीवा एतानिअनतद्रव्याणि कालपुद्गल जीवए अनतपुद्गलोक कस्सा ८ अथ लक्षणमाह गतिलक्षणो धम्मचलणस्वभाव धर्मास्तिकायते वले चाले अधर्म सस्थानलक्षण स्थिररूप अधर्मास्तिकाय धिररूप भाजन सर्वद्रव्याणा जीवादिना पटद्रव्यरु भाजनधानक ते नभ आकाशरु लक्षण जीवादिक्के अधकाशयते लक्षण ८ वर्त्तनालक्षण काल अतीत अना

श्रवणात्' ग्रहत्तानां जीवानां पुद्गलानां श्रालम्बीभवति इति श्रवणाहः श्रवकाशः स एव लक्षणं यस्य तत् श्रवणाहलक्षणं नभ उच्यते ८ [वत्तणालकवणी कालीजीवोऽवश्रीगलकवणी नाणेण' दंसणेणस्य सुहेणयदुहेणय १०] वर्त्तते अनवच्छिन्नत्वेन निरन्तरं भवति इति वर्त्तना साधर्त्तना एव लक्षणं लिङ्ग यस्येति वर्त्तनालक्षणः काल उच्यते तथा उपयोगमिति ज्ञानादिक स एव लक्षणं यस्य स उपयोगलक्षणो जीव उच्यते यतीहि ज्ञानादिभिरिव जीवी लक्ष्यते उक्तलक्षणत्वात् पुनर्विशेषलक्षणमाह ज्ञानेन विशेषावबोधेन च पुनर्दर्शनेन सामान्यावबोधरूपेण च पुनः सुखेन च पुनर्दुःखेन च ज्ञायते सजीव उच्यते १० पुनर्लक्षणान्तरमाह [नाणस्य दंसणस्यैव चरित्तस्य तवीतहावीरियं उवश्रीगोय एधं जीवसलकणं] ज्ञानं ज्ञायतेनेति ज्ञानं च पुनर्दृश्यतेनेति दर्शनं च पुनश्चरिच' क्रियाचिष्टादिकं तथा तपोदादशविधं तथा वीर्यं वीर्यान्तरायक्षयोपशमात् उत्पन्नं सामर्थ्यं पुनरुपयोगी ज्ञानादिषु एकाग्रत्वं एतत् सर्वं जीवस्य लक्षणं ११ श्रय पुद्गलानां लक्षणमाह ॥ (सदन्धयारउज्जीश्रीपहाकायातवीवियवक्त्रगन्धरसाफासा पुगलाणन्तु सलकणं १२)

कालो जीवो उवश्रीग लकवणी । नाणेण' दंसणेणस्य सुहेणय दुहेणय १० ॥ नाणंच दंसणंचैव चरित्तंच तवी तथा ।
वीरियं उवश्रीगोय एय जीवस्य लकवणी ११ ॥ सदंधयार उज्जीश्री पहा काया तवेद्ववा । वन्न गंध रसा फासा पीगण

गत वर्त्तमानसमय श्रावलीते काल कहेजे जीव उपयोगलक्षणः जिहर्माहिं उपयोग द्रुवेते जीवकहीर' सोपि ज्ञानेन च दर्शनेन च तेषु ज्ञानदर्शनं सुख दुःखेव सुखेन च दुःखेन च जीवस्य लक्षणमाह १० ज्ञानं च दर्शनंचैव ज्ञानदर्शनं चारित्तस्य चारित्त तपश्च तथा तपस्या वीर्यस्य उपयोगश्च वीर्यं अने उपयोग एतत् जीवस्य लक्षण एजीवगुं लक्षण ११ शब्दीध्वनि. श्रंधकार. उद्योतः शब्दकरे श्रंधकार करे उद्योत करे प्रभाकातिः काया श्रातप.

शब्दोच्चिनि रूपपीडलिकसुधान्धकार तदपि पुनरुत्तर तथा लघोतीरवादीनां प्रकाशस्यथा प्रभावन्द्रादीनां प्रकाश तथा छायाद्यथादीनां कायाद्यैत्य
 गुणा तथा प्रातपोरयेरुष्ण प्रकाश इति पुनरुत्तररूप या शब्द समुच्चये वर्णान्तरसंख्यां पुनरुत्तानां लक्षणं ज्ञेयं वर्णां शुक्रपीतहरितरक्त कृष्णादयो
 गन्धोदुर्गन्धसुगन्धान्धकोगुण रसा पटतीक्ष्णकटककपायात्नमधुरलवणायामा क्षुधां शीतोष्णस्वरसदुष्मिगन्धरुचिसव्युर्ग्यादिय एते सर्वेपि पुनरुत्तारसिकायस्य
 लक्षणवाच्योक्त्या इत्यर्थं एभिलक्षणेरेव पुनरुत्तारस्यन्ते इति भाव १२ अथ पर्याय लक्षणमाह [एगसस्य पुनरुत्तस्य सङ्घासङ्घाण क्षेपय सञ्जीगाय
 विभागाय पञ्चवाण तु लक्षणे १३] एतत्पर्यायाणां लक्षणं एतन्निक एकल भिन्नेष्वपि परमाख्यादिषु यत् एकीयं इति नुवाघटोय इति
 प्रतीति हेतु च पुन पुनक ल अथ अस्मात् एवक घट पटात् भिन्न पटोघटान्निव इति प्रतीति हेतु सत्या एकी द्वी बहव इत्यादि
 प्रतीति हेतु च पुन संस्थान एव यस्मिन्ना संस्थान आकारवत्तस्व वस्तुं लति स्मादि प्रतीति हेतु च पुन संयोग अथ अङ्गुल्या संयोग
 इत्यादि अ, पदेशि हेतवो विभागा अथ अती विभक्त इति बुद्धि हेतव एतत्पर्यायाणां लक्षणं ज्ञेयं संयोग विभागा बहुपचनार्त् नव गुराण
 जायत्रस्यात्रेया लक्षणं त्व साधारण रूप गुणानां लक्षणं रूपान्दिप्रतीतत्वादीक अथ दर्शनं लक्षणमाह नवतत्त्व द्वारेण १३ [जीयाजीयाय कर्त्तव्य
 लाणतु लक्षणे १२ ॥ एगसस्य पुनरुत्तच सङ्घा सङ्घाण भेदय । सजीगाय विभागाय । पञ्चवाणतु लक्षणे १३ ॥

तायडा करे कान्ति कर कान्ता कर वर्णं गन्धरसस्यं पुनरुत्ताना ए पुनरुत्त तु लक्षणं कश्चो १२ अथ पर्याय लक्षणं पृथक्त्व च एकत्व च अथ अस्मात् एक
 पटादिक एक यको कर्त्तु सत्या एक इत्यादि रूपा संस्थान च संस्थान आकार सत्या एकवे परि नवतत्वादि संस्थान आकार अर्गसी द्वाय प्रमुख
 सजीग विभाग संयोग पियोग एतत्पर्याय लक्षणं एतत्पर्याय लक्षणं १३ अथ तत्त्वान्याह जीयाजीय यथय जीय तत्त्व २ यथतत्त्व ३ सत्या

युवं पावासवीतहा सभ्यरी निज्जराशुक्लो सति ए र हिद्या नव १४] जीवाश्चेत्तना लक्षणा. अजीवा धर्मा धर्माकाशकाल पुद्गलरूपाः वन्धो जीवकर्मणो
सञ्ज्ञेपः पुण्यं शुभपञ्चतिरूप पाप अशुभ मिथ्यात्वादि आश्रयः कर्मवन्धहेतु हिंसान्यपादत्तमैधुन परिग्रहरूपं तथा सवराः स मिति गुप्तादिभिरा
श्रवहारनिरोधः निर्जरा तपसा पूर्वजाितानां कर्मणां परिश्राटन मोक्ष. सकल कर्म क्षयात् आत्म स्वरूपेण आत्मनीत्वस्थानं एतेनवसत्याका
स्तथाः अचितया भावा सन्ति इति सम्यन्धः नवसत्यात्व हि एतेषां भावाना नथ्यमापेक्ष जघन्यतीहि जीवाजीवयोरेव वन्धादीनां श्रुतर्भावात् द्वयोरेव
सत्यास्ति उक्तृटतस्तु तेषा उत्तरोत्तरभेदविवक्षया श्रनलत्वं स्यात् १४ [तहिद्याणं तु भावाण सभावैवपरुण भावेष सदह तस्मसभ्रतं त विद्याहिय १५]
अहंज्ञस्तस्य पुरुषस्य सम्यक्त्वं सम्यग् भावोऽर्थादर्थानं व्याख्यातं कथितमित्यर्थ कीदृशस्य पुरुषस्य तथाना सत्यानां भावानां जीवाजीवादितत्वानां
सद्भावविषये उपदेशेन गुरुणां शिञ्जावाक्येण भावेन शुद्धमनसाग्रहधानस्य तदिति अहंज्ञैव व्याणस्य योहि जीवादिनवपदार्थानां सम्यक् जानानि
जीवा जीवाय वंधीय पुद्गंपात्रा सवोतहा । संवरो निज्जरागोक्त्वो सर्वे ए तहिद्या नव १४ ॥ तहिद्याणंतु भावाणं
सभ्भावो उवएसण । भावेण सदहंतत्स संयत्तं तं विद्याहियं २५ ॥ निसम्यग् वएसतर्दं आणारुर्दं सुत्तवीयकइमेव ।

पापाश्रव स्तथा पुण्यतत्व ४ पापतत्व ५ आश्रवत्पतत्व ६ तिम समरसंवरोतत्व ७ निर्जरा निर्जरातत्व ८ मोक्षय मोक्षतत्व ९ सति एतानि नवतत्वानि एनवतत्व
जाणवा १४ तथा ता सत्याना भावाना जीवाना एते कथा साचभाष जीव पुद्गलना सज्ञाप विषयमवि तद्य सत्यादि उपदेशेन शाषा करीने गुरु
कथा जे तत्रभागे करो भावेन ग्रहधतः जीवस्य भाविकरी सदहता जीवने प्रोक्तये सम्यक्जिनैः पात्यात कथितं तदने तीर्थ कर सम्यक्कारे १५

भावेन अर्थात् स शुभान् सम्यक्त्वान् इत्यर्थे १५ अथ सम्यक्त्वभेदानाह [निसर्ग १ अथ सत्त ४ वीथरभवे ५ अभिगम ६ वित्थारकर् ७
क्रिरिया ८ सरुव ९ धम्मर १ १६] एतेदयभेदा सम्यक्त्वत्रयेया तत्र प्रथमोत्तिसर्गकचि निसर्ग स्वभावस्तेनरचिस्तलाना अभिक्तापो यस्य स
निसगचचिचयेय १ द्वितीय उपदेशेन गुरुते नरचिर्यस्य स उपदेशकचि यदा गुरुधोर्यधम्ममुपदिशति तदैकाग्रचित्तोय अणोति स उपदेशचिद्वितीयो
शेय २ त्तोय आश्रयासवन्नवधनेन रचिर्यस्य स आश्रारचिर्षेय ३ सूत्रेण आगमेन एवरचिर्यस्य स सूत्ररचिचतुर्थोशेय ४ पञ्चमो वीजरचि वीजेन
रचियस्य स योजरचि वीज हि एक अपि अनेकाग्रप्रबोधक वचन तेन रचिर्यस्येति वीजरचि ५ अभिगमरचि षष्ठ आभिगमेन आनेनरचिर्यस्य स
अभिगमरचि ६ समसोवित्थाररचि वित्थारिणरचियस्य स वित्थाररचि ७ तथा क्रियारचि क्रिययाधमोत्तिसर्गकचिर्यस्य स क्रियारचिररटमीशेय ८
तथा सचेपरचि सकेपेण सप्रनेण रचियस्य स सचेपरचिर्नवम ९ तथा धमेण अतधम्मोणरचिर्यस्य स धर्मरचि अतधर्मभास रचिर्दशम १० यद्यपि
सम्यक्त्वजोदात् भे नोक्ति जीवस्य स्वरूप सम्यक् तद्यपि लक्षलक्षणयोर्गुणयुक्तौ कथनमात्रेण कथ चित्तेदीप्तिक्त्वा अथ सम्यक्त्वभेदानामभावात्
उदाविस्तराह [भूयत्वेणाहि गथा जीयाजीयायपुत्रपादस्य सहससुरया मह समन्तोय रोएरत्तनिसर्गो १०] सनिसर्गरचि कथ्यते यस्मदीर्नित्याहि

अभिगम वित्थार कर्दे क्रिरिया सरुव धम्मकर्दे १६॥ भयत्वेणाहिगया जिवा जीवाय पुत्रपावच । सहसमद्रया सव सव

सम्यक्त्व काथमाह निसगकचो १ उपदेशकचि २ आश्रारचो ३ सूत्ररचो ४ वीजरचि ५ अभिगमरचि ६ वित्थाररचो ७ प्रीयारचो ८ सकेप
कचो ९ धम्मरचो १० एतेस प्रकारे सम्यक्त्व जाणिया १६ एदय विभुत्वायेन १ सत्तार्थेन २ अधिगता सम्यक् प्रकारे क्वाणी निश्चित कीया

सखन्त्यात् स इति क. येनजीवाजीवान् पृथं पापं च एतं पूर्वोक्ताभाषा इत्याद्येन सत्याद्येन अधिगताः भूत-सङ्गतः अदोधिपदे यस्य स तत् भूतार्थं ज्ञानं उच्यते तेन श्रीमीजीवादयोभाषा सङ्गताः सतीति कृत्वा गृहीताः च पुन-पूर्वोक्ता जीवार्जीवाः मुख्यपापस्य पुनरावयवसर्वरां च प्रत्याहन्मोक्षा इत्यादि नवापि भाषान् सहसमा या सह आत्मनासङ्गतामिति सहसम्यक्तिस्तथा सद्यसभवा समुद्योगरोपदेश विनामिति कृत्वाटिथिगदपुष्पात्तर्जा रोचन्ते स निसर्गस्वयः सख्यकमानुष्यते १० अमूर्तवार्थं पुनराह । जीजिष्णुद्विभवे च उच्चिरं सद्धार सद्यमेव एतेनयनवहसिद्यसनिगनारप्रतिनायत्नी १८] सानिसर्गस्वयिर्जातव्यः स इति कः यद्यत्तुर्विधान् द्रव्यैककालभावस्त्वान् जिनीकान् पदार्थान् स्वयमेव परीपदेश्यविनैव अरथाति मनसिधारयति पुनर्योजिनीकोपु तत्वेपु एवमेवै तेषु यथा जिनेदं दं जीवादिस्तत्त्वैवेति नाभ्येति बुद्धिं कुरुते सन्निर्गस्वयिस्त्वयं १८ अर्थोपदेश्यस्वः स्वस्वपमाह (एएवेव उभावेउच्यते जीपरिण सद्धारं एउमत्वेपोजिथिपय उच्येत्सद्धारसिनायत्नी १८) स तपदेश्यस्विरितिभ्रातव्यः यः एतान् यैवभाषान्

सद्य रोपइश्वा निस्यगो १७ ॥ जीजिष्णुद्विभवे चउच्चिरं सद्धार सद्यमेव । एतेव नन्नरसिद्य ननिसगो कश्चि

जांया जीवाजीवां मुख्यपापे च जीपे तत्त्व अजीवतत्त्व मुख्यतय पापतस्य समन्वाजातामर्थति प्रापयी भतिं करोते आह प्रायसंसरोषदत् रोषतं सानिसर्गस्वयिः प्रायस तत्त्वस्वयत् तत्त्वस्वये तं निसर्गस्वयि कर्षाहं १० यः जिन कथितान् भाषान् नं समुष्य तीर्थं करन्ना कृत्वा भाषात्तया अतुं प्रकृतान् द्रव्यैककालभावं गृहते स्वयमेव स्यात्प्रकारे द्रव्येषु कालभाष प्रापयतांसाहं एवमेव नाभ्याया रति भगवतता कृत्वा कथ्याया नर्थावे का निसर्गस्वयिर्जातव्याः ते निसर्गस्वयो जाणयो १८ एतान्तेव तपसाधान् एतवर्तान्तं कृत्वा उपदिष्टान् या परेषु अरथाति नै वीनं समन्वाजाताका मयासदहं चरुमेव

जीवाजीवादीन् परेण अन्ते न ब्रह्मस्थेन वा अथवाजिनेन केवलिनतीर्थकरेण उपदिष्टान् यदधाति इत्यर्थेनियमे च शब्द पद पूरणे १८ अथा आरुचि
स्वरूपमाह [रागोदीसीमोहो अथाण जस्य अयगय होइ आथाएरीय तु सोखसुखाणारुर्दनाम २०] सखलियायेम आशासुचिर्नामइति प्रसिद्धीभवति
स इति कोयस्वराग चो हो द्विपोऽपीति मोह शेषमोहनीयप्रकृतयोऽज्ञान मिथ्यास्वरूप एतत्सर्वं नष्ट भवति अस्यदेशतोऽपगत गम्यते न सर्वतोऽपगत
शब्दस्य प्रत्येक सम्बन्ध यस्य रागोदेशोऽपगत यस्य द्विपोपि देशतोऽपगत यस्य आज्ञान देशतोऽपगत एतेषां अयमभात्
प्राज्ञया आचारायापुपदेशेनरीचमान जीवादितत्त्व तथैति प्रतिपद्यमानो यो भवति स आशासुचिरित्यर्थ अत्र मापतु यदृष्टान्तो मारुसमायूसइति
स्थानेमापतुपइति दृष्टान्तोस्ति २० (जीसुसमहिज्जन्तो सुएणओगाइइं एससन्न अद्विषवाहिरिणय सोसुसरइत्तिनायव्वा २१) स सुवसुचिञ्जातव्य य
सूत्रेण आगमेनसम्यक् अवगाहते प्राप्नोति कोदयेन सूत्रेण अद्विन आचाराद्वादिना वा अथ वा बाहिरिण वाह्येन अनङ्गप्रविष्टेन उप्सराध्ययनादिना

नायव्वो १८ ॥ एएचेवउ भावे उवइइं जीपरेण सहइइ । छउमत्थे ण जिणेणय उवएस इइत्ति नायव्वो १८ ॥ रागो
दासो मोहो अन्नाण जस्य अयगय होइ । आथाए रीयतो सो खलु आणारुर्दनाम २० ॥ जी सुस महिक्कतो सुएण

जिनेनवा छत्रस्य नृत केवलीना कक्षा अथवा तीर्थ करना कक्षा सुधासहइ उपदेशरुचि ज्ञातव्य ते उपदेशरुची काणची १८ रागोद्विपोमोह रागोद्विप
मोह अज्ञानस्य यस्य अयगत भवति अने अज्ञान एतत्तदाना जेहनां गथाहोइ आशाया रीचयन् जिम भगवतनी आशाहुवे जीम भगवते कक्षाके तिम
रुचे स खलु आशांरुचिनाम ते आशासुचि कशीइ २० य सुवमधीयान् पठन जे सुवने भण्ठे सूत्रेण अवगाहते प्राप्नोति सम्यक् सूत्रमपि भयतां

समस्तानां गीविन्दयुचकावकाशमते स सूत्ररुचिभेयः १ अथ बीजरुचिः स्वरूपमाह [एतेषु अणुगार पथाप्रजीपसररुचसभात्तं उदएवतिलविन्दूसोवीयरुचिना यत्नो २] सबीजरुचिजातव्यः स इति कः यः समस्तं इति समाह्वयान् गुणगुणिनीरुदीपचारात् समाह्वयारी आका एव गृह्यते तस्मात् यः समस्तही एनिपदेन जीवादिना अनेतेषु बहुपुपदेषु जीवादिषु तु निरयेन प्रसरति व्यापकवृद्धिमत्त्वे नजानाति इत्यर्थः कस्मिन् करव उदकेतैलविन्दुरिव यथा उदकस्यैकदेशगतोपि तैलपिन्दुः सर्वमुदकमाक्रामति तथा तथैकदेशीयत्वरुचिरपि आकातथाविषययोपमादेशेपतत्वे पुरुषिमान् भवति स एव विधोबीजरुचिर्जातव्य इत्यर्थः यथा बीज क्रमेण एकमपि अनेकबीजानां जनकं स्यात् तथा स्यापि रुचिर्विषयभेदतीरुच्यन्तराणां जनविनीत्यादिति भावः २२ अथाभिगमरुचिः स्वरूपमाह (सोधीइ अभिगमरुचिः सुअनाणजेण अत्यशोदिद्वं एकारसमनाई पञ्चगान्दिद्विवापीय २३) सो अभिगमरुचिर्भ

ओगाहर्दशा समस्त अंगेण वाहिरिणव सो सुत्तरुद्विति नायव्वो २१ ॥ एतेषु अणुगाइं जी पसरुईउ समस्तं ।

उदएव तिलविन्दूसोवीयरु इतिनायव्वो २२ ॥ सोहीइ अभिगमरुई सुयनाणं जेण अत्यशो दिद्वं । एकारस मंगाइं

जाण सांशो सम्यक् अणुण आचारांगतिना अंग भाचारांगतिण भयता पाने' वाह्यादिना अंगप्रविष्टे नां तराध्ययनादिना सूत्ररुचिर्जातव्याः अनंगप्रविष्ट उत्तराध्ययनसूत्रे भयते सूत्ररुचि कहेजे २१ एकजीवादि पदार्थेन गनेके ज्ञातव्या पदानियानि प्रसरति सा सम्यक् सत्यारुचि उदके यथा तैलविन्दुः प्रसरति सा बीजरुचिः ते बीजरुचि नाम जाणुं जीम एकबीजधी अनेकबीज उपर्ये २२ सस्यात् अभिगमरुचिः ते अभिगममाम रुचिकहेईरं श्रुत ज्ञान येन अर्थतः दृष्टानि जिण श्रुतज्ञान अर्थे' दोठीहे एकादशानि अंगानिप अयारुइ अना प्रकीर्णकानि उत्तराध्ययन दृष्टिवादः प्रकीर्णक उत्तरा

क्रियाभाव रुचिर्भंगति तथा सत्य समिति गुणियु क्रियाभाव रुचिर्भवति दर्शनस्य ज्ञानस्य चरितस्य दर्शनं ज्ञानचारितं तस्मिन् तर्पांसि च विनयास्य तेषां समाहार रत्नपीठिनयं तस्मिन् तर्पीठिनये तपस्स षादश्रुचिषु तथा विनयेषु आचार्यादीनां भक्तिषु तथा सत्यायाः समितयः सत्यसमितयः तासु सत्य समितिषु क्रियायां दर्शनं ज्ञानचारितं तर्पीठिनयं समितोनां आराधनागुष्ठानविधी भावेन रुचिर्यस्य स क्रियाभाव रुचिः २५ अथ संक्षेपरूपमाह [अणभिरगच्छिय कुट्टिी सखेदकरत्तिहीरनायवी अविसारश्रीपदयणे अणभिरगच्छिषीयसेसु २६] स संक्षेप रुचिर्भवति इति ज्ञातव्यः स इति कः योऽनभि गृह्येत कट्टिः अनभिरगृहीता अनर्पीकता कुट्टिर्बोद्धमतादिरुपायेन स अनभिरगृहीत कुट्टिः येन मिथ्यात्वनां कुसलथाङ्गीकतो नास्तीत्यर्थः पुनर्यं प्रवचने जिनीहा सिशान्ते अघिसारदीऽपचतुरः पुनर्यं श्रेषु मतेष्वपि कपिसादिमतेष्वपि कुशलोनस्ति सचै तादृशः पुरुषः संक्षेपरुचिः स्यात् २६ अथ धर्मरुचे स्वरूपमाह [जो अस्थिकाय धर्मसयधर्मं खलु चरित्त धर्मं च सरुद्र जिष्णाभिर्यं सीधभरुद्रस्तिनायवी २७] सधर्मं रुचिर्भवति इति ज्ञातव्यं यः परयोऽस्ति कायानां धर्मादीनां अर्थात् धर्मास्ति कायादीनां धर्मं असाधारण सत्तणं स्वभावं चसन्नस्वभाव स्थिर सख्यानायकाय दानादिकं

नाम २५ । अणभिरगच्छिय कुट्टिी सखिव रुद्रत्ति हीर नायवी । अविसारश्रीपदयणे अणभिरगच्छिषीय सेसिसु २६ ।

भावरुचि सः खलु क्रियारुचिर्नाम ते क्रियारुचि कश्चिद् २५ यः अनभि गृह्येत कुट्टिबोधितो मतादिरागः जिष्णो बोद्धादिकनोभस नही भास्वीके नही बोधोके अविग्रहमिथात्वतो नही सम्यक्तो संक्षेपरुचिरिति भवतिर्ज्ञातव्या ते संक्षेपरुचि कश्चिज्ज अविशारदी अकुशलः प्रवचनेसिद्धातनीयास नही जाणेके अनादरः श्रेषु अन्यदर्शनेषु बीजां दर्शनने विखे अनादरके २६ यः प्राणी अस्थिकाय धर्मं जीको प्राणी धर्मास्ति कायने युतधर्मं निश्चिते नियमेन

जिनभिहित तोषकरीक श्रुधाति पुनयोजिनीक एव श्रुतधम्म शङ्खप्रविष्टादिरूपस्य पुनयारिवधर्मं सामायिकच्छेदीपस्यापनीय परिहार विशुद्धि
 सूर्यसम्भराय यथाव्यातादिक जिनीक श्रुधाति नतु यो धम्मादीनां सस्य पापयिद्धिभिरक श्रुत्ते श्रव हि पृथक उपाधिभीदेन समारकभं कथन शिष्य
 य पा न्नाय धम्याता तु निमगाश्चिरपदेय कचिय एती उभी मीदी अधिगम कथो एव श्रुत्तार्थवत २७ अथ समारक लिङ्गान्याह [परमत्य सधयोपा
 सुदिह परमग्न सेवणायावि धायककु दसण्यज्जपाय सम्भस सद्वहणा २८] एतत्समाक श्रुतान समारकस्य लस्य समारकवत पुरपस्य चिक्क शीयं कि
 तन्नयण परमार्थसम्यय परमाथाजोवादितलानि तेषां परमार्थानां जोवादिभाषानां सक्तय स्वरूपज्ञानां दुत्पन्न परिचय परमार्थ
 स म्यय एतत्प्रथम सम्यकवर्तो सजण या शण् पदपुरणे या श्रयवा श्रुत्तम् लस्यमिद सुदट परमार्थं सेवन सुदट यथा स्वरूप दृष्टा दर्शिता वा पुर
 भाषा जोपादयो येने सुदट परमाथा गाताथा स्तेपा सेवन सुदट परमार्थं सेवन बहुश्रुतानां भाषायादीनां यथाशक्ति वैयाहस्यस्वकारण एतदपि

जोषल्लिकाय धम्मा सुयधम्म खलु चरित्तधम्मा च । सद्वहद्द जिणाभिहित्य सोधम्म रुद्धत्ति नायथ्यो २० ॥ परमत्य सधयो
 वासुदिहपरमत्वसेवणावावि । वावन्न कुदसण वज्जणाय सम्भस सद्वहणा २८ ॥ नत्थि चरित्त सम्भस विह्वण दस

धारिषधम्म श्रुतधम्म धारिवधम्म श्रुधाति जिनाक सहि तीर्यं करनु भाषां सधम्म रचिरित्त ज्ञातव्य ते धम्मरचिकहीए २७ परमार्थं सक्तयकरण
 जोषादिरचिनुं करिवा सुदिह परमार्थं गोतार्थां यावका साधवयतेषां सेवनागीतार्थं साधु श्रयवा यावक तद्वनो सेवाकरे व्यापयानां चरणश्रुतानां
 कुदयानां ध कापलिकादीनां वर्जनां सगत्यागकरे कुदयनो श्रुटाचारो तद्वनो सग न करे सम्भस श्रुधानं सरुक्कनो सद्वहणाकर २८ नाकि धारिव

गुणै रहितस्य मोक्ष कर्मचयोनास्ति अमोक्षस्य कर्मव्यय रहितस्य निर्वाण मुक्तिसुखप्राप्तिर्नास्ति ३० अथ सभाग्नस्य अष्टौ आधारान् आह (निष्कश्चियनि
कश्चियनि विवृतिगिच्छा अमूढदिद्वेय उवयूहधिरुकरणे वच्छेक्षपभाषणे अट्ट ३१) नि यद्विगत देशत सर्वतथयाद्धाररहितत्व पुनर्निर्वाणितत्व शाकवायन्य
दर्थनपद्वयवाञ्छारहितत्व निर्वाणितिकस्य फल प्रतिसन्देहकरणविति क्रिस्तानिर्वाणितवितिककानिर्वाणितिकस्ता तस्य भायोनिर्वाणितिकस्य किमेतस्यतप
प्रथितिकेयस्य फल वर्तत नवति सद्य एव वा विदन्तीतिविद साधवस्तेषा विजगुप्सा किमेते मलमलिनदेशा अचिन्तयानीयेनदेश प्रज्ञासयता
कोदोष स्यादित्यादिनिन्दातद्भावोनिर्वाणितगुपस प्राकृतापल्लाकूलेनिर्वाणितिकस्य इति पाठ अमूढादृष्टि अमूढदृष्टि कश्चिन्मत् कुतोर्धिकाणा
परिब्राजकादीना कश्चि दृष्टा अमूढाकिमस्माक दर्शन यत्सर्वथादिरिद्राभिभूत इत्यादि मोहरहितदृष्टिवृद्धिरमूढदृष्टि यत्परतीर्थिना भूयसी कश्चि
दृष्टापि स्वकोये अकिञ्चने धर्ममते स्थिरोभाव अथ चतुर्विधोप्याचार अन्तरङ्ग उक्त अथवाद्याचारमाह ७ पद्व हणा दर्शनादि गुणवतां प्रशसा पुन

अगुणिस्य नल्य मोक्षसो नल्य अमुञ्जस्य निव्याण ३० ॥ निष्कश्चिय निष्कश्चिय निव्वितिगिच्छा अमूढदिद्वेय । उव
यूह धिरीकरणे वच्छेक्ष पभाषणे अट्ट ३१ । सामाद्रयत्व पटमके उवद्ववावण भवेवीय । परिहारविसृज्यीय सुदुमतह

चारित्रगुणा ज्ञानपापे चारित्रनागुण न होइ चारित्ररहितस्य मोक्ष कर्मचयोनास्ति चारित्रे हीन ते कर्मधी छुटनही नास्ति अमुक्तस्य निवाण कर्मधी
रहित के नथो ह्यथा तेहन मोक्षसिद्धनही ३ तत्वतो शद्धानाणे अनेरोधर्मनवाके फलप्रति सदेहन आणे मिथ्यात्वाना धर्मनी महिमा देखीने वांछा न
कर धर्मवतना गुणकहे धर्मवकीसोदाताने नियलकरे साहमीनी हितकारी होय प्रभावनाकरे ३१ सासायिक प्रथम चारित्रनाशेदकहेके सामायिक

चिरिकरणं धर्मानुगतं प्रतिसीदतां धर्मवतां गुरुपाणां साहाय्यकरणेन धर्मैस्त्रिरीकरणं पुनर्नाकल्पं साधर्मिकात् भक्तपानीयैश्चिकरणं पुनः
 प्रभावनात्स्वतोर्थावृत्ति करणं एते श्री आचारा समाहस्यज्ञेयाइत्यर्थः ३१ अथ चारित्रभेदानाह (सासाद्वयत्वं पदमं हे श्रीवरावणं भवेवीयं
 परिहारविमुच्येयं सुहृत्सन्तुल्यं परायत्न ३२) [अकसायमहकलाय क्लृप्तमल्यस्त्रिणस्त्रवा एय चय त्रित्तरं चारित्तं हीद्र आहियं ३३] शुभमं अत्र प्रथमं
 सात्तारिकं चारित्रं इय समीरागद्विषरहितचित्तपरिणामस्त्रिणन् समी आयोगमनं समायः समाय एव सामाधिकं अथवा समानां ज्ञानदर्शनचारित्राणां
 आयोगाभः समाय समाय एव सामाधिकं सर्वसावद्यपरिहाररूपं यद्यपि सर्वमपि चारित्तं सामाधिकं एवोच्यते तथापि क्लेदीपस्थापनादि भेदेषु
 प्रथमत्वात् प्रथमं नामां भेदात् ज्ञेय यतोहि शब्दाधिक्यादर्थाधिक्यं प्रथमं कथनमात्रत्वेन तदपि सामाधिकं नामचारित्तं द्विविधं इत्यं १ यावत्कथितं
 च २ भरतैरावतसहाविदेहिषं मध्यमजिनतीर्थेषु च उपस्थापनयाः सहावे यावत्कथितं सभावति उपस्थापनाया अभावे जावत्जीवं अपि भवति इत्यं

संपरायंच ३२ ॥ अकसायं अहकलायं क्लृप्तमल्यस्त्रिणस्त्रवा । एञ्चयत्रित्तरं चारित्तं हीद्र आहियं ३३ ॥ तवीय

चारित्त १ क्लेदीपस्थापनीय भवेत् द्वितीय बीजं क्लेदीपस्थापनीय चारित्र २ परिहार विशुद्धं ततीयं ३ बीजं परिहार विशुद्धि सूत्रसंपराय तथा चतुर्थं ४
 तिम सूत्र संपराय चीषं ३२ अकषाय चपितीपशमित कपायावस्थानं रूपं कषाय चपाथ्येके उपशमित कीथेके तेहने यथाख्यात चारित्त हीद्र एपांच
 सुं चारित्त जाणवुं यथाख्यात क्लृप्तस्य उपशान्त मोहगुण स्थानिकस्य जिनस्य वा भवति क्लृप्तस्यने उपशान्त मोहने उपशान्त कषायने चारित्तहीद्र एतत्
 कर्मचय कर पचविष चारित्तं स्यात् एपांचे प्रकारे चारित्त कर्मचयनुं कारण भगवते क्लृप्तं ३३ तपो बाह्याभ्यंतरमिति द्विविधसुक्तां तपवे भेदे बाह्यातप

न्येदीपस्थापनोयानां साधना भवति तथा द्वितीय च्छेदीपस्थापनीय यस्य शब्दस्य कोर्धं सातिचारस्य निरति चारस्थया साधीसूरीर्णालर प्रतिपद्य
 मानस्य पूषवयाप्रयव हेरुस्तत्रै न्येदाययोग्या उपस्थापनामाहावतारीपणा यस्मिन् तच्चेदीपस्थापन चारिष्व द्वितीय ज्ञेय तदपि द्विविध
 सातिचार निरतिचारश्च अथ परिहारयिषुश्च द्वितीय परिहाररूपो विधेयस्तेन विशुद्धिर्विघ्नं तस्य परिहारयिषुश्चिक भवति तद्विधियाय नवयतयोग्यात्
 पृथकभूय षट्प्राप्तमासान् यावत्साधयन्ति तत्र नव साधूनां मन्त्रेचत्वार परिहारिका भवन्ति चत्वारोऽन्त्ये तीर्षां वैयाह्वयकरास्ते षट्परिहारिकाभवन्ति
 एकान् नयम कथस्थितीवाचनाचर्योभवति एव प्रस्तास यावत् तप कृत्वा पयात्प्रस्तास यावत् ये परिहारिकास्ते षट्परिहारिकाभवन्ति षट्परि
 हारिका परिहारिकाभवन्ति पश्चात्सायावदेव तप कुर्वन्ति ततश्च कल्पस्थित सौमि ते नैवविधिनापस्तासन्तप करोति गोपेय पटसुभासेप एक
 कथिलकस्थितोभूत्वा ते सन्त्ये सेवेपि षट्परिहारिकाय भवन्ति एव विधिना षट्प्राप्तमास प्रमाण कल्पोजातस्य कल्पसमाप्तौ तु पुन परिहार
 विशुद्धिमन्तो न यापि यतयोगिनकथ्य या गाण वा प्राययन्ति एतदाचारवन्त साधयोहि जिनस्य जिनपार्स्थितस्य स्थिरस्य गणधरस्य वा समीप
 प्रतिपद्यन्ते नान्यस्य पा वैतिटन्ति तप्यं चारिष्व परिहारयिषुश्चिक द्वितीय ज्ञेय तथा भूक्त्वासम्पराय चतुर्थं भयति शूद्रा किट्टीकरणात् स्म्योक्त
 सम्पत्त्यां लोभात्थ कपाययोग्यं तत् सूत्रसम्पराय एतच्चारिष्व हि उपगमयेषि क्षपकये च्छादस्य साधीलोभात्थ वेदनसमये भवति सूत्रा सम्पराय
 रति षट्प्राप्तमास प्राकृतात् ३२ अकपाय कपायरहित चयितकपायायस्यार्थ एतद्भवति यथाख्यातनामक तीर्थं करीक पञ्चम ज्ञेय रद हि यथा
 स्यात् चारिष्व कथस्य उपयातमोहाद्ये गुणस्थाने तथा प्रयोगाद्ये चतुर्दशे गुणस्थाने वर्तमानस्य भयति एतत्तस्य विधे चारिष्व भयति कीट्य
 चारिष्व रिक्तकरं कथरायोनिरिक्त अभाय करोत्येवशोलरिक्तकर तीर्थं करै आख्यात कर्मराशोनां अभावकर सामायिकादिपक्ष विधे चारिष्व कर्म

यत्र तत् प्रहोषसर्वदुक्ल मोषस्थान तदर्थयन्ते अभिलपतीति प्रहोषसर्वदुक्लार्था इत्यर्थं प्रहोषसर्वदुक्लार्था इति स्थाने सर्वदुक्ल प्रहोषार्था इति पाठस्तु श्रापत्वात् इत्यहं त्रयीमि इति सुधर्मास्वामीजन्मूलान्मिन प्राह ३६ इति श्रीमदुत्तराध्यायन सूत्राधर्मीपिकायां उपाल्याय श्रीमच्छ्रीकीर्त्तिगण्धिप्रियासप्तोवक्षभगण्धि विरचितताया मोक्षमार्गीयाख्य अष्टाधियमध्यायन सम्पूर्ण ॥ २८ ॥ अथैकान्त्रि शतमम मारभ्यते पूर्वस्मिन् अथयनेमोषमार्गीगतिश्चासाधवीतरागत्वपूर्विका इति अथ यथा वीतरागत्व स्वात्तथाभिधायक एकोनति शतम कथ्यते (सुय की आउसन्ते ष भगवया एवमकथाय इहखलु सभ्यमापरिक्रमेनामकथये समणेण भगवयामहावीरेणकासर्वेण पवेइयाज सभ्य सद्विज्ञतापत्तिय इत्तारीयइत्ता कासिस्सापालइत्ता गीरइत्ता किइइत्तासोइइत्ता आराइइत्ता आणाए अणुपालइत्ता बहवैजोपासिअन्ति नुअन्ति सुयन्ति परिनित्वाइन्ति सब्बदुक्लाणमत्त करन्ति] इत्यालापक १ हे श्रायुषन् इति सन्धीधन हे जन्बु मयायुत तेन भगवताप्रानवता श्रायुषताजीवताविव्यमानेन श्रीमहावीरेण एव आख्यात एव कथित एवमिति किमुक्क तदाह इहस्मिन् जगति आगमिवाखलु निचयेन सम्यक् पराक्रम नामाध्यायन समारम्भे सति बह्वमानेगुणै कर्मशतं जयस्तत्रण पराक्रमोबल यस्मिन् तत् समारम्भ पराक्रम नामाध्यायन अमणेन तपस्विनाभगवता ऐश्वर्ययुक्तेन श्रीमहावीरेण काश्यपगोपीयेण प्रयेदित यत्समारम्भपरा

शुद्धा पक्रमति महसिणोत्तिवेमि ३६ । सुक्लभगज्जयाण सम्भात् २८ ॥ सुयने आउसत्तेण भगवया एव भवत्वायं ।

भेदे तपकरिने सबदुक्ल प्रहोषार्था सर्वदुक्लने श्रयकरिने प्रक्रमति सिद्धि गच्छति महर्षिण, इति त्रयीमि मोटा कथोअर मुष्णि पोषचे ३६ इति मोष मार्गीगतिनामा अध्यायननो अर्थं पूरौ वयो ॥ २८ ॥ युत मया हे श्रायुषन् हे चिरजीव सीयावीरम साभन्व भगवता श्रीमहावीरेण एव आख्यात भगवत

क्रम अध्ययनं श्रुत्वास्तार्थाभ्यां सामान्येन प्रतिपद्यतीत्यविशेषेण प्रतीतिं आनीयरीचयित्वा तस्य अध्ययनस्य अर्थाभिलाषं अनुष्ठानाभिलाषं आत्मन उपाय्य पुन स्मृष्टा मनोवाक्यादौस्तदुक्तानुष्ठानं संसर्ग्यपालयित्वातस्याध्ययनस्य गुणेन अतीचारवर्ज्जनेनरक्षयित्वातीरयित्वाअनुष्ठानं पारं नीत्वाकीर्त्तयित्वागर्भं प्रतिविनयपूर्वकं मया भवद्भ्राः सकाशात्समाकं प्रकारेण संपूर्णमधीतमिति कथनेन शोधयित्वागुरोर्वचनानात् पश्चात्सुद्धं क्त्वा आराध्ययथोक्त उत्सर्गापवादनयविज्ञानेन सेवनं क्त्वा आश्रयागुरोर्वादेशेन अनुपाल्यनित्यं आशेष्यबहवोजीवाः सिध्यन्ति सिद्धिशुण्युक्ता भवन्ति बुद्धान्ति धातिकर्मनिवा रणेन तत्वज्ञानाभवन्ति मुच्यन्ते भवोपग्राहिकमं चतुष्टयबन्धात् सक्ता भवन्ति परानेर्वान्ति कर्मदावानलोपशमनेन शीतलत्वं प्राप्तु वन्ति सर्वदुःखानां

इह खलुसम्भूतं परक्रमे नामज्जगद्यथे । समर्थेण भगवया महावीरेण । कासवेणं पवेर्दया जं ससमं सदृष्टिता पत्तिय
इता रोयइता फासिता पालिइता तीरइता किदइता सोहइता आराहिता आशाए अणुपालइता बहवै जीवा

गोमहावोरे इम कही इह अस्मिन् प्रवचने निश्चयेन सम्यक्त्वं पराक्रमनामाध्ययनं एनिश्चय सम्यक्त्वं पराक्रमनामाध्ययनं अमणेन भगवता महावीरेण अमण भगवत महावीरे काश्यपगोले ण प्रवेदितं काश्यपगोलेने षणीइं एअध्ययन कहां यत् सम्यक् अदधानं क्त्वा जे अध्ययने भला अरुहे प्रतितयित्वा प्रतीत उपजावि रोचयित्वा चित्तमार्गिह र्चवावे स्मृष्टाक्रियायां क्रियाइ करीने क्ररसे पालयित्वा भलेप्रकारे पाले पारं नीत्वा पारपंभीने कीर्त्तयित्वा स्वाध्याय विधानत परने उपदेशे शोधयित्वा गुरुवचन केडिसोधीने आराध्यो उत्सर्गापवादाभ्यां उत्सर्गं अपवादे आराधीने गुर्वाज्ञासेवनेन गुरुनी आज्ञाइ करीने अनुपाल्य गुरुनी आज्ञाइ मार्गपालिने बहवः जीवा सिद्धान्ति षणा जीवसीभ्ने तत्वज्ञानेन बुद्धान्ते मुच्यं ते कर्मबंधनात् परिनिर्वापयन्ति कर्म

गरीरमानसानीं पत्त कुर्वन्ति रत्यानापकाथ (तत्राथ अयमद्वे एवमाहिज्जद) तस्य सम्भक्तपराक्रमाल्पयनस्य अथ यत्प्रसाथोऽर्थ एव अनुनाप्रकारेण
शोमहावोरण आख्यायत कथन्ते (तजहा सर्वगे १ निर्व्वेए २ धम्मसहा ३ गुरुसाहभिमयसुभूसणया ४ आलोयणा ५ निन्दणया ६ गरहणया ७ सामार्हद
च उयोससए ८ यन्त्णे १० पट्टिकमणे ११ काउसतो १२ पञ्चकलाणे १३ यथयुद्द महल्ले १४ कालपट्टिलेहणया १५ पायट्टिसाकरणे १६ खमावणया १७
सम्भाए १८ वायणा १९ पडिगुच्छणया २० परियट्ठणया २१ अणुपेहा २२ धम्मकहा २३ सुयसुआराहणया २४ एगामाणसन्निवेशणया २५
सयम २६ तवे २७ योदाणे २८ सुहसाए २९ अयट्टिवहया ३० यिचित्तसयणासाणसेवणया ३१ विणि यट्ठणया ३२ सम्भोगपञ्चकलाणे ३३ उव्वट्टि
पयकलाण ३४ आहारपथकलाणे ३५ कसायपञ्चकलाणे ३६ जीगपञ्चकलाणे ३७ सरीरपञ्चकलाणे ३८ सहायपञ्चकलाणे ३९ भत्तपञ्चकलाणे ४० सम्भापपञ्च
कलाणे ४१ पट्टिकवणया ४२ वैयावथे ४३ सव्वगुणसम्भन्धया ४४ वीयरागया ४५ खन्ती ४६ मुत्ती ४७ महवे ४८ अज्जवे ४९ भाव सच्च ५०
करणसचे ५१ जीगसचे ५२ मणगुत्तया ५३ वयगुत्तया ५४ कायगुत्तया ५५ समाहारणया ५६ वयसमाहारणया ५७ कायसमाहारणया ५८ नाणसम्भ
यया ५९ दसणसम्भयया ६० चरित्तसम्भन्धया ६१ सोदन्दियनिगह्हे ६२ चकिल्लदियनिगह्हे ६३ वाणिदियनिगह्हे ६४ जिम्भन्दियनिगह्हे ६५ फासि

सिञ्जतितुञ्जतिसुच्चति परिनिव्वान्द तिसव्वदुक्खाणा मतकरति तस्याण अयमद्वे एवमाहिज्जद तजहा सवेए १ निर्व्वेए २

यन्नि उपयमायो सवदुक्खाना अत कुवती सर्वदुक्खाना अतकरे ते अल्पयननो अय अर्थ आख्यायते वल्लमाण प्रकारे ते अल्पयननो अर्थहवे करिके तयाथा
दगयति कययतो करिके सेवेग ससारथो सेवेग १ निर्वेद ससारथो निर्वेद २ धर्मायज्ञा धम्मनीवासना ३ गुरुसा धम्मिक श्रुश्रपणा गुरु साधर्मी

द्वियनिगर्हि ६६ कोहविजये ६७ माणविजये ६८ मायाविजए ६९ लीहविजये ७० पिज्जदीसभिच्छादंशणविजये ७१ सेलेसी ७२ अकभाया ७३) इति
सूतं एतस्य सभ्यत्तपराक्रमाध्ययनस्य श्रीमहावीरेण यथानुक्रमं अर्थीत्याख्यायते तद्यथा सन्ध्वे गीमीचाभिलाषः १ निर्वादः संसारात् विरक्तता २ धर्म
ग्रहाधर्मैर्विचिं २ गुरोस्तावीपदेष्टातस्य साधर्मिणः समानधर्मकर्तृषु श्रुश्रुषणासेवा ४ आलोचनागुरोरग्रे पापानां प्रकाशनं ५ निम्ननाआक्रसाच्चिकं
आत्मनोनिन्दा ६ गर्हणा अपरलोकानां गुरतः स्वदीपप्रकाशनं ७ सामायिकं शत्रौमित्रे साभ्यं ८ चतुर्विंशतिस्त्वकीलोगस्सुज्जियगरद्वत्यादि चतुर्विंशति
जिननाम पठनं ९ वन्दनं द्वादशावर्तं वन्दनेन गुरीर्वन्दना १० प्रतिक्रमणं पापाक्विवर्तनं ११ कायोत्सर्गोऽतीचार शुद्धार्थं कायस्य व्युत्सर्जनं काय ममत्व
वर्जनं १२ गत्याख्यानं मूलगुणीत्तरधारणं १३ स्ववसुति मङ्गलं स्ववः शक्रस्ववपाठः सुतिरुद्धीभूयजघन्ये न चतुष्टयसुति कथनं मध्यमेन अष्टसुति कथनं
उत्कष्टेन १०८ कथनस्त्ववसुतयश्च स्ववसुतयः स्ववसुतय एव मङ्गलं स्ववसुति मङ्गलं १४ कालप्रतिलेखना कालस्य व्याघातिकप्रथतिकाल चतुष्टयस्य

धम्मसद्दा ३ गुहसाहक्रिय सुस्सुसणया ४ आलोयणया ५ निंदणया ६ गरहणया ७ सामाद्रए ८ चउवीसत्यए ९
वंदणो १० पडिकमणो ११ काउस्सगो १२ पञ्चक्खाणो १३ थययुईमंगले १४ कालपडिलेहणया १५ पायच्छिन्न

समान धर्मपाले नेह भणी भक्ति ४ आलोचना आपणपे आलोचे पापनुं आलोइवुं ५ निंदाना ६ आत्मा साखिनिंद्याकरे ६ गर्हा ७ गुरसाखिं गर्हा
करे ७ साभायिकद वे षड्डी समायक ८ चतुर्विंशति तीर्थं कर स्वव ९ लीगस्स ९ वंदनकं द्वादशावर्तं वंदना १० प्रतिक्रमण ११ पडिकमण ११
कायोत्सर्गः १२ काउस्सगकरे १२ गत्याख्यान पञ्चक्खाण प्रत्याख्यान करीने १३ स्वव सुति मंगलं सुतिस्त्ववन मंगलरूप भणनुं १४ काल प्रतिलेखना

प्रतिलेखना प्रकण्णकालप्रदृष्यरूपाकारप्रतिलेखना १५ प्रायश्चित्तकरण सानस्य पापस्य निहह्यर्थं तपस करण १६ स्वभाषना अपराध क्षामण १७
 न्यायावयवतुषिर्धोवाचनानादिक १८ धावनानुसमोपि सूनाचरार्थी ब्रह्मण १८ प्रतिपुच्छनागुरी गुरत सन्देहस्य प्रच्छन २० परिवर्तना सूत्र पाठस्य
 मुद्रसंशुषन २१ अगुमेघासूत्रस्य चिन्तन २२ धर्मकथाधम्म सम्यकवाया चार्त्तिया कथन २३ श्रुताराधनासिद्धान्तस्याराधना २४ एकाग्रमन
 सच्चिदेयनाधिपस्य एककिन् प्रधानेभ्येयवस्तुनिस्त्रिकरण २५ समयम आश्रयाहिरति रप २६ तपोहादशविध २७ व्ययदान विधेपिण अवदान कश्च
 शुद्धि व्यदान कश्चणा निर्तरा २८ सुखयात सुखस्य विषयसुखस्य यात यातन स्मृजानियारण २८ अप्रतिबद्धतानीरागत्व ३० विधिक्रमयनतासनविधना
 स्त्रोपसुपण्डकादिरेहितप्रयनतासनाना आसेवना ३१ विनिवर्त्तनापद्धेन्द्रियाणां विषयेभ्योवि विषेण निवर्त्तन ३२ सम्भोग प्रत्याख्यान सम्भोग एकमण्डली

करणे १६ खभावगाया १७ सन्नगाए १८ वायणया १९ पडिपुच्छणया २० परियदृणया २१ अणुपेहा २२ धम्मा
 कहा २३ सुयस्स आराहणया २४ ॥ एगवगमणस निनेत एया २५ सजने २६ तवे २७ विदाणे २८ सुहसाए २९ अप

कालनेसाद पढोनेद्वणकर १५ प्रायश्चित्त करण पायच्छिन्ननेद्व आलीयण करे १६ स्वभावचन १७ जीवने खमावे १७ स्वाध्याय १८ सज्जायकरे १८
 वाचना १९ यायणा दिदे सोद १९ परायत्तना सूत्रे गण् अर्थ पूछे २० प्रतिपुच्छना सूत्र अर्थभूत्तो पूछे २१ आनुमेखा अर्थ सभार २२ धम्मकथा
 धम्मकथा कर २३ श्रुतस्य आराधना २४ सिद्धांतो आराधना करे २४ एकाग्रमन सन्निवेशना एकाग्रमन ठामिराखि २५ सजम सजमपात्ति २६
 तप तपस्याकरे २७ व्ययदान दानवोसनराखे २८ सुराग्रया सुखयाता कपजावे २९ अप्रतिबधता प्रतिबध रहितहीद्व ३० विविधप्रयनतासन विधना

भ्योक्त्व तस्य प्रत्याख्यानं गीतार्थावस्थायां जिनकलाचारग्रहणेन परिहारः सभोगप्रत्याख्यानं ३३ उपधिप्रत्याख्यान रजोहरणमुखवस्त्रिकां विहायअन्वो
पधि परिहारः ३४ आहारप्रत्याख्यानं स दीषाहारपरिहारः ३५ कषायप्रत्याख्यानं ३६ योगप्रत्याख्यानं मनीषाकायानां व्यापारयोगस्तस्य प्रत्याख्यानं
परिहार ३७ शरीरप्रत्याख्यानं प्रस्ताविसमागति शरीरस्थापि व्युत्सर्जनं ३८ साहाय्य प्रत्याख्यानं साहाय्यकारिणां परिहारः ३९ भक्तपानप्रत्याख्यानं
सङ्गादेन परमार्थद्वैत्याप्रत्याख्यानं सङ्गावप्रत्याख्यानं ४१ प्रतिरूपताप्रतिः स्थविरकल्पिसुनि सदृशी रूपं विशेषस्य स प्रतिरूपः प्रतिरूपस्य भावः प्रति
रूपतास्थविरकल्पिसाधयोग्य षधारित्वं ४२ वैयाहल्य साधूनां आहाराद्यानयनसाहाय्यं ४३ सर्वगुणसम्पन्नताज्ञानादि गुणसहितत्वं ४४ वीतरागता

द्विवहया ३० विविनसयणासासेवणया ३१ विधिग्रहणया ३२ संभोगपञ्चकलाणो ३३ उवह्विपञ्चकलाणो ३४ आहार
पञ्चकलाणो ३५ कासाय पञ्चकलाणो ३६ जोगपञ्चकलाणो ३७ सरीर पञ्चकलाणो ३८ सहाय पञ्चकलाणो ३९ भक्तपञ्च
कलाणो ४० सन्धावपञ्चकलाणो ४१ पडिरूवणया ४२ वैयावर्त्सो ४३ सव्यगुणसंपन्नया ४४ वीयरानया ४५ खंती ४६

स्त्रीपसुपंडक रहित उपान्यय सेवे ३१ विनिवर्त्तना पापथी निवर्त्तो ३२ सभोग प्रत्याख्यान सभोगनुं पञ्चकलाण करि ३३ उपधि प्रत्याख्यानं जापधिनुं
पञ्चकलाणकरि ३४ आहार प्रत्याख्यान आहारनुं पञ्चकलाणकरि ३५ कषाय प्रत्याख्यानं कपायनुं पञ्चकलाणकरि ३६ योग प्रत्याख्यानं योगनुं पञ्चकलाण
करि ३७ शरीर प्रत्याख्यान शरीरनुं पञ्चकलाणकरि ३८ सहाय प्रत्याख्यानं साधीनो पञ्चकलाणकरि ३९ भक्तप्रत्याख्यानं भातनु पञ्चकलाणकरि ४० सङ्गाव
प्रत्याख्यानं सर्वसंवररूप पञ्चकलाणकरि ४१ प्रतिरूपना साधुनि रूपे रहवो ४२ वैयाहल्य वैयावर्त्सकरि ४३ सर्वगुण संपूर्णता सधले गुणे करीसहित ४४

रागदिपिनियारण ४५ चास्ति धमा ४६ मुक्तिनिताभता ४७ मर्द्वय मानपरिहार ४८ धार्ज्वसरलत्व ४८ भावसत्य अन्तराकान शुद्धत्व ५० करणसत्य प्रतिनैखनादिक्रियापिपद्ये निरालस्य ५१ योगसत्य मनीषाक्राय योगिषु सत्य योगसय ५२ मनीशुति त्व मनसोऽशुभपदाथात् गोपन ५३ यथागुणित्व यथसोऽशुभपदाथात् गोपन ५४ कायगुणित्व कायस्य अशुभव्यापारोपन ५५ मन समाधारणामनस शुभस्थानेस्त्रिरत्विनस्थापन ५६ यथ समाधारणायचनस्य शुभकार्येस्थापन ५७ कायसमाधारणा कायस्य शुभकार्येस्थापन ५८ ज्ञानसम्पन्नताश्रुत ज्ञानसहितत्व ५९ दर्शनसम्पन्नत्व सत्पन्न सहितत्व ६० चारित्र्यसम्पन्नत्व यथास्थानाचारित्य शुक्लत्व ६१ श्रौतेन्द्रियनिग्रह ६२ चक्षुरिन्द्रियनिग्रह, ६३ धार्ज्विन्द्रियनिग्रह ६४

सुती ४७ मर्द्वे ४८ अक्ज्वे ४९ भावसत्त्वे ५० करणसत्त्वे ५१ जोगसत्त्वे ५२ मणशुतया ५३ वदशुतया ५४ काय

शुतया ५५ मणसमाहारणया ५६ वदसमाहारणया ५७ कायसमाहारणया ५८ नाणसपन्नया ५९ दसणसपन्नया ६०

पोतरागता ४५ योत रागभाय ४५ ज्वाति ४६ धमाकरे ४६ मुक्ति निर्लोभपणु कर ४७ धार्ज्व ४८ सरलपणु करे ४८ मर्द्वय ४९ सु द्वालापणु ४९ भावसत्य भावसाधो ५० करणसत्य पहिनेहणादिक्रिया सत्य ५१ योगसत्य मनप्रमुखयोग विच्छे सत्य ५२ मनीशुति अशुभयो मननु गोपयवु ५३ यचनशुति अशुभयो यचननु गोपयवु ५४ कायगुति अशुभयो कायानु गोपयवु ५५ मन समाधारणा मनने शुभधानकर्ने विच्छे धापि ५६ वाक समाधाराणायचनने शुभधान कर्ने विच्छे धापि ५७ काय समाधारणा काया शुभधानकर्ने विच्छे धापि ५८ ज्ञानसमापन्नता शुतज्ञान सहितपणु ५९ सम्पन्नसयुक्तता समकित सहितपणु ६० चारित्र्य सपन्नता यथास्थान चारित्र्यसहित पणु ६१ श्रौतेन्द्रिय निग्रह कानना विषयनोजीपयो ६२ चक्षुरिन्द्रिय

जि तेन्द्रियनिग्रहः ६५ स्वर्गेन्द्रियनिग्रहः ६६ क्रोधविजयः ६७ मानविजयः ६८ मायाविजयः ६९ लोभविजयः ७० प्रेमद्वेषमिथ्यादर्शनविजयः ७१ सेतोश्रोचतुर्दशगुणस्थानस्थायित्वं ७२ अकर्मताकर्मतां अभावः ७३ इत्येषां त्रिसप्ततिवचनानां अर्थयुक्ता अर्थै तेषां एव प्रत्येकं फलमाह सूत्रं [संवेगेषु भन्ते जीवे किं जगद्यद् सवेगेषु] अणुत्तरं धम्मासद्व जगद्यद् अणुत्तराए धम्मासद्वाए संवेगं हव्वमागच्छद् अणुत्तराणु क्त्विक्कोहमाणमायालोभेष्ववेहन वञ्च कस्यं नवन्मद् तप्यच्च इयं चण भिच्छत्तविसीहि काजणदंसणाराहए भवद् दंसणविसीहीएणं विसुद्धाए अत्ये गरए तेषुव भवनाहणेषुं सिक्कद्दसीहिणुं विसु द्धाए तच्चं पुणभवणहणं नाइक्कमद् १] व्या० मिथ्यः पुच्छति हेभदन्तहि पूज्यसंवेगिनभीचाभिलाषेण क्त्वाजाजीवः किं जनयति किमुत्पादयति तदा

चरितसंपन्नया ६१ सोद्दंश्रियनिग्राहि ६२ चक्खिंद्रियनिग्राहि ६३ चाण्णिंद्रियनिग्राहि ६४ जिभिंद्रियनिग्राहि ६५ फासिं
दियनिग्राहि ६६ कोहविजए ६७ मायाविजए ६८ लोभविजए ७० पिज्जदोसमिक्खा दंसणविजए ७१
सिलसी ७२ अकंमया ७३ संवेगेषुं भंते जीवे किं जगद्यद् । संवेगेण अणुत्तरं धम्मा सद्दं जगद्यद् । अणुत्तराए धम्मा

निग्रहः तेजना विषयनुं जीपवुं ६३ धारणेन्द्रिय निग्रहः नाशिकाना विषयनुं जीपवुं ६४ जिह्वेन्द्रिय निग्रहः जीभना विषयनुं जीपवुं ६५ स्वर्गेन्द्रिय
निग्रहः परीरफरसनु जीपवुं ६६ क्रोधविजय क्रोधनुं जीपवुं ६७ मानविजयः माननुं जीपवुं ६८ मायाविजयः मायानुं जीपवुं ६९ लोभविजयः
लोभनुं जीपवुं ७० प्रेमद्वेष मिथ्यादर्शनविजयः प्रीत अनिद्वेष अने मिथ्यालनी जीपवुं ७१ शैलैसीभावः चउदसे गुणठाणे रहिक्को ७२ अकर्मता कर्म
रहितपणे ७३ वैराग्येन हे भदंत हे भगवान् जीव किं जनयति हे पूज्य वैराग्ये करीने जीवसुं उपाजै संवेगेन अनुत्तरा प्रकृष्टां धर्मवृष्टां जनयति

गुरुराह हि प्राथ स वेगेन कला जीवोऽनुत्तरा प्रधानधम्म यदा धर्मग्रहा धर्मवृत्तिजनयति तथा प्रधानयाधम्मस्य ग्रहया स वेगमीघाभिलाषहृष्यदति शोभमागच्छति प्राप्नोति ततोऽनरकानुबन्धिनीऽनक्कानुबन्धिः क्रोधमानमायालोभान् धरुरीपि कपायान् धापयति नवस कर्मनवधाति तत् प्रत्ययाऽनन्तानुबन्धिकपायद्यदादुत्पन्ना मिथ्यात्वविशुद्धि सर्वथाभिध्यात्वद्यति कला दर्शनाराधकीभवति ख्यायकशुद्धसम्पत्तस्य आराधकीनिरस्ति धारपालकाभवति तत सम्पत्कविशुद्धया श्रुतिनिर्मलया अस्त्ये क कथित् अर्ज्येय स ते नैष भवग्रहणेन ते नैष जन्मीपादानेन सिद्धयति सिद्धि प्राप्नोति एक पुन सम्पत्तस्य निर्मलयाविशुद्धादतोय पनर्भवग्रहण नाति कामति इत्यनेन शुद्ध्यायकसम्पत्तयान् भवन्नयस्ये मोक्ष प्रजल्येव १ [निर्व्वेएण भर्त्से जीवे कि जणइ निर्व्वेएव दिव्वमाणु सत्तेरिच्छिएस कामभोगेसु निर्व्वेय इव्वमाणुच्छइ सव्वविसएसुविरज्जभाणे आरम्भपरिमाहपरिस्वारयं करेइ

सहाए । सवेग इव्व मागच्छइ । अणताणु वधि कीइमाण मायालोभं खवेइ नवच कम्मा न वधइ । तण्णञ्चइय चण मिच्छर विसोहि काज्जण । दसणाराहए भवइ । दसण विसोहीएयण विसुद्धाए । अत्येगइए तेणेव भयवगहणेण

वैराग्यकरोने धम्मनोग्रहा उपाज अनुत्तरया धम्मग्रहया अणुत्तर प्रधान धम्मानी श्रद्धा करीने विप्रिष्ट वैराग्य शीघ्र आगच्छति उत्तम स वेग वैराग्य शोभ पणे भावे तत आताणु वधी पळे अनु ताणु वधीओ रोधमान माया लोभधपति क्रोधमान माया लोभ खपावे नवीन अशुभ कर्मन वधाति ननु कम्ममाधे नही तत्तय निमित्त च मिप्यात्व विशुद्धि कला अतीते कम्मते क्रोधमागमाया लोभखपावोने पळे मिप्यात्वनी सुहता करे करीनेषायिक सव्वज्ज साधका भवतिषायिक सव्वज्ज उपाजं दर्शनविशुद्ध करे आक्कासुव करे एकस्म कथित् भरदेयो यद्भव तेनैव भवग्रहणेन सिद्धयति केतसा एक

शारथपरिग्रहपूरिच्चायं करेमाणे स सारमगवोच्छिन्दस्मिदिसमगपडिचनेय भवइ [] हे भगवन् पूज्यनिर्वेदेन सामान्येन संसारात् विरगभावेनजीव-
 वि जनयति गुरुराहनिर्वेदेनदेवमनुष्यतिर्यक् समन्धिपु कामयोगेप निर्वेद विरग एतेकामभोगा विरसा एतेपुकोनुरागः इति वृत्तिः शीघ्रमायाति
 तदा सर्वविषयेषु सर्वविषयेभ्योविरक्तः स्यात् सर्वविषयेभ्योविरक्तमानः पुमान् आरभः कर्षणादिः परिरथरोधनधान्यादिषु मूर्खारपः तयोः परित्याग
 करोति आरथपरिग्रहपरित्यागं कुर्वीणः संसारमार्गं मियात्ताविरत्यादि क व्युच्छिन्नसि सिदिमार्गं प्रतिपन्नोभवति शुद्धचायकसम्यक् रूप मुक्ति
 सिञ्जद् । साहीण्यं विसुहाए । तच्चं पुण भगवत्तं नाइकसद् १। निञ्चिएणं भंते जीवे किं जणयद् । निञ्चिएणं
 दिव्व माणुस तेरिच्छिएसु कामभोगेसु । निव्वेय इव्वमाणच्छद् । सव्व विसएसु विरज्जद् । सव्वविसएसु विरज्जमाणे ।
 आरभ परिग्रह परिच्चाय करेइ । आरंभपरिग्रहपरिच्चायंकरेमाणे । संसारमगं वोच्छिइद् । सिदिमगं पडिचनेय

जोव शरदेवीनी परितेज्ज भवसोभ्ने सट्थेनं चिसदा आत्तापिमदहोइ ततोयं भवत्तणं दीजा भवत्तं नरी मुल्लिज्जार लांघे नरी दीजा भव १
 संवेगात् निर्वेदः स्यात् निर्वेदेन शयनात् जीव कि जनयति स वेग इ तो निर्वेद इये हे भगवन् निर्वेद दुंती जीवसुं उपाजे निर्वेदेन देव
 मनुष्य तिर्यं चक्षु कामभोगेषु निर्वेदं कामत्याग इति शीघ्र ध्यानात् ति देवता स धियया मनुष्य स नधिया तिर्यं संधियया कामभोगाने द्विखे त्यागनी
 वृत्ति जपजे एभूंडा कामभोग सर्वविषयेषु विरक्तो भवति सर्वविषय दुंती विरक्तोऽतः सर्वविषयेषु विरक्तवसानेषु सर्वविषयने विरक्ते विरक्तेने यको
 आरभ परिग्रहत्यागं करोति आरभ श्राने परिग्रहना त्याग करे आरभ परिग्रहत्याग इत्येन आरभ परित्यार त्यागकर्तुं जीव संसारमार्गं मिया

भाग प्रतिव्यस्योभवति २ [धम्मसङ्घाएण भत्ते जीवे किं जणयद् धम्मसङ्घाएण सायासांकेसुरज्जमाणे विरज्जद् आगारधम्म चण चयद् अणगारेण जीविसारोत्तमाएण दुक्खेण केयणभेयणसङ्कोगादीण वोच्छेय करद् अव्यावाहचण सुह निव्वत्ते इ ३] हेस्वामिन् हे पूज्य धर्मश्रद्धयाधम्म विषयेस्वया जीव किं जनयति गुरुराह हे गिय्य धर्मं श्रद्धयासातासुखेप सातावेदनोयकर्मजनितसुखेषु विषयसुखेषु रज्यमान पूर्व राग कुर्व्वाणोविरज्यते विरक्तो भवति तदा आगारधर्मं गृह्य य धर्मं त्यजति ततश्च अनगार साधु सन् जीव आरोग्यमानसाना दु खानां व्याधोना च्छेदनभेदनस योग वियोगादीना कटानां व्युच्छेद करोतितस्मिन्ननकमाच्छेदकरोति ततथाऽव्याबाधसुखमोचसुख निर्वर्त्तयति मोक्षसुख निष्पादयतीत्यर्थ ३ धम्मश्रद्धानन्तरं गुर्वादीनां श्रुत्यकोभवति अतस्तत्फलं प्रष्टुं काम गिय्य आह गुरुराहस्मिन्सुखसुखायाएण भत्ते जीवे किं जणयद् गुरुराहस्मिन्सुखायाएण विषयपट्टिबन्धि

भवद् ॥ २ ॥ धम्मा सङ्घाएण भत्ते जीवे किं जणयद् । धम्म सङ्घाएण साया सांकेसुरज्जमाणे विरज्जद् । आगारधम्म

चण चयद् । अणगारेण जीवे सारोत्तमाएण दुक्खेण भेयण सजोगादण वोच्छेय करेद् । अव्यावाहच सुह

त्वादिकं व्यच्छिन्नसि स सारतो भाग किंवात्वादिकं तं हने छेदे सम्पक दर्शनरूप सिद्धिं मार्गं प्रपद्यो भवति समकितरूप मोक्षमार्गं नो पट्टिवजणहार इ २ धम्मश्रद्धया हे भदतजीव किं जनयति धम्मानी सहृदयान् करी हे पुज्यजीवसु उपाज्जे धम्मश्रद्धया सातासुखेषु पूर्वराग कुवन् विरज्जतायाति जीव महत्ता सुख कपरि रागकर तुहत्तु जिवारे धम्मनोरागश्चावे तिवारे विरक्तहोद् गृह्यस्य धम्ममाग त्यजति तिवारे गृह्यस्य मार्गं नो धम्मच्छादि ततो नगार सन् जीव शरोत्तमानसकाना अनगारपणो अणोकार करे जीव सरोत्तना मननां दुक्खना छेदन छेदनारा भेदन भेदनारा सयोगादीना व्युच्छेद

जणयद् विणयपड्वित्तएणं जीवे अणञ्जासायणसीले नेरइयतिरिक्खजोणिय मणुस्सदेवकुगद् जनिरुग्गद् वन्नसञ्जलणभत्ति बहुमाणयाए मणुस्सदेवसुग्ग
इथी निन्नयद् सिद्धिसुग्गद् च विसीहेद् पसत्याइच्चविणयभूलाद् सब्बकज्जाद् सोहेद् अन्नेयवह्वे जीवे विणयत्ताभवद् ४] हे भगवन् गुरुणां आचा
र्याणां साधर्मिकाणां एकधर्मावतां शुश्रूषयासेवनयाजीवः किजनयति तदागुरुराह गुरुसाधर्मिकशुश्रूषयाविनयप्रतिपत्तिं विनय धर्मास्याराधनां विनयाद्गी
कारत्वं जनयति विनयं प्रतिपन्नः प्रतिपन्नविनयोद्गीकृतविनयोजीव अनत्याशातनशील सन् आचार्यादीना अभक्तिं निन्दाहीलाज्वर्णवादायाशात
नानिवारक सन् नरकतिर्यक् योनिं तथा मनुष्यदेवयोः कुगतिं चरुणद्धिनिषेधयति आचार्याणा अत्याशातनानिवारकीनरीनरकयोनी नीत्ययते
तिर्यकयोनी च नीत्ययते मनुष्येषु कुयोनीर्होच्छादीदिवेषु कुयोनीकिल्बिपादौ नीत्ययते तथा पुनर्वर्ण्यं संज्वलनभक्तिं बहुमानतयामानवेषु उच्चैः

सत्र
भाषा

निवत्तेद् ॥ ३ ॥ गुरु साहभिम्य सुसूसयायाएणं भंते जीवे किंजणयद् । गुरु साहभिम्य सुसूसयायाएणं विणय पड्वि
वत्तिं जणयद् । विणय पड्वित्तएणं जीवे अणञ्जासायणसीले नेरइय तिरिक्खजोणिय मणुस्सदेव कुगगद्दथो निरुं भद् ।

करोति संयोग वियोगना दृक्वर्णो व्यवच्छेद् वारि अथवा बाधच मोक्षसुखं उत्यादयति प्रवाधारहित मोक्षनां सुखउपजावे ३ गुरु साधर्मिक शुश्रूषया
गुरुनी साधर्मीनी सुश्रूषाकारि हे भगवन् जीव. किंजनयति हे भगवन् जीवस्यं उपार्जो गुरु साधर्मिक शुश्रूषया गुरुनी साहमीनी सेवाथकी विनय प्रति
पत्तिं उचित प्रतिपत्तिं जनयति विनय प्रतिपत्ति उपार्जो विनय प्रतिपन्नो जीवः चिनय अंगीकार कीयाथका जीव अनाशातनाशील आशातना रहित
हुवे देवगुरुनी आशातना न वारि नेरयिक स्तीर्यक् योनि मनुष्यदुर्गती चंडालादि दिरदुर्गती किल्बिपादि निरुणद्धि नरक तिर्यं च नीयोनिने रुंधि मनुष्य

मगविभवाणं अथान्तं ससारं वदन्नाणं उद्धरणं करेइ उज्जुभावं च जणयइ उज्जुभाव पडिवन्नेयणं जीवे अमाई इत्थिवियं नपुंसगं वेयं च नबन्धइ पुब्बवधं च निजरेइध) हे भगवन् हे भदन्त पूज्य आलोचनयाशुर्वाथे आत्मनीदीष प्रकाशनेन जीवः किं जनयति तदा गुरुराह आलोचनया क्त्वा जीवीमायानि दानमिथादर्शनशल्यानां उद्धरणं करोति तत्र मायाकापव्यं निदानं तपसीविक्रयः भ्रमास्य तपसः फलं स्यात्तर्हि राज्ञेन्द्रादिपदभाक् अहं स्यां इति रूपं निदानं मिथादर्शनं सांशयिकादिविपरीतिसतिरूपं आया च निदानं च मिथादर्शनं च मायानिदानं मिथादर्शनानि तान्येवशल्यानि मायानिदानं मिथादर्शनं शल्यानि तेषां उद्धरणं दूरीकरणं करोति इत्यर्थः कीदृशानां मायानिदानमिथादर्शनशल्यानां भोक्षमार्गविज्ञानां विभ्रकारकाणां पुनः कीदृशानां अनन्तससारवर्द्धनानां पुनः ऋजुभावं सरलत्वं जनयति ऋजुभावं प्रतिपन्नोपि निश्चयेण वाक्यालङ्कारजीवः अमायीमायारहितं सन्

आलोचयथाएणं माया नियाणं सिक्खा दरिसणं सत्ताणं भोक्खराणं विषयाणं । अणंत संसारं वड्ढाणाणं । उद्धरणं करेइ उज्जुभावं च जणयइ । उज्जुभाव पडिवन्नेयणं जीवे अमाई इत्थीवियं नपुंसगं वेयं च नवंधइ पुब्बवधंचणं

जीवः किं जनयति हे भगवन् स्युं उपाज्जे आलोचनायाः पापनीं आलोचयणं करतुं धकीं गुरोः पुरोदीष प्रकाशनं रूपया गुरुने आगे आपणुं पाप प्रकासे मिथादर्शनशल्यानां भायानियाणं भोष्यात्वसालके जीवने भोक्षमार्गं विज्ञानां बलीं मुक्तिमार्गं विज्ञानं करणहारके अनंतं शंशारं वर्द्धनानां एअनंतं शंशारं वधारके उद्धरणं करोति तेहने उद्धरे दूरकरे ऋजुभाव जनयति सरलपणुं उपाज्जे ऋजुभावं प्रतिपन्नो जीवः सरलपणुं अंगीकारं कीयाधका जीव जीव आमायी सन् स्त्रीवेदं नपुंसकवेदं च नवधाति मायारहितधकी जीव स्त्रीवेदं नपुंसकवेदनं वाधि पूर्ववधं च निज्जं रति पूर्ववधं च ते

स्त्रोवेद ननु सकवेद न वधाति स्त्रोवेद ननु सक वेद चेत् पूर्वं बहू स्यात्तर्हि निर्जरयति ५ आर्त्तोचनादि दुष्कृत निन्द्याकारकस्यैव स फलास्वात् अत
स्वर्गफल प्रश्न पूर्वमाह (निन्द्यायाएणमते जीवे किं जणयद निन्द्यायाएण पच्छाण ताव जणयद पच्छाणतावेण विरज्जमाणे करणगुण सेट्ठी पडि
वज्जर करणगुण सेट्ठी पडिववेय अणगारे मोहणिज्ज कम्म उवापाएद ६) हे भदन्त निन्द्याया जीव किं जनयति गुरराह हे शिष्य आत्मन
पापस्य निन्द्यायेन पयात्ताप जनयति हा मया दुष्कृतकृत मिथ्यादि बुद्धि उत्पादयति पयात्तायेन विरज्ज्यमानो वैराग्य प्राप्तुवन् सन् करण गुण
श्रेणि अपूर्व करणेन पूर्वं कदापि अप्रप्तयेन विग्रहमन परिणाम विग्रहोप गुणश्रेणि सपक श्रेणि प्रतिपद्यते अङ्गीकुरते करण गुणश्रेणि प्रति
पद्य अपूर्व गुणश्रेणि सन् अनगार साधुर्मोहनीय कर्म दयान मोहनीयादिक कर्म उवातयते अतिशयेन सपयति ६ कश्चित् स्वदीपान्

निज्जरद ५ ॥ निन्द्यायाएण भते जीवे किंजणद । निन्द्यायाएण पच्छाण ताव जणयद । पच्छाण तावेण विरज्ज
माणे करणगुण सेट्ठी पडिवज्जद । करणगुणसेट्ठी पडिवनेयण अणगारे मोहणिज्ज कम्म उवापाएद ६ ॥ गारराण

दूरिकरे ५ निन्द्यायया आत्मनादोष परित्याग हे भगवन् जीव किं जनयति आपणा क्रीडा पापनिदतोषको जीव हे भगवन् किस्य उपाजं निन्द्याया
पयातुताप जनयति पापनिदतु पयात्तापकर पयादनुतापेन पयातापयो वैराग्य गच्छन् वैराग्यपामतो अपूर्वकरणेन गुण श्रेणि हेतुकरूपा प्रतिपद्यते
अपूर्वकरण गुणश्रेणिने अगोकारकरे करण गुणश्रेणि प्रतिपद्या अनगार करण गुणश्रेणिने विरु प्राप्तुवन् साधु मोहनीय कर्म उवातयति सपयति तत्
पयेन मुलि माहनो कश्चने खपावे माहखपाव्या मुलिहवे ६ गहणेनपरसमसमात्मनो दीपोद्भावनेन हे भगवन् जीव किं जनयति आपणादोष

निन्दन्वपि पापभीरु तथा गर्ही अपि कुर्यात् अत स्तत्फल प्रश्न पूर्वमाह [गरहणयाएणं भन्ते जीवे किं जणयद् गरहणयाएणं अपुरकारं जणयद् अपुरस्कारगएणं जीवेण्यसत्ये हिंती जीगेहिती नियत्तेद् पसत्येय पवत्तेद् पसत्य जीगपडिवन्नेयणं अणगारे अणन्तघाद् पज्जवेखवेद् ७] शिष्यः पृच्छति हे स्वाजित् गर्हणेनपरसमच्चं आत्मनो दीपोद्भावनेन जीवः किं जनयति तदा गुरुराह हे शिष्यजीवो गर्हणेन अपुरस्कारं जनयति आत्मनिगुरुत्वारोपणं पुरस्कार अपुरस्कारस्तं अपुरस्कारं आत्मनोऽवहीला जनयति यदाहि स्वस्य गर्हणाकारोत्तिस्वस्यधिद्रुयां करोति तदा अवहीला वान् भवति अपुरस्कारगतीजीवीऽप्रशस्तेभ्य कर्मबन्ध हेतुभ्यो योग्योनिवर्त्तते अप्रशस्तकर्म बन्ध हेतुयोगान् न अद्भिकुर्वते प्रशस्तयोग प्रतिपन्नय प्राकृतत्वात् प्रतिपन्न प्रशस्तयोगोद्गीकृत सभ्यग्योगोऽनगारोऽनन्तघातिनः पर्यायान् क्षपयति अनन्तविषयतया अनन्तेजानदर्शनह तं विनाशयि तं

याएणं भंते जीवे किंजणयद् । गरहणयाएणं अपुरकारं जणयद् । अपुरकार गएणं जीवे अपसत्येहिंती जीगे हिंती नियत्तेद् पसत्ये हिद्य पवत्तेद् पसत्य जीग पडिवन्नेयणं अणगारे अणं तघार्द् पज्जवेखवेद् ७ ॥ सामाद्गएणं

लोक प्रागे प्रकासतोषको जीवे हे पूज्यस्यं उपाजं अपुरस्कारो गौरवाध्यारोपीनतथा भगुस्कारो अवज्ञास्यदत्तं जनयति अपुरस्कार काहतां अवज्ञा पसे हलू आपणं पसे स पुरस्कारगती जीवे आपणो गरहाकारतु जीवे अप्रशस्तेभ्यो कर्मबन्ध हेतुभ्यो योग्यो निवर्त्तते जिके ऋण्यस्त भुंदा कर्मबन्धना हेतु इत्या जे योग तेहयोगिनवर्त्ते प्रशस्त योगास्तु प्रतिपद्यंते भलायोगने अगोकारकरं पसस्तयोग प्रतिपन्नो अनगारो प्रशस्त भला योगप्राप्त हर्षो अणगारयती ज्ञानावरणादि परिणामान् क्षपयति ज्ञानावरणोना परिणामस्वपावे ७ सायाधिकेन हे भगवन् जीवः किं जनयति हे पूज्यसामायक करतु

हे शिष्य श्रीगुरुणां वन्दनकेन नीचैर्गोत्रं कर्मक्षपयति गुरुणा वन्दनकारी नीचैर्गोत्रेन श्रवतरतीत्यर्थं पूर्वबंधं च क्षपयति उच्चैर्गोत्रं कर्मवधाति उच्चैर्गोत्रं श्रवतरतीत्यर्थः पुनरुच्चैर्गोत्रे ऽवतीर्णं सन् सीमाभ्यं सर्वलोकेशु वल्लभत्वं पुनरप्रतिहतं किनापि निवारयितुं अशक्यं आन्नाफल आन्नासारं प्रभुत्वं निर्वर्त्तयति उत्सादयति च पुनर्दाक्षिण्य भावं सर्वलोकानां अनुकूलत्वं जनयति १० एतद्गुणीपयुक्तौ न साधुना आदीक्ष्यते महावीरयोस्तीर्थे प्रवर्त्तमानेन ऽवश्यं प्रतिब्रामणं कार्यं अतस्तत्फलं प्रश्नपूर्वमाह (पण्डिकमण्येण भते जीवे किं जग्यद्द पण्डिकमण्येणं वयच्छिद्दाद्रपिहेद्द पिहियवयच्छिद्दे पुणजीविनश्चासर्वे अस बलचरिते अद्दसुपवयणमायासु उवडन्ति अपुहते सुपाणि हि एविहरद्द ११) हे भदन्त प्रतिब्रामणेन जीवः किं जनयति गुरुराह हे शिष्य प्रतिब्रामणेन अपराधेभ्य पथान्निवर्त्तनेन व्रतच्छिद्राणि पिदधाति व्रतानां प्राणाति पातविरमणादीनां छिद्राणि अतीचारान् स्वगयतिरुणद्धिपिहित व्रतच्छिद्रः सन् पुनर्जीविनश्चाभ्यवी भवति निरुद्धा श्रव्य पुनरशबलचारितोष्टसु प्रचनसात्पु उपयुक्तः सन् स मिति गुप्तिषु सावधानः सन् अष्टयक्त्वः सयमयोगेभ्यो

गोयंगिवंधद्द सीहण्यंचणं अपण्डिहयं आणाफलं निव्वत्तेद्द दाहिणभावंचणं जग्यद्द १० ॥ पण्डिकमण्येणं भंते जीवे
किंजग्यद्द पण्डिकमण्येणं वयच्छिद्दाद्द पिहेद्द पिहिय वय छिद्दे पुण जीवे निमद्दासवे असवल चरिते अद्दसु पव

गोत्र खपावे उच्चैर्गोत्रं कर्मवधाति सीमाभ्यं सीमागीपण्यं अपर अप्रतिहतं ह्याद्द नही आन्नाफलं निवर्त्तयति एहवी आन्नानुफल उपर्जो लोकर दाक्षिणं अनुकूलं जनयति लोफने अनुकूलभाव दाक्षिण्यपण्यं उपर्जो १० प्रतिब्रामणेन हे भगवन् जीवः किं जनयति पण्डिकमण्यं करतु जीव हे भगवन् स्युं उपर्जो प्रतिब्रामणेन व्रतानां अतीचारान् आच्छादयति पण्डिकमण्यं करतुथकी व्रतना अतीचारने आच्छादिपिहित व्रत छिद्र पुन वली व्रतना छिद्द

नया उपगतः सुखं सुखेन विहरति सुखानां परं परशान्तिचरति करम अपहृत भारीभारवाह इव यथा उत्तरारितभारभरीभारवाहकः सुखं सुखेन विहरति तथा कायोत्सर्गेषु प्राशयित्त विमुक्ति विधाय स्वसोक्तत हृदयो जीवः सुखेन चिचरतीति भावः १२ एव सपि शुद्धमानेन प्रत्याख्यानं कार्यं अतस्त्वत्फलं प्रथ पूर्वकमाह [पञ्चकलाण्येण भर्ते जीवे किं जणयद् पञ्चकलाण्येणं आसवदारारान्तिरुभद्र पञ्चकलाण्येणं दृच्छानिरोहं जणयद् दृच्छानिरोहण्येणं जीवे सवद्व्येसु विणोयतन्ते सोयलभूपे विहरद् १२) हे भद्रन्त प्रत्याख्यानेन भूत्तशुशीत्तर प्रत्याख्याने रूपेण जीवः किं जनयति गुरुराह हे शिष्य प्रत्याख्यानेन प्राश्वद्वाराणि निरुणहि अतिशयेन आह्वयति अत्र प्रत्यन्तरे शुक्लचित् श्रय प्रयोस्ति हे स्वाभिन् प्रत्याख्यानेन जीवः किं जनयति अतोत्तर हे शिष्य प्रत्याख्यानेन दृच्छानिरोधं आह्वारादिवाक्यायानिरोधं जनयति दृच्छानिरोधं प्राप्नो जीवः सर्वद्रव्येषु सुविनीतं त्यजोभवति सुतरा

वगाए सुहं सुहेणं विहरद् १२ ॥ पञ्चकलाण्येणं भर्ते जीवे किं जणयद् । पञ्चकलाण्येणं आसवदारारान्तिरुभद्रं निरुं भद्रं पञ्चकलाण्येणं दृच्छानिरोहं जणयद् दृच्छानिरोहण्येणं जीवे सवद्व्येसु सुविणीयतगहि सीलभूपे विहरद् १३ । यय

सन् भलेष्वानरे विखे प्राप्तश्चोपको सुखं यथा स्यादिवं सुखेन विहरति सुखे समाधे वीचरे १२ प्रत्याख्यानेन हे भगवन् जीवः किं जनयति पञ्चकलाण्येणं करतुं जीव हे भगवन् सुं उपार्जे पञ्चकलाण्येणं प्रत्याख्यानं पञ्चकलाण्येणं करतुं जीव आश्वद्वाराणि निरुणतिः प्राश्वद्वाराण्येणं प्रत्याख्यानेन पञ्चकलाण्येणं दृच्छानिरोधं जनयति दृच्छानिरोधकरे दृच्छानिरोधं गती जीवः जीवारे समाधेन आश्वद्वाराण्येणं सुविगतं यः प्रोतो भूतो विहरति सर्वद्रव्येन विखे दृच्छारादिहेतुः प्रयोषको विषरे १३ देवेन्द्र ज्ञानादिसृति भगवन्तेन हे भगवन् जीवः किं जनयतिः नमुत्येणं सवद्व्येसु सुविनीयतगहि सीलभूपे विहरद् १३ । यय

चरित्तमयेन चिनोतास्किटिता दृष्यायिन स सुचिनोत दृष्य भयन्तदूरीकृत दृष्य सन् सोतलोभूतो विहरति दाद्याभ्यन्तर सन्तापस्वहितोषिरचिन्ति ११
प्रत्याख्यानागन्तर वैचयस्वनाकाया भ्रतस्तत्फल प्रय पूर्वमाह [यद्यद्यद् भङ्गलेपभते जीवे कि क्षण्यन्वयद्यद् भङ्गलेप नाणदसणचरित्तवोहि क्षाभ
कययद् नाणदसय चरित्तवोहि क्षाभ स पथे यजीवे भ्रतकिरिय कण्वविमाणीयवत्तिय आराहण आराहेद् १४] हे भदन्तस्तय दाम्भस्ववरूप सुत्तया
वृत्तिभूय कथन रूपा भयया एकादि समझोकात्ता यापदष्टोत्तरयतझोका वाचा सुत्तियभ्यवय सुत्तित्स्ववो ती एव भङ्गल भावमङ्गल रूप सुत्तिय स्वय
मङ्गलत्तेन सुत्तिय स्वयमङ्गलेन जीव कि जनयति स्वयस्वत्तिय मङ्गलेनेति पाठसु आर्पत्वात् गुरु प्रझोत्तरमाह हे दियस्वस्वसुत्तिय मङ्गलेन जीवोपान
दयान् चारिद बोधिसत्ताभ जनयति तत्र ज्ञान मति युतादि दयान् चारियक सम्भक्त चारिद विरति रूप तद्रूप एव बोधिसत्ताभोभैम धर्म प्राप्ति प्रार्थ
दयान् चारिद बोधिसत्ताभ जनयति ज्ञानदयान् चारिद बोधिसत्ताभ सम्भवय जीव आराधना ज्ञानादीनां आर्षेवना आराधयति साधयति कीदृशी

युद् भगवेषु भ ते जीवे किञ्च णयद् । यद्युद् भगवेषु नाणदसण चरित्त वोहिलाभ जणयद् । नाणदसण चरित्त
वोहिलाभ सपन्नेण जीवे चरित्तिय कण्वविमाणी ववत्तिय आराहण आराहेद् १४ । कालपडित्तिहणयाएण भ ते

हेन ज्ञान दयान् चारिद रूप यथिसत्ताभ जनयति न सुत्तय स्वयनमगलोक करतु ज्ञानदयान् चारियरूपयोधि क्षाभ कण्वकावे प्राप्तदर्या चारिद बोधि
क्षाभ प्राप्ता बोध ज्ञानदयान् चारिद योधि क्षाभ प्राप्त इषा यका जीव चरित्तिया सुल कण्वविमानोपपत्तिका आराधना आराधयति बोध चरित्तिया
करतु सुत्तिय विमान नवपथेयकतो आराधना आराधे हेदे हिहसोवार १४ कास मत्वपेक्षण्या हे भगवन् जीव कि जनयति कास्सने विषे जीव

आराधनां कल्पविमानोत्पत्तिकां कल्पाथ विमानानिचतेषु उत्पत्तिर्यस्याः साकल्पविमानोत्पत्तिकातां गुन कीदृशीं आराधना अन्तक्रियां अन्तस्य संसारस्य कर्मणां वा श्रवसानस्य क्रियाया अन्तक्रियातां एव भूतां ज्ञानाधाराराधनां साधयति कल्पाः सौधर्मादयोदेवलीकाः विमानानि ८ नवमं वैदिक पञ्चानुत्तर विमानानि ज्ञानाधाराराधनया कश्चिन्नतादिवत् दीर्घकालेन मुक्तिं प्राप्नोति काश्चिन्नजस कुमालवत् स्वल्पकालेनैव मुक्तिं प्राप्नोतीति भावः १४ अर्हस्यैव वन्दनानन्तरं स्वाध्यायोविधेयः स च काल दृष्टा एव विधीयते अतस्त्वत्फलं प्रश्नपूर्वमाह (कालपडिलेहणयाएणभन्ते जीवे किं जणयइकालपडिले हणयाएणं णाणावरणिज्जं कम्मं खवेइ १५) हे भदन्तकालप्रतिलेखनयाकालस्य प्रादीपिक प्राभातिकादिकस्य प्रतिलेखना प्रत्युपेक्षणा सिद्धांतोक्तविधनासत्य प्ररूपणाग्रहण प्रतिजानरणासावधानत्वं कालप्रतिलेखनातया जीवः किं जनयति गुरराह हे शिष्यकाल प्रतिलेखनयाजीवी ज्ञानावरणोयं कर्मैवपयति कदाचिदल्पपठे प्रायश्चित्त कर्तव्यं तदा प्रायश्चित्तकरणे यत्फलं तदपि प्रथ पूर्वमाह १५ (प्रायश्चित्तकरणेभंतेजीवे किं जण यइ प्रायश्चित्तकरणेणं पावकम्मविसोहि जणयइ निरइयारेआविभविस्सइ सभं चणं पायच्छित्तं पडिषण्णमाणेमगण्ण मगण्णलव विसोहेइ आयारस आयार फलं च आरहिइ १६) हे भदन्त प्रायश्चित्तकरणेन पापशुद्धि करणेन आलोचनादिकेन जीवः किं जनयति गुरर्वदति हे शिष्य प्रायश्चित्तकरणेन पाप

जीवे किंजणयइ । कालपडिलेहणयाएणं नाणावरणिज्जं कम्मं खवेइ १५ ॥ प्रायश्चित्तकरणेणं भंते जीवे किंजण

पडिलेहण करतुस्यं उपार्जे काल प्रत्युपेक्षयाया कालग्रहणरूपयाः कालवेलाइ पडिलेहण करती ज्ञानावरणोय कर्मैवपयति ज्ञानावरणो कर्म खपावे १५ प्रायश्चित्त करणेन हे भगवन् जीवः किं जनयति शुद्धमनै प्रायश्चित्त करतु जीव हे भगवन्स्युं उपार्जे प्रायश्चित्तकरणेन पापकर्मं विशुद्धिं

सत्र
 भाषा

कमयिमाधि जनयति ततश्चनिरतोच्चारोत्तीच्चाररहितोभवति सम्यक् प्रायश्चित्त प्रतिपद्यमान सन् मार्गं सम्यक् च पुनर्मार्गफल मार्गस्य सम्यक्त्वस्य
फल प्राप्त तत् विमापयति च पुनराचार आराधयति आचार शब्देन चारित्र्य आराधयति पुनराचारस्य फल मोक्ष आराधयति साधयति १६
प्रायश्चित्त यदा करोति तदाद्यामणां अपि करोत्येव अतस्त्वत् फल मय पूर्वमाह (खमावणयाणभन्ते जीवे किं जणयद् खमावणयाण पञ्चायथा
भाष जणयद् पद्यावणभावमुयगए सव्यपाणभूय जोष सत्ते सु मिसीभाष मुयगएयावि जीवे भाष विसोहि काजण निभाए भवद् १७)
हे भद्रस्वामयथा दु क्लानन्तर अतव्यमिद मम अपराध पुनर्कारिष्यामि एतादृश इत्यादि रूपया शीघ्र किं जनयति गुरुराह हे त्रिपञ्चामणया
गुरोरपे चदु क्तनिन्दनया प्रभादनभाष चित्तपसत्ति रूप जनयति प्रभादनभाष उपगतीजीव सर्वपाण भूतजीवसत्तेषु प्राणाय भूताय जीवायसत्ताय

यद् । प्रायश्चित्तकरणेण पावकत्वा विसोहिजणयद् निरर्दयारियावि भवद् । सप्त चण प्रायश्चित्त पडिवज्जमार्गो
सत्ता च सत्ताफलच विसोहिद् आयारच आयारफलच आराहिद् १६ ॥ खमावणयाण भ ते जीवे किंजणयद् खमा

जनयति पाप छिनत्ति प्रायश्चित्तने करये करीने पापछेदे निरतोच्चारयापि अतोच्चार रहितोपि भवति अतोच्चार रहित श्चौर सम्यक् प्रायश्चित्त प्रतिपद्य
मान भन्नेप्रकार प्रायश्चित्त सेतोद्यको ज्ञानार्थहेतु ज्ञानोत्पत्तिरूप विगोषयति मार्गफल मार्गं कइतां ज्ञाननी प्राक्त्ति सम्यक् कइतींतिइनी सोधि
निसानकरेहे आधारायारिष च तत् फलप मुक्त्तिनचण आराधयति आचार चारित्र्य तेइनु फल मुक्त्ति तेइने आराधे १६ चमापनया दु क्लानन्तर
अमित्तव्य गुरुरनें खमावते जोषस्य उपार्जे चमापनया चित्त पसत्तिभाव जनयति गुरुरपरिणानी खमावता यका जीव उक्तासभाष करे उक्तासभाष

प्राणभूतजीवसत्त्वाः सर्वे च ते प्राणभूतजीवसत्त्वाश्च सर्वप्राणभूतजीवसत्त्वास्तेषु भैतीभाव उत्पादयति भैतीभावं गतसु जीवीभावविशीर्षिं कृत्वा रागाद्विष
निवारणं विधाय दृहलोकादि सप्तभयानि निवारयन्निर्भयीभवति १७ चामणाकारिणासाधुनास्वाध्यायः कर्त्तव्यः अतस्तत्फलं प्रश्न पूर्वकमाह
[सञ्ज्ञाएषं भंते जीवे किं जणयद्रसिञ्ज्ञाएषं नाणावरणिञ्जं कश्मं खवेद् १८] हे भद्रस्तस्वाध्यायेन पञ्चप्रकारेण जीवः किं जनयति गुरुराह हे शिष्य
स्वाध्यायेन ज्ञानावरणीयं कर्मक्षपयति १८ तत पञ्चविधस्य स्वाध्यायस्य श्रुत्यक् फलं प्रश्न पूर्वकमाह (वायणयाएणभन्ते जीवे किं जणयद् सुयस्स
अथासायणाए वदद् सुयस्स अथासायणाए वदभाणेतित्य धम्मं अवलम्बदतित्य धम्मं अवलम्बमाणे महानिक्करे महापण्णवसाणेभवद् १९) हे पूज्यवाच

वणयाएषं पलहायणभावं जणयद् । पलहायणभाव सुवगएय सच्चपाण भूय जीवसत्तेसु भित्तीभावं उप्पाएद् भित्ती
भाव सुवगएयावि जीवेभाव विसोहिं काजण निभए भवद् १७ ॥ सञ्ज्ञाएषं भंते जीवे किंजणयद् । सञ्ज्ञाएषं
नाणावरणिञ्जं कश्मं खवेद् १८ ॥ वायणाएण भंते जीवे किंजणयद् । वायणाएषं निक्कर जणयद् । सुयस्सय अणा

उपगतः उक्त्वासभावं पुं हतोयको सर्वप्राणभूत जीव सत्त्वेषु सर्वप्राणभूत जीव सत्त्व भैतीभाव उत्पादयति एतत्ता जीवने भित्तीभाव उपार्जे भैतीभाव
उपगतः सन् भित्तीभाव शुद्धतुयको जीव रागाद्विष वर्जनं कृत्वा निर्भयः सप्तभय रक्षितो भवति जिवादि जीव रागाद्विष वर्जे तिवारि भय रक्षित होर १७
स्वाध्यायेन हे भगवन् जीवः किं जनयतिः सञ्ज्ञाय करतुयको जीव हे भगवन् किंसुं उपार्जे स्वाध्यायेन ज्ञाना वरणीयं शेषं च कर्म क्षपयति सञ्ज्ञाय
करतुं जीव ज्ञानावरणी कर्म क्षपावे १८ वाचनया हे भगवन् जीव किं जनयति वाचना देतीयको जीव हे भगवन् किंसुं उपार्जे वाचनया कर्म

नया वाचयतीति वाचनापाठना तथा जीव कि जनयति शुभराह हे शिष्य वाचनया सिद्धान्तवाचनेन निर्जराकर्मभाटन जनयति तथा पुन श्रुतस्य
 अनायातनाया प्रयत्ने तत्र च प्रयत्नानानीजीवस्तीर्थोत्पादकस्य धर्म आचार श्रुतप्रदानरूपस्तीर्थ धर्मस्त आसन्वते ततस्तीर्थ धर्म अवस्य अमान
 स्तीर्थधर्म आशयन् महानिजरोभवति महतीनिर्जारायस्य समष्टानिर्जरा श्रुतप्रदानरूपस्तीर्थ धर्मस्त आसन्वते ततस्तीर्थ धर्म अवस्य अमान
 वसान अस्त कर्मणोभवस्य वायस्य समष्टापर्यवसानस्य भयति मुक्ति भवतीतिहार्द १८) अथ गृहीतवाचनेन पुन सयायादी पुन पृच्छन् प्रतिपृच्छति
 अतस्तत्प्रस प्रश्नपूर्वकमाह (पडिपुच्छण्यायाएणभन्ते जीवे कि जणयइ पडिपुच्छण्यायाएणसुत्तल तदुभयाइ विसोहेइ कखानोइणिक्क कम्म बुच्छिस्सइ२०)
 हे स्वामिन् प्रतिपृच्छनया पूर्वोद्योतस्य सूत्रादे पुन पृच्छनेन जीव कि जनयति प्रतिपृच्छनया सूत्रार्थं तदुभयानिविशोध्यति। सूत्रार्थयो कथय

सायण्याए वट्टइ सुयस्य अणासायण्याए वट्टमाणेतित्य धम्मा अवलवइ । तित्यधम्म अवलव माणे महानिक्करं महा
 पक्खवसाणे भवइ १८ ॥ पडिपुच्छण्यायाएण भ ते जीवे किजणयइ पडिपुच्छण्यायाएण सुत्तल तदुभयाइ विसोहेइ ।

निर्जरा जनयति वाचना देनायको जोषकमनोजरावे तथा श्रुतस्य आगमस्य अनायातनया वर्तते सिद्धान्तो अनायातना न करे अनायातनावर्त्ते श्रुतस्य
 अनायातनाया वर्त्तमान सिद्धान्तो अनायातनागे यिच्छे वर्त्त तुषको तीर्थ करो गणधरो वातस्य धम अवलवते तीर्थ करतो गणधरतो धर्म अथ
 सर्वेहे तीर्थ धर्म अवलवमान तीर्थ करतु धर्म अवलवतुषको जीव महानिर्जरा कर्मणो अत करोति महा निर्जरा कर्मतो अत करे १८ पूर्व
 पठितस्य सूत्रादे पुन २ पृच्छन् प्रतिपृच्छन् पहिला सूत्र अर्थोहे वसी फिरो पूषीजे ते प्रतिपृच्छनाकरतो जीवसु चपाजे प्रतिपृच्छनया पृष्ठतोषको

निवार्यनिरालव विधत्ते तथाकांचामोहनीयं कर्मभ्युच्छिनत्ति कांचाशब्देन सन्देहः कांचयासन्देहेनमोहनं कांचामोहनं तत्र भवं
कांचामोहनीय एतकर्मविशेषेण अपनयति इदं इत्थं तत्रं अथवा इदं इत्थं नास्ति वा इदं भव अथयनाय योग्यं वा इत्यादि घटनाकांचावाच्यातद्रूप
मेव मोहनीय कर्मभ्रनभिग्रहिकमिथ्यात्वरूपं तत् विनाशयति २० अधीत्यपुनः सन्देहमपि पुनः प्रतिपुच्छनेतिनिराकृत्यपरावर्त्तनं गुरुनं न क्रियते
तदा सुष्टु अधीतमपि शास्त्र विस्मरति अतः परावर्त्तनेन यत् फलं स्यात्तदपि प्रश्न पूर्वमाह [परि यदृश्यायाणं भते जीवे किं जगयद् परि यदृश्यायाणं
वक्ष्याद् जगयद् वक्ष्याल्लि च उपाएद् २१] हे पूज्य हे स्वामिन् परिवर्त्तनयाशास्त्रस्य गुरुनेन जीवः किं जनयति गुरुराह हे शिष्य परिवर्त्तनया
जीवोव्यञ्जनानि अक्षराणि जनयति विस्मृतात्वाच्चराणानयति तथा विधकर्मचयोपशमात् व्यञ्जनलब्धि व्यञ्जनसमुदाय रूपां पदलब्धिं पदानुसारिणी
लब्धिं जनयति २१ सूत्रवत् अर्थस्यापि विस्मरण सभावात् सूत्रार्थयोश्चित्तनं विधेय अतस्तत्फलमपि प्रश्नपूर्वमाह (अणुर्षेहाणं भन्ते जीवे किं जगयद्

कांचा मोहणिज्जं कर्मं वोच्छिन्दद् २० ॥ परि यदृश्यायाणं भते जीवे किं जगयद् । परि यदृश्यायाणं वंजयाद् वंजा
यद् । वंजाण लब्धिं च उपाएद् ॥ २१ ॥ अणुर्षेहाणं भते जीवे किं जगयद् । अणुर्षेहाणं आउयवज्जाश्री सत्त

जीव सुतार्थं तदुभयानि विशेषयति निर्मलत्वं करोति सूत्र अर्थं सूत्र करं कांचा मोहनीय कर्म मीथ्यात्वरूपं व्यवच्छिन्नत्ति कांचा मोहनीयकर्म छेदे
संदेहटाले २० परिवर्त्तनया गुणनरूपया भगवन् जीव किं जनयति सूत्र सिद्धांत गुणतुल्यको जीवस्यं उपाज्जो पविषत्तनेनया गुणविकरीने व्यंजनात्वा
क्षराणि जनयति व्यंजन अक्षर उपाज्जो अक्षरलब्धिं च उत्यादयतीत्यर्थः अक्षरनी लब्धि उपाज्जिर्षे उतावत्तो गुणे २१ अनुर्षेक्षया चित्तनिकया प्रकट

अणुपेदाएष आउययज्ञाश्चो सप्तकर्मपयहोश्चो धणियवन्धण वहाश्चो सिद्धिलवन्धण वहाश्चोपकरेइ दीहकालिड्याश्चोरहस कालिडिय इया शोपकरेइ तिब्ब्याण भाषाशाम दाण भाषाशोपकरेइ बहुप एसगाथा अप्यएसगाथोपकरेइ आउय चण कम्म सिद्यवन्धर सिद्यनोवन्धर असायायेयणिज्ज चण कम्म नोभञ्जो २ उयच्चिणर अणाइयचण अणवयणा दीहमह आउरत ससार कतार खिष्णानेवधीइवयर २२) इं भदतस्मानिन् अनुपेसया सत्तार्ध चिन्तनिकया जोप कि जनयति गुरसाइ इं मियव अनुपेसया कला जोप सप्तकर्म प्रकतीर्शानावर य दर्शनावरण वेदनीय मोहनीय नाम गोषातराय रूपाणां सप्तानां कर्मणां प्रकृतय एकयत चतु पधायात् प्रमाणा सप्तकम्म प्रकृतयस्या सप्तकर्म प्रकतीर्धणिय वधनवहा गाढवधनवहानिकाचितावहा त्रिषिखल यन्ववहा प्रकरोतियतेहि अनुपेसा स्वाध्यायवियेप स तु मनस स्तत्रैव नियोजनान्नवति सचानुपेसा स्वाध्यायोहि अभ्यन्तरत्ताप तपसु निकचित

कम्म पयड्डीश्चो धणिय वधण वहाश्चो सिद्धिल वधण वहाश्चो पकरेइ । दीहकालिड्डियाश्चोरहस कालिड्डियाश्चो पक
रेइ । तिब्ब्याणुभाषाश्चो मदाणु भाषाश्चो पकरेइ । वहु एसगगाश्चो अप्यएसगगाश्चो पकरेइ । आउय चणा कम्म

शुभ भावहेतु तथा जोष कि जनयति अवं विचाररसुयका जोवस्य उपाज अनुपेसया अर्धविचारतो यको आयुवर्जा आयु कम्मवर्जानि सप्त कर्म प्रकृतय साप्तकमनो प्रकृतिगाठ धनियत्ति गाढवधनेवहा गाढेवधने करो याधेहे ता सिद्धिल वधन वहा प्रकरोति तं गाठि टीलीकरे अपर दीर्घ कास स्थितिका इत्थकालस्थितिका करोति घणाकालनोस्थिति आणो राखे घणोकालहेरे अपर तीव्रानुवहभावायतु स्थानिक रसरूपा प्रकृतो मदाणु भाषा प्रकरोति जं कर्म तीव्रभावे वांल्याहे ते मद्भावे करे बहुकर्म प्रदेशान् अल्पकम्म प्रदेशागान् करोति घणा प्रदेशादीइ कर्मना तं योडा प्रदेशकरे

कर्माणि शिथिली कर्तुं समर्थं भवत्येव कथञ्चनाः सप्तकर्मं प्रकृती आयुर्वर्ज्जिः प्रकृष्टभावं हेतुत्वेन आयुर्वर्ज्जिं यन्तीत्यायुर्वर्ज्जिः पुनर्हे प्रियत्वं अनुप्रेक्षया
 कृत्वाजीवः स्थाप्य कर्मपूजानो दीर्घकालस्थितिकाः शुभाश्वसाय योगात् स्थितित्वस्थानां अपहारेण क्लृप्तकालस्थितिकाः प्रकरोति पशुरकालभो
 न्यानि कर्माणि स्वल्पकालभोग्यानि करोति इत्यर्थः पुनस्तीव्रानुभावाः कर्मपूजतीर्मन्दानुभावाः प्रकरोति तीव्रः उक्तटीव्रभावी रसोयासात्ता स्तीव्रानु
 भावाः इदृश्याः कर्मपूजतीर्मन्दो निर्वर्तनीजुभावीया सात्ता मन्दानुभावाः प्रकरोति स्थादृश्याः प्रकरोति विदधति पुनर्वहुं पृष्ट्यायाः अस्वपृष्ट्यायाः
 प्रकरोति बहुपृष्ट्यायां कर्मं पुनर्लोक पुभाषं या सात्ताः बहुपृष्ट्यायाः एतादृशीः कर्मपूजतीरत्य पृष्ट्यायाः प्रकरोति इत्यनेन अनुप्रेक्षयाऽशुभसत्तु
 र्निधीपिवन्धः पूजतिबन्धः स्थितिवन्धीजुभावाबन्धः पृष्ट्याबन्धः शुभत्वेन परिणमतीत्यर्थः अत्र च आयुर्वर्ज्जिं मिल्युक्तं तत्तु एकस्मिन्भवै स कदेव आंतमुं
 हृतं काले एव आयुर्जीवो बध्नाति च पुनः आयुः कर्माणि स्यात् बध्नातिस्वात्त्वबध्नाति ससारसध्ये तिष्ठति चेत्तर्हि अशुभमायुर्नबध्नाति जीवेन त्वतीय
 भागादिशेषायुर्धनेन धारुः कर्मबध्नाति अन्यथा न बध्नाति तेन आयुः कर्मबन्धे निसययोगीक्तः इत्यनेन मुक्तिं ब्रजति तदा आयुर्नबध्नातीत्युक्तं पुनरनुप्रेक्षया
 कृत्वा जीवोऽसाता वेदनीय कर्मं यारीरादि दुःखहेतुं च कर्मं च भव्यादन्त्यासाऽशुभ पूजतीर्निभूयोश्च उपचिन्नाति अत्र भूयो २ प्रहणेन एवं चैयं
 कश्चिद्यतिः प्रमादस्थानके प्रमादं भजेन तदा बध्नात्यपि इति हार्दं पुनरनुप्रेक्षया कृत्वा जीवयातुरन्तसंसारकस्तार स्थिप्रमेवतीवयद् इति व्यति

सिय वंधद् सियनो वंधद् । अस्याया वियणिज्जं चणं कर्मां नो भुज्जो २ उवचिथाद् । अथाद्दयं चणं अणावदग्गं

अपर स्यात् कदाचित् आयुर्बध्नाति कदाचित् न बध्नाति किवारिके आयुः कर्मबन्धे किवारिके नबन्धे अयाता वेदनीयच कर्मन भूयो २ बध्नाति वेदनीं कर्म

प्रवृत्ति चलारपतुर्गति लक्षणायत्साधवयवायस्य तत् चातुरन्त तदेव ससारक तार ससारारण्य तत् शोष मुञ्ज घयति कीदृश ससारारण्य अनादिक
 चादिरभाषात् चादिरहित पुन कीदृश ससारकन्तार अनवदप्र अनवत् अनागच्छन् अथ परिमाण यस्य तत् अनवदप्र अनन्तमित्यर्थं प्रवाहायेष्या
 अनागन्त पुन कीदृश दोषाञ्च दीवकाल दीहमन्व इत्यत्रमकारोलाच्चणिक प्राकृतत्वात् २२ एव अथ्यस्तयास्त्रिण धर्मकथाकर्त्तव्या
 ततो धर्म कथाकर्त्तं कि फल स्यादतस्तत्फलमपि प्रत्य पूर्वमाह (धर्मकहाएणभन्ते जीये कि जणयद् धर्मकहाएण पययण पभावेद्
 पनयगयभायएण जीये आगामिसस्रमद्साएकम निवन्धद् २३) हे स्वामिन् धर्मकथाया जीये कि जनयति गुरुराहहे शिष्य धम्म कथायाधम्म व्याख्यानिन
 जीये प्रयचन योसिद्वास्त भगवद्द्वन प्रभाययति प्रकाशयति प्रवचन प्रभावक सिद्धान्तोक्तदीपको जीये आगमिच्छद्गतया उपलक्षित कर्मनियमाति

दीहमद्वा उरत ससार कतार खिप्पामेव वीर्द्धवयद् २२ ॥ धम्म कहाएण भते जीवे कि जणयद् । धम्म कहाएण
 पययण पभावेद् । पनयण पभावेएण । जीवे आगामिसस्रमद्साए कम्म निवधद् २३ ॥ सुयस्स आराहणयाएण

पारदार न धी अनादिक अनवदप्र अनत दीर्घलि जेहनी चादिनधी अोयनी जेहनी अत नधी चतुर्गतिक ससारका तार छिप्रमंय य्नु तक्रमते पार
 गति रूप ससारकातार अटथी ते छिप्र कतावलो अिक्खी २२ धम्म कथनरूप व्याख्याता भगवन् जीये कि जनयति धम्मकथा कइतुयको जीयसु
 उपाजे धर्म कथाया निजरा जनयति धर्मनी कथाद् करो कम्मनी निजरा ऊपजाये प्रवचन प्रभाययति सिद्धातनी प्रभायनाकरे प्रयचन प्रभायनया
 खिन शासननी प्रभायनाद् करीने आगामिकाले भद्रतपाकर्म निवधाणि आगलाभयने विधि भला कर्म्मवाधि २३ श्रुतस्साराधनया हे भगवन् जीये कि

आगाभिनिकालिभद्रत्वेन उपलक्षितं अर्थात् शुभं कर्मसुपाज्यतीति भावः पञ्चविधस्वाध्यायरतंन श्रुतभाराधितं स्यादतस्तस्य फलं प्रश्नपूर्वकमाह २३ [सुयस्म आराहृथायाएथभन्ते जीवे किं जगथद्रसु यस्म आराहृथाया एथं अन्नाणखवेद नयसं कलिस्र २४) हे भद्रन्त श्रुतस्य आराधनया जीवः किं जनयति गुरराहृ हे शिष्य श्रुतस्य आराधनया सस्यन् आसेव नया अन्नान चपयति विशिष्टतत्वावबोधस्य अवापि च पुनर्नसल्लिभ्यते रागाहेषजनितं क्लेशं न भजतीति भावः २४ श्रुताराधना च एकाग्रमनः सन्निवेशनावत एवस्यादतस्तत्फलं प्रश्नपूर्वमाह (एगन्गमणसांनवेसणयाएथंभते जीवे किं जगथद्र एगन्गमणसान्विसणयाएथं चित्तनिरीहंजगथद्र २५) हे भद्रन्त हे स्वाभिन् एक अग्रं प्रस्तावात् शुभं आलम्बन षस्यैलैकाग्रं एकाग्रं च तन्मनस्य एकाग्रमनस्तस्य सन्निवेशनास्थापनातया एकाग्रमन सन्निवेशनतया एकाग्रमनः सन्निवेशनयाशुभावलम्बनेचित्तस्य स्थिरीकरणेन जीव किं फलं जनयति गुरराहृ हे शिष्य एकाग्रमन सन्निवेशनयाचित्तनिरीधं जनयति चित्तस्य द्रतस्तत उन्मार्गप्रस्थितस्य निरीधीनियन्त्रणं चित्तनिरीधस्तं करोति

भंते जीवे किं जगथद्र । सुयस्म आराहृथायाएथं अन्नाणं खवेद नय संकलिस्र २४ ॥ एगन्गमण सांनवेसणयाएथं भंते जीवे किं जगथद्र । एगन्गमण सांनवेसणयाएथं चित्त निरीहं करेद्र ॥ २५ ॥ संजमेणं भंते जीवे किं जगथद्र ।

जनयति हे भगवन् श्रुतानो आराधना करतु जीवस्यं उपार्जे श्रुतस्य आराधनया श्रुत सिधांतनी आराधनाद्र करीने अन्नानं चपयति अन्नानने खपावे अपरं रागादिभिर्नलितस्यते वली रागादिके करी क्लेश न पाप्मे २४ एगाग्रमन संनिवेशनया एकाग्रमन राखने करीने हे भगवन् जीवः किं जनयति हे भगवन् जीवस्यं कर्म उपार्जे एकाग्रमनः सन्निवेशनया एकाग्रमन ठामि राखवे करीने चित्तनिरीधं करोति उन्मार्गे जाती चित्तने क्लेशं २५

इति भाष एव विषस्य साधो समयमादेरिष्टफलस्य प्राप्तिरिति नियमात् तत् फल प्रशुपूर्वमाह [सञ्जनेषभर्तजीवे कि जणयद् सञ्जनेष अणभयन जणयद् २६] हे भगवन् समयनेन जीव कि जनयति गुरुराह समयनेन अण हस्तक न विद्यते अहपाप यस्मिन् तत् अणहस्तक तस्य भावीजन हस्तक त्व तज्जनयति समयनेन अणययनिरौष जनयति इत्यर्थं २६ समयमवान् साधुस्तर्पेनिरत स्यात् अतस्मात्फल प्रशु पूर्वकमाह [तत्रैषभर्तजीवे कि जणयद् तत्रैषभर्तोदाण जणयद् २७] हे भगवन् तपसाहाज्जाजीव कि फल जनयति गुरुराह हे शिष्यतपसाजोषो व्यवदान जनयति पूर्वबहकर्मिपनामनेन विगोपेण शक्ति जनयति २७ व्यवदानेन कि फल स्यादतस्मात् फल प्रशुपूर्वमाह [वोदाणेण भर्त जीवे कि जणयद् वोदाणेण अक्रिरिय जणयद् अक्रिरिया एभविषा तत्रोपच्छा सिञ्जद् वञ्जद् सुशद् परिनिव्यायद् सञ्जदुक्खाणमन्त करेद् २८] हे भदन्तव्य पदानेन जीव कि जनयति गुरुराह हे शिष्य

सजनेष अणहयज्ञ जणयद् २६ ॥ तत्रैष भर्त जीवे कि जणयद् । तत्रैष वायाण जणयद् २७ ॥ वोदाणेण भर्त जीवे कि जणयद् वोयाणेण अक्रिरिय जणयद् । अक्रिरियाए भविता तत्रोपच्छा सिञ्जद् वुञ्जद् सुञ्जद् परिनिव्याद् सञ्ज

सयमन धारित्रेण हे भगवन् जीव कि जनयति हे भगवन् धारित्रधको जीवस्य कर्म उपार्जे समयमन पचायव यिरत्या यर्हमान कथा रहित त्व जनयति समयपालतु जीव पाप आशयवधे अणहस्तकत्व अविद्यमानयभक्त वाधादायक कथनवधे २६ तपसा हे भगवन् जीव कि जनयति तपकरतु जीवस्य कर्मउपाजे तपसा तपकरिने व्यवदान पूर्ववह कथम अपयति तपकरिने पाकिता वाख्या कथम खपाव २७ व्यवदानेन व्युपरतक्रियास्य शक्त्यान चतुर्थ भेद जनयति व्यवदाने करिने शक्त्यान उपार्जे व्यवदानेन अक्रिया जनयति व्यवदाने करिने अक्रिया के शक्त्यान ते चोद्योपायो उपजाये अक्रियको

अपदानेन जीवोऽक्रिय जनयति न विद्यते क्रिया यस्मिन् स अक्रियस्तु अक्रियं व्यपरात्क्रियास्य शुक्ल धानस्य चतुर्थं भद्रं जनयति अक्रियकोभूत्वा
व्युपरत्क्रियास्य शुक्लधानावतीभूत्वा ततः पश्चात् सिद्धिं व्रजति वृष्यतिज्ञानदर्शनाभ्यां सम्यक् वस्तुवेत्ता भवति सुच्यते संसारात् मुक्तो भवति परि
निर्वातिपरिसमत्वात् निर्वाति कर्मानिं विध्याप्यथोतलोभदति सर्वदुखानां अन्तं करोति २८ संयमादिषु सत्स्वपि सुखशान्तेन एव प्रवर्तनीयं
अतस्तत्फलमाह (सुहसाएण भंते जीवे किं जणयद् सुहसाएणं अणुसुयत्तं जणयद् अणुसुएण जीवे अणुकपए अणुभडे विगयसोगे चरित्तमीहणिज्जा
कम्मं खवेद् २९] हे भद्रन्त हे स्वामिन् सुखस्याविषयिकस्य शान्तं सुहानिवारणेन अपनयनं सुखशान्तेन जीवः किं जनयति गुरुराह हे शिष्य
सुखशान्तेन अणुसुकालं जनयति विषयसुखेऽनुत्तालत्वं जनयति अणुलकधजीवोऽनुकम्पते अग्रे तनं जीवं दृष्ट्वा अणुकम्पकोदयावान् भवतीत्यर्थः पुनरनु
दुखत्वात्वा भंतं करेद् २८ ॥ सुहसाएणं भंते जीवे किं जणयद् सुहसाएणं अणुसुयत्तं जणयद् । अणुसुएणं जीवे
अणुकपए अणुभडे विगयसोगे चरित्तमीहणिज्जा कम्मं खवेद् २९ ॥ अप्पडिवइयाएणं भंते जीवे किं जणयद् ।

भूत्वा ततः पश्चात् अक्रियापणा पामेधे ततः पश्चात् तिवारकेडे सीइयति सीर्भे वृद्धयति ब्रूमे सुच्यंते सूकाइ परिनिर्वापयति सधला दुक्खनी अंतकरे
सर्वदुखानां अंत करोति सर्वदुखनी नाश करे २८ सुखशान्तया हे भद्रतः जीवः किं जनयति विषय सुखनी इच्छा निवारतुं जीव हे पूज्यस्थो कर्म
उपाज्जे अणुत्सुकत्वं विषयसुख प्रतिनिष्कृत्वं जनयति विषयसुखने विषये निष्कृत्पणुं उपाज्जे अणुत्सुकत्वेन जीवः अणुत्सुक पणे करी जीवः अणु
कंप कपरहित अणुइट अणुत्सुणो सन् विगतशीकाः विषयने चिखे अणुत्सुक पणुं जीव दयापाले गोकरहित हुवे चारित्तमीहनीय कम्मं कपयति

इतिभित्तानरहित गङ्गादिगाम्भारहित स्यात् पुनस्तादृश सन् विगतशक्त्वा इह लौकिककायश्च प्रादावपि शोचन न कुर्वते पुनस्तादृशोमोक्षार्थी शुभाश्वयसायवर्त्तौ कपाय गोकपाय रूपधारित्त्रिमोहनीय रूप कर्म उपयति २८ अथ सुख ग्रातस्वितस्य वा प्रतिबद्धताभवति अतस्तत्फल प्रशुपूर्वमाह [अण्डिबद्धयाएणभस्तेजोविकि जणयद अण्डिबद्धयाएण निष्ठागत जणयदनिष्ठात्तेण जीवेएगोएगानाचिन्ते दिद्यायराश्रीय असज्जाधि अण्डिबद्धे धारियिहरद ३०] हे भदन्त अप्रति बद्धतयामनसिनिरभिष्वङ्गतयाजीव कि जनयति गुरुराह हे शिष्य अप्रति बद्धतयानि सङ्गल बाध्यासङ्गाभाव जनयति निम गत्व गतोजीव एकोरागादिरहित स्यात् तादृशय एकापधितोषर्म्म एव दृढ मनस्क स्यात् पुनर्दिवादिबसेरादौ वा असज्जान् मदा वाद्यासङ्गत्वजनन् अप्रति बडोविहरति मासकल्पेन सद्यतविहारिणपर्यटतोति भाव ३० अप्रतिबद्धताचविक्रमयनासनसेयकस्यस्यादत्तस्तत्फलमाह [प्रियससयगासणसेनपयाएणभते जोवेकि कणयद विचित्तसयणासणसेयपयाएण जीवे धरित्तगुप्तेण जीवेधियिताहारिददधरित्तेण गत्तरप्तेन्यभायेधियये अडुविहकफगा ठिनिष्कारिद ३१] हे भदन्तविविक्लानि स्त्रोपशु पण्डकवर्जितानि शयनासनानि उपानयस्यनानानि यस्य स

अण्डिबद्धयाएण निष्ठागत जणयद । निष्ठागते ण जीवे एगे एगगचिन्ते दिद्याय राश्रीय असज्जमाणे अपण्डिव

धारिश्च मोक्षगो कर्मनेत्रे खपाये २८ अप्रतिबद्धया हे भगवन् जीव कि जनयति अप्रतिबद्ध विहारकरतु यको जीव हे पूज्यस्य कर्मउपाजे अप्रतिबद्धया च प्रतिबद्धपरहोत जीव निष्ठागत जनयति निष्ठागपण उपाने सगारहित होइ निय यपणी उपजावे नि सगत्तेन जीव स गपणे रहित जीव एक रागद्वेष रहित एकायधिस एकसां रागद्वेष रहित दिद्या वा रादौ वा दिवसे यथा रादौ असज्जन् सगत्याग करतुयको अप्रतिबद्ध तथा विह

विविक्ताप्रयथाश्रयस्तस्य भावो विवक्तप्रयत्नासनतातया स्त्रीपशु पण्डकादिरहितस्थिति निवासत्वेन जीवः किं जनयति गुरुराह हे शिष्य विविक्रप्रयत्ना
सनतयाजीवधरिते गुप्ति चारितस्य रक्षाजनयति गुप्तचरित्रयजीवीविवितीविक्रत्यादि प्ररीर गुष्टि कारकवीर्यहृष्यादि क्वसुरहित आहारोयस्य
सविविक्ताहारस्तादृशः स्यात् तथा दृढं निधनं चरित्रं यस्य सदृढ चरित्रः पुनरत एव एकान्तेन निययेनरक्त आसक्तः एकान्तरत संयमेन सावधानः
स्यात् तथाभीक्ष्णभावेन मनसा प्रतिपन्नः आश्रितोभीक्ष्णोमयासाध्य इति बुद्धिमान् क्षपकश्रेणिं प्रतिपद्याद्विधकर्मं शश्विं निर्जरयति क्षपयति ३१
विविक्तप्रयत्नाश्रयः विनिवर्त्तनावान् स्यात् अतीविनिवर्त्तनाया फलमाह (विणिवदृश्याएणं भन्ते जीवे किं जणयद् विणिवदृश्याएणं पावाणं
बद्धेयावि विहरद् ३० ॥ विवित्त सयणासणं सेवणाएणं भंतं जीवे किंजणयद् । विवित्त सयणासणं सेवणाया
एणं चरित्त गुप्तिं जणयद् चरित्त गुत्तेणं जीवे विवित्ताहारे दृढचरित्ते एणं तरए मोक्षस्य भावपडिवन्ने अद्द विहं कम्म
गंठिं निज्जरेद्द ३१ ॥ विणिवदृश्याएणं भंतं जीवे किंजणयद् विणिवदृश्याएणं पावाणं कम्माणं अकरणायाए

रति अप्रतिबद्धपणं विहार करे संगरहितहोद्द विविक्र सयनासन सेवनया हे भगवन् जीवः किं जनयति निव्यंजन एकात उपाश्रयसेवतु जीव
किस्युं कर्मउपाजं विविक्र प्रयत्नासन तथा निरव्यंजण आसण सेवतु जीव चारित्रगुप्तिं जनयति चारित्तगुप्ति करे चारित्तगुप्तकरतु जीव विधक स्त्री
जनादि संगरहितो विहारो प्रतिबद्ध विहारो द्विविक्ताप्रकारे अहारकरे चारित्रने विखे दृढ एकांतरतः मोक्षभावं आश्रितः सन् एकांते मोक्षने
विखे मत्तिकीधोक्ते अष्टविध कर्मश्रेणि निर्जरयति आठ कर्मनी गाठित्ताडे ३१ विनिवर्त्तनाया विषयपराङ्मुखी हे भदतजीव किज्जनयति विषयने

कथाया अकरण्याए अशुद्धे पुण्यवहाथयनिज्जरण्याएत नियत्ते इ तथोपच्छाचाउरन्तससारकल्लार विद्दं ययइ ३२) हे खासिन् विनिवर्त्तनयाविषयेभ्य
 प्राकन पराशुचीभावेन जीव कि जनयति गुरराह हे शिष्य विनिवर्त्तनया पापकर्मणा अकरणत्वेन सायद्यकर्मलानेन अभ्युत्तिष्टते धर्माय सायधानी
 भवति पूर्ववहानां पापकर्मणां निर्जरयान्ततनपापकर्मणा अकरणत्वेन सावद्यकर्मलानेन अभ्युत्तिष्टते धर्माय सायधानी भवति पूर्ववहाना पापकर्मणा
 अशुपादनेन तत् पापकर्मनिपत्तयति निवारयति तत पयात् चातुरन्त ससारकाल्लार वीइययइ व्यति व्रजति ब्युत्क्रामति इत्यर्थं ३२ विषयविनि
 उपायकथिक्कायु सभोगप्रत्याख्यानयान् भवति अतस्तत्फलमाह [सभोगपञ्चकलाय भते जीवे कि जणयइ सभोगपञ्चकलायण आलभ्यणइत्वेइ निरालम्भ
 षक्यय प्रायतद्वियाजोगाभवन्ति सएण लामेण सत्तुक्खइ परलाभयो आसाएइ नीतकेइ नोपोइइ नोपथ्येइ नोअहितसइ परक्खलाभ अयासाएमाये अतके
 माये अयत्तेमाये षणभिलसमाये दीये सुअसिज्ज उयसम्मज्जिस्साण विहरइ ३३] हे भदन्त सभोग प्रत्याख्याननेन एकमच्छब्दा स्थित्वा आहारस्य करणे

अशुद्धे इ पुण्यवहाणय निज्जरण्याए तनियत्ते इ तथो पच्छा चाउरत ससार कतारवीईवयइ ३२ ॥ सभोग पञ्चवहा
 णे ण भते जीवे कि जणयइ । सभोग पञ्चकराणे ण आलवणाइ खवेइ निरालवणस्यय प्रायतद्विया जोगा भवति

पितु पराशुमुख यकोभ्यु कम उपाज्जे विनिवर्त्तनया विषय सेवारहित पापकर्मणां पापकर्मने अकरणतया कर्मरहितोभ्यु तिष्टेत् करं नहो पापकर्म
 रक्षित होइ पूर्वं वहानां निर्जरण्या जी पाकिन्था कर्मवाध्यावेते खपावे तत पयात् चतुरत ससार कातार व्यतिव्रजति तिकार पक्षी चातुर त
 ससार कतार नैवना पारपामे २२ एक महलो भोजनकरण प्रत्याख्यानने हे भगवन् जीव कि जनयति प्रापणो प्राखी प्राहार करे माहल माहि

भाषा

पुष

सयोगस्वस्य प्रत्याख्यानं न उक्तं ह्येतेन पृथक् आहारकरणेन जीवः किं फलं जनयति तदाशुस्वाह हे शिष्य सयोगप्रत्याख्यानं जालम्बना चपयति यतीह
 यलानोस्मिरोभ्यस्य इत्यादिकथनानि चपयति धीरोभवति इत्यर्थः निरालम्बनस्य च आयतार्थाः योगाभवन्ति आयती मोक्षः सएव अर्थः प्रयोजनं वेधां तं
 आयतार्थाः एतादृशयति योगाः मनोवाक्याययोगा भवन्ति स्वेनलाभेन सन्तुष्यति परस्य लाभं न आखादयति नवाच्छयति ततश्च परस्य लाभन्ती तर्कयति
 मह्यं दास्यति मनसानविकल्पयति नीस्तु इत्यति परलाभे आलातया स्वस्य स्मृत्वात् प्रकटीकरोति पुनः परस्य लाभं न प्रार्थयति महत्त्वे हीति नयाचर्त
 यत् इदं पुनर्न अभिलषति परस्य लालसापूर्वकं नवाच्छयति अथ परस्यलाभं अणासाएभाणे अनासादयन् अतर्कयन् अनीहमान् अप्रार्थमान् अनभिलषन्
 द्वितीयां सुखश्रयां उपसम्पद्यति इत्यति अपरेश्यः साधुभ्यः पृथक् उपान्शयः अनीहल्य प्रवर्त्तते यादृशीत्यानाह उक्तास्ति ता प्रतिपद्यति इत्यति अतर्हि
 एतेशब्दाः एकार्थाः प्रतिपादिताः तत् अनेकदेशीयप्रियाणां प्रतिबोधनार्थं पयायत्वेन प्रतिपादिताः ३३ सयोग प्रत्याख्यानवतः साधीरुपधि प्रत्याख्यानं

सएवं लाभेषु संतुष्टा इ । परलाभं नो आसाएइ नोतर्क इ नोपीहेइ नोपत्ये इ नोअभिलसइ । परस्यलाभं अणासाएभाणां

जिमे नही जूदी जीमे जीवस्य कर्मउपार्जे सयोग प्रत्याख्यानं न एकमउली पञ्चयथाकारेजे जीवते आलंबनानि चपयति एकली विहार करतुयलानादिक
 आलंबन खपावे निरालंबनस्य आलार्थका व्यापाराभवति निरालंबन आलंबनरहित आलाना अर्थं तेहना व्यापार ह्येव मनरहे स्वकेन लाभेन
 संतुष्यति आपणैज लाभं सतोपकारं परस्य लाभं न आसादयति परेनो लाभनवाहे न तर्कयति न स्मृहयति सुहा न करे न प्रार्थयति न मांतिनो
 अभिलिखतिवाहे नही परस्यलाभं अनाशयन् आशाधिपयमसुर्वेन पारसुं आण्यं अनलेतुषकी अणवांकरुं धकी अतर्कयन् अस्मृहयन् सुहा अण

सुभवति शतकृतं फलं प्रशपूर्वमाह (उपहि पञ्चकलाणभते जीवे किं जणयद् उपहि पञ्चकलाणेषु अपत्तिमन्य जणद् निरुवहिण्ण जीयिनिक्खे लयहि मत्तरणनसकिन्निप्पार ३४) हे भदन्त उपधि प्रत्याख्यानेनरजोहरणमुधयस्सिकापातादिद्व्यतिरिक्तस्य उपधे प्रत्याख्यानेन उपधित्वानेन जीव किं उपाजयति गुरुराह हे शिष्य उपधि प्रत्याख्यानेन अपत्तिमन्य जनयति परिमन्य स्वाध्यायव्याधात नपरिमन्योऽपरिमन्य स्वाध्यायादौ निरालस्य जनयति पुनर्निरुपधिकीनि परियद्दो जीवो नि काञ्चो भवति वक्कादी अभिलापरहित स्वादित्वयं तादृशीहि उपधिमन्तरेण उपधिवितानसस्सिग्गतं किं न प्राप्नोति स परियद्दो के ग प्राप्नोतीति भाष ३४ अथोपधि प्रत्याख्यानवान् साधुर्जिनकन्यादि एषणीयाहारस्य अलाभेन उपवास करोति आहारगत्यान करोति तदा तत्फल मपि प्रशपूर्वमाह [आहारपञ्चकलाणभते जीवे किं जणयद् आहारपक्याणेषु जीयियाससप्पश्रीय वीच्छिन्दद्]

शतक्रेमाणो अपरोहिमाणो अपत्ये माणे अणभिलसिमाणो दोच्च सुहसेज्जा उवसपज्जिताण विहरद् ३२॥ उपहिपञ्चकलाणेषु भते जीवे किं जणयद् उपहि पञ्चकलाणेषु अपत्तिमन्य जणयद् निरुवहिण्ण जीवे निक्खे उपहि मतरेणय नसकिण्णि

करतु धको अप्रार्थयन् अणमानतु धको अनभि लिखयन् अभिलास्य अणकरतु धको द्वितीया सुखश्रिज्या उपसरह्य विरहति धिजी सुखशीळा पडि वजोने विचरे ३३ उपधि प्रत्याख्याने नरजोहरणादिधारण तया हे भदन्त जीव किं जनयति उपधिनी पञ्चकलाण कर श्रीषामात्र राखे हे भगवन् जीवस्य कमउपाजो उपधि प्रत्याख्यानेन उपधिने पञ्चकलाण धरणी पगारणसेधी पचखाणसेधी वसुन्ध नराखे अपत्तिमन्य स्वाध्यायादिनानि धिहरहित जनयति स्वाध्यायादिकतु निविप्रपण उपार्शो निरुपधिकी जीव निरकाञ्च उपधिरहितो जीव याकारहित होद्द वक्कादि रण्यारहित सन् न च

जीवियासं सपञ्चोर्गं वोच्छिन्दिता जीवे आहारमन्तरेण न सङ्घिलिस्स इ ३५) हे भदन्त आहारस्य प्रत्याख्यानं स दोषाहारत्वान्न उपवासादिना जीवः किं फलं जनयति गुरुराह हे शिष्य आहार प्रत्याख्यानं जीवीजीविताश्रासं स प्रयोगं व्यवच्छिनत्ति जीविते प्राणधारणे आश्रासंश्राभिलाषस्तस्या प्रयोगो व्यापारो जीविताश्रासस्य प्रयोगस्त व्यवच्छिनत्ति निवारयति जीविताश्रासं रहितो सुनिर्नक्तेशभाक् स्यात् इति भावः ३५ एतत् प्रत्याख्यानत्रयं अपि कषायाभावे एव फलवत्स्यात् अत स्तत्फलं पञ्चपूर्वका माह [कसाय पञ्चकषाणेषु भन्ते जीवे किं जणयद् कसाय पञ्चकषाणेषु वीयराय भावं जणयद् वीयराय भावं पण्डिवन्नेयणं जीवे समसुहृदुक्त्वे भवद् ३६] हे स्वाभिन् कषाय प्रत्याख्यानं जीवः किं जनयति गुरुराह हे शिष्य कषाय प्रत्याख्यानं क्रोधमानमायालोभत्यागं जीवीवीतरागभावं जनयति प्रतिपन्नवीतरागभावो जीवः समसुहृदुक्त्वं भवति ३६ निःकषायोपि योगप्रत्याख्यानं

स्त

स्स इ ३४ ॥ आहारपञ्चकषाणेषु भन्ते जीवे किं जणयद् आहारपञ्चकषाणेषु जीवियासं सपञ्चोर्गं वोच्छिन्दद् जीविया संसपञ्चोर्गं वोच्छिन्दिता जीवे आहारमन्तरेण न सं किलिस्स इ ३५ ॥ कसाय पञ्चकषाणेषु भन्ते जीवे किं जणयद् ।

भाषा

सं किलिस्सति वस्त्रादिकानी इच्छारहित जीव क्लेश नपाप्मे ३४ आहार प्रत्याख्यानं हे भदन्त जीवः किं जनयति आहारने पञ्चकषाणे हे भगवन् जीवस्य कर्मउपार्जं आहार प्रत्याख्यानं आहारने पञ्चकषाणे जीविता ससप्रयोगव्यच्छिनत्ति जिवितव्यनी आस्या क्वाडि जीवीता शंसप्रयोगं व्यच्छेद्य जीवितव्यनी आस्या क्वाडिने जीवः आहारमन्तरेण न सं किलिस्सति जीव संसारमांहि फिरतु आहार विनाश क्लेश न पाप्मे आहार षणोत्तपाप्मे ३५ कषाय प्रत्याख्यानं हे भदन्त जीव किं जनयति कषायनीपञ्चकषाणकारतुं जीवस्य कर्मउपार्जं कषाय प्रत्याख्यानं कषायने प्रत्याख्यानं जीव वीतरागभावं जनयति वितराग

यान् भवति षतस्तत् फल प्रश्नपूर्वकमाह [जोगपञ्चक्याण्येभते जीवे किं जगद्यद् जोगपञ्चक्याण्ये षज्जोगसज्जगद्यद् षज्जोगीण जीवेनव केश्मर्नि वन्यद् पुष्यवद् निज्जरिद् ३७] हे भगवन् योग प्रत्याख्यानेन जीव किं जनयति योगप्रत्याख्यानेन षयोगित्व जनयति यैस्त्रीगीभाव भजति षयोगिषि जीव षतुर्दशगुणस्थानि प्रवर्त्तमानोजीवोनव कश्मानवधाति पूर्ववद् कर्मनिर्जरयति षपयति इति भाष ३७ योग प्रत्याख्यानत शरीरं प्रत्याख्यान करोति षतस्तत्फल प्रश्नपूर्वकमाह (शरीरपञ्चक्याण्येभतेजीवे किं जगद्यद् शरीरपञ्चक्याण्ये सिद्धाद् सद्यशुणस्त निव्यत्तिद् सिद्धाद्सद्यशुणस्त्वय्येयण जीवेस्त्रीगमामुवगण् परस्मसुद्धीभवद् ३८) हे भगवन् शरीरप्रत्याख्यानेन शरीरव्युत्कर्जनेन जीव किं लाभ जनयति शुक्लाह शरीर

कसाय पञ्चक्याण्येण दीयराग भाव जगद्यद् । दीयराग भाव पण्डिवन्नेवियण जीवे समसुह् दुक्त्वे भवद् ३६॥ जोगपञ्च
पञ्चाण्येण भतेजीवे किंजगद्यद् जोगपञ्चक्याण्येण षज्जोगीण जीवे नवकश्म नवधद् पुष्यवद् निज्ज
स्वरिद् ३७ ॥ शरीर पञ्चक्याण्येण भते जीवे किं जगद् शरीर पञ्चक्याण्येण सिद्धाद् सद्यशुणस्त निव्यत्तिद् । सिद्धाद्सद्य

भाष उपार्ज द्योतरागभाष प्रतिपत्तौ जीव द्योतरागभाष पदवर्ज्याद्यको सम सुखदुक्तेन भवति सुखे दु खे सरिखो द्वीये ३६ योगप्रत्याख्यानेन हे भगवन् जीव किं जनयति योगानु पञ्चक्याण्येण कर्त्तु हे पुष्यजीवस्व कर्मउपाज योग प्रत्याख्यानेन मनोयाकाय निरोधेनयोगनिरोध मनयचनकायानि क धये करीने षयातित्व जनयति षर्जोगोपणु पावे षयोगीन नवकश्मन पश्चाति षज्जोगीजीव ननु कश्म न पाधे पुष्यवद् कश्मनिर्जरयति पूवे पाष्या कश्मनीर्जरावे ३७ शरीर प्रत्याख्यानं हे भदत जीव किं जनयति शरीरनो पञ्चक्याण्येण जीवस्व कर्मउपार्ज शरीर प्रत्याख्यानेन शरीरनो पञ्चक्याण्येण कर्त्तु सिद्धातिप्रध

प्रत्याख्याननिर्गसिद्धातिशयगुणत्वं निर्वर्त्तयति कीर्षः सिद्धानां ये अतिशयगुणा सर्वोत्कृष्ट गुणास्तेषां भाव सिद्धातिशयगुणत्वं यतीहि सिद्धानतीला
नलोहिताः नहारिद्रा. न शुक्लाइत्यादय एकानि'ग्रह,णास्तद्वत् प्राप्तीतीत्यर्थः प्रायसिद्धातिशय गुणोजीवो लोकाग्रं मोक्षं उपादाय सन् सुखीभवति.
यद्यपि योगप्रत्याख्यानं शरीरप्रत्याख्यानः सभागतः तथापि मनीषाकयोग शरीरस्य प्राधान्यख्यापनार्थं पुद्यक् उपादान ३८ सभोगादिप्रत्याख्यानानि
प्रायः साहाय्य प्रत्याख्यानं युक्तस्य भवति अतस्तत्फलं प्रशुपूर्वमाह (साहाय्यपञ्चकलाणैः भते जीवे किं ज्ञायद् सहाय्यपञ्चकलाणैः एगीभाव ज्ञायद् एगी
भावभूयण जीविएगत्वाभाविभाणे अप्रसदि अप्रभंभे अप्यकलहे अप्यकसाए अप्यतु मतुभे संयभवहुले सत्यरत्नरुले समाहिए आवि भवद् ३८)
साहाया साहाय्यकारिणः सहाटकस्य साधयस्तेषां प्रत्याख्यान साहाय्यप्रत्याख्यानं तेन साहाय्य प्रत्याख्यानं हे भगवन् जीवः किं फलं जनयति गुरुराह

गुणसंपन्ने यथा जीवे लोचनं सुवगए परम सुहीभवद् ३८ ॥ सहाय्य पञ्चकलाणैः भंते जीवे किं ज्ञायद् । सहाय्य
पञ्चकलाणैः एगीभावं ज्ञायद् । एगीभाव भूयणं जीवे एगत्वां भावे साणे अप्रसदि अप्रभंभे अप्यकलहे अप्यक

गुणभावं तत्त्वणैः निवर्त्तयति सिद्धनागुण अतिशय भाव उपाजं सिद्धातिशय गुणसंपन्नो जीव. सिद्धनागुणपाश्याधका लोकाग्र मुक्तिपद् मुपगतः जीव
मुक्तिजाइ परमसुखी भवति परमसुखीहीवे ३८ सहाय्य कार्यत्यागेन हे भदतः सहाय्यपञ्चकलाण करतुं जीवः किं जनयति जीवस्युं कर्मउपाजं सहाय्य
प्रत्याख्यानं एकीभावं जनयति सहाय्यं पञ्चकलाण करतु एकीभावपणुं उपाजं एकीभाव भूतः एकलं प्राप्ती जीवः एकीभाव इश्रीधको जीव एकी
आलवनाभावो पपन्नो अल्पशब्दी एकाकी साधु अल्पशब्दुवे पीडी वीले विकल्परहितः वचन कलह अल्पहृवे अल्पकलह. पीडं कलह अल्प कपायः

हे शिष्य साहाय्य प्रत्याख्यानेन एकोभाव जनयति एकोभाव भूतस्य काल प्राप्तीजीव एकाग्र भावयन् एकावल वनल चाभ्यसन् अल्प यद् अल्पजल्पको भवति अल्पभक्तो भवति अविद्यमानभक्तोऽविद्यमानवाक कलहीभवतिषु नरत्पकपायोभवति अल्पकलहीऽविद्यमानरोप शूचकवचनीभवति तथात्स तुम तुमीभवति अविद्यमानन्तु मन्तुम इति त्व त्व इति वाक्य यस्य स अल्प तुम तुम त्व त्व एव एतत्कार्यं कृतवान् त्व एवए सदा अकल्पकारो वक्तुं चेद्दत्तादि प्रत्यपन न करोति पुन साहाय्य प्रत्याख्यानेन स यमवदुलोभवति स याग सप्तदशविध स बहुल प्रचुरीयस्य स मन्थरबहुलकादृशो भवति स ष पुन समाधि वदुलोभवति समाधित्तस्वास्थ्यन्ते न बहुल समाधि बहुल समाधि प्रधानभवति पुन समाहितस्यापि भवति ज्ञान दर्शनवाच्य भवतीत्यर्थं ३८ एव विध साधुरन्तेभक्त प्रत्याख्यानवान स्यात् अतस्तत्फल पृथपूर्वमाह [भक्तपञ्चकखाण्येण भक्ते जीवे कि जगयद् भक्तपञ्चकषु निष् जीवे अणेगाद् भवसहस्राद् निरु भद् ४०] हे भदन्त भगप्रत्याख्यानेन आहारत्यागिनभक्त परिज्जादिनाजीव कि फल जनयति शुक्लराह हे शिष्य भक्त

साए अप्प तुमतुमे सजमवहुले सवरवहुले समाहिण्यावि भवद् ३८ ॥ भक्तपाण्यपञ्चकखाण्येण भ ते जीवे कि जग
यद् भक्तपञ्चकखाण्येण अणेगाद् भवसहस्राद् निरु भद् ४० ॥ सभाव पञ्चकखाण्येण भ ते जीवे कि जगयद् । सभाव

कपाय अल्प इवे अल्पतुमतुम तु कार रहित सजम वहुल सजमवधे सवरवहुल सवरवधे समाधि वहुल समाधिवधे समाधिना वहुलस्यापि बहुल समाधिना भवति समाधि घणी हीवे ३८ भक्त प्रत्याख्यानेन हे भदत जीव कि जनयति भातनी पञ्चकखाण्येण करतु जीव हे पूज्य स्यु कर्म उपाजो भक्त प्रत्याख्यानेन भातने पञ्चकखाण्ये अनेकानिभव सहस्राणि निरुणद्विरु धि ४० सज्ञाव प्रत्याख्यानेन हे भदत जीव कि जनयति सज्ञावनोप्यानेन विधि एक

प्रत्याख्यानेन जीवोत्तिकाणि भवसहयोगि निरुणादि ४० अथ सर्वपूत्याख्याने प्रधानं सज्ञावपूत्याख्याने अतस्तस्य फलं प्रभुपूर्वकमाह [सभावा पञ्चकलाणेणं भवे जीवे किं जर्णयद् सभायापञ्चकलाणेणं अणियद्विजणयद् अणियद्विपडिवन्नेय अणगारेचत्तारिकभासेखवेद् तं जहा वेयण्ज्जं १ आउथं २ नामं ३ गीयं ४ तथोपच्छासिज्जाद् बुज्जद् सुच्चद् परिनिब्बाएद् सच्चदुग्गलाणमातकरेद् ४१ हे भगवन् सज्ञावेन पूत्याख्याने सज्ञावपूत्याख्याने तन्न सज्ञावपूत्याख्यानेन सर्वथा पुनः कारणस्यसम्भवात् इद्वेणेन विधिनानापूत्याख्याने करोति यथापुनः करणीयं नस्यात्प्रत्यनेन सर्वपूकारेणशैलेसीकरणं चतुर्दशशुणस्थाने वर्त्तनेन जीवः किं जनयतिशुसराह हेणियसज्ञावपूत्याख्यानेन अनिद्वन्ति जनयति शुक्लध्यानस्यचतुर्थं भेद जनयतिअनिद्वन्ति प्रतिपन्नः प्रतिपन्नानिद्वन्तिरनगारयत्वारिकेवलिनः कार्माणिानिसानिकर्माणि भवोपगोहीणि चपयतिअंशप्रच्छं सत्पयायीविद्यमानकर्माणि चपयति तानिकाणि चत्वारिकर्माणि तद्यथा वेदनीय कर्म १ पञ्चकलाणेणं अणियद्विजणयद् अणियद्विपडिवन्नेय अणगारे चत्तारि केवलि कर्मसंसे खवेद् इ तंजहा वे यण्ज्जं आउथं नामं गीयं तथो पच्छा सिज्जद् बुज्जद् सुच्चद् परिनिब्बाएद् । सब्ब दुक्कलाणं अंतं करेद् ॥४१॥ पडिरूवया

चित्त राखि सज्ञाव प्रत्याख्यानेन खोटा खभावनी प्रचकलाण करतुं अनिद्वन्ति जनयति अतिद्वन्ति पणुं फामे शुक्लध्याननी चौथोपायो उपजावे शुक्लध्यानस्य तुर्यभेदं अनिद्वन्ति प्रपनीनगार चतुरः केवलकर्मान् स्वकर्माणि चपयति शुक्लध्याननी चौथोभेद प्रागक्षत्री केवली चार कर्म खपावे तद्यथा वे कहेके वेदनीयं वेदनीकर्मां १ आयुकर्मां २ नामकर्मां ३ गीतकर्मां ४ एतानि चपयित्वा ततः पथात् सिज्जाति बुज्जाति मुच्ये परिनिद्वन्तः सर्वदुःखानामंतं करोति एथारकर्मां खपावीने पके सीमे सुंकाये सर्वदुग्गलो अंत करे एत्थारि कर्मां ४१ स्थविर कल्पिकादिस्सहश्रवेप प्ररपति रूप तथा अधिकीप

अप्यु कर्म २ नामकर्म ३ गोलकर्म ४ एतेषां चतुषां अपि कर्मणा चय क्त्वा तत पथात् सिध्यति सकलार्थं साधयित्वासिद्धीभवति ततोऽबुध्यति तत्त्वज्ञोभवति मुच्यते कर्मण्योमुक्तोभवति परिनिर्वृतिं परिसमन्तात् कर्मतापाभावात् शीतलोभवति पुन सर्वदुःखानां अन्त करोति ४१ एतत् प्रत्याख्यान प्रायसो पृतिरूपताया एवस्यात् अत पतिरूपताया' फलमाह [पडिरूपया एण भते जीवे किञ्चयद् पडिरूपयाण साधव ज्ञायद् साहु भूएण जीवे अप्यमत्ते पागडलिङ्गे पसत्थलिङ्गे विसुद्धसमत्ते सत्तसमिति सम्मत्ते सव्वपाणभूय जीवसत्ते सुधीस सच्चिन्नरूपे अप्यपडिलिङ्गे जिद्र दिए विधुल तव समिति समयागए थाविद्वहरद् ४२] हे भगवन् पृतिरूप तया जीव किफल जनयति पृतिरूपताया कीर्थं पृति इति स्वधिरकस्त्रि सदय रूप यस्स स पृतिरूप तस्यभाव पृतिरूपता तया स्वधिरकस्त्रि साधुवेपथारित्वे न जीव किजनयति गुरराह हे भिष्य पृतिरूप तया जीवो लघुल जनयति अधिकोपधित्यागेन लघुल उपार्जयतीत्यर्थं द्रव्यत उपध्यादिपरिपहल्यागेन भावतसु अपृतिवद् विहारत्वेन लघुर्भवति लघुर्भूतश्च

एण भ ते जीवे कि ज्ञायद् । पडिरूपयाएण लाघवियज णायद् । लघुभू एजीवेअप्य मत्ते पागडलिगेपसत्त्वलिगेविसुध सम्मत्ते सत्त समिद्र सम्मत्ते सव्वपाण भूयजीवसत्ते सु वीसमच्चिन्न रूपे अप्यडिलिङ्गे जिद्र दिए विडल तव समिद्र

गर्णत्यागेन जीव कि जनयति स्वधिरकस्त्रो चोदोपगारए राखलुयको जीव सु कर्मउपार्जे प्रतिरूप तया लाघवी भाव जनयति साधुनेअप्यारि रइलुयको लघुर्भूतो जीव वल्लुधो द्वधी जीव अप्यमत्त स्वधिरकत्थादि वेशेन पूगट लिग रजोहरणादिदान् अप्यमत्तयको स्वधिरतो लिग रजोहरणादि भा लिग पूगट राखे पूयसत्तलिग रद्रादिकने पूजयाजीत्य विसुध सम्मत्त परिपूर्णे समिति षड परिपूर्णे सम्मत्तसहित सव्ववलो साहस अने सुमति परि

जीवो अप्रमत्तो भवति तादृशः प्रकटलिङ्गः प्रकटस्थविरकालादिवैषेण स्फुटं लिङ्गं चिह्नं यस्य स प्रकटलिङ्गः पुनः प्रशस्त्रलिङ्गः प्रशस्त्र समीचीनं रजोहरण
मुखपोतिकादिकां यस्य स प्रशस्त्रलिङ्गः पुनर्विशुद्धसम्पत्ती निर्मालसम्पत्ताः पुनः सत्वसमिति समाप्ताः सत्त्वं च समितयस्य सत्वसमितयस्त्राभिः समाप्तः
सपूर्णावैर्यसमिति युक्तद्रव्यार्थः ततः पुनः सर्वप्राणभूतजीवसत्त्वे पु विश्वसनीयः विश्वासायोग्यो भवति पुनस्तादृशोऽल्प प्रतिस्त्रिखः प्रतिस्त्रिखः
अल्प प्रतिलेखो यस्य सोऽल्प प्रतिलेखः अल्पोपकारणत्वात् अल्पप्रतिलेखनावान् भवतीत्यर्थः पुनः स जितेन्द्रियो भवति पुनर्विशुद्धतपः स समिति समन्वागत
स्यापि विहरति विशुलानिस्त्रोर्णांनि तपांसि समितयस्य विशुद्धतपः समितयस्त्राभिरन्वागतः सहित सन् विहरति द्वादशविधेन तपसासमिति
शक्ति सहितीभूलाग्रामनगरादी विचरति ४२ प्रतिरूपतायां अपि वैया ह्यत्वं कर्त्तव्यं अतस्त्वत्फलं आह (वैया वच्चे णभंतजीवे किं जण्यद्द वैयावच्चे
शान्तित्ययरनामगोय कम्प निबन्धे इ ४३) हे भगवन् वैया ह्यत्वेन आहारादि साहाय्ये नजीवः किं जनयति तदा सुरराह हे शिष्य वैयाह्यत्वेन तीर्थकर्तृ
नामगोलं कर्म्म निबध्नाति वैयाह्यत्वं शुर्वन् तीर्थकर्त्तनामगोलं कर्म्मबध्नाति इत्यर्थः ४३ अथ वैयाह्यत्वं सर्वगुणभाक् स्यात् अतः सर्वगुणसम्पन्नतायाः

समन्नागएयावि भवद् ४२ ॥ वैयावच्चे णं भंते जीवे किंजण्यद्द वैयावच्चे णं तित्ययरनामगोयं कम्पं निबन्धद् ४३ ॥

पूर्ण धरे सर्वप्राणभूतजीवसत्त्वे पु सर्वप्राणभूत जीवने विश्वसनीयरूपः विश्वासनी स्थान कहीद् अल्पोपधित्वात् उपगारण धोडाराखे तेषे पडिलेहण
धोडोकरे जितेन्द्रिय इन्द्रो जीव्योक्ते विशुद्धतपः समिति सत्त्वागती युक्तः स्यात् विहरति विश्वोर्णां तपकरे पांच समिति सहितयको विचरे ४२ वैया
ह्यत्वेन हे भदंतः जीवः किं जनयति वैयावच्चे नो करणहार जीवस्य कर्म्मउपार्जे वैयाह्यत्वेन वैयावच्चे करीने तीर्थं करनाम गोलं कर्म्मनि बध्नाति वैयावच्चे

फल प्रप्रपूर्वकमाह (सव्यगुणसम्पदयाएणभतेजीवे कि जणयइ सव्यगुणसम्पदयाएण अपुणरावत्ति जणयइ अपुणरावत्ति पत्तएयण जीवे सारीरमाणसाण दुक्खाण नोभागोभवइ ४४) हे भदन्तस्वामिन् सर्वगुणसम्पदतयाजीव कि जनयति सर्वे च ते गुणाश्च सर्वगुणा ज्ञानदर्शनधारित्रादयस्ते सम्पदता सहितत्वं सर्वगुणसम्पदतातया सवगुणसम्पदतातया सर्वगुणसम्पदतातया कि फल उत्पादयति गुरुराह हे शिष्य सर्वगुणसम्पदतयाजीवोऽपुनराहत्ति जनयति मुक्कि उपाज्जयति अपुनराहत्ति प्राप्नोजीव प्राप्ता अपुनराहत्ति प्राप्नोचोजीव शरीरमानसाना दुक्खाना विभागीनोभवति ४४ सर्वगुण सम्पद तयाधोतरागोभवति अतस्त्वत्फल प्रप्रपूर्वकमाह (वीयराययाएण भते जीवे किजणयइ वीयराययाएणनेहाणुबन्धणाणिय तण्हाणुबन्धणाणिय वोच्छिन्दइ मगुषामपधेससदफरिसरसकवगन्धेसु येव विरज्जइ ४५) हे भगवन् वीतरागतयाजीव कि जनयति यीतोगतीररागोयष्माक्खवीतरागस्सस्य भावोवीत

सव्यगुण सपन्नयाएण भ ते जीवे किजणयइ सव्यगुण सपन्नयाएण अपुणरावत्ति यजणयइ । अपुणरावत्ति पत्तएयण जीवे सारीरमाणसाण दुक्खाण नो भागीभवइ ४४ ॥ वीयरगयाएण भ ते जीवे किजणयइ वीयरगयाएण

करतु तोय कर नाम गोत्र कश्च वाधे ४३ सर्वगुणसपन्न तया हे भदन्त हे पूज्यजिको जीव सर्वगुणिकरी सपूर्णहोइ ते जीव भगवन् सु कर्मउपाज्जे सर्वगुण सपन्नतया सवगुणिकरी सपूणताइ अपुनराहत्ति मुक्कि जनयति अपुणराहत्ति मुक्किप्राप्तिहोइ अपुनराहत्ति प्राप्नो जीव शरीर मानसाना रीयादिन्ना मानसाना दुक्खाना न भोक्का भवति शरीरनारोग मननादु ख तेह्नो भोगवणहर न दुवे ४४ वीतरागया रागहेप रूहित रूपया हे भदन्त जीव कि जनयति रागहेप रूहित हे पूज्य जीवस्स कर्मउपाज्जे वीतरागतया धीतरागपणे स्वे हानुवधनानि स्वे हानुवधण टण्णानुवधनादीनि निराकरोति मननी

रागतातयावोतररातयारागहेषाभावेन किं फलं जनयति गुरुराह हि शिष्य वोतररागतायन्नेहाऽनुबन्धनानि स्नेहस्यश्चतुकृतानिवन्धनानि पुत्रमितकलता
 दिष् प्रेमपाशान् तथाऽऽणावुन्मनानिद्रयादिषुआशापाशान्व्यवहिनति विधेपैशतोऽयति पुनर्मनोजेषु मनोहरेषुचपुनःअमज्ञेषुश्रमनोहरेषु शब्दस्यार्थस
 रूपगन्धेष्वोविरज्यनेविविपयेभ्योविरक्तोभवतीति भावः४५ वीतरागतायुक्तु ग्रामस्य सयुक्तोभवति ग्रामस्यधर्मेष्वान्तिरेव आयाअतस्तत्फलं प्रथमपूर्वकमाह
 (खलित्पणभंते जीवे किं जणयद् खलित्पणं परीसहेजिणयद् ४६) हे भगवन् चान्त्याक्षमयाकत्वाजीवः किं फलं जनयति तदा गुरुराह हे शिष्यक्षमया
 परीपहान् जयति ४६ अथ पुनः क्षमावान् मुक्तिं युक्तोभवतीति निर्लोभीभवति अतस्तत्फलं प्रथमपूर्वकमाह (मुत्तीएणं भंतेजीवे किं जणयद् मुत्तीएणं
 अकिञ्चणंजणयद् अकिञ्चणीणंजीवे अत्यलोभाण पुरिसाण अपत्यणिज्जे भवद् ४७) हे भगवन् मुक्त्यानिर्लोभत्वे नजीवः किं जनयतिगुरुराह हे शिष्य मुक्त्या
 अकिञ्चनत्वं निःपरिग्रहत्वं उत्पादयति अकिञ्चनत्वे नजीवोऽर्थलोभानां अप्रार्थनीयोभवति कौर्धः योऽर्थाक्षनोनिः परिग्रहो भवति स पुरुषोऽर्थलोभो

सख

भाषा

नेहाणुवंधणाशिय तन्हाणु वधणाशिय वोक्किंदद् मणुज्जा मणुज्जेसु सदफरिस रसरुव गंधिसु चैव विरज्जद् ४५ ॥
 खंतीएणं भंते जीवे किंजणयद् खंतीएणं परीसहे जणयद् ४६ ॥ मुत्तीएणं भंतेजीवे किंजणयद् । मुत्तीएणं अकिं

लक्षणातिराकरे दूरिकरे मनोज्ञामनोज्ञेषु भला भूंडा शब्द १ भलाशब्द स्वर्गपरस २ रस ३ रूप ४ गंधेषु गंधने विरहे ५ विरक्तो भवति रोगरहित
 होद् ४५ चांत्या हे भदतजीवः किं जनयति क्षमाकरतु जीव हे भगवन् स्युं कर्म उपार्जे चांत्यापरिखटादिन् जयति क्षमाद् करोने परिसहजीते ४६
 निर्लोभतया हे भदंतजीवः किं जनयति निर्लोभपणं जीव किंस्युं कर्म उपार्जे मुक्तोनिर्लोभपणं अकिञ्चनतां जनयति अकिञ्चन पणुं पामे अकिञ्चनी जीवः

येषां तैर्द्यौलोभा द्रव्याद्यिनयोरादय पुरुषास्तेषां अप्रार्थनीयस्यै रवाण्कनीययोरादयोहि निपरिग्रह किं कुर्वन्ति परिग्रहवता चीरंभ्योभीति स्यात् ४७
लोभेसतिनायास्यात् लोभाभावेमायाभाव मायाया अभवति चार्जव सरलत्व स्यात् अतस्तत्फल प्रथं पृथकमाह (अज्जवयाएण भर्तजीवे किं जणयइ
अज्जवयाएण काउज्जय भाहुज्जुयययभासुज्जुयय अविस्सम्भादएण जणयइ अविस्सम्भादएणसम्मन्नेण जीवेधम्मस्सआराहएभवइ ४८] हे भदन्त चार्जवेनमाया
पारहारेणजोव किं फल जणयति अज्जीर्भाव्य चार्जवत्तेन किं फलमुत्पादयति तदा गुरुराह हे मिय्य चार्जवेन कायजुं कर्ताभाषजुं कर्ता
अविस्सम्भादना जनयति अज्जुरेयअज्जुक् कायेन अज्जुक् कायजुं कस्तस्य भाव कायजं कर्तावकगरीरभूविकारादिरहितत्वेन सरलतामुत्पादयति एय
भावयि चाभिप्रायस्तस्य अज्जुकताभाषजुं कर्ताता भाषजुं कर्ता चित्तसरलता उत्पादयति पुनर्भाषाया वचनस्य अज्जुकताभाषजुं कर्ता वचनसरलत्वं
उत्पादयति पुनरपि सम्भादन परजोवानां अवचनत्व जनयति प्राप्ताविसम्भाद कायेनवाचां मनसासप्राप्ताविसम्भाद परवचकतारहितोजीवो धर्मस्य

एण जणयइ । अकिचणेय जीवे अत्य लोलाणपुरिसाण अपत्यणिज्जे भवइ ४७॥ अज्जवयाएण भर्ते जीवे किजणायइ
अज्जवयाएण काउज्जुयय भावुज्जुयय भासुज्जुयय । अविस्सवायणजणयइ अविस्स वायण सपन्नएयण जीवे धम्मस्सा

अकिचन अर्थरहित जोव अर्थलोभादीनां चीरादीनां अर्थनालोभो चीरादिक पुरुषाना अप्रार्थनीयो अनभिलिखनीयो भवति पुरुषाने अप्रार्थनीक अभि
लिखणोक्तेर ४७ अजवेन हे भदतजोव किं जनयति सरलपणेजीव हे पूज्य किंसु कर्मउपाजं चार्जत्तेन सरलपणेकरोने काय प्रांजलिपुट कायानो
सरलपणो भाषा सरलता भाषानु सरलपण भाषाजकतां अनेभाषनु सरलपण अविस्सवादन पर विप्रतारण वर्जने जनयति आगस्थाने विप्रतारे

वोतरागधर्मस्याराधको भवति ४८ एव आर्जवगुणयुक्तेन मार्दवं विधेय अतीमार्दवं फल प्रशपूर्वकमाह मार्दवं हि मानत्यागरूपं तत्तु विनयस्य कारणं धर्मो हि विनयस्य प्राधात्वम् [मद्वयाएण भन्ते जीवे किं जणयइ मद्वयाएण जीवे अणुस्सियत्तं जणयइ अणुस्सियत्तेणं जीवेन्नियममद्वयसम्भवे अट्टमय द्वाणाइनिद्वेइ ४९] हे स्वाभिन् मार्द्वेनकोमलपरिणामिनजीवः किं जनयति गुरुराह हे शिष्यमार्द्वेनमानपरिहारीणजीवः अनुत्सृतत्वं अनहं कारित्वं अहङ्काराभावं जनयति अनुत्सृतत्वेन अहङ्काराभावेन जीवोऽहङ्कारोमलः सकलभज्यजनमनसत्तोपहेतुत्वात् द्रव्यतीभावतश्च सरत्तोऽव्यवभन शीलः सद्दीर्घार्थोमार्द्वं सदुत्तुणमार्द्वं वगुणयोर्यभेदं अवसरे अवनमन सदुत्तुणं यत्तर्कदाकोमलत्वभवनं तत् मार्द्वं यद्वाकायेन मानत्यागोऽदुत्तुणः मनसामानपरिहारीमार्द्वं ताभ्यां सम्भन्नो भवति संयुक्तो भवति तादृशः सन् अर्थात्मदस्थानानि निद्रापयति क्षपयति ४९ एतत् प्रायः सत्यसंस्थितस्य

आराहए भवइ ४८ ॥ मद्वयाएणं भंते जीवे किंजणयइ मद्वयाएणं जीवे अणुस्सियत्तं जणयइ अणुस्सियत्तेणं जीवे
स्मितमद्वव संपन्ने अट्टमयद्वाणाइं निद्वेइ ४९ ॥ भावसञ्चेणं भंते जीवे किंजणयइ भाव सञ्चेणं भावविसोहिंजणयइ

नही पर जीवने ठगनही परसुं हे परासे नही अविस्वादन संपन्नो जीवः धर्मस्य आराधको भवति धर्मानां आराधकरूपे ४८ मार्द्वत्वेन हे भद्रत जीवः किं जनयति अहंकार रहित जीव हे पूज्यस्य फल उपाजो मार्द्वत्वेन शुकोमलत्वं सदुजीवः कपायरहित जीव अशुक्तु फलं जनयति अनुक्तु क पणुं उपाजो अनुक्तु कालेन जीव उत्तु कपणे रहित जीवः सदुमार्द्वं संपन्नः प्राणइओधकां अट्टमदस्थानानि निद्रापयति क्षपयति आठमद स्थानक खपावे ४९ भावसत्त्वेन हे भद्रत जीवः किं जनयति साचेभावे वत्तंते जीवस्युं फल उपाजो सत्यभावे साचेभावे विशुद्धिभावे सुदभावे करोते

साधोभयति सत्येपु भावसत्यमेव प्राधाय अतस्तत्फल प्रश्नपूर्वकमाह [भाव सच्चै ष भन्ते जीवे कि जणयद् भावसच्चै ष भावविशोहि जणयद् भावविशो
होएयद्भावे जीवे अरह तपवत्तस्माधम्मस आराहणयाए अम्मुद्देइ अरह तपवत्तस्माधम्मस आराहणयाए ष अम्मुद्दितापरलोगस धम्मस आराहए
भवद् ५] हे भदन्तभावसत्ये नभावेअभ्यन्तराकतिसत्य भावसत्य तेन भावसत्ये नजीव कि फल जनयति गुरुराह हे शिष्य भाव सत्ये न जीवो भाव
विशुद्धि जनयति निर्मलाध्यवसाय जनयति भावविशुद्धो वर्त्तमानोऽहंत् प्रश्नस्य श्रीकिनप्रणीतस्य धर्मस्य आराधनायैअभ्युत्तिष्ठति सावधानो अयति
‘अहंत् प्रश्नस्य धम्मस आराधनायै अभ्युत्थायसावधानोभूत्वापरलोकै धर्मस्याराधकोभवति परलोकै सम्यगाति प्राप्यधर्म आराधयतीत्यर्थं ५० भावसत्य
ष करणसत्ययुक्ते सभयति अत करणसत्यस्य फल प्रश्नपूर्वकमाह [करणसच्चै ष भते जीवे कि जणयद् करणसच्चै ष करणसत्ति जणयद् करणसच्चै ष
इमाणेजहायार्तहाकारी भावि भयद् ५१] हे भदन्तकरणसत्ये नजीव कि जनयति करणेप्रतिलेखनादि क्रियाया सत्य यथोक्तविधिना आराधन

भावविशोहिए वट्टमाणे जीवे अरिहत पन्नतस्य धम्मस आराहणयाए ष अम्मुद्देइ अरहत पन्नतस्य धम्मस आराहण
याए ष अम्मुद्दिता परलोगस्य धम्मस आराहए भवद् ५० ॥ करणसच्चै ष भ ते जीवे किजणयद् करणसच्चै ष करण

जनयति भाव विरुद्धावर्त्तमानो जीव भाव विशुद्धि वर्त्ततो जीव अहंत् प्रश्नस्य धम्मस्य केवलीना भाष्याधम्मनो आराधनया अम्मुत्तिष्ठति तेहने आराध
याभूणि कटे उठीने अहंत्तथास्य अरिहतना कथा धम्मने आराधन तथा अभ्युत्थाय आराधया भणो कठीने साधू परलोकस्य आरधको भवति
परभवन्तो आराधकरुवे ५० क्रियासत्ये वर्त्तमान भदन्तजीव किजनयति साधो क्रियाकरतु जीव हे पूज्य किस्सु, कर्म उपाजिं प्रतिलेखनयादि

करणसत्यं येन करणसत्येन जीवः किं फलसुपाज्जयति तदा शुभराह हे शिष्यकरणसत्येन करणशक्तिं क्रियासामर्थ्यं जनयति पुनः करणसत्ये वर्त्तमानो जीवो यथावादीतधाकारी भवति श्रियासत्यः शुभान् यादृशं सूत्रार्थं पठति तादृशं क्रियाकलापं वदति तथैव करोति इति भावः ५१ एवं विषयस्य योगसत्यमपि स्यात् अतो योगसत्यस्य फलं प्रत्यपूर्वमाह (योग सत्त्वेण भंते जीवे किं जणयद् जीगसत्त्वेणं जोगविसोहद् ५२) हे भद्रन्तयोगसत्ये न मनोवाक्यायोगानां सत्यं योगसत्यं तेन योगसत्येन मनोवाक्यायसाफल्येन जीवः किं जनयति तदा शुभराह हे शिष्य योगसत्येन योगान् विशोषयति मनोवाक्, काययोगान् विशदीकरोति कर्मबन्धाभावात्निर्दोषान् करोतीति भावः ५२ इदं सत्यं हि शुभि संहितस्य भवति शुभीनां आर्दामनीशुभिरस्ति तस्मात् पूर्वं तस्याः फलं प्रत्यपूर्वमाह (मणशुत्तयाएणं भंते जीवे किं जणयद् मणशुत्तयाएणं जीवेणगा जणयद् एगगच्चित्तेणं जीवेमणशुत्तं सत्त्वमाराहए भवद् ५३] हे भद्रन्त मनोशुभं तथा जीवः किं जनयति तदा शुभराह हे शिष्य मनोशुभं तथा जीव एकायं धर्मं एकाक्त्वं उपार्ज्जं

सत्तिं जणयद् करणसत्त्वे वट्टमाणे जीवे जहावार्दं तहाकारीयावि भवद् ५१ ॥ जोगसत्त्वेणं भंते जीवे किंजणयद् जोगसत्त्वेणं जीगे विसोहिद् ५२ ॥ मणशुत्तयाएणं भंते जीवे किं जणयद् मणशुत्तयाएणं एगगं जणयद् एगगं

यथोक्तं जनयति साची क्रियाकारतु करण सत्तरी पामे करणसत्ये वर्त्तमानो जीवः साची क्रियाने विखे वर्त्तती जीव यथोक्तं क्रियाकथनशीलः तथा वादीतथैव करणशीलो भवति जीहवो कहे तहयो पालती करणशत्तरी आराधे ५१ योगसत्येन हे भद्रन्तजीवः किंजनयति मनवचनकाया सूधां प्रबर्त्तयतु जीवस्य, फल उपार्ज्जं योगान् मनोवाक्यायरूपान् निर्दोषान् करोति योग मनवचनकायाद् करीने निर्दोष करे ५२ मनः संवरेण मनोशुभि तथा

८ टीका

५ ८

८१५

यति एकाग्रचित्तं जीवो गुणमन सन् सद्यस्य आराधक पालको भवति ५३ अथ चो गुप्ति फलमाह [यद्युत्तया एण भते जीवे किं जणयद यद गुत्तया एण निव्विकारस जणयद निव्विकारिण जीवे यद गुप्ते अक्कण जीग साहण जुत्ते अथि भवद ५४] हे भदन्त यधी गुत्तया जीव किं फल जनयति गुराह इ गिण्य यधी गुत्तया निव्विकारिच विरागभाव उत्पादयति निर्कारो जीव यत्तात्त गुत्तयचनय सर्वधिकयात्वात्तात्त वाग्निरीधोगुप्तिमान् सन् यथा सर्वोत्साधनगुत्तयापि भवति अक्कणि अथि तिष्ठतीति अथाक्क मनस्सस्य योगा शुभव्यापाराधर्मव्यानादय तेषा साधन एकाया अथाक्कयोग म, १११ नेन भूत्त यत्तात्तयाग गुत्तन्ताट्टयागिण स्यात् ५४ यथा दतीयगुत्ते फल प्रशपूर्वमाह (काय गुत्तया एण भते जीवे किं जणयद कात्तगुत्तया एण सन्मर जणयद सर्वेष कायगुत्ते गुणोत्पायासवनिरीह करिद ५५) हे भदन्त कायगुत्तात्तया जीव किं जनयति गुराह हे त्रिथकाय

चित्तं जीवे मया गुत्तिसज्जमा राहए भनद ५३ ॥ वद गुत्तया एण भते जीवे किं जणयद । वद गुत्तया एण निव्विकारस जणयद ।

निव्विकारिण जीवे वद गुत्ते अक्कण जीग साहण जुत्ते यावि भवद ५४ ॥ कायगुत्तया एण भते जीवे किं जणयद । कायगुत्तया एण

५५

भाषा

हे भद्रतजो १ किन्नमवति मन आपणो सधो प्रथर्त्तितु किस्स, कर्म उपाजं मन गुप्ति तया जीव मनवसिकोयायका एकाग्रभाव जनयति एकाग्रभाव जप जावे एकाग्रचित्तो जीव शुभाध्ययसायचित्त सन् सद्यमा राधको भवति एकाग्रचित्त यको जीव सत्तरे भेदे सद्यमनो आराधक इति ५३ यागमि तया भूत्तजो य किं जनयति यचनगुत्तपणे यत्तु जीव किस्स, फल उपाजं वाग्नि तया निर्विक्कार जनयति यचनगुत्तपणे करितु विकारपणे रक्षित होइ निव्विकारिण निव्विकारपणे जीव यत्तात्तिस यचनगुत्तिस अथाक्कयोगसाधनाय गुत्तयापि भवति भूत्ताध्ययसायने रुधे ५४ कायगुप्ति हे भदन्त

गुप्ततयाजीवः सन्नर जनयति सन्नरेणगुप्तकाय पुनः पापाश्रयनिरोधं करोति ५५ अथ गुप्तिलय धारकस्य साधोर्मनीवाकायाना समाधारणाभवति
 अतस्तत्फल प्रशपूर्वकमाह [मणसमाहारणयाएणंभते जीवे किं जणयइ मणसमाहारणयाएणं एगणं जणयइ एगणंजणइतानाणंपज्जवेजणयइनाणपज्ज
 वजणइत्ता समत्तं विसीहिइमिच्छत्तं च निज्जरेइ ५६] हे भदन्तमनः समाधारणयाजीवः किं जनयति मनसः सस्यक् प्रकारेण आसर्वाद्यासिद्धान्तीक
 मार्गश्रुभिव्याप्यवाधारणास्थापनं मनः समाधारणातयाजीव किं फलमुत्पादयति तदा गुरराह हे श्रियमन समाधारणयामनसोमर्यादायारक्षणेन
 एकाग्रं धर्मस्यैयं जनयति धर्मं एकाग्रं उत्पाद्यज्ञानपर्यायान् जनयति विप्रिष्टान् मतिज्ञानभूतज्ञानादीनां पर्यायान् तत्रा वा वीधरूपान् विशेषान्
 संवर जणयइ । संवरैणंकायगुत्ते पुणेपावासावनिरोहंकरेइ ५५॥ मणसमाहारणयाएणं भंतेजीवे किंजणयइ । मणसमाहार
 णयाएणं एगणं जणयइएगणं जणयइतानाण पज्जवेजणयइत्तासमत्तंविसीहिइमिच्छत्तं चणिज्जरेइ ५६॥

कायगुप्तपणे राखतुं जीव . किजनयति जीवस्यु फलउपर्जाकायगुप्ता कायानी गुप्तिंश्रुभयोग निरुंधयति संवरजोगअपजावे सवरैणजीवः कायगुप्तःसन्
 पापाश्रयनिरोधं करोति कायगुप्तधर्को जीव पापाश्रयने रुधे ५५ मनः समाधान तया मनने समाधान पणे हे भदन्तजीवः किजनयति हे पूज्यजीवस्यु
 फलउपर्जा मनःसमाधां न तया विप्रिष्टतर मनसावधान पणे राखतु एकाग्रं जनयति एकाग्र पणुं पासे एकाग्रं जनयित्वा एकाग्रपणुं अपजावी
 ज्ञानपर्यायान् जनयति ज्ञानना पर्यायने अपर्जा ज्ञानपर्यायान् उत्पाद्य ज्ञानना पर्यायने अपजावीने सस्यक्तां विप्रोधयति सस्यक्तां निर्मल करे
 मिथ्यात्वं च अपयति मिथ्यात्वेने खपवे ५६ वाक्समाधारण तया साध्यादे स्थापनरूपया हे भगवन् वचनसमाधान राखतां जीवः किं जनयति जीवस्यु

जनयति पुन सभ्यज्ञ विभुवि जनयति मिथ्यात्व च निर्जरयति निवारयति ५६ वच समाधारणाया अपि फलमाह (वय समाहरणयाएण भवे जीये कि जणयइ वयसमाहारणयाएण वयसमाहरणदसण पज्जवे विसीहेइ वयसमाहरणदसणपज्जवेविषीहिंसा सुलभवी हि यत्त निव्वत्तेय दुल्लहवोहिंयत्त निज्जरैइ ५७] हे भगवन् सिजान्तीह्मभर्णे वचन समाधारणयास्वाध्याये एव याग निवेसनेन जीव कि फल जनयति तदा गुरुराह हे शिष्यवच समाधारणया वाक् साधारण्यदर्शनपठवान् विप्रोषयति वाचा साधारणया वाक्साधारणया वाचाकथयितु योग्या ये पर्यया श्यत् विशेषा तथा दर्शनस्य सभ्यज्ञस्य ये पर्ययाभेदास्तान् विप्रोषयति निर्मलीकरोति यतीहि वाक् समाधारणा कुर्वन् स्वाध्याय करोति स्वाध्याय कुर्वन् द्रव्याशुयोगाद्यभ्यास विदपत् अकियस्मीभूलाश्रद्धादि दीपान निवारयति अत सभ्यज्ञ निर्मल करोति यती वाक् साधारण्यदर्शनपठवान् विप्रोष्य सुलभवोषिल नियत्तंयति सुलभवोषि परभवैजैनधर्मप्राप्तियंस्य स सुलभवोषिलस्व भाव सुलभवोषिल तत् उत्पादयति दुलभवोषिल निर्जरयति ५७

वदसमाहारणयाएणभते जीवे किजणयइ । वदसमाहारणयाएण वयसमाहारण दसणपज्जवेविषीहेइवयसमाहारण दसण पज्जवेविसाहिंसा सुल्लहवोदिंयत्तनिव्वत्तेइ दुल्लह वोहिंयत्त निज्जरैइ ५७ ॥ कायसमाहारणयाएण भ ते जीवे किजणयइ ।

फलउपाजं वाक्समाधारणतयाजीव वचनरु धे जीववचसां विषयान्सभ्यज्ञोदानविप्रोषयति वचननाभेदविषयसभ्यज्ञनाभेदतेहनेप्रोषेवचस साधारणान् वचनेकहवाजीव्य दर्शनपयायान्प्रियोष्य समकितनापर्याय निर्मलकरीनेसुलभवोषिलत्व निवर्त्तयति सुलभवोषिपणु उपाजं दुर्लभवोषिलत्व निर्जरयति अथ यतिदुलभवोषिपणु निर्जरये ५७ कायसमाधारणतया हे भदतकाय समाधारणे हे पूज्यजीव किजनयतिजीवस्य फलउपाजं कायसमाधारणतयाकाया

[कायसमाहारणयाणंभवे जीवे किं जणमद कायसमाहारणयाणं जीवे चरितपञ्चवे विसाहद चरितपञ्चवेविसं, ता अहकखाय चरितं विसीहेद अहखाय चरितं विगोहिना चत्तारे केवल कम्मसेखवेद तथीपक्कासिज्जद बुद्धे सुच्चद परिनिव्वारद सव्वदुक्खाण मंतकरेद ५८] हे भगवन् कायसमाधारणयाजीवः किं जनयति कायस्य समधारणा संयमयोगेषु देहस्य सव्यगु व्यवस्थापनाकायसमधारणतयाजीवः किं फलमुत्पादयति तया गुणरत्नं हे श्रियकायसमाधारणाचारित्र्य पर्यवान् चारित्र्य भेदान् जायोपशमिकान् विशोधयति चारित्र्य पर्यवान् विशोधयथाख्यातचारित्र्यं दिशोधयति यथाख्यातचारितं निर्मलं कुरुते ननु यथा ख्यातचारित्र्यं अविद्यमानं कथं निर्मल भवति अतीतरं यथाख्यात चारितं सर्वथा अविद्यमानं नास्ति अविद्यमानस्य निर्मलवासभदान् तस्मात् यथाख्यातचारित्र्यं पूर्वं अस्ति परं चारितकीहनीयेन मलिनमस्ति तदेव यथा ख्यातचारितं चारित्र्य मोहोदय निर्जरिण निर्मलो कुरुते यथा ख्यात चारितं विशोय च केवल सत्कर्मिणान् चचारिविद्यमानकर्मिणि घनघातीयां निवेदनोयां

कायसमाहारणयाणंचरितपञ्चवेविसोहेद । चरितपञ्चवेविसेहित्ताअहकखायचरितं विसीहेदअहकखायचरितं वि
साहिता । चत्तारिकेवलिकम्मंसेखवेदतथो पक्कासिज्जद बुद्धे सुच्चद परिनिव्वारदसव्वदुक्खाण मंतकरेद ५८ ॥

सयमयोगेन विश्वेराखताजीव, चारित पर्यायान् विशोधयति चारितनाभेदने सीधे चारित पर्यायान् विशोधयित्वा चारितनापर्यायने विशुद्धकरीने यथाख्यातं चारित्र्यं ख्यात चारितने शोधि यथाख्यात चारित्र्यं विशोध्य यथाख्यात चारितनाशरीचरने शोधीने चतुरः केवल कर्मिं शान् चपयति चार केवलीतया विशोधयति यथाकर्मिशुखपावेततः पश्चात्किञ्चानातिवारेपक्षीसीमेतुपयति सुच्यते परिनिव्वारितसंसारसागरधीसुं कादसर्वदुःखानां शंतं करोति सवत्सादुक्खनी शंतं करे ५८

शुनामगोच लक्षणानिचपयति तत सिध्यति सुच्यति परिनिर्वायपति सर्वदृखनामत करोति ५८ एय समाधारणात्रय सुक्री यथा क्रम ज्ञानादित्रयस्य सम्पन्नताया फल प्रथ पूर्वकमाह (नाणसम्पन्नयाएणभते जीवे कि जणयइ नाणसम्पन्नयाएण जीवे सव्वभायाविगम जणयइ नाण सच्ययेयण जीवे चाउरत्त ससारकत्तारेन विणसइ जहासुईससुत्तापडियाविनविणसइतहाजीयो ससुत्तो ससारिन विणसइ णाणविणयतवचरित्त जोग सम्पाउणइ स समयपरसमयविसारए मयायणिल्लेभवइ ५९) हे भदकज्ञानसम्पन्नतयाज्ञानस्य श्रुतज्ञानस्य सम्पन्नता श्रुत ज्ञानसम्पत्तिस्तयाजीव कि ग्ल जनयति तदा गुरुइ हे शिष्य श्रुतज्ञानसम्पन्नतयाजीव सर्वभायाविगम सर्वे च ते भावाय सर्वभाया जीवाजीयादयस्तेपा श्रिभिगम सर्वभाया भिगमस समभायाभिगम जोयाजोयादित्तलज्ञान जनयति तथा ज्ञानसम्पद्यो जोषयतुरत्त ससारकत्तारे चतुर्गत्तिल्लक्षणे ससारवनेन विनस्यति मीघातु विधेपेणूरस षट्ठयोमयतितथाहि ससुत्तासुत्तोक्कचवरदिदय पतिततासतो नस्यति षट्ठयानमयति नाग्रन प्राप्नोति तथा जीवोपि ससुत्त श्रुतज्ञानसहित

नाण सपन्नयाएण भ ते जीवे किज्जाइ नाण सपन्नयाएण जीवेसव्वभावाभिगम जणयइ नाणसपन्नयेयणजीवे चाउरत्त
ससार कत्तारे नयिणइ जहासुई ससुत्ता पडियाविनविणसइ । तहा जीवा ससुत्तो ससारि नविस्सइ नाणं विणय

यतज्ञानमगु तया हे भगव श्रुतज्ञानसपूष्णं पणे हे पूज्यजीव किजनयति जीनस्य कर्मउपाजं श्रुतज्ञानसपूष्णं तथाज्ञानवतजीवसर्वजीवादि तत्त्वज्ञानजन गतिसव्वजोपनु स्वरुपगणी ज्ञानसत्तां जीव ज्ञानकरो सपूष्णजीव चातुरत्त ससारकातारे भवारख्ये विनाग्रन प्राप्नोति चतुर्गत्तिससाररूप षट्ठवीमाहि विनसे नष्टो यथा शूषो स सुत्ता दवरकसहितता जिम सुइदोरासहित कचवरे पतितता न विनस्यति कचरामाहि पडियकी योषसेनही तथा जीवोपि

ससारविमर्दि न भवतीतिभावः ततश्श्रुतज्ञानविनय तपधारितयोगान् सप्राप्नोति ज्ञानं च विनयश्च तपश्चारितयोगाच्च ज्ञानविनयतपधारितयोगास्त्वान्
सम्यक् प्रकारेण प्राप्नोति तत्रज्ञानं प्रवध्यादिविनयः प्रसिद्ध तपोवाद्भविविधचारित्रव्यापारास्त्वान् सर्वानूलभते पुनः श्रुतज्ञानीस्वसमय परस्समयसघातनीयो
भवति स्वमतपरमतयोः सघातनीयोमीलनीयः स्यात् एतावतात्ममतपरमताभिन्नत्वेन प्रधानपुरुषत्वात् पस्तिरूपेण गणनीयो भवतीति भावः ५८ दसणस
म्यत्रया एणभर्तुर्वि किंजणयद् दंसणसम्यनयाएण भवमिच्चत्तच्छेयणकारेद् परं नोविज्ज्ञाद् परं अणुज्जायमाणे शरुत्तरंण नाणदंसणेषं अण्णायंसत्तोए
माणि सगा भाविमाणिविन्नरद् ६०] हि भगवन् दर्शनं सम्प्रदातादर्शनस्य धार्योपयमिक्तस्य सम्प्रदातादर्शनं सम्प्रदातात्तादाचार्योपशमसम्यक् संहितत्वेन जीवः
किं फलं जगदति तत शुरुत्तरसारं हि शिष्यदर्शनं सम्प्रदाताया जीर्वा भवमिष्यात्तच्छेदनं करोति भवस्य हेतुर्वैत् मिष्यात् तस्य च्छेदनं करोति अर्थात्

तत्रचरित्तजोनि संपाड्याद्द ससमयपरसमय विसारसंघादयिज्जी भवद् ५८॥ दंसण संपन्नयाएणं भर्तुर्वि किंजणयद्
दसणसपन्नयाएणं भवमिच्छत्तच्छेदयाकारेद् । परं नोविज्ज्ञाद्द परं अणुज्जायमाणे अणुत्तरंण नाणदंसणेषं अण्णायंसत्तो

स ह्यत्र तपयुक्तः जिम जीम सिदततसहित संसारं विनर्याति ससारमार्गि शिष्येनही ज्ञानविनय तपः चारित्तयोगान् प्राप्नोति ज्ञान विनय तप चारि
तनायोग ते प्रती पासे स्वसमयपर समय निगुण सत् पराताना गार्तनविर्त्त परना गार्तनविर्त्त चतुर हुवे पटितेषु संघातनीयः गुणनयोश्चो भवति प्रधान
पुरुष होद्द अहोलिणोक्तनदीद् आप पूज्यजागोस्य हुवे शुभिकरो दोन्महवे ५८ दर्शनसम्प्रदाता भगवन् जीधः किं जनयति धार्यापशमम कित्तनेप्रमाण करी
भगवन् जीधस्व कर्मउपार्जि दर्शनसपन्नतया दर्शन सपन्नताद् भवहेतु मिष्यात्त तेषुनोश्चेत्कारं परं छप्सरकाले आगामिं

अपयितासिद्धिं प्राप्नोति ब्रूयति तालज्ञीभवति मुख्यते कर्मभ्योसुक्तोभवति परिनिर्वाति कपाथाने रुपशमाप्तीतलीभवति सर्वदुःखाना अन्तं करोति ६१
 यथा चारिते सतिपञ्चेन्द्रियनिगहोयुज्ज्वलं ततस्तत्प्रलं प्रथमपूर्वकमाह [सोऽन्द्रियनिगहणं भवेत् जीवे किं जणायइ सोऽन्द्रियनिगहणं मणुष्यामणुषे सुसहे सुराग
 ोसिनिगहणायइ तपपगइय काथां न बन्धइ पुब्ववइ च निज्जरइ ६२] हे भदन्त हेत्याभिन् शोतेन्द्रियनिग्रहणकारणेन्द्रियविजयेनजीवः किं जनयति
 तशा गुरराह हे शिष्य शोतेन्द्रियनिग्रहणमनोज्ञामनोशेष् यन्देयु रागहेपनिग्रहं जनयति युनं रागहेपमाधेसति तत् प्रलयनैमित्तकं कर्मनवभाति
 पर्व्वन्नइ रागहेपोपाजितं कर्मनिर्जरयति यपयति ६२] चक्खिन्द्रियनिगहणं भवेत् जीवे किं जणायइ चक्खिन्द्रियनिगहणं मणुष्यामणुषे सुरे सुगगहो
 सनिगहं जणायइ तपवइयं काथां न बन्धइ पुब्ववइ च निज्जरइ ६३] हे भदन्त हेत्याभिन् चक्षुरिन्द्रियनिग्रहणजीवः किं जनयति तदा गुरराह

एइ सव्वदुक्खाणा भंतं करेइ ६१ ॥ सोऽन्द्रिय निगहणं भवेत् जीवे किं जणायइ सोऽन्द्रिय निगहणं मणुन्ना मणुन्नेसु
 सहसु रागहोस निगहं जणायइ । तपइइयं काथां नवंधइ पुब्ववइ च निज्जरइ ६२ ॥ चक्खिन्द्रिय निगहणं भवेत्

रंहे सोभो वृत्ताति इभो परिनिर्व्याति सर्वदुक्खाना अंतं करोति सर्वदुःखानो अंतं करे ६१ शोतेन्द्रिय निग्रहेन हे भगवन् जीवः किं जनयति कान
 थापणी यथिकाएण जीव स्यां कर्मउपाजो शोतेन्द्रिय निग्रहणजिघासे शोतेन्द्रियनी निग्रहकरेतरा मनोप्रा मनोभ्यु तिचारं भलासुं छाने चिसुे यन्देयु रागहेप
 निग्रह जनयति भला सुंछा यन्दे कपांरं रागहेपन थाणे तणायं कथंनअभाति तेइ रागहेप स यधीउ कर्मवाधि नही पूर्ववइ च निर्जरयति पश्चिनां जी
 कर्म वांधाके ते निर्जरि ६२ चक्षुरिन्द्रिय निग्रहण भगवन् जीवः किं जनयति च्छिद्यसि कीपायका जीवसुं कर्मउपाजो चक्षुरिन्द्रिय निग्रहणं प्रांखि

हे मिथ्य चक्षुरिन्द्रियनिग्रहेण मनोश्चामनोक्षेप रूपेण रागाद्वेपजय जनयति ततश्च तत् प्रत्ययिक रागाद्वेपोत्पन्न कर्मनवभाति पूर्ववत् रागाद्वेपोपार्जित कर्मनिर्जरयति यथाप्यति ६३ (धाणिन्द्रियनिग्राहेष भवेत्जीवे किं जणयद् दधाणिन्द्रियणिग्राहेण मणुष्यामणुषेसुगान्धे सुरागाद्वोसनिग्राह जणयत्तत्पञ्चदश कश्च न वन्त्यद् पुञ्चवन्त्य च निज्जरेद् ६४) हे भदन्त हे स्वामिन् दधाणि द्वियनिग्रहेण जीव किं जनयति गुरुर्वदति हे शिष्यदार्पणिन्द्रियनिग्रहेण मनोश्चामनोक्षेपु गान्धेपु रागाद्वेप निग्रह जनयति ततो रागाद्वेपजयत् रागाद्वेपोत्पन्न कर्मनवभाति पूर्वोपार्जित कर्मनिर्जरयति ६४ [जिभिन्द्रियनिग्राहेष भवेत्जीवे किं जणयद् जिभिन्द्रियनिग्राहेण मणुष्यामणुषेसु रसेसुरागाद्वोसनिग्राह जणयद् तत्पञ्चदश कश्च न वन्त्येद् पुञ्चवत् च कश्चानिज्जरेद् ६५] हे भदन्त

जीवे किं जणयद् । चकिञ्चद्विय निग्राहेण मणुष्वा मणुष्सेसु रसेसु रागाद्वोस निग्राह जणयद् तत्पञ्चदश कश्च नवधद् ।
पुञ्चवत् च निज्जरेद् ६३॥ दधाणिन्द्रिय निग्राहेण भवेत् जीवे किं जणयद् । दधाणि द्विय निग्राहेण मणुष्वा मणुष्सेसु गान्धेसु
रागाद्वोस निग्राह जणयद् । तत्पञ्चदश कश्च नवधद् पुञ्चवत् च णिज्जरेद् ६४ । जिभिन्द्रिय निग्राहेण भवेत् जीवे

यसि कोधाद्यका मनोश्चा मनोक्षेपु रूपेण भूत्वा रूपेण विद्ये रागाद्वेप निग्रह जनयति रागाद्वेप जीवे तत् प्रत्यय नवीन कश्चानवभाति ते ह्यधीनवा कश्चानवधाधि पूर्ववत् च निज्जरेत् रयति पेशलावाध्याकश्च निज्जरेत् ६३ एवमपार्पणिन्द्रिय निग्रहेण जीव किं जनयति नाग्रिकावसि कोधि जीवस्य कर्मउपार्जित दधाणिन्द्रिय निग्रहेण नाग्रिकावशिकरिव मनोश्चा मनोक्षेपगधेपमलाभूत्वागधने विद्ये रागाद्वेप निग्रह जनयति रागाद्वेपनोनिग्रहकरे तत्प्रत्ययनवीनकश्च न वधाति तेह स यधीकश्चानवधाधि पूर्ववत् च निज्जरेत् ६४ जिभिन्द्रिय निग्रहेण भवन् जीव किं जनयति रसेसुरोपशिकरत् जीवस्य कर्मउपार्जित जिभिन्द्रिय

जनयति क्रोधविशयोद्यत्तिमान् भवति इत्यर्थं पुन क्रोधवदनीय कर्मनवधाति क्रोधोदयेनवेद्यते इति क्रोधवदनीय क्रोध हेतु भूत पुनसरूप मोह
 नोयकस्यभेद न वधाति पूर्ववद च कर्मनिर्जरयति ६७ (साधविजएणभते जीवे कि जणयइ माणपिअएण मइवजणयइ माणवेयणिज्ज कम्म न बन्धइ
 पुब्बवइ च निज्जरइ ६८] हे भगवन् मानयिजयेनजीव कि फल जनयति गुरुराह हे शिष्यमानविजयेनजीवोभार्यं सुकुमासत्व जनयति मान
 षिजयात् नमनयोत्तोभवतीति भाव पुनर्मनिनमानादयेनवेद्यते इति मानवेदनीय कर्मनवधाति पूर्ववदश्च कर्मनिर्जरयति ६८ [साधविजएणभत
 जीवे कि जणयइ मायाविजएण उज्जुभायजणयइ मायावेयणिज्ज कम्म न बन्धइ पुब्बवइ च निज्जरइ ६८] हे भगवन् साधविजयेनजीव कि
 जणयइ कोह विजएण खति जणयइ । कोह वंणिज्ज कम्म नव धइ पुब्बवइ च निज्जरइ ६७ ॥ साध विजएण भते •
 जीवे किजणयइ माण विजएण मइव जणयइ माणवेयणिज्ज कम्म नवधइ पुब्बवइ च निज्जरइ ६८ ॥ माया विज
 एण भ ते जीवे किजणयइ मायाविजएण उज्जुभाव जणयइ माया वेयणिज्ज कम्म नव धइ पुब्बवइ च निज्जरइ ६८ ॥

जीव कि जनयति क्रोधजोपयु भगवन् स्य कर्मउपाजं क्रोधविजयेन चमा जनयतिक्रोधजीतये चमा उपजे क्रोधविजये न वेदनीय कर्मनवधाति क्रोध
 जोतये धेदनी कर्मन याधि पूयवइ च निज्जरयति पूव याथा कम्मं निज्जरइ ६७ मानविजयेन हे भगवन् जीव कि जनयति मानविजयेन मानने
 जालकरीते भाइव जनयति मादयपए उपाजावे मान वेदनीय कर्म न वधाति न वाधि पूर्ववद च निज्जरयति ६८ माया विजयेन हे भदत जीव
 कि जायति मायाजोलायका जोपयु कर्मउपाजं मायाविजयेन चज्जुभाव जनयति सरसपए पासे मायावेदनीय कम्म न वधाति मया वेदनी कम्म न

जनयति गुरुराह हि शिष्यमायाविजयेन जीवः ऋजुभावं सरलत्व वत्पादयति ततश्चायावैर्जीवं कर्मनवभाति पूर्वनिवृत्तं च कर्मनिर्जरायति एष
 यति ६८ [लोभविजयणंभते जीवे किं जगद्यद् लोहपिजण सन्तीसिभावज्जगद्यद् लोभवेद्यणिज्जं कर्मा न वन्द्य पुत्रवदं च जसा निज्जरेद् ७०।] हि भगवन्
 लोभविजयेन जीवः किं जनयति गुरुराह हि शिष्य लोभविजयेन जीव सन्तोपि भावं सन्तोपिणांभाय सन्तोपि भावसां जलादयति लोभवेदनीयं कर्म
 नवभाति पूर्वनिवृत्तं च कर्मनिर्जरायति ७० कपायविजयित्वासाधुनारगद्दि पमिष्यादर्शनयिजयः कर्तव्य . अतस्तेषां पिजयफलप्रथमपूर्वकम्पार [पिज्जादोसमिच्छा
 दसणविजयणं भतेजीविकिजणयद् पिज्जादोसमिच्छादंसण विजयणं नाणदंसणचरित्ताराहणयाए गभ्युदिति अट्टविक्रमकमगसिद्धि विमोदणशए तत्पटमयाएयं
 जहाणुपुव्विए अट्टवोसइविहमोहणिज्जं कर्मां उरधाएए पयविहं नाणावरणिज्जं नवविह दसथावरणिज्जं पयविह नलराय एएतिविदिककमसेज्जायखवेइ
 तश्रीपच्छा अणुत्तरंअणत्तं कसिणं पडिपुत्तं निरावरणं वित्तिसरं विसुव लोणालोणायभावय केवलमरनाणदंसणसमुप्याडेइ जायततीगीभवइ तावइरियावहित्वं
 कर्मां वन्द्यइसुत्तं कसिसुत्तं पडिपुत्तं पटसमएवदं वीयसमएवदयतइय समयेनिज्जिन्वयेयाकाले अकम्प वाभपइ ७१।] हि भदन्तस्यामिन्प्रे यदपिमिष्यादर्शन

भाषा

लोभ विजयणं भते जीवे किं जगद्यद् लोभ विजयणं संतोसीभावं जगद्यद् लोभ वेद्यणिज्जं कर्मां नपंधइ । पुव्व
 वद्वच निज्जरेद् ७० ॥ पिज्जादोस मिच्छादंसणा विजयणं भते जीवे किं जगद्यद् पिज्जादोसमिच्छादंसणा विजयणं नाणा
 वधाइ पूर्ववदं निर्जरयति पुर्वं पाध्या कर्मं ते निर्जरं ६८ लोभविजयेन हि भदन्तर्जायः किं जनयति लोभवेदनीयं जीवस्य कर्मजघांशं लोभविजयेन
 संतोप भावं जनयति लोभवेदनीय कर्मं न वभाति पूर्वनिवृत्तं निर्जरं पादना कर्मोर्नाज्जरेत्तं ७० पिस हि पिमिया दर्शन विजयेन रेइ हि पिमियादर्शनं

विजयेन जाय कि फलजनयति तत्र प्रेयशब्देन प्रेसरस्य हेप प्रसिद्धोमिष्यादर्शनसमयादिभिर्द्यौपरोतमतित्व प्रेयश्च हेपयमिष्यादर्शनश्च प्रेयश्चेपमिष्यादर्शनं नानितीर्षा विजय प्रेयश्चेपमिष्यादर्शनयिजयस्तेन जीव कि फल सुत्पादयति तदा शुकराहहेमिष्यरागहेपमिष्यादर्शनयिजयेन जीवो ज्ञानदर्शनं चारिद्राणा आराधनायै अभ्युक्तिर्हे साधनो भवति अभ्युत्थाय च अष्टविधकर्मणा यत्न्य धातिकमपागा कठिनजाल विमोचनार्थं व्यपयितु अभ्युक्ति एते साधनानोभयति अथ कर्मयत्न्य विमोचने अतुकमनाह तत् प्रथमतया यथातुकम अष्टाधिगति विधि मोहनीय कम्म उद्घातयति चपकथे णिमा रुठ सन् व्यपयति पोद्दशकपाया नयनो कपाया मोहनीयचय एव अष्टाधिगतियिध मोहनीयकर्मिनापयति ततश्चरससमये यत् व्यपयति तत्प्रथममाह मतिश्रुतायधिमन पर्यायापरणरूप कसपयाययिध दर्शनावरणीय कम्म चक्षुर्दर्शनाऽचक्षुर्दर्शनायिध दर्शनाकेवलदर्शनापरण निद्रापञ्चक एव नययिध

दसण चरिसा राहणयाए अभ्युद्देइ अष्टविरसा कसमाग ठि विमोयणयाए तण्णटमट्टाए जहाणुपुञ्जीए अट्टावीसइ विध
मोहणिक्ख कसमा उग्घाएइ । पच्चविह नाणावरणिक्ख नवविह दसणावरणिक्ख पच्चविह अतराय एए तिनिवि कसमा से

जोपतु जीवसु कर्मं व्यपार्जं प्रेमहेप मिष्यादर्शनं विजयेन ज्ञानदर्शनं चारिद्राणाराधनया अभ्युप तिष्ठति ज्ञानदर्शनं चारिद्र आराधनादजनाल होइ अष्टविध बहकमपय धि व्यपणार्थं अष्टप्रकारे जी कर्मं तेह भणी निविहकरूप जे कम्मय धिरुत्थे ते जीव होइयावभाभणी साधनान् इवे तत्प्रदन्तया हि वे पवसो अयुक्रमेण अष्टाविशति यिध मोहनीय अतुकर्मं पवसो र्द अट्टादीस भेदे सहित मोहनीयकम्म सुपाये पवदीध ज्ञानावरणीय पञ्चप्रकार ज्ञाना यरणो कम्म व्यपार्थे नययिध दर्शनावरणीय नयेप्रकार दर्शनावरणी कम्म एव पच्चयिध अतराय पाप्मेप्रकारे अतराय कम्म एतानि दोष्यपिकर्मणि

दर्शनावरणीय कर्म ततः पश्चात्तद्विषयं अन्तरायं एतानितीणि कर्मसंसेवति सत्कर्मणि विद्यमानानितीणि कर्मणि युगपत् क्षपयति क्षपकर्म स्थाकूटः सन् समकालं क्षयं नयतीत्यर्थः ततः पश्चादनन्तर तेषां कर्मणां क्षयीकरणादनन्तरं अनुत्तरं सर्वेभ्यः प्रधानं अनन्तं अनन्तार्थग्राहकं क्लृप्तं समस्तवस्तु पर्यायग्राहकं प्रतिपूर्णं सकलैः स्वपरपर्यायैः सहितं निरावरणं समस्तश्रावरणरहितं वितिमरं अज्ञानां शरहितं विशुद्धं सर्वदोषरहितं लौकालीक प्रभावकं लौकालीकयोः प्रकाशकारकं एतादृशं केवलवरज्ञानदर्शनं समुत्पादयति यावत् स योगीभवति मनोवाक् कायानां योगीव्यापारस्तेन सह चर्त्तेद्विति स योगीभवति तयोदशशुश्रूषानेयावत्तिष्ठति तावत् ईर्यापथिकं कर्मवधाति ईरणं ईर्यागतिस्तस्याः पश्याः ईर्यापथः ईर्यापथे भवं ईर्यापथिकं पथोग्रहणं हि उपलक्षणं तस्य तिष्ठतीपि सयोगस्य ईर्यायाः सभवात् सयोगतायां केवलिनोपि सूक्ष्मसञ्चारा सन्ति तत् ईर्यापथिकं कर्मकीदृशं भवति तदुच्यते सुखयतीति सुखः सुखकारीस्वर्गं आत्मप्रदेशैः सहस श्लेषीयस्य तत् सुखस्वर्गं द्विसमयस्थितिकं ही समयोगीयस्याः साहिसमया द्विसमयास्थिति

जुगवं खवेद्व तश्चो पक्का अशांतं अशुत्तरं कसिसणं पडिपुन्न निरावरणं वितिमिरं विसुद्धं लोगा लोग पभावगं केवल वरनाणा दंसणं समुप्पाडिद्व जाव सजोगी भवद्वताव इरियावहिदयं कम्मं निवंधद्व सुह फरिसं दुसमयद्विद्वयं तंपटम

युगपत् क्षपयति एत्रिणिकर्मणा अंश एकठाज खपावे ततः पश्चादनुत्तरं तिवारपक्के अनंतार्थ विषयं अनंतार्थ विषयके जीहने क्खणं समस्तं सपूर्णं निरावरणं श्रावरणरहितं तीमररहितं अंधकार रहितं लौकालीक प्रकाशं लौकिकश्रने अलौक तेहने प्रकासकरे सहाय रहितं प्रशस्त ज्ञानदर्शन आत्म नासमुत्पादयति केवलज्ञान उपजावे यावत् सयोगी जितमनोवाकायः पडिती संयोगी श्लवे मनवचन कायाजीने तावत् इर्या पथिकीयं कर्म गति मार्गं

रस्विति द्विसमयस्वितिक तत् द्विसमयस्वितिकस्वरूपमाह प्रथम समये वद स्वस्वस्वर्मानाय अधीन एत अधीनकरणात् स्पृष्टमपि द्वितीये समये तद्वद स्पृष्ट वेदित कायेन अगुभूत तृतीय समये निजीर्णं परिशाटित निष्कपायस्य उत्तरकालस्वितेरभावीवर्त्तते उत्तरकालेसकपायस्य वन्धीभवति पर केवलिनो न भवति तदेव पुन सूत्रकार भ्रान्ति निवारणार्थमाह तत् इर्यापधिक कश्च केवलिनोवद आक्षप्रदेशे सहस्रिष्ट स्पृष्ट व्योक्ता षट्पत् तथा स्पृष्ट मद्यथमपि कृत्वापतित शुक्चूर्णवत् इति विशेषणद्वयेन केवलिनोहि निधत्तनिकाचितत्वस्ययोरभाव पुनरदीरित उदय प्राप्त सत् वेदित अगुभूत केवलिनोहि उदीर्यानभवति ततो निजीर्णं क्षय उपगत तत येयालेइति एष्यकाले आगामिनिकाले अकर्मोचापि भवति कर्मरहितो भवति इत्यथ ५१ अथ यैलेन्द्रकर्मताद्वारद्वय अर्थतोव्याधिख्यात्तराह (अहाउय पालइत्ता अन्तोसुहुत्तावसेसाउए जोगनिरोहकरिमाणे

समए वद विदए समए वेदय तदए समए निज्जन्न त वद पुद उदिरियं वेदय निज्जन्न सेयाकालिय अकम्भयावि भवद ॥ ७१ ॥ अहाउय पालइत्ता अन्तोसुहुत्तावसेसाउए जोग निरोह करिमाणे सुहुमकिरिय अण्णडिवाइय सुक्क

स्थानरूप सुखस्वर्णं आक्षप्रदेशे सहस्रद्व द्विसमय यावत्सिष्टति इर्यापधिकी कर्मचालताहालतालागे सातावेदनीदो इसमे रहै प्रथम समये यद पडले समये वधि द्वितीयसमये वेदयति अगुभवति योजे समे अगुभवे तृतीये समये जीर्णं परिसाटित त्रीजे समे तं कर्म परिसाडि ते जीव प्रदेशे स्यु, वाधवी स्पृष्ट उदीरित फरस्यो आकाश घटनोपरि उदय आस्य वेदित निजीर्णं सुखरूपफल अगुभव्यो खमाव्यो आगामि कालि घोषा समयने विखे कश्च रहित ज्ञोद्वारा ७१ ततो यावदाय पालयित्वा तीर्णां ताद आउखु पालीने अतमुक्त्तं अयशेपायुप सन वेषडी मरण्यकी पेहलां जोगनिरोध

सुहृमकिरिय अर्थाडियांइं सुंक्रज्जाण ज्जाग्रमार्णे तप्यटमयाए मणजोग निरुंभद्र मणोजोगं निरुंभेता वयजोगं निरुंभद्र वयजोग निरुंभिता कायजोगं निरुंभद्रकायजोगं निरुंभिता आणपाणनिरोहकरेइ आणपाणनिरोहकरिताइंसिपस्वरहससकण्ठ्याएणं अणगारिसमुच्चिद्विपरितंअनिर्वाटिसुक्कज्जाणं जिक्कायायमाणेवेयणिज्जं आउय नाम गीयंच एएचत्तारिविकम्मा सेज्जुगवंसुवेइ ७२)अथ केवलप्रप्तिरनन्तर आयुष्क दिग्गो न पूर्वकोटि प्रमितं आयु. प्रपाल्य अथवा अन्यदपि आयुपालयित्वा यदा अन्तर्मुहूर्त्तविशेषायुक्तो यदा केवलिनोत्तमुहूर्त्तप्रमाणमायुमस्ति तदा केवली योगं मनोवाकाय व्यापारं तस्य निरीधं सुर्वाणः सन्शुक्लक्रियां शुक्लाक्रिया यत्तत्त्वं शुक्लक्रिय अप्रतिपाति भुक्तध्यान शुक्लध्यानस्य तृतीयभेदबलचणत्तव्यायन् तत् प्रथमतया प्रथमतोमनो योगोमनोव्यापारोमनोद्रव्यजनिती जीवव्यापारस्तं निरुणद्धिं तं निरुन्ध्यच वचोयोगं भाषाद्रव्यसाचिब्यजनितजीवव्यापार निरुणद्धित निरुन्ध्य च काय

ज्जाग्राण भायमाणे तप्यटमयाए मणजोगं निरुंभद्र मणजोगं निरुंभेता वद्वजोगं निरुंभद्र वद्वजोगं निरुंभेता ।
कायजोगं निरुंभद्र कायजोगं निरुंभेता आणपाण निरोहकरेइ आणपाण निरोहकरेइत्ता । इत्ति पञ्च रहस्सा

कुर्वन् योगनिरोध करतुयको सूक्ष्मक्रियारूप अप्रतिपातिश्रो आउखेतिधान कधी पटवु नधी शुक्लध्यानं ध्यायमानः शुक्लध्यान मनमाहिं ध्यातुयको तत् प्रथमतया पहिली मनोयोग व्यापारं निरुणद्धि पहलां मनोयोग रुंधे मनोयोगं निरुंध्य मनोयोग रुधीने वचोयोगं निरुणद्धि वचनयोग रुंधे वचोयोगं निरुंधा वचनयोगने रुधीने काययोगं निरुणद्धिकाययोग रुंधे काययोग निरुंधकाय योगरुधीने उत्स्वासनिः स्वासनिरोट करोति सासो स्वासक धे षोडीसीवारपं चक्रस्वाचर उच्चारण प्रमाण अइ वक्कल्ल एपांच अजरजेतले उचारी जेतरे काले सीय ततः इपत्तं स्वल्पं पचइस्वाचरोच्चारणार्थं मनगारः

श्रीणीच ऋजु श्रीणीता ऋजु श्रीणी सरलाकाशप्रदेशपर्किं गतः पुनरस्य श्रद्धति. सन् यावन्तः अमोक्षश्रीत्या आकाशप्रदेशाश्रयगालमानास्तान् एवस्व
प्रदेशैः सृशुन् अधिकान् न सृशुन् जीवीयया गत्याव्रजति तादृगतिधरः सन् जर्षगः एकेन समयेन अविग्रहेण विग्रहगत्यभावेन तत्र मोक्षस्थाने
गत्यासाकारीपशुकीज्ञानीपयोगुक्तः सन् सिध्यति बुध्यति परिनिर्वाति सर्वदुखानां श्रुतं करोति ७३ (एसखलु सभक्तपत्रिकमस्य अक्तयणस्य श्रुहेसमये
ण भगवया महावीरेणं आषविए पक्विए परुविए दंसिए चिदसिए उवदसिए क्तिवेमि १) अथ प्रशोत्तरीपसहारमाह हि जन्मस्वामिन् एषः
इदानीं उक्तः खलुनिययेण सभ्यक्त पराक्रमस्य आध्ययनस्य अर्थं अमणेन भगवताज्ञानवता श्रीमहावीरेण आषविएप्ति अर्धत्वात् आस्थातः पुन.
प्रज्ञापित सामान्य विशेषपर्यायेव्यक्तीकरणेन प्रकटीकृत. पुनः प्ररूपितो हेतु फलादि प्रकर्षं ज्ञापनेन प्ररूपितः उपदर्शित. स्वरूप कथनेन ज्ञापितः

स्व

उज्जुसिटी पत्ते अफुसमाया गर्दे उहुं एगसशाएणं अविगगहिणं तव्य गंता सागारोवउत्ते सिज्जइ. बुज्जइ सुच्चइ परि
निब्बाएइ सव्वदुक्खायां अंतं करेइ ७३ ॥ एस खलु सभक्त परक्रमस्य अक्तयणस्य अद्वै समयेणं भगवया महावीरेणं

भाषा

कडिने समीश्रे णि गृह्णतोषको अस्मश्रद्धति आकाशप्रदेशने अणफरसतुंघको उर्ध्वं एकसमयेन उर्ध्वगति जातुं एकमयमांहिं विग्रह गतिरहितेन विग्रह
गति करो रहित मुक्तिपदे गत्वा ज्ञानीपयोगवान् सिद्धाति मुक्तिजाइ ज्ञानसहित सीक्ते बुद्धार्तं वूर्ध्ने मुच्यते मुक्तावे प्रतिबोध पाप्मे मुक्ते परिनिर्वाति
संसारथकी नीवर्त्तनह्रवे सर्वदुखानां अंतकरोति सर्वदुखलानो अतकरे ७३ एष. नित्येन सभ्यक्त पराक्रमस्य एनियययेती सभ्यक्त पराक्रम नाम अध्ययनस्य
अर्थः अमणेन साधुइ भगवता ज्ञानवते महावीरेण महारीर देवे आख्यातः कथो प्रज्ञासः फलदेवाद्या प्ररूपितः दृष्टान्त कश्चिने दर्शितः एकवारदे खाद्या

यथा भवति आश्वरहितो भवति तमाह [पंचसन्निधौ ३] कीदृशो जीवः पञ्चभिः समितिभिः समितः सहितः पञ्चसमितः पुनस्तिष्ठति भिर्गुं मिभिर्गुं तः पुनरकपायः कषायरहितः पुनर्जितीन्द्रियः वशीकृतन्द्रियः पुनरगारवकृच्चिरससातादिगर्वलयरहितः पुनर्निशब्दः मायानिदानभिर्थादर्शनशब्दैस्त्रिभोरहितः एतादृशो ज्ञानश्रीभवति ३ एव विधीऽनाश्वयथ यथाक्षपयति तथा वदति [एणसित्तु विवस्वसिरागदीस समज्जियं खवेद्रजंजहाभिकवृत्तमेगगमणोसुण ४] हि शिष्य यथा येन प्रकारेण भिन्धुः साधुरेतेषां पूर्वोक्तानां प्राणानि पात मृषावादादत्त मैयुनपरिग्रहराति भोजन विरतिस्तस्य यानां व्रतानां तथा समिति शुष्यादि लक्षणानां श्रानाश्वकारणानां विपर्यासे वैपरीत्ये प्राणि बध मृषावादादत्तमैयुनपरिग्रहराति भोजन समित्यन्नाद्य शुष्यान्भावसेवने सति रागादिपाभ्यां समर्जित सञ्चितं पापकर्म क्षपयति तं प्रकार एकाग्रमनाः एकाचित्तः सन् त्वं न्युणु ४ अत्र दृष्टान्तमाह (जहा महत्तलागस्र सच्चिरुहे जसगमे

राद्रभोग्याविरश्चो जीवो भवद्दश्यासवो २ ॥ पंचसमिधोतिगुत्तो भकसाश्रोजिद्रुदिधो । अगारवोयनिस्यस्त्रो जीवो भवद्द
अशासवो ३ ॥ एणसित्तु विवस्वसि रागदीस समज्जियं खवेद्र जंजहा भिक्खु तमेगगमणो सुण ४ ॥ जहा महा

अदत्तादान मैयुन परिग्रहधी विरतहुश्री रात्रिभोजनात् विरतः रात्रिभोजनधी विरतहुश्री जीवो भवति अनाश्वयः पापहितुरहितः जीव पापरहित होद्र २ पचसमितिः पांचिसुमते सहितः त्रिगुणः लिहुंशुमे सहित अकपायः कषायरहित जितेन्द्रिय इंद्री जिते अगर्वः गर्वरहित निशब्दः सात्तरहित पापरहित जीवः भवति अनाश्वयः जीव आश्वरहित होद्र ३ एतेषां पूर्वोक्तानां विपर्यासे सति एहने अणफलवे रागद्वेषे करी उपार्जा जिकर्मे क्षप यति यथा भिन्धुः जिणे प्रकारे साधु खपावे तत् मत् सकाशात् एकाग्रमनाः न्युणुत ते एकाग्रमनसका सांभतो ४ यथा महत्तलागस्र जिम भोटो

प्रकारेण अश्वत्तर अपि पङ्क्तिविध प्रोक्तं ७ प्रथम बाह्य षड्विधमाह (अणसणभूणोयरियाभिगलायरियायरसपरिच्चाभोकायकिलेसोसंलीणयाय वञ्जो तवोहीद्र ८) अनशन उपवासः एकाभादुपवासादारभ्यपर्याप्तिसिकपर्यन्तं अनशनं तप उच्यते १ हातिशलाबलप्रमाण आहारः प्रत्यहं एकैकेन कवलेनन्युनी शूर्वाण् यावताएकस्निन् कवलेस्थाप्यते साज्जनादिरिफाज्जन एदरेभवं ज्जनादिरिक तपः प्राकृतत्वात्तद्व्यत्यय . भिक्षाचर्यायाभिचया आहारग्रहणार्थं उक्तावच गृहेषु भ्रमणं रसत्यागीविक्रमतीनां परित्यागः कायकेशस्तापशीतादीनां सञ्जनं सलीनता अर्थापाङ्गादिकं सहल्यप्रवर्तनं एतत् षड्विधं बाह्यं तपोभवति ८ अथ एतेषामेव स्वरूपमाह [इत्तरियमरणकाला अणसणादुविद्याभवे इतरियसावकखानिरवकखाश्रीवेदिक्रिया ९] अनशन द्विविधं भवति एकं इत्तरिकां इत्तरिस्त्रीकेकालेन भवं इत्तरिक नियतकालावधिकं मरणं कालोयस्याः सामरणकाला इति द्वितीय यावक्लीवमित्यर्थः स्त्रीलिङ्गत्वं

बुधो एव मभिमतरो तवो ७ ॥ अणसणा भूणो यरिया भिक्खलायरियाय रसपरिच्चाभो । कायकिलेसो संलीणयाय वञ्जो तवोहीद्र ८॥ इत्तरिय मरणाकालाय अणसणा दुविद्या भवे । इत्तरिया सावकंखा निरवकंखाभो वेदिक्रिया ९।

विधं अश्वत्तर तपना परिच्छे भेद ७ अनशन १ उपवाशादिक ज्जनादिरिकाः २ श्रीकुजिमे भिक्षाचर्या च भिक्षाचर्यात्तप ३ भिक्षाये करीआहार लेवो धरआयो नहीलेवे रसत्यागं धरस परीत्याग काथा ह्येगः ५ कायाकेशेण तप संलीनता तप ६ सलीनता तपअशीपंग रूकांचे भासनी रुंलेरुण करिवाह्य तपो भवति एहहे भेदे वाश्वत्तप कशी ८ इत्तरि ककालोवधि प्रमाणाःअणसननावे भेद कक्षा एक एतत्तिएककाल वीजा मरणपर्यंतकाल अनशनं द्विविधं धामवेत् अणशणवे प्रकारि कीड इतिरिक्साप काजाकाले भोजनेच्छा सहित्तन इतरिक अणसण चउध पांचभ एकानरे आहार करे भोजनेच्छा

प्राकृतत्वात् इत्वरिक तप सावकाश भवति सह भवकांशयायत्तं तदिति सावकाश्च घटिकाहयायनन्तर अह भोजन विधास्यामीति वाक्यासहितमित्यर्थ
द्वितीय यावज्जीव निरवकाश आहारपत्याख्यानादारभ्य तज्जन्निभोजनाश्यासम्भवात् वाक्यारहितमित्यर्थ ८ [जीसोदरकारियतयो सो समासेणकृष्विहो
सेदित्तवापयत्तयो षणोयतइ होदयगोय १०] यत्त इत्वरिक तपस्तत् समासेन सक्षेपेण पद विध भवति विस्तरस्तथा समातिविध ७२ भेद अथ पट्टिपथ्य
माह श्रेणितप १ प्रतरतप २ घनतप ३ कृथापगतप ४ श्रेणि पक्लिस्तदुपलक्षित तप श्रेणितप तथातुर्थीदि क्रमेण क्रियमाण पशुमासां त गृह्याते
तत् प्रथमतपोभवति तथा श्रेणिरथ श्रेण्यागुणिता प्रयतरस्तदुपलक्षित तप प्रतरतप इहसुर्वाधार्य चतुर्थं पट्टामदयमाख्यपद चतुष्टयाकिका
श्रेणिविषयते साच चतुर्भिर्गुणितयोह्यपदात्मक प्रतराख्य तपोभवति तत् प्रतरतप पोह्यपदात्मक एव यदा पद चतुष्टया श्रेण्यागुण्यते तदाघनाख्य
तपोभवति सा लव उक्ताच उसद्विदति भाव सय शुनयदाघन चतु पट्टिपदात्मकक्रोधनेनेव चतु पट्टि पदात्मकेनैवगुण्यते तदा यगो भवति तदुपलक्षित
तथापगतपदच्यते चतु पट्टिपतु पद्यागुणितानिजाताख्य कानिपक्षव्यधिकानि चत्वारिसहस्राणि ४ । ८६ १ अथ पञ्चमपट्टने १ आह [तत्तीययत्ना
यगोपञ्चमोष्टयोपद्रवतयोमणद्विष्ययचिसत्योनायव्योहोद रसरिधो ११] तत इति ततोवर्गतपोनन्तर वर्गवर्गैरिति पञ्चसोतपाक्षेयर्ग वर्ग १ एवयगो

जो सा इत्तरिय तवो सो समासेण कृष्विहो सेदित्त तवो पयर तन्ना षणोय तहहोद वर्गोय १० ॥ तत्तियाय वर्गावर्गो

रहित द्वितीय योने तपनभिदे जितलाताद जोषे तंतलातादआहारनसोद ८ यदिस्तरि करत्तरि कान यनइत्तरिक अणशेष तेहनी तत्समासेन स क्षेपण
पट्टिपथ सक्षेपे क्लेशभद कक्षा श्रेणितप १ पडिहो प्रतरतप २ योजो घनतप ३ वर्गतप ४ १ तत वर्ग वर्गोतप तिवारपक्षीवर्ग वर्ग तप ५

शुचितीवर्गवर्गिभवति यथाचैककोटि समापष्टिलक्षा. समासमार्त सहश्राणि द्विशतीर्षाडशार्धिका अहतीभवति १६७७७२१६ एतदुपस्फितं तपोवर्गं तपइत्युच्यते इत्यर्थः. एवं पञ्चादि पदेष्वपि भावनाकर्त्तव्या तथा षष्टकं तपो यत् श्रेयादिनियतरचनारहितं निजशक्त्यानमस्कारसहितं तद्विषयं चरितं यवमध्यवज्जमध्यचन्द्र प्रतिमादिचेति तत् प्रकीर्णतपः मनसिर्दृप्तिसतदृष्टयित्तोक्तिक प्रकारोऽर्थः स्वर्गापवर्गादिस्त्रीजोतिश्यादिर्वायस्मान्नसिर्दृप्तिसत चित्रार्थं इत्यत्रिक प्रकाभादनशनाख्यं तपोज्ञातव्यं ११ अथ द्वितीयं मरणकालं अनशनमाह [जासा अणसणासरणे दुविहा साविद्याहिद्या साविदार मविद्याराकायचेद्वं पईभवे १२] प्राक्षातत्वादतस्तीव्रं यत् अनशन मरणमरणसमये भवति तत् तीर्थकरैर्द्विविधं व्याख्यातं सविचारं सहविवारिणमनो वाकायभेदचेष्टारूपेणवर्त्तते यत्तत्सविचारं अज्ञादिचेष्टयासहितं स्थित्युपविशन्नत्ववर्त्तनविश्रामणादिकयायुक्तमित्यर्थः द्वितीयं अविचारं चेष्टारहितं पादपोपगमं इत्यर्थः तत्सविचारहि काय चेष्टां प्रतीत्यश्राभित्यभवतीत्यर्थः वैया ह्यस्य कक्षापुनाजत्यापनं प्रतिस्थापनं उभयपार्श्वार्थं स्थापनं इत्यादि

पंचभोक्छुश्रीं पद्मन्नतवो मया इच्छिय चित्तव्यो नायव्योहोइ इतरिशो ११॥ जा सा अणसणा मरणे दुविहा साविद्या हिद्या । सविदारमविद्यारा कायचिद्वं पईभवे १२॥ अहवा स पङ्किकम्मा अपरिक्ममाय आहिद्या । नीहारि मनीहारी

पंचमः पांचमी षष्टः प्रकीर्णतपः छुश्री प्रकीर्णतप ६ मनीस्रित चित्तार्थतपः मनमाहिंजे चिंतवते करे ज्ञेयं भवति इतरिकानशनं तपः एइसरिक तप जाणवो ११ यत् अनशनं मरणावसरे तपः अणसण मरणकालिं अंतसमयकाले द्विविधं आख्यातं विदुं प्रकारि कष्टुं सविकारं चेष्टासहितं हाथ पगह लावे अविकारं काय चेष्टारहितः कायचेष्टा प्रतीत्यभवत् काया चेष्टासहित जाणुं १२ अथपा विश्रामणादि तप परिकर्मणा सहितं वीसासण

यथाहलकारापण भयथा स्वयमेव प्ररोरस्योपर्वन् परवर्त्तं गादि चेष्टा सहित अन्येन कारापण इदृश यद्भवति तत् सविचारज्ञेय इत्यर्थं पृथिव्य
 चतुर्विधाहार त्यागेन प्रत्याख्यान उद्वर्त्तनादि करोति कारयति या तद्गत् परिज्ञाद्य प्रपन्न १ तथा प्रकृति नियत चतुर्विधाहार त्याग इङ्गितदेशे
 उद्वर्त्तनादि इङ्गित चेष्टित भाजनाएव करोति अन्येन कारयति एतद्वितीय इङ्गिनी मरण २ एतद्भवमपि स विचारमनग्न ज्ञेय १२ एतदेव सूत्र
 कारो षदति [अहवासप्रवृत्तिकथा प्रवृत्तिक्रमाय साहियानीहार मनीहारी आहारच्छेदोदीसुवि १३] अथवा तत् शुभैरण स प्रतिकर्मे साहितकथित
 मित्यर्थं सह परिक्रमणा वर्त्तते इति स प्रतिकर्मे वैयाद्यत् सहित भक्तपरिज्ञास्य इङ्गिनी मरणस्य स परिदर्शनी एतेह अपि मरते परन्तु मूलत्वेन एक
 एव भेद च युन अप्रतिकर्मे मरण वैयाद्यत्सहित पादपोषणम इत्यर्थं तथा पुननिर्हारी अनग्न आमात् नगरात् बहिर्निर्हारी इति निर्हारी पुनर्
 नोहारि एतत्पादपोषणम मपि द्विविध भवति एयोरपि निर्हारीज्ञोहारयोर्मरणयोराहारच्छेदसु भवत्येव १३ अथो नोदरिकाभाह (ऊभेयारिय
 पञ्चहा समासेष विहाहिय द्रव्येषो विज्ञापानेष भाषेण पञ्चयेहिय १४) अथम जन उदर यस्मिन् तत् अथमोदर ततभव अथमोदरिक तथाप समासेन

आहारच्छेदोय दोसुवि १३॥ उभेयारिय पचरा समासेण विआहिया । द्रव्यज खिता कालिण भावेण पञ्चवेहिय १४ ॥

कराय द्वितीय विग्रामणा रहित आख्यात योजो तपवे यावद्यत्सहित नोहार अनीहार नोहार सहित नोहाररहीत आहारच्छेद एयोरपि विद्व
 प्रकारे आहारत्याग करे १३ जनोदरिता पचधातप अणोदरी तपना पचभेद कदा सक्षेपेण आख्याता सक्षेपे कदा द्रव्यत द्रव्ययो क्षेतत क्षेपयौ
 कासत ३ कासयो भायना भाययेत् ४ पयायेष ५ भावयको ४ इवे १४ जो जस्य आहारो भोजन जीहने जितरी आहार होइ तत आहार अथमन्वन

सचेपेण पञ्चधाख्यात्वात् द्रव्यती द्रव्येण चेनेण कालेन भावेन च पुनः पर्यायैः १४ तत द्रव्यत भवमोदरिकाभाह [जोजसूत्र आहारो ततोऽप्यं तु जोकरे जहनेणेगसिद्धाई एयं द्रव्येणोभवे १५] यस्य जीवस्य यावान् आहारः स्यात् ततः आहारान् यत् जन कुर्यात् जघन्येन एकासित्यकं यत्रै क भवसित्यं भुज्यते आदिगन्धात् शिथलक्यादारस्य यावदेककवलभोजन एतच्च अल्पाहारान्त्य भवमोदर्यभाषित्योक्तं इदं चाष्टकवलान्तं अथच नवकादारस्य षादशभिः कवलेरपरार्क्यं १ त्रयोदशकादारस्य पीडशान्तं द्विभागाख्यं ३ सप्तदशकादारस्य चतुर्विंशति तत्पर्यन्तं प्रामास्यं पञ्चविंशतरारस्य यावदेकतिंशकवलभोजन किञ्चिद्गन्धेव ज्ञादायं द्रव्ये च पञ्चविधभवमोदर्यं प्रति उक्तञ्च अल्पाहार १ अथद्वार दुभाना ३ पक्षा ४ तद्वैव किं चूणा ५ अह १ दुवालस २ सोलस ३ चत्रवोस ४ तद्वैकवोसाय ५ एव द्रव्येण उपपत्तिभूर्तन भवमोदर्यमित्यर्थः १५ अथ जेनावमोदर्यभाह (गामेनगरितहस्यारसि निगमेय आगारपणीखेडिकब्जदोणमुह पङ्कगण्डं वमसात्ते १६) [आसद्यपपरिविहारं सन्निवसेसनाय वांसेयथलसेणाहन्मारेसत्ये सस्वदकोटिय १७] वाडि स्यरथास्य धरेसुवाएवमित्तियं खित्तं कपई उपयमाह एय र्दुसिसिन्धोभवे १६ (तिस्रसिर्थायाभिः कुलक एव प्रति अशुनापकरणे हृदयस्य प्रकारेण एतावन्नियतमान चेन्नं पर्यटितु ममं वसार्तदति एव आदिष्टं ह्यशालादिपरिश्रु अथ एतावत् प्रमाणं भिद्यार्थं रश्नितव्यमिति निर्धारणं चैने ण

जो जसूत्र आहारो ततो उपांतु जोकरे । जहनेणेगसिद्धाई एयं द्रव्येणोभवे १५ ॥ गाने नगरे तह रायहाणि

यः कुर्यात् तहधी जेगो छी आहार करे जघन्ये न एक सिद्धादिक जघन्य अणोदरी एक कणसाह एयं द्रव्येण जनोदरी भवेत् ए द्रव्याजोदरीतप कस्यो १५ गाने गान नगरे नगर तथा राज्याधान्यां राजधानीने किंच निगसे यणियवासे रिरस्याथ्यत्पत्ति स्यान् आगारने विखे पक्षीधूसि प्रकार

खलसेनास्त्रावातरत्सिन् खलसेनास्त्राभावारि तल खलं उच्च भूमि भागः सेनाचतुरङ्गकटकसमूहः रून्भावारः कटकोत्तरणनिनास सार्थक्रयाणक
भृतां समूहप्रतीत एव तल सम्बन्धीभयतस्त्रजन समवायः कोटीदुर्गः सज्जन्तंश्च कोट्टय सखत्तंकोट्टं तस्मिन् सखत्तंकोट्टे १७ पुनर्वाट्टेषु हत्यादिपरिधिषु
गृहसमूहेषु रथासुखेरिकासु च गृहेषु प्रसिद्धेषु च एतेषु स्थानेषु अयमोदर्यं कृतं चेततीभवति १८ अथ पुनः प्रकारान्तरेण चैलावमोदर्यं भाह [पिडाय० १८]
षडिधा चैलावमोदरिकावर्त्तने पिटापिटाकारावतु कोणपिटाकारेण गोचर्यां कृत्वा अयमोदरीकरणं एवं अर्द्धपिटाकारेण गोचरीकरणं गोमूत्रिकाकारेण
पटङ्गवीथिका पतङ्गः शलभस्त्रस्य वीथिका उड्डयनं पतङ्गवीथिका अनियतानिधयरहितशालगोड्डयनसदृशीत्यर्थं पुनः शम्बूकावर्त्ताशम्बूकः शयस्त्रवर्त्त
शय सिगाखंधारे सखे संवट्कोट्टेय १७ ॥ वाडिसुव रथासुव धरेसुवा एव सिक्तियं खितं । कण्डूश्चो एवमाई एव
खितेगज्ज भवे १८ ॥ पिडाय अचपिडा नोमुक्ति पयंगवीहियाचिव । संबुकावट्टाय गंतुं प्रज्ञागया कट्टा १९ ॥ दिवसस्त्र

गदेष. चतुरंग सैन्यसहित स्कंधावार कटक उत्तरवानाठाण क्षयाणादि भया साधभद्र एकठा लोका खिले गट्ट सहित गामते कोट १७ वाटकेषु सेरि
कासु गृहेषु वाडी सेरी धरने विखे एतावत् प्रमाणं खितं इत्यादिक क्षेत्रे निखे विखरवा भणो जाधी कर्त्तुं नंतुफलते एवमादि क्षेत्रे एतले चेतने विर
हरवा जाई स एहं क्षेत्रे विषयं उनीदर्यं भवेत् ए क्षेत्रयकी जणीदरीनी भेद १८ पिटा चतु कोण अर्द्धपिटा पेट्टीने आकारि अर्द्धपेट्टीने आकारि गोमू
त्रिका कारो गोत्रुभाकारे गोचरी पटंगोत्पतन सदृशः पतंगने जडयानि परे गोचरीकारे संखना आवर्त्तनीपरिमाहिषकी वाहिर गोमू
त्रवाहिर यको माहि गोचरी करे भिन्नाचर्यागला पुनरा गच्छति सरलधूर धनीये हड्डालने जाइं पार्थीवले गोचरो करे खिलउणोदरी कर्त्तुजे १९ दिव

श्रावसाभ्रमण यस्यां सायम्ब्रूकावर्त्तिसां पि द्विविधा अथ न्तरशब्दोक्तं यच्च शब्दकायश्च नाभिरुपदिशेत्तन्मायाहर्दिगभ्यर्त्तं सा अथ न्तरशब्दकायवर्त्तिसां पि पटीता
 याद्यात् मध्ये आगमनरूपावहि शब्दकावर्त्तिसां पक्षमी पुन पटी आगतता तु मत्यागमाभ्यां ता आदित एव आयत सरल मत्यायस्या मत्यागमोभयति
 सापद्यो ज्ञेया इत्यर्थं एतासांभिवाच्यार्थाणां अपि अयमोदर्याल ज्ञेय यती हि अयमोदर्यार्थ एवर्द्द्वेग प्रकारैव साधुराहारार्थं न्नमति तस्मात्ताददोप १८
 अयकालायमोदर्यामाह (द्विसप्तपोरिसीष च उर पि ज्ञप्तिभोभवेकाली एव चरमाणीखलुकालोभाष सुशियत्वो २०] द्विसप्तस्य चतस्रणा पीरपीणा
 महाराणा यायन् घटिका चतुष्टयादिप्रोभिप्रहविषय कालीन अमुनाप्रकारेण कालीन चरगायइति गोचयासुरत साधो खलुनिश्चयेन
 कालीम इति कालेन अयम कालायममन्तव्य २० पुन कालायमोदर्य एव प्रकारान्तरेणाह (अहवातर्दयापोरिसीए ज्ञाणएवासमेसन्ते च उभागूणां
 एवा एव कालेयभोभवे २१) अथवा दलीयाया पीरपा जनायां किञ्चिद्वीनाया नास आहार एवयन् नदेषणां कुर्वन् वा अथवा चतुर्भोगिन जनाया
 दलीयपीर्या भिदां यथां साधो रक्षास्ति कालेन अयमोदर्य भवेत् २१ अथ भावायमोदर्यामाह (इत्योवा पुरिसी वा खलुद्विषोवाण लङ्घिषोयावि अययर

पोरिसीष चउच्छ पिउ जतिशो भवे कालो । एव चरमाणो खलु कालोभाष सुशियत्व २० ॥ अहवा तदया पोरिसीए

सस्य पीरपीणां द्विसप्तनी प्रमाण करे च तस्यणा यावत् अभिप्रह विषयकाल भवेत्तच्चिह्न पोरिसिनो जितसो काल तंहनी प्रमाण करे एव कालेन
 चरन् निययेन इमं विचरतु साधु निययपणे कालमनीदय ज्ञातव्य एकालमान अनोदरो तपजाणवो २ अथवा दलीयाया पीरपा अथवा तीजी
 पोरिसिमाहिकथाया आहार एवयेत् कषो होर तिवारे आहारनीयवेषणा करे चतुर्भागे नाया एव चउद्योभाग जणोहोद एवकाल मोदय भवेत्

वयस्योवा अन्वयरेण' चयस्येण' २२] अन्वयेण विवेकस्येण' धर्मस्य शान्तमुत्पद्यन्ते च एव चरमाणोऽस्युः शायीमाण' सुशेयस्य २२] सुख' एवं असुनाप्रकारेण
 चरमाणः प्रतिगार्हितत्वात् चरमाणस्याभिप्राया न्यममाणस्यासाधीः सार्त्तानियमेन भावीवशाथं प्रतिभावीवमत्वं भावीवमोदर्थं' सुथितस्य' शीय इत्यर्थ' भावेन
 नयमोदर्थं' भावीवमोदर्थं' कीर्षं. यदा कश्चित् साधुश्चित् चिन्तयति अथकश्चित्प्रतभावात् एतादृशं स्वरूपं पश्यत्यन्ते प्रति अनुगम्यन् अलजन् एतादृश
 स्वरूपं भजन् ज्ञातं ज्ञातारदास्यति तदाह गृहीत्याभि नान्यथेति भावः कीदृशाता कीदृशं च भाथं अलजन् तदाह इत्यी स्त्रीया पुरुषो वा अलधृत
 आभरणादि सञ्चितोऽपि भा अलधृतो' अलकारैरहितः अन्यययययो अन्यतरव्यस्येता बालतरणस्यविरादिकानां तयाथा वयसासस्ये अन्यतरक्रान्
 एकस्मिन् वयसिस्थितः अन्यतररेण पदं क्षुब्धादिवस्तेण उपलब्धितः २२ अन्येन विशेषेण कृपित प्रससितादिनाऽदस्याभेदेन उपलब्धितः धर्मेनस्वैतरसा
 दिनाऽपलपितः भाव पर्याय उक्तस्य अलकारादिकं' लक्षणयन्ते अनुगम्यन् एतादृशः सन् सार्धं भाषारंदास्यति तदालास्याभि इत्यभिप्रययययरेण

जगत्वा एवास्मिन्नेति । चउभागा गाएवाएवंकालेभाजा भव २१ ॥ इत्यीवा पुरिसिवावा अलंकिशोवा गालकिशोवावि ।

अन्यतर वयस्योवा अन्नयरेणच वत्येणं २२ ॥ अन्नेणं विसिसिणं वन्नेणं शान्तस्युत्पद्यन्ते । एव चरमाणो खलु भवितारणां

एकालयो अणोदरो तपजाणयो २१ स्त्रीवा पुरुषो वा स्त्री नपथा पुरुष अलकृते वा आभरणं पश्यतो यको अनलकृते वा अथवा आभरणं नही परि
 शक्ति अन्यतरयो वयसो वा अन्नेरेवयस्येण' अथवा बालक अन्यतरवस्त्रीया वा अन्नेरे वरति एते ले काले २२ अन्येन विशेषेण अन्नेरे विशेषेण हर्षे अथवा तिस्र
 वादे कथादिना भाव सुकारेण अनुगम्यन् तया वयस्येणोरा वयस्येणोरा धर्मोभाव अथान काले' धकी एषं चरमाणः सार्त्तानियमेन चालता भावमोदर्थं

भाषा यनादय प्रेय २३ अत्र यथाया यनादयमाह (द्व्येच्छित्ते काले भावमि आहियाभिभावा एए ह्यिषी मधरषी पण्यधरषी भवेभिष्व २४)
 द्रव्ये अग्नपानादीषेपूषाहो ग्रामनगरादोकात्तैषीष्यादी भायेस्तीत्यादी आख्याता कथितयोभावा पर्यायास्तेसर्वरपि द्रव्यादिपर्याये अथम
 अथमोदयं चरति श्वेतंय साधनचरीभिन्व पयधरकोभवेत् पयायावमोदयं चरकोभवतीत्यर्थं एकस्मित्युकायास्याहारण द्रव्यतीवमोदयं स्यादिय पर
 यामादीक्षितत पोष्यादीकासत कोपुशपादिपु भावत कथ अथमोदय स्यात् उच्यते द्वेषकालभावादिष्वपि कथियिटाभिपद्यथात् अथमोदयं स्यादिय
 रूह पुन यथायप्रदणनपथ्यप्रपायाय विषयथापर्यावावमोदय प्रेय २४ भिषाचयामाह [अटपिष्टगीयरत्न तु तद्वासत्तेयएसथा अभिगन्हायर्ज अत्रे भिष्वना
 यरियमाहिया २५] भिषाचया सुत्तिसत्तेपापरनामिका याद्वातपथ्या आख्याता अटविषोगोचराप प्राक्तत्वाद्दटविषोप्रगोचररति पाठ अथप्रधानी

सुयोग्यत्वं २३ ॥ द्व्येच्छित्ते काले भावमिना आहियाया जिभावा । एएह्यिष्यो मधरषी पण्यधरषी भवे भिष्व २४ ॥
 अटपिष्ट गीयरत्नतु तत्रा सत्तेन एसथा । अभिगन्हाय जिष्वने भिष्वत्त्रायरियमाहिया २५ ॥ खीर दटि सपिमादुपणीय

प्राप्तव्य एभाष अनादरोतपद्याणयो २३ द्रव्य द्रव्य चेत चेत काल कात्त भाषादा आख्याता जि भावा भाषी किये भाव कथा एतं अथमोदयं भवेत् ए
 भावे करोते जि साधु विहर यथाय चरको भवेत्य त्त ते यथायधरक साधु कहीर २४ अटपिषा गोचरायगी चरी भद्रा पाठप्रकारे गोचरी कही तथा
 सत्तैपथा सस्यटाया सातप्रकार एयगागा कथा ये चाभिपद्य अन्त्येपि ससदा अससदा इत्यादिक अभिपद्य अयेपि भिषाचया आख्याता योरा
 पथि अभिपद्य गोचरीना कथा २५ दुग्ध दूध दपि दन्ती सपिष्टितादिक गद्ये च पान भोजन सरस पान भोजन परिवर्जन रसानांतुरसनु यर्थवु

गोचरः अष्टविधयासी मयगोचरश्च अष्टविधायगोचर अष्टौ अयगोचरगामेदाइत्यर्थं पेटा १ अर्द्धपेटा २ गोमूत्रिका ३ पतङ्गवीथिका ४ अश्वत्तर
 शम्भूक्कावर्त्तिकाइत्यनूकावर्त्ता च ५ आयातगन्तु प्रत्यागमा ६ ऋजुगति ७ एव अष्टौभेदा ऋजुगति वक्रगतिचिपणात् ज्ञेया सप्त एषणा संस्पृष्टादयः
 संसृष्टा १ असंसृष्टा २ उषड ३ अल्पलेपिका ४ उद्गृहीता ५ प्रगृहीता ६ उद्विगतधर्मा ८ एषा सप्तविधा एषणाज्ञेया च पुनरन्येयेभिग्रहाः सन्ति
 अभिग्रहा यथा द्रव्यचैत्रकालभावाद्विचिन्तनेन भिन्नाग्रहणरूपाः द्रव्यतीमण्डकादिकां ज्ञेयती गृहादौ देहलिकातीमध्यवह्निर्वाकालतीभिष्वाचरेषु
 निवर्त्तिषु भावती रुद्गु हसन् वादास्यति तदाहारी ग्राह्य इति चिन्तनेन भिन्नाग्रहणं एवं भिन्नाचर्यया भेदास्तीर्थैर्कारै राख्याता इत्यर्थः २ ५
 अथ रसत्यागाख्यंतप आह [खीर दहि सपिण्डार्द्र पण्यं पाणभोयणं परिवज्जणं रसाणन्तु भण्यं रसविवज्जणं २ ६] एतत् रसविवर्जनं रसत्यागाख्यंतप
 आह एतत् रसविवर्जनं रसत्यागाख्यंतप स्तीर्थैर्कारैर्भणितं रसानां परिवर्जनं रसपरिवर्जनं क्षीरं दुग्धं दधि तथा सर्पिष्ठतं क्षीरं च दधि च सर्पिष्व
 क्षीरं दधि सर्पिषि एतानि आदिर्यस्य स तत् क्षीरं दधि सर्पिरादि प्रणीत शुष्टिकारक पानं पानयोप्याहारं भोजनं भक्तं यस्मिन्पीते भुक्ते सति बह्व
 कामोद्दीपनं स्यात् तस्य परिवर्जनं रसत्यागाख्यंतप उच्यते प्राज्ञतत्वात् षष्ठीस्थाने द्वितीया पाण्येय पाणभोयणं परिवज्जणं इत्यतज्ञेया २ ६ अथ काय
 क्ते य तप आह [ठाणा वीरासणार्द्रया जीवस्रडुहावहा उगाजहा परिवज्जति कायकलेस विहायियं] तत्कायकेशे य तपोव्याख्यातं तदिति किं यव
 पाणभोयणं । परिवज्जणं रसाणान्तु भण्यं रस विवज्जणं २ ६ ॥ ठाणा वीरासणार्द्रया जीवस्रयो सुहावहा । उगा
 भणितं रस विवर्जनं रसपरित्याग तप कश्चो २ ६ स्थानानि वीरासगादीनिका उस भवीरा सणपणी जीवस्र सुखावहानि जीवने सुखना कारणहार

योरासनदीनां स्थानानि कायस्थिति विशेषाणि यथा धायन्ते क्रियन्ते वीरासन गुरुडासनलुडासनादीनि यथा क्रियन्ते तथा कायकेश्च स्यात्
 कथं भूतानि स्थानानि जीयस्य सुखावहानि कर्मनिर्मुल्लनक्षमाणि मुन कोट्टयाणि उपाणि भीषणानियैस्ते पुरुषे कतं मशक्यानि प्राकृतत्वाच्छिद्रव्य
 त्वय २७ अथ सलीनतामाह [एगल्लमणायाए इत्योपसु विवज्जए सयणासणसेवणया विवित्तसयणासण २८] एकात्ते जनैरनाकुले पुनरनापाते न
 विद्यते आपात स्तो पुरुपादीना आगमन यत्र तत् अनापात तस्मिन् पुन पसुपण्डकादि विपज्जिते आराभोयान शूल्य गृह्यादिस्थाने सयनासनसेवनया
 क्वा सलीनतास्य तपोत्रेय इत्यर्थं २८ [एसो बहिरइत्तपो समासेण वियादिओ अभिल्लरोतवोएत्तो बुच्छामि अणु पुब्बसो २९] एतत् पूर्वोक्त समासेन
 सत्त्वेयमाह तपोव्याख्यात एत्तोइति इतोऽनल्लर आभ्यत्तरतपोवत्ते अनुक्रमेण १९ (पायच्छित्त ३) पापआलोच्यतपसोद्गीकरण प्रायश्चित्त तथा विगयो

जहा धरिज्जति कायकलिसतमाहिय २७ ॥ एग त मणावाए इत्यो पसु विवज्जिए । सयणासण सेवणया विवित्त
 सयणासण २८ ॥ एसो वाहिरग तवो मगासेण वियाहिओ । अभि तरो तवो एत्तो वोच्छामि अणुपुब्बसो २९ ॥

उपदु करतगा यथा धायंते उग्र दृ कर जिम अभिग्रह करे लाय के गतप आख्यात एकाय केश तप कथो २७ एकात अनापाते स्त्री पशुवियज्जितं
 एकात शुक्यतीने अथाप स्त्रोयादिकनो व्यापनथो तहाकोइनु आववु नथो स्त्रोपण्डर रहित मयनासनसेवनया मयनउपायय आसनपाटि प्रशुख विविक्त
 मयनासन एकात मसनासन सलीनता तप २८ एय वाह्यतप एण्ठे कथा ते माह्य तप सत्त्वेण व्याख्यात सत्त्वेपे करीने क्खो अथतरतप इत
 पथात् वत्ते कइण्ड अथतरतप इ भेद एतल्लानतर अनुक्रमेण अन्नकसे २९ पाप आलोच्य तपन लेवु यल्लानो विनय करीवु वेयाहल्ल आचार्यादिकनु

हृदयानां अयं स्थानादिकरणं वेदाग्रं यथाज्ञानं । आहारोपशान्त्यानाद्येदानं तत्रैव स्वाध्यायः स्वाध्यायस्य चतुर्विधस्य करणतया ध्यानं धर्मं शुक्लादिचिन्तन उत्सर्गः
 कायोत्सर्गस्य कारणं प्रपि च पदपुरणे ३०] अथ विस्तरण षड् विधस्य भेदानाह (आलोचनादिहादीय प्रायश्चित्तं तु रसविह जिभिकवृहदसम्भं प्रायश्चित्तं
 तत्राहिय ३१] तत् प्रायश्चित्तं आख्यातं तत् किं यत् भिक्षुः साधुर्दशविध आलोचनाहार्दिक सभ्यक् वहति कायया सेवते तत् प्रायश्चित्ताख्यं आभ्य
 न्तरं तपश्चाख्यातं तीर्थं करैरुपदिष्ट आलोचनाहार्दिकं किं मुख्यते आलोचनं गुरोरग्रे पाप प्रकाशनं तस्मै अर्हति योग्या भवतीति आलोचनाहं तपः
 श्रियाद्युद्यानादिक यतोहि पाप आलोचनात् शुध्यति आलोचनाहं आदिर्दस्य तत् आलोचनाहार्दिकं दशविधं यथा आलोचन १ पडिकसले २
 मोस ३ विवेगे ४ तहावि उत्सर्गे ५ तव ६ वेद्य ७ मूल ८ अणुद्विधाय ९ पारंशिप १० चैव ३१ अथविनेय भेदा नाह (अभ्युद्यानं पञ्चलिकरणं तद्वैवासरण
 दायणं गुरुभक्तिभावसं स्मृसाविण्यो एसद्विधाहि श्री ३३] अभ्युत्थानं गुरुन् आगतान् दृष्ट्वा स्वकीयस्थानात् ऊर्ध्वं भवनं अञ्जलिकरणं करहययोजनं तद्यैव

प्रायश्चित्तं विंशो वैयावचं तद्वैव शक्यताश्चो । भागा उत्सर्गो विद्य अभिन्तरश्चो तवोहिद्व ३० ॥ आलोचनाया रिहा
 ईय प्रायश्चित्तं तु रसविह जिभिकवृहदसम्भं प्रायश्चित्तं तत्राहियं ३१ ॥ अभ्युद्यानं अञ्जलिकरणं तद्वैवा सरणदायण ।

त्रैवावस्य तद्यैव न्याधाय, तिम्रज रक्ताय ५ भेद ध्यानं ध्यानस्वरुं कायोत्सर्गं काउत्सर्गानुं करतु एषः अभ्यन्तरतपः ए अभ्यन्तरतप ६ प्रकारे जाएवा ३०
 तस्य नो गरीचनान्तरणं गुरुसमीपे भालोवि पापते प्रायश्चित्तं दशविध प्रायश्चित्तं दसे प्रकारे यः भिक्षुवृहति सभ्यक् जि साधु भली परिकायादस्यैव
 प्रायश्चित्तं आख्यातते प्रायश्चित्तनामा अभ्यन्तरं तप कर्त्तव्यं ६१ गुरुणा अभ्युत्थानं गुरुप्रमुखं वदाने उभायावुं तेषामग्रे अञ्जलिकरणं द्वायजोडवुं तद्यैवा

आसनदापन गुरोरपरिभक्तिभाव सुश्रूपागुरोरशदशकरण एष विनयोव्याख्यात इति विनयनामक पञ्चविध तपउक्तमित्यर्थं ३२ अथ वैयाहृत्य कथंते [आयरिनादयमि वैयावच्च मिदसविहं आसेवण जहाधाम येया वच्चन्तमाहिय ३३] तद् वैयाहृत्य आख्यात तत् इति किं यत् यथाधाम इति यथा बल आचाया दैविपयेदयविधे वैया हृत्य उचिताहारादिदात् तथा आसेवन तत् वैया हत्तास्य तप कथितमित्यर्थं आचार्यादयोदय वैया हृत्ययोग्या तेव अमीआचार्ये १ उपाध्याय २ स्वविर ३ तपस्यो ४ न्तान ५ साहण ६ साधर्मिक ७ कुल ८ गण ९ सङ्ग १ एतेदशवैयाहृत्यार्थी ३३ अथ स्वाध्यायमाह [वायणा पुच्छणान्य तहेयपरियहणा अणुपेहाधम्मकहा सक्काओपसहामवे ३४] वाचनापुच्छनापरिवर्तनाअनुपे चाधम्मकथाइति

गुरुभक्ति नाव सुसूसा विगओ एस त्रियादिआ ३२ ॥ आयरिय मारुए वैयावच्च मि दसविहं । आसेवण जहा याम
विगानच्च तमाहिय ३३ ॥ वायणा पुच्छणानेव तहेवय परियदणा । अणुपेहा धम्म कहासज्जाय पचरा भवे ३४ ॥

सनदान तिम यलो तेहने आसण पु छणादिवे सवादेवो गुरुनी भक्तिभाव सुश्रूपा गुरु ऊपरि भक्तिभाव गुरुनी आदिश प्रमाणा कर एष विनयरूप तप भगवता व्याख्यात विनयरूप भगवते कल्लो २२ आचायादिपु आचार्यादिकते भिखे दशविध वैयाहृत्ते अशनादिक आणी दिवासेवे यावच्च दसप्रकारने विरु आसेवणा यथा वर्त्तेन आसेवणा वैयावच्च सबपी अणुष्ठान करवु आपणा बलसारु तहैयाहृत्य आख्यात ते वैयावच्च काहा भगवते ३३ वाचना पुच्छनाधेय गुरुसमीपे वाचना नीवो १ सदेहनु यलो पुच्छवू २ तथैव परिवर्तना तिमयलो शास्त्रभख्यानु यार २ गुणवु ३ अणुपेचा सूतादिक धर्याचनववा ४ धर्मोपदेश धर्मोपदेशदेवो ५ अथ स्वाध्याय पचभाभवेत् मक्काय पाचप्रकार रूप अथतर तपकल्लो ३४ आर्त्त रोरध्याने पर्वयित्ता

स्वाध्यायः पञ्चधा भवति यत्तथा आर्षसु पूर्वं क्षतएवास्ति ३४ अथ ध्यानमाह [अद्वकटाणि वज्जित्ताज्जाएज्जासुसमाहिण धम्मसुवाइ भाणान्द भाण त तु
बुहावए ३५] बुधाः पण्डितास्सदातथान वदन्ति तदाइति कटा यदा सुसमाहितं संभ्यक् समाधि युक्तः साधुरान्तं रौद्रे दुर्ध्यानित्यज्ञा धर्मं शुल्लध्याने
ध्यायति तदाध्यान ध्यानाख्यत्तपोन्ने यस्मिन्त्यर्थः ३५ अथ कायोत्सर्गतप उच्यते (सयणासणठानेवाजिभिरवृणवाचरे कायस्सविउसग्गी कट्टोसोपरि
कित्तिस्रो ३६) तत् षट् कायोत्सर्गाख्यं तपः परिकीर्तितं तत् किं यत् सयनासनस्थानेभिश्च साधुर्नश्चाप्रियतेनव्यापार कुर्यात् शयनेस्वपि आसने
उपविशने स्थानजडं स्थितौ यथा शक्तिकायस्य व्युत्सर्गे मय तस्यत्यागः स्यात् तदाकायोत्सर्गाख्यं तपोभवति ३६ (एवं तवं तु दुर्विहं जे सग्ग आयरिसुणी
सेविण्णं सग्गसंसारविण्णसुच्चइ पण्डिएत्तिवेमि ३७] योभुनियः साधु एवं अमुनाप्रकारेण वाद्याभ्यन्तरभेदेन द्विविधं तपः सग्ग आचरति स पण्डित

अद्वकटाणि वज्जित्ता भाएज्जा सुसमाहिण । धम्म सुवाइ भाणान्द भाणान्तं तु बुहावए ३५ । सयणासया ठाणेवा
जेउभिक्खु नवाचरे । कायस्स विउसग्गी कट्टोसोपरिकित्तिस्रो ३६ ॥ एवंतवतु दुर्विहजे सग्ग आयरिसुणी । सेविण्णं

आर्तं ध्यान दु खधी ऊपरुं रोदध्यानतेवे वर्ज्जनि ध्यायेत् सुसमाधित ध्याये दृढचित्तधको धर्मध्यान शुल्लध्यान च ध्यायेत् धर्मध्यान ध्याये अते कर्मनी
इणणहारते शुल्ल ध्यानध्याये ध्यानतप कहोजे ते एवे ध्यानरूप अभ्यतर तप कथो बुव तीर्थं करे ३५ शयने आसने अभ्युत्थाने वा ल्थाने विखे वेस
वाने विखे जभारहवाने विखे य भिच्छकायादि व्यापारा न करोति जे साधु ध्यानं चालं न करे कायायाः व्युत्सर्गः कायात् वीसिरावतुं सेट्टादिक
यको निवर्त्तुं षट्सं अग्गं तर तप कट्टो ते अग्गं तर तप वग्गार्थो ३६ एव वाद्याभ्यन्तरं तपः द्विविधं इम वाद्या तप अग्गं तर तप विहं भेदे य

नात् विरति कुर्यात् निवर्तनं कुर्यात् एकाएकस्मिन् स्थाने प्रवर्तनं कुर्यात् सार्धविभक्ति कस्मिन् इत्येकं इत्युक्तत्वात् एकतो विरति कुर्यात् इत्यत्र
पञ्चम्यर्थे तस्य श्रुतकतः एकस्मिन् स्थाने प्रवर्तनं कुर्यात् इत्यत्र सप्तम्यर्थे तस्य प्रत्ययः निवर्तनप्रवर्तनयोः स्थानमाह असयमि इति असयमात् हिंसादि
श्राश्रवात् निवर्तितं कुर्यात् च पुन सयमे सप्तम्यदिधि च प्रवर्तनं उद्यमं कुर्यात् २ [रागद्वीसेयद्वीपावे पावकस्यपवन्तणे जिभिवत् रुंभई निषंसेन
अच्छदग्रण्यते ३] योभिन्नः गायत्रागद्वेधीनिरुण्टि कथंचित् उदय प्राप्तीसतीज्ञानविरितं अत्यन्तनिरसु कुरुते स साधुभिर्जुर्मण्डले चातुर्गतिकसंसारिन
अच्छद इति न गिष्टिनि सयारात्वाभीभवति ३ (दण्डाणं गारवाण च सक्ताणश्चतियनियं जी भिवत् चयईनिषं सेन अच्छ इमण्डले ४) योभिर्जुईण्डानां
च पुनर्गास्वायां च पुनः शयानां प्रत्येकं त्रिकं १ लज्जति स्वस्य आत्मनिनधारयति स भिक्षुः ससारिणतिष्ठति पूर्ववत् दण्डवति चारितधनापहारिणदरिद्रः

पवत्तणं २ । रागद्वीसेय दी पावे पावकस्य पवत्तणे जी भिवत् रुंभई निषंसेन अच्छद मंडले ३ ॥ दंडाणं गारवा
णां च सखाणां च त्रियं २ जी भिवत् चयई निषंसेन अच्छद मंडले ४ ॥ दिव्येयजे उवसर्गो तहातिरिक्क माणुसे जी भिवत्

निवर्तते असंयमदि संसृष्टि कथकी निवर्तवुं संयमे च प्रवर्तनं सयम भेदने विखे प्रवर्तवुं २ राग द्वेपौ द्वावपि पापरूपौ रागद्वेष विदुं पाप पाड्य
पापकर्मां प्रवर्तवौ पापकर्मां सिध्यात्वादिकना प्रवर्तवणहार यः भिक्षुरथति नित्य जी साधु रुंधि अलगकरे सन तिष्ठति मंडल ते नर हे मंडल संसार
माहि भसे नही ३ दंडानां मन वचन कायाना दंडनीगारवाणां च रिद्विरस याता गारवानो प्रत्यानां त्रिक त्रिक मायानियाण मिथ्यात्व शक्त्यनी
त्रिकय भिज्जु गजति निज्जं जी साधुत्वजे सदा सनतिष्ठति ससारमंडले तेनरहे मंडल संसार माहि ४ देवकतोपसर्गान् दिवताना कीधा हास्यादि

तियते आत्माएभिरितिदृष्टा दुरध्यवसायस्तेपात्रिक मनोवाक कायेर्दुष्टाध्यवसायचिन्तनत्वेनति प्रकारक एतदृष्टविक तथा शुरांलोमादि
सहितस्य चित्तस्य भावा पथनसायानिगौरयानि तथा त्रिक ऋद्धिगौरवरसगीरवसातागौरवरूप तथा शक्यते वाध्यते जन्तुभिरिति शक्यानि तेषा
त्रिक मायादिशात्मज्यादेशनशयत्रिक श्रेय एतेषा योनिपेधक समुनिसुं क्षिणामोत्यर्थ (दिव्येयजेउपकामो तद्वातेरिच्छमाणुसेजेभिकवूसहर्द निच सेन
षण्डनच्छरे ५] यामिसुदिदधान् देवे क्तान् तथातेरयान् तियगभि क्तान तथामानुषकान् मनुष्ये क्तान् उपसर्गान् सम्यक कपायाभावेनसहते
समण्डने ससारनतितटति ५) दिगहाकसायसथाण आणण च दुय तद्वाजेभिकवूवज्जर्द निच सेन अच्छरमण्डले ६) योभिचुनिकाया चतुष्क राज्यदेश
भोजन स्तोणा वर्धनारूप भोधमानमायालोभरूप कपाय चतुष्क सञ्चाचतुष्क आहारभयपरिग्रहसैधनरूपविकारचिन्तन रूप श्रेय च पुग ध्यानय्ये
द्विक शान्त शौद्रदप लजति स सायुस्ससारनतितटति प्राकतलात् ध्यानानां रति बहुवचन ध्यानानां चतुष्टयेवर्जनीय ध्यानहितय श्रेय तस्मात्
हयोरिदमहण ६ (चण्डुदृदिययेसु समिडचकिरियासुय जेभिकवूजयइनिच सेनअच्छरमण्डले ७) योभिचुवर्तेषु प्राणतिपातविरत्यादिषु तथा

सहर्द सप्ता सेन अक्कइ मडले ५ । विगहा कसाय सन्नाण आणणच दुय तद्वा जे भिकवूवज्जर्द निच सेन अक्कइ

उपसग तथा तियग मनुषागा तियचगा क्रोधा अने मजुयना क्रोधा उपसर्गं य भिचु सम्यक सहते जे साधु भली परिसहे सन तितटति ससार मडले
तेन रहे स चारगुहि ५ विकथा कपाय स ज्ञाना धिच्छकथा तेविकथा ४ क्रोधादिकपाय ४ ध्यानानाचहितय तथा ध्यान २ आत्त ध्यान रौद्रध्यानवली य
भिचुवर्जति नित्य जे साधु वर्जोसदार सन तितटि मडले ते रहे नही स चारमाहि ६ धर्तेपुइ द्रियायेषु पचसमिदि प पाचसमितिनविखे क्रियापुचकाइय

इन्द्रियार्थेषु शब्दादिषु तथा समितिषु पञ्चसु तथा क्रियासुकायिकवधिकारणिकी प्राप्तेऽपि की पारितापनि कीप्राणति पातिकापु पञ्चस्यतते यत् कुरुते हि यो पश्येय बुद्धिं कुरुते समण्डलेनतिष्ठति ७ [लिसासुकसुकायेसु कर्के आहारकारणे जीभक्त्वु जयर्दनिचंसेन अच्छद्रमण्डले ८] यः साधु षट् लिसासुपुनः षट् सुकायेषु तथा आहारकरण षट्कैयतते यथा योग विपरीतलेयानां निरोधेन सम्यलेज्याना धारणेन षट्कायानां रक्षणेन पञ्चभिः पूर्वोक्तैः कारणैः आहारकरणेन यत् कुरुते स साधुर्मण्डलेनतिष्ठति ८ [तिर्युगोत्तर पडिमासु भयङ्गात्सु सत्सु जीभक्त्वु जयर्दं निचंसेन अच्छद्रमण्डले ८] योभिचुः संख्यादिषु समासपिण्डावग्रह प्रतिमासु समासपालने यत् कुरुते इहलोकान्दिस्मासु भयस्थाने भयस्थाऽकरणे स्वैर्धं कुरुते समाधुर्मण्डलेनतिष्ठति ८

मंडले ६ । वएसु इन्द्रियत्येसु समिर्दसु किरियासुय । जी भिक्त्वु जयर्दं निचंसेन अच्छद्र मंडले ७ । लिसासु कसु काएसु कर्के आहार कारणे जी भिक्त्वु जयर्दं निचंसेन अच्छद्र मंडले ८ । पिंडिगोह पडिमासु भयङ्गात्सु सत्सु जी भिक्त्वु जयर्दं निचंसेन अच्छद्र मंडले ९ ॥ सएसु वंभगुतीसु भिक्त्वु धर्मांसि दसविहे जी भिक्त्वु जयर्दं निचंसेन

क्रियाश्चादिदेशक्रियाने विखे य भिचू यतते नित्य जी साधुयतन करं सदा सनतिष्ठतिमंडलेतं रहेनही स सारमाहि ७ लिसासुषट्सु कायेषुहेलेस्थानेविखे क्कायनेविखे षड्धाआहारकारणे क् आहारना कारणे तेहने विखे य भिचू यतते नित्य जी साधुयतकरं सदासनतिष्ठति मंडले तेन भर्मे स सारमाहि ८ पिंडो उग्रहप्रतिसासु स सटादिक आहार लेवाना अभिग्रहनेविखे भयस्थानेषु समासु इहलोकान्दि ७ भयस्थानकर्तेविखे यःभिचू यततेनित्य जीसाधू जतन करे सदासन तिष्ठति मंडले तेनभमे स सारमाहि ८ भदेषु जातिम शादिकदसदेविखे ब्रह्मचर्य गुप्तिषु वरहचर्यनववाहिने विखे भिचूधर्मेदसविधे साधुना

[सद्ये सुवभ्यगुत्तो सुभिक्षू धूम मिदसविहे जे भिक्षू जयई निच सेन अच्छइ मण्डले १०] यो भिष्वर्मदेपु जाल्यादिपु अष्टसुतथा ब्रह्मगुप्तिपु नवसु ब्रह्मधर्मैष्व
रक्षणायाटिकासु तथा दयविधेयदान्यादिप साधुधर्मय यतत मदाना परिहारि ब्रह्मगुप्तिना रक्षणे उद्यम कुरुते स ससारिनतिष्ठति १० [उवासागाण
पडिमासु भिक्षूय पडिमासुय जे भिक्षूजयई निच सेन अच्छइ मण्डले ११] य साधु उपासकानां यावानां एकादशसु प्रतिमासु तथाभि चूर्णां द्वादशस
प्रतिमासुयव कुरुते यावप्रतिमाणा सम्यक ज्ञानेन उपदानेभिषु प्रतिमाणा सम्यक ज्ञान्वापालनेयव कुरुते स ससारिनतिष्ठति प्रतिमाश्रमिष्वविधेया
उच्यन्ते ११ [किरियासुभूयगामेसु परमाहमिषुय सुय जे भिक्षू जयई निच सेन अच्छइ मण्डले १२] यो भिषु क्रियासु कर्मवचन भूतासु चेटासु स्वाधा
नर्थादिभेदेन त्रयोदशसु तथा भूतप्राप्तिषु भूताना प्राणिना यामा सवाता स्थानानौतियावत् तेषु भूतप्राप्तिषु तथा चतुर्दशसु एगिन्द्रियसहमियदा

सेन अच्छइ मण्डले १० ॥ उवासागाणपडिमासु भिक्षूया पडिमासुय । जे भिक्षू जयई निच सेन अच्छइ मण्डले ११
किरियासु भूयगामेसु परमाहमिषुय । जे भिक्षू जयई निच सेन अच्छइ मण्डले १२ । गाहासोलसएहि तहाअसु

धम

भाषा

धर्मैष्वभाषि द्योप्रकारे य भिक्षू यततनित्य ज साध जतनकरे सदासन तिष्ठति मण्डले ते स सारमाहि भमे नही १० उपासकाना प्रतिमासु यावकनी
दसणवयादि प्रतिमा ११ भेदने विखे भिक्षूना प्रतिमासुच साधनी १२ प्रतिमाने विखे य भिक्षू यततनित्य जे साधू यतन करे सदासन तिष्ठति
मण्डले ते स सारमाहि भमे नही ११ क्रियासु भूतप्राप्तिषु अनर्था द्वाददि १२ क्रियाने विखे भूतप्राप्त १४ भेद जीयने विखे धरमाधार्मिषुय च अयादिक १५
शेद परमाहमिने विखे य भिक्षू यततनित्य जे साधू यतन करे सदासन तिष्ठति मण्डले ते स सारमाहि भमे नही १२ गाथाध्यायन सुलकर्ते गाथाध्या

रत्नादिषु तथा पुरमाधार्मिकेषु पञ्चदशसु अर्थे प्रवृत्तिसोचिबल्लादिषु यत्नं कुरुते तत्रादशक्रियाणां परिहारे चतुर्दशभूतयामाणा रत्नस्ये परमाधार्मिकाणां
 परित्रानां नष्टकार्मिकेषु निवर्तने उद्यतो भवति स ससारिनतिष्ठति १२ (गान्हासोलसएहिं तहा असं ८ संमिय जीभिकव जयइं निधंसेन अच्यइससुले १३)
 यो भिन्नार्थापोहप्रकेषु तथा असयसे सप्तदशविधेषिपिनित्य यतते यत्नं कुरुते समप्युक्ते न तिष्ठति गीयते कथते स्व समया रसमय रूपीर्थाभिज्ञानाया
 स्थासां पोहप्रकाणि सूत्रकालाणि अथयनपोहप्रकाणि तेषु गान्हापोहप्रकेषु सप्तमी वरुवचने लतीया बहुवचनं प्राकृतत्वात् सूत्रकलां गान्हायनानिपोहप्र
 सन्ति सप्तश्रीवियालीयमित्यादि असंयमस्य सप्तदशभेदाः सन्ति पञ्चाश्वयाहिरमष्य पक्षेन्द्रियनिग्रहः कषायजयः दण्डत्रय विरतिर्येत् संयमः सप्तदशभेद
 एतस्माद्विपरीतोसंयमोपि सप्तदशविधः तस्मात्सप्तदशविधे असयसे योन प्रवर्तते स ससारिनतिष्ठति १३ [वशंसिनाद अकदयेर ठाणिसु असमादि ए
 जिभिकव जयइं निधंसेन अच्यइ मप्युक्ते १४] यो भिन्नार्थाभिज्ञानि तत्राश्वयोऽष्टादशविधेदिश्वोदारिकनैष्टुनानां कारणाकारणानुमति भेदात् तथा मनो वाक्यादे
 नाष्टादशप्रकारे तथा ज्ञाताध्ययनेषु एकोनविंशतिः सख्येषु चत्त्रिंशदिषु तथा असमाधिस्थानिपुविशति संख्येषु यत्नं कुरुते स ससारिनतिष्ठति विशाल

जमभिधय । जी भिन्नवृत्त जयइं निचचंसेन अच्यइ मंडले १३ । वशंसि नायज्जयणेसु ठाणेसु असमादिषु । जी भिकवृत्त

नसुगणाना प्रथम गत स्कंधने विखे तथा असंजमादिषु तिम वली एखिदी असंयमादि १७ भेद असंयमने विखे य साधुः जी साधु यततेनित्य यतन
 करे सदासन तिष्ठति भंडले ते संसारमाहि भसे नदी १२ द्रव्यचर्ये ज्ञाताधायने ऊदारिकांश्च द्रव्यचर्ये निविखे ज्ञाताना अधायननेविखे अठारविध ५ अदयं
 चिंशाल्य समाधिस्थानेषु असमाधिस्थानक विमर्शने विखे न भिन्न यततेनित्यं जी साध यतन्न कर भटासन तिष्ठति भंडले तेन भसे संसारमाहि १४

ज्ञानीपयोर्न कुरुते समष्ट्येन तिल्लिति १६ [पणवोसंभावणाहि उदैसेसुदसादण जिभक्खु जयईनिच्चंसेन अच्छदमण्डले १७] योभिच्चुः पञ्चविंशति भावनासु पञ्चमहाव्रतविषयेईर्यासमित्यादिशाधनारुपास तथादशाईणं इति दशाश्रुत्स्वन्वकाल्य व्यवहाराणां उदैशेषु षड् विंशति संख्येषु यत्नं कुरुते समष्ट्येनतिल्लिति १७ [अणगारगुणेहिं च पकपेयतहेवय जिभक्खुजयईनिच्चंसेन अच्छदमण्डले १८] योभिच्चुः सप्तविंशति संख्येषु अन्नगारगुणेषु तथैव प्रकपे अचारान्हा सुत्ताण्णस्यस्वपरिज्ञानाद्यष्टविंशधयनात्मके साधीः प्रकष्टाचारे अचारान्हा यत ते सम्यग्भ्यासं कुरुते स संसारिनतिल्लिति १८ (पावसुयप सज्ञेसु मोहटाणेषु चैवय जिभक्खु जयईनिच्चं सेन अच्छदमण्डले १९) यो भिच्चुरेकीननिंशत् पापश्रुत प्रसङ्गेषु तथानिंशमीहस्थानेषु यततेस संसारिन तिल्लिति पापो पादानानि श्रुतानि पापश्रुतानि तेषु प्रसङ्गा स्थाविधा शक्ति रूपाः पापश्रुत प्रसङ्गास्तेषु अष्टाङ्ग निमित्तादि शास्त्राभ्यासेषु मोहो मोहनीय कर्म तिल्लिति तेषु तानि मोहस्थानानि तेषु तिनंशत् सख्येषु निवृत्तिं कुरुते १९ [सिद्ध्यगुणजोगेसु तिल्लीसासायणासु यजेभिकखु जयई भावणाहि उदैसेसु दसादणं । जि भिक्खुजयई निच्चं सेन अच्छद मंडले १७ । अणगार गुणेहिं च पकपं मि तहे वय जि भिक्खु जयईनिच्चं सेन अच्छद मंडले १८ ॥ पावसुयपसंगेसु मोहटाणेसु चैवय जि भिक्खु जयईनिच्चं

जि साधु यतन करे सदसासत तिल्लिति गडले ते संसारमाहिं भमे नही १७ अणगारगुणेषु च वयक्कादि साधुना सत्तावीस २७ गुणने बिखे साधुनी उत्त कष्ट आचारंगनार ८ अधायनने बिखे यः भिच्चु यततेनित्यं जि साधु यतन करे सदसासत तिल्लिति मंडले ते संसारमाहिं भमेनही १८ पापश्रुत प्रसंगेषु पाप आववानां श्रुत शास्त्रनिमित्तादिना २९ भेदने बिखे मोहस्थानकेषु चैव मोहनी जिहां रहे निमीसपणे बर्त्तते ३० मोहस्थानने बिखे यः भिच्चु यतते

इति शोभदृत्तराश्वनसूत्रार्थदीपिकाया उपधाया श्रीलक्ष्मोक्तिर्निगणित्थिथ्य लक्ष्मीवल्लभगणिविरचिताया चरणविध्याख्य एकश्रियत्तम अध्ययन सम्पूर्णं
अथ द्वालिप्रत्तम प्रोच्यते पूर्वोध्ययने चारित्रविधिरक्त स च अप्रमादिन साधोर्भवति तेन साधुनाप्रमाद परिहर्तव्य ततः प्रमादज्ञानार्थं प्रमाद
स्यानाख्यं अधायन अपीच्यते [अश्वन्तकालस्य समूलयस्य सम्बन्धसदुक्त्वस्यउजीपमीकवीतभासश्रीमिपडिपुनचिन्तासु गेहएगं तद्विद्य हियथ्यं १] भव्यान् प्रति
भगवान् वदति ऋधर्मां स्वास्थ्यपि जस्य स्वास्थ्यादिश्रियान् प्रतिवक्ति भीप्रतिपूर्णं चिन्ताः प्रतिपूर्णं विषयादिभ्योविरक्तत्वेन अकलण्डं चिन्तं येषां ते प्रतिपूर्णं
चिन्ताः तेषां सव्याधनं भीप्रतिपूर्णचिन्ताः अखण्डमनस्कास्त एकांते नहित सत्यक् ज्ञानदर्शनचारित्रात्मकं मोक्ष हेतु तथा वच्यमाणं मे मम भाषणस्य
वचन यूय श्रुतकिमर्थं हितार्थान्त्वमिति किं यो हेतुः सर्वस्य दुक्त्वस्य प्रमीचोस्ति अत्र दुक्त्व शब्देन संसारस्य ग्रहणं कीदृशस्य दुक्त्वस्य अश्वन्तकालस्य
इति अश्वन्तइति अन्तं अतिक्रान्तं अश्वन्तं अश्वन्तं कालीयतस अश्वन्तकालस्य पुन कीदृशस्य समूलकस्य मूलैककथायाविरति कृपेण सहवर्त्तते

यथां समस्तं ३१ ॥ अश्वन्तकालस्य समूलयस्य सव्यस्य दुक्त्वस्य उ जी पमीकव्यो । तं भासश्चो मे पडिपुन चिन्ता सुगुहए
गांत हियं हियथ्यं १ ॥ नाणस्य सव्यस्य पगासगाए अन्नाणा मोहस्य विवज्जगाए रागस्य दोसस्यय संवएणं एगं तं

कालनी ते अचिरतिरूप मूल सहित सर्वस्य दु खस्य प्रमोक्षः सर्वदुःखमयः संसारनी जि म्काइवु ते मुक्त्तने हे प्रतिपूर्णचिन्तः तं मे ममभाषय हे प्रति
पूर्णं चिन्तवत विप्रयथो चित्तखडाणी नथी जिहनी एहवा हे गुरु मुक्त्तने कहे श्रुत एकाग्रचित्तेन हितार्थं सांभलो एकांतहित मोक्षनी अर्थ जिहं १
ज्ञानस्य सर्वस्य प्रकाशनया मति ज्ञानादिक सर्वज्ञाननी प्रकाशना प्रगट करीवे करोने अज्ञान मोहस्य विवर्जनात् मति अज्ञान अने दर्शन मोहनीने

समीपतरवर्ती मूढ हृदयस्य स्वावाग्ने वक्ष्यमाणो मार्गः प्राप्ति हेतु रक्तद्रवति शेषः एषः कस्तं मार्गं दर्शयति प्रथम गुरुहृदसेवाज्ञानप्राप्ति हेतुः गुरुवच
हृदाश्च गुरुहृदास्तेषां सेवा गुरुहृदसेवा तत्र गुरुवीथमां चार्थाः हृदाः श्रुतपर्यायाभ्यां ये महान्तस्तेषां सेवा ज्ञानदर्शन हेतु भूता इत्यर्थः पुनर्दृरात् बाल
जनस्य मूर्खस्य विशेषेण वर्जना परिहरणाज्ञानस्य हेतुभूता पुनः पंचप्रकारस्य स्वाध्यायस्य एकान्तेन एकाग्रचित्तेन निषेवना अभ्यसनं स्वाध्यायैकान्त
निषेवना ज्ञानप्राप्ति हेतुभूता पुनः सूत्रार्थयोः सम्यक्प्रकारेण चिन्तना सूत्रार्थं सच्चिन्तना सापि ज्ञानप्राप्तिभूता पुनर्धर्त धैर्यं चिन्तस्यैकाग्र्यं उद्वेगा
भावत् एतदपि ज्ञानप्राप्ति हेतुभूतं एतैरन्तरेण ज्ञानप्राप्तिसिंस्थादित्यर्थः ३ एतान् द्रव्यता पुरयेण प्राक् किं कार्यं तदाह (आहार मिच्छेन्नियमे
साणिज्जं सहाय मिच्छेन्नियम उच्छेत्तु बुद्धिं निकेय मिच्छे ज्ज विवेगजीगं समाहिकामि समणे तवस्सी ४) समाधिकामः अमणस्तपस्वी एतत् द्रव्येत् समाधि
ज्ञानदर्शनचारिन्नाभं कामयति अभिलषतीति समाधिकामः ज्ञानदर्शनचारिन्नाभिलाषु कः अमणः क्रियागुष्ठानादौ अमकर्ता तपस्वी षष्ठादभादि
तपः कर्ता एतत् द्रव्येत् एतत् किं तदाह पूर्व एषणोय दीपरहित आहारं द्रव्येत् अभिलषेत् यादश्च आहारस्तादृशज्ञान इति वचनात् तमपिभितं

सुतस्य संचितगया धिर्द्वय ३ ॥ आहार मिच्छे नियमेसाणिज्जं सहाय मिच्छे निउच्छेत्तु बुद्धिं निकेय मिच्छे ज्ज विवेग

त्यादिकनो सेवा दूरे स्वाध्यायस्य एकांति करण सज्जाय पाचप्रकारे दृष्टचित्ताटाली एकांति करवी सुत्रार्थं संचितनधिया सूत्रने अर्थं चिंतयानि विखे
इति एकांत पणे वांके ३ आहारद्रव्येत् भित एषणीय ते साधु एहवीआहारवांके मानोपेत अने एषणीय दीपरहित सखायं द्रव्येत् निपुणार्थं बुद्धि शिथने
वांके जीवादिदत्तने विखे जीहनी निकेतन द्रव्येत् विविक्तयोगे उपाश्रय ठांसवांके स्त्रीपशुपड करहित समाधि कामः अमणः तपस्वी ज्ञानादिकनी

प्रमाणोपेत नत्व परमित यद्भोयात् पुन साधुनिर्गुणार्थं बुद्धि सहाय दृष्टेत् निगुणार्थंपु, जीवादितत्वेपु, बुद्धिर्यस्य स निगुणार्थं बुद्धिस्त जीवादितत्वश्च
सहाय शिष्य दृष्टेत् यतोद्धि सभ्यक निर्दिष्टायाहारधर्माचार वेदिकान् शिष्यान् गुरुरपि सहायान् शैलकमुनिवत् धर्मस्येयं लभते पुनर्यं साधुर्विवेक
योष्य निकेत दृष्टेत् विवेक स्त्रीपशुपण्डकादीना अभावेन एकान्तस्तेनयोष्य विवेकर्योष्य निकेत साधुनिवासास्थान अभिसर्पेत् ४ अथ कासादि
दीपययात् चेत् पूर्वोक्तगुण सहाय शिष्योनलभेत् तदा कि कर्तव्यमित्याह (नवालभित्वा निउष्य सहाय गुणाहिय वा गुणश्री सम या दृक्कोविधपायाद्
पिषज्यभ्तो पिष्टरिज्जकाभेसु असज्जभाषी ५) वा शब्दो यद्यथे वा यदि निगुण बुद्धिम त सहाय शिष्य न लभेत् १ प्राप्तुयात् त सहाय गुणाधिक गुणै
स्त्विकन् स्थितैविनयज्ञानादिभिरधिक उत् कष्ट अथवा त शिष्य गुणतदति स्विकन् स्थितैज्ञागादिभि सम सदृश न प्राप्तुयात् तदा स साधुरेकोपि
एकाक्यपि शिष्यैरहितो विधरत् कुर्यात् न तु हीनाना कुशियाथा सुण्डभेलाप कुर्यात् सभ्यक शिष्याऽभावे साधुना एकाकिनपि विहर्त्तव्य न
कथिरीप सपु कि कुर्वन् विहरत् पापानिपापकारकाणि क्रियानुष्ठानानि विवर्जयेत् पुन साधु कि कुर्वन् विधरत् कामेषु असज्जमानइति
इन्द्रियसन्नेषु अनोद्यतो भवन् प्रतिबन्ध अकुर्व्वाइत्यर्थं ५ अथ दु खप्रमीक्ष हेतु ज्ञापनार्थं दृष्टान्तमाह (जहाय अणुष्यभवावलागा अण्ड बलागथ

लोग समाहि कामे समणे तवस्त्री ४ ॥ न वालभेत्त्वा निउष्य सहायं गुणाहिय वा गुणश्री समंवा । एकोवि पावाद्

समाधिनी वांङ्क कृदादिक तपनी करणहार ४ नवालभेत् निगुण सहाय शिष्य कदाचित् नसर्हं न पाप्मे उत्सम बुद्धियत शिष्य गुणाधिक वा गुणत
सस वाते ज्ञानादि गुणे अधिको अथवा सरिखी एकोपि पापानि अनधरन् शिष्य धिनार एकनीपणि पाप कर्म अण करतो विधरत् कामेष असज्ज

भवं जहाय एमेवमोहायण खुत्तुहा मोह च तण्हाययणं वयन्ति ६) यथा बलाकपक्षिणी अण्डप्रभवा अण्डं प्रभव उत्पत्तिकारण यस्या सा अण्डप्रभवा अण्डादुत्पन्ना इत्यर्थः यथा च पुनरण्ड बलाकाप्रभवं बलाकापक्षिणीप्रभवी यस्य तत् बलाकाप्रभवं अण्ड बलाकातउत्पन्न इत्यर्थ एव अमुनादृष्टान्तेनेवखु निश्चयेन तृष्णावाञ्छामोहायतनं वदन्ति मोहस्य अज्ञानस्य आयतनं उत्पत्ति हेतुं पण्डितास्तृष्णां वदन्ति इति भावः च पुनर्मोहं तृष्णायतनं तृष्णायावाञ्छायाउत्पत्ति स्थानं पण्डितावदन्ति तृष्णाहि वस्तु निमूर्खासाचरागप्रधाना अतस्तयारागउपलस्यते रागिसतिहेतुपि स्यात् अतस्तृष्णाग्रहणेन रागहेतौ उत्तौ ६ अतारागहेषयोराधिक्यमाह (रागीयदीसोवियकम्मवीय कम्मं च मोहपभवं वयन्ति कम्मं च जार्हमरण कर्मवीजं कर्म वयन्ति ७) रागीमायालोभात्मकः च पुनर्हर्षं क्रीपमानात्मक एतौ हावपि कर्मवीजं कर्मणां ज्ञानावरणादीनां अष्टानां बीजं कारणं कर्मबीजं कर्म

विवज्जयंतो विहरिज्ज कामेसु असज्जमाणो ५ ॥ जहाय अण्डप्रभवा बलागा अण्डं बलागापभवं जहाय एमेव मोहाय यणं तन्हा मोहं च तन्हाययणं वयन्ति ६ ॥ रागीय दीसोविय कम्मवीयं कम्मं च मोहपभवं वयन्ति । कम्मं च जार्ह

मान द्विचरे पांचेइद्रोना कामभोगनिबिखे प्रतिबध अणकरती ५ यथा अण्डप्रभवाः बलाकाः द्विचे मोहनीयनी उत्पत्तिकहेके जिम इडांशकी उपनाथालाग पण्डियादिक अण्डं बलाक प्रभवं यथा अनेरुते पखीयायकी जपयुं जीव जीम एवं मोहायतन तृष्णा इम मोह अज्ञानयुं आयतन जपजवातुं ठांस तृष्णा वांछाके मोह तृष्णा यतन वदति अतिमोहने तृष्णा वांछासुं स्थानककहे तीर्थं करइ तथा रागहेषी कर्म बीजं रागअनि हेषतेसर्वकर्म आठप्रकारनीबीज उत्पत्तिथानकहेके कर्मं च मोहप्रभवं वदति तीर्थं कराः अनेकमेते मोहनीयकी जपनीकहे तीर्थं करकर्मं चजातिमरणस्यमूलंनेकमेतेजातिजन्म अनेमरणयुं

भवन्ति ८ अथ मोहदादीनां उक्त लोपायमाह (रागश्च दीसश्च तद्विषमोह उद्धतुकामिणः समूलजालं जेजे उपाया पडिवज्जियव्वाते कित्तइस्सामि अहाणु पुब्बि ८) हे शिष्यं अह आनुपूर्व्याअनुक्रमेणतान् उपायान् ते तव अग्ने कीर्त्तयिष्यामि तान् कान् ये उपायारागश्च पुनर्देषं तथैवमोहं समूलजालं मूलसहितं उद्धत्तं कामेन पुरुषेण प्रतिपत्तव्याः अङ्गीकर्त्तव्याः उपायशब्दे नहेतव ८ [रसापकामं न निसेवियव्वा पायंरसादित्तिकरानराणंदितां च काभासमतिदु यन्ति दुमं जहासादुफलवपकखी १०] राग द्वेषमोहोमूलनं दृच्छतानरेणरसाशुभारारादयोदधि दुग्धघृतादयोवा प्रकामं अत्यन्तं रसलोलुपत्वेन न निसिविं तव्या. सुहसुहर्नसेवनोयादत्यर्थः प्रायेणरसासेवितास्सन्तानराणांदीप्सिकराभवन्ति धातु वीर्यादि दीप्सु, त्यादकाभवन्ति च पुनर्दीप्सं धातुबलवीर्यादिशुक्लं मनुष्यं कामायमभि द्रवन्तिविषया समभि आयान्ति तथा वितं वनिता अभिलषन्तीति भाव केकमिषव पत्तिणः स्वादुफलं दूमं द्रव स्वाद्गनिस्वादुशुकानि

जे जे उवाया पडिवज्जियव्वा ते कित्तइस्सामि अहाणुपुब्बिं ८ ॥ रसापगामं न निसेवियव्वा पायं रसा दित्तिं करा नराणं । दित्तं च कामा समतिदुवंति दुमं जहा सादु फलं व पक्खी १० ॥ जहा द्रवणी पडरिंधणे वणे संमारओ

सत्र

भाषा

द्वेष तथैव मोहं रागद्वेष अने मोहनीयकर्मने उद्धत्तुं कामेन समूलजालं उद्धरिवानीं कामंनवांकानी धरणीने मूलसहितं येये उपायाः प्रतिपत्तव्याः जेजे रागादि कटालिवाना उपाय कारण आदरवा तत्कीर्त्तयिष्यामि यथानुपूर्व्यां तेहं कहीसवा अनुक्रमे ८ रसाः प्रकामं न सेवितव्याः रसघृतादि घणा सेववा नहीं प्रायः रसाः दीप्सिकराः नराणां प्राइंते रससेव्या थका दीप्सि वीर्यादिकना कारणहार मनुष्यने दिसं पुनः कामाः अतिगच्छति दीप्सि वीर्यादिक मनुष्यने कामकदर्पं साहसुं बलवंतथाइ काम आवोव्यापि स्वादुफल दुममिषव पत्ती जीम दुग्धघृता स्वादुवतने फलने पंखीया साहमाजाइ १०

सहितानिलयाट्टव स्त्री निलयस्य मध्ये वज्राधारिणीनिवास क्षमायुक्तीनास्ति तत्र यसमानस्य वज्राधारिणीवज्राधर्यस्यनाशपवस्थादिति
 भाष्य १२ क्त्यादि रूढितस्यानि वसमानेनापि स्त्रीसम्भारं कि कर्तव्यं तदाह [नरुवलावकविलासहाय नज पिय रूढियपेहिय वा रूढीणचिक्त सिनसेव
 रत्ताद्रुधयक्ते समेततयस्यो १४] तपन्नीग्रमग स्त्रीणां एतकव एतत् चेष्टित विस्तेसकीये मनसि सन्निवेश्य सम्यगवधायद्रु, न यधसेत दर्शनाय
 सोद्यमानभवेत् कौर्यं साधु स्त्रीणां एतत् चेष्टित सद्दि धला एतत् चेष्टित द्रुद्रु व्ययसाय न कुयात् यतोहि पूर्व मनस रूढ्याया प्रर्षति स्ततधशुरा
 दोनां रूढियाणां प्रष्टन्तिरिति तत् स्त्रीणां कि किचेष्टित तदाह रूप स्त्रीणां गौरादिवयोलावण्य नयनाङ्गादक कथिरुषविभेप विलासोर्विसाष्टनयन
 चेष्टाविशेष भयया मन्दरगतिकरणादिकीडास्य श्रित ईप्रहत्तानां दशान जन्वित ममनीशापादिक रूढित भ्रान्नापाङ्गादिमोटन स्वचिसाधिकारसूचक
 योचित वक्रावलीकन रूपश्च सावण्य च विलासय हास्य च रूपलावण्यविलासहास्यानि तेषां समाहारो रूपलावण्य विलासहास्य एतत्सर्वं स्त्रीणां
 साधुनारागण न द्रष्टव्यमिति भाष्य १४ (अदसण चैव अपत्यणश्च अचितण चैव अकितणश्च रूढीजणकारियभाषजम हिय सयादभवेररयाण १५)

विलास रास न जपिय द्र गियपेहियवा । द्रुढीण चित्तसि निवेसद्रसा द्रुद्रु ववस्ये समणे तवस्यो १४ ॥ अदसणचैव

चारो । ररुधु चमयुक्त नशो स्त्री पश्यपटकमाहि ररुता यद्रुधयन रूढि १२ न रूपलावण्य विलासहास्य स्त्रीनु रूप कोसयानो चतुरारं वक्रादिकनी
 योभा हास्य न कुर न जन्वित र गित मे चित वा सामथा वचन भ्रगादि मोहयो वा कोट्टि जोरुधु स्त्रीणां चित्ते निधाय स्त्रीजातिनु एभतु एरुधु
 चित्तने विस्ते पापीने द्रुद्रु अधावसाय न कर्त्या ग्रमण तपस्वी दिख याभयो मननकरे नकार पाछिस्थोलीजे १४ अदर्शणचैव अय अपार्थानश्च दर्शन

ब्रह्मवृत्तरताना सावधाना साधूनां एतत् आर्यध्यानयोगं हितं वर्त्तते आर्यं तद्व्यानस्य आर्यध्यान सभ्यगुध्यान धर्मशुक्रादिकं तस्य योग्यं हितं पण्यं धर्मध्यानस्य स्वैर्यकारकीभवति कीर्षः यदाहि ब्रह्मवृत्तधारिणः एतत् कुर्वन्ति तदा तेषां धर्मध्यानं स्थिर स्यादित्यर्थः तत् किं आर्य ध्यानयोग्यं तदाह स्त्रीणां अदर्शनं रागीणं अनवलीकनं च पदपुरेण एव नियये पुनः किं स्त्रीणा अप्रार्थनं अभिलाषस्य अकरणं पुनः स्त्रीणा अचिन्तनं यत् कदाचित् रूपादिकं दृष्टं तस्य चेतसिनस्करणं अपरिभावनमित्यर्थः पुनः स्त्राणा अप्रार्थनं अभिलाषस्य अकरणं पुनः स्त्रीणा अचिन्तनं यत् कदाचित् रूपात्मकगुणेनवानकीर्त्तनं अकीर्त्तनं नाम गुणोच्चारणस्य अकरणं यदि ब्रह्मधारी स्त्रीणां दर्शनं प्रार्थनं चिन्तनं कीर्त्तनं करोति तदा तस्य प्रार्थध्यानस्य उत्तमध्यानस्य स्वैर्यं न स्यात् एतत्तु धर्मध्यानस्य योग्यं हितं नास्ति १५ ननु कथिद्वच्यति विकारं हेतो सति विक्रियते तेषां न चेतसित एवधीराः तत् किं विविक्तप्रयनासनसेवनेन प्रति चेतत्वाह (कामं तु देवीहिं विभूंसियाहिं नचाप्रयाखोभद्रउन्निशुत्तातद्वाद्यिएगक्तहिं यत्तिनश्चा विवित्तभाषो शुण्णं पससथो १६ हे शिष्य तथापि सुनीनां विविक्तभावे एकांत स्थाननिवासः प्रयत्नः किं क्त्वा विविक्तभाव एकांतचित्तं

अपत्यणां च अचित्तणंचेव अकित्तणंच । इत्थीजगत्सा रिय भाणजुगाहियं सया वभवत्ते रयाणां १५ ॥ कामं तु देवीहिं

नजीरुषं निद्ये वांछा न करवो अचित्तनचेव अकीर्त्तनच गुं गारादिकनु धित्तन न करं निद्ये नानगुण कीर्त्तनं न करे स्त्री जनस्य स्त्रीजातिको आर्य ध्यानयोगं प्रार्थं उत्तमधर्मने योग्यधर्मनुं धरियो हितं सदा सर्वदा ब्रह्मवृत्ते रताना हितकारी सदासर्वदा ब्रह्मवृत्ते विवरे रागीने १५ अत्यर्थं पुनः विभ्रपिताभिर्देवीभीः प्रतिशयस्यो मनुष्यनीनां परिहारवृत्तं देयागनाप्र तेवर्त्ता अनकारे सहित्तणोद न समर्थाः सोभयितुं श्विशुभा संयसथो खोभा

मिता सुहृत्तराचेव भवन्तिसेसा जहा महासागरमुत्तरितानर्द्रं भवे अविगङ्गासमाणा १८) मनुयाणा एतान् स्त्री सन्धन्धि सङ्गात् समर्ति क्रम्य प्रेषाः धनधान्यादिसम्बन्धाः सुखीत्तराद्यैव भवन्ति सुखेनीत्तीर्यन्ते इति सुखीत्तरा यथा महासागरं स्वय भूरमण सदृशं समुद्रं उल्लङ्घ्य गङ्गानदी अपि सुखी त्तरासु खीकृष्या एव तथा येन स्त्री सङ्गस्यक्तस्य अन्यसङ्गीधनधान्यादि संयोगः सुलज एव १८ अथ रागस्य दुःखहेतुत्वमाह (कामाणुगिद्विष भवं खु दुःखस्य सब्वस्यलोगस्यसदेवगस्य जङ्गाइय भाणसिय च किञ्चित्सन्तगङ्गच्छद्रवोयरागो १९) वीतरागः पुमान् रागहे परहितो मनुष्यस्य द्विविधस्यापि दुःखस्य अन्तकं पर्यन्तं गच्छति प्राप्नोति तत् द्विविधं दुःखं कीदृशं कायिकं कायेभवं कायिक रोगादि तथामानसिकं मनसि भव मानसिकं इष्ट वियोगानिष्टसंयोगादि पुनर्यवदुखं सर्वस्य लोक सर्वस्य प्राणिगणस्य खुइति निश्चयेन कामानुश्लि प्रभव विषयसतसेवनोद्भूत वर्तन्ते काभ्यन्ते अभि

हराओ १७ ॥ एष्य सगे समद्रकमिता सुहृत्तराचेव भवति सेसा । जहा महासागर मुत्तरिता नर्द्रं भवे अवि गंगा
समाणा १८ ॥ कामाणु गिद्विषभव खु दुःखस्य सब्वस्य लोणस्य सदेवगस्य । जं काइयं माणसियंच किचि तस्यं तगं

ए पूठे कक्षां सग स्त्रीजातीनोते अतीकमीने सुखे नीत्तरितुं योथाः सेपसगाः सुखे क्तरीवुं कीद्र दुस्तर दीहितुं लोकने विखे नही यथा महा सागरं उत्तीर्य जिम मोटी समुद्र सयभू रमण क्तरिने गगासमानापिनदी सुखीत्तीर्णा भवेत् गंगासमान जे मोटी नदीते सुखे उत्तरीद्र एहवीह्रद्रं १८ कामानुश्लि प्रभव निश्चयेन दुःखं कामनी अनुश्लि, वाका तेइयो कपनी नियय दुःख आयाता वेदनीय जाणवी सर्वस्य लोकस्य देवसहितस्य सषला लोकना समूहने देवता सहितने यत्कायिक यानसिक च किञ्चित् जे कायाने दुःखरोगादि मननी वाइही बसना वियोगधी कपनी योडोइकाइ.

लवन्ते जनैरितिकामा विप्रयास्तेषु अनुग्रहि कामानुग्रहि सतताभिफावाकामानुग्रहि प्रभवो यस्य तत् कामानुग्रहि प्रभव कोदशस्य लीफस्य सदेव कस्यदेवै सहितस्यवोतरागोविगतकामानुग्रहिरिहोचते १८ अथ कामा एव दुःखहेतव इति वदति [जहाय कि पागफला मणोरमारसेण वधे णयभुञ्ज माणातेषुदृएजोविवपञ्चमाणी एषोवमाकामगुणाविवागे २०] यथा च कि पाकफलानिविपद्यस्यियस्य फलानिरसेनमधुरत्वेन वर्णेनरकादिनाचकारात् गन्धेन भज्यमानानिजनस्य मनोहराणि भवन्ति तानि कि पाकफलानि सुद्रके जीविते तुच्छेसोपक्रमेमनुष्यायुषिपञ्चमानानि उदराल्लेगत्वविपाका यस्यां प्राणानिमरणात्त दुःखानि भवन्तीत्यथाहार तथा विपाकेपरिपाककालिकामगुणाविप्रया एतदुपमा एतेषां कि पाकफलानां उपमायेया ते एत दुपमा कि पाकफलसदृशाविप्रयाद्वयं विषयाहि भोगसमयेमनोरनाविपाके परलोकेनरकादि दुःखदायिन २ रागस्यैव हेपसहितस्योहरणोपायं

गच्छद् वीयरगो १९ ॥ जहाय कि पागफला मणोरमा रसेण वन्नेणय भुञ्जमाणा । ते खुदए जीविय पञ्चमाणा एउव मा कामगुणा विवगो २० ॥ जे इ द्रियाण विसया मशुन्ना नतेसु भाव निसिरे कयाई । मया मशुन्नेसु मणपि कुञ्जा

दुःखसस्यातक प्राप्नोति वितराग ते दुःखेनां शतपारपानं श्रीवीतराग मुनोच्चर १८ यथा कि पाकफलानि मनोरमाणि जिम कि पाकदृष्यनां फल महारमणोक भला रसेन वर्णेन भुज्यमान रसे करोवर्णोद करो चकार यो गधे करी भक्षण करता स सुद्र जीविन प्रलयमान ते धद्र तुच्छ असार सोपक्रम जीवितने मरणातने दुःखदाइ एया उपमा कामगुण विपाकाणा ए उपमा कामभोग भोगव्याना फलने विषे जाणयो २० ये इ द्रियाणा विप्रया मनोया जे इ द्रिय ५ ना शब्दादीक विषे मनोहरनेतपु भाव कदाचित् करोति ते इ द्रियना विषयने विषे चित्तनो भाव न कर न च अमनो

माह [जिह्वस्थिगणविसयाननुत्पान तेषु भाव निरसिर्कयाद् नयामशुभे सुमशुपि गुल्जा समाहित्वासे समणितवन्मो२१] समाधिकामः समाधि नागदेषा
भावेन चित्तस्य स्वीत्या कामयते इति समाधिकामः चित्तस्थैर्वाभिलाषी तपस्या भ्रमणः साधुः तेषु दिग्देषु कटाधिनापं चित्ताभिप्राय न सञ्जित
न कुर्यात् तेषु केषु ये विषया इन्द्रियाणां कर्षादीना मनोभाः वक्ष्मभावर्तन्ते तथा च पुनर्ये मनोभा अप्रियारतेषु अभनोज्ञेषु इन्द्रियाणा विषयेषु
मनोन कुर्यात् इत्यनेन सुन्दरेषु विषयेषु सराग मनोनकुर्यात्तथा असुन्दरेषु विषयेषु स एषेपं मनोनकुर्यात् = १] इत्यन्त्यारत्नगणक वदन्ति तं रागहिउं
तमशुभमाहु त दोसहिउं अभणुन्नमाहु समीयजोत्सवीयरागी २२] अथ मनोभा मनोशयो, स्वल्पनाह चक्षुर्पोलक्षण रूपग्रहणतीर्कसावदन्ति
रूपं वर्षाः संस्थान वातहृद्यमानिनेति रूपग्रहणं चक्षुस्त्रिदशस्ये तत् लक्षण त इति तद्रूप रागहिउं क मनोभां साधुः यन्निन् रूपे दृष्टे रागउत्पद्यते
तद्रूप मनीआहुः तदेवरूपं द्वेषहेतुकं अभनोप्रमाहुः यन्निन् रूपे दृष्टे रागहिउं प उत्पद्यते तद्रूप अभनोप्रमिन्दर्थ, यः साधुस्तेषु मनोज्ञामनोज्ञेषु, रूपेषु,
समः सदृशइतिः स्यात् स साधुर्वीतरागउच्यते २२ [स्वप्नसाधवत्, गण्यं वदन्ति चक्षुःसा रथ गहण वदन्ति रागमहिउं समाधुवनाहु दोसका हिउं

समाहि कामे समणे तवसी २१ ॥ चक्षुसा रूवं गहणं वदति त राग हिउं तु मगुन्न साहु । त शिस हिउं अभणुन्नमाहु

ज्ञेषु मनः कुर्यात् अभनोज्ञ इन्द्रियने विषये मननकरे समाधिकामः यमणः तपसी रागदेषादि परिहार सनाधिनी यन्निनापी साधु धृष्टादि
तपनी कारणहार २१ चक्षुषः रूप ग्राहकं वदति बुधाः नीलने वर्षाभस्थानादिरूपनोपशुष कर्ते रूपते साधुर्नो साकर्मण्यारहे तद्रूप समनोज्ञ राग
हेतु आहुः ते रूप मनोहर ते रागपि मनुकारण कर्ते भगवत तद्रूप अभनोज्ञ दोषहेतुं साधुः तं रूप अभनोज्ञ पादुषो हिउं रूप कर्ते भगवत पपुयः सम

मनाच्चैरूपे एकान्तरक्षाभवति अत्यन्त रागोभवति स च पुरुषोऽतादृशोऽसुन्दररूपे प्रद्वेष करोति ततो बालोऽभ्रानीरगोपुमान् दुकृत्स्व सपीड सधात
उपैति विरागोमुनिस्तोनरागद्वेषजनितदुक्ते न नलिप्यते न स्त्रियति २६ [रूपाणुगासाणुगएयजीवे चराचरद्विसदृशैराकवचिर्त्ते द्विते परितावेदबाले
पोलीद अस्तद्व्युत्किल्बिदा २७) इदानीं रागस्यैव सकलाश्रयहेतुत्वमाह किट्टीरान्तर्वाधितोरानशर्त्तोऽभ्रानी जीवयिर्वैरनेकप्रकारै शस्त्राद्युपायै
कलाचराचरान् वसस्याचरान् अनेकरूपान् पोडयति एकदेशदु खीत्यादनेन पीडा उत्पादयति पुन परितापयति परिसमन्तात् दुकृतयति पुनर्हिंनस्ति
प्राणैभ्य इयक कराति परसरगोजीव कौट्य सन् रूपाणुगत सन् रूप प्रस्तावात् मनोश्च अनुगच्छति द्रष्टव्यतीति रूपाणुगारूपाणुगावासी आशाच
रूपाणुगाधारूपययोभिलापस्त अनुगतो अनुप्राप्तोरूपाणुगाशानुगतस्तादृश सन् सुन्दररूपयिलोकन मनोरथसहित सन् इत्यर्थं पुन कौट्योवाको
स्तद्व्युत्कृत्स्वित् आकार्यगुरु आत्मन स्वस्य अर्थं प्रयोजन गुरयस्य स आकार्यं गुरु स्वप्रयोजननिरत स्वार्थिपुमान् कि २ न कुर्यात् इतिभाव २८]

ध्र

मुवेद बाले न लिप्यर्दं तेषु मुणी विरागे २६ ॥ रूपाणुगासाणु गएय जीवे चराचरे द्विसदृ योग रूवे । चित्तेद्वि ते

परितावेद बाले पोलीद अस्तद्व गुरु किल्बिदे २७ ॥ रूपाणुवाएया परिगद्वेष उपाययो रकत्वण सनिश्रोगे । यए विवड

भाषा

लिप्यते तत्र मुनो विराग न लीपाद तेषु द्वेष रूप दू खे करोी साधुराग रक्षित २६ सुरूपास्थानुगतो जीव मनोहररूपने विद्वे प्रयत्नं तु प्राणी रूपना
भोगनो द्रष्टार व्याप्यो जीव चराचरान् अनेकरूपान् जीवान् द्विसति चरत्वस अघर थाचरने द्वेषे अनेकजातिना जीवने यिद्विषयशर्त्ते परितापयति
मूर्खं यिद्विषय नानाविधशस्त्रद्वेषो यारे करोी दुक्त्वं जपजावे अश्रानो प्राप्नोति आत्माय गुरुक्रेग आत्माने अर्थं गुरु मोटी किलेशयपासे २७ रूपानु

(रूपाण्युवाणपरिग्रहेण उपायणेनत्वण सन्निधौगां वएविधौगेयकहिं सूत्रं सं सभोगकालेय अतितिलाभे २८) तस्य रूपलभाभिभूतस्य प्राणिनः
 कुतः सूत्रं तदेव दर्शयति रूपानुरागे सतिरूपानुरागेण वा रूपानुपाते सति परिग्रहेणमूर्ध्निरूपेण हेतुनाउपायणे इति उत्यादने तद्यारत्तण सन्निधौगां
 तथा व्यवेचिनाये तथा विरहे च पुनः सभोगकाले अत्यिलामिसति तस्मै सत्युत्तेर्लाभस्तुनिलाभः न तस्मिन्लाभात्तस्मिन्लाभः तस्मिन् अत्यिलामिसति
 लोभयुक्तस्य जीवस्यकदापि न सूत्रं पूर्वं हि लोभीजीवोरूपानुरागेसन् मूर्ध्निवारपवक्रजतुरगकलायादीना उत्यादने दुखं प्राप्नोति ततस्तेषा उत्यज्ञानां
 कष्टेभ्योरक्षणेदुखं प्राप्नोति ततश्च स नियोगे स्वपरप्रयोजने सभयग व्यापारणे दुखं प्राप्नोति तेषां रूपवक्रजादीना सभोगकालेपि प्राप्ते अत्यिलामिपि
 सन्तोषस्याभावेसति दुखं प्राप्नोति यदुक्तं न जातकामः कामानामुपभोगेनग्राह्यति इविविधाहृषणवर्त्तय भूय एदाभि वर्द्धते १ तस्मात्परिग्रहेणजीवस्य
 कुतः सूत्रं कदापि सूत्रं नास्त्योतिभाव २८ [रूवे अतितेय परिग्रहं मि सत्तोवसतां नत्वेव तदि' अतुहि दोषेण दृष्टीपरक लोभाविले आययइ
 अदत्त २८) रूपे अत्यमय पुरयः परिग्रहं मूर्ध्नियासक्तोभवति सामान्ये नासाहजान् उपसक्तस्यथात् ततश्च मूर्ध्निया सक्तोपसक्तः पूर्वसक्तः पचादुपसक्तः

गेय कहिं सुहंसं संभोग कालेय अतित लामे २८ ॥ रूवे अतितेय परिग्रहंमि सत्तोवसतो न उत्वेद तदि' । अतुहि

पदेन परिग्रहेण सन्तोहरूपने रागे करो परीग्रहनी मूर्ध्नि'करी उपाजितं इव्य उपावर्धयानं विरुं रत्तक रौरादिक धी रासधानं सद्दियोगे आपणा
 प्रयोजन प्रवर्त्तयाने विरुवे विनागने विरुवे विरहने विरुवे कोहायो सुखशीर तेभने तेदना भोगविना कालने विरुवे अत्यमिः लाभः तस्मि सत्तोप अण्डने
 कोहायो सुखहोद' २८ रूपेय अत्यमः परिग्रहं अत्यमः रूपनेपिमे असत्तोयो यक्तो तथा परिग्रहनेपिये शक्त उपसक्तः न उपैति तदि' सामाभ्य पणे आसक्त

सक्रोपसक्त एतादृश सन् मनुष्यस्तुष्टि सन्तोष न उपैति ततश्च श्रुतिद्विदोषिण असन्तोषदोषिण दुःखीसन् परस्यान्यस्य स्वरूप वस्तु इति श्रेय आदत्तं
 नृह्नाति क्रोडग्रसोरुपेऽहमे लोभाविललोभेन आविल कल्पलोभाविल २८ (तन्नाभि भूयस्व अदत्तहारिणोरुवे अतित्तस्वपरिगर्हय मायासुस
 षट्कस्त्रीभद्रीसातत्याविदुष्यान विमुञ्चदंसे ३०] पुनर्दोषान्तरमाह दृष्टान्भि भूतस्य लोभपरजितस्य जीवस्य अदत्तहारिणोऽदत्तपाहकस्य तथा रूपे
 रूपविषयेपरिग्रहेऽहसस्य असन्तुष्टस्य लोभदोषाक्षोभापरत्वात् माया कृपाभायावर्द्धने दृष्टया अदत्त नृह्नाति ततो लोभात् परस्य नृहीतयसु रक्षण
 परोभायाकृपा शक्ति तत्रापि कृपा भावभाषेपि दुःखान्नविमुञ्चते सलोभोदुक्त्वस्य भागवस्यादित्यर्थ ३० दुःखशुक्लमेव प्रकटयति [मोसस्वपच्छायपुरत्यश्रिय
 पयोगकालियदुहोदुरन्ते एव अदत्ताणि स माययन्तो रूवे अतित्तोदुहिश्रो अणिसो ३१] मोसस्व कृपावाप्यस्य पथात्पुर तस्य प्रयोगकाले च कालत्रयेपि

दोसेण दुहो परस्य लोभाविले आययर्दे अदत्त २८ ॥ तन्नाभिभूयस्व अदत्तहारिणो रूवे अतित्तस्य परिगर्हय । माया
 सुस वदुद्द लोभ दासा तत्यावि दुःखानवि मुञ्चदं से ३० ॥ मोसस्व पच्छाय पुरत्यश्रिय पयोगकालिय दुहो दुरंते ।

लालचो षण् आसक्त लालचो स तोषनपामे परस्य श्रुतिदोषेन दुःखो माहव आरूप एहवे असतोपोने दीपे दुःखीषको पारकी रूपयत वस्तुदेखी
 लोभात् नृह्नाति अदत्त लोभ करोकलख चित्तयको सेपारको अणदीधी वस्तु २८ दृष्टान्भिभूतस्य लोभे करो परामब्धाने अदत्तनालेश हारने रूपे
 परिग्रहं च असतोपवात् रूपने विखे परिग्रहनेविषये असतोपोने माया कृपावर्द्धति लोभ दोषात् माया अहित कृपा भूठ योत्वो वाधे लोभना दोषयकी
 चोरोकरो भूठयोले तथापि दुःखान्न सुच्यते स तोषणि भूठयोल्यायको दुःखयको नमू काद ते विषयजीव ३० रूपनो लोभी भूठयोली पक्षे पथात्ताप धरे

सुरूपवसुलीभाद्रदत्तग्राहकप्रमान् दुःखीभवतीति शेषः सुरूपवसुलीभाद्रदत्तग्राहकः प्रमान् इत्यपि कल्पदं प्रस्तावात् गृह्यते कीर्णः पूर्वं हि लीभान्मृषा
भाषणं कुरुते मृषा भाषणस्य पश्चात् मृषा वचनं उक्त्वा पश्चात् पश्चात्तापं कुरुते मनसि जानाति मया मृषा उक्तं मात्रास्यत्यसौवसु स्वामीति तथा पुरतश्च
मृषा भाषणात्पूर्वं अपि दुःखीभवति मायासौसुरूपवसु स्वामीकेन प्रकारेण एवं वचनीय इति पुनः प्रयोगकालिमृषाजल्प न कालेपि दुःखी भवति मन
स्येव जानातिमाकदाचिन्मममृषावचनमसौजानात्यपि कीदृशः स पुरुषोदुरन्तो दुष्टोन्तः पर्यवसानं यस्य स दुरन्तः इह लोकेविद्यमानात्. परमवे दुर्गति
दुःखात् दुष्टावसानइत्यर्थः एवममुनाप्रकारेण रूपेऽलमोऽदत्तानि समाचरन् अनिश्च सन् दुःखीतीभवति न विद्यते निश्चायस्य स अनिश्चः अवष्टं भरहित.
यतीहि चौरस्य मृषा भाषिणश्चनकीपि रत्नकइति भावः ३१ (रूवाणु रत्नस्रनरस्र एवं कर्तोसुहं हुज्जकयाइकिं चि तल्योवभोगिविकलिसदुक्खं निव्वत्तइ
जस्सकएणदुक्ख ३२) एवं अमुनाप्रकारेण प्रागुक्तस्रल प्रकारेण रूपानुरक्तस्य रूपानुरागिण्य पुरुषस्य कदापि रातौदिवसेवाकिञ्चिस्त्रिकमात्र मपि कृतः

एवं अदत्ताणि समाययंती रूवे अतित्तो दुहिञ्चो अणिसो ३१ ॥ रूवाणुरत्तस्र णरस्र एवं कर्तो सुहं ह्योज्ज कयाइ

एकिस वचस्युं इम करतु मलोवारी ह्वे पडल्या दुखलहे भुठा बीलवाना प्रयोग प्रस्तावने विखे एमजाणे इम दुःखनी पामहणहार दुष्ट पाडञ्चो
अते विडं वना सहि एव अदत्तानि गृह्यन् जिम भूठूलागे तिम अदत्त अणदीधीते पणलागे अहण करतीछती रूपे अलमो दुक्खती अनिष्ट. नेष्टा
रहित मनोहररूपने विखे असतोपी यको दुक्खीओ निष्टारहीत तेहनुं कीइ पासुं न करे ३१ रूपानुरक्तस्य नरस्य एवं मनोहर रूपनी अनुरक्त
रागी नर मनुष्यने इणे प्रकारे कुत सुखं कदाचित् किञ्चित् भवति किं हायकी सुखहीइ अपीसु न हीइ कहीइं तथापि भोगे के स दुक्खं तीष्टां

कक्षात्सख भवेत् श्रपि ७ कदापि कि मपि सुख न भवेत् यतस्तत्र रूपानुरागीपि क्वे शदुक्त्व श्वलमिलाभल्लयणीडाजनित भसात निर्बर्त्तयति
 उत्साद्यति पुनर्जस्यकाएणदति यस्य मनोप्ररुपायापभोगस्य क्तीमनोप्ररुपायुपभोगार्थं दु ख आत्मन कष्ट भवति ३२ इति रागस्य दु ख हेतुत्वमाह
 [एमेव रूवभिगयो पश्चोस उवेद दुक्त्वोहपर पराश्रो पदुदुच्चित्तोयचिणार कथा ज से पुणोहोद दुह विवागे ३३] एव श्शुनाप्रकारैणैव यथा मनोश्च
 रूपोपरिरागादख लाभ प्रकारैणैव तथा जीवोऽमनोश्चे रूपे प्रहेपहत सन् प्रहेपपर परात प्रदुष्टचित्त सन् तत् कष्ट कर्म्मचिन्तोति उपाजयति जद्वि
 यत् कर्म्मसे इति तस्य दुष्टचित्तस्य विपाककर्मानुभव कालेदह परतत्र च दुक्त्व दुक्त्वदायि भवति ३३ रागहेयोहरणशुणमाह [रूवेविरत्तोमणश्रोविसेगी
 एणणदुत्तोहपर परेण नलिण्दं भवमक्के वसन्तो जलेणवा सुक्करणीपलास ३४] रूवेविरत्तोमनुयोमनोश्चे रूपे राग श्शुर्वन् एतयादु खोषपर परयापूर्वे

किचि । तद्योव भागेवि किलेस दुक्त्व नित्वत्तर्दं जस्य कएण दुक्त्व ३२ ॥ एमेव रूवभि गयो पश्चोस उवेद दुक्त्वोह
 परपराश्रो । पदुदुच्चित्तोय चिणार कथा ज से पुणो होद दुह विवागे ३३ ॥ रूवे विरत्तो मणुश्रो विसेगी एएण

रूप भोग विधाने विखेपणि वस न होद तालगे क्वे य दुखपासे नीपजाववे करो जे मनोहर रूप भोगवधाने दुक्त्व कष्ट श्शने श्शपउपाय ३२ एवमे रूपे
 गत प्रहे प रणोपरि जे उत्तम रूपउपरि रागदुद तिम कदाचित् हेपपाभ्योद्यको उपैति दुक्त्वो धपरपरामेते जीवदुक्त्वनी परपरा श्रेणिसमूह प्रकष्टचित्त
 चिन्तोति कर्म्मणिदेपे करोसहित जिवारचित्तहुवे तिवार बाधे कर्म्मधणा जेह कर्म्म दुक्त्वना कारणदुद चिपाके भोगविवा कालने विखे इहलोक परल्लोक
 पणि ३३ रूवे विरत्तो मनुष्य गतशोक मनोहररूप विखे राग श्शणकारु सनुष्य शोकरहित धको ए पूठे कदो दुक्त्वनी परपरा तिणे इण करोने न

कयादुःखसमूहं श्रेय्याभवसध्ये वसन् अपि न लिप्यते रागजनितदुःखावलिगोनस्यादित्यथ कोदशः स प्रमान् विर्वाको विगतशोकाः केन किं भिव जलेन
 पुक्करिणीपलाशमिव यथा पद्मिनी पल जलेतिष्ठदपि जलेन न भवलिप्यते एवं विरक्तोपि ससारिवसत्त्वपि तस्मारदुष्वैर्नलिप्यते ३४ एव चक्षुरिन्द्रिय
 माश्रित्यत्वयोदशगाथाव्याख्याताः भव्य श्रेयैन्द्रियाणां मनसद्यत्तयोदशर गाथाव्याख्याः सन्ति अत्र च इन्द्रियाणां चक्षुर्वादीय वादुस्य प्रादुर्भावत्
 पूर्वं चक्षुरिन्द्रियद्वारेण रागद्वेषौ दर्शितौ अन्यथा तु दुर्दमन रसनेन्द्रियमुक्तमन्ति अथ श्रोत्रमाश्रित्यलक्षणात्याह (सोयस्यसर्गादृषुं वयस्कि तं रागहिउं
 तुमणुवमाहु त दोसहेउं अमणुन्नमाहु समीयजीतेसु सवीयरागो ३५) तीर्थं कराः श्रोत्रेन्द्रियस्य मरुता विषय भय्यं ग्राहकं श्रोत्रं इति श्रोत्रेन्द्रियस्य
 लक्षणं शब्दः श्रोत्रेषैव गृह्यते त शब्दं मनोज्ञं स्त्री गीतादिकं रागरितुकं आहुः वीतरागादि कथयन्ति तं एव ग्राह्यं अमनोज्ञं मरुवायसादि गोलं

दुक्त्वोह परंपरेण । न लिप्यए भवमज्जैव संता जलेणवा पुक्ववरिणी पलासं ३४ ॥ सायस्य तद्द गहणं वयति तं राग
 हिउं तु मणुन्न माहु । तं दोस हिउं अमणुन्न माहु समीय जो तेसु सर्वायरागो ३५ ॥ सदस्य सोयं गहणं वयति

लिप्यते स सार वसन्नपिलोपाह खरहाये नही भवस सारमाहि वसतुं पणि जनेन यथा पशिनोपलं तेष लपिर दृष्टान लिम पाषाडं करी पुक्करिणी
 क तलनो नोपलापान लिपे लागे नही ३४ श्रोत्र विषय. गन्धी वदति वुरा. सोयकान्तनी विषयमरुण गभ्य कर्ह तनुगीतादिमनोषं रागहेतुः ते
 मनोहर गीतादिक शब्द रागनी हेतु कारणकहे तत्तद्वेप हेतुं अमनोज्ञ पादुडं रूप आणुं कर्हके पणित सम पपुयः सवीतराग. सरीरसो ३ एहनेविबरे
 ते वीतरागकहीद ३५ शब्दग्राहकं अथण वदति शब्दनी अहणयाहक कान करं श्रोत्रस्य ग्राहकं गभ्यः रति पदति कान्तनी ग्राहक गभ्य रम तीर्थं

ककय द्वेप हेतुक आहु यलुभनोप्राभनोपयो शब्दयोर्विषये समीरागद्वेपरहित सवीतराग उच्यते ३५ [सरस्वतीय गहण ययन्ति सीयस्सहगहण ययन्ति रागसहक समशुभमाहुदीससहक अमशुभमाहु ३६] तीर्थकरा सीय इति शोचोन्द्रिय शब्दस्य गहण ग्राहक वदन्ति गहणातीति गृहण पुनस्तीर्थकराशब्द विषय शोचोन्द्रियस्य गहण गहणा इति गहण ग्राह्य वदन्ति शब्द शोचोन्द्रियग्राह्यग्राहकभाव सन्वयवत्त तत् समनोष सुन्दरशब्द विषयग्राहक रागस्य हेतुक आहु पुनरमनोष असुन्दर शब्द विषयग्राहक शोचोन्द्रिय द्वेषस्य हेतु आहु २६ [सद्दे सुजोगिनि सुवेदतिष्व अकालिय पायदसेविणस रागादरेहरिणमिगेवमुद्दे सद्दे अतिनेसमुवेदमशु ३७] य पुरुष शब्देपतीवा अधिका गृह्णि मूर्द्धा उपैति स शब्देऽत्यमोमनोष शब्दे असन्नुष्टीरागात्तर सन् मुयोमूर्द्ध आकालिक आयु स्थितैरर्वागोवसीपक्रमायुष्कत्वात् अलीरवसर यिनैययिनाश मरण प्राप्नोति समूर्द्ध कद्रव मल्लु समुपैति शब्देऽत्यमो सुयोहरिणमगदव हरिणपशुरिव अत्र मृग शब्द पशुपर्यायवाचक हरिणयासौम्यशय हरिण

सीयस्य सद्द गहण वयति । रागस्य हेतु समशुन्न माहु दीससहहेतु अमशुन्न माहु ३६॥ सद्देसु जी गिह्णि सुवेद तिष्व अकालिय पावद से विणस । रागादरे हरिणमिष्व सुद्दे सद्दे अतिने समुवेद मशु ३७ ॥ जीयावि दीस समुवेद

कर कडे तत् समनोष रागहेतु आहु ते रागतु हेतु मनोहर भलो कहे अमनोष दीपहेतु द्वेषरोसनी कारण पाहुड कहे ३६ शब्देपु य तीष्ठा गृह्णि उपैति शब्दनेविष्येऽत्र कोद् गृह्णि मूर्द्धापाने तीव्र अत्यत सशकालिक विनाश प्राप्नोति ते अकालि अवसर विनाश मरणपाने रागात्तरहरिण वशुभ रागे पोषो जिम हरिण तेहनी परि सुभभीलो शब्देपु अत्यत समूल्य उपैतिशब्दनेविष्ये असतोपी मरणपाने ३७ जी कोद् पाहुआ शब्दने विरो द्वेष आणे तद्दि

माह ज्ञेय शब्दानुरागाद्यानुगत सन् मनोप्रशब्द श्रवणाप्यायुक्त सन् चराचरान् अनेकरूपान् जीवान् हिनस्ति सवालोज्ञानीषिर्नैरनेक प्रकारैरुपायै
 यस्यादिभि कान् चित् जीवान् परितापयति कान्चिज्जीवान् पीडयति कीदृश सवाल अस्तद्विश्व आकार्यशुभ स्वार्थपरायण पुन कीदृश किलिङ्
 क्रिटीरागद्वेपापहतचित्त ४० (सदाणुवाएण परिगहेण उपायणेरकण सच्चियो वएविश्रोगीयकहि सुहसे सश्रोगकालेय अतिसलाभे ४१] मनोप्र
 शब्द श्रवणलाभाभिभूतस्य प्राणिन कुत सुख तदेवाह शब्दानुरागेण तथा परिग्रहेण मूकारूपेण उत्पादने मनोहर शब्दपित्तचित्तनाचेतन द्रव्योत्पादने
 पयारतेषां सच्चियोगेष्वपरप्रयोजने सम्बन्धक व्यापारणे व्ययिनयोगिवियोगोऽथात् शब्द अधिन भुक्तस्य कुत सुख पुनस्तस्य शब्दानुरागिणोजन्तो सश्रोग
 कालेच श्रद्धिललाभादुत्सृज्य भवति शब्दश्रवणेरगिणा नलसिस्तिभाव ४१ [सद् अतिसियपरिगहमिससोवसत्तोन्नउवेरुत्ति अतुत्तिदीसेणदृष्टीपरक लोभाथि
 नेपायइ शब्दस ४२] शब्देऽलसोज्ञेय परिग्रहे श्रवणक स्यात् सामान्ये नरकौभवेत् ततश्च सकीपशक्त स्यात् अत्यन्त शक्त उपशक्त शक्तयासौ उपशक्तश्च
 शलापशक्त परिग्रहे गाढानुरक्त सुष्टि सन्तोपन उपैति अतुत्तिदीपेण दृक्कौभवति पुनरसन्तोपो परस्यान्वस्य सम्बन्धि शोभन् शब्दकारि वसु यादितादि

नाएय जीवे चराचरे हि सद्गुणे गत्वे चित्ते हिते परितावेद्द वाली पीनेद्द अस्तद्द गुरु किजिद्धे ४० ॥ सदाणुवाएण परि
 ग्राहेण उपायणे रक्त्वाण सन्निश्रोगे । वए विश्रोगीय कह सुहसे सश्रोग कालेय अतिसत्ता लामे ४१ ॥ सद्दे अतिसिय

रोगादिके पीडा ४ रुडाशब्दने रागे परिग्रहे करोने उपारि जिबाने राखवाने विखे काज करिवाने विखे यिनाग्र विरह विखे कौहाथी सुखहवे सश्रोग
 तेहना भोषा विधाने श्रवणरे लस सतोप श्रणह ते किहाथी सुख ४१ शब्दने विखे असत्तोपो यको तथा परिग्रहने विखे असत्तोपो यको सामान्य पर्ण

लोभाविलो लोभ कलुषः अदत्तं गृह्णाति ४२ [तन्नाभिभूयस्व अदत्तहारिणी सद्दे अतित्तस्य परिगह्येय मायामुसवद्द्व लोभदीप्सा तत्थावि
दुक्त्वान विमुञ्चद्देसे ४३] गन्दे ऽलसस्य प्राणिनः परिग्रहे लक्ष्णाभि भूतस्य अदत्तहारिणस्य लोभदीप्तात् माया मृषा सम्बर्धते पुनस्तस्य प्राणिनस्तत्तापिमा
याश्रयायां अपि दुःखात् न विमुच्यते मायाश्रयाजलानकालेपि दुक्त्वभाक् स्यादित्यर्थः ४२ तदेव दुक्त्व दर्शयति (मोसस्वपच्छाय पुरत्यश्रिय पश्रोगकालियदुही
दुरन्ते एव अदत्ताणि समाययन्ती सद्दे अतित्तोदुहिश्री अणिस्त्री ४४) मृषाभापीषु मान् मृषावाक्यस्य पश्चात्पुरतस्य प्रयोगकाले च दुरन्तोदुक्त्वान्तीभवति
अन्ते दुक्त्वभाक् स्यात् माययामृषां जज्ञा पश्चात् मृषाभाषणस्य पश्चात्ताप करोति मनसि एव जानाति मायामुसंस्थापितं वाक्यं नीकं इति पश्चात्तापं
परिगहंमि सन्नोवसत्तो न उर्वेद्द तुडिं । अतुडि दीप्सेण दुही परस्व लोभाविले आययर्द् अदत्तं ४२ ॥ तणहामिभूयस्व
अदत्त हारिणी सद्दे अतिलस्य परिगह्येय । माया मुस वद्द्व लोभ दीप्सा तत्थावि दुक्त्वा नवि मुञ्चद्देसे ४३ ॥ मोसस्व
पच्छाय पुरत्यश्रिय पश्रोग कालिय दुही दुरन्ते । एवं अदत्ताणि समाययन्ता सद्दे अतित्तो दुहिश्रीअणिस्त्री ४४ ॥ सद्दाणु

षण् लालची लक्ष्णा संतोष न पांसे अलसितवंशकी पारकी भस्ती वस्तु देखी लोभोपकी पारकी अण दीधीले वस्तु ४२ लोभे करो पराम्बयानिचोरी
वस्तु लेणहारने गन्देविखे परिग्रहने विखे असंतीपीने माया सहित मृषाद् योखे लोभना दीपयकी चोरी करे तो पणि दुखयी मूकाद् नही ते विखे
जीव ४३ कपनी लोभो भूठुं वीलो पश्चात्ताप धरे पक्षली दुक्त्वलेहे भूठुं वीलवाना अवसरने विखे दुष्टपाहूयो अंतविडवण सद्दे इम अदत्तलीतुथकी
गानने विखे असंतीपी थकी दुखीयो रहे लक्ष्णा वर्जे नही एकारणे दुक्ती शुवे ४४ गहदने विखे रानी मनुष्यने कीहाथकी सखधाद् कि वारीपणि

यत्कर्म तस्य प्रदुष्टचित्तस्य पुरुषस्य विपाके दुःखं दुःखदायिकं भवति ४६ (सर्दे विरसो मणुषो विसो गो एएण दुक्खोह परपरिण नलिपए भवमज्जे वसंती जल्लेण वा पुक्खरिणीपलासं ४७) यो मनुष्यश्चर्दे विरसो भवति सविशो क. शोकरहितः सन् भवमध्ये वसन् अपि पूर्वोक्तदुक्खोष परंपरया न लिप्यते किमिव जले वसदपि पुष्करिणीपत्रं द्रव ४७ (घाणस्यगन्धं गहणं वयन्ति तं रागहेडं समणुक्कमाहु त दोसहेडं अमणुक्कमाहु समोयजोते ससवीयरगो ४८] तीर्थं कराराणस्य नासिकायां गहणं विषयं गन्धं वदन्ति तं मनोसं गन्धं रागहेतुं आहुः पुनस्तं गन्धं अमनोसं द्वेषहेतुं आहुः तेषु मनोसा मनोसोषु गन्धेषु यः समस्तु च दत्तिः सवीतरागो ज्ञेयः ४८ (गन्धस्य घाणं गहणं वयन्ति घाणस्य गन्धं गहणं वयन्ति रागस्य हेडं समणुक्कमाहु दोसस्य हेडं अमणुक्कमाहु ४९) तीर्थं चराः गन्धस्य सुरभ्यसुरभिपुद्गलस्य गहणं ग्राहकघ्राणं वदन्ति तथा घ्राणस्य नासिकाया गन्धस्य सुरभ्यसुरभिपुद्गलं गहणं ग्राह्यं वदन्ति एवं गन्धघ्राणयोर्ग्राह्य ग्राहकभाव उक्तस्तन्मनोसं मनोसं गन्धविषयसहितं घ्राणं रागहेतुकं आहुः एवं अमनोसं अमनोसगन्धविषयसहितं घ्राणं द्वेषस्य हेतुं आहुः ४९ [गधिसु जीतिब्ब

सहे विरसो मणुषो विसो गो एएण दुक्खोह परपरिण । न लिपए भव मज्जे व संती जल्लेण वा पुक्खरिणी पलासं ४७ ।
घाणस्य गंधं गहणं वयन्ति तं रागहेडं तु मणुन्न माहु । त दोसहेडं अमणुन्न माहु समोय जो तेसु स वीयरगो ४८ ॥
गंधस्य घाणं गहणं वयन्ति घाणस्य गंधं गहणं वयन्ति । रागस्य हेडं समणुन्न माहु दोसस्य हेडं अमणुन्न माहु ४९ ॥

नही भवसंसारमाहि वसतुं जिम पाणीरं करी नसिनीनी पान नसिपाए ४७ घ्राणनाशिकाने गहणने विखे गधपरिमल करे ते गंध भसो रागानो कारणते द्वेषणं कारण पाहुयो कइताहुआ के समताभाव धरे तेवोतराग कहीरं ४८ गंधनो गहण नाशिका करे नाशिकानो गहण गध करे रागानो

सुवर गिरि अकालिय पावर सेविणास रागाउरओ सहि गध गिह्वे सपे बिलाओ विवर्तनकखमता ५०] या मनुष्यां गधेषु तीव्र उक्कटा गृह्ण चर्पति
 स मनुष्योरागातुर सन् अकालिक यिनाश प्राप्नोति सर्पेहिन गगदमिन्यादिका सुरभिगन्धोपेताकास्त्रिदौषधीमाश्राय पथात् तत्रभ्रूजटाविलसार्चिर्गच्छन्
 म्रियते जर्नैर्मार्यते चन्दनगन्धाकर्षितस्य चन्दनामालिभ्य तिलेन म्रियते मार्यते गन्धलुब्धो नरोहि सर्पेपमोघेय ५० [जि आबिदेस,समुवेर तिव्व तसिक्ख
 शिचेउउवेरदुक्ख दुदन्तदोसेण सएणजन्तुं न किञ्चिगन्ध अवरकह्वेसे ५१] यथापि जन्तुर्यञ्चिन षण्णमनोशगन्ध आघायतीन्न द्वेष समुपैति स जीवस्त्रिक
 नेवषण्येसकीयेन दुर्दान्तभाणेन्द्रिय दीपेण दुक्ख चर्पति पर तु तस्य गन्धग्राहकस्य पुरुषस्य गन्ध कि मपि न अपरायथति गन्धस्य न कश्चिदापस्तस्य
 घाणेन्द्रियस्य दीर्घास्त्रि ५१ [एगल्लरत्तोकररमिगन्धे अतासिसेसेकुण्णरूपओसदुक्खससपीलमुवेरवासेनसिक्खरुतंणमुणोविरागे ५२] योमनुष्यां कश्चिरोमनोभु
 गन्धे एकान्तरओ अत्यन्त रागवान् भवति सतादये अमनोघे गन्धे प्रवेप करोति तदासयाल दुक्खसपीडा, दुक्खसख्यन्दिनीपीडा असाता चर्पति तेन

ग धंसु को गिह्वि सुवेद तिव्व अकालिय पावइ से विणास । रागाउरे ओसहि ग धगिह्वे सपे विलाओविव निक्ख
 मता ५० ॥ जियावि देस समुवेद तिव्व त सिकखणे सेउ उवेद दुक्ख । दुह त दोसेण सएण जतू न किञ्चि ग ध

हेतु भलो ह्वे दापनोहेतु ते पाइओ कहि ४८ गधने विखे जि कोर्द गृह्ण, मूर्च्छापासे अत्यत ते अकाले अघसर विना मरणपामं जिम रागनो घाओ
 ओपधो कालीयेलि प्रमुखना गधने विखे गृह्ण लोभोओ अर्पा गधने अर्थे विलसको नौकसतो ५० जि कोर्द पाइया गधपामी द्वेष आणे तीव्रघणो
 तेहज अघसरुते विखे ते दुक्ख पासे दुहात मोटा दोखनासई कडे जीव गध तेहने अघराध नथी करतो पर रागह्वे कर्के तेहने अघराध ५१

कारणान् विरागोभुनिस्तेन दुक्खेनरागहेर्भावेन कष्टेनलिप्यति ५२ [गन्धाणु गासाणुणएय जीवं चराचरे हिंसदृणे गरुधे चित्तेहिं ते परितवेद्वाले पीलेद्व
 अस्सइ गुरुकिलिद्धे ५२] बालो अज्ञानीजीवी गन्धानुगासानुगती मनोज्ञगन्धोपेत सुष्य कर्पूर कस्तूरिकादि द्रव्यसुरभिग्रहणाथा सहितचित्रै विविध
 अस्साद्युपायै. छात्रा चराचरान् अनेकरूपान् जीवान् हिं नस्ति परितापयति पीडयति कीदृशः स' आकार्यगणः स्वार्थपरायणः मुनः कीदृशः सक्लिरीरागा
 य् पङ्कितचित्तः ५३ [गंधाणुवाएण परिगहणे उपायणेरक्खण सन्निश्रीगे वएविश्रोणेयकहिंसुहिंसे सभोगकार्त्तय अतितत्ताभे ५४] गंधानुरक्तस्य जीवस्य
 कुतः सुख भवति कुतोपि सुखं नस्यादित्यर्थः तथैव दर्शयति पूर्व' तु गंधानुवादेन सुरभिगंधद्रव्यानुरागेणसुरभिगंध द्रव्यानुरागेसति वा परिग्रहेण
 मूर्धारूपेण दुक्ख स्यात् ततस्तस्योत्पादने दुक्खं स्यात् ततोश्चणो दुःखं ततः संनियोगे स्वपर पर्योजने सख्यग् व्यापारेण दुक्खं ततोव्ययेतस्यन्यु नतायार्

अवरज्जर्दसि ५१ ॥ एगंत रत्तो रुद्धरंसि गंधे अयालिसेसि कुणार्द पञ्चोसं । दुक्खस्स संपील सुवेद्व दाले न लिप्यद्द तेण
 सुणी विरागे ५२ ॥ गंधाणुगासाणु गएय जीवे चराचरे हिंसदृणे गरुधे । चित्तेहिं ते परितवेद्व बाले पीलेद्व अत्तइ
 गुण किलिद्धे ५३ ॥ गंधाणुवाएण परिगहणे उपायणे रक्खणा संनिश्रीगे । वए विश्रोणेय कहिं सुहंसि संभोग कालेय

मनोहरं गंधने कौडे प्रवर्त्तं तु प्राणो चरित्र स थावर अनेक जीवने मारि हत प्रहत थरे विचित्र सखे करी दुःख ऊपजाये अज्ञानी अज्ञाने अर्थे गुरु
 सोटी किलेश दुःखपामे ५२ एकांति रातु भलागंधने विखे वणु पाडुआ गंधने विखे करे द्वेप दुःखसंबंधिनो पीडानी समूह पामे अज्ञानी नलीपाद
 तीणे जेप रूप दुखे करी साधु रागरहित ५३ भला गंधने रागे करी परीग्रहनी मूर्धारि' करी द्रव्य उपाज्जवे रागहेषवा' रागहेष राखे आपणा प्रयो

दुःख ततो विद्योगिविनाशेदुःख भवति एव कटेन समाप्तं सुगंध यलुनिसभ्योगकालेपि अट्टमित्ताभ स च दुःख एव असतीपी महानुखीत्यन्नात्वात् तस्मादि
 तादृशस्य गंधानुरक्तस्य कुत सुख स्यात् अपि तु नस्यादिष ५४ [गंधे अतिसीयपरिग्राहमि सत्तावसत्तोनउवेद तुष्टि अतुष्टिदोषेण दुष्टोपरस्व लोभापिबले
 श्यायर्षदत्त ५५] गंधेऽलसोऽसनुष्ट पुमान् परिग्रहे शरी भवति सामान्येनरतिमान् भवति तत यथात् सक्त सन् उपशक्तोऽलक्त रतिमान् भवति
 तदासक्तोपसक्त उच्यते तादृश शरीरपशक्तश्च तुष्टि सर्तोप न उपैति स च अतुष्टदोषेण दुःखोपसन् अन्यस्य अदत्त द्रव्य आदत्ते कोदृश स लोभाधिस्तो
 लोभेन कल्पय ५५ [तण्डुलमिभूयस्मअदत्तहारिणी गंधेअतिसक्तपरिग्राहिय मायासुस बहुरल्लोभदोसा तत्यापिदुःखाणविसुखरसे ५६] टण्डुलिभ भूतस्य
 सुगंधद्रव्यलोभेन पराभूतस्य ततो अदत्तहारिणोगंधे अलसस्य पुरुषस्य परिग्रहे लोभदोषात् मायासुपा सस्यहते तत्रापि मायासुपाया अपि समुपायादौ
 जीयो दुःखान् न विसुच्यते ५६ [मोसस्यपच्ययपुरत्यश्रीय पशोगकालेयदुष्टोदुरले एव अदत्ताणि समाययन्तो गंधेअतिसोदुष्टिभ्यो अणिस्तो ५७] नृपा

अतिस लार्भे ५४ ॥ गंधे अतिसीय परिग्राह मि सतीवसत्तो न उवेद तुष्टि । अतुष्टि दासेण दुष्टी परस्व लोभाविबले
 श्याययद् अदत्त ५५ ॥ तण्डुलमिभूयस्म अदत्त हारिणो गंधे अतिसक्त परिग्राहिय । माया सुस बहुर लोभ दासा तत्या

जनने विखे विनाश विरहने विखे किंवाशको सुखदुर्वे तंहना भाग विधाने काल विखे त्वमि स तीप अणहते किं हाथकी सुखधार ५४ गंधने अस
 तापी यको तथा अत्रिग्रहने विखे सामान्य पयापी लालचो अथवा धण लालचो स तीप न पाने अस तीपी यको पारका गंधदेखी लोभे कसुपित
 चित्त यकी पारकी वस्तुत्ये अणदीधी परिग्र ५५ लोभे करो पराभयाने अदत्तनालेण हारने गंधने विखे परिग्रहने विखे अस तीपीने माया सचित्त

भाषोपसर्गः मृषावाक्यस्य पश्चात् च पुनःपुरस्तात् पूर्वं च पुनः प्रयोगकालेदुरस्तीदुक्खीभवति मृषाभाषणस्य पश्चादेव जानाति मया किमर्थं मृषावाक्यं मुक्तं मृषाभाषणस्य पूर्वं एवं जानाति अस्मी मम मृषावाक्यं सास्यति मृषाभाषणकाले च एवं जानाति अस्याग्ने हं मृषां वदामि परममसीजानाति इति चिन्ताकुलत्वेन सर्वदादुरस्ती दुक्खीअत्यन्तदुःखीस्यात् एव अदत्तानि समाचरन् गंधे अलसोजीवो दुःखितोभवति कीदृशः सोऽग्नि ओनि आरुहितः ५७ (गधाणुरनस्य नरस्य एवं कत्तोसुहं हीज्जकयाद् किञ्चित्तथ्योवभोगिविकलिसदुक्खं निव्वत्तदं अस्सकएणदुक्खं ५८) एवं अभुनाप्रकारेणगधाणुरनस्य नरस्य कदापि किञ्चित् कुतः सुखं भवेत् तत्रापि गंधोपभोगिपि क्लेश एव दुक्खं निर्वत्तंयति क्लेशदुक्खं उत्थादयति यस्य कर्तगंधस्योपभोगार्थं दुक्खं आत्मनः

विदुक्खवा नवि मुच्चदं सिधदं ॥ मोसस्य पक्खाय पुरत्थओय पभोग कालिय दृही दुरंते । एव अदत्ताणि समाययंते गंधे
 अतितो दृहिओ आणिसो ५७ ॥ गंधाणुरनस्य नरस्य एवं कत्तो सुहं हीज्ज कयाद् किञ्चि । तथ्योव भोगिवि किलेस
 दुक्खं । निव्वत्तए जस्य कएण दुक्खं ५८ ॥ एमेव गंधमि गंधो पभोसं उवेद्द दक्खोह परपराओ । पदुद्द चिसीय चि

भूठुं बोले दोषयकी चीरीकरे तीपणि सुधावादबोल्थे यके दुक्खयकी न मुंकारं ५६ गधनी लोभी भूठुबोली पके पयात्ताप धरे एाकमे वंचस्ये इम
 करतो पहिला दु खलहे भूठा बोलवाना प्रस्तावने बिखे अंतबिहवम तेहने जिम भूठुं लागे तिम, अणदीधी लेतो गंधने बिखे अलस असंतीषी
 दुखीओ थार निधारहित ५७ गधने बिखे रागी मनुष्यने कीहायी सुखहोद्द किवारि पणिं तीहां गंधने बिखे लस न हुरतालग केस दुख पासि नीप
 जावे करे दुक्खकए अने उपाय ५८ एणीपरि जिम उत्तमगध ऊपरि राग हुर तिम कदाचित् द्वेष पाथी यकी पासि ते जीव दुःखना समूहनी परपरा

कष्ट भवति ५८ (एमेवग भ मिगभोपभोस उधेरदुक्खोहपर पराभो पदुदुधिसोयिद्वारकभ असेपुणोहोद दुहविवागे ५८) एव एव यथागाथाशुरजोनरी
दुक्खोषपर परा प्राप्नोति तथैयगधेरुदग धेपद्वेपद्वतोदु खीषपर परा उदोत प्रदुदुधिस सन् दुदु कर्मधिनोति यत् कर्मसस्य पुक्खस्य विपाकेविपाक
कालेदु ख दु खकारि भवति ५८ (गधेविरस्सोमणु भोविसोगीए एण दुक्खोहपर परेण न लिप्पई भव मज्जेवसन्तो जसेणवा पुक्खरिणीपत्तास ६०)
गधेविरस्सोमपात् विरागोमनूज एतेन पूर्वोक्कदु खीष पर परयामल्लिप्यते न भूय्यत कि कुर्वन् अपि भव मध्येवसन् अपि कि मिष पुक्खरिणी पद पच्चिनी
पद जले दस ६० १३ रसनेन्द्रियमायिल्लदूपणमाह [जीहाएरसगहण यय तित रागहेठ समणुत्तमाहु दीसस्यहेठ अमणुत्तमाहु समीयजोतेस
सवोयराधो ६१] रसते आसायते इति रस मधुरादिस्त रस तीर्थं करालिजायारस मधुरादिक विषय गहण वदन्ति त रसमनोष मनोहरशुष

याद् कभम जसे पुणो हिद्द दुह विवानी ५८ ॥ ग धे विरस्सो मणुभो विसीगो एएणा दुक्खाह परपरिण । न लिप्पए
भव मज्जेव सतो जलेण वा पुक्खरिणीपत्तास ६० । जीहाए रस गहण वयति त राग हेउतु मणुन्न माहु । त दीस
हेउ अमणुन्न माहु समीय जो तेसु सवीयराभो ६१ । रसस्य जीह गहण वयति जिभाए रस गहण वयति । रागस्य

यो प्रदेव करो सहित जिबारि चिस द्दर तिबारिद बाधे कर्मषणां जेहकर्मना भोग विनाकालते विखे दु खपमि ५८ मनोहरगधनेविखे राग अणधरतु
मनुष्य योकरहित यको ए दु खनो परपरा तेषे करोने सीपाद खरहाद नही भवससारमाहि जित्त पाणिद करो कम्मसनीनूपाननली पाई ६०
जोभनो पदण रसकहे तीय करते रागज हेतु मनोहर भलोकहे तेहे यनो कारण अमनोष पादुषो कहे समो जे रागहेपने विखे त वीतराग ६१

सहित रागहितुं श्राहुः तमेवरसंकटकादिकं अमनोत्रं अमनोहर द्वेषहेतुं श्राहु यद्यत्तु मनोज्ञामनोत्रेषु रसेषु समस्तुल्य इतिः सवीतराग उच्यते इति शेषः ६१ (रससजीव्यं गयणं वयन्ति जीहाएरसङ्गणं वयन्ति रागसाहेतुं समणुन्नमाहु दीसस्य हेतुं अमुन्नमाहु ६०) रसस्य मधुर दिग्निद्रियं जिह्वेन्द्रियं ग्रहणं प्राक्कं वदन्ति तथा जिह्वायारसनिन्द्रियस्य रस मधुरादिकं ग्रहणं प्राक्ष्यं वदन्ति रसरसनयोर्ग्राह्यं प्राक्कसम्बन्धः उक्तः तद्रक्षेनिन्द्रियं समनोत्रं रागहितुकं श्राहु अमनोत्रं द्वेषस्य हेतुकं श्राहुः ६२ [रसेसु जागिधिसुवेदतिब्बं अकालियं पावदसेविणस रागाउरविहिसविभिवकाए मक्केजहा आसि सलोभगिह्वे ६३] योमनुष्योरसेपुत्रधुरादिपतीत्रां गृहिं उपैति सरागातुरोक्कालिकं विनाशंप्राप्नोति तथा रसगृह्येजीवोपि यथा विहिसेविभिसः कायो यस्यस एतादृश मक्कः आसिस लोभरसगृहः मृत्युं प्राप्नोति ६३ (जियाविदोरां समुवेदतिब्ब त सिकवणेसेउउवेददकखं दुदकसदीस्येण सएणजन्तु न किश्चिरस भवरअदसेद ६४) यथापि जन्तुर्वस्मिन्त्वणीतीत्र द्वेष समुपैति स जीवस्त्वस्मिन्नेव क्षणे स्वकोयेनदुर्दान्त दीपेण दुर्दान्तरसनेन्द्रिय दीपेणदुक्खं उपैति प्राप्नोति परन्तु तस्य मनुष्यस्य रस. कि मपि नापराध्यति तस्य रसनेन्द्रियस्यैवदीपो न तुरसस्य कश्चिदोषोस्तीति भावः ६४

हेतुं समणुन्न माहु दीसस्यहेतुं अमणुन्न माहु ६२ । रसेसु जा गिह्वि सुवेद तिब्बं अकालियं पावद से विणसं । रागा
उरे वडिस विभिन्न काए मक्के जहा आसिसलोभ गिह्वे ६३ ॥ जियावि दासं समुवेद तिब्बं तं सिकवणे सेउ उपेद

रसनां ग्रहण रस कहे रागनां हेतु मनोहर भलो कहे द्वेषनां हेतु पादुआं कहे ६२ रसने बिबे जे गृह्येवाक्का तिव्र आणे ते अकालि पासे विनाश मरण रागे पीषी लोहाने काटि करो भेदाणो वीषाणीकाया शरीर जेहने जिम माकलामांसने लोभे गृह्ये लोभी यकी मरण पासे ६३ जे कोरे पादुआ

[एगसरनाहररेरसमि धासिवेवे कुणरपश्रोस दुक्खससम्योलसुवेर वालेनलिप्पदंतेण सुणोविरागो ६५] यो रुचिरे मनोसि मधुरादीरसे एकान्तरत्तोत्थन्त
मासल्लोभयति सवासोद्वानो जीवोलादयं असनोत्तेरसे प्रद्वेप करोति ततय दुक्खस्य दुक्खसस्य धिनी पोडा उपैतिप्राप्नोति तेन कारणेन विरागीनलि
प्यतेन आसक्ताभवति ६५ [रसाणुगासाणुगएय जीवेधराचरे हिसरएणिकखे चित्तहि ते परितावेरवाले पीलेर अत्तइ शुक्किलिट्ठे ६६] वासोञ्जानी
जोधो रसाणु गायाणुगतो मधुरादि रसाभादाभिलास सहितयिचैर्विचये शस्त्वायापाये कला अनेक रूपान् चराधरान् जीवान् हिनस्ति परितापयति
कोदया सवासो अत्तइगुर आत्माप्य परायण पुन कोदयोवाल सिट्ठी रागाय,पहत्तचिस्त ६६ (रसाणुवाएण परिणहेण उपपायणे रक्खण सनिशो गे वए

दुक्ख । दुद्धत टंसिण सएण जतू न किचि रस अवरज्जई से ६४ । एग त रनो रुद्धरेरसमि अतालिसे से कुणई
पचेस । दुक्खस्य सपील सुवेदु वाले न लिप्पई तेण सुणी विरागो ६५ । रसाणुगासाणु गएय जीवे चराचरे हिसइ
णोगरुवे । चिमे हिते परितावेदु वाले पीलेइ अत्तइ गुर किजिट्ठे ६६ । रसाणुवाएण परिणहे ण उपपायणे रक्खण

रसने विलि धाण देप अत्थत तहि जणण अयसरने विखे दु खपामि दुदात भोटि रसने दोपि वीधार जीव परपाइअो रसकार तेहने अपराध करतु
मपो ६४ एकातराग अरतु मनोहर रसने विखे अति घणु पाइ,आ रसने विखे अप्रीतोकर दुक्ख स यधिनी पीडानो समूख पामे अश्रानी न सीपाइ
सण देप दु खे करो साधु रागरहित ६५ मनोहर रसने कडे प्रयत्थी जीव चराधरन स थावरने हणे अनेकजाति विधिय मअे करो दुक्ख उपजावे
अश्रानो आत्माने अये गुर भोटो किनेय दु खपामे ६६ मीहर रसने रागे करि ऊपार जिया राखया विखे आपणा प्रयोजनने विखे कीडापकी

विश्रोगियक हि सुहसे सभोगकालिय अतिललाभे ६७) रसानुरक्तस्य जोवस्य रसानुरागे सति वा परिगृहेण रसयुक्त द्रव्याणां सूक्ष्मया तथा रसयुक्त द्रव्याणां उत्पादने तथा तेषां रक्षणे तथा तेषां द्रव्याणां सन्नियोगे स्वपरिषां प्रयोजने तथा व्यये सरसद्रव्याणां न्यूनत्वेन तथा विद्योगे विरहे तस्य रसानु रक्तस्य कुतः सुखं भवति कस्मादपि कारणात्सुखं न भवति सभोगकाले च रसात्पादनकालेपि अल्पिलाभोपि दुःखं असंतुष्टिरिव दुःखमेव ६७ (रसे अति नियपरिगहमि सत्तोवसत्तो न उवेदरुष्टिं अतुष्टिदीप्तेण दुहीपरस लोभाविले आययई अदत्तं ६८) रसे अल्पमोजीवः परिगृहे शक्तीभवति ततश्च सक्तः सन् उपशक्तीभवति सक्तीपसक्तश्च तुष्टिं न उपैति अतुष्टि दीप्तेण दुक्लीपुमान् परस्य अदत्तं सरसवसु गृह्णाति कीदृशः स लोभाविलोलीभकलापः ६८ तत्प्राप्तिभयस्य अदत्तहारिणी रसे अतिलस्य परिगृहेय मायामुस वडुइलोभदीप्तातत्याविवृक्त्वानविमुहईसे ६८] लक्षणाभि भूतस्य अदत्तहारिणीरसे

सनिउगे । वए विश्रोगिय कह सुहंसे संभोग कालिय अतिल लाभे ६७ ॥ रसे अतिली य परिगृहंमि सत्तोवसत्तो न उवेद रुष्टिं । अतुष्टि दीप्तेण दुही परस्य लोभाविले आययई अदत्तं ६८ ॥ तत्प्राप्तिभयस्य अदत्तहारिणी रसे अति तस्य परिगृहेय । मायामुसं वडुइ लोभ दीप्ता तत्याविवृक्त्वानवि मुहई से ६८ ॥ सोसस्य पक्काय पुरत्यञ्जाय पञ्चोग

सुखहोइ तेहना भोग विवाना काल विखे अल्पमयको ६७ रसने विपे असंतोपो तथा परिगृहने विखे सामान्य परे लालची वणं भासता लालची संतोष न पासे असंतोपीने दीपे दुखीओ यको लोभे करो कलुषित चित्तयकोखे पारकी वस्तु अणदीधी ६८ लोभं करी परामब्धाने अदत्तनालिये हारने रसने विखे परिगृहने विखे असंतोपीने माया सहित स्या भूठ् बाली तोपणिय स्या योखे यके दुःखयकी न सुं काइते जीव ६८ रसनी लोभी

दिन कर्मणार्पुनभस्य जीवस्य विपाके दुक्ल भवति ७२ [रसे विरत्तोमणुओविसीगोएएण दुक्लोह पर परेण न लिपइ भवसक्के वसन्तो जलेण वा पुक्खरिणो पलास ७३] रसे विरत्तो मजुजीविशोकाः सणु भवमये वसत्त अपि एतेन पूर्वोक्तेन दुक्लोवपर परयानलिपयते केन कि मिव जलेन पुक्खरिणो पल्लिपत् ३ एव तयोइशगाथा १३ अथ स्यथेनेन्द्रियमायित्वाह [कायसफासहणं वः न्ति तं राग हेउ समणुवमाह त दोसहेउ] अमणुवमाहु समीयजोने सुसवीय रागो ७४] तीर्थं कराः काय स्यथेनेन्द्रिय स्यथे शीतोष्णखरस्यहादिक आटविधं विषयं ग्रहण वदन्ति त स्यथेविषयं मनोअ मनोहरशुणसहित गगहेतुं आहुः तमेव अमनोजं अमुन्दर द्वेप हेतुं आहुः तेषु मनोजामनोजेपु स्यथेपु यः समणुव्य परिणामः सर्वतराग उच्यते इति श्रेपः ७४ [फ सन्नकायं गहण वयन्ति कायसफासं गहणं वयन्ति त रागहेउं समणुवमाहु दोससहेउं] अमणुवमाहु ७५] तीर्थं कराः स्यथेस्यथीतोष्णादिः पुहलस्य काय

सव

उवेइ दुक्लोह परपराआ । पट्टु चित्तोय चिणाइ कम्मं जं से पुणा हाइ दहं विवर्त्तो ७२ ॥ रसे विरत्तो मणुओ
विसीगो एण दुक्लोह परंपरेण । न लिपइ भवमज्जेइसंती जलेण वा पुक्खरि गोपलासं ७३ १३ ॥ ४ कायसफासं
गहणां वयन्ति तं रागहेउंतु मणुव माहु । त दास हेउ अमणुव माहु समीयजो तेषु स वीयरगो ७४ ॥ फाससफा कायं

भाषा

परपरा द्वेप करो सहित चित्त थको वाधि कर्मं जे कर्मना दुःखना कारण दुवे विपाक भांगविधाना कालने बिखे ७२ रसने धिखे विरत्त मजुख शोकरहित ए पूर्वं कहोते दुःखनो परपरा लोपाइ नही भवसंसारमाहि वसतुं जीस पाणीइ करो कमलिनो पान नलीपाइ ७३ काय शरीरनो गहण बिखे फरस कर कहि ते रागनो हेतु भलो कहं ते द्विपत्तं देण कारण अमनोज पाइआ कर्मां सरीयां अ परने बिखे ते थीतराग ७४ फरसनो

स्वर्गनिन्दिय पशुण पाहक वदन्ति तथा कायस्य स्वर्गनिन्दियस्य स्वर्गं शीतोष्णादिकं' पशुण आह्य वदन्ति तस् स्वर्गनिन्दिय शरीर मनोस मनोस्य स्वर्गं पाहक रागहेतुक आशु तदेव स्वर्गनिन्दिय भ्रमनोस भ्रमनोसस्यार्गपाहक द्वेष हेतुक आहु ७५ (फानेस जोगिहिसुवेद तिव्य भ्रकासिय पावदसे विणायरागाउरसोयजनावसये गाहकाहीए महिसेवरने ७६] योमनुष्य स्वर्गनिन्दियविषयेषु तीवा उलटा गृह्णि उदेति सोऽकालिक विनाय प्राप्नोति सकदवरागेण आशुरोरागातुर शीतजसेत्यसवस्त्रापीपग्रमनाय शीतलजसेमनस्तदा पाहयहीतोमहाकरीषोपातोऽरस्य महिपदवनाय प्राप्नोति ७६ [जियाविदोससमुवेदतिञ्च त सिसरुणेसेउ उवेददुक्ख दुद्वलदोसेण स एणजतूणकिसिफास भयरऊर्द्धसे ७७] यथापि जनुर्जीयोयक्रिन् जणेतीव द्वेष समुपैति स च जतु स्वकीयेन दुर्दान्स् दीयेण स्वर्गनिन्दियदोषेण तस्मिन्नेवेषणे दुक्ख उपैति पर स्वर्गं शुभाशुभ स्वर्गनिन्दियविषयस्त्रास्य जीयस्य किमपि न

गहय वयति कायस्य फास गहय वयति । रागस्य हेउ समणुन्न माहु दासस्य हेउ ममणुन्न माहु ७५ ॥ फासस्य जो गिहिसुवेद तिव्य भ्रकासिय पावदसे त्रिणस । रागाउरे सीय जलावसन्ने गाह गारीए महिसेवरने ७६ ॥ जियावि दास स सुवेद तिव्य त मिसरुणे मेउ उवेद दम्य । दुद्वत दासेण सएण जतु न किचि फास भ्रनरऊर्द्धसे ७७ ॥

पशुयक्राया कडोर कायानो स्वयपहण कडा ते रागनोरेतू भलो कहि त द्वेषोहेतु पाहूश्री कहतो ह्ययो ७५ स्वयने विखे जे गृह्णि थाका भल्य त करे भक्राणे ते पाभ विनायमरण जिम रागे पोखो टाटापाणी माहि वेसे जिम गाहक चलवर जीय महा महिपपाथो अटवीमाहि मरणपामे ७६ जे कोर पाटपा फरमो विखे द्वेष आले तेहि जषण भवसरने विखे दु खपामे दरात मोटे फरसने टापे परपाहूँ परिस तेहने भ्रपराय करतु

कम षट्प्रकारविनीति तथा स्वयं प्रदेयद्वन्द्वोदस्योवपर परयाप्रद्वचिन्त सन् तर्क कमचिनीति तत्कर्म उपाजयति यत्तर्म तस्य पुरुषस्य पुनर्दिष्टाके
दु खदायि भवति ८५ (कासेविरत्तोमणुषो विसीगोएएण दस्योहपर परिय नलिप्यइ भव मन्नेयसो जलेण वा पुखरिणीपनास ८) स्वयविरत्तो
मनुष्योविशोक सन् एतयादुकोनपर परयाभवमध्ये वसन् अपि न लिप्यते वे न कि मिवजलेन पुकारिणी पत्र मिय ८६ १६ एतामिस्त्रयोदशगथाभि
स्य निन्दयदिषवक्र पद्यसोधिकार (मण्यप्रभाव गहण वयन्ति त रागहेउ समणमगाहु त दीसहेउ अमण्यवमाहु समीयजोतेसुसवीयरगो ८७)
तौर्धकारामनसयिसस्य भाव आभ्राय चिन्तनरूप गहण याह्य वदन्ति त अभिप्राय समनोक्ष मनीषरूपादि विप्रयचिन्तनसहित रागहेतुक आहु
अथवा स्वप्नकामादिप भावोपयापितोरूपादिस्मोपि भाव उच्यते त भाव मनसोयाह्य तौर्ध कारावदन्ति स्वप्नादिषु हि देवस मनस एवव्यापारोस्ति

कम ज से पुंया हे इद्र द ह विवर्गो ८५ ॥ प्रासे विरत्ता मण्यो विसे गो एएण दृ क्खोह परपरेण । न लिप्यई
भवमन्ने वसतो जलेण वा पुखरिणी पलास ८६ १३ ॥ ५ मण्यस्य भाव गहण वयति तराग हे उतु मणुन्न माहु ।
त दास हेउ अमणुन्न माहु समीय जो तेसु स वीयरगो ८७ ॥ भानस्य मण गहण वयति मण्यस्य भाव गहण वयति ।

विवाने अथसरे ८५ मनोहर परसने विखे राग अण्यपरतु मजुष्य शोकरहित एपु ठे कधीते दुक्खनी परपरा लीपाद नही भवसत्तर माहि
वसतु जिम पाण्णोद कमलनोपाद नही ८६ मननीण्ड्यानी भाव परिणाम ग्रहण याह्य फई तीषकर ते रागनो हेतु भली कहताह्यथा ते
हेपनो हेतु पाहुषो कहता ह्यथा नी न राते मनराग हेपने विखे ते चोत्तराग ८७ भावहियानी शुभादि चि तन रूपनो ग्रहण मन वप्पि नननो

तमेव भाव भ्रमनीशं द्वेषहेतु आरु यो मनुष्यो मनोज्ञामनोज्ञेषु भावेषु समस्तुल्य हतिः सवीतराग उच्यते ८७ [भावसमणं गदण वर्धन्ति मण्यस्य भाव गदणं वयन्ति रागस्य हेतुं समणुन्नमाहुर्दोसस्य हेतुं भ्रमणुन्नमाहु ८८] तीर्थंकाराभावस्य शुभाशुभाशयस्य मनोपदणं ग्राहकं वर्दन्ति मन ससितस्य भावशुभाशुभाभि प्राय ग्राह्यं वर्दन्ति इत्यनेन भावमनसोर्ग्राह्य ग्राहक भावसं पन्थ उक्तः तत्र तत् मनस्यमनोज्ञं प्रमोदयुक्तं रागस्य हेतुकं आरुः भ्रमनीशं कुक्षितभावसहित द्वेषस्य हेतुकं आरु ८८ [भावेस जोगिद्विभुवेदतिव्यं भ्रकालिय पावदसेविषासंरागाउर कामगुणेषु गिद्वे करेणुमन्वावद्वि एव नागे ८९] यो मनुजीभावेषु विषयाभिलाषेतीवा यद्विं उपैति समनुजभ्रकालिकं विनाशं प्राप्नोति स पुनरागातुरः कामगुणेषु यद्वं सन् करंणुमार्गाप हतो नाग इव हसिन्या स्वमार्गे आनीतीगजइव परधयोभूत्वा भ्रकालिकं विनाशं प्राप्नोति यथाद्वि मदीश्वतोहस्तीदूरात् करेणुकाहसिनी इष्टा तद् प्रमोहितस्यसामार्गे पतितोजनैर्गृहीत्वा समामार्दो प्रायेत्यविनाशयते तथा भावातुरोपि भ्रकाले स्त्रियते इत्यर्थः ८९ [जियाविदोससमुवेदतिव्य तं सिक्वणेषेउ उवेइदुक्ववं इदन्त दोषेणसएणजन्तुन किस्त्रिभाव भवरत्नइसे ९०] यथापि मनुष्यो यस्मिन् षणेशुभाशुभाभावैतीषं द्वेषं समुपैति समनुष्यः

रागस्य हेतुं समणुन्न माहु दोसस्य हेतुं भ्रमणुन्न माहु ८८ ॥ भावेसु जो गिद्वि सुवेद तिव्यं भ्रकालियं पावद से वि शासं । रागाउर कामगुणेषु गिद्वे करेणु मन्वा वहिएव नागे ८९ ॥ जेयावि टासं समुवेद तिव्यं तं सिक्वणेषु सिउ

गदण भाव कष्टो ते रागनी हेतु कारण भलो कष्टु द्वेषतोहेतु कारण पादृषो कष्टो ८८ मने करी यद्विवाक्ता अत्यंत धरं भवसर विना ते विनाश मरण पासे रागे पीडो कामगुण रूपादि द्विषे करेणु षाषणीद पीताता मार्गे अपश्यो नाग हस्तीनी परिग्रहे भ्रकासे विनाश पासे ८९

स्वकोयेन दुर्दान्तदोषेण दृष्टमनोलक्षणादोषेण तस्मिन्नेष्वप्ये दुक्त्व उपैति पर तु तस्य मनुष्यस्य भाव शुभाशुभव्यापार किमपिन अपराधति भावस्य न कोपि दोष कि तु तस्य पुरुषस्य स एव दोष इत्यर्थं ८० [एगाल्तरत्तोऽदरमि भावे अतालिसि सेकुण्डपपथीसं दुक्त्वसासम्पीत्समुवेद दालिनलिप्यर्दं तेष मृणीविरागे ८१] योमनुष्योकोचिरे मनोषो भावे ऋचिरससातागौरवादी एकाल्तरत्तो भवति समनुष्योऽतालिसि अतादृशे अमनोषो भावे प्रद्वेय करोति स च दालोऽज्ञानीदुक्त्वसा सम्पीड उपैति तेन कारणेन विरागीमुनीरानाद्ये पाभ्यां न लिप्यते ८१ [भावाणुगासाणुगप्य जीवे धराधरद्विसदृशेणरुचे स्थिते हि ते परितारयदाने पोलेद अत्तदगुरुकिलिद्वे ८२] जीवो भावाणुगासाणुगत शुभविषयामित्सापसङ्घितस्यै रनेक प्रकारे सद्दस्यनेरनेपथेनाह यथी

उवंद दुक्त्व । दुद्वतदोसेण सएण जतून किचि भाव अवरअद्द सि ८० ॥ एग तरत्तो कदरसि भावे अतालिसिसेकुण्णदे पथोस । दुक्त्वसा संपील मुवेद दाले नलिप्यर्दं तेष मृणी विरागे ८१ ॥ भावाणुगासाणु गप्य जीवे चराचरे हिंसद गेगरुचे । चित्तहिते परितारवंद दाले पोलेद अत्तद गुरु किलिद्वे ८२ ॥ भावाणु वाएण परिराहिण उप्पायणो रक्त्वगा

जे कोद मनुष्य देप अत्त त धरे भावने विखे तंइज अषधरी विखे ते पाभे दक्त्व दुर्दान्त भिट्टि दोषे जीव चित्तव्या पदाथंरूप भावत बलाकारे करो तंइने अपराध करण नथो ८० एकात धणा रागी मनोहर भावने विखे एतादृशे विकल्पने विखे अति धण प्रद्वेय अप्रीतिकरे दुक्त्व सवधिनी पोडानो समूह पृसे अज्ञानो न सोपाद तेष देप रूप द खे करो साधू रागरहित ८१ मनोहर भावने केडे प्रवर्त्ततु प्राणी भोगनी इच्छाद चराचरे तस अपर आयरनेइणे अनेकजाति विविधशब्दे करीने दक्त्व उपजाव अज्ञानी आत्मानं अर्थे गुरुभोट्टी क्लिप्तस दक्त्व पाभे रागाणिके पोथो ८२

करणं करोमि अनेनोपधेन स्वार्थसिद्धिं करोमि अनेनोपधेन पुत्रं भवति इत्यादि चिन्तनेर्वालीऽविवेकीचराचरान् अनेकरूपान् जीवान् हिनस्ति तथा
 पीडयति परं कीदृशः स अतद्वशुः स्वार्थंपरायणः पुनः कीदृशः क्लिष्टीरानाद्युपहृतचित्तः ६३] भावाणु वा एणपरिगहेण उपाययेत्कलणसांश्रयिणे
 वएविभीषय कइ सुहंसे सभोगकालेअ अतित्तलाभे ६३] भावानुपातेन विषयादि चिन्तनेन तथा परिग्रहेण विषयादिभीलनेन तथा उत्पादने
 एतेविषयादिपदार्थाः कथं मे मिलिन्नन्ति इति चिन्तनेन तथारक्षणं आरोप्य बुद्धिं प्रमुखभावरक्षणं तथा सन्नियोगे परस्व कुबुद्धिसदुद्योगादिदाने तथा
 अयेनिद्रास्मृति प्रमुखाणां हीनत्वे विवोगे परस्थितरदानादीं गतार्थाया बुद्धेः स्फुरणस्थाभाविभावानुरक्तस्य कुतः कक्कात्सुख भवेत् अपि तु कुतोपि
 सुखं न स्यादिव पुनः सभोगकाले च अटमि लाभोदुक्त्व भावानां चिन्तनकालेऽपिदृष्टेर्लाभोऽनस्तात् सत् कुम्भभङ्गक पुण्यवत् सुख न लभते ६३
 (भावे अतितेय परिगहंमि सतीवसतीनउवेइ तुद्धिं अतुद्धिदोसेणदुहीपरस्व लोभाविले आययई अदत्तं ६४] भावेयु शुभाशुभाध्यवसाये अटसोऽसन्तुष्टी

संनिश्चोगे । वए निश्चोगेय कइ सुहंसे संभोगकालेय अतित्तलाभे ६३ ॥ भावे अतितेय परिगहंमि सतीवसती न
 उवेइ तुद्धिं । अतुद्धि दासेण दुही परस्व लोभाविले आययई अदत्तं ६४ ॥ तगहाभिभूयस्व अदत्तहारिणी भावे अति

भला भावने रागे करो परोगहनी भुक्कई इव्य उपजावि वा चौरादिकधी राखिवा काजि प्रापणा करिवे विनाश विखे विरह विखे कीहाधी
 सुखधाइं तेहना भोग विवाना कालने विखे अटम सतीपना लाभ अणहुंते किन्नाधी सुखधाय ६३ भावने विखे असंतीषी थको परिग्रहने विखे
 असतीपो थको सामान्यपणे थणु लालची संतीप न पास असतीपीने दुक्खे दुक्खोयोऽको पारको वरतु देखी लोभकरी कलुषित चित्तथकोखे अणदीधी

जन परिग्रहे शर्तो भवति सामान्ये नरक्षीभवति ततश्च सामान्ये न गतं सन् उपशक्तोऽयत्नाश्रयो भवति एतादृशसन् तुष्टि न उपैति श्रुष्टि दोषेण
दुखोसन् परस्य अन्यस्य द्रव्यादी लोभाविर्लोकाभकलुषोऽस्त आदर्त्ते ८४ (तण्डहाभि भूयस्व अदत्तहारिणीभावे अतिसस्वपरिणह्येयमायासुस बहुरलोभ
दासा तत्यापिदुखानविमुचरसे ८५) दद्याभि भूतस्य अदत्तहारिण्य पुरुषस्य लोभदीपात् गत्यास्ययावर्त्ते तथारपि यथा भाष्येपि स यथा भाषीदुखजाल
न विमुच्यते ८५ [मोसकपच्छाय पुरग्रथोय पशोनकालीय दुहोदुरन्ते एय अदत्ताणि समाययन्ती भावे अतिसोदुहिश्री अणिसो ८६] यथा यावत्स्य
यथात्परतय मयोगकाले च पुरुषोऽुरानुसो एय अमुनाप्रकारिभावोऽद्यत्त सद्रूप्ये असन्नुष्टो अदत्तानि च समाचरन् दुखितो भवति कथभूत स
अनियोगारहित धनकलाभ्यां रहित आर्त्तैरोद्राभ्या सहितरत्न्यै ८६ [भावाशुरसस्वनरस्य एव कर्त्तौसुहृ ह्योजकयाद्रकश्चित्त्यावभोगेविकीस
दुस्य निश्चत्तईजककणदुकल ८७] एय अमुनाप्रकारेण भावानुरक्तस्य भावेस्त्राभि प्राये अत्ररक्षीभावानुरक्तस्य कदापि हत सुख भवेत् कृतोपि

तस्या परिग्राहेय । मायासुस बहुर लोभदासा तत्यापि दुकला नवि सुचर्द्दे से ८५ ॥ मोसस्या पच्छाय पुरत्यश्रोय पयो
गकानिय दुही दुरते । एव अदत्ताणि समाययती भावे अतिसो दुहिश्री अणिसो ८६ ॥ भावाशुरतस्व नरस्य एव

यस्य ८४ लोभाकरो पराभयाने अदत्तनेणहारने भावने विद्ये अद्यसने परिग्रहने विषय असतोपोने मायासहित यथाबोले लोभनादीप यकी ती पिण
दुख यको नूकाभरनहा ते विषया जोन ८६ भावो लोभो भूठ योली पयात्तापधरे पडला दुखलहे भूठावीनवाना प्रस्त्राधने विद्ये दुखनीपासय
हार अगे विद्वना नदने जिस भूठ लोभे जिय अणदोषु कर्त्तो मनोहर भावने विद्ये असतोपो यको दुखोहृद निशारहित ८६ भावने विद्ये रागी

कदापि किमपि सुखं नस्यात् इत्यर्थः तत्र च भावोपभोगेपि सङ्कल्प विकल्पानुरागेपि चिरकालचिन्तनेपि क्लेशदुःख श्रद्धसि लाभजनित क्लेशरूपं दुःखं निवर्त्तयति, उत्पादयति पुनर्यस्य क्लेशस्य भावोपभोगविषय चिन्तनाद्यर्थं नरस्य दुःखं स्यात् ८७ [एमेव भावमि गभोपभोस उवेद्द दुःखोहपरं पराश्री पदुद्विचितीयचिणारकम जसे पुणीहीदुदुह विवर्ग ८८] एवं एव यथा भावे रागं प्राप्ती दुःखोषपर परया प्रदुष्टचित्तः सन् श्रद्धकर्म प्रकारकं चिन्तति तथा भावे चित्ताभिप्राये प्रद्वेषं गतोजन्तुर्दुःखोषपर परया प्रदुष्टचित्तः सन् तत्कर्मचिन्तति वधाति यत्कर्मतस्य जीवस्य विपाके कर्मवर्दन कालेदुःखं दुःखविधायि भवति ८८ [भावेविरत्तोमणुश्री विसोर्गीएएण दुःखोहपर परेण न लिप्यद् भवमज्जे वसन्ती जलिन वा पुक्खरिणीपलास ८८] भावेविरत्ताः सङ्कल्पाद्विसृत्तीमनुयः एतयापूर्वोक्तयादुःखोषपरं परयाभवसमर्थे वसन् अपि न लिप्यते कीदृशः स विशोकीविगतशोक केन किं मिव

कतो सुहं हीज्ज कथाद् किंचि । तत्थोव भोगेवि क्लेस दुःखं निव्वत्तद् जस्स कएण दुःखं ८७ ॥ एमेव भावमि गभो पभोसं उवेद्द दुःखोह परंपराश्री । पदुद्व चितीय चिणार कम्मं जं से पुणो होद्द दुहं विवर्गि ८८ ॥ भावे विरत्तो मणुश्री विसोर्गी एएण दुःखोह परंपरेण । न लिप्यद् भवमज्जे वसन्ती जलिया वा पुक्खरिणीपलासं ८८ ॥ १३१ ॥

नरमनुयने कीर्त्तयो सुखदुःखे पण तीहा भाव भोगविवाने श्रद्धसङ्कद लागे क्लेश दुःख पाप्मे नोपजावे करे जे मनोहर भावभोगवयाने काजि दुःख कष्ट भनेक उपाय ८७ इम भावने विखे द्वेप पाप्मोयको पाप्मे जीव दुःखनी परंपरारीसवंत चित्तयको वाधे कर्म घणा जेहने वली हुर दुःखरूप विपाक कर्मनोपल ८८ भावयो विरस्यो मनुय शोकरहित एणुंठे कही दुःखनी परंपराद् लेपाये नही भवसंसारमाहि वसतु जोम पाणीये करी कमलनीने

जलेन पद्मिनोपद्रव इव ८८ १२ एताभिः स्वयोदशगाथाभिर्भावधिकारः संपूर्णः अथ पूर्वोक्ताथस्योपसङ्गश्चाह (एव दियत्यायमणस्य अत्यादुक्त्वस्यैक
मण्यस्यरागिणो ते चैवथोपपि कथाद् दुक्त्व नवीयरागस्यकारिन्तिकश्चि १००) एव पूर्वोक्त प्रकारेणरागिणो रागहेय सहितस्य मनुष्यस्य इन्द्रियार्था
इन्द्रियाणां चक्षुरादीनां अर्था विषयारूपादयथ पुनमनसोऽर्था सहस्यविकल्पा दुक्त्वहेतवो भवतीत्युक्त्याहार तएव इन्द्रियार्थामनसोऽर्थाय कदापि
किञ्चित् स्वीकमपि दुक्त्व यौतरागस्य किञ्चिन्न कुर्वन्ति योऽह जितेन्द्रियो भवति स एव यौतराग उच्यते स एव इन्द्रियार्थानां मनः सहस्यानां च
जितस्यात् यथ इदमर्थो न भवेत् स च सुक्त्व भाक न स्यात् यथाजिन पासक अन्नजिनपालककथा १०० [न काम भोगासमय उच्यन्ति नयाविविभोगाविगार
उच्यन्ति जितेष्वसौसीयपरिगहेय सोतेसमीहाविगार उच्येद् १०१] कामभोगा शसता न उपयान्ति च पुनर्भोगाविक्रान्ति अपि प्रीधादिरूपां विकारु
यदि अपि न उपयान्ति यमस्य प्रोधादेय भोगा कारण न भवन्तीति भाव तर्हि को हेतुरित्याह यस्तत् प्रहेपी तेषु कामभोगे प्रहेपी यस्य सतत्

एविदियत्याय मणस्य अत्या दुक्त्वस्य हेतु मण्यस्य रागिणो । ते चैव थोवपि कथाद् दुक्त्व न वीयरगस्य करेति
किञ्चि १०० ॥ न कामभोगा समय उच्येति नयावि भोगा विगद् उच्येति । जे तप्यसौसीय परिगरीय सो तेसु मो

पान ननीपाद् १८८ इम ५ इद्रीना अर्थ शब्दादिक मनना अर्थ सकस्यादिक ते दु खना हेतु कारणके मनुष्य रागवर्तने ते इन्द्रिय मनना अर्थ
थोडो पणि कियारु पणि दुक्त्वयरीरना मनना कष्ट रागहेय रहित जिते कार करे नही १०० इन्द्रिय ५ ना काम भोगते ससतानी कारण नष्ट इ
रागहेय पणाने हेतु न हवे शब्दादिक काम भोग विकार कपजायता नथी प्रोधादि विकारतानथी जिते विषयने रागहेय आधिके अने परिषद्

प्रद्वेषो भोगेषु विरागो च पुनः परिग्राहो नपु भोगेषु परिग्रहमुद्धिमान् भवत सजीवी साहात् रागद्वेषात् पिबति तपैति यदाहि विषयेषु रागवृद्धिं विषत्ते तदाभेगाप्रक्रीभवति यदा च विषयेषु ब्रुवि न विषत्ते तदा विषयेभ्यो विरली भवतीति तसाल्तामभोगाः शरतायाः क्रीधादिकषायाणां च कारिणो भवितुं नाहंनि इत्यर्थः १ अथ विद्वति स्वरूपमाह (कीह च मायं च तद्विवमायं लोभं दुगच्छं अरद्वैरद्वेष दामंभय सीग पुमत्विविय नपुंस विय विद्विद्विय भावेर) (आवज्जई एवमभोगरूपे एव विद्विकामगुणिससत्तो अन्निय एयप भवे पिसिसे कारुखदीणेहरिसिव इस्सि ३) कामगुणेषु शब्दादि विषयेषु प्रक्रीरागो जीवः एव असुनारागवल्लक्षण प्रकारिण अनेकरूपान् नानाविधान् विकारान् एवं विधान् उक्तस्वरूपान् अनलानुबन्धि प्रमुखान् प्रापयति प्राप्नोति च पुनरितत् प्रभावात् एतेभ्य क्रीधादिभ्यः प्रभवत्तत्तत्ता एतत् प्रभावात् क्रीधादि जनितात् परिताप दुर्गति पातादीन् प्राप्नोति कीदृशः सन् कषणायै अहंः कारुख कारुखत्वे नदीनः कारुखदीनो ज्यन्तदीन इत्यर्थः पुनः कीदृशो क्रीमान् लज्जितः प्रीतिविनाशादिकं

ह्याविगदं उनेद्व १०१ ॥ कीहंच माणं च तद्विव मायं लोभं दुगच्छं अरद्वं रद्वंच । हासं भयं सीग पुमत्विवियं नपुंस वियं विविद्विय भावे १०२ ॥ आवज्जई एव मणो गरूपे एवं विद्वे कामगुणे सु सत्तो । अन्निय एयपभवे विसिसे कारुख

बुद्धिधरेके नि विषयादिकानि विले रागद्वेष साहक्रीधादि विकार लहे १०१ क्रीध अभीमान तथा बली माया लोभ दुगच्छा अशुचिद्वेषी अरति अश्रुतारति स्यात् हास्यभय शोक पुरुषवेद लीनेद्व नपुंसकवेद दिविष घणभाब जे हर्षं शातादिक १०२ पासि इणि प्रकारे अनंतानुबंधीया क्रीधादिक पूर्व कालाएण्य्वादिक कामगुणने विले विलगो रलीके ते अनेरा क्रीधादिकाना क्रीधा विशेष परिताप दुर्गतीरूप पासि दयामणी हवे घण

इद्वैव अगुभयन् परत्र च विपाक अतिकटुक परिभावयन् पुन कौटशोबदस्मे इति आर्षत्वाद्देव्य सर्पत्वाप्रीतिकर इत्यर्थ इति द्वितीयगाथयासम्बन्ध उक्त्वा प्रथमगाथाया अयमाह विषयायज्ञो जीव कान् २ स्वरूपान् प्राप्नोति तमाह विषयायज्ञो जीव कदाचित्क्रोधप्राप्तिश्च पुनर्मौन प्राप्नोति तथैवमायाप्राप्नोति तथाभय अपि शक्नोति तथा योक्तुः स्त्री वेद योक्तुः प्रियविद्यो यज्ञ मनोदुःख रूप पु वेद द्विधा सह विषयाभिलाष रूप स्त्रीवेद पुरुषेण सह विषयाभि स्ताप योक्तुः पु स्त्रीवेद योक्तुः तदपि विषयायज्ञो जीव प्राप्नोति तथा पु १ कदाचित्पु सकवेद प्राप्नोति स्त्रीषु सौख्यमर्वाधिपयाभिलाष रूप नपु सकवेदलभते च पुनर्विधिधानं भावान् हर्षविषयादादीन् प्राप्नोति इति गाथाह्वयार्थं अथ रागाद्देवोत्तरणे उपाय पु १ रागाद्देवोत्तरणप्रकारान्तरं रूप द्रुपणचाह [कथं न इच्छेत् जसहायल्लिच्छपच्छाणुतावेयतवप्यभाव एव विद्यारे अस्मिन्पणारे आवज्जइ इन्द्रियचोरवर्षे १०४] साधु सहायलिपसु सन् कस्य अपिन इच्छेत् तदा अकल्प कथ इच्छेत् च पुन साधु पथागुताप सन् तप प्रभावसपिण इच्छेत् अत्र हेतु माह इन्द्रियचोरवर्षे पुमान् अस्मिन् प्रकारान् बहु विधान् एव पूर्वोक्तान् विकारान् आपद्यते प्राप्नोति कथ्यते स्वाध्यायादि क्रियासुसमर्थो भवतीति कल्पोयोग्यत कस्य स्वाध्यायादि योग्य सहाय मन विग्रामथा कारिष्यतीति बुध्यापिष्व लिपसतीति सहाय लिपसु स्ताह्य गन् पथात् व्रत तपसोरङ्गीकारादनन्तर अतुलाप यस्य च

दीपो हरिमे वदस्मि १०३ ॥ कथं न इच्छेत् सहायलिच्छु पच्छाणुतावेय तव प्रभाव । एव विद्यारे अस्मिन् पायारे भाव

दीनेषु सत्त्वावन्न इह अप्रोतकारी सुह सवने १०३ सत्त्वायादिक क्रियाने सकल्पा याग्यनवाहं शिष्यते योसामनादि सहाय याहत्तु मे एकदका कीपो चास्त्र लीधा पुटी पथात्तापनकरे तपनी प्रभाव लब्धि चक्रवर्ती पथी न वाहे पृथगा विकारदोष अस्मिन् यथा प्रकारना पासे इ द्वियचोरने वसि

पद्यानुतापः तपस प्रभावोभवात्तरेभोगानां भोक्तास्यां इत्यादिचित्तनतपः प्रभावस्तं अथवा इहेव आभीषध्यादि लक्षितान् स्यां इत्यादिकं न इच्छेत् १०४
[तत्रोचि जायन्ति प्रयोगाद् इति मज्जिउ' मोहमहत्त्वं मिसुहेसिषी दुक्त्वविषीयणशु तपश्चयं उज्जमएयरागो १०५] ततः कषायवेदादीनां प्राप्तिरनन्तरं तस्य
इन्द्रियचौराणां वशीभूतस्य मोहमहत्त्वं मोहमहत्त्वासमुद्दे निमज्जयितुं तं जीवं वृद्धयितुं प्रयोजनानि विषयसेवना िंसादीनि जायन्ते उत्पद्यन्ते किमर्थं
एतानि विषयसेवनहिंसादीनि प्रयोजनानि जायन्ते कीदृशस्य तस्य दुक्त्वेषिणः इन्द्रियसुखाभिलाषिणः ततश्च तत् प्रत्ययं तेषां पूर्वोक्तानां विषयसेवा
हिंसादीनां प्रयोजनानां प्रत्यय निमित्तं तत् प्रत्यय तदर्थं तन्निमित्तं रागीद्वेषी च जीव उज्जमए इति उज्जच्छतं उद्यमं कुरुते १०५ (विरज्जमाणस्सय
इन्द्रियस्या सहारात्तावश्यप्यगारान तस्ससत्त्वविमणुक्कयं वानिब्बत्तयत्ती अणुणुक्कयं वा १०६) तावत् प्रकारास्तावन्तः प्रकाराभेदादेषां तं तावत् प्रकारा
भेदादेषां तं तावत् प्रकाराः खरख्खादि भेदाः शब्दरूपरसान्ध स्रग्धाः सर्वेषु इन्द्रियाथार्थास्तस्य पूर्वोक्तस्य विरज्यमानस्य विरागिणो रागद्वेषाहितस्य
मनोज्ञत्वं वा अमनोज्ञत्वं च न निवर्तयन्ति नीत्यादयति रागद्वेषाभ्यां विषयेषु मनोज्ञत्वं चीत्याद्यते योहि रागद्वेषाभ्यां रक्षितस्तस्य विषयः

उद्दे इन्द्रिय चौरं वस्सु १०४॥ तत्रोचि जायति पञ्चोयणाद् निमित्तजिउं मोहमहत्त्वं मिसुहेसिषी दुक्त्व विषोयणशु
तपश्चयं उज्जमएय रागो १०५ ॥ विरज्जमाणस्सय इन्द्रियत्वा सहारात्तावन्नय प्यगारा । न तस्य सत्त्ववि मणुन्नयंवा

यकी कृता १०४ वेदादि विकार पक्को तेहने हिंसा विषे सेव दिक् प्रयोजन ऊपजे आपणु आकाने आपण पे वृद्धावे मोहसमुद्देने विषे सुखना
अर्थो यका दु खपासि वा भणी पूठिल्या प्रयोजनने अर्थे उद्यम करे रागद्वेषी यकी १०५ रागद्वेष षण करताने इन्द्रिय ५ ना अर्थे शब्दादिक विषय

किं कुर्वन्तीति भाव १०६ (एव सकप्रविकप्रणाम सन्नायद समयमुच्येद्विषस अत्येसदाप्ययो तथीषे पहीयपकामगुणेसुतथथा १०७) एव अमुना प्रकारेय ससदस्य विकल्पगासु उपस्थितस्य पुरुषस्य तथा अर्थान् सदस्ययत पुरुषस्य च समल जायते स्वस्य आत्मन सहस्यारागहेपमोहाहेपा विकल्पना सकप्रदापदरु विचारथा सदस्यविकल्पनास्तासु उपस्थितस्य उद्यमगुणस्य च पुनरर्थान् रन्ध्रियार्थान् शब्दादि विषयान् विचारयत्त यती रूपदय रन्ध्रियादय मत्त सकाभात् पृथगेवतिष्ठति न एतेपाप हे तय पाप हे तवस्तुल्लिखिन् स्थितारागहेपादय. इति विचारयत समतारकायते यदुक्त जीषार नयपयते जीजाणद तत्साहीद सम्यत तथीषे इति तत समलोत्पत्तिं तत्सस्य पुरुषस्य कामगुणेषु विषयेषु लक्ष्यालोभ प्रकर्षेण हीयते १०७ (सप्रोयरागिकयसव्वकिथी खवेदनाणावरण रायेष तहेवजन्ध्रिरस्यमावरदरज चत्तराय पकरेदकभा १०८) यथा पुरुषस्य कामगुणेषु शब्दादिषु सोभी नियर्त्त सन्निर्लोभापीतराग योतसर्वज्ञत्व सत् कृत सर्व कार्यं सन क्षणेन ज्ञानावरण पक्षविषं क्षणेनक्षपयति १०८ (सव्व तथीजाणद पासएय

निव्वसयती अमणुन्नयथा १०६॥ एवस सकप्रविकप्रणामु सजायर्द समय सुवट्टियस्य । अत्येय सकप्रयो तथी से पही यप कामगुणेषु तन्हा १०७ ॥ स वीयरगोकय सव्व किञ्चो खवेद नाणावरण खयेण । तहेव जट्टिरिसण मावरिद जष

ततलाखर गपुरादिक पणे रागहेप अण धरता ते सधला मनोष पण नीपजाने नही अमनाष पण नियर्त्तव नही १०६ इणे प्रकार पाथाने सकस्य रागहेपादि अथयसायना विकस्य समस्तादापना मूलहे एहयो भायनाने विखे प्रवर्त्तताने इद समता मथस्य पण उद्यमयतने अर्थ जीवा दिपदायन मुभ यान चित्तान ते समतायको लहने पाणि यान कोबोयार कामगणने विखे यथा लाभ १०७ ते योतराग थार कोषाहे सर्वशरयं जेणे

निरन्तराए अणासवेज्जाण समाहि पुत्ते आउक्खएमीक्खमुवेदुयुद्धी १०८) ततः कर्मजयानन्तर सर्वं जानाति सर्वं पश्यति च तदा प्रसो
 नोयकर्मप्रहितः सन् निरन्तरायः अन्तरायकर्मरहितो भवति पुनरनाश्वी भूलाधानसमाधिनायुक्तस्य आयुः क्षयेसुखः सन् मोक्षमुपैति १०८
 इत्यथा दुहसाशुखो जगद्धईसययंजन्तुस्य दीहासयविषमुकोपसखी तीहीइ अचन्तसुद्धीकयथो ११०] समीचगामी पुनपरत्तस्मात् दुक्खात्
 तस्मात् कस्मात् यत् दुःखा एत जन्तु एतं प्राणिनं सततं निरन्तरं बाधतेपीडयति तस्मात् सर्वस्मात् दुःखात् सुक्लोभवति कीदृशः समीचगामी
 पुरुषोदीर्घार्थविप्रशुक्तः दीर्घाणि प्रलम्बस्थितीनियानि कर्मास्थिव ज्ञाययारोगा दीर्घार्थयस्तेभ्योविशेषेण प्रशुक्लोदीर्घार्थविप्रशुक्लोदीर्घकर्मरोगरहित
 पुनः कीदृशः अतएव प्रशस्तः प्रशंसायोग्यस्ततः कर्मरोगाभावात् अल्पान्त सुखीकृतार्थः कृतकल्पः सिद्धोभवतीत्यर्थः ११० अथ निगमनमाह [अणारकालप
 तरायं पकरिइ कासं १०८॥ सव्वंतञ्जा जाणइ पासएय अमोहणो होइ निरंतराए । अणासवे ज्ञाण समाहि जुत्तेजा
 उक्खए मोक्ख मुवेइ सुद्धी १०९॥ सीतस्स सव्वस्सा दुहस्सा मुक्खो जंवाहई सययं जंतुसयं । दीहासय विषमुको पसखो

खपावे ज्ञानावरणी कर्म समय माघ माहि तिम जवली दर्शनावरणी खपावे जे अंतराय कर्मकरी करि कर्यं १०८ तिवार पखी सर्वलोकालोका
 धाने जाणे देखे मोहनीय रहित यको आशय पापरहित शुभ शुकध्याने समाधि परमसख्य पणे युक्त आउछादि तथा घातीया कर्मने खपावे
 मोक्षपामि शुद्धमन रहित १०९ ती मोक्षनी पामण्हारी जन्ममरण तथा सर्वदुःखधी मुंकाइ जे दुक्ख बाधा करि पाठि निरतर जीव प्रलब्ध देखीला
 सवला संसारी प्राणेने स्थिते करी दीर्घकालताइ भीमवीर एत्थां कर्ममरण योगनी पीडापी मुंकाणी प्रसयाजोग तिवार पखी खणं थाइ सुखी

भवत्प्रपत्तो सव्यकद्रुत्प्रपत्तोऽप्यस्योविद्याहि श्रौतसमुपेयसत्ता कामेण अचलत्सुहीभवन्तित्तियेभि १११ तीदकरैरेपसर्वस्य ससारदृक्त्वस्य प्रमोद्यमागो
व्याख्यात य प्रमोद्यमाग क्रमेण समुपेति सत्त्वा प्राणिनीत्यन्त सुखिनी भवन्ति कीदृशस्य सर्वस्य दृक्त्वस्य अनादिकालप्रभवस्य इति अह यथीभि इति
सुधमासामोजन्मूलाभिन् प्राह १११ इति यीमदुत्तराध्ययन स्वार्थदीपिकाया उपधायाय श्रीलक्ष्मीकीर्तिर्गण्डिग्रिष्यलक्ष्मीवल्लभगण्डि विरचिताया
प्राविशतम प्रमादस्थानास्य अध्ययन संपूर्ण ॥३२॥ अथ अयस्त्रिगत्तममारभ्यते पूर्वस्मिन् अध्ययने प्रमादपरिहार उक्त तथा प्रमादस्थानान्युक्तानि ते
प्रमादै काला कथं प्रकतीनामन्य स्यात् तदथ इहाध्ययने कर्म प्रकृतय उच्यन्ते (अद्रकभाद्रबुद्ध्यासि आसु युञ्चि जहकम जिहि वही अय जीवो ससारं
परिरत्नं १) हे जन्मूलाभिन् अह यथा क्रम आजुष्या अतुक्रमेणतानि अद्रकर्मणि यथाभि क्रियन्ते मिथ्यात्वाविरति कथायथोतेहेतुभिजोयि
इति कर्माणि अद्रकस्थानि यथाप्यानुपूर्वविविधावर्त्तते तथापि यथाक्रम पूर्वाजुष्यां प्राकृतत्वात् ततोयास्यानि प्रथमातानि कानिकर्माणिथैरुद्रभि कर्म
वर्तनित्यन्तोगेय जीव ससारं चतुर्गति भ्रमणेपरिरत्नं विविधान पर्यायान १ [नाणायरण धेव दसणायरण तथा वैयण्ज तद्वामोह आवकभ्र

तोद्दिद्र अचलत्सुही कयत्यो ११०॥ अणाद्र कल प्राभवस्य एसो सव्यस्य दृक्त्वस्य पमोक्त्वमगो । विद्याहिश्रो ज समुवेच
सत्ता कर्मण अचलत्सुही भवति त्तियेभि १११ ॥ पमायथाण समत्त ३२ ॥ अद्र कस्माद्र वोक्क्याभि आणुपुञ्चि जहकम

कर्तार्य स्यपामे श्विबजाये ११० अनादिकालना कपना रखा जे कर्म सर्वदृ सु रूप तेहने मू कावणहार ए मार्ग कष्टो तीथकर मार्ग सभ्यग पहीयर्जो
शोय घणा अतुक्रमे चटते २ गुण पडिधर्जे वण सुखीषायो भोक्जार्द्र १११ इति प्रमादस्थानक अध्ययन नो अर्थं पृणयथो २२ ॥ इवे आठ कथमद्र कहे

तथैव प्रचलरहितोयास्थितस्वीपिविष्टस्य समायाति २ तृतीया निद्रा निद्रा दुःख प्रतिबोधा चतुर्थी प्रचला प्रचलाफलमानस्यया आयाति सा प्रचला प्रचला ततः पञ्चमीस्थान गृह्णितान्जोवास्थाना गुष्टा गृह्णितोभी यस्यां सास्थान गृह्णि अथवास्थाना सहता उपचिता गर्ह्यस्यं सास्थानर्हि यस्या उदये हि वासुदेवार्धबलः प्रचल रागधेप वांश जन्तुर्जायते अतएव दिन चिन्तितार्थं साधिनी इदं पञ्चमी भवति ५ (चकव् मवकव् ओहिस्स दरिसणं केव लिय आवरणी एव तु नवविगण्यं नायवन्दरिसणावरणं ६) एधं तु अमुनाप्रकारेण नवविकल्पं नवविधं दर्शनावरणं कर्मज्ञातव्यं दर्शनं सभ्यज्ञां आहृणी तीति दर्शनावरणं पञ्चानिद्रां पूर्वगाथायां उक्ता चलारोऽमीभेदास्ते के उच्यन्ते चकव् मचकव् ओहिस्स दरिसणं इति तत्र चकव् मच चकव्सेत्केक पदं चकव् म अचकव् अथपि अच चक्षुरवधिसस्यचक्षुरचक्षुरवधिरावरणं चक्षुरचक्षुरवधिरत्यत्र प्राधातत्वात् इहं एकत्वं सुखं दर्शनीरूपसामान्य गहयेयत् आवरणं च पुनः केवलेकेवलज्ञानेयत् आवरण एव नवविधचक्षुपादृश्यतेज्ञायते इतिचक्षुदर्शनतत् आहृणीति आच्छादयतीतिचक्षुदर्शनावरणं १ तथाचक्षुषोऽन्वत् अचक्षुः शोचनमा रसनास्पर्शरूप इन्द्रिय चतुष्पां तिन अचक्षुपादृश्यते इति अचक्षुदर्शनं तत् आहृणीतीति अचक्षुदर्शनावरणरूपवद्व्यं सामान्य प्रकारेण भर्त्यादा सहित दृश्यते इति अथपिदर्शनं तत् आहृणीतीति अथपि दर्शनावरण एव तयोभेदायतुर्थं पुनः केवले केवल दर्शने ष्वावरणं द्वेय केवलं सर्वद्रव्य पर्या

ततोय धीणागिह्रीउ पंचभा हेद्वा नायव्वा ५ । चकव् मचचकव् ओहिस्स दंसर्गो केवलेय आवरणो । एवंतु नव दिगण्यं

गाढे दुःख कारी जगाडीयेते निद्रा निद्रा ३ हीउता आवेते प्रचला प्रचला तिवारपकी अशुभने योगे दुदते दृष्टगृह्णि लीभ रागादि रूपधी वासुदेव नाथको अर्धबलदिननु चित्तव्यं कार्यं करे ते निद्रामाहि ५ चक्षु आरिषि देखि अचक्षुका न प्रमुखवीजे दं द्विये देखि अथपिज्ञाने दर्शने देखि वली केवल

मिथ्यात्व मोहनीय मित्रस्य मोहो मित्र मोहनीय इह हि सभ्यका मिथ्यात्व मित्ररूपा जीवस्य धर्मा उच्यन्ते ८ दर्शन मोहनीय त्रिविध उक्ता अथ चारित्र मोहनीयभेदान् प्राह चरित्तिति गाथा पूर्वभिन्नाका अत्राल्य तोयकरैश्चरित्त मोहन कर्म द्विविध व्याख्यात चरित्रे चरित्र ग्रहणे साहयति मूढ करोति इति चारित्र मोहन तत्र हि चारित्र मोहन यत् चारित्र फल जानन् अपितत् न प्राड्डियते तत्तद्विषयमाह कपाय मोहनीय प्रथम कपाया क्रोधादयत्नारस्यैसाहयतीति कपाय मोहनीय १ तद्यार्तो कपायैर्नवभिर्ह्यास्यादि षट् कवेदतिक्र रूपैर्माहयतीतिती कपाय मोहनीय १० तत्र यत्प्रथम कपायज मोहनीयकर्म योडयविध भवति कपायाहि क्रोधमानमायालीभा प्रत्येक अनन्तानुबन्धा प्रत्याख्यान सञ्चलन रूपैश्चतुर्भिर्भेदै योडय भेदा भवन्ति अयनोकपायज मोहनीय कर्म सप्तविध नवविध वा भवति हास्य १ रति २ अरति ३ भय ४ शोक ५ जगुष्ठा ६ वेदनयाणाश्च सामान्यायण नया एकत्वमेव गम्यते हास्यादि षट्क वेदय एव सप्तविध यदाहि तयोर्भेदा गुणो क्युसकरूपा नष्टन्ति तदा नवविध नो कपायज मोहनीय भयतोत्थर्ष १ १ अयायु कर्म प्रकृतीराह (नैरश् यतिरिक्त्वात् मणुस्मात् तद्वय देवात् चउत्पत्तु आडकमश्च उच्चिह १२) आयु कर्म चतु

क्वच नोकमायं तद्वैवय १० ॥ सौलस विह भेषण कम्म तु कसायज । सत्तविह नवविहवा कम्म नोकसायज ११ ॥

न वै भेदेकहा तोर्थ करे कपाय क्रोधादिके करी चारित्र बिधि मृभा एते कपाय मोहनीय वीर्जा कपाय सार्थ ज प्रयत्ने तनो कपाय हास्यादीके १० क्रोधमान माया लोभ अनतानुबधी प्रत्याख्यान अप्रत्याख्या न सञ्चलन एसौलभेदे कपायधी कपनाज कम्म हास्य १ रति २ अरति ३ शोक ४ भय ५ दुगहा ६ वेद ७ एसातभेद पुरप्रवेदना स्वीवेद २ एसहित ८ भेदकम्म नोकपायधी कपनाति ११ नरकनो आयु १ तिय चनो आटयु २ मनुष्ययु

सुख
 भाषा

विंश भवति दशानैरयिक तिर्यगायुः तिरये भवानैरयिकाः नैरयिकाश्च तिर्यच स्त्रिषां आयुर्नैरयिक तिर्यगायुः प्रायुष्पदस्य प्रत्येका
सम्बन्ध तथैव तृतीय मनुष्यायुः च पुनश्चतुर्था देवायुः एवं चतुर्विंश आयुर्भवति १२ अथ नामकर्म प्रहातोरारह [नामकथान्तु द्विविहं सह असुहस्र
आहियं सुहस्रस्रु बहुभेयाएमेव असुहस्रस्रु] नाम कर्म द्विविध व्याख्यातं शुभं १ च पुनश्च शुभनाम कर्म १ अशुभनाम कर्म २ एवं द्विविधं तत्र
शुभाशुभ नाम कर्मणो बहुभेदाः सन्ति एवं एव अशुभस्य अशुभनाम कर्मणोपि बहुभेदा भवन्ति तत्र शुभस्य उत्तरोत्तर भेदतोऽनन्त भेदत्रिषु मध्यमा
पेक्षया सप्ततिशब्देदा भवन्ति तं चामी मनुष्यगति १ देवगति २ पश्चिन्द्रियजाति ३ औदारिक ४ वैक्रिय ५ आहारिक ६ तैजस ७ कर्मण ८ समचतु
रस संस्थान ९ वज्रश्लेषम नाराच स हनन १० जटारिकांगीपांग १२ आहारकांगीपांग १३ प्रशस्त वर्ण १४ प्रशस्त गन्ध १५ प्रशस्तरस १६ प्रशस्त
स्पर्श १७ मनुष्यायुपूर्वी १८ देवानुपूर्वी १९ अशुस्त्वयु २० पराधात २१ उखांस २२ आतप २३ उद्योत २४ प्रशस्तविहा योगति २५ तस २६ वा
दर २७ पर्याप्त २८ प्रत्येक २९ स्थिर ३० शुभ ३१ शुभग ३२ सुस्वर ३३ आदिय ३४ यशःकीर्त्ति ३५ निर्माण ३६ तीर्थकारनाम कर्म ३७ एतां

स्रुत

नैरयय तिरिकत्वात् मणुष्वात् तद्विवय । देवात्तयं चउत्पतु आत् कसमं चउत्विह १२ ॥ नाम कसमं तु द्विविहं सुह
मसुहं च आहियं । सुहस्रात् बहुभेया एमेव असुहस्रावि १३ ॥ गीयं कसमं द्विविहं उच्चं नीयंच आहियं । उच्चं अद्द

भाषा

आहस्रुं तथावलीनिधे देवतायुं आहस्रुं चोषुं आयुकर्मचारप्रकारि १२ नामकर्मत्रिविधुं भेदिसर्वपण्यो भेते सुभनामसर्वपण्यो तेषु १ नाम कस्रुो चठ ते भेदे
नामशुभ नामना चणा अनंतभेद मध्यम पण्यभेद ३७ इम अशुभ नामने अनंताभेद मध्यमपण्य ३४ भेद १३ नीचकर्म ति सुं भेद उच्चं नीच दस्राह कृत्वा नीच

सया अपि शुभानुभावात् शुभनाम कामण प्रकृतयो ज्ञेया तथा अशुभनाम कामणा मध्यमभेद विवक्षया चतुस्त्रिंशद्भेदा भवन्ति तद्यथा नरकगति १
 तिर्यग्गति २ एकद्रिय ३ द्वीद्रिय ४ त्रीद्रिय ५ चतुरिद्रियजाति ६ अष्टम नाराच ७ नाराच ८ अर्ध नाराच ९ कौलिका १० सैवार्त्तक सहनमानि ११
 न्यर्षाष मण्डल सस्थान १२ सादि १२ वामन १४ कुल १५ दुष्टक १६ अप्रमत्तगण १८ अप्रमत्तरस १९ अप्रमत्तस्यार्थ २० नरकानु
 पूर्वी २१ तिर्यगानुपूर्वी २२ उपघात २३ अप्रमत्त विहायोगति २४ स्यावर २५ सूत्रम २६ साधारण २७ अपघात २८ अस्थिर २९ अशुभ ३० दुर्भग ३१
 दुश्चर ३२ अनदिद्य ३२ त्रययो अकीर्त्ति २४ एताय अशुभगारकत्वादि निबन्धनत्वेन अशुभा अत्र च बन्धन सघाते शरीरभ्यो वर्णाश्रयात्तरभेदा
 यथादिभ्य एयक न विवक्ष्यन्ते एता प्रकृतयस्तु मध्यम विवक्षया प्रोक्ता उक्तुष्ट विवक्षयात् १ ३ प्रोक्ता सन्ति १३ मद्य गीन कर्म प्रकृतोर्ध्व नलि (गोत्र
 कश्च दुयिष्ठ उचनोयश्च आहिय उश्च अद्विष्ट शीर एय नीयपि आहिय १४) गोत्र कश्च द्विविध उश्च च पुनर्नीच तन उश्च उर्ध्वगीत्र इत्याहु जाल्यादि
 उर्ध्व्युपदेशे तु जातिकुल रूप बल श्रुत तर्पा लाभार्थविव बध हेतुत्वादृष्टिष उर्ध्वगीत्र भवति एव श्रुत अष्टविध एव जातिहुलादि मदाष्ट निबन्ध
 हेतुत्वाद्योच सपितोचोवाय अपि नीचे व्युपदेशहेतु आख्यात १४ अघातराय प्रकृतीराह [दाणे लाभेय भोगिय उवभोगी यीरिये तथा पञ्चविध मन्तराय
 सभसेष विद्यादिय १५) अन्तराय सभसेन सधेषेण पश्यिष व्याख्यात तत् पञ्चविध आह दाने लाभे भोगे उपभोगे तथा वीर्ये एतप पञ्चसु अन्तराय

विष्ट शाह एव नीयपि आहिय १४ ॥ दाणे लाभेय भोगिय उवभोगी वीरिए तथा । पचविष्ट सतराय समसिषा विद्या

गोत्र चबान्नादि जातिमदादि ८ मन्त्रे एय करिये ८ उर्ध्वगीत्र ८ इये जातिमदादिकक ८ मन्त्रे करिये नीचैर्भोगे चकरो १४ दाने विष्टे भोगने विष्टे

लात् पञ्चविध अन्तराय तल दीयते इति दान तस्मिन् दाने लभ्यते इति लाभस्त्वस्मिन् लाभे सकृद्भुज्यते पुष्पहारार्थं पदार्थो भोगः तस्मिन् भोगे उपैति पुनः पुनर्भुज्यते भुवनान्नना शुकादीनि इति उपभोगस्त्वस्मिन् उपभोगे तथा विप्रियेण इर्यते वेद्यते अर्जनेति वीर्यं तस्मिन् वीर्ये सर्वलातराया इति सस्वभ्यः ततो विषयभेदात् पञ्चविध अन्तरायं यत्र यस्मिन् सति चतुरे ग्रहीतरिदित्ये वसुनि तस्य फल जानन् अपिदानिन प्रवर्त्तते तद्दानांतरायं यस्मिन् विप्रिये पि दातरि सति याचना निपुण्येपि याचको न लभते तस्माभातरायं पुनर्विभावादी सत्यपि भोक्तुं न शक्नोति तद्भोगाक्तराय येन उपभोग यान्ये वसुनि सति उपभोक्तुं न शक्यते तत् उपभोगान्तराय यद्वलवान् नीरोगास्तरण्योपि लयमपि भक्तुं न शक्नोति तस्य पुरुषस्य वीर्यांतराय कर्मज्ञेय १५ उक्तार्थस्य निगमनाय उत्तरग्रन्थ योजनायाह (एयाश्चो मूलपयद्वीथो उत्तराश्चो य आह्विया पए सग्न खिलकालेय भाव वा अट्ट उत्तर सुण १६) एता मूलप्रकृतयोऽष्टौ आख्याताः सु पुनरुत्तरा अथान्तरा ज्ञानावरण दर्शनावरणादीनां पञ्चनवाद्याः अग्रे कर्मणां प्रकृतय आख्याताः अतः प्रदेशाग्रं खिल काली च वा शब्दः पुनरर्थे पुनर्भाव उत्तरं अग्रे त्वं शृणु वदामीति शेष तल प्रदेशाग्रं किमुच्यते प्रदेशानां अग्रं परमाणुनां परिमाण प्रदेशाग्रं क्षेत्रं आकाशं कालश्च बद्धस्य कर्मणो जीवप्रदेशा अविचटनात्मकः स्थितिकालः भावं अनुभावादिकं कर्मपर्यायलक्षणं चतुर्विधं प्रकृतिस्थिति प्रदेशानु

हियं १५ ॥ एयाश्चो मूल पयडीथो उत्तराश्चोय आह्विया । पएसग्नं खिल कालेय भावंवा ट्टतरं सुण १६ ॥ सर्व्वेसिं

लाभने विखे एकवार भोगवीर ते फुलादिक वारर भोगवीर ते आभरणादिक उपभोग वीर्यने विखे पांच प्रकारे अन्तराय कर्म संखेपे कहां तीर्थं कर १५ पूर्व्वे कहीए ८ मूल प्रकृति अने अत ज्ञानावरणीयादि १५ ८ उत्तर प्रकृति कही परमाणुं ना अग्रप्रदेशाग्र क्षेत्र आकाशकर्मने जीव प्रदेश स्यु स्थिति ते

कर्मदीन्द्रियादि जीवान् एव अपि कृत्य सग्रह क्रियाया योय्यं स्यादिति नियमः एकैन्द्रियाणां तु प्रावक्ष्येतादि दिग्गुण कर्मग्रहण क्रियायां योय्यमपि
 उक्तमस्ति अपरतन्नागमेव तदाह एगिन्द्रियाणं भत्ते तियाण कथ्य गुणलाणं गहणं करं भाणि किं तितिदिसि करं द गोययारियतिदिसिं सिय चधटिसि सिंथ
 पस्वदिसि करेद केन्द्रियाणं भत्ते पुच्छा गोयशावेन्द्रिया जाव पस्विन्द्रियानियथा क्दिसिं करेद कथ सगह क्रिययया योय्यं केन राह क्रियाहास्यादित्याह
 सर्वैरप्यात्म प्रदेशैः सर्वं ज्ञानावरणादि सर्वेषु प्रकृतिस्थित्यादिना प्रकारेण बह कं अन्वीन्यं समन्वय तथा स्त्रीरेदकवत् आत्मप्रदेशैः श्लिष्टन्त दैव बहक
 कर्मसप्रहे योय्यं भवति नलन्यत् आत्माहि सर्भं प्रकृति प्रायोय्य पुहलान् साप्तान्तेन प्रादायतान् पुहलान् अथवसाय विनेषात् प्रथम् ज्ञानावरणादि
 रूपत्वेन परिणययति यत्र हि आकाशे जीवोऽवगाढस्वयमे आकाशप्रदेशा आत्मन्याभित्तास्तेषु ये कर्मपुहलादि रागादिस्त्रेह योगत आत्मनि लयन्ति
 एव कर्म पुहला जीवानां सग्रहयोय्याः न तु चैतांतरायगाढाः कर्मपुहला जीवानां सग्रहणार्हाः भिन्नदेशस्थाना गहणयोय्या भावात् सक्तेषु पएसेषु इति
 प्राकृतत्वात् हतोशा बहुवचन स्थाने सप्तमी बहुवचन भिन्नप्रदेशस्थाः कर्मपुहलाः कथं गहणयोय्या न भवति स्वावगाढाकाश प्रदेशस्थाः कर्मपुहलाः कथं
 गहणयोय्या भवन्ति अत्र दृष्टांती यथात्मिः स्व प्रदेशस्थान् प्रायोय्य पुहलान् आत्मसात् करोति एव जीवोपि स्व प्रदेशस्थान् कर्म पुहलान् आत्मसात्
 करोति किञ्चिद्विदिक स्थितं अपि कर्म आत्मा गृह्णाति परं प्रत्यक्षान्न विवक्षित १८ अथ कालमाह [उदृष्टिसिरिनासाण तीसई कोडि कोडीश्री

गयं । सक्तेषु वि पएसेषु सक्त्वं सञ्चिण यथगं १८ ॥ उदृष्टिसरि नामायां तीसइ कोडिकोडीश्री । उक्कोसिया ठिई
 सधला आकाश प्रदेश जीवे आश्रया प्रदेशने विखे कर्म जीवने गहवायोय्यइ दूधपाणीने न्याये सर्वं आञ्जलानोवध ८ ग्राठ प्रकार तथा सर्वं आत्म
 प्रदेशो बध पायो बोधो हवे १८ उदृष्टि सगुद्रसरिखुनाम यतले सागरोपम तीस कोडिकोड उदृष्टाश्री षितिहोइ अतर्मूर्हर्त्त वेपडी माठिरी जवन्त्य

कर्मण उर्ध्वकटेन स्थितिश्च स्थिताता. प्राकृतत्वादिभक्तिखीप. जघन्यिका अन्तर्मुहूर्त्तं स्थिति २२ नाम गीतयोर्द्वयो कर्मणो कृत्वाष्टाविंशतिः कोटा
कीदृशः सागरोपभानां स्थितिव्यस्थिताताः जघन्यिका अन्तर्मुहूर्त्तिकाः इत्यन्तु मूल प्रकृतीनां स्थितिरस्ति उत्तर प्रकृतीनां स्थितिर्विस्तरटीकातीक्ष्णया २३
अथ भावमाह [सिद्धाण्यंत भागी अणुभागाहवन्तिश्चो सर्व्वे सु विपएसणं सब्जिविसु इच्छियं २४] सिद्धानां अनन्तसंख्याकानां सिद्धजीवानां अनन्तमी
भागः अणुभागाः कर्मरस विशेषा भवन्ति सिद्धानंतभागः अनन्तसख्य एव इत्यनेन अणुभागानां आनन्त्यमुक्त्वां सर्व्वेष्वपि अणुभागीषु प्रदेशे बुद्ध्या विभज्य
मानाः अणुभागीक देशास्त्रिषां अयं परिमाण प्रवेष्टायं सब्जिवि स इच्छियं सर्व्वजीवेषु अतिक्रान्तं ततोपि तेषां अनन्तगुणत्वं २४ अथाध्ययनाधीपि

सागरोपम उर्ध्वोक्षेण विद्याहिया । ठिई आउकभस्र्सा अंतोमुहूर्त्तं जहन्निया २२॥ उदहिसरिस नामाणं वीसद्दं कोडि
कोडीओ । नाम गीयाण उर्ध्वोसा अद्द मुहूर्त्ता जहन्निया २३॥ सिद्धाण्यंत भागीय अणुभागा ह्वंतियो । सर्व्वे सुवि
एएसणं सब्जिवि सदृच्छियं २४ । तद्दा एएसि कश्चाणं अणुभागी विद्याणिया । एएसिं संवरे वेव खवणेय जए वुहे

धिति कही अंतर्मुहूर्त्तं जघन्य धिति २१ तेलीस सागरोपमनी उक्कट्टी कही तीथं करे धिति आउखा कर्म्मनि अंतर्मुहूर्त्तं जघन्य धिति २२
सागरोपमनी वीस कोडाकोडि नामकर्ममनी अने गीतकर्म्मनी उक्कट्टी धिति आठम्हूर्त्तं जघन्य धिति २३ सिद्ध अंतताहे तेहने अंतमे भागिं कर्म
बंधना अणुभाग रसनाभेद बुद्द परि अन्तताहे ह्वे प्रदेश परिमाण एकेससे बांधीता कहिके सधलाद्द अणुभागने विखे विह्वची ज्ञानना प्रदेशाय
सर्व्वजीव यकी ते प्रदेशाय अन्तगुणा जाणीया २४ ते कारण्यायी एआठकर्मनी अणुभाग रसविशेष संसारना कारणजाणीने एकर्मने संवरेविह्वंखवे

कर्मलेश्यानां कर्मस्थिति विधायक तत्तद्विधित् पुद्गलरूपाणां अनुभावात् रसविशेषान् त्वं शुणु १ [नामाद्वचसरसगन्ध फास परिणाम लक्षण ठाण्डिई
 गरं चाठ लेशाणन्तु सुणुह्रै २] हे विषय लेश्यानां एकादशवचनानि मे मम कथयतस्व शुणुतानि कानि वचनानि तावत्नामानि वक्ष्यामि तथा वर्षं रस
 गन्ध स्पर्श परिणाम लक्षणं वक्ष्यामि तथास्थानं वक्ष्यामि तथास्थिति गती वक्ष्यामि च पुनरायुर्वक्ष्यामि वर्षं च रसश्च गन्धश्च स्पर्शश्च परिणामश्च लक्षणं च
 तेषां समाहारी वर्षं रस गन्धस्पर्श परिणाम लक्षणं तत्र वर्षाः श्लागादयः रसास्तीक्ष्णादयः स्पर्शाः खरादयः परिणामा जघन्यादयः
 लक्षणं पञ्चाश्ववा सेवनादि स्थानं उल्कापीपकर्म रूपं स्थिति अवस्थानकालङ्कितिं नरकादिकां यती या अवाप्यते आयुर्व्यति आयुष्य वसतिव शिष्य
 माणे आगामि भवे लेश्या परिणामरुद्विह यद्यति २ तदेवायुक्रमेण आह [किरहानीलाय काजय तेड पडमा तहेवय सुकले साय छ्ठीश्री नामारं तु
 जहकसं ३] एतानि लेश्यानां यथायुक्रमं नामानि ज्ञेयानि प्रथमा छण्णा १ च पुनर्द्वितीयानीला २ तृतीया कापीतनाक्नी ३ चतुर्थी तेजिलेश्या ५
 च पदपूर्णे च पुनः षष्ठी सुकलेश्या एयंषणां अपि नामानि ३ अथ वर्षान् आह [जीमूय० ४] पूर्वं कृष्णलेश्या वर्षतोत्रेया कीटशी कृष्णलेश्या स्निग्ध
 जीमूतसङ्गासा प्राकृतत्वात् स्निग्धशब्दस्य परनिपातः स्निग्धयासी जीमूतस्य स्निग्धजीमूतस्तेन संज्ञाया स्निग्ध जीमूत संकाशासजल घनसदृशा पुनः कीटशी

किन्हा नीला काज तेज पन्हा तहेवय । सुकलेसाय छ्ठाय नामाद् तु जहकसं ३ ॥ जीमूय निव संकासा गवल रिदु

काल धिति नरकादि गति आठखुं ते लेश्यानावील १२ सांभलि मुभने कहतां प्रति २ नाम कहैके पहली कृष्णलेश्या वीजी नीललेश्या २ तीकी
 कापीत ३ चौथो तेजी लेश्या तिमर्दज पांचमी पद्मलेश्या सुकलेसा छ्ठी एलेश्यानां नाम अनुक्रमे हीय ३ जहवीजीमूत कालीमिष ते सरिखी पाबानी

गवक्षारिष्ट सन्निभा गवक्षारिष्टक गवक्षारिष्टके ताभ्यां सन्निभा गवक्षारिष्टक सन्निभा गवक्षारिष्टक गवक्षारिष्टक वा ताभ्यां
सदृशो पुन कोटशो खञ्जाजन नयन निभा खञ्जाखञ्जनख नयनख खञ्जाजननयनानितैर्निभा खञ्जाजन नयन निभाखञ्ज शकट चक्रान्तर्गत लोहदृष्टो
परि ष्टतासिद्ध यथादि बन्धनशोभी भूत भस्वन कज्जल नयन नेत्रकनीनिकातैर्निभा सदृशो ४ अथ नील लेश्याया वर्णनमाह [नीला सीकसकासा
वासपिच्छ समप्रभावेरलिय निहसकासा नीललेश्याश्रोवणश्रो ५] तु पुनर्नील लेश्या वर्णत इदृशो भवति कोटशो नीलायासीं शशोकथ नीला शीक
स्तेन सकाशा सदृशो नीला शीकसकाशा शशोकदृशो रक्तोपि भवति तद्व्यवच्छेदार्थं नीलपद पुन कोटशो वायपिच्छ समप्रभा पुन कोटशो खिन्न
वैदर्य सकाशा जाल नीलमणि सदृशो ५ अथ कापोत्तवर्णमाह (अयसी पुष्पसकासा कीदृशच्छ दसन्निभा पारावयगी धनिभा काउल्लेसा श्रोवणश्रो ६)
कापोत्तलेश्या वर्णत इदृशो भवति इदृशो कोटशो अतसो धान्य विशेषस्तस्य पुष्य अतसीपुष्य तेन स काशा अतसीपुष्य स काशा पुन कोटशो कोकि

गसन्निभा । खल जण नयण निभा किन्द् लिसाश्रो वन्नश्रो ४ ॥ नीला सीग सकासा वास पिच्छ सम प्रभा । वैरलिय
निव संकासा नील लिसाश्रो वन्नश्रो ५ ॥ अयसीपुष्प सकासा कीदृल छद सन्निभा । पारेवय गीन निभा काउ

सिंग धरोठाना फल श्रवया द्रंशकाक सरिखो ख ज गाहनाउ गणम अजन काजल नेत्रनोकीकी सरिखो वण लेश्या वर्णधकी एहवी कहे हुवे ४
नीलो शशोक सुष ते सरिखो नील वासना पाख सरिखी वैदर्य रत्न सरीपी तेज ते सरीखो नील लेश्यानीवर्ण एहवी द्वे ५ अलसीना फल सरिखी
कोयख पखोनी पाख सरिखो पारेवानी कोटि सरीखी कार्पोत्तलेश्या कार काली रातीकां एहवी वर्णधकी द्व ६ द्वियुतु पापाणधातु सरीखी

लच्छदसन्निभा कीकिलपञ्च पिच्छसदृशी पुन कीदृशी पारपत ग्रीवानिभा ६ अथ तेजोलेश्या वर्णमाह [हिगुलयधाउ सकासा तरणा द्रक्षसंनिभासुय
तुंउपद्रवनिभाते७लेसाओवन्नओ] तेजोलेश्या वर्णं त इदृशीभवतिदृदृशीकीदृशी हिगुलुकः प्रतीतः सधासी धातुध हिगुलक धातुस्तेन संकासा हिंगुलुक
धातुसंकाशा अथवा हिगुलुकः प्रसिद्धीधातु गैरिकाताभ्यां सदृशी पुनः कीदृशी तथणादित्यसन्निभा सदृशी पुनःकीदृशीशुकतुच्छप्रदीपनिभा शुकधसुप्रदी
पार्चिसदृशी ७ अथ पद्मलेश्या वर्णमाह [हरियालभेय संकासा हलिदामेयसपभा सणासथ कुसमनिभा पम्हलीसा ओवणओ ८] पद्मलेश्यावर्णं त इदृशी
भवति कीदृशी इदृशी हरियालभेद संकाशा हरितालस्य नटमण्डनस्य भेदाः खण्डा हरितालभेदास्ते संकाशा तत्सदृशी पुनर्हरिद्रामेद सधभा पुनः
शनासन कुसमनिभा शणस्य अशनस्य शणासनी तयोः कुसुमं तेन सन्निभाः शणाशनि कुसुमसन्निभा शनं धानगविशेष अशनीवीयकास्थो वृक्षस्तत्पु
सदृशी ८ अथ शुकलेश्या वर्णमाह [संखंशुक कुन्दसंकासा खीरपूर समपभा रययशार संकासा शुकलेश्या ओवसओ ९] शुकलेश्या वर्णं त इदृशी भवति
इदृशीकी० शंखस्य अंकस्य शुल्स्य शंखांक कुन्दानिते संकासा शंखांक कुन्दसंकासा शंखः प्रसिधः अद्भः शुकमणि विशेषः कुन्दवृक्ष पुष्पं एतैः सदृशी

लिसाओ वन्नओ ६ ॥ हिंगुलयधाउ संकासा तरणा द्रक्ष सन्निभा । सुय तुंउ पर्देव निभा तेउ लिसाओ वन्नओ ७ ॥
हरियाल भेय संकासा हलिदा भेय सन्निभा । सणासथ कुसम निभा पम्ह लिसाओ वन्नओ ८॥ संखंशुक कुंद संकासा

जगता सूर्य सरिखी स्रजाना मुय प्रदीप दीवो ते सरिखी तेजो लेश्या वर्णं यकी ७ हरितालनाभेद खंड सरिखी शूलद्रनाभेद खंड सरिखी सणनामा
शानग शने सणवीजो यनस्थित्या फूससरिखी पद्मलेश्या वर्णं यकीपीली ८ शंख शने अंकनामा मणि शने कुंदवृक्षना फूल सरिखी खीर दूधनी धारा

पुन चौरपूरसम प्रभा दुन्धपूर सदशयवर्षा पुन रजतहारार्था स कासा रजत जातीयरूप्य हारी मुष्ठाहारस्तार्था सदशी रत्नार्थ ८ अथ पर्यालंघ्यानां
रसभाह [जहकडुयतु यगरसी निवरसी कडुय रोहिषि रसीया एत्तोपि अणन्तगुणी रसीउ किन्वा एनायव्यो १०] क्षयाया क्षयलेप्याया हेदयो रसी
प्रातप्य हेदय को० यथा यादय कटुक तुल्यकरसस्तथा निम्नस्य रसस्तथा कटुकरोहिषीरस कटुकाचासी रोहिषी च कटुकरोहिषी तस्यारस कटुक
रोहिषीरस रोहिषीयनक्षति विरोध एतेभ्योपि अणन्तगुण अणन्तस ह्य राशिनो गुणितोरस क्षणलेप्याया भयतीत्यर्थ १० अथ नीललेप्याया रस
भाह [अहनिप्रदुयक्षरसी तिक्यो जहहस्यि पिपको एवा एत्तोपि अणन्तगुणी रसीउनीलाएनायव्यो ११] नीलाया नीललेप्याया हेदयो रसी प्रातप्य
यथा यादयक्षिकस्य भयति यथानी कटनी समाहारसि कटुषि कटु, एयनि कट क सु ठी मरिच पिपिष्यात्सक तस्य रसी यादक तीक्ष्णो भयति पुन

खीर पूर समप्रभा । रयय हार सकासा सुक लिसाथो वन्नथो ८ ॥ जह कडुय तु यग रसी निय रसी कडुय रोहिषि
रसीया । इसीउ अणत गुणी । रसीउ किण्हाए नायव्यो १० ॥ जह तिकाडुयस्य रसी लिवलो जह हस्यिपिपकी
एया । इसीयि अणत गुणी रसीउ नीलाए नायव्यो ११ ॥ जह तण अणत रसी तु वर कविद्रस्य यापि जारिसयो ।

हेह सरिसी एक सेया यर्ष कष्टो ८ संस्थानो रस कहेके जिम कडूपा तु यहनो रससाद नीयहनो रसकडूर रोहिषी नीलाकिनो रस एहयकी
एषि अणत गुणी रससाद क्षयनेस्थानो कडूपा १० जिम विकटक विगहनो रससाद तीखो जिम हकी गजपी परनो रस एहएयकी अणतगुणी
रसगोष सेयाना पतिलोपो ११ जिम तक्ष काचो प्रायोकेरोत सरीयो रस तु वरकयायकोकाधीकोठनो रस केहयो एहयकी अणतगुणी रसकापीत

यथा हस्ति पिपिल्याः गजपिपाया वा रसो यादृशो भवति इत्सोपि एभ्योपि नीलाया अनन्तगुणो रसस्तीक्ष्णो भवति ११ [जहतरुण अन्वयरसो तुन्व
रकविडुस्र वा धिजगारिसञ्चो इत्सोवि अणन्तगुणो रसो उकाउएनायव्यो १२] कापीतलीश्याया रस इदृशो ज्ञातव्यः इदृशः कीदृशः यादृशस्तरुणाम्बक
रसो भवति तरुणं अपरिपक्वं यत् आत्मक आत्मफल तरुणाम्बकं तस्य रसस्तरुणाम्बकरस स्तथा पुनरुन्मरक पिपलस्य रसो यादृशो भवति तुंवरं कक्षं
कपिल्यं तुम्बरकपिल्यं तस्य रसो यादृक् भवति एभ्योपि अणन्तगुणोरस कापीतलीश्याया ज्ञातव्यः १२ [जह परिणयवगरसो पक्ककविडुस्र वा विजगारि
सञ्चो इत्सोवि अणन्तगुणो रसोयते जएनायव्यो १३] तैजोलीश्याया इदृशो रसो भवति इदृशः की० यादृश परिणताम्बकर भवति पक्काम्बकलस्य रसो
भवति पुनः यादृशः पक्कक पिपलस्यापि रसो भवति अतएभ्योपि अणन्तगुणो रसग तुंजो लीश्याया ज्ञातव्यः इत्यनेन किञ्चित् आत्मः किञ्चिन्मधुरचेति
इहं १३ [वरवारुणोए वरसो विविहाणव आसवाणजगारिसञ्चो मधुभैरगस वरसो इत्सोपमशर परएणं १४] पथायाः पश लीश्याया रस इदृशो ज्ञातव्यः
इदृश की० यादृशो रसे सावरयान्मथाः प्रधान महिराया रसो भवति पुनर्विक्रधाना आसवानां सुरभोक्तवानां मयानां यादृशो रसो भवति तथा

इत्सोवि अणंत गुणो रसोऽज्ज ए नायव्यो १२ ॥ जह परिणयवग रसो पक्क कविडुस्रवावि जगारिसञ्चो । इत्सोवि
अणंत गुणो रसोऽज्ज ए नायव्यो १३ । वर वासणीएव रसो विविहाणव आसवाण जगारिसञ्चो । मधु भैरगस्रव रसो

सेश्यानी जाणवुं १२ जिम पाकाआवांनो रस कांइं र्जाटी कांइ भीठां अथवा पाका काठनी जेद्वोरस परधकी अनंतगुणो रसस्वाव तेजो लीश्यानी
जगारिचो १२ वर प्रधान वारुणो मदनो रसस्वाद विविध प्रकार फुलादिफ्रना आसवनी जेहरो रस मधुमद्य अने मेरक सरिखी तेदनी रसएधकी

गुणीदुर्गन्धो भवति इह लेश्याना अप्रशस्तत्वं गन्धाद्य शुभत्वादिति भावः १६ [जहसुरहि कुसुमगन्धो गन्धवासाणपिस्समायाण एत्तोवि अन्नतगुणीपसत्य
 लिसाणतित्त्पि १७] तिस्य णां अपि प्रशस्तलेश्यानां तैजसी पद्मशुक्लानां एतादृशो गन्धीभवति एतादृशः कीदृशः यादृशः सुरभिः कुसुमानां जाति
 चम्पकादीनां शुष्पाणां गन्धवासानां यादृशो गन्धीभवति गन्धाद्यवासाद्य गन्धवासाः गन्धाकुट्टपुटपाकानिः पद्मावासादृतरै कपूरकर्चरिकाद्यास्तिषां चूर्णो
 क्रियमाणानां गन्धीभवति अतएथीपि गन्धेभ्यो अन्नतगुणीगन्धः प्रशस्तलेश्यानां त्रैय इत्यर्थः १७ अथ लेश्यानां स्पर्शभाह (जहकरगयस्स फासोनीजिन्धा
 एव सागपत्ताणं एत्तोविअन्नतगुणीलिसाणं अप्पसत्थाणं १८) अप्रशस्तानां लेश्यानां कण्ठीलकापीतानां स्पर्शएतादृशो भवति एतादृश कीदृशो
 यादृशः क्रकषस्स स्पर्शः शुनर्यादृशो गोजिन्हाया. स्पर्शस्तथासागहसस्य पत्ताणां स्पर्शोभवति एत्थः स्पर्शेथीपि अशुभानां लेश्यानां स्पर्शोत्रैयः १८
 (जहवूरस्सवफासो नवनीयस्सयसिरीस कुसुमाण एत्तोविअन्नतगुणीपसत्यलिसाण तित्त्पि १९) प्रशस्तलेश्यानां तिस्यृणां अपि तैजोलेश्यापद्मलेश्या शुक्ल

जह सुरहि कुसुम गंधो गंध वासाण पिस्स मायाण । इत्तोवि अशंत गुणो पसत्य लिसाण तित्त्पि १७ ॥ जह कर
 गयस्स फासो गोजिन्धा एव सागपत्ताणं । इत्तोवि अशंत गुणो लिसाणं अप्पसत्थाणं १८ ॥ जह वूरस्सव फासो नव

मोगरादिकना फूलनी गंध हुवे उपलोटादि पाचनी पना गंध कर्पूरकाचरी गह्रंलादि वास पीसीतां वाटीतानी गंध ऊहवी हुइ तेहधकी अन्नंत
 गुणी अधिक सुगंध प्रशस्त उत्तम तैजो पद्म शुक्ल तिथी लेश्यानां गंध जाणवो १७ लेश्याना फरस कहके जिम करवतनी फरस खरखरो तथा वली
 गायनी जीभनी फरस तथा सागहजनाना पानजानी फरस एथकी अन्नंतगुणी कण्ठ १ नील २ कापीतलेश्या २ अप्रशस्त पाडुअो फरस खरखरो १८

उपलक्षणं चिदं तारतमयोग विचारणया संख्या नियमी नास्ति तथाच प्रज्ञापना सूते किञ्चलिसाधं भन्ते कद्रविहं परिणामं परिणमद्र गोयमा तिविहं
या नव विहं वा सूतावीसद्र विहं वा प्रकासीद्र विहं वा तीयालभाहिय दुसय विहं वा बहूं वा परिणामं परिणमद्र जाव सुकलीसाद्रत्ति २० अथ तावत्
कण्णालेयापरिणाममाह (पञ्चासवषवती तीहि अशुतोवसु अविरश्रीयतित्वारंभपरिणश्रीसुहोसाहसिसिओनरी २१) [निदधंस परीणामी निस्संसी अजि
द्रत्तिश्री एयजीगसमाउत्तीकिल्ले सन्नुरिणमे २२] शुभं एतद्योगसमाशुत्ती नरः प्राणोक्कणां लेयां प्रतिपरणयेत् कण्णालेयां भजेदित्यर्थः अत्र
नरशब्देन केवलं पुरुष एव न ऋत्तनेत्यादिष्वपि कण्णालेयायाः स भवत् एते सूते उच्यमानायोगाः एतद्योगास्तैः समाशुक्तः सख्यं प्रवर्तितः एतद्योग
समाशुक्तः ते के योगाः इत्याहपञ्चवने आश्रयाद्यपचाश्रवाः प्राणाति पातादयस्तेषु प्रवृत्तः सन् पुनः कीदृशस्तिष्ठभिरगुणः मनीशुभिसवागुसि कायशुभिरहित
पुनर्यः षट्सु पृष्ठीकायेषु अविरतः षट्कायोपमर्दयुक्त इत्यर्थः पुनस्तीव्रा उक्ताटाः आरभाः सावयव्यापारास्तेषु परिणितस्तद्रूपतां प्राप्तस्तीव्रारभपरि
णित सुशोहि सर्वेषुपि अहितवाञ्छकः पुनः साहसिकः सहसा अविचार्यं प्रवर्तते इति साहसिकः चौर्यपरदारसेवाकारी इत्यर्थः २१ पुनः कीदृशः
निदधंस परिणामः निगरांश्च सोनिंश्च सोऽन्यन्तलोकादयविरश्रचित्ताविकथाः परिणामीयस्य सनिदधंसपरिणामः पुनर्योदसंसोभवतित्तिस्त्रिंशः जीवान्निदधंसन्

तिव्वारंभ परिणशो सुहो साहसिओ नरी २१ ॥ निदधंस परिणामी निस्संसी अजिद्रत्तिश्री । एय जीग समाउत्ती

मिथ्यात् अविरति इयादि ५ आश्रये करो प्रमादो मजवचन काय तीनशुभिं सोकली क्क कायनी रत्ताद्रं रहित कठिन आरंभने परिणामे अहितसर्व
जीव विषे अहित कण्ण अगनिमाय्यं चोरो प्रशुखकार्यंनो करणहार मनुष्य २१ इहलीकादि कष्ट दुःखनो शंकारहित जेहना परिणाम जीव हणत्

योमनागपि शङ्का न करोति स नृशसद्व्यच्यते पुन कोटिशोक्तिरिन्द्रिय मुक्तलन्द्रिय एतादृशो यो भवति स कृष्णलेश्या प्राप्नोतीति भाव २२ (इत्सा
अमरिस अतयो आ व जनाया अहोरिगिगिदोपवसे सटे पमत्ते रसलोलए २३) [सायगवे सेयार भविरश्रोसुहोसाहसिभो नरी एयजोगसमावत्तो
नील्लेसन्तु परिणमे २४] एतायाग समायुक्त प्राणीनील्लेश्या प्रतिपरिणमेतत् नील्लेश्याभजेत् तं के योगा ईक्षापरगुणासहन अमर्षमहाकादाप्रह
अतप स्वपसा अभाव ईर्ष्याच अमर्षय अतपचउचामर्षातप तथा पुनरविद्याजुशास्त्र रूपा पुनर्मायाकापञ्च अन्धोक्तानिर्लज्जता षट्षि विपयला
पय प्रद्वेप प्रकटद्वेपभाय एते सर्व योगादीपकरूपायस्मिन् तिट्ठन्ति गुणगुणिनोरभेदात् स प्राणीनील्लेश्यापरिणामवान् भवति पुन कोटिय शठी
स्मिष्याभायो पुन कोटिय स प्रमत्तोऽटमदयुक्त पुनर्गौरसलोलुप २३ पुनर्गै प्राणीसातगवेपक रन्डियसुखाभिलाषो कथ मम सुख स्यादिति बुद्धिमान्
पुनर्यं आरभात् प्राणिसम्पदात् अविस्तर आरभाविवरत पुनर्यं लुट्नीच साहसिक एतादृश प्राणीनील्लेश्यावान् रत्वर्यं १४ अथ कापीतलेश्या

किन्हु लिसतु परिणमे २२॥ ईसा अमरिस अतवो अविज्जा माया अहिरियाय । गिद्धि पउसेयसटे पमत्ते रसलोलुए२३॥

साय गवेमे यारभ अविस्त्रो रवुदो साहसिचो नरो । एय जोग समावत्तो नील लिसतु परिणमे २४ ॥ वके

सकाये नष्टो जीवे रद्री ५ नयो जीचां एहवे योग आग्रवादिके सहित कृष्णलेश्यानी परिणाम कृष्णलेश्यापत हुर २२ परना गुणनी अणशद्वेपो षण
कदा प ह हठो तम् १२ भेद रहित कुशाखनत परने पचन अनाचारी नीर्लज्ज विपय लपट द्वेपभाय सुपार सहित मद्सहित रसदीठि चपल थार २३
आरभ यको अविस्तर सातानी गवेपण हार सुद्र साहसिक नर जीवनी अहितकारी अणविमास्यो बोले एपूर्वाङ्ग जोगे सहित नीस लेश्यानी परिणाम

लक्षणमाह (प्रकीवकसमायारिनियडिक्खे अणुज्जुए पलिउ चगएवहिए मिच्छदिट्ठी अणायरिए २५) [उपकालगदुडवाइयतेष्यावियमच्छरीएवजोगसमाउत्ती काउलेसन्नुपरिणभे २६] एतथीर्याख्याएतथीगसमायुक्तः प्राणीकापीतलेष्यां प्रतिपरिणभत् प्राप्तुयादित्यर्थः कौट्य यीवं कीवचसावक्र. पुनः कीटयो वंकसमाचारीवक्रः समाचारीयस्य स वक्र समाचारीवक्र क्रियाकारी पुनर्योनियडिक्खेइति निष्कतिमान् निष्कतिः शाल्यन्तद्विद्यते इति निष्कतिमान् पुनर्यो ज्ञजुकोउसरल. कथचित्तरलं कत्तु भयक्तइत्यर्थः पुनर्यः पलिउ चगइति प्रति कुञ्चकः स्वदीष प्रच्छादनपरः पुनः कौट्य औपधिकः उपधिनाकपटेन चर तीतिऔपधिकः पुनर्योभिष्याद्विर्विपरीत अद्याधान् पुनर्योऽनार्यः सम्यग् लक्षणरहित. २५ पुनर्यत् फालकदुष्टवादी उत्फालयति विदारयतिपरं यत् उत् फालकदुःखीत्यादकं दुष्टं वदति इत्येवशीलत्फालकदुष्टवादी पुनर्यस्तेनश्चापि भवति चोरोपि भवति पुनर्योमच्छरी अन्वस्य सम्भदं दृष्टाऽसहतः एत यीगसमायुक्तः एतादृश. कापीतलेष्यावान् ज्ञेयः २६ [नीयावती अचवले अमार्इ अकुतूहले विणीय विणएदन्ते जीगवंउवहाणवं २७] पियधमे दटधमे

वंकसमायारे नियडिक्खे अणुज्जुए । पलिउंचगओ विहिए मिच्छदिट्ठी अणारिए २५ ॥ उपकालग दुडवाइयतेष्या
विय मच्छरी । एय जीग समाउत्तो काउ लेसंतु परिणभे २६ ॥ नीयावती अचवले अमार्इ अकुतूहले । विणीय विणए

परिणभे २४ वचन धांशुवोले वांके आधारे चाले मने वांको किमे वांको चालीसके पीतानादीष कपटे प्रवर्त्तवो वळे विपरीत सहहणा के जीहने आर्यलक्षण रहित २५ परने आक्रीशकरे रागद्वेषे दुष्टवोले चोरी करे अन्वनी संपदा देखीनसके णपूर्वाक्त योगे सहित ते कापीत लेष्यानी परिणाम २६ मनवचनकायाइ ज्ञातावलपणे रहित माया रहितख्यालरामत रहित गुर प्रमुखनी चिनय अन्वस्य उंके एहवो इंद्रिय ५ दम्भाजीणे सज्जायादि व्यापार

वक्त्रभास्वित्प्रसए एयजोगसमाश्चते ते उने सन्तु परिणमे २८] एतद्योगसमायुक्त प्राणीतजोत्तिश्यापस्वित् कोट्य प्राणी नीचैर्दृष्टि कायबाहमर्नाभिर
 बुक्किक नन्नतायुक्त इत्यर्थं पुनयप्राणीश्वत्तीभवति पुनरमायोमायारहित पुनर्यो शुकुतूहली कुतूहसरहित पुनर्याचिनीतपिनय कृतशुर्वादिद्योभ्य
 व्यवहार पुनर्योदान्त इन्द्रियदमनपरायण पुनर्योगवान् सिद्धान्त पाठ व्यापारवान् पुनर्य उपधानवहननिरत २७ पुनर्यं प्रियधमा पुनर्योदृष्टधर्मी
 पुनर्योद्वयभोक्त पापभोक्तोभवति पुनर्योहितैपक सर्वजोषेपु हितान्तेपी श्रययाहित भोक्ष इच्छन्तीतिहितैपिक एतादृश तजोलोश्यावान् भवति २८
 भय पशुलेया लक्षणमाह (पयणुकोहमाशिय माया लोभेय पणुए पसन्त चित्ते दन्तपाजोगव उवहाणव २८) [तथापयणुवार्ह्ये ३०]
 एतद्योग समायुक्त प्राणी पशुलेयान्तु परिणमेत् कोट्य प्रकर्षेण तन् क्रोधमानौ यस्य स प्रतनु क्रोधमान पुनर्यस्य मायास्तीर्षी च प्रतनुको भवत पुनर्यो
 प्रसात्स्वित्ती भवति पुनर्यो दान्तात्मा पुनर्योगवान् तथा उपधानवान् भवति १८ तथा प्रतनुवादी स्वल्पभापी पुनरूपशान्त कपायागन्धभावेन शीलौभूत

दृते जोगव उवहाणव २७ । प्रियधर्मे दृष्टधर्मे वक्त्रभीरु हिएसए । एय जोग समाश्चते तेज लिसतु परिणमे २८ ।
 पयणु कोह माशेय माया लोभेय पयणुए । पसतचित्ते दतपा जोगव उवहाणव २८ । तथा पयणु वार्ह्ये उवसतेजि

यत सिद्धांत भण्य याभयो तपवत २७ प्रियद्धे धन्य जेहने प्रतादिनी निर्याहणहार पाप प्रकी विद्दिद्धे हितानी वाहक मोचाभिलापी एहवे पूर्वस्व योगे
 सहित तेजो लेस्या परिणमे २८ पातला घोडा क्रोधमान जेहने मायाश्वने लोभ पातला घोडाद्धे जेहने रागद्वेषको उपयभ्यो चित्त दम्बोद्धे प्राणा
 जिह्वे मनोर्योभा ठामिद्धे जेहना सिद्धांतना तप करद्धे २८ तथापलो घोडा वचननी वोलणहार शात दात इ द्वि ५ जीत्या जिह्वे एहये पूर्वस्व योगे

पुनर्यो जितेन्द्रिय एतैर्योगैः समायुक्त एतद्योगसमायुक्तः पञ्चलेश्यावान् भवतीत्यर्थः ३० अथ शुक्त लेश्या लक्षणाह [अदृक्दाणि वज्जिता धम्मसुक्काणि ज्जायए पसतच्चित्तं दंतपासमिए शुत्ते य शुत्तिसु ३२] [सराणि वीयराने वा उवसंते जिदंदिए एयजोग समाउत्ते सुक्कलेसंतु परिणमे ३१] अनयोर्थः एतद्योग समायुक्तः प्राणी शुक्कलेश्यां परिणमेव एतादृशः कीदृशः य आर्त्तं ध्यान रौद्रध्यान वर्जयित्वा धर्मं शुक्तौ धर्मं ध्यान शुक्कधाने ध्यायेत् पुनर्यः प्रथान्तचित्तो दान्तात्मा च भवेत् पुनः समित पञ्चसमितिशुक्तः तिस्रु शुत्तिसु शुत्तो भवेत् ३१ च पुनः सराणीज्जीणानुपथान्तकपायी वीतरागस्तोन्व उप शान्तो जितेन्द्रियः एतैल्लक्षणैल्लितः शुक्कलेश्यां भजते इत्यर्थः ३२ इहहि प्रशस्तलेश्यानां तेजः पद्म शुक्तानां विशेषणे पुनर्त्तुक्त्त दूषणं न ज्ञेयं तासां लेश्यानां हि तेजः पद्म शुक्तानां उत्तरीतर विशुद्धा शुभाशुभतरा शुभतमा परिणामाः भावनीयाः लेश्यानां लक्षणेषु दृष्टांतः जम्बूद्वीपं निरीत्य षट् पुरषाणां परिणाम विचारणेन भावनीयः तथाहि एकस्मिन् मार्गे षट्पुरषाणेषु तेषु क्षुधातुरभार्गोचैकः फलितो जम्बूद्वीपो दृष्टः तदा एकेन क्क्षणा लेश्यावता प्रोक्तं एनं वृत्तं मूलात् क्वित्वा एनं प्रपात्य अस्य फलानि अन्नः १ तदा द्वितीयेन नीललेश्यावताचोक्तं किमर्थं मूलात् क्वियते एकामहत्तमाः

इदिए । एय जोग समाउत्तो पन्हलेसंतु परिणमे ३० । अदृक्दाणि वज्जिता धम्म सुक्काइं भायए । पसंतच्चित्तं दंतपा
समिए शुत्तिय शुत्तिसु ३१ ॥ सराणे वीयरानेवा उवसंते जिदंदिए । एय जोग समाउत्तो सुक्क लेसंतु परिणमे ३२ ॥

सहित ते पञ्चलेश्याने परिणामे ३० आर्त्तं ध्यान रौद्रध्यान वर्जिते धर्मध्यान अने शुक्कधाने चित्तो ध्याये रागादिकषी उपशम्यो चित्त जणे दम्योक्के आत्ताजणे सुमति पांचे समित शुभ तोगे शुभधे ३१ सराण संयमवंत वा अथवा रागरहित उपशम्यां कर्म एह्वो पांचइं द्वीजोत्थाजणे एपुं ठिल्या योग

शाखाद्वेदनीया तस्या फलानि अन्नसूक्ति कुम २ तदा युत्वा द्दतीय कापीतलियावान् प्राह किमर्थं भो अस्य दृचस्य महाशाखाद्विचरति एकाया
 प्रतिशाखाया अपि फलै सर्वेषा दिति स्यात् तथादेकालधु प्रतिशाखैषच्छेदनीया ३ ततयतुर्थस्तेजोलेखावात् अथादीत् किमर्थं प्रतिशाखाया च्छेद
 पश्ययोग्यत्वा सन्ति तेन शुद्धा एव याद्यास्तैरेव दक्षिभविद्यति ४ तत पञ्चमेन पद्म लेखायताचैवमूचे किमर्थं भोगुच्छा पालन्ते गुच्छेषु सुफधान्यापि
 फलानि भवन्ति तथात्वज्ञानोपफलानि भट्टहीत्वा अथ ५ तत पठ शुक्ललेखावान् पुमानाह किमर्थं भो दृचात् फलानि पालन्ते बहून्ये याध एव
 पतितानि सन्ति ते श्वशुधाया उपशमीभावोति ६ एव लेखोदाहरण त्रैय ३२ अथ निश्चाना स्थानानाह [असखिक्काणोसपिणीण उसपिणीषजिसमया
 सखारयान्तोगतिसाषदयन्तिठाषार ३३] लेखानां सर्वसात्कार्यन्ति स्थानानि भवन्ति स्थानानि प्रकर्षोपकर्षकतानि अशुभानां लेखानां सत्केयरुपाब्धि
 शुभानां लेखानां विशुद्धरुपाणि भजनान्तोत्थं लेखानां क्रियन्ति स्थानानि भवन्ति यथा असख्येया उक्तपिस्थोवर्षमानभावस्वरुपास्त्रया पुनरसख्येया
 अयसर्पिस्थोद्योयमान भावरुपा तासा उक्तपिणीना यायन्त समयाभवन्ति पुनर्यावन्तोऽसख्येयात्कीकाकाय प्रदेशा भवन्ति तावन्ति लेखानां
 स्थानानि आरुहन्ति आरुहन्ति पतन्ति पतन्ति च शुभानि अशुभानि निमलानिकलुपाणि च स्थानानि भवन्तीत्यर्थं ३३ अथ लेखानास्थिति माह

असखिक्काणो सपिणीण उसपिणीण जेसमया । सखार्दया लोगा लिसाण हवति ठाषार ३३ ॥ सुहुत्तर्धतु जहन्ना

सहित तेषुक्तलेखाने परिणामे ३२ असख्याता जे उक्तपिणी जिहा २ समे २ चदता २ भाय तथा असख्यातीजे अयसर्पिणी कीहा समे २
 पडता २ भाद्र दुर तेजना समयने विखे असख्याता लोकाकायना जे प्रदेश तेतलास्थानक लेखानाके चदता पडता सुभ अशुभादि कायया ३३

[सुदत्तद्वं तु जहन्नातितीसंसागरामुदत्तहिद्या उक्तीसाहीदृठिर्दे नायव्वाकिमहले साए ३४] क्णलेश्यायाइति स्थितिर्जातव्या जघननासुहृत्तादिं केशिदं
 शैव्युंनं षटिकाईयं अन्तर्भूहृत्तं एव क्णलेश्यायास्थितिर्भवति तथा उत्कृष्टास्थिति स्वयस्तिंशक्तानरोपमाणि सुहृत्ताधिकानि अथ सम्प्रदायात्
 सुहृत्तंशब्देन अन्तर्भूहृत्तं गृह्यते तद्यस्तिंशक्तानरोपमाणि अन्तर्भूहृत्ताधिकानि परमास्थितिः क्णलेश्यायाभवन्ति ३४ (सुदत्तद्वं तु जहन्नादसउदही
 पलियमसंखभागमभहिद्या उक्तीसाहीदृठिर्दे नायव्वानील्लेसाए ३५] नील्लेश्यायाः जघनंस्तीककालं चित् स्थिति भवति तदा अन्तर्भूहृत्तं एव
 उत्कृष्टास्थितिश्चदशसागरोपमानि पत्नीपमासंख्येयभागाधिकानि नीलायास्थितिर्भवतीति जघननाउत्कृष्टास्थितिर्जातव्या इयं स्थितिश्च पञ्चम पृथिव्याः
 धूमप्रभाया उपरितन प्रस्तसाश्रित्योक्ता ३५ (सुदत्तंघ्नन्जहन्नातिनुदहीपलियमसंखभागमभहिद्या उक्तीसाहीदृठिर्दे नायव्वाकाउल्लेसाए ३६) कापीत
 लेश्यायाः इयं स्थिति जातव्या जघननास्थिति स्तुकापीतलेश्यायाः अन्तर्भूहृत्तं भवति तथा पुनः कापीतलेश्यायाः त्रीणिसागरोपमाणि पत्नीपमासंख्येय
 भागाधिकान्यात् कृष्टास्थितिर्भवतीति ज्ञातव्याइति ततोयनरकपृथिव्यावाल्काया अपेक्षयाउक्तास्ति ३६ [सुदत्तद्वंनु जहन्नादीउदही पलियमसंख

तितीसं सागरा मुदत्तहिद्या । उक्तीसा हीदृ ठिर्दे नायव्वा किमह लेसाए ३४ ॥ सुदत्तद्वं तु जहन्ना दस उदही पलीय
 मसंखभागमभहिद्या । उक्तीसा हीदृ ठिर्दे नायव्वा नील्लेसाए ३५॥ सुदत्तद्वं तु जहन्नातिनुदही पलिय मसंखभाग

अंतर्भूहृत्तंवे षड्डी माठेरी जघन्य धिति ततीस सागरोपम अंत सुहृत्तं नीएकदेश लीज उत्कृष्टी धिति ह्रद्दे तंजाणवी क्ण
 लेश्यानी ३४ अंतर्भूहृत्तं जघन्य धिति दस सागरोपम अने पत्नीपमने असख्यातमे भाग उत्कृष्टी धिति ह्रद्दे ते जाणवी नील्लेश्यानी ३५ अंतर्भूहृत्तं

भागमभधियाउकोसाहोदरिठिद नायव्याति उलेसाए ३० तेजो लेख्यायायइय स्थिति धातव्याजघनता तु अन्वर्मुंक्षत्तं उतृकटाघर्तजो लेख्याया ही उद
 योद्रे सागरोपनिपथीपमासख्येयभागाधिके परमास्थितिज्ञातव्या इय तु ईशानदेवलीकापिषयाप्रीक्षास्ति ३० [मुहुत्तव तु जहयादसउदहीहोन्ति मुहुत्त
 मभधिया उकोसाहोदरिठिद नायव्यापद्मलेसाए ३८] पद्मलेयायाइय स्थितिज्ञातव्या जघनता तु अन्वर्मुंक्षत्तं एव स्थितिर्भवति उतृकटा तु द्यसागरोप
 मानि अन्वर्मुंक्षत्ताधिकानि परमास्थितिरैतावतीपद्मलेयायाभवति इय ब्रह्म देवलीकापिषयाउक्तास्ति १८ मुहुत्तव तु जहयातितीससागरामुहुत्तहिया
 उकोसाहोदरिठिद नायव्यासुकलेसाए ३८] शुक्लेख्यायाइय स्थितिज्ञातव्या जघन्यास्थितिस्त्वर्मुंक्षत्तं शुक्लेख्यायास्त्वस्थिसागरोपमानि मुहुत्ताधिकानि

मभधिया । उकोसा हिदरिठिदं नायव्या काठ लेसाए ३६॥ मुहुत्तव तुजहना दनुदही पलिय मसखभाग मभधिया।
 उकोसा हिदरिठिदं नायव्या तैव लेसाए ३७ ॥ मुहुत्तव तु जहना दस उदही इति मुहुत्त मभधिया । उकोसा हिदरि
 ठिदं नायव्या पन्ह लेसाए ३८ ॥ मुहुत्तव तु जहना तितीस सागरा मुहुत्तहिया । उकोसा हिदरिठिदं नायव्या सुक

जघन्य धिति ताग सागरोपम पथोपमने असाख्यातमे भागि अधिक ईशान देवलीकनी अपेचाये अतृकटा घिति इद तजाणवो कापीत लेखानी ३६
 अतर्मुंक्षत्तं अघन्य धिति ये सागरोपमने असाख्यातमे भागे अधिक ईशान देव लीकनी अपेचाइ उतृकटा घिति इद तजाणवो तेजो लेखानी ३७
 अतर्मुंक्षत्तं अघन्यधिति दस सागरोपमहोदर अतर्मुंक्षत्तं गविक पाचमा देवलीकनी अपेचाइ उतृकटा घिति इद तजाणवी पद्मलेखानी ३८
 अतर्मुंक्षत्तं अघन्य धिति तपोस सागरोपम मुहुत्तं शुक्लेख्यायाइय स्थितिज्ञातव्या जघन्यास्थितिस्त्वर्मुंक्षत्तं शुक्लेख्यायास्त्वस्थिसागरोपमानि मुहुत्ताधिकानि ३८ एव खलु

उत्कृष्टास्थितिर्भवति ३८ [एसाखलुलेसाण श्रीहेण ठिई उवन्नियाहीइ च उमुविगर्दस एत्तो लेसाणठिई श्रीवोच्छामि ४०] एपालिश्याना पया अपिओधिने सामान्य प्रकारेण गति विवचां विनास्थितिर्विण्णताभवति इतथतस्यपुगतियु लेश्यानां सर्वासांस्थिति वस्थामि ४० [दसवास सहसाइ काजएठिईजहनि याहोइतिसुदहोपलिश्रीवममसंखभागा च उकोसा ४१] कापोतायाः कापोतलेश्यायाः दशवर्षसहस्राणि जयन्त्यिकास्थितिर्भवति प्रथमायां पुथिव्यांरत्न प्रमायां प्रथमप्रसरे अस्ति तत्र स्थानांहि जघन्यतीदशवर्षसहश्रायुध्यात् उत्कृष्टास्थितिरुकापोतलेश्यायाः तीणि सागरोपमाणि पत्न्योपमासस्ये यभाग युक्कानि इय तु स्थिति स्तृतीय पुथिव्या. बालुकप्रभायाउपरितनप्रसूटनारकाणां एतावतीस्थितिरस्तीति ४१ (तिनुदरीपलिश्रीवम मसखभाग जहन्ननील ठिईदसउदहीपलिश्रीवम मसखभागस्य उकोसा ४२) नीलायाः जघन्यास्थितिः तीणि सागरोवमाइ पत्न्योपमासस्ये य भागयुक्तानि इयतीजघन्यास्थिति स्तृतीयायां बालुकप्रभायाः पुथिव्याः अपेक्षयात्रेया पुनर्नीलेश्यायाय दससागरोपमाणि पत्न्योपमासस्ये यभागयुक्तानि उत्कृष्टास्थिति त्रेया इयमपि

लेसाए ३८॥ एसा खलु लेसाणंश्रीहेणं ठिईंश्री वन्नियाहीइ । चउमुवि गर्दमुइत्तो लेसाणं ठिईंश्री वाच्छामि ४०॥दस
वास सहसाइ काजए ठिईजहनियाहीइ । तिनु दही पलिश्रीवममसखभागं च उकोसा ४१॥ तिन्न, दही पलिश्रीवम

निधे लेश्यानी सामाना प्रकारे धिति यणं वोछे चार गतने विसे एतला यकं लेश्यानी यीतो यीतकरेसुं ४० दसहजार वरसानी कापोत लेश्यानी स्थिति जघनरा रतन प्रभा पुथिवी पहिले पायडे मध्यम वीजे तीन सागरोपम अने पत्न्योपमनी असंख्यातसो भाग अधिक उत्कृष्टी धिति कापोत लेश्यानी वीजे पुथिवीना अपरि स्थापायडानी अपेक्षार ४१ तीन सागरोपम अने पत्न्योपमनी असंख्यातसो भाग अधिक नीलले श्यानी

पश्चभ्याधूमप्रभाया पृथिव्या उपरितनप्रस्तटामिषयाश्चेयाश्च ४२ (दसउदहीपलिश्रीवममसखभाग जहन्निद्या हीर तैत्तीससागरार उक्रोसाहीरक्रियाए ४३)
 कृष्णाया कृष्णलेश्याया द्यसागरोपमाणि पक्षीपमासख्येय भागशुक्लानि जषयिकास्थितिर्भयति इय तु पक्षभ्या धूमप्रभाया नरकपृथिव्या अपेक्षया
 श्रेया कृष्णाया पुनश्चकटास्थिति इत्यत्रि यत् सागरोपमानि इय मपि उत् कटास्थिति कृष्णलेश्यायास्तु, सप्तभ्यास्तमतम प्रभाया नरकपृथिव्याऽ
 पेक्षयाश्चेया ४३ (एसानेरेरंयाष लेसाणठिर् उषक्षियाहीर तेषपर बुच्छामितिरियमणुयाणदेयाण ४४) एयानैरियकाणा नरकयासिना जीवाना
 लेयानां जषन्त्योत्कटभेदेनस्थितिवर्षिताभयति तेषपरमिति तत पर तिर्यग्मनुष्याणातिरसा तथा मनुष्याणां च दिवानां च स्थिति वक्ष्यामि ४४ [अन्ती
 मसखभागोय जहन्ननीलठिर्दे । दस उदहीपलिश्रीवममसखभाग चउक्रोसाश्च ४२॥ दसउदही पलिश्रीवममसखभागजह
 न्निया हीर । तित्तीस सागराश्चो उक्रोसा हीर किन्हाए ४३ ॥ एसा नैरइयाण लेसाण ठिर्देउ वन्निद्या हीर । तेष
 पर वोष्प्राभी तिरिय मणुयाण देवाण ४४ । अतोमनुहुतमवा लेसाण ठिर्दे जहि २ जापो । तिरियाण नराण च

जपन्य विवति त्रीवी पृथिवीनी अपेक्षार दससागरोपम अने पक्षीपमनो असख्याततो भाग अधिक उक्कटी विवति नील ले स्थानो पांचमी पृथिवीनी
 जपरि व्यापायकानो अपेक्षा ४२ दस सागरोपम अने पक्षीपमनो असख्याततोभाग जपन्य विवति इर कृष्णले स्थानी पांचमी पृथिवीनी अपेक्षार तैत्तीस
 यागरोपम उक्कटी स्थिति इर कृष्णले स्थानो पृथिवी सातमीनी अपेक्षार ४३ एनारको समस्तने ले स्थानी स्थिति यषधीर्के तिवार पक्षीरु कदोस्तु
 तियचनी १ मणुचनी २ देवतानी ३ ले स्थानो विवति ४४ अ तर्भूहुसंकास ले स्थानो स्थित जपन्यादि पृथिव्यादिकने जेहने २ जे कृष्णादि तियचने

स्तिरयानराणां च वर्णितमभवति तेषु पञ्चमीस्थाने प्राकृतत्वात् दतीया तत पर देवानां से स्थाना स्थिति वस्यामि ४७ [दसवास सहस्राद किन्हाए
ठिई जहनिघाहोद पलियमसखिज्जदमी उक्कोसाहोद किन्हाए ४८] कण्ठाया कण्ठे श्यायादशयर्पसहयाणि जघन्यकास्थितिर्भवति पुन कण्ठे
श्याया पथ्योपमासख्येतर्माभागा उग्लकटास्थितिर्भवति इय च द्विविधास्थितिर्भवति भुयनपतिव्यन्तराणा एतापदाशुपा अपिचया उक्कास्ति ४८
[जाकिन्हाएठिइखलु उक्कोसासाउसमयमभ्यहिया जहदेष नीलाए पलियमसख च उक्कोसा ४८) या कण्ठाया कण्ठे श्याया खलु इति निययेन
उग्लकटास्थिति रक्कासा एय स्थिति समयाभ्यधिकासमयेन एकेन अभ्यधिकासमयाभ्यधिका जघनेन ज्ञेया च पुनर्नीलाया पथ्योपमास ख्ये यभागा
उग्लकटास्थितिभवति पर अयमेव द्विगोप अय य पथ्योपमासख्ये योभागोवर्त्तते स इहत्तरौभागोज्ञेय ४८ [जानीलाएठि इखलु, उक्कोसासाउ समयमभ्य
हिया जहदेष काजए पलियमसख च उक्कोसा ५] खलु निययेनयानीलायाउग्लकटास्थिति रक्का सा पुन समयमभ्यधिकाजघनेनकापोताया कापोत

दस वास सहस्राद् किन्हाए ठिई जहनिघा हौद् । पलिय मसखिज्जदमी उक्कोसा होद् किन्हाए ४८ । जाकिन्हाए
ठिई खलु उक्कोसा साउ समय मभ्यहिया । जहनेण नीलाए पलिय मसखच उक्कोसा ४८ । जा नीलाए ठिई खलु

दशहजार वरस कण्ठे स्थानी धिति जघनेना होइव्यतर भवन पतिनी अपेघार पथ्योपमानी यसख्यातमी भागा उग्लकटी हुवे स्थिति कण्ठे स्थानी ४८
कण्ठे स्थानी जे उग्लकटी स्थिति निये उग्लकटी तेवसी एके समे अधिक एतली जघनरा नील से स्थाना धिति पथ्योपमानी यसख्यातमी भागा नील
से स्थानी उग्लकटी परेसोनी अपेघा ४८ जे नीलसे स्थानी धिति निये उग्लकटी ते समय एक अधिक जघनरा कापोत से स्थानी स्थिति । पथ्योपमानी

ले श्यायाः स्थिति त्रैया च युनः कापीतले श्यायाः पत्नीपमासख्येयोभाग उत्कृष्टा स्थितिर्भवति पर अयमपि पत्नीपमासख्येयो भागोद्धृत
भागोऽर्थः इत्यनेन भवनपतिव्यन्तराणां एवतावदायुषां ले स्यात्तयं दर्शितं ५० [तेष परं बुद्ध्यामि तेजलो साजहासुरगणाणं भुवणवद्रयाणमन्तर
जो इसवेमाणियाणस ५१] ततः परं भुवनपति वाणमन्तरजो इसवेमाणियाण इति भुवनपतिव्यन्तरज्योतिष्कवैमानिकाना सुरगणानां यथा येन प्रकारेण
तेजोले श्याजघनरीत् कष्टस्थित्या भवति तथाह वक्ष्यामि ५१ [पलिश्रोवमज्ञहना उक्रोसासागराउदीनिहिया पलियमसंखिज्जिणं होइ भागेण तेजए ५२]
तेजोले श्याया. जघनग्रास्थितिः पत्नीपम भवति उत्कृष्टास्थितिस्तु वैसागरोपमे पत्नीपमासंख्येय भागयुक्तो इय परमास्थिति स्तेजोले श्यायाभवति

उक्रोसा साड समय मभमिहिया । जहनेणं काजए पलिय मसंखंच उक्रोसा ५० । तेष परं वोच्छामी तेज लेसा
जहा सुर गणाणं । भवणवद्र वाणसंतर जो इस वैमाणियाणंच ५१ ॥ पलिश्रोवमं जहन्नं उक्रोसा सागराधो दुनिहिया
पलिय मसंखिज्जिणं होइ भागेण तेजए ५२ ॥ दसवास सहसादं तेजए ठिई जहनिथा होइ । दुनुदही पलिश्रोवम

असंख्यातमी भाग उत्कृष्टी कापीत ले स्थानी पस्त्रिती थकी भाग मोटी ५० एतलानंतरं कहे खुं तेजो ले सा जिम देवताना समूहनेके तिम
भवन पतिने जघनग वरस सहस १० उत्कृष्टी सागर १ अधिक व्यंतरने जघनग वरस सहस १० उत्कृष्टपत्नीपम ज्योतिषीने जघनग पत्नीपमनी
भाग श्राठमी उत्कृष्टपत्न्य १ वरस लाख १ वैमानि कनी ५१ जघनग पत्नीपम उत्कृष्ट सागर २ अधिक तेजो ले स्थानी स्थिति पहिले विजे दिवलोके
साधिक तेकेतलापत्नीपमने असंख्यातमे भागे अधिक तेजो ले स्थानी ५२ दसहकार वरस तेजो ले स्थानी स्थिति जघनातः होइ भवनपति

इय च सामान्योपक्रमेण वैमानि कानिकायविषय तदा श्री या तत्र सीधर्मं गानदेयानां जघनगोष्ठ्याभ्या एतावदायुर्वर्षं उपलक्षणाख्ये पनिकायामपि तेजोलेखायास्थितिर्षोया ५२ [दसधाससहस्राद तेजएठिर्दशो जहृषियाशोर दीशुदहीपश्चिश्चोषम अस खभागश्च उक्रोसा ५३] तेजोलेखाया स्थिति र्गवर्षं सहश्राणि जघनगामयति तथा पुनर्दसगरोपमे पश्रीपमास ख्येय भागयुक्ते उगृह्यास्थिति स्तेजोलेखायाभवति तत्र व्यन्तरभवनपतिदेवान् पश्चिद्यतेजो लेखाया स्थितिर्दशवर्षं सहश्राण्युक्ता पुनर्दसगरोपमेपश्रीपमास ख्येय भागयुक्ते इयतु द्वितीय देवलोकामेखया तेजो लेखाया उल्लुष्टा स्थितिर्दशेति तात्पर्य ५३ [जातेजएठिर्दशतु उक्रोसासाठसमयमभहियाजहृनेणपन्हाएदसउमुहुसाहियारउक्रोसा ५४] या तेजोलेखाया खलुनिययेन उल्लुष्टास्थितियर्त्तं ते सातुसाएयस्थिति समयभायधिकाम पशलेखाया स्थितिश्चियाइयतुपश्रनेया जघन्य स्थितिसूतीय सनत्कुमार देवलोकामेखयाभवति उल्लुष्टातुपश्रनेयाया दशसागरोपमाणि भक्तसुं हर्त्साधिकानि स्थितिर्भवति इयत्पश्रनेयाया स्थितिपश्रमवप्रदेवलोकामेखयायेया ५४ (जापन्हाएठिर्

असख भाग च उक्रोसा ५३ ॥ जा तेजए ठिर्दशतु उक्रोसा साठ समय मभहिया । जहृनेण पन्हाए दसउ मुहुसा
हियाइ उक्रोसा ५४ ॥ जा पन्हाए ठिर्दशतु उक्रोसा साठ समय मभहिया । जहृनेण सुक्काए तिलीस मुहुसा मभ

इतरथा श्री सागरोपम २ अने पश्रीपमनी असख्यातनी भाग उगृह्याते जे तेको से स्थानी धिति वीजा देवलोकनी अपेक्षा ५३ तेजो ले स्थानी धिति निये सु उगृह्याते तेह समय एक अधिक जघनग पश्रने स्थानी धिति सागरोपम १० अतर्मुं हर्त्सा अधिक उल्लुष्टा स्थिति पश्रने स्थानी मभ देव लोकनी अपेक्षा ५४ जे पश्रने स्थानी धिति निये सु, उगृह्याते तेह समय अधिक जाणयो जघनग एकले स्थानी धिति कदा देवलोकनी अपेक्षा

खलु उक्तोसासाज समय मन्महिद्या जहन्ने ण सुक्काए तैत्तीसं सुहुत्त मन्महिद्या ५५] या पद्मलो भ्रायायाः खलु निश्चयेन उक्कूटा स्थितिवर्त्तितं सा एवस्थितिः
 एक समयथाभ्यधिका जघभ्येन शुक्लायास्थितिर्भवति इय शुक्लो भ्रायायाः स्थितिः पटस्यलांतक देवलीकस्यापिषया उक्ता अथः पुनः शुक्लो भ्रायाया उक्कूटा
 स्वय स्थिं प्रक्तागरीपमाणि अन्तर्भूर्हर्त्तार्यधिकानि स्थितिर्भवति इयं स्थिति स्तुपचानुत्तरविमानापेक्षयात्रेया ५५ अथ लेश्यानां गतिद्वारमाह [किन्हा
 नीलाकाज तित्थिविएयाओ अहमले साओएयाहिंतिहिधिजीवो दुग्गह उववज्जर्दं ५६] कृष्णानीलाकापोता एतांतिस्त्रीपिलेश्याः अधमात्रेयाः एताभिस्त्रि
 स्त्रिभिर्जीवोदुर्गतिं उपपद्यते ५६ [ते उपपद्मासुक्का तित्थिविएयाओधमलेसाओ एयाहिंतिहिधिवि जीवोसुग्गह उववज्जर्दं ५७] तेजस्यायाः तेजः पद्म शुक्ला
 एतास्त्रिस्त्रोपि लेश्याधर्माधर्मनिबन्धिन्यो ज्ञेयाः एताभिस्त्रिस्त्रिभिर्लेश्याभिर्जीवः सद्गतिं उपपद्यते ५७ [लेसाहिंसव्वाहिंसं पटमे समयमि परिणयाहिं तु
 नहुक्कस्यविउववाओ पर भवे अत्थि जीवस्स ५८] (लेसाहिंसव्वाहिंसं चरमेसमयमि ० ५८) सर्वाभिर्लेश्याभिः कृष्णनीलकापोत तेजः पद्मशुक्लाभिः पड्भिः

सल

भाषा

हिद्या ५५ ॥ किन्हा नीला काज तित्थिवि एयाओ अहम लेसाओ । एयाहिं तिहिंवि जीवो दुग्गहं उववज्जर्दं ५६ ॥
 तेज पद्मा सुक्का तित्थिवि एयाओ धम लेसाओ । एयाहिं तिहिंवि जीवो सुग्गहं उववज्जर्दं ५७ ॥ लेसाहिंसव्वाहिंसं

तैत्तीस सागर सुहुत्तं अंतर्भूर्हर्त्तं अधिक उक्कूटी शुक्लेश्यानी अशुत्तर विमाननी अपेक्षा ५५ हवे लेश्यानी गत कहिके कृष्णलेस्या नील कापोत लेस्या
 त्रिण एअधर्भरूप लेश्या महापाप आवि वा ना कारण भणी एतीन लेश्याद् जीव नरक तिर्यं च गतिरूपदुर्गती कपजे ५६ तेज पद्म शुक्ल लेश्या तीनए
 धर्मलेश्या कहे नीर्मल धर्मना कारण भणी एतिहं लेश्या जीव मनुष्य देवलीक रूप सद्गतिं भलि उपजे ५७ लेस्या कृष्णादिकं सर्वं पडिधर्जिवा आओ

एव

भाषा

प्रथमसमये तत्रतिपक्षि कालापिषया परिणताभिराकाररूपल प्राप्ताभि सतीभि परभवेकस्यापि जावस्य उपपत्ती नास्ति न भवतीत्यर्थं उपपत्तिर्नभवति
 इत्यनेन प्रथमसमये सिद्धासु उत्पत्त्यासु परभवे जीवोर्नात्पद्यते ५८ सर्वाभिल्याभिरभसमये ऽतसमये परिणताभि आकाररूपतामापन्नाभि सतीभि
 परभवेकस्यापिजोषस्य उपपत्तीनास्तीतिगाथाद्वयार्थं ५८ अथकदाचित्तद्यत्तदाह (अन्तीमुज्जसि० ६०) लिंगाभि परिणताभि सतीभि शुभाशुभाभि पञ्चभि
 सतीभि अन्तर्मुंक्षुर्गतेषतिपत्तमुंक्षुं चयेषसतिजीवा परलोक परभयगच्छन्तिइत्यनेनजीवस्य भरणकालेश्चागामिभवेत्तेशाश्वत्तमुंक्षुं यावत्प्रथम
 भवति तथा पुनर्जीवस्य उत्पत्तिकालेऽतीतभवत्तेशा अन्तर्मुंक्षुं यावदप्रथमभवति अन्वया नराणान्तिरयाषट्पदये नारकत्वे चतस्रस्यमानानां मृत्युकाले
 अन्तर्मुंक्षुं उत्तरभवत्तेशा कथं सभर्षन्ति तथा दैवानां नारकाणां च अथनादनन्तरं नरतियसु उत्पन्नानां प्रागभवेत्तेशा अन्तर्मुंक्षुं कथं सभर्षन्ति
 तथादन्तर्मुंक्षुं सत्पथयेप आरुपि परभवत्तेशापत्तिर्नामा भवत्येव यदुक्तं आगमे तिरिनर आगागिभवेत्तेशाप अत्र गणसुरानिरया पुत्र्यभयत्तेशये अन्तर्मुंक्षुं
 पट्मं ससयन्ति परिणयाहितु । नहु कथाइ उववाथो परभवे अत्वि जीवस्य ५८ ॥ तिसाहि सद्याहि चरिभं समयन्ति
 परिणयाहितु । नहु कथापि उववाथो परभवे अत्वि जीवस्य ॥ ५८ ॥ अतीमुज्जसि गण अतीमुज्जसि मि सेसएचेव ।

परमा समयो पितु परिणमायेत् इतोऽत्र जीवने प्रथम जन्मेषमं तेशा आयो तेषं समये कोऽत्र जीवने कथजयो नष्टो ह्यत्र पर अन्तरा भवने पितु
 मरोयो अ भवि उवाइ ५८ इत्यनेनगादि क सर्वं ६ नजगद अस्म समयेने पितु परिणयो जीव पक्षेष्ट तेषां न चोऽत्र कारने ससारी जीवने कपजियो
 पर अन्तरा भवने पितु जीवने ५८ तिसाने च तन्मुंक्षुं गये परिषध्ये ब्रह्मे तथा च तन्मुंक्षुं याकतेयके तेशा इतो पादूर परिणयोऽत्र आये जीव

भरणमिति १ अतएव दिवानां नारकाणां लेश्यायाः प्रागुत्तरभवात्सुहृत्तद्वयसहितजिशुःकार्त्तं यावत् स्थिति मत्वसुक्ता ६० यथास्यत्वात्तत्रात्
 सखिहीषुराह (लक्षाण्यासिलेश्याणं अणुभागे वियाणिया अप्ससत्याश्रीवज्जिता पसत्याश्री अहिङ्गि एत्तिवेमि १ मुनिसुत्सात् कारणात् अपाशस्त्रालेश्या
 दुर्गतिकारणं प्रशस्ताः लेश्याः सन्नति हेतोः सर्वासांप्रशस्तानां लेश्यानां अणुभागान् रसान् विज्ञाय अप्रशस्त्रालेश्याः क्वाणनीलकापोताख्यास्ति स्त्रीवर्जयि
 लाप्रशस्ताः तेजः पद्म शक्ताख्यास्ति स्त्रीलेश्या प्रशस्ताधितित्तित भाव प्रतिपस्या आययेत् इति सुधर्मा स्वामीजम् स्वामिनं प्राह हे जम्बू स्वामिन् अह
 श्रीवीरवाक्यादिति त्रवीमि ६१ इति श्रीमदुत्तराध्यायन सूतार्थदीपिकायां उषाध्याय श्रीलक्ष्मीकीर्त्तिगणि शिष्य लक्ष्मीवल्लभगणि द्विरचिततयां चतुस्त्रिंश
 मध्ययनं संपूर्णं ३४ अथ पञ्चतंत्रमध्ययनं प्रारभ्यते पूर्वस्मिन् अध्यायने अप्रशस्त्रालेश्याप्राज्ञाः इत्युक्तं अथे तनेष्वयने च भिक्षूणां
 गुणा उच्यन्ते प्रशस्त्रालेश्याहि गुणवर्ताभिक्षूणां एव सम्भवन्ति इति पूर्वापरयोः सम्बन्धः [सुषेष्टमेपगमगणे मगं बुद्धे हि दिसियं जमायर्त्तोभिक्त्तुद्वक्त्वाणं

लेश्याहिं परिणयाहिं जीवागच्छन्ति परलीयं ६० ॥ तस्मा एयासिं लेश्याणं अणुभावे वियाणिया । अप्रासत्यश्रीवज्जिता
 पसत्याश्री अहिङ्गए मुणित्तिवेमि ६१ ॥ लिसज्जयणं सम्भत्तं ३४ ॥ सुषेष्टमे एगणा मगो मगं बुद्धे हिं दिसियं । जमाय

जाद्र परलीकने गति नरकतीर्थं च भसुय देवगति ६० ते कारण यकी एभली पाहूर्त्तं सर्वलेश्याना अणुभाग रसदप जाणीने क्वाणदिक पाहूर्त्तं वक्कीनि
 प्रशस्त तेजो लेश्यादि भली ३ अधिष्टे भाव सुं आर्ये साधुयतीसु धर्मा स्वामी जंक्ते कहे ६१ इति श्री लेश्याध्यायननोटव्यो संपूर्णम् ॥ ३४ ॥
 सांभलो मुक्त कहतां प्रति हे शिष्य एकाग्रचित्त यकी मोक्षमार्गं प्रति बुद्ध तीर्थं करे दिखायां जे मार्गं आदरतुं साधु दुःखते सर्वपापरूपने इणे ययकरे १

तत्करोभवे १] हि प्रिया। मम कथयतीत्यु एकापमनस सत्सक्त मार्गं गुणयत् साधुमार्गं शृणु तत इति क्रियमाग समाचरन् भिक्षुर्दुःखानां शक्त
 करोति कोट्य त मार्गं बुधेस्त्रोयकरैर्दमित विस्तस्त्वेन प्रकाशित १ [गिहवास परिचञ्ज पञ्चकामस्त्रिभोगुणी इमे सद्भिर्वियाणिकाजिहिसञ्जन्ति
 साधया २] शृङ्गवास परिलज्य मन्त्राणां शान्तिमुनि इमान् बध्ममाणान् तान् सद्भान् पुत्रकलदादीन् ससारहेतून् विजानीयात् तान् कान् सद्भान्
 शै नर्द्धेर्धन्यै कला मानया सज्यन्ते कर्मवन्त्यै कला ससारिणी बध्यन्ते इत्यर्थ २ (तद्विष हिंस शसिय धीञ्ज श्रवणधेवण इत्याकाम धर्माश्च
 मन्त्रोपरिप्राण ३) तै के सद्भा मुनिनात्याज्या इत्याह सयत एतान् सद्भान् परिवर्जयेत् प्रथम हिंसा तथैव शब्द पदपुरेण पुनरस्तीक श्रुताभाषण
 शीर तदा श्रमन्त सेवन नीपुत्रसेवन इत्यावाक्यारूप काम भोग सुख लोभ परिग्रहरूप परिवर्जयेत् समन्तात् त्यजेत् ३ (मर्णाहर चिन्तापर मल्लधुपे षवा
 न्दिय सक्रमण्डपण्डुसंशय मणसाधिनपत्याए ४) पुनर्मनोहर चित्त गृह विचित्र मन्दिरे चिद्वै सङ्गित गृह वा चित्रगृह पुन कथभूत गृहं मणधुप
 नाशर मन्दिनि च धूपनानि मालाधूपनानि तैवासित मालाधुपवासित तत्र मालानिप्रथित पुष्पाणि धूपनानि धारशाशादीनि तै सुगन्धीकृत

रतो भिषयुटुकनात्त धारो भवे १॥ निहिवास परिचञ्ज पदञ्जा मस्त्रिए सुणी । इमे सगे वियाणिका जिहि सञ्जति
 माधदा २॥ तर्हेयन्ति स श्लिय चोञ्ज श्चभसियण । इच्छा कामचलोहच सज्जो परिचञ्जाएश ॥ मर्णाहरचिन्ता धर मल्ल

परगा पास दर्शने दिक्षा श्लिय श्रगयो ताउ रत एवम जाणो ने पुत्रपौत्रादि जिहिसा सिञ्जन्ति कर्म यथाइ मनुष्य श्रन्तरापीण जीय २ तिभं
 ख ज्ञानहिंसा यथा योसयो श्दरानेषु विषययु सेयियु इच्छारूप काम लोभ ए तले परि गृह सर्व साधु परिवरे ३ मनने इरे एहयो विदाम सङ्गित

मित्यर्थः पुन कीदृश चित्रमन्दिर सकपाट कपाटसहित पुन कीदृश पाण्डुरीक्षोच उज्वल चम्प्रीपक साधुरितादृश गृहं मनसापि न प्रार्थयेत् अपि
शब्दात् वचसान् प्रार्थयेत् ४ तादृशे तिष्ठतः साधो कीदोषस्तमाह (इन्द्रियाणि उभस्स ए दुकराद्, निवारिउं कामरागविवदृणे ५)
तादृशे मनीहरेचिब मालाधूपार्दि सहिते उपाश्रयेभिर्षो साधोः इन्द्रियाणि तु निवारयितुं विषयेभ्यो व्यावर्त्तयितुं दुकराणि दुःशक्यानि पुनः
कीदृशे मन्दिरे काम राग विवर्द्धने कामा इष्टेन्द्रिय विषयास्तेषु राग क्रोहस्त विवर्द्धयतीति काम राग विवर्द्धनं तस्मिन् ५ तदा कुल स्यात्तव्य
मित्याह (सुसाणे सुन्नगारे वाक्कमूलैव एगश्रो पयस्त्रिके परकडेवा वासन्तत्या भिरोयए ६) एककः एकाको द्रव्यतीभावतय द्रव्यतः सहायरहितोभावती
रागादिरहितः परिवार शुतीपि मनसाएकत्वं चिन्तयन् साधुस्तत्र तेषु स्थानेषु वासन्निवास रोचयेत् श्राक्कान रोचयेत् वेपु २ स्थानेषु इत्याह अशानि
पुनः शून्यागारेवा शब्दार्थे तथा पुनर्द्वैकमूले पुनर्वाज्यत्र गृहार्दोपहरिके इति द्वितीभाषया एकान्ते स्त्री पशुपण्डकादिरहिते पुनः कीदृशे स्थाने परकृते

ध्वेण वासियं । सकवाडं पंडुरक्षीयं मणसावि न पत्यए ४ ॥ इन्द्रियाणि उभिवस्स तारिसंमि उवस्सए । दुकराद्
निवारिउ काम राग विवदृणे ५ ॥ सुसाणे सुन्न गारेवा ककत्वमूलैव एगगी । पद्दरिके पर कडेवा वासं तत्या भिरो

धर प्रले सुगंध कोषी अगरे वास्यो कमाह सहित जीहां चंद्र आ जजलाखे एहको भने उपाश्रयादिन वांछे ४ जे भणी पांच इंद्री साधुनां वस पूर्वोक्त
उपाश्रयने विखे दोहिलानि वारवा द्रम्रावत राखवा काम रागनीयधारणहारउपाश्रय ५ रहे शशाननेविखे अयवा स्ना धरने विखे हष्यना मूलने विखे
रागहे प रहित स्त्रियादिक रहित अलगी परी गृह आपणे अर्थे कोषी यस्सिउं तीहां रोचवे करे एहवे दान कि साधु रहे ६ प्राणुक अचित्तं भूमि विखे

परैराकार्यं कृते ६ (फासुयमिषयावहि इत्यो हि अणभिदृए तस्या सहस्रपयसासभिवत् परमसञ्जए ७) भित्तुभिधावहि परमस यत साप्तदशविध स यम
वान् साधुस्त्व च पूर्वोक्तास्त्वानिश्चयानादीवास सकल्पयेत् कुर्यात् कथंभूते स्थाने प्रादुक्केजीवरहिते अनावाधेस्वाध्यायात्कराय कारणरहिते गुन स्त्रीभिरनभि
दृतं अकृतोपद्रवेषादि समोपयासरहिते इत्यर्थं ७ [नसय गिहाइ कुञ्जिजानिव अथे हिकारए गिहकथमसमारभे भूयाए दिस्सएवही ८] साधु स्वय
यद्वाणि न कुर्यात् न च साधरनोरनाजने कारयेत् साधुभूदं न कुर्यात् न च कारयेत् तत्र कोहे तु स्तमाह यतो यद्दकर्म समारभे यद्दकर्म
इटिका सत्तिका खनन जनाद्यानयन कटादि निमित्तं दद्यादिच्छेदनादिकथं यद्दकर्म तस्य समारभो यद्दकर्म समारभ स्तत्र भूताना प्राणिना यधो
दृश्यते ८ [तसाण यावराण च सहसाण यावराणय तन्नागिह समारभे सजओ परिवज्जिए ९] केषां प्राणिना यधो दृश्यते यद्दकर्म समारभे त्रसानुं
दीन्द्रिय गोन्द्रिय चतुरिन्द्रिय पञ्चिन्द्रियाणां तथा स्वावराणां पचिब्यसे जो वायु वनस्सतीना शूकराणां लघुतर यरीराणां अथवा शूकाणां चर्मचक्षुर गोच
राणां यादराणां स्थूलयरीराणां यधो दृश्यते तस्मात् आरभस्य प्राणिबधहेतुत्वात् स यत साधुरारभ परिवर्जयेत् ९ अथाहारविधिमाह (तद्धिव भस

यए ६ ॥ फासुयमि अणावाहे इत्यीहि अणभिदृए । तस्य सकप्पए वास भिवत्तु परम सजए ७ ॥ न सय गिहाइ
कुञ्जेजानिव अन्ने हि कारए । गिह कथम समारभे भूयाणे दिस्सए वही ८ ॥ तसाण यावराणच सुहुमाण यावराणय ।

पाष्ठापरे अथवा पोशा गघार स्त्रीजाति रक्षित एहवे स्थानके तोडा करे यसियो तेहिज साधु कोटो मोचने अमित्तापी ७ स्वय पीते नवाधर न करे
अनेरा पार्से करावे नही ते अतुमोदेर नही एणे भाटी पाणी आदरे घरना कर्म आरभने विखे एके द्वियादिभूत जीपनो यध हिंसा न करे ८ ते जीव-

पाणिसु पयण्णु पयावणिसुय पाणभूय द्यदृष्टाए न पए न पयावए १०) तथैव साधुर्भक्तपानेषु भक्तपानीयेषु पचनपाचने च तस्माणां स्वावराणाञ्च बधत्वे न
पाणभूयत इत्यर्थं तस्य यावराणां द्यार्थं स्वयं भक्तपानीयं नप चेतथा साधुर्न भक्तपानीयं अन्ये न पाचयेत् १० भक्तपानीय पचनपाचने जीव हिंसां
रथयति [जलधननिमित्ता जीवा पृथ्वी काठनिमित्तया हस्यंति भक्तपाणिसु तन्हा भिक्वु न पयावए ११] भक्तपानेषु पच्यमानेषु तथा पच्यमानेषु सत्सु
जलधान्यनिमित्ता ततस्मा जीवा साधा पृथ्वीकाटनिमित्ता जीवा हन्यन्ते जलस्य धान्यस्य जलधान्यं तत्र निमित्ता स्त्रीत्वन्ना स्तलागताः जलरूपा एके
न्द्रिया जीवा स्तथा तत्र भवाः पूरकारणेषु जीवा स्ते पचनकाले ततोभ्यत्र निमित्ता वाहन्त्यते यतोहिद्ये जीवा यत्र तिष्ठन्ति यत्रोत्पद्यन्ते तत्र स्थिताएव
ते सुखिनीभवन्ति तदाभ्यननाञ्च अपि नाप्यो भवति एयं पृथ्वी च काष्ठस्य पृथ्वीकाष्ठे तत्र निमित्ताः पृथ्वीकाष्ठनिमित्ताः पृथ्वीकाष्ठिका एकेन्द्रिया स्तदा
निताः पनकाया भगवत्काष्ठिकाः तस्यादयो हीन्द्रियायास्य जीवाहन्यन्ते तथा काष्ठनिमित्ताः घृणाया हनन्ते भक्तपानकेहि पृथ्वीकाय वनस्वतिकाय
तन्हागिह स्वभारंभं सजञ्चो परिव्रज्जाए ८ ॥ तहैव भक्त पाणिसु पयण्णु पयावणिसुय । पाणभूय द्यदृष्टाए नपए नपया
१० । ज० धञ्ज निमित्तया जीवा पुठ्वी कद्र निमित्तया । हस्यंति भक्तपाणिसु तन्हा भिक्वु नपयावए ११ । विसर्पे

दसर्वेषु पाणिसु पावरे पृथिव्यादिक सूक्ष्मनानीवादेर मोटी जीव तेहनी बध घात ते कारणेधरनोसभारंभसाधु विशेषे परिहरे ८ हवेभ्राहार नीविध कहैके
तिज वली भातपाणीने विखे पीते रांघेनही अनिरापासे रंधावे दंधधार तेणे पाणवेन्द्रियादिक भूत पृथिवीनी द्याभणी आपरांधे नही बीजापासे रंधावे
नही १० पाणिसु निभारं पूराधाननी निभार इंसी प्रमुख जीव जाणिका पृथ्वीने निमित्त वनस्वति प्रादिकाष्टने निभरत घृणादि हणार भात

यौवि राधनास्या देव तप्तात् त्व स स्वाय र विनाग्रहितुलाह्निसुर्नपचेत् नपाचयेदिति भाव ११ अथान्ने रारन्ध्री हिंसाकारण आह [विसर्पे सव्यप्रोधारं बहुपाण विणासर्पे नत्थि जी इममे सत्ये तन्ना जोइ नदीयए १२] साधु स्वप्नात् कारणात् ज्योतिर्न दीपयेत् अग्नि न प्रज्वालयेत् कि कारण तदाह ज्योति सप्त अग्निस्तुला बहु प्राणि विनाग्रान अनात् अस्त्र नास्ति अग्नि सर्वांन् प्राणिनो विनाग्रयति कथमभूत् कथीति अस्त्र विसर्पत् विशेपिण सप तोति स्फुरतीति विसर्पत् प्रग्ररथगोल पुन कोटग ज्योतिशस्त्र सर्वतोधार सर्वतयतुर्दिक्षुधारा शक्तिर्यस्य तत् सर्वतोधार सर्वदिशा स्थित जीव विनाग हेतुक मिलयं प्राकृतत्वादवलिह्वयत्तय पचन पाचनन्तु अग्नि प्रज्वालन विना नस्या अग्नि प्रज्वालन निषेधन पाचन पचगयो निषेध पुनरग्नि प्रज्वालन निषेधेन च शोतकालादी अपि अग्नि समारम्भो निषिद्ध यदा पचनपाचनान्निना प्रज्वालनादि निषेधो भयति तदा प्रय विक्रयाभ्या निपाह क्रियते अत साधूना तद्विषेधोप्युच्यते १२ [हिरण जायकथच मणसाविनपत्यए समलेट्टकषर्भिश्वू विरएकय दिप्रए १३] [क्रिषतो करधोशोर विक्रय तोययाणिप्रो कयविक्रय मिवट तो भिवलू ड्वय न तारिसो १४] अनयोर्व्याख्या भिषु साधुर्हिरण हिम जातरूप रूपध ग्रह्वाहनधानगादि मनसापिन प्रार्थयेत् यदि मनसापिन प्रार्थयेत् तदा कथ गृह्णीयात् कोटयो भिषु समलेट्ट काचन लेट घ काचनघ लेट्टकाचने

सव्यप्रो धारे बहुपाणि विणासर्पे । नत्थि जोइ समे सत्ये तन्ना जोइ नदी यए १२ । हिरन्न जायकथच मणसावि

पाणेने विवेचि ते कारण यको साधु पचावे नही ११ योडोसो पणु थार अस्त्रनोपरि सर्वदिशि धाराहे जिडा घणा प्राणीने विनाग्रनो कारणद्वार नथी धाणि सर्पेसुं योज् अस्त्र कोइ ते कारण यको अग्नि दीपावे नही १२ हिरण्य रूपी जात रूप सुदुर्षु तथा धन प्रसुख मने करो प्रार्थं याहे नही

समीलेष्टु काश्चने यस्य स समलेष्टु काश्चनः तुलाकाश्चन पाषाणः पुनः कीदृशः क्रयविक्रयात् विरतः कयय विक्रयस्य क्रयविक्रय तस्माद्विरती ररितः १३
 क्रयविक्रये दूषणमार्हः (क्रियांती० १४) यतीहि साधुः क्रीणन् मूलैरन वसु यत्कृन् क्रयको भवति इतरस्वीक वद्गाहको भवति तथा पुनर्विक्रीणानस्य वणिग्
 भवति क्रयविक्रये वर्तमानो भिन्नस्तादृशो नभवति भिन्नगुणशुक्लो नभवति सूत्रे हि भिन्नोत्सृज्यं एतादृशं नास्तीत्यर्थः १४ [भिवक्ष्यव्यं न कयव्यं भिवक्षुणा
 भिवक्षुणिकयविक्रयो महादीप्तो भिवक्षवित्तो महावहा १५] भिवक्षुणा साधुना भिवक्षितव्यं याचितव्यं न तु साधुना क्वेतव्यं मूलैरन यद्वादी यद्दीप्तव्यं
 कीदृशेन भिवक्षुणा भिवक्षवित्तना भिवक्षयावित्तरूपरूपं यस्य स भिवक्षावित्त्वेन यतीहि भिवक्षोः क्रयविक्रययोर्महान् दीपोस्ति साधोर्भिवक्षावित्तः सुखाव
 हास्ति भिवक्षु यावत्तिर्भिवक्षावित्तः सा सुखं प्रावहति पूरयतीति सुखावहा सुखपूरका १५ [स सुयाणं उच्छ्रमे सिञ्जा जहा सुत्तमण्डियं लाभालाभं मिसं

नपत्यए । समलेष्टु, कांचणे भिवक्षु विरए कय विक्रए १३। क्रियांती कइयो होइर विक्रयांतोय वाणिज्यो । कय विक्रयंमि
 वद्धंतो भिवक्षु न हवइर तारिसो १४ ॥ भिवक्षयव्यं नकयव्यं भिवक्षुणा भिवक्षुवित्तियाणा । कय विक्रयो महादीप्तो
 भिवक्षवावित्तो सुहावहा १५ ॥ समुयाणं उच्छ्र मेसिञ्जा जहा सुत्त मण्डियं । लाभा लाभंसि संतुद्धं पिंडवायं चरे

सरिखी पापाण अने सुवर्णं जेहने एहवी साधु विरभ्यो श्रीसखोके क्रयसेवा यकी विक्रयनेत्थिधा यकी १३ मोले क्रयाणो लेतु लीक सरिखी याहकहर
 क्रयाणादिवे चतुवाणीशो हुइर व्यापारि याइ क्रय लेवी विक्रय वेचतु साधुने होइर तेहवी सते वीणो १४ तुं स्युं करवुं भिवक्षार मांतिवो परं मोलि लेवुं
 नहो चारिते भिवक्षामांतिवे इत्तिया जीविका जेहने क्रय विक्रयती मोटी दीपके भिवक्षारं यत्तिवो ते सुयनी प्रापणहारके १५ यथा धरनि समुद्राय

स्य
भाषा

सुटे पिडपाय धरेसुषो १६] मुनि साधुर्यवास्य सतीहारीत्या अनिन्वित निन्द्यरहित समुदान भैस्य भिषासमूह एययेत् गवेपयेत् कथभूत भैष्य
 ल ल इव ल अन्याभ्य इयक २ कणपद्वर्णमिव स्वस्य स्वल्प मोक्षसेन मधुकरवृत्त्या अभनन् इच्छेत् इत्यर्थं पुन साधुर्लभालाभी आहार प्राप्ती वा सन्तुष्ट
 सन् सन्तोषो सन् पिडपायत भिषाटनचरित् आसेवेत पिण्डाय भिषावहणाय पतनत्पात पिण्डपातो भिषार्थं अभयस्त आसेवेत् इत्यर्थं १६ अथ
 भोजनविधिमाह (आलोति नरसे गिद्धे जिभादते अमुच्छिष्टे नरसद्याए भुजिञ्जा जवणद्वारा महासुषी १७) महासुनिर्वापनार्थं यापना समयनिर्वाह
 यापनायै इति यापनार्थं समयनिर्वाहार्थं आहार भुञ्जीत रसोधातु विशेषकार्यं इति रसार्थं धातुव्यवहारं स रसाहार न भुञ्जीत केवल समय निर्वा
 हार्थमेव भुञ्जीतेत्यर्थं कोट्यो महासुनि अलोच सरसाहार प्राप्ती अक्षपल पुन कथभूतो रसे न गृह्व मधुरादौ तीव्रभिस्त्रापकान् नास्ति पुन
 कोट्यो महासुनि जिह्वा दत्त प्राणतत्वात् दत्त जिह्व वसीकतरसन पुन कीदृश अमुच्छिष्टं सनिधेरकरणेन आगामिदिनेषु भक्षणाद्यं घृतगुह्यादि
 सस्य करणरहित १७ (अथवा सेवयद्येव वल्गु प्रयणतहा इद्रीसकार सखाय मणसा विनपत्यए १८) पुन साधुरेत्तन्नसापिन प्रार्थयेत् न अभिसयेत्

मुषी १६ ॥ अनिलि न रसे गिद्धे जिभा दते अमुच्छिष्टे । न रसद्याए भुजिञ्जा जवणद्वारा महासुषी १७ ॥ अक्षणा

भिषा ते पणि तुष्ण घोठी २ गवेये स्वर्ने घोली तेहयो आपणो मारको निद्राद्र रहित आहारादि लहेतु पणि सतोषी पिडपाय भिषायात् घडे
 तैव्ये १६ भवां अथ पिच्छे चूप नदी घनादि रस विच्छे लोभ नदी दसोच्छे जिह्वे घतादिपासीराखीवे मूच्छानदी यतीरनी रसधातु इडि भयी भोजन
 न कार समय निर्वाह भयी आहारव्ये महा साधु १७ पुलादिके पूजा साधियादिकने विच्छे मननी करको यादिवो तिस वली वस्त्रादिके प्रतिज्ञाभयो

यदि मनसापि न प्रार्थयेत् तदा वचन कार्याभ्यां दूरतएव अपास्तं तत् किं किं अर्चनं पुष्पादिभिः सत्करणं यथा सेवनं पर्युपासनञ्चैव पदपुरणे पुन
 वन्दनं सुतिर्करणं तथा पूजनं वस्त्रादिभिः प्रतिलाभनं न प्रार्थयेत् पुनः साधुः ऋद्धिसत्कार सम्मानं मनसापि न प्रार्थयेत् ऋद्धिश्च सत्कारश्च सम्मानश्च
 ऋद्धिसत्कार सम्मानं ऋद्धिः आद्यानां सम्भत् अथवा वस्त्रपातादि सम्भत् सत्कारी अर्थप्रदानादिः शुण्कथनं वा सम्मानं अभ्युत्थानादि एतत्कर्त्तव्यं साधुर्न
 अभिलषेत् १८ [सुक्कज्जाणञ्जियाइज्जा अनियाणे अकिंचणे वीसट्टिकाए विहरिज्जा जावकालस्स पज्जओ १८] साधुः शुक्कधानं प्राशुक्कं ध्यायेत् पुनः
 साधुः अनिदानो निदानरहितः अकिञ्चनः धनादिरहितः पुनर्भुङ्क्षुष्टकायः सन् शरीरं समत्वरहितः सन् यावत्कालस्य पर्यायः यावन्मृत्वीः समाय
 स्तावत् एतादृशः सन् विहरेत् अप्रतिबद्ध विहारत्वेन विचरेदित्यर्थं १९ [निज्जुहिज्जा जाण आहारं कालधम्मो उवट्टिए चइज्जामाणसं वीदिं पइइक्खे विभु
 षइ २०] स साधु रीतादृशे मार्गे सञ्चरन्काले धर्मे उपस्थिते सतिमरणे प्राप्ते सतिप्रभुः समर्थः दुक्खात् शरीरमानसात् दुक्खात् विशेषेण मुच्यते मुक्ती
 भवतीत्यर्थः किं क्वचा आहारं निज्जुहिज्जाण इति संलेखनया परित्यज्य पुनः किं क्वत्ता मानुषीं वन्दित्तनुं त्यक्त्वा जदारिक शरीरं त्यक्त्वा दुःखरहिती

सेवयांचेव वंदयं पूययं तहा । इड्डी सकार सम्मायं मणसावि न पत्थए १८ ॥ सुक्कज्जाणं जिहायाएज्जा अनियाणे अकिं
 चणे । वीसट्ट काए विहरिज्जा जाव कालस्स पज्जओ १९ ॥ निज्जुहिज्जा आहारं कालधम्मो उवट्टिए चइज्जा माणुसं

भावक उपगारणलब्धि द्रव्यादिक जभाषाद्वयं इतस्ता मने प्रार्थे नहि ती वचनादिके करी कहे १८ शुक्कधानध्याये करी नियाणुं तपनी वेचवी न करे
 धनादिके रहित जिणे कार्यावो सिरावीके एहवो साधु प्रतिबंध रहित विचरे जांलगे काल मरणनी प्रस्तावतां लगी १९ संलेखणानि करिवे

भवतीत्यथ २० [निष्कर्मो निरहकारो वीयरगो अणसर्वो स पत्ते केवलनाण सासए परिनिब्बुडित्तिवेमि २१] एतादृशोयति यागती अविश्वरसी मरण
 यश्चरहित केवल ज्ञान स प्राप्त सन् परिनिब्बुडित्तिवेमि कर्माभावात् शोतीभूतो भवति सिद्धि गति भाक भवतीत्यर्थं कीदृशोयति निर्मो लोभरहित
 पुन कीदृशो अनाश्रय प्राणतिपातादिपचाश्रय रहित पुन कीदृशो निरहकारो अहङ्काररहित पुन कीदृशो वीतरागो रागपेरहित सुधर्मो
 स्वामी जम्बूस्वामिन प्रतिदर्शिक अह इति यथीमि वीतराग वचनात् २१ इत्यनगार माशाध्ययन इति श्रीमद्भक्ताराध्ययन सूत्रार्थ दीपिकायां ८पाध्याय
 श्रीलक्ष्मीकीर्तिगीणियाथ लक्ष्मीवल्लभगीणि विरचितार्थां अनगारमार्गाध्ययन पञ्चद्वि य अध्ययन सम्पूर्णं ॥ ३५ ॥ अथ षट्द्वि य प्रारभ्यते पूर्वोक्तं अथ
 यत्ने अनगारमार्गं लक्ष्म स ध जीवाजीवादितत्वज्ञान विनानस्यात् अतो जीवाजीव भक्ताख्य षट्त्रि य अध्ययन व्याख्यायते (जीवाजीव विभक्ति रूणेइमेप
 गमणारथो जजाणि क्णभिक्खु सअजयइ स जत्ते १) भो शिया एकाग्रमनस सन्त् स्थिरचित्ता सन्तो युयन्ता जीवाजीव विभक्ति जीवाजीवादीना

वादि पद्म दुक्खे विमुच्चई २० ॥ निष्कर्मो निरहकारो अणसर्वो । सपत्तो केवल नाण सासए परि निब्बुडे
 त्तिवेमि २१ ॥ अणगारमवग ज्ञयण सन्नत्त ३५ ॥ जीवाजीव विभक्ति सुणेइ मे एगमणाइथो । ज जाणिज्जाण भिक्खू

काथोहे आहार ४ प्रकारे मरणनीकान् अचसरे आथोयको क्णान्ते मनुष्यतो वेदि सरीर समर्थं यरीर मननोदुक्खते यकी सुकार २० ममता क्षीण
 रहित अहङ्कार रहित रागहेप रहित आश्रय पापरहित पाप्मो केवल ज्ञान सर्वश्रयनो याहक यासतु कम्म खपाविवायको वीसक्यो शीतली भूत
 सुधर्मा स्वामि कवन्ते कहेर १ इति श्रीमणगारमध्ययनना टब्बा सपूर्णं ३५ एकद्वियादि जीव काटादि अजीवनी विभक्ति विवरी जाणको साभक्ति हे श्रिय

सत्त्वं मे भय कथयतः सतः श्रुत जीवाद्य अजीवाद्य जीवा जीवास्तीषां विभक्तिर्लक्षणा ज्ञानिन पृथक् २ करणं जीवाजीव विभक्तिस्ता उपयोगात्
जीवः एकेन्द्रियादिः उपयोगरहिती अजीवः काष्टादि इत्यादि जैनमतीक्ष्ण लक्षणेन लक्ष्यज्ञानं तां इति कांथां जीवाजीव विभक्तिं ज्ञात्वा भिक्षुः संयमे
संयममार्गं सम्यक् यतते यत् श्रुते १ [जीवाचेव० २] जीवाचे तना लक्षणात्ककाः स पुनरजीवा अचेतनात्ककाः चकार एवकारस्य पदपूर्णे एष लोकीव्या
ख्यातस्तीर्षकरक्तः अजीवदेश आकाशं अलोकी व्याख्यातः अजीवस्य धर्मास्त्रिकायादिकस्य देशोऽपी अजीवदेशो धर्मास्त्रिकायादि ह्यतिरहितस्य आकाश
स्य देशः स अलोकी व्याख्यातः जीवा जीवानां आधेयभूतानां लोकाकाशं आधारभूतं अतो लोकालोक लक्षणं उक्तं २ जीवाजीव विभक्तिर्यथास्यात्तथाह
[द्रव्यो स्थितश्चो चेव कालश्चो भावश्चो तथा परव्यवर्तिसिं भवे जीवाणम जीवाणय ३] द्रव्यतो द्रव्यं आश्रित्य इदं द्रव्यं इयमेदं क्षेत्रतः इदं द्रव्यं एता

सम्भं जयद्र संजमे १ ॥ जीवाचेव अजीवाय एस लोए वियाहिए । अजीवा दसभागासि अलोए से वियाहिए २ ॥
द्रव्यो स्थितश्चो चेव कालश्चो भावश्चो तथा । परव्यवर्तिसिं भवे जीवाण मजीवाणय ३ ॥ रूविणो चेव रूवीय

सुभक्तृतां प्रति एकाग्र मनश्च एपातीसमा अध्ययन अनंतर ह्यतीसमुं जाणवुं ते अध्ययन सांभली जांणीने साधु तथा आवक भली परि यतन करे
संयमने विखे १ जीवने वली अजीव कहीये एजव उदराज सर्वने मल्लक्ष कही जिने अजीवनी देस आकाश रूप परं धर्मास्त्रिकायादि तिहां नधी
तेहने अलोक कही तीर्षं करे २ द्रव्य थकी जहना एतसाभेद क्षेत्र थकी ज एतलो आकाश अवगाहि रहिके काल थकी एहनी एसली स्थिति तथा
भाव थकी जे एहना एतला स्यादि पर्याय तेहनी चिह्न प्रकारे परव्यवर्तिसिं भवे जीवने अजीवनी स्थिति ३ अजीवनी परव्यवर्तिसिं भवे जीवने अजीवनी प्रथम

यति क्षेत्रे स्थितकालत इदं द्रव्यं द्यत्कालस्थिति महर्षींते भावतोस्य द्रव्यस्य इत्यन्तं पथाया एव तेषां जीव द्रव्याणां अजीवद्रव्याणां च द्रव्यत्रैष्व
 कालभावेन चतुर्वर्गं प्ररूपणा भवेत् ३ अथ तापत् अजीव द्रव्यप्ररूपणाया स्वल्पत्वात् अजीव द्रव्यस्यैव प्ररूपणा कथ्यते (रुचिणीय अरुचीय अजीवीया
 द्रुचिहाभये अरुचो दसहायुजा रुचिणो विषउच्चिहा ४) अजीवा द्विविधाभवतश्च एकं अजीवीयद्रुचिणी रूपवन्तं च पुनरन्ये अजीवा अरुचिणी अरुपवन्त
 तत्ररूप स्वर्याप्यागय भूतं सूक्ष्मं तदस्ति येषु ते रुचिण तद्व्यतिरिक्ता अरुचिण इत्यर्थं तत्र अरुचिणी अजीवा द्वाधावक्ता रुचिणी जीवा चतुर्विधा
 प्रोक्ता ४ पूर्वं द्यविधत्वात् आह (धम्मत्थिकाए० ५) [आभासे तत्त्वदेशेय तत्पण्येय आहिण आधासमए चैव अरुचो दसहाभये ६] शुभं अरूपी अजीव
 एय द्यभाभवेत् इति द्वितीयं गाययान्वयं प्रथमं धर्मास्तिकायं अरुति जीवपुद्गलो प्रति गम नोपकारेणिति धम्मसास्य अस्त्य प्रदेशं सहावास्तेषां कायं
 समसो धर्मास्तिकायं सर्वं देयाजगत समानं परिणति मह्यं इति भावः १ पुनस्तद्देशे प्रस्तस्य धर्मास्तिकायस्यक तमो विभागोदेशस्कृतीयं चतुर्थादिभाग
 साद्देशो धर्मास्तिकायदेश २ तथा पुनस्तत्प्रदेशसास्य धर्मास्तिकायविभागस्य अतिशुश्रोतिरशोय प्रदेशोधर्मास्तिकायप्रदेशकीर्णकदै आख्यातं कथितं ३
 एय अथमो जीव पुद्गलयो स्थिरकारी धर्मास्तिकायादिहो अथर्मास्तिकाय ४ पुनस्तस्य अथर्मास्तिकायस्यापि देशसाद्देशेय एकं कथितानो अथर्मा

अजीवा द्रुचिहा भवे । अरुची दसहा युजा रुचिणीवि चउच्चिहा ४ ॥ धम्मत्थिकाए तद्दे से तपाए सेय आहिण । अह

कहीर रूपुदिके ते रूपो रूपादि नयो ते अरूपो अजीववेष भेदे कथां ते माहि अरूपी द्वाप्रकारे कथा जीनेष्वरे रूपोते चिह्नं भेदे जाणया ४
 धर्मास्तिकाय १ तेदनी विभाग ते देयधरे जीव पुद्गलेन गति पथे अजुकस इर धम्मना अस्ति प्रदेशेनो काय समूह ते विभागनो अथ जेहनी वसतु

स्त्रिकायदेश ५ एवं पुनस्तस्य अधर्मास्त्रिकायस्य प्रदेशोऽप्यस्तत् प्रदेश आख्यातः अधर्मास्त्रिकाय प्रदेश इत्यर्थः इत्यनेन पञ्चभेदाभरूपिणो अजीवद्रव्यस्य ५
अथ शेषार्थत्वार उच्यन्ते आगास इति सप्तमीभेदः आकाशं आकाशास्त्रिकायः जीव पुत्रस्यो रवकाशदायि आकाशं ७ तस्य आकाशस्य देश कातनी
विभागः आकाशास्त्रिकायदेशः ८ तस्य आकाशास्त्रिकायस्य निरंशोदेशः स्तत्प्रदेशः आकाशास्त्रिकाय प्रदेशः ९ दशमीभेदश्चाहा सप्तमः त्र्यजकालो वर्त
मानलक्षणसूद्रूपः सप्तमो अष्टासप्तमो अस्य एक एव भेदो निर्विभागत्वात् देश प्रदेशो अपिकालस्य न सभावत १० एवं दशभेदा अरूपिणोऽज्ञेयाः ६
एतान् अरूपिणं क्षेत्रतः आह (धन्माधर्मोय दीएए लीगमित्ता विद्याहिया लीगालीगेय आगासे समए समयखितिए ७) धर्माधर्मो धर्मास्त्रिकाया
धर्मास्त्रिकायो एतौ द्वावपि लोकमात्रौ व्याख्यातौ यावत्परिमाणौ लोकास्तावत्परिमाणौ धर्मास्त्रिकाया धर्मास्त्रिकायो पतुर्दश रज्ज्वात्तलोक व्याप्तौ इत्य

भे तस्य देसिय तपएसेय आहिए ५ । आगासे तस्य देसिय तपएसेय आहिए । अद्या समए चे व अरुवी दसहाभवे ६ ।
धन्मा धर्मो य दीएए लीगमित्ताविद्याहिया । लीगालीगेय आगासेसमए समयखितिए ७ । धन्मा धन्मागासातिद्विर्वि

भगान श्येये तेहस्युं मिली देसते धर्मास्त्रिकाय थकी विपरीत अधर्मास्त्रिकाय तेहनी विभाग तं देस ते देसनी विभागनथाइ एहवी विभाग ते प्रदेश
कथो ५ मयांदा संहित आपणे सरूपे शोभे पदार्थतीहां रथाते आकाशास्त्रिकाय तेहनी विभाग ते भेद ते मांदिं तेहनी भाग नथी ते प्रदेश कहुं
अद्याकालरूप सनायादिक ते अद्यासमय तेहनी विभाग नथी एह याभंणी देस नही अरूपी दशेप्रकारे इइ ६ धर्मास्त्रिकाय अधर्मास्त्रिकाय एवं द्रव्य
लीकमात्र चीदराजव्यापी परं अलीक माही नथी ते कथो तीर्थं कर देवे लीक चीदराज मांदिं तेहनी विसे आकास्त्रिकाय सधने

नेन यत्नाक धर्मो धर्मो नस्तथाकाण लोकात्काके यत्ने इत्यनेन आकायाश्रितकाय चतुर्दशरज्ज्वात्मलाक व्याप्यन्वित ततो वहिरलोका अपि व्याप्य
 यत्नाकाश्रितकाय स्थित इत्यय समय समयोपलक्षित दीय सार्द्धं इय दीप समुद्रात्मक समय क्षेत्र तत्रभव
 र्द्विक सार्द्धं इय दीपेभ्यो वहिसु समय आर्थात्कादिय समासादि कालोद्देशा मनुष्यलोका भावाय विवक्षित ७ पुनरितान् एयकालत आह [धर्मा
 यत्नागासातित्रिविध ए यत्नादया यत्नयवसियायेव सत्त्व इ तु विद्याद्विधा ८] धर्मो धर्मोकायानि एतान्निषोष्यपि सर्पाहं इति सर्वकाल सर्वदा स्वरूपा
 परित्यागेन नित्यानि यत्नादीनि च पुनरपर्यवसितानि यत्नरहितानि ८ यद्य कान स्वरूपमाह (समएविसन्त इ पण एय भेष
 विद्याद्विधा यत्नस पयसर्द्ध ए सपञ्चवसि ए विय ८) समयोपि कालोपि एय एव यथा धर्मो धर्मोकायानि यत्नायत्नन्ताति तथा कालोपि
 यत्नायत्नन्त इत्यय कि क्वा भवति प्राप्य यत्नरापरात्पसि रूपप्रवाहात्मिका आयित्यलोका यदाह कालस्थायोपचिति र्विलोपयते तदा कालस्य
 यादिरपि नास्ति यत्नोपिनास्तीत्यय पुनरादेय प्राप्यकार्यारम्भ आयित्यलकाल सादिक यादिसहित तथा सपर्यवसितोऽय सात्ताद्विती व्याख्यात

एय यत्नादया । यत्नयवसिया चैय सन्वहतु विद्याद्विधा ८ । समएविस ततद्र पण एयमेव विद्याद्विध । यत्नसपण

व्यापी रक्षाए समयोपि, काल य समययय यदो दीपमाहि वाहिर नदी ७ धर्मोऽस्ति काय यत्नयवसिकाय आकायाश्रितकाय तो ए यत्नादि श भषी
 एयादि नदी यत्नयवयाय यगान अहनाद्ये इवानकद्वयार गगताद्ये तेह भषो सधकास समो इर कहीर यत्नयव सन्वप एते नदी ८ साय कास
 मितरउतयोभना यत्नयव आनी इतिपारी मगा यार्थो एह पुठसीपरि यत्नादि यत्ने यत्नत यादिसकार्य यार्थो इ तेह यार्थो यादिसर्षि तत् यार्

यदा च यत् क्वचित् कार्यं यस्मिन् काले आरभ्यते तदा तत्कार्यारभ्यभात्कालस्यापि उपाधिदशात् आदिः एवं कार्यारभ्य सभासीकालस्यापि
 अतोऽप्याख्यातदशुद्धिः ८ यद्य रूपिणोऽजीवायतुर्विधायतुर्भेदा उच्यते [स्वन्थायस्वन्धेसाय तप्यसातद्वैवयपरमाणुणोय बोधव्यारुविणोवि च उच्चिह्रा १०]
 रूपिणोऽयजोवायतुर्विधायतुः प्रकारा के ते भेदास्तान् आह स्वन्थाः यत्र पुञ्जेपरमाणुवोविचटनात् स्थितनात् चन्युनाः अधिकाशपि भवति एता
 दृशा परमाणुपुञ्जा स्वान्धेयाः १ तथा तत् प्रदेशास्तेषां स्वान्थानां निर्विभागशंशा. स्वान्धप्रदेशा ३ तथैवेति पूर्ववत् च पुनः परमाणुवोबोधव्याः पर
 माणवएव परस्परं अभिलितादशुद्धिः एवं चजारी रूपिणयतुर्विधाबोधव्यादिति भाव अत च सुस्थस्यथापरमाणु द्रव्यस्य ही भेदी परमाणवः स्वधायदेश
 प्रदेशयोः स्वान्धेवेवात्सर्भावः १० अथ स्वान्थानां परमाणूनां लक्षणमाह (एगतेण गृहतेण स्वन्थायपरमाणुणो लीएगदेसेलीएय भद्रव्याते उच्चित्तश्री
 इतीकालविभागं तु तेसिं बुच्च च उच्चिहं १ १ शर्धः एतेस्वन्थाय पुनः परमाणवः एकत्वेन पुनःपुधधेन लीकैकदेशे च पुनर्लीके खेत्ततीभक्तव्याः तत्र केचित्

सादृए सपज्जवसिएविय ९ ॥ खंधाय खधदेशाय तप्यसा तद्वैवय । परमाणुणोय बोधव्या रूविणोवि चउच्चिह्रा १० ।

एगतेणं पद्वतेण खंधाय परमाणुणो । लीएगदेसे लीएय भद्रव्यातेय खित्तश्री । इतो काल विभागं तु तेसिं बोच्चं

पर्यवसान अतच्छे ८ परमाणुयाविचटे मिले ते स्कां ध तेहनी विभाग ते देश तेहना के निर्वात अश ते प्रदेश तिम जाणवा के परमाणुं धणं अणुं
 नाहा ते परमाणुं भाजाणवा रूपी द्रव्य चिह्नं प्रकारे पद्वलते रूपी द्रव्य जाणवी १० परमाणुं आसुं एक परिणामे परिणमे परमाणूनां जूज् आपणुं
 रसिदुं परमाणुं या एकठा मिल्या कि अनंतालग जूज् आते परमाणुया लीकना एकदेशने विखे परमाणुं आ रहाळे स्वंधते लीक कारि यका लीकना

स्कन्धा परमाणवय एकत्वे न समानपरिणि तिरूपेण लघ्वन्ते अथ च स्कन्धापरमाणवय शुषक्तेन परमाणुन्तरै रसङ्घातरूपेण लघ्वन्ते इति आध्याहार इति त्रयतोन्नयण उक्त अथ चचेदत आह ते स्कन्धा परमाणवय इति तत् स्कन्धपरमाणूनां ग्रहणेपि परमाणूना एव एक प्रदेशायस्थानत्वात् ते परि माणव स्कन्धे पु लोकेकदेशीलोकै सर्वत्रभङ्गन्या भजनीया दर्शनीइति यावत् त हि विचित्रत्वात्परिणतैर्बहु प्रदेशेतिटल्लि इत धेनपरुपणातीज्जल्लर तेषां स्कन्धानां परमाणूनां चतुर्विध कानभेद चतुर्विध यस्ये सादि अनूदि सपर्यवसित अपयवसित भेदेन कथयिष्यामि इद च सूत्र पट पाट गायेयु, अत ११ (सनाइ पपतैणाइ अपज्जवसियावियठिर पटुयसाइया सपज्जवसियाविय १२] ते स्कन्धा परमाणवच सन्तति अपरापरोत्पप्सि मयाइ रूपा प्राप्य अनादय आदिरहितासाया अपर्यवसिता अन्तरहिता स्थिति प्रतीलक्षेत्तायस्थानरूपांस्थिति अङ्गीकृत्यसादिका सपर्यवसिताय यत्तन्ते १२ सादिसपयवसितत्वे पि कियत्कालसंभवास्थितिरित्याह [असङ्ककालमुक्त्वांस इक समय जह्वयव अजीवाणयरुपीण ठिइएसावियवहिया १३]

चउज्विह ११ ॥ सतइ पप तैणाई अपज्जवसियाविय । ठिइ पडुच्च साइंया सपज्जवसियाविय १२ ॥ अससव

काल मुक्त्वांस एक्कां समभ्यो जह्वनय । अजीवाणय रूपीण ठिई एसा वियाहिया १३ ॥ अणतकाल मुक्त्वांस एक्कांसमभ्यो

प्रदेशेते पिसि त स्कन्धेय क्षेत्र, आकाय भजिधा अोक प्रकार करो कहवावेह प्रदेशो पण एक ११ प्रदेशे रूहे सतति प्रवाह आश्री तंअनादि जिर्णरु त अ अपयवमित अनत पण निच सदापुस्ये धिति नियत क्षेत्र विचे होत पायी आदि सहित तसादि अने स पर्यवसित अत सहित जह्वनी नयनवे ठांसे उप १ २० अगत्यातु कान उगृकटस्थित एक समय जघन्यस्थिति अजीवरूपी द्रव्य पुत्रस पयव्यादिक धिति एह कही तीध करे १२ अनतीकान उर